पर्यावरण शिक्षा



डॉ० एम. के. गोयल

पर्यावरण शिक्षा

[ENVIRONMENTAL EDUCATION]

लेखक

डॉ० एम० के० गोयल

एम० एस-सी०, एम० एड०, पी-एच० डी०

पूर्व टैक्नीकल ऑफीसर (शिक्षा), पर्यावरण विभाग, राजस्थान

पूर्व प्रोजेक्ट ऑफीसर (पर्यावरण), शिक्षा विभाग, राजस्थान

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर
कार्यालय : डॉ० रांगेय राघव मार्ग, आगरा–2
बिक्री-केन्द्र : हॉस्पिटल रोड, आगरा–3

द्वितीय पुनःमुद्रित संस्करण 2004/05
(संशोधित एवं परिवर्द्धित)
मूल्य : 120·00

ISBN-81-7457-164-7

लेजर टाइप सैटिंग : आइकन कम्प्यूटर्स, आगरा–5
मुद्रक : रवि मुद्रणालय, आगरा–2

MKG2REB120504

भूमिका

द्वितीय संस्करण (परिवर्द्धित एवं संशोधित)

मुझे इस बात की बेहद प्रसन्नता है कि पाठकों की माँग पर इसका संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण निकाला जा रहा है। वास्तव में, यह पुस्तक केवल सन्दर्भित ग्रन्थ के रूप में ही नहीं बल्कि पर्यावरण के क्षेत्र में विभिन्न स्तर की उच्च कक्षाओं और प्रान्तीय तथा राष्ट्रीय स्तर तक की प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये भी बहुत उपयोगी रही है। इस पुस्तक की एक विशेषता यह भी है कि सभी जानकारियाँ तथा आँकड़े अत्यन्त अधिकारिक तथा अपडेटेड हैं। लेखक का यह प्रयास रहा है कि इस एक अकेली पुस्तक से ही पर्यावरण की लगभग सभी नवीनतम् सूचनाएँ पाठकों को एक साथ मिल सकें और अधिक जानने हेतु स्रोतों का उल्लेख भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम पाठकों की जिज्ञासाओं को पूरी करने हेतु यहाँ किया गया है।

कुछ नये अध्याय, जैसे—(1) जैविक विविधता, (2) अपशिष्ट निस्तारण और (3) औद्योगिक प्रदूषण भी इस नये संस्करण में जोड़े गये हैं, जिनकी आज महती भूमिका है। समय के साथ पर्यावरण के प्रति बदलती सोच को भी यहाँ उचित स्थान दिया गया है, जिससे यह पुस्तक अत्यन्त प्रभावी बन गई है।

मुझे विश्वास है कि लेखक का यह प्रयास पाठकों की आवश्यकताओं की ही पूर्ति नहीं करेगा बल्कि उन्हें पर्यावरण के क्षेत्र में नये आयाम भी उपलब्ध करायेगा।

—डॉ० एम० के० गोयल

श्री हनुमान जयंती
16.4.2003

समर्पित

उन सभी पाठकों को
जिन्हें इसकी तलाश है।

आमुख

(प्रथम संस्करण)

जब-जब विश्व स्तर पर किसी समस्या के समाधान की बात सोची गई तब-तब एकमत होकर विचारकों ने उसे शिक्षा के माध्यम से पूरी करने का सुझाव दिया, क्योंकि आज भी सभी लोग इस बात से सहमत हैं कि किसी भी परिवर्तन को केवल शिक्षा के माध्यम से ही स्वीकार किया अथवा कराया जा सकता है। इसी सन्दर्भ में आज पर्यावरण के असन्तुलन की समस्या है, जिसका हल पर्यावरण शिक्षा से ही किये जाने हेतु सभी प्रयत्नशील हैं।

शिक्षा के किसी भी पक्ष को ठीक से विद्यार्थियों तक पहुँचाने का दुरूह कार्य शिक्षक द्वारा ही सम्भव है। अतः अब शिक्षक के हर स्तर के प्रशिक्षण में 'पर्यावरण शिक्षा' को विशेष स्थान दिया है। बी० एड० स्तर पर तो लगभग सभी प्रशिक्षण महाविद्यालयों में विशेष प्रश्न-पत्र के रूप में 'पर्यावरण शिक्षा' को मान्यता दी है। यह पुस्तक देश के सभी विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम को पूरा कर सकेगी, इसी विश्वास के साथ इसे तैयार किया गया है। इसकी सामग्री तथा संकलित आँकडे अत्यन्त अधिकारिक स्रोत से समाहित किये हैं, अतः इन्हें किसी भी स्तर के प्रस्तुतीकरण में उद्धृत किया जा सकता है।

पुस्तक को 35 अध्यायों में 6 मोटे शीर्षों के अन्तर्गत विभाजित किया गया है जिनसे पाठकों को सुरुचिपूर्ण ढंग से पढ़ने और विचार करने का अवसर मिल सके। प्रत्येक सम्भाग की सामग्री अपने-आप में सम्पूर्ण भी है और अगले तथा पिछले सम्भाग से ताल-मेल रखकर विषय की निरन्तरता बनाये रखती है। सभी सूचनाओं का स्रोत उल्लेख 'फुट नोट' में किया है तथा शोधकर्त्ताओं के लिये सन्दर्भ पुस्तकों की सूची (Bibliography) भी उनकी सुविधा के लिये दी है, जो देश के पुस्तकालयों में प्राप्य हैं।

पुस्तक में शीर्ष विभाजन, (1) पर्यावरण, पृथ्वी और पारिस्थितिकी, (2) प्राकृतिक संसाधन, वन एवं वन्य जीव एवं ऊर्जा, (3) पर्यावरण प्रदूषण एवं समस्याएँ और कानून, (4) पर्यावरण प्रबन्ध, (5) पर्यावरण संरक्षण और (6) पर्यावरण शिक्षा के प्रकार से है।

इस पुस्तक को लिखने में अनेक पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं प्रतिवेदनों से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सहायता ली गई है। यद्यपि उनका उल्लेख 'Foot Note' और 'Bibiography' में किया है फिर भी उन सभी लेखकों, सहायक ग्रन्थों तथा पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों और मूल स्रोतों के व्यवस्थापकों को मैं हृदय से पुनः आभार प्रकट करता हूँ, जिनसे मुझे हर स्तर पर दिशा मिली है।

पुस्तक लेखन के साथ जाने-अनजाने अनेक व्यावहारिक कठिनाइयाँ आई हैं। उनमें जहाँ एक ओर मेरे परिवार के सभी सदस्यों ने मेरा मनोबल बढ़ाया है, वहीं मैं इस पुस्तक के प्रकाशक मैसर्स विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा के श्री रवि अग्रवाल और श्री राजीव अग्रवाल की सराहना करता हूँ, जिन्होंने अत्यन्त धैर्य और संयम से मुझे कार्य पूरा करने की प्रेरणा दी। मुझे लगा है कि इस पुस्तक के लेखन में, मैं केवल साधन मात्र रहा हूँ।

इस पुस्तक के सुन्दर गैट-अप और शीघ्र मुद्रण के लिये मैं प्रकाशक मैसर्स विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा का आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इसे देश के सभी विश्वविद्यालयों के 'पर्यावरण शिक्षा' के प्रस्तावित पाठ्यक्रमानुसार तैयार कराकर राष्ट्र हित में अनन्य भूमिका निभाई है। निःसन्देह पर्यावरण के क्षेत्र की अधिकृत जानकारी वाली पुस्तक को व्यापक रूप से प्रसार करने के प्रयास के लिये वह बधाई के पात्र हैं। मैसर्स आइकन कम्प्यूटर्स का भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने इसे त्रुटि रहित फोटो कम्पोज कर सैट किया है।

मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक पर्यावरण शिक्षा के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी तथा पी-एच० डी० स्तर पर शोध विद्यार्थियों के लिये समुचित प्रारम्भिक जानकारी का आधार बन सकेगी।

—डॉ० एम० के० गोयल

ए-424, मालविया नगर
जयपुर (भारत)-302017
गणतन्त्र दिवस : 26 जनवरी, 1997

लेखक परिचय

(डॉ० एम० के० गोयल)

जन्म—भरतपुर (राजस्थान) सन् 1935।

शिक्षा—एम० एस-सी० (गणित), एम० एड०, पी-एच० डी० (शिक्षा)।

डॉ० एम० के० गोयल शिक्षा विभाग राजस्थान से शिक्षक, स्कूल काउन्सलर, ऐकेडेमिक ऑफीसर, प्रिंसीपल तथा प्रोजेक्ट ऑफीसर (पर्यावरण) के पदों पर 34 वर्ष की सेवा कर हाल ही में सेवानिवृत्त हुए हैं। शिक्षा में शोध और पर्यावरण में मौलिक चिंतन आपके विशेष कार्यक्षेत्र रहे हैं। अतः राज्य स्तर पर विविध उपलब्धियों पर अनेक बार पुरस्कृत हो चुके हैं। 1984 में 'शिक्षक पुरस्कार' से सम्मानित डॉ० गोयल बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। पत्र-पत्रिकाओं में लेखन-सम्पादन, रेडियो व टी० वी० पर वार्ताएँ और कुशल एवं प्रभावी वक्ता के रूप में आपने प्रदेश में अपनी एक अनुपम छवि बनाई है।

पर्यावरण विभाग राजस्थान में टेक्नीकल ऑफीसर (शिक्षा) के पद पर कार्य कर पूरे प्रदेश में पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने का इनका अथक प्रयास अत्यन्त प्रशंसनीय रहा है। पर्यावरण सम्बन्धी अनेक पुस्तकों का आपने कुशल सम्पादन तथा कई राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय सेमीनारों और कार्यगोष्ठियों का सफल संयोजन किया है.

आपकी पिछली प्रकाशित पुस्तकों 'अपना पर्यावरण' और 'पर्यावरण प्रश्नोत्तरी' (क्विज) को देश के सभी हिन्दी भाषी प्रदेशों में अत्यधिक पसन्द किया गया है। इसी क्रम में 'पर्यावरण शिक्षा' आपकी नवीनतम् कृति है।

सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि 'अपना पर्यावरण' और 'पर्यावरण शिक्षा' पुस्तकें राष्ट्रीय स्तर पर मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा वन एवं पर्यावरण विभाग, भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुकी हैं, जो लेखक की प्रतिभा से जनसाधारण को अत्यन्त सहजता से अवगत कराती हैं।

पुस्तक विवरण

पुस्तक का नाम	—	पर्यावरण शिक्षा
लेखक	—	डॉ० एम० के० गोयल
भाषा	—	हिन्दी
पृष्ठ संख्या	—	467
स्तर	—	सीनियर सेकेण्डरी से अधिस्नातक तक, शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये, शोध कार्य हेतु तथा सभी स्तर की प्रतियोगी परीक्षाओं तथा प्रशासनिक अधिकारियों के लिये।
कवरेज	—	राज्य, राष्ट्र तथा अन्तर्राष्ट्रीय।
मूल्य	—	विद्यार्थी संस्करण (पेपर बैक)—120.00 रु० पुस्तकालय संस्करण (हार्ड बाउण्ड)—500.00 रु०
प्रकाशक	—	विनोद पुस्तक मन्दिर, डॉ० रांगेय राघव मार्ग, आगरा-2 दूरभाष : (0562) 2155179, 2155187

विषय-सूची

1

अपना पर्यावरण
[OUR ENVIRONMENT]

प्रस्तावना
(Introduction)

वायु, जल, भूमि, वनस्पति, पेड़-पौधे, पशु, मानव सब मिलाकर पर्यावरण बनाते हैं। प्रकृति में इन सबकी मात्रा और इनकी रचना कुछ इस प्रकार से व्यवस्थित है कि पृथ्वी पर एक सन्तुलनमय जीवन चलता रहे। विगत करोड़ों वर्षों से जब से पृथ्वी पर मनुष्य, पशु-पक्षी और अन्य जीव और जीवाणु उपभोक्ता बनकर आये तब से, प्रकृति का यह चक्र निरन्तर और अबाध गति से चला आ रहा है। जिसको जितनी आवश्यकता है वह उन्हें मिलता रहता है और प्रकृति आगे के लिए अपने में और उत्पन्न करके और संरक्षित कर लेती है।

पिछले लगभग 100 वर्षों में जब से मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के लिए अनेक वैज्ञानिक उपलब्धियाँ अर्जित कीं, सुख-सुविधा के साधन जुटाये, बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु औद्योगिक क्रान्ति का सहारा लिया, तभी से प्रकृति का सामान्य रूप विखण्डित होने लगा। वन कटने लगे, उपजाऊ भूमि पर आवास बनने लगे, बड़े-बड़े जंगल साफ कर बाँधों की योजना बनी और न जाने कितने ऐसे प्रयोग शुरू हो गये जो मानव प्रकृति के अनुकूल नहीं थे। अतः सामान्य जीवन में परिवर्तन आने लगा। पहले तो प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता में कमी आई और फिर शनैः-शनैः वायु, जल, भूमि आदि सभी, जो जीवन के लिए आवश्यक हैं, प्रदूषित होने लगे, जो चिन्ता का कारण बन गये।

> **पर्यावरण क्या है ?**
> **(What is Environment ?)**
>
> पृथ्वी पर की समस्त वस्तुओं को दो भागों में विभाजित किया गया है—(1) जैविक और (2) अजैविक। इन सभी वस्तुओं का प्राणी मात्र पर एकजुट प्रभाव ही पर्यावरण कहलाता है। निःसन्देह इसमें पेड़-पौधे, वनस्पति, भूमि, वायु, जल, प्रकाश, ताप आदि सभी सम्मिलित हैं।
>
> अच्छे पर्यावरण की संकल्पना उन स्थितियों से है जिसमें प्राणधारी को समस्त मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके और वह सुखमय जीवन बिता सके। वहीं विकृत पर्यावरण अनेक समस्याओं से ग्रसित होता है और जीवन को कष्टमय बना देता है।

यदि हम पर्यावरण के सन्दर्भ में विश्व-पटल की पूर्व वर्षों की स्थिति का अवलोकन करें तो कुछ स्थितियाँ हमारे सामने बहुत स्पष्ट नजर आती हैं। पर्यावरण विशेषज्ञ और जनसंख्या के क्षेत्र में विशिष्ट रूप से कार्य करने वाले डैमोग्राफर्स ने लगातार बढ़ती जनसंख्या और औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप नगरीय आबादी में वृद्धि और बढ़ते प्रदूषण से बहुत पहले ही पूरे विश्व में पैदा होने वाली विविधि विषमताओं से आगाह कर दिया था और यह चेतावनी भी दी थी कि भविष्य में प्राणीमात्र के सुखमय और निरापद जीवन के सामने कई विकराल और कठिन समस्याएँ आवश्यक रूप से आने वाली हैं। समय रहते यदि इन पर ध्यान नहीं दिया, तो कुछ भी अनचाहा होना सम्भव है।

उल्लेखनीय है कि सन् 1650 में विश्व की कुल जनसंख्या 54 करोड़ 50 लाख थी जो अब सन् 2002 में 6 अरब को पार कर चुकी है, अर्थात् पिछले लगभग 350 वर्षों में 10 गुनी से भी अधिक हो गई है। जिन देशों ने इस चेतावनी को समझा और उसके अनुसार अपने देश में कार्य योजना बनाई वे आज भी पर्यावरण के कई संकटों से प्रभावित नहीं हैं। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका, रूस, जापान, आस्ट्रेलिया,

न्यूजीलैण्ड, जर्मनी, नार्वे, स्वीडन आदि अनेक ऐसे देशों की गिनती में आते हैं जिन्होंने विश्व की जनसंख्या के अनुपात में अपने देश की जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्धि नहीं होने दी है। इसके विपरीत अफ्रीका, यूरोप और एशिया के देशों में, जिसमें पाकिस्तान और भारत भी शामिल हैं, आबादी का प्रतिशत निरन्तर प्रतिवर्ष बढ़ा है जो पर्यावरणीय असन्तुलन और विकृति का मुख्य कारण भी है।

भारत ने अनेक योजनाएँ बनाईं और कई प्रकार से प्रयास किये जिनसे परिवार नियोजन की दिशा में पूर्व निर्धारित राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति हो सके, लेकिन कुछ सम्भव नहीं हो सका। आँकड़ों के अनुसार पिछले 90 वर्षों में भारत की जनसंख्या विश्व की जनसंख्या का लगभग 15 प्रतिशत (सन् 1900 में 14·68%, सन् 1950 में 14·86%, सन् 1970 में 14·83%, सन् 1980 में 15·23% और सन् 1990 में 15·32%) स्थिर है जो 2001 में बढ़कर 16·6% हो गया है, लेकिन विश्व में ऐसे देश भी हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में सफलता पाई है। विश्व में सबसे अधिक आबादी वाले देश चीन ने आबादी नियन्त्रण के अपने राष्ट्रीय लक्ष्य निर्धारित किये और उसकी ठोस योजना बनाकर निर्धारित समय में उन्हें प्राप्त कर दिखाया।

• पर्यावरण के बारे में सोच का प्रारम्भ (Beginning of the Thought about Environment)

अनेक पर्यावरणविदों का यह मत है कि यद्यपि पर्यावरण के बारे में किसी प्रकार की सोच तब से शुरू हुई होगी जब से मानव ने अपने पेट भरने हेतु खाद्य पदार्थों को उगाने की शुरूआत की। इस हेतु उसने कृषि योग्य भूमि प्राप्त करने के लिये प्रकृति विरुद्ध कार्य कर जंगल काट डाले और सिंचाई हेतु स्वच्छ नदियों के जल प्रवाहों को मोड़कर अपनी सुविधानुसार उनका उपयोग किया। पानी की वर्षपर्यन्त उपलब्धता को आश्वस्त करने हेतु उन्होंने जल को भूमि की निचली सतहों में एकत्रित कर उसका भण्डारण किया। प्रारम्भ में तो इससे खूब पैदावार हुई, पर अधिक अन्न उपजाने के लालच ने भूमि को बंजर बना दिया और यह गति आगे बढ़ती गई जिसने कालान्तर में रेगिस्तान का रूप ले लिया। पर यह बात तब की है जब मनुष्य की आबादी प्रकृति द्वारा दिये जाने वाले अनेक संसाधनों की तुलना में अत्यन्त न्यून थी, लेकिन निःसन्देह निरन्तर बढ़ती आबादी ने पुरानी स्थितियों में परिवर्तन ला दिया और पिछली लगभग एक शताब्दी में पर्यावरण के प्रति सोचने की स्थिति बन गई।

अन्य पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार वर्तमान में पर्यावरण के बारे में सोचने के प्रारम्भ की गाथा सन् 1864 से मानी जा सकती है जब सेंटलुइस (मिसौरी : संयुक्त राज्य) में वायु प्रदूषण से सम्बन्धित एक वाद (case) अमेरिका के एक न्यायालय में दायर हुआ। सम्भवतः यह विश्व के किसी देश में इस क्षेत्र की लोगों के सामने आने वाली प्रथम घटना थी; यद्यपि इससे पूर्व लंदन (इंग्लैण्ड) में वायु प्रदूषण की अनेक छुटपुट घटनायें घटित हो चुकी थीं और इन्हीं के आधार पर वहाँ पर कई कानून बनाये गये थे। इसी सन्दर्भ में विश्व की कुछ अन्य घटनायें[1] (सभी वायु प्रदूषण की) यहाँ जानकारी हेतु प्रस्तुत हैं—

स्मोग क्या है ? (What is Smog ?)

उद्योगों से निकलने वाली विषैली गैस और कुहरे से मिलकर बनी पर्त जो वायुमण्डल में छाकर दम घोटने वाला वातावरण बनाती है, 'स्मोग' कहलाती है।

वर्ष	घटना
1873	सघन स्मोग (Heavy Smog) के कारण इंग्लैण्ड के चिकित्सा अभिलेखों में भारी जनहानि।
1880	लंदन (इंग्लैण्ड) : दो सप्ताह के अन्दर सामान्य से 27 प्रतिशत अधिक व्यक्तियों की मृत्यु।
1891	लंदन (इंग्लैण्ड) : वर्ष में वायु प्रदूषण के कारण 1484 व्यक्तियों की मृत्यु।
1922	लंदन (इंग्लैण्ड) : वायु प्रदूषण के दुष्परिणाम स्वरूप 11·8 प्रतिशत अधिक व्यक्तियों की मृत्यु।
1939	लंदन (इंग्लैण्ड) : भारी कुहरे (Heavy Fog) के कारण चार दिन की अवधि में 1300 से अधिक व्यक्तियों की मृत्यु।

1. स्रोत : Environmental Science and Engineering by J. Glynn Henry and Gary W. Heinke, New Jersy (USA) : Prentice Hall, Inc., Englewood Cliffs, 1989 के Chapter 13—Air Pollution के पृष्ठ 472-73 से उद्धृत।

1930 **मियूज वैली : बेलजियम** (Meuse Valley : Belgium) में भारी स्मोग (Heavy Smog) के कारण 63 व्यक्तियों की मृत्यु तथा 8,000 व्यक्ति असाध्य रूप से अस्वस्थ।

1940 **लॉस एंजिल्स (अमेरिका) :** भारी स्मोग (Heavy Smog) द्वारा पूरे शहर पर दम घुटने वाला विषैला आवरण। एक रात में ही हजारों लोगों के मरने का समाचार।

1948 **डोनारा (अमेरिका) :** 25 से 31 अक्टूबर के मध्य सघन स्मोग (Heavy Smog) से 14,000 व्यक्तियों की आबादी वाला प्रायद्वीप प्रभावित। अनेक लोग लम्बी अवधि तक अस्वस्थ रहे।

1952 **लंदन (इंग्लैण्ड) :** स्मोग (Smog) के कारण केवल चार दिन की अवधि में 4,000 से अधिक व्यक्तियों की मृत्यु।

इसके अतिरिक्त भी अनेक इसी प्रकार की वायु प्रदूषण की घटनाओं का विश्व के अनेक बड़े शहरों में घटित होने का उल्लेख मिलता है, जिनमें न्यूयार्क, पिट्सबर्ग, बरमिंघम, लॉस ऐंजिल्स और सेन फ्रान्सिस्को (सभी अमेरिका), टोरन्टो (कनाडा), टोकियो (जापान) तथा यूरोप और ग्रेट ब्रिटेन के कई शहर प्रमुख हैं। निःसन्देह यह दुर्घटनायें भारी औद्योगीकरण के कारण उन देशों में ही अधिक हुईं जहाँ पर बहुतायत से उद्योगों की स्थापना हुई और जहाँ उस समय इस प्रकार के प्रदूषण के नियन्त्रण का कोई विशेष प्रावधान तथा महत्त्व नहीं था। बाद में तो जनता की जाग्रति और देशों की सरकार के दायित्व के फलस्वरूप **'शुद्ध वायु अधिनियम'** (Clean Air Acts) कई राष्ट्रों ने पारित किये जिनमें—

1. दी ब्रिटिश क्लीन एयर एक्ट, 1956 (The British Clean Air Act, 1956),
2. दी यू० एस० क्लीन एयर एक्ट, 1963 (The U. S. Clean Air Act, 1963) और
3. दी केनेडियन क्लीन एयर एक्ट, 1971 (The Canadian Clean Air Act, 1971)

प्रथम सूची में थे। अन्य देशों ने भी बाद में वायु-प्रदूषण की रोकथाम हेतु अलग-अलग, उनकी क्षमता और सुविधानुसार, अधिनियम बनाये **और इस तरह पर्यावरण के बारे में सोचने-विचारने और उसकी किसी भी विकृति को रोकने के प्रयास का सिलसिला प्रारम्भ हुआ।**

● पर्यावरणीय सोच का बढ़ता दायरा
(Increasing Domain of Environmental Thought)

जैसा अभी हमने पिछले पृष्ठों में लिखा है कि साधारण जन-मानस में पर्यावरण के प्रति सोच का प्रारम्भ कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं के कारण हुआ और विभिन्न देशों के नीति निर्धारक व्यक्तियों ने पर्यावरण के महत्त्व को स्वीकार भी किया, वहीं यहाँ यह बात भी बहुत स्पष्ट रूप से जानने योग्य है कि पर्यावरणीय संकटों की उत्पत्ति का वर्तमान इतिहास भी बहुत पुराना नहीं है और वह भी एक ऐसी क्रमबद्धता का परिणाम है, जो अवश्यंभावी था। पर्यावरण अध्येता बताते हैं कि इनमें चार बिन्दुओं को सम्मिलित किया जा सकता है—

1. **प्रथम—अत्यधिक आबादी में वृद्धि :** जिसने पृथ्वी के समस्त समीकरणों को खण्डित कर दिया। प्राकृतिक संसाधनों का अभाव शुरू हो गया।
2. **द्वितीय—औद्योगीकरण :** भारी जनसंख्या वृद्धि की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अनियमित एवं अनियन्त्रित औद्योगीकरण हुआ। इससे भारी वायु एवं जल प्रदूषण हुआ तथा अवशिष्टों को निस्तारने की समस्या उठ खड़ी हुई।
3. **तृतीय—शहरीकरण :** अत्यधिक आबादी और भारी औद्योगीकरण ने शहरीकरण की समस्या उत्पन्न कर दी। छोटे-छोटे गाँव और कस्बों से लोग शहरों में आने लगे और वहाँ भारी घनत्व हो जाने के कारण भोजन, पानी, आवास और यातायात (आवागमन) की कठिनाई उत्पन्न हो गईं।
4. **चतुर्थ—ऊर्जा का अन्धाधुन्ध उपयोग :** इसने अनेक प्राकृतिक संसाधनों को पृथ्वी से समाप्त प्रायः ही कर दिया। विकल्प उस कमी की पूर्ति करने में असहाय एवं असमर्थ प्रतीत हुये।

इन सभी क्रमिक विकासात्मक अभिवृत्तियों ने पर्यावरण के भौतिक पक्ष (physical environment) को भारी विपत्ति में डाल दिया जिससे मनुष्य चहुँमुखी प्रभावित हुआ। अब मनुष्य केवल वायु प्रदूषण से होने

वाले दुष्परिणामों से ही चिन्तित नहीं था, बल्कि उसके सामने शनैः-शनैः इतनी समस्याएँ आने लगीं कि उसे उनका समाधान होना सम्भव प्रतीत नहीं होने लगा। इन सभी समस्याओं को हम यहाँ समेकित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे हैं।

● पर्यावरणीय समस्याएँ (Environmental Problems)

पर्यावरणीय समस्याएँ क्या हैं ?—वह सभी कार्य, कारण अथवा स्थितियाँ जिनसे प्रकृतिदत्त पर्यावरण (natural environment) क्षतिग्रस्त, नष्ट, विकृत अथवा विलोपित होता हो, पर्यावरणीय समस्याओं के अन्तर्गत आती हैं। इनसे मनुष्य के जीवन को खतरा, आर्थिक हानि, जीवन की गुणवत्ता का ह्रास और अनेक संकट उत्पन्न हो सकते हैं जिनका सामान्यतया निदान सम्भव नहीं है। यदि निदान और कारणों की जानकारी भी हो जाये तो उपचार अथवा समाधान और भी कठिन है, यद्यपि बढ़ती विज्ञान और टैक्नोलोजी तथा पर्यावरणीय विज्ञान और अभियान्त्रिकी ने इस दिशा में काफी प्रगति की है और विभिन्न पर्यावरणीय संकटों से बचने अथवा कम करने के उपाय भी सुझाये हैं।

पर्यावरणीय समस्याओं को हम निम्न दो भागों में विभाजित करना चाहेंगे—

1. प्राकृतिक पर्यावरणीय संकट (Natural Environmental Hazards) और
2. मानवकृत पर्यावरणीय बाधाएँ (Human Created Environmental Disturbances)।

1. प्राकृतिक पर्यावरणीय संकट (Natural Environmental Hazards)

प्राकृतिक पर्यावरणीय संकट पर्यावरण की वह स्थितियाँ हैं जिनसे अनजाने ही मानव जीवन की हानि होती है और विविध प्रकार की स्थाई अथवा अस्थाई सम्पत्ति की क्षति होती है। इन्हें प्रकृति दत्त 'होनी' (Happenings) भी कहा जा सकता है। भाग्यवादी अथवा धार्मिक भावना वाले लोग इसे ईश्वरीय प्रकोप (Godly Wrath) कहते हैं। इनमें (1) बाढ़ (Floods), (2) सूखा (Droughts), (3) भूकम्प (Earthquakes), (4) चक्रवात (Cyclones), (5) बिजली (Lightning), (6) कुहरा (Fog), (7) बर्फ गिरना (Snowfall), (8) पाला (Frost), (9) ओलावृष्टि (Hail Rain), (10) गर्म और शीत हवाएँ (Hot and Cold Waves), (11) तूफान अथवा बवण्डर (Tornadoes) आदि सम्मिलित हैं। इनका प्रकोप कब और कैसे होगा ? इसका पूर्वानुमान सभी स्थितियों में अत्यन्त कठिन है यद्यपि अब विज्ञान की प्रगति से इन संकटों को कम करने अथवा कुछ सीमा तक नियन्त्रित करने की सम्भावनाओं में वृद्धि हुई है।

प्राकृतिक पर्यावरणीय संकटों के लिए मानवीय क्रियाएँ सिद्धान्ततः कोई भूमिका नहीं निभाती हैं, लेकिन अब पर्यावरण विशेषज्ञ कुछ संकटों के लिए मनुष्य को उत्तरदायी मानते हैं, जैसे अधिक वनों की कटाई से बाढ़ और सूखा की घटनाओं में वृद्धि अथवा भूगर्भीय जल के अधिक दोहन से रेगिस्तानी क्षेत्रों में वृद्धि और भूकम्पों की संख्या में बढ़ोतरी आदि। जलवायु परिवर्तन में भी अब मनुष्य के क्रियाकलापों को जोड़ा जाने लगा है जिससे पाला, कुहरा और ओलावृष्टि जैसी भयंकर घटनाओं को मदद मिलती है।

इन संकटों को दैविक प्रकोप के रूप में मानकर भी यह जानना अत्यन्त आवश्यक होता है कि किसी अमुक दुर्घटना की गम्भीरता क्या है ? उसके मापन हेतु अलग-अलग घटनाओं के लिये अब अलग-अलग मापनी (Scales) बनाये गये हैं, लेकिन मोटे रूप से दो बातों से इनका मूल्यांकन (assessment) होता है; प्रथम—इसका प्रभाव क्षेत्र कितना है ? और द्वितीय—इससे कितनी जान-माल की हानि हुई है ?

2. मानवकृत पर्यावरणीय बाधायें (Human Created Environmental Disturbances)

इस विभाजन में हम उन बिन्दुओं का उल्लेख करेंगे जो स्पष्टतः किसी न किसी प्रकार से मनुष्य के क्रियाकलापों के कारण उत्पन्न हुये हैं और पर्यावरण को विकृत करने के उत्तरदायी हैं। चूँकि पृथ्वी पर मनुष्य की आबादी की गति में कोई विशेष अन्तर नहीं आ रहा है (यदि विकासशील देश इस ओर प्रयत्नशील भी हैं तो अविकसित तथा अर्द्धविकासशील देशों ने अपने उत्तरदायित्व का पूर्णतः निर्वाह न कर इस प्रयास को उतना सफल नहीं होने दिया है, जितनी अपेक्षा थी), अतः समस्याओं का समाधान का अन्तिम लक्ष्य अर्थहीन बन गया है। केवल भोजन पूर्ति की बात ही लें तो हम देखेंगे कि प्रत्येक 12-13 वर्ष में 1 अरब आबादी की औसत वृद्धि हेतु कृषि उत्पादन आखिर कितना हो ? यदि उत्पादन भी हो

तो प्रत्येक देश के प्रत्येक व्यक्ति तक उसे कैसे पहुँचाया जाये ? इस केवल एक वस्तु की उपलब्धता से अनेकं देशों की तो अर्थव्यवरथा ही गड़बड़ा गई है और वह देश प्रतिवर्ष निर्धन और अधिक निर्धन तथा बड़े समृद्ध देशों के कर्जदार हो गये हैं। समृद्ध देशों ने इस अवसर का लाभ उठाकर खाद्य पदार्थों के बदले उनके बहुमूल्य संसाधन जैसे—वृक्ष (लकड़ी), कई प्रकार के खनिज आदि लेकर उन्हें समाप्त प्राय ही सा कर दिया है। अतः बढ़ती आबादी ने अन्ततः पर्यावरण को ही नहीं बल्कि समूचे प्रकृतितन्त्र को ही झिझकोर दिया है।

बढ़ती आबादी के साथ दूसरा महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि हमने स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की ही ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया हो, ऐसी बात नहीं है। हमने हर **वस्तु का दुरुपयोग किया** और **आवश्यकता से अधिक प्राप्त करने की लालसा** की। इससे कालान्तर में वरतुओं की उपलब्धता में तो कमी आई ही, बल्कि साथ में अनेक लोगों के लिये अनुपलब्धता का कारण भी बन गई। जल विश्व में असीमित है और आसानी से उपलब्ध भी है, पर अपने गलत व्यवहार से हम उसे ठीक से उपयोग में नहीं ला पाये तथा जो कुछ भी उपलब्ध था, उसे प्रदूषित होने से भी नहीं बचा सके। अतः आज पूरे विश्व के अनेक देशों में पीने योग्य पानी का घोर संकट हो गया है। वैसे आज हमारे पास वह तकनीक भी उपलब्ध है जिससे समुद्र के खारे पानी को भी पीने योग्य बनाया जा सकता है, लेकिन वह इतनी महँगी है कि इसी कारण अभी उस तरफ सोचना भी ठीक से शुरू नहीं किया है।

इस सन्दर्भ में हम यहाँ कुछ महत्त्वपूर्ण समस्याओं की ओर देखें—

(अ) विश्व में पीने योग्य पानी की उपलब्धता (Availability of Potable Drinking Water in the World)

शुद्ध पीने योग्य पानी की मात्रा का अनुमान J. Glynn Henry[1] ने निम्न प्रकार लगाया है—

(i)	**विश्व में कुल पानी की मात्रा**	= $1{\cdot}38 \times 10^9$ घन किमी
	जिसमें से महासागर (Oceans) में	= 97·2 प्रतिशत
	शेष शुद्ध पानी (Fresh Water)	= $2{\cdot}8\% = 3{\cdot}8 \times 10^7$ घन किमी
(ii)	**कुल शुद्ध पानी ($3{\cdot}8 \times 10^7$ घन किमी) में से—**	
	ध्रुवीय शुद्ध पानी (Polar Ice), मिट्टी (Soil), चट्टानों (Rocks) और वायुमण्डल (Atmosphere) में	= 78 प्रतिशत
	शेष भूगर्भ जल (Ground water) और सतही जल (Surface water)	= $22\% = 8{\cdot}4 \times 10^6$ घन किमी
(iii)	**भूगर्भ और सतही जल ($8{\cdot}4 \times 10^6$ घन किमी) में से—**	
	उपलब्ध न हो सकने वाली (Inaccessible) मात्रा	= 99·4 प्रतिशत
	उपलब्ध (Accessible) मात्रा	= $0{\cdot}6\% = 5 \times 10^4$ घन किमी
	[यह मात्रा पूरी जल मात्रा का केवल 0·004% है]	= 50,000 घन किमी
		= $50{,}000 \times 10^{12}$ लीटर

यदि इस पानी की मात्रा को जल चक्र (Hydrological Cycle) में मान लें, जो प्रतिवर्ष हमें पीने के पानी की उपलब्धि कराता है और साथ ही यह भी स्वीकार करें कि—

(अ) वाष्पीकरण (Evaporation) तथा निर्जलीकरण (Precipitation) की क्रिया से केवल 25% जल भूमि पर गिरता है।

(ब) भूमि पर गिरने वाले पानी की लगभग 30% मात्रा को हम अपने उपयोग में ला पाते हैं।

तब 6 अरब आबादी पर प्रतिदिन प्रति व्यक्ति की जल उपलब्धि की मात्रा लीटरों में अग्र होगी—

---

1. Professor of Civil Engineering at the University of Toranto, Consultant of Canadian Government : Data made available from the book **Environmental Science and Engineering** by J. Glynn Henry and Gary W. Heinke, New Jersey (USA) : Prentice Hall, Inc., Englewood Cliffs, 1989, p. 339.

$$= 30\% \times 25\% \times \frac{50,000 \times 10^{12}}{365 \text{ दिन} \times (6 \times 10^9) \text{ (आबादी)}}$$

= 1,700 लीटर लगभग

जो यथेष्ट मानी जा सकती है, लेकिन कई कारणों से यह मात्रा भी विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को कहाँ उपलब्ध है ?

[नोट—इसी प्रकार का एक अनुमान इसी पुस्तक के 'जल' के अध्याय में भी हमने प्रस्तुत किया है। उसमें चार्ल्स एस० साउथविक ने इस मात्रा को लगभग 1,270 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन माना है।

(ब) विश्व में प्रति व्यक्ति रहने के स्थान की उपलब्धता (Availability of Living Space for an Individual in the World)

इसी प्रकार की एक और समस्या पर भी पूरा विश्व चिन्तित सा दिखाई देता है और वह है रहने के लिए स्थान की समस्या। यह समस्या भी पूर्णतः बढ़ती आबादी के साथ जुड़ी है। ज्यों-ज्यों पृथ्वी पर आबादी बढ़ेगी, त्यों-त्यों स्थान का अभाव भी बढ़ेगा। पर क्या वास्तव में विश्व में रहने के स्थान की समस्या है ? आओ इस हेतु व्यावहारिक सर्वेक्षण करें—

पृथ्वी का पूरा सतही क्षेत्रफल	= 51,01,00,500 वर्ग किमी
कुल भूमि भाग का क्षेत्रफल, 30%	= 14,89,50,800 वर्ग किमी
न रह सकने वाला भूमि भाग (अण्टार्टिका प्रदेश, रेगिस्तानी तथा पर्वतीय भाग)	= 2,56,00,000 वर्ग किमी
अतः शेष रहने योग्य भूमि भाग	= 12,33,50,800 वर्ग किमी

इस प्रकार 6 अरब आबादी के लिये

प्रति वर्ग किमी में व्यक्तियों की संख्या $= \frac{6 \times 10^9}{12,33,50,800}$

= 50 व्यक्ति लगभग प्रति वर्ग किमी

रहने की जगह की उपलब्धता के बारे में **पर्यावरणविद् जोरडन तथा राउनट्री ने अपनी पुस्तक 'दी ह्यूमन मोसिक'** में इसका बड़ा ही रोचक वर्णन प्रस्तुत किया है—

"एक व्यक्ति को खड़े रहने को 4 वर्ग फीट (2 फीट × 2 फीट) का स्थान काफी है। यदि सन् 2000 की जनसंख्या 6 अरब है, तो सभी लोगों को एक साथ खड़े होने को कुल 24 अरब वर्ग फीट जगह चाहिए। इसे यदि एक वर्गाकार जगह मान लें तो ऐसे वर्ग की एक भुजा का मान 1,54,919 फीट अथवा 29 मील या 47 किमी होगा। इसका आशय है कि 47 × 47 = 2209 वर्ग किमी के वर्गाकार या अन्य किसी आकार के क्षेत्र में विश्व की पूरी जनसंख्या एक समूह में खड़ी हो सकती है और हमें यह जानकारी है कि भारत के सबसे छोटे राज्य गोवा का क्षेत्रफल 3,702 वर्ग किमी है जो ऊपर वर्णित भूमि भाग से अधिक है। अतः विश्व में समूची आबादी को रहने के स्थान की कोई कमी है अथवा निकट भविष्य में हो सकती है, ऐसी सम्भावना नहीं है। समस्या यहाँ भी यही है कि अनेक कारणों से आबादी की बसावट पूरे विश्व में समान नहीं है।"

(स) मुख्य बाधाएँ (Main Disturbances)

उपर्युक्त चर्चा को इस प्रकरण का आधार मानते हुये हम यहाँ विभिन्न पर्यावरणीय बाधाओं को समेकित करने का प्रयास कर रहे हैं—

1. वायु प्रदूषण (Air Pollution) : वायु की सामान्य मूल संरचना (ऑक्सीजन—20·95%, नाइट्रोजन—78·00%, आर्गन—0·93%, कार्बन डाइऑक्साइड— 0·04% एवं अन्य पदार्थ व गैसें 0·08%) को ही मानव क्रियाकलापों ने छिन्न-भिन्न कर दिया है। वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधन का अधिक उपयोग, औद्योगीकरण, क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स की मात्रा की वायुमण्डल में निरन्तर वृद्धि आदि ने जिन समस्याओं को जन्म दिया है, वह हैं—

(i) ग्रीनहाउस प्रभाव (Greenhouse Effect),
(ii) तेजाबी वर्षा (Acid Rains),
(iii) ओजोन पर्त का क्षय (Depletion of Ozone Layer),
(iv) स्मोग घटनाएँ (Smog Episodes)।

2. जल प्रदूषण (Water Pollution) : वायु की आवश्यकता से दूसरे स्थान पर प्राणीमात्र के जीवन के लिये जल की महत्ता है। शुद्ध जल प्रत्येक देश, नगर, गाँव तथा व्यक्ति को समान रूप से उपलब्ध नहीं है। उस पर भी उसे हमने स्वयं प्रदूषित भी कर दिया है। औद्योगिक जलस्राव, घरेलू मल जल (sewage) एवं वर्षा जल के साथ आने वाली अनेक गन्दगी इसके मुख्य कारक हैं। इनसे पीने के पानी के स्रोत और भूगर्भ जल भण्डार प्रदूषित हुये हैं। दुष्प्रभाव बहुत स्पष्ट हैं—

(i) जल जनित रोगों (water borne diseases) जैसे—अतिसार, पेचिस, जुकाम, श्वांस-कास, हैजा, मोतीझरा, चर्म रोग, नारु, कृमि, पीलिया आदि का होना।

(ii) अनेक प्रकार की भूमीय तथा समुद्री वनस्पति की हानि।

(iii) समुद्री ज़ीव-जन्तुओं पर प्रभाव से अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य जाति की अस्वस्थता का कारण।

3. भूमि प्रदूषण (Soil Pollution) : अधिक अन्न उत्पादन की लालसा ने मनुष्य को अधिक मात्रा में रासायनिक खादें तथा कीटनाशी दवाइयों के प्रयोग हेतु उकसाया। परिणामस्वरूप अन्न भी प्रदूषित हुआ और भोजन के साथ विष भी उपभोक्ता को लेना पड़ा। भूमि में प्रदूषण बना रहा और वर्षा के साथ जल-प्रदूषण का कारण भी बन गया।

4. ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution) : बढ़ते औद्योगीकरण, भारी भीड़ से निकलने वाले विविध वाहनों द्वारा ऊँची आवाज वाले हॉर्न्स का उपयोग, मनोरंजन के साधन (रेडियो, टी० वी०, डैस्क्स एवं ध्वनि विस्तारक) आदि ने ध्वनि प्रदूषण फैलाया। इसने मनुष्य को चिड़चिड़ा, बहरा, ब्लड प्रेशर, अल्सर और मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों से ग्रसित कर दिया और उसकी सामान्य कार्यशक्ति को कम कर दिया।

5. रेगिस्तानिता (Desertification) : इस समस्या के उत्पन्न होने के दो मुख्य कारण हैं—(1) भूगर्भ जल का अधिक दोहन और (2) भूमि पर निरन्तर फसलों के साथ पशुओं की निर्बाध चराई। इस समस्या का प्रभाव सामान्यतया आबादी और पशु धन का पलायन और वायु वेग के साथ उड़ाकर ले जाने वाली रेत से अन्य कृषि योग्य भूमि का विनाश।

6. विविध अवशिष्ट (Different Wastes) : विविध क्षेत्रों के अवशिष्ट अब समस्या का रूप धारण कर रहे हैं, जिनमें (1) म्युनिसिपल तथा घरेलू अवशिष्ट (Municiple & Domestic Wastes), (2) विनाशकारी अवशिष्ट (Hazardous Wastes), (3) रासायनिक अवशिष्ट (Chemical Wastes), (4) आणविक अवशिष्ट (Nuclear Wastes), (5) औद्योगिक अवशिष्ट (Industrial Wastes), (6) कृषि अवशिष्ट (Agriculture Wastes) आदि मुख्यतः चर्चा का विषय बन गये हैं। अलग-अलग रूप से सभी मानव जाति को हानि पहुँचाते हैं। इनमें से आणविक अवशिष्ट (Nuclear Waste) तो इतना दुष्प्रभावी है कि इसका प्रभाव अगले 100 वर्षों तक रह सकता है और कैन्सर जैसे भयावह रोग का कारण बन सकता है। अस्पतालों का अवशिष्ट (Hospital Waste) भी आज प्रमुख चर्चा का विषय है।

7. भूमि क्षरण (Soil Erosion) : भूमि क्षरण का मुख्य कारण मनुष्य द्वारा वृक्षों की अत्यधिक कटाई है। इस कारण वर्षा के पानी की रोक कम हो गई और जल का तेज बहाव खेतों की उपजाऊ मिट्टी, जिसे बनने में कई सौ वर्ष लगे होंगे, मिनटों में बहा ले जाता है। एक तरफ इससे निरन्तर कृषि उत्पादन पर असर पड़ा है और दूसरी तरफ यह मिट्टी नदी, तालाब, पोखर और समुद्री किनारे पर इकट्ठी होकर (siltation) भण्डारों की भराव क्षमता कम करती है। कम पानी से भी बाढ़ के आ जाने का यह कारण बन जाता है।

8. वन्य जीवों की कमी (Decrease in Wild Life) : सघन वृक्षों के कटने से वन्य जीवों के आश्रय स्थल कम हो गये और वन्य जीवों का पलायन कम सुरक्षित क्षेत्रों से अधिक सुरक्षित क्षेत्रों में होने लगा। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वन्य जीवों के अंगों एवं अस्थियों के अवैध व्यापार ने भी अनेक जीवों का संहार कर दिया। इससे शनैः-शनैः प्रकृति संरक्षण को कठिनाइयाँ आ गईं। पारिस्थितिकी तन्त्र जगह-जगह चरमरा गया।

9. भूमि का असंगत उपयोग (Improper Use of Land) : भूमि के असंगत उपयोग से पर्यावरण में तत्काल व बहुत अधिक पर्यावरणीय समस्याएँ उठ आती हैं। चाहे यह कार्य राजकीय विभाग के अधिकारी करते हों अथवा स्वयं मनुष्य अपने स्तर पर भूमि का विभिन्न प्रकार से उपयोग करता हो। एक उदाहरण से यह स्पष्ट हो सकता है : एक अत्यन्त शांत आवासीय कॉलोनी के मध्य एक बड़ा भूमि भाग है जिसमें कॉलोनी के बच्चे खेलते हैं। पब्लिक की सुविधा के लिये उसमें बस-स्टैण्ड बना दिया। अब वह शोर स्थल, गन्दगी स्थल, वायु प्रदूषण का स्रोत व अनेक सामाजिक बुराइयों का केन्द्र बन गया।

10. प्राकृतिक संसाधनों का शोषण (Exploitation of Natural Resources) : मनुष्य ने अपने उपयोग हेतु प्रकृति के संसाधनों को इतना काम में ले लिया कि अब वर्तमान में लगभग सभी अपरिवर्तनीय (non renewable) साधन समाप्त प्रायः हो चले हैं। ऊर्जा के लिये आवश्यक खनिज के शोषण से तो विश्व में हाहाकार मच गया है। कोयला, तेल, गैस के बाद क्या होगा ? लकड़ी भी कितनी और कब तक उपलब्ध होगी ?

11. संकटमय उद्योगों की स्थापना (Establishment of Hazardous Industries) : अनेक उद्योग संकटमय रसायन (Hazardous Chemicals), विषैले कीटनाशी (Poisonous Pesticides), खाद (Fertilizers), तापीय विद्युत घर (Thermal Power Projects) आदि सदैव खतरे का कारण बनते हैं और चाहे जब रिसाव अथवा अन्य प्रकार से जनहानि करते हैं।

12. औद्योगीकरण (Industrialisation) : विज्ञान और तकनीकी ज्ञान की वृद्धि ने मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उद्देश्य से मशीनों का उपयोग बढ़ा दिया और इससे अधिक विकसित देशों ने औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) की शुरूआत कर दी। ग्रेट ब्रिटेन इस दौड़ में प्रथम देश था जिसने 18वीं शताब्दी में इसे प्रारम्भ किया। फिर अनेक अन्य देश साथ जुड़े। इस क्रान्ति ने वायुमण्डल, स्थलमण्डल, जलमण्डल तथा मानव समूह को अपने क्रियाकलापों से सर्वाधिक प्रभावित किया। एक तरफ अनेक उत्पाद जैसे डी डी टी (DDT), रासायनिक कृत्रिम खाद, प्लास्टिक, कीटनाशी, डिटरजेन्ट्स, पारा (Mercury) आदि से समस्त विश्व को विषैले पदार्थ मिले, वहीं इनके अवशिष्ट, पैकिंग सामग्री, यातायात साधन और ऊर्जा के उपयोग से अवशिष्ट निस्तारण (wastes disposal) की समस्या उठ खड़ी हुई।

13. शहरीकरण (Urbanisation) : अच्छी जीविका कमाने, भर पेट भोजन पाने तथा अधिक सुविधापूर्ण जीवन जीने की कल्पना ने लोगों को शहरों की ओर मोड़ दिया। इससे शुद्ध वायु, स्वच्छ जल, अच्छा भोजन, साफ और हवादार आवास सभी गड़बड़ा गये। अधिक भीड़ ने पर्यावरण के सन्तुलन को विकृत कर दिया और साथ ही विविध प्रकार की सामाजिक समस्याएँ, जैसे—हिंसा, चोरी, अपराधीकरण, मारपीट और अनैतिक कार्यों का चलन, उत्पन्न हो गईं। वायु और जल प्रदूषण के दुष्प्रभाव के कारण अनेक प्रकार के रोगों से भी उन्हें ग्रसित होना पड़ा तथा यथोचित चिकित्सा सुविधा के अभाव में जनहानि भी उठानी पड़ी। जीवन कष्टमय हो गया।

14. निराशात्मक भविष्य का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Pessimistic Future) : मनुष्य ने जहाँ प्रगति के नाम पर इतनी समस्याएँ उत्पन्न की हैं कि आज विचारकों की अधिकाधिक संख्या पर्यावरण से होने वाली कठिनाइयों से ही जूझ रही हैं वहीं उन्होंने एक निराशात्मक और भय पैदा करने वाले भविष्य का चित्रण भी किया है जिससे पृथ्वी निवासी अत्यन्त चिन्तित हो उठे हैं। **Charles H. Southwick** ने अपनी पुस्तक **'Ecology and the Quality of Environment'** के **17वें अध्याय 'Ecology and the Future of Man'** में लिखा है कि आज लोगों के मन में यह प्रश्न उठे हैं—

1. मनुष्य के लिये पृथ्वी की सहन क्षमता क्या है ?
   What is the carrying capacity of the earth for man ?
2. मनुष्य की आबादी के सन्दर्भ में पृथ्वी की जीवन रक्षण समर्थता की सीमाएँ क्या हैं ?
   What are the limits of the life support capabilities of the earth in terms of human population ?
3. अपनी ही जाति से उत्पन्न दबाव को सहने की मनुष्य की सीमा क्या है ?
   What are the tolerance level of man to the pressure generated by his own societies ?

15. परिवहन के बढ़ते साधन (Increasing Means of Transporation): पिछले दो दशकों से स्वचलित वाहनों की अप्रत्याशित वृद्धि ने पर्यावरण के क्षेत्र में कई विशेष समस्याएँ उत्पन्न की हैं— (1) तेजाबी वर्षा (Acid Rains), (2) दुर्घटनाएँ (Accidents), (3) वायु प्रदूषण (Air Pollution) तथा (4) आर्थिक संकट (Economic Depression) इनमें मुख्य हैं। पेट्रोल व डीजल की बढ़ती कीमतों ने जन-साधारण को कठिनाई में और डाल दिया है।

16. अस्त-व्यस्त पारिस्थितिकी तन्त्र (Disturbed Eco-system): किसी भी सन्तुलित परितन्त्र (Balanced Eco-system) में उसके चारों घटकों, (1) अजैविक पदार्थ (Abiotic Substances), (2) उत्पादक जीवधारी (Producer Organisms), (3) उपभोक्ता जीवधारी (Consumer Organisms) और (4) विघटक जीवधारी (Decomposer Organism) का होना आवश्यक है। इनमें से कहीं पर भी किसी के लुप्त होने अथवा नष्ट होकर कम होने से पारिस्थितिक तन्त्र की अस्त-व्यस्तता हो जाती है, जिससे प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ जाता है। मनुष्य के अविवेकपूर्ण कार्यों से ऐसा होता है।

• पर्यावरण हेतु आवश्यक वर्तमान दृष्टिकोण (Necessary Present View Point for the Environment)

अब वर्तमान में पर्यावरण को समझने तथा उसकी सभी बाधाओं को दूर कर उसे सन्तुलित एवं जन उपयोगी बनाने हेतु मनुष्य को अपने दृष्टिकोण को 'लक्ष्य केन्द्रित' (objective centred) तथा 'परिणाम केन्द्रित' (result centred) करना होगा और अन्तिम उपलब्धि 'पर्यावरण की गुणवत्ता' (quality of environment) रखना होगा। इसी से मनुष्य को 'जीवन की गुणवत्ता' (quality of life) प्राप्त होने की सम्भावना हो सकती है। हमें निम्न दिशाओं में अपने क्रियाकलाप करने होंगे—

1. पर्यावरण संरक्षण (Conservation of Environment)

प्रकृति में अथवा पृथ्वी पर मानवकृत पर्यावरण की स्थिति जो भी मानव के दोषपूर्ण कृत्यों के बाद रह गई है उसे संरक्षण प्रदान किया जाये। अपरिवर्तनीय (non-renewal) संसाधनों को कम-से-कम छेड़ा जाय तथा परिवर्तनीय (renewal) संसाधनों का आवश्यकतानुसार ही उपयोग हो। मनुष्य को धार्मिक मान्यताओं, सांस्कृतिक परम्पराओं और प्राचीन प्रथाओं/रिवाजों के माध्यम से सही कार्य करने हेतु प्रेरित किया जाना बहुत आवश्यक है। उन्हें यह बताना भी बहुत समीचीन है कि पर्यावरण संरक्षण से तुम्हारा तथा तुम्हारी भविष्य की पीढ़ी का जीवन अत्यन्त निकट से जुड़ा है।

2. पर्यावरण सुरक्षा (Preservation of Environment)

संरक्षित की गई स्थिति की सुरक्षा तथा उसकी आवश्यक देखभाल इस पद के अन्तर्गत आता है। पर्यावरण को हर स्थिति में विनाश से बचाना है तथा प्रकृति के विविध कार्यकलापों को अबाध गति से चलते रहने हेतु प्रयत्नशील रहना है। वस्तुओं का सदुपयोग भी सुरक्षा में सम्मिलित किया जा सकता है।

3. प्रदूषण की रोकथाम (Abatement of Pollution)

वायु, जल, भूमि, वाहन तथा ध्वनि प्रदूषण आदि से जनमानस अत्यन्त ग्रस्त तथा त्रस्त है। वह उपाय करने हैं जिससे भविष्य में हर क्षेत्र के प्रदूषण को रोका जा सके। अवशिष्ट के निस्तारण की समस्या का हल भी खोजना अत्यन्त आवश्यक हो गया है क्योंकि अप्रत्यक्ष रूप से यह भी प्रदूषण ही फैला रहे हैं और विश्व भर में मानव की चिन्ता के कारण बन रहे हैं। प्रदूषण को रोकने हेतु राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर बनाये गये कानूनों की सख्ती से अनुपालना करनी और करानी चाहिए।

4. अन्य समस्याओं का निराकरण (Solution to Other Problems)

अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ मूल रूप से एक या कुछ समस्याओं से जुड़ी हैं, अतः समाधान खोजने हेतु मूल समस्याओं के निराकरण की बात सोचना उचित एवं उपयुक्त है। उदाहरण के लिये वनों का विनाश न करने से जाने कितनी पर्यावरणीय समस्याएँ स्वतः हल हो जायेंगी। उद्योगों में आवश्यक क्षमता के प्रदूषण नियन्त्रक लगाने में वायुमण्डल और जलमण्डल की अनगिनत समस्याओं का समाधान निहित है, आदि। यह दृष्टिकोण प्राकृतिक तथा मानवकृत दोनों प्रकार के पर्यावरण हेतु आवश्यक हैं।

5. पर्यावरण सुधार (Improvement of Environment)

जितना भी पर्यावरण विकृत हो गया है अथवा उसका ह्रास हो रहा है, उसे सुधारने हेतु भी व्यावहारिक प्रयास किये जाने की महती आवश्यकता है। घने जंगल लगाये जायें, वन्य जीवों की सुरक्षा का प्रावधान हो, जल स्रोतों की स्वच्छता बनाई रखी जाये, माइनिंग (mining) से विकृत स्थलों को मनोरंजन स्थल के रूप में विकसित किया जाये, आवासीय कॉलोनियों अथवा कस्बे व गाँव के बीच बन गये 'गन्दगी केन्द्र' (dumping grounds) को बच्चों के खेलने के मैदानों में परिवर्तित किया जाये, स्वचलित वाहनों का उपयोग कम किया जाये, भूमि क्षरण रोकने की पुख्ता व्यवस्था हो, खेतों में पारम्परिक कार्बनीय खादों के उपयोग को प्रोत्साहन दिया जाये आदि।

6. पर्यावरण के प्रति जन जाग्रति (Public Awareness about Environment)

साधारण जन-मानस को पर्यावरण की विभिन्न समस्याओं से अवगत कराकर उनसे हो सकने वाले दुष्परिणामों की जानकारी दी जानी चाहिये। इन समस्याओं के निराकरण हेतु उनकी भूमिका के महत्त्व को भी समझाना चाहिये। स्वयंसेवी संस्थाओं के महत्त्वपूर्ण योगदान को समझने और समझाने की आवश्यकता है।

7. पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता एवं औचित्य (Need and Justification of Environmental Education)

विश्वव्यापी समस्या का समाधान केवल योजना निर्माण और उसकी क्रियान्विति से ही सम्भव नहीं है। इस हेतु व्यवस्थित रूप से पर्यावरण शिक्षा का प्रावधान प्रत्येक स्तर के लोगों के लिये करना चाहिये, चाहे वह विद्यार्थी हो अथवा कार्यरत कर्मचारी और अधिकारी, चाहे वह शिक्षित हो अथवा अशिक्षित। सभी लोगों के लिये आवश्यक सामग्री का चयन तथा उसे प्रदान करने का तरीका अत्यन्त व्यावहारिक बनाना चाहिए। शिक्षा ग्रहण करने वाले भी इस विषय की उपादेयता पहचान सकें यह भी जरूरी है।

8. विदेशों में पर्यावरण संरक्षण हेतु अपनाये गये तरीकों की नवीनतम जानकारी (Latest Knowledge of Adopted Methods for Environmental Protection in Abroad)

पर्यावरण की समस्या विश्वव्यापी है और अनेक देशों ने, जिनमें इंग्लैण्ड, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जर्मनी, स्वीडन, फिनलैण्ड, फ्रान्स, डेन्मार्क, जापान, कनाडा आदि शामिल हैं, इससे काफी सीमा तक छुटकारा पा लिया है। वे विश्व तापन (Global Warming), तेजाबी वर्षा (Acid Rains) और ओजोन पर्त का क्षय (Ozone Layer Depletion) आदि समस्याओं के समाधान हेतु विज्ञान तथा तकनीकी ज्ञान का सहारा लेकर प्रयत्नशील हैं। ऐसे देशों की कार्य-योजनाओं का अध्ययन हमें अपने लक्ष्य निर्धारण करने तथा उसकी क्रियान्विति में बहुत सहायक हो सकते हैं। राष्ट्रसंघ के प्रयासों और प्रसारित निर्देशों तथा सुझावों की जानकारी भी उपलब्ध करनी चाहिये।

9. सरकार की नीति व कार्यविधि (Policy and Procedure of the Government)

वर्तमान की आवश्यकता को वरीयता देते हुये सरकार को पर्यावरण की नीति बनानी चाहिये तथा इस प्रकार की कार्यविधि अपनाई जानी चाहिए जिससे वांछनीय परिणाम प्राप्त हो सकें। अपने अधीन समस्त अधिकारी/कर्मचारियों को ऐसे स्पष्ट निर्देश होने चाहिये जिससे पर्यावरण विकृति के किसी कार्य से वह समझौता न करें। केवल महत्त्वाकांक्षी योजना को निरुत्साहित कर व्यावहारिक कार्य पक्ष को प्रधानता देना आवश्यक है। 'विश्व स्तर पर सोचो, लेकिन स्थानीय परिपेक्ष में काम करो' (Think Globally and Act Locally) के सिद्धान्त का अनुसरण उचित एवं उपयुक्त है। राजनीति और आर्थिक पक्ष से इस क्षेत्र को बचाना चाहिये और मानव कल्याण तथा उनके सुखी जीवन की कल्पना को योजना का आधार बनाना चाहिये।

10. लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाना (To Bring a Change in the Mentality of the People)

प्रत्येक व्यक्ति की यह सोचने की दिशा, कि अकेले मेरे असामान्य कार्य करने से क्या फर्क पड़ता है, को अब परिवर्तन की आवश्यकता है। सब मिलकर चाहे कोई अच्छा अथवा सही कार्य कर पाने में

सफल न हों, लेकिन किसी एक व्यक्ति के अवांछनीय कृत्य से हाहाकार मच सकता है। लोगों में अब 'बूँद-बूँद जल भरहिं तलावा' की सोच को जगाना होगा। सभी लोग जो भी इस पृथ्वी पर रहते हैं उनका यह उत्तरदायित्व है कि वह इस पर्यावरण को शुद्ध, स्वच्छ व सन्तुलित रखें।

11. पर्यावरणीय आचार संहिता का विकास करना (To Develop the Environmental Ethics)

पर्यावरण की समस्या मानव द्वारा ही उत्पन्न हुई है, विशेषतः उनकी अधिक आबादी और उनके गलत क्रियाकलापों द्वारा। अतः कटु सत्य यही है कि इनका हल भी मनुष्य द्वारा ही किया जाना चाहिये। यह उनका नैतिक दायित्व भी है और कर्त्तव्य भी। पर्यावरणीय आचार संहिता का निर्माण किया जाना चाहिये और उसका कठोरता से स्व-पालन करना चाहिये।

12. पर्यावरण के क्षेत्र में प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता (Need of Trained Personnels in the Field of Environment)

पर्यावरण के क्षेत्र में हर स्तर पर, उच्च अधिकारी से लेकर निम्न कर्मचारी तक, प्रशिक्षित व्यक्तियों के उपलब्ध न हो पाने के कारण पर्यावरण सम्बन्धी योजनाओं की सफल क्रियान्विति नहीं हो पा रही है। उचित प्रकार से क्रियान्वयन का मानीटरिंग भी आवश्यक है। पर्यावरण को अलग से एक कार्य समझ कर नहीं किया जाना चाहिये बल्कि इसे प्रत्येक विभाग के कार्यों से जोड़ना चाहिये, तभी एक सही प्रस्तुतीकरण सम्भव है।

13. पर्यावरण दावों के लिये विशेष न्यायालय (Special Courts for Environmental Suits)

पर्यावरण विकृत करने वाले व्यक्ति अथवा संस्थान को तत्काल विशेष न्यायालयों के माध्यम से पर्यावरणीय कानून के अन्तर्गत सजायें होनी चाहिये। इससे अन्य लोगों को भी अपने आप को सुधारने का अवसर मिलेगा।

14. जनहित याचिकाओं को प्रोत्साहन (Encouragement to Public Interest Litigation)

पर्यावरण के संकट से सताये गये व्यक्ति अकेले कोई कदम उठाने में असहाय पाते हैं जिनके कई कारण हैं। न्यायालयों द्वारा अतः व्यक्ति, समुदाय, संस्था अथवा अन्य किसी भी प्रकार से उठाये गये प्रकरणों को जनहित याचिका मानकर स्वीकार कर उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिये।

15. नगर नियोजन को महत्त्व (Importance to Town Planning)

नगर नियोजन में आबादी के बहुत पास प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग न हों तथा हरित पट्टी (green belt) से नगर घिरा हो, यह तभी सम्भव है जबकि नगर नियोजन को महत्त्व दिया जाये जो अत्यन्त आवश्यक है। बस स्टैण्ड, रेलवे स्टेशन, मनोरंजन स्थल, प्रोवीजन एवं अन्य स्टोर आदि कहाँ हों यह भी नगर नियोजन के अन्तर्गत लिया जा सकता है, जिससे रहने वाले व्यक्ति पर्यावरणीय विपदाओं से अधिक से अधिक दूर रहें।

16. अवशिष्टों का पुनःचक्रंण (Recycling of Wastes)

ऊपर हमने औद्योगिक, कृषि व अन्य अवशिष्टों के निस्तारण की बात कही है, लेकिन अनेक पदार्थ/वस्तुएँ ऐसी हैं जिनका उपयोग के बाद पुनःचक्रण (Recycle) किया जा सकता है। इनमें कागज, प्लास्टिक, लोहे के स्क्रेप्स, शीशे के टुकडे आदि प्रमुख हैं। कूड़ा-कचरा तो इन दिनों खाद के रूप में चक्रित अनेक देशों में किया ही जा रहा है।

17. पर्यावरण के क्षेत्र में शोध (Research in the Field of Environment)

विज्ञान और टैक्नोलोजी की निरन्तर प्रगति ने पर्यावरण क्षेत्र को कई नई दिशायें दी हैं तथा कई समस्याओं को हल करने की पेशकश भी की है जिन्हें इसलिये प्रयोग में नहीं लिया जा सका है क्योंकि वह महँगी हैं। शोध के माध्यम से कम व्यय वाली तकनीक का विकास किया जाना चाहिये।

18. पर्यावरण साहित्य का निर्माण और उसका वितरण (Production and Distribution of Environmental Literature)

ऐसे पर्यावरण साहित्य का निर्माण किया जाना अपेक्षित है, जो सरल, स्पष्ट, सही और लोगों को ग्राह्य हो। मूलभूत बिन्दुओं की स्पष्टता से ही पर्यावरण की आन्तरिक स्थिति का भान जन-पानस को

दिया जा सकता है। यह व्यवस्था भी साथ में आवश्यक है कि इस साहित्य का व्यापक वितरण और प्रसार हो।

19. मीडिया की प्रभावी भूमिका (Effective Role of Media)

समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, आकाशवाणी और दूरदर्शन की भूमिका बहुत ही व्यापक और स्पष्ट रूप से नियत की जानी चाहिये। पर्यावरण के किसी भी क्षेत्र की जानकारी प्रस्तुत करते समय उससे पाठक, श्रोताओं और दर्शकों को भय से भी बचाना चाहिये तथा उनके मनोबल को बढ़ाना चाहिये। उल्लेखनीय है कि मीडिया द्वारा अनौपचारिक शिक्षण मनुष्य की मनोवृत्तियों में ऐसा परिवर्तन ला सकता है जिससे वह पर्यावरण विकृति को दूर करने तथा पर्यावरण सुधार लाने में अपनी महती भूमिका निभा सकें।

20. बढ़ती आबादी पर नियन्त्रण (Control on Growing Population)

पर्यावरण ही नहीं बल्कि लगभग सभी समस्याओं के मूल में कारण बढती आबादी है, जिस पर नियन्त्रण करना बहुत कठिन हो रहा है। इसी वजह से प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपयोग, अन्य वस्तुओं की अधिक आवश्यकता, प्रदूषण में वृद्धि और अन्ततः पर्यावरण ह्रास हो रहा है। किसी भी प्रकार इसे नियन्त्रित करने से ही पर्यावरण समस्याओं की कमी हो सकती है।

21. पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Environmental Impact Assessment)

किसी भी नये उद्योग को प्रारम्भ करने से पूर्व उसका पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन कराया जाना अत्यन्त आवश्यक कर देना चाहिये, नहीं तो भविष्य में हो सकने वाली घटनाओं/दुर्घटनाओं से बचना/बचाना बहुत मुश्किल होगा। साथ ही उद्योग अपनी स्वयं की व्यवस्था से स्वीकार योग्य उत्सर्जन (acceptable emissions) और यथासम्भव शून्य स्तरीय जलस्राव (zero level effluent discharge) करेंगे, यह आवश्यक शर्त अनुबन्धित होनी चाहिये।

• स्वच्छ पर्यावरण की सुखद कल्पना (Pleasant Imagination of Clean Environment)

अब **पर्यावरण की गुणवत्ता** अथवा **अच्छे और स्वच्छ पर्यावरण** की बात करें। एक अच्छा पर्यावरण क्या है ? इस पर अनेक लोगों के अनेक मत हो सकते हैं, जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि उनके सोचने का, रहने का और यहाँ तक कि खाने-पीने का और काम करने का तरीका क्या है ? पर फिर भी सभी इस बात में एकमत होंगे कि कूड़ा-करकट, धूल, रोग, प्रदूषण, शोर, कलह, गरीबी और निम्न स्तर सभी पर्यावरण की गुणवत्ता को कम करते हैं। साथ ही अधिक भीड़, तनाव, डर, चिन्ताएँ, विद्रोह और अस्वस्थता भी जीवन की सुन्दरता को क्षति पहुँचाते हैं। अतः अच्छे जीवन को जीने के लिए इन दोनों प्रकार की अनचाही बातों से दूर रहना आवश्यक है। हम यही स्वीकार कर सकते हैं कि **जीवन की गुणवत्ता** का ठोस आधार **पर्यावरण की गुणवत्ता** ही हो सकती है। अतः शुद्ध पानी, स्वच्छ भोजन, निरापद वायु, साफ-सुथरा आवास और बिना किसी प्रदूषण के वातावरण एक अच्छे पर्यावरण के आवश्यक घटक हैं, लेकिन जीवन जीने के लिये मानसिक रूप से स्वस्थ होना और प्रकृति से विरासत में मिले विभिन्न पदार्थों का ठीक से उपभोग करना भी उतना ही आवश्यक है।

• सुन्दर भविष्य हेतु हमारा उत्तरदायित्व (Our Responsibilities for a Happy Future)

पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में एक विहंगम अवलोकन हमने यहाँ किया है। इस सन्दर्भ में हमें यह देखना है कि विश्व की अनेक पर्यावरणीय समस्याओं में से हमें अपने देश में किन-किन समस्याओं से जूझना है ? उनके दूर करने के क्या उपाय या तरीके हो सकते हैं ? हमारी क्षमताएँ, साधन-सुविधाएँ क्या और कितनी हैं ? हम उन्हें सूचीबद्ध कर सकते हैं। **प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता और उचित उपयोग, वायु, जल, भूमि और इनके प्रदूषण के कारण और निवारण, ध्वनि प्रदूषण, बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, औद्योगीकरण, ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन पर्त का क्षय, नम भूमि और बंजर भूमि की समस्याएँ, स्वचालित वाहनों से प्रदूषण, पर्यावरणीय कानून, ऊर्जा व उसके वैकल्पिक स्रोत, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति और**

पर्यावरणीय शिक्षा आदि वह विचार विन्दु हो सकते हैं जिन पर हमें शांति से सोचना है तथा उन पर जन-साधारण की जिम्मेदारी निश्चित करनी है। हमारा सुन्दर भविष्य हमारे अपने उत्तरदायित्व को निवाहने में निहित है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पर्यावरण को विश्व स्तर पर सोचने के क्या मुख्य कारण थे ?
2. प्राकृतिक पर्यावरणीय समस्याएँ कौन-कौन सी होती हैं ?
3. पर्यावरण को विकृत करमे की कोई 3 (तीन) बाधाओं का विवरण दीजिये।
4. कभी-कभी हमें अपना भविष्य बहुत निराशावादी लगता है, आखिर क्यों ?
5. स्वच्छ पर्यावरण के बारे में हमारी क्या संकल्पनायें हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. पर्यावरण को परिभाषित कीजिये।
7. बढ़ती आबादी ने पर्यावरण को कैसे विकृत किया है ?
8. पर्यावरण को ठीक रखने के लिये सभी ने 'पर्यावरणीय शिक्षा' को स्वीकारा है ? यह कैसे उपलब्ध हो सकती है ?
9. पारिस्थितिक तन्त्र के बिगड़ने से पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
10. शहरीकरण की समस्या को कैसे प्रस्तुत करेंगे ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. शुद्ध वायु अधिनियम सर्वप्रथम किसने बनाया ?
    (अ) ब्रिटिश सरकार (ब) अमेरिका सरकार
    (स) कनाडा सरकार (द) फ्रान्स सरकार
12. पर्यावरण की समस्या को सबसे अधिक विकृत किसने किया ?
    (अ) जनसंख्या वृद्धि (ब) औद्योगीकरण
    (स) शहरीकरण (द) ऊर्जा का अधिक उपयोग
13. वनों की अधिक कटाई तथा भूगर्भ जल के अधिक दोहन से निम्न क्षेत्र में वृद्धि हुई है—
    (अ) नम भूमि (ब) बंजर भूमि
    (स) रेगिस्तान (द) मैदान
14. विश्व में प्रति वर्ग किमी में कुल व्यक्तियों के रहने का स्थान उपलब्ध है—
    (अ) 50 (ब) 75
    (स) 100 (द) 125
15. निम्न में से कौन-सी गैस ग्रीनहाउस प्रभाव का कारण नहीं है ?
    (अ) कार्बन डाइऑक्साइड (ब) मीथेन
    (स) नाइट्रस ऑक्साइड (द) नाइट्रोजन

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

16. वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा.................% है।
17. ....भी जल जनित रोग है।
18. सिरिंज, ग्लूकोज की बोतलें.................अवशिष्ट के अन्तर्गत आती हैं।
19. ....प्रदूषण से व्यक्ति चिड़चिड़ा, बहरा और ब्लड प्रेशर का मरीज हो सकता है।
20. लकड़ी.................प्राकृतिक संसाधन है।

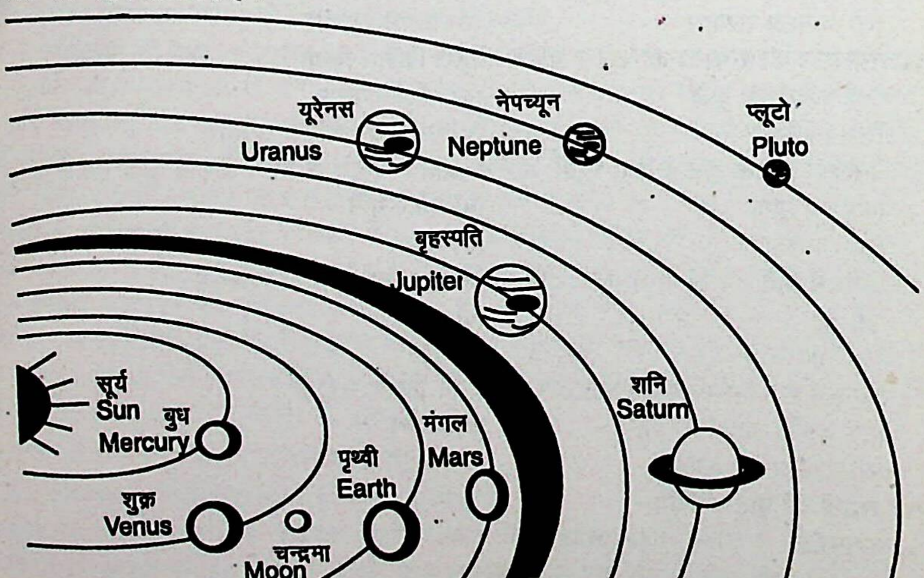
2

सौर मण्डल
[THE SOLAR SYSTEM]

- **प्रस्तावना**
  (Introduction)

ब्रह्माण्ड की विशालता और इसकी स्थिति का वर्णन एक कठिन कार्य है। कोई नहीं जानता कि इसकी उत्पत्ति कब हुई और इसका अन्त कब है ? लेकिन समय के साथ-साथ खगोलवेत्ता इसका अध्ययन करके विभिन्न सिद्धान्तों के आधार पर इसे तथा इसके विविध अवयवों को परिभाषित करने के प्रयास में लगे हैं, जिनमें कभी-कभी तो इतना स्पष्ट अन्तर प्रतीत होता है कि पूरे सोचने की प्रक्रिया में ही परिवर्तन आ जाता है। उदाहरणार्थ 140 ए० डी० में क्लॉडिस टोलेमी (Claudis Ptolemy) के आधार पर पूरे ब्रह्माण्ड का केन्द्र बिन्दु 'पृथ्वी' था और सूर्य तथा अन्य आकाशीय पिण्ड इसके चारों ओर चक्कर लगाते थे, जो निःसन्देह बाद में अस्वीकृत कर दिया गया।

लगभग पिछले 2000 वर्ष की अवधि में अब ऐसे प्रमाणित तथ्य सामने आये हैं जिनके आधार पर अनेक सिद्धान्तों को प्रभावी रूप से स्वीकार किया जा सकता है। इनके पीछे ठोस वैज्ञानिक आधार और विशेषज्ञों का गहन अध्ययन है :



चित्र 2·1—सौर मण्डल

1. ब्रह्माण्ड में अनेक प्रकाश पुँज हैं, उनमें अपना प्रकाश है, वह सामान्यतया एकजुट रहते हैं, अलग-अलग रहना एक अपवाद है। इन्हें तारे (Stars) कहते हैं। सूर्य भी एक तारा है। ब्रह्माण्ड में अनेक सूर्य हैं।
2. सूर्य के चारों ओर घूमने वाले आकाशीय पिण्ड 'ग्रह' (Planets) कहलाते हैं। इनमें अपना प्रकाश

नहीं होता है बल्कि ये सूर्य से रोशनी प्राप्त करते हैं। स्पष्ट है कि इन ग्रहों का केन्द्र बिन्दु 'सूर्य' होता है।

3. हमें दिखने वाला 'सूर्य' पूरे ब्रह्माण्ड में अनेक सूर्यों में से एक है। इसके चारों ओर चक्कर लगाने वाले ग्रहों की संख्या 9 है—
(1) बुध (Mercury), (2) शुक्र (Venus), (3) पृथ्वी (Earth), (4) मंगल (Mars), (5) बृहस्पति (Jupiter), (6) शनि (Saturn), (7) अरुण (Uranus), (8) वरुग (Neptune) और (9) प्लूटो (Pluto)। यह सभी ग्रह अपनी धुरी पर स्वयं भी निंश्चित गति से घूमते हैं और सूर्य को केन्द्र मानकर निश्चित गति से उसका भी चक्कर लगाते हैं।
4. प्रत्येक ग्रह के चारों ओर चक्कर लगाने वाले आकाशीय पिण्ड उपग्रह (Satellites) कहलाते हैं। इन्हें 'चन्द्रमा' (Moon) भी कहते हैं। अलग-अलग ग्रहों के उपग्रहों की संख्या अलग-अलग है। पृथ्वी का केवल एक उपग्रह 'चन्द्रमा' है। ये उपग्रह भी सूर्य से ही रोशनी प्राप्त करते हैं। अब तक जाने गये उपग्रहों की कुल संख्या 63 है।
5. इनके अतिरिक्त भी असंख्य संख्या में 'क्षुद्रग्रह' (Asteroids) तथा 'धूमकेतु' (Comets) हैं, जो आकाश मण्डल में ग्रहों के आसपास घूमते रहते हैं।

उपर्युक्त वर्णन में हमने एक 'सूर्य', उसके चारों ओर चक्कर लगाने वाले 'ग्रहों' तथा 'उपग्रहों' एवं अन्य आकाशपिण्डीय वस्तुओं को सम्मिलित किया है। यह पूरा तन्त्र **'सौर मण्डल'** कहलाता है। अब हम संक्षिप्त में इन सभी पर चर्चा करना चाहेंगे।

● सूर्य
(Sun)

सौर मण्डल का केन्द्र बिन्दु और पूरे मण्डल का संचालक सूर्य ब्रह्माण्ड के तन्त्र में इस प्रकार स्थित है कि वह अपने किसी अदृश्य केन्द्र बिन्दु, जो उससे 32,000 प्रकाश वर्ष[1] की दूरी पर है, के चारों ओर 250 मिलियन वर्ष में एक चक्कर लगाता है (जिसे वैज्ञानिक अब 'अन्तरिक्षीय वर्ष' कहते हैं) और इस प्रकार अपने आप को नियंत्रित रखता है। इसकी औसत परिभ्रमण गति 250 किमी/सेकण्ड है।

सूर्य की संरचना हाइड्रोजन (71%), हीलियम (26·5%) तथा अन्य तत्व (2·5%) से हुई है। इसमें ऊर्जा इसके अन्दर ही के तत्त्वों के संघर्ष से उत्पन्न होती है और इस संघर्ष में उसकी लगभग 1,000 अरब पाउण्ड हाइड्रोजन प्रति सेकण्ड व्यय हो जाती है। सूर्य कितना बड़ा है, इसकी संरचना की विशालता का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि तब भी सूर्य का कार्यकाल 5 अरब वर्ष रहेगा, लेकिन इसके बाद भी उसका अस्तित्व समाप्त नहीं होगा, बल्कि वह एक ऐसे लाल विशाल पिण्ड के रूप में रहेगा जिसका कई हजार गुना आयतन हो जायेगा और हजारों गुना ही अधिक प्रकाशवान होकर चमकेगा (यद्यपि यह भयानक और भयावह स्थिति ही होगी)।

ऐसा अनुमान है कि तब पास के ग्रह बुध और शुक्र पिघल जायेंगे। पृथ्वी के महासागर वाष्प बन कर उड़ जायेंगे। पृथ्वी स्वयं एक वीरान चट्टान के रूप में रह जायेगी जो असाधारण गर्म होगी। पृथ्वी पर जीवन समाप्त हो जायेगा।

सूर्य की पृथ्वी से दूरी लगभग 149·8 मिलियन किलोमीटर है। इसका व्यास 1·384 मिलियन किमी और अन्दर का तापमान 15 मिलियन K (केल्विन)[2] इकाई है। बाहरी सतह का औसत तापमान जहाँ से हमें गर्मी मिलती है, 5,770°K है (अधिकतम तापमान 11,000°K तक मापा गया है)।

सौर परिवार का प्रमुख केन्द्र सूर्य अपने आप में इतना विशाल गर्म गैसीय पिण्ड समेटे हुए है कि इसका भार पृथ्वी के भार से 3,33,000 गुना (पृथ्वी का भार = $5{\cdot}975 \times 10^{24}$ किलोग्राम) है तथा पूरे सौर मण्डल की 699/700 भाग सामग्री से निर्मित है। पूरे सौर मण्डल की लगभग समस्त ऊर्जा का स्रोत केन्द्र भी यही है।

पृथ्वी से सूर्य की औसत दूरी लगभग 150 मिलियन किमी इतनी लम्बी है कि यदि एक वायुयान 1,000 किमी प्रति घंटे की गति से चले तो उसे पृथ्वी से सूर्य तक पहुँचने में 17 वर्ष से अधिक समय लगेगा।

1. एक प्रकाश वर्ष = $9{\cdot}5 \times 10^{12}$ किमी
2. एक डिग्री केल्विन = एक डिग्री सेल्सियस + 273·16

सूर्य से भारी ऊर्जा 10^{26} जूल (Joules)[1] प्रति सेकण्ड की गति से मिलती है, जो उसी के चारों ओर फैल जाती है। केवल इसका थोड़ा भाग पृथ्वी को मिलता है जिसकी मात्रा 173×10^{15} जूल प्रति सेकण्ड है। इसका भी एक-तिहाई भाग वायुमण्डल की ऊपरी पर्त से टकराकर लौट जाता है। वस्तुतः बहुत कम ऊर्जा ही पृथ्वी को मिल पाती है।

सूर्य सम्बन्धी आँकड़े
(Solar Statistics)

• पृथ्वी से दूरी	149·8 मिलियन किमी
• व्यास	1·384 मिलियन किमी (पृथ्वी से 109 गुना)
• संहिता	$19{\cdot}72 \times 10^{28}$ किग्रा (पृथ्वी से 33,000 गुना, सभी ग्रहों की संहिता का 740 गुना, पूरे सौरमण्डल का 99·8%)
• सतही तापमान	5770°K
• कोर (Core) का अन्दरूनी तापमान	1,50,00,000°K
• पृथ्वी से दिखता अपनी धुरी पर आवर्तन काल (Rotation Period)	25·38 दिन
• परिभ्रमण काल (Revolution Period)	250 मिलियन वर्ष
• अपनी धुरी पर घूमने की गति (Rotational Speed)	250 किमी प्रति सेकण्ड
• संरचना	हाइड्रोज़न— 71% हीलियम— 26·5% अन्य तत्त्व— 2·5%
• सम्भावित आयु	5 बिलियन वर्ष
• सूर्य से पृथ्वी तक प्रकाश के पहुँचने का समय	8 मिनट 20 सेकण्ड

• ग्रह (Planets)

सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने वाले 9 ग्रह हैं जिन्हें मोटेतौर पर दो भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम विभाजन में उन चार ग्रहों (बुध, शुक्र, पृथ्वी तथा मंगल) को सम्मिलित किया गया है जो पृथ्वी के वायुमण्डल की परिधि में आ जाते हैं। इनमें 'पृथ्वी' सबसे बड़ा और सबसे अधिक घनत्व वाला ग्रह है। ये सभी ग्रह चट्टानी हैं। दूसरे विभाजन में चार ग्रह, बृहस्पति, शनि, यूरेनस तथा नेपच्यून आते हैं जो अपेक्षाकृत बहुत बड़े हैं और इनके कई-कई उपग्रह हैं। इनकी संरचना में अधिकांश प्रतिशत भाग हाइड्रोजन व हीलियम जैसे तत्त्वों का है। ये सभी अधिक गति से घूमने वाले हैं और घने वायुमण्डल से आच्छादित हैं।

सबसे अधिक दूरी के ग्रह 'प्लूटो' की अपनी अलग ही श्रेणी है, जो प्रथम श्रेणी में ग्रहों के प्रकार से अधिक घनत्व वाला है।

सभी ग्रह अलग-अलग अपनी-अपनी धुरी पर एक निश्चित गति से घूमते हैं तथा (यूरेनस को छोड़कर) दीर्घ वृत्ताकार में पश्चिम से पूर्व की ओर सूर्य का चक्कर लगाते हैं। केवल यूरेनस (अरुण) अपनी धुरी पर पूर्व से पश्चिम की ओर घूमता है। सभी ग्रहों के पथ एक-दूसरे के लगभग समावर्ती हैं।

आओ अब इन ग्रहों और उपग्रहों पर चर्चा करें—

1. बुध (Mercury)

यह ग्रह अनेक विशेषताएँ लिए है। सभी ग्रहों में सबसे छोटा, सूर्य से निकटतम और सबसे तेज चाल वाला यह ग्रह है। सबसे अधिक घनत्व वाला 'बुध' ग्रह का आवर्तनकाल सबसे अधिक और परिभ्रमण समय सबसे कम है। इस पर वायुमण्डल का अभाव है। दिन अत्यधिक गर्म व रातें अत्यधिक ठण्डी होती हैं। किसी प्राणी मात्र के इस ग्रह पर अस्तित्व की कोई सम्भावना ही नहीं है। इस ग्रह का आवर्तन व परिभ्रमण समय इस प्रकार का है कि इसका एक भाग सदैव सूर्य के सामने रहता है; अतः जब इसका एक भाग प्रकाशित रहता है तब दूसरा भाग अन्धकार में रहता है। ऐसी स्थिति में जब सूर्य की किरणें जिस भाग पर पड़ती हैं, तब उस सतह का तापमान 427 डिग्री सेल्सियस तक हो जाता है (इतना गर्म कि सीसा भी पिघल जाये) तथा दूसरी ओर अन्धकार में आने वाली सतह का तापमान –173 डिग्री सेल्सियस को छू लेता है (इतना ठंडा जितना कम तापमान सबसे दूरी वाले ग्रह प्लूटो पर भी नहीं)।

1. एक जूल = ताप की वह इकाई जो एक ग्राम पानी को एक डिग्री सेन्टीग्रेड तक गर्म करती है।

2. शुक्र (Venus)

सूर्य से दूसरे स्थान पर का ग्रह 'शुक्र' आकाश का सबसे चमकीला (सूर्य व चन्द्रमा के बाद) ग्रह है। यह पृथ्वी के सबसे निकट है तथा इसमें पृथ्वी के जैसी कई समानताएँ हैं। आकार व संहिता में समानता रखने वाला शुक्र ग्रह घने बादलों से ढँका हुआ है जिससे उसकी सतह को देखना अति कठिन है। बादलों के ऊपर वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता है। ऑक्सीजन तथा जल वाष्प की अत्यन्त न्यूनता से प्राणी मात्र के जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। सतह का तापमान पानी के क्वथनांक (उबलने का तापमान 100 डिग्री सेल्सियस) से कुछ अधिक रहता है।

3. पृथ्वी (Earth)

सूर्य से तीसरे स्थान पर का ग्रह, जिस पर एक उपग्रहं (चन्द्रमा) है, वह सुन्दर 'पृथ्वी' है जिस पर हम रहते हैं। यह बनावट में लगभग गोल है (ध्रुवों पर चपटी तथा भूमध्य रेखा पर उभरी हुई है) जिसका व्यास लगभग 12,750 किमी है। अपनी धुरी पर 24 घन्टे (23 घंटे, 56 मिनट, 4·09 सेकण्ड) में घूम जाती है तथा 365$\frac{1}{4}$ दिन (365 दिन, 5 घन्टे, 48 मिनट, 45·51 सेकण्ड) में सूर्य के चारों ओर दीर्घ वृत्ताकार में चक्कर लगा लेती है।

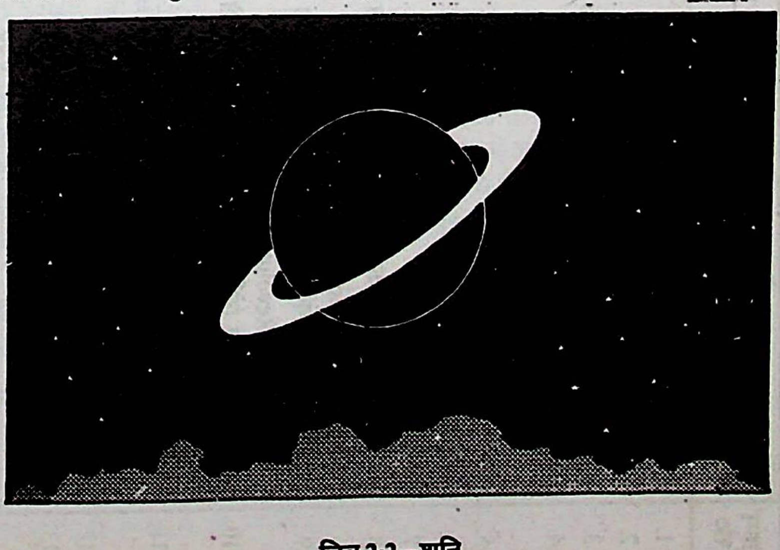
इस ग्रह की बनावट, संरचना तथा इसके कार्यकलापों के बारे में विस्तार से अगले अध्याय में जानेंगे।

4. मंगल (Mars)

सूर्य से चौथे स्थान पर आने वाला ग्रह 'मंगल' को 'लाल ग्रह' के नाम से भी जानते हैं। इस ग्रह पर वायुमण्डल तथा जल वाष्प की सम्भावना से क्या यहाँ मानव जीवन सम्भव है ? यह आज तक चर्चा का विषय है। पृथ्वी की तरह ध्रुवों पर चपटा मंगल ग्रह पृथ्वी के आधे से कुछ अधिक व्यास (6780 किमी) का है तथा इसका सतही क्षेत्रफल और आयतन क्रमशः पृथ्वी के 0·291 तथा 0·153 है। मंगल पर दो उपग्रह हैं, जिन्हें फोबोस (Phobos ⇒ Fear ⇒ डर) तथा डीमोस (Deimos ⇒ Terror ⇒ भयानक) नाम दिया गया है।

5. बृहस्पति (Jupiter)

सूर्य से पाँचवें स्थान पर तथा सौर मण्डल के बाहरी क्षेत्र के ग्रहों में यह ग्रह सौर परिवार में सूर्य को छोड़कर सबसे बड़ा है। ध्रुवों पर बहुत अधिक चपटा तथा मध्य में उभरा हुआ यह ग्रह इतना बड़ा है कि इसमें एक हजार से भी अधिक पृथ्वी समा सकती हैं (1318 गुना)। संरचना की दृष्टि से यह अपेक्षाकृत छोटी ठोस चट्टानों से निर्मित है जिस पर बर्फ की मोटी तह है तथा सबसे ऊपरी भाग वायुमण्डल से ढँका है जिसमें अमोनिया और मीथेन गैस की अधिकता है। इसी कारण इसका घनत्व 1·33 ग्राम घन सेमी है। पृथ्वी के व्यास से लगभग 11 गुना व्यास तथा 120 गुना सतही क्षेत्रफल लिए बृहस्पति संहिता तथा आयतन



चित्र 2·2—शनि

इन सभी ग्रहों से सम्बन्धित सामान्य सांख्यिकीय जानकारी निम्नांकित सारणी में दी जा रही है—

सारणी 2·1

ग्रहों का सांख्यिकीय विवरण

क्रम सं०	विवरण	ग्रह								
		बुध	शुक्र	पृथ्वी	मंगल	बृहस्पति	शनि	यूरेनस	नेपच्यून	प्लूटो
1.	सूर्य से औसत दूरी (मिलियन किमी में)	57·6	107·52	148·8	225·6	772·8	1,417·6	2,852·8	4,470·4	5,865·6
2.	पृथ्वी से दूरी (मिलियन किमी में)	91·7	41·4	-	55·7	628·8	1,277·4	2,587·0	4,310·0	14,290·0
3.	औसत व्यास (किमी में)	4,849·6	12,032·0	12,739·2	6,755·2	1,41,968·0	1,19,296·0	52,096·0	44,800·0	3,040·0
4.	संहिता (किग्रा में)	3·585 × 10^{23}	4·780 × 10^{24}	5·975 × 10^{24}	6·573 × 10^{23}	1·900 × 10^{27}	5·680 × 10^{26}	8·963 × 10^{25}	1·016 × 10^{26}	4·780 × 10^{24}
5.	घनत्व (ग्राम/घन सेमी)	5·42	5·25	5·52	3·54	1·33	0·69	1·27	1·61	2·03 (?)
6.	आपेक्षिक घनत्व (पानी = 1)	6·1	5·0	5·5	4·0	1·4	0·7	1·6	2·3	?
7.	गुरुत्वाकर्षण (पृथ्वी = 1)	0·386	0·879	1·0	0·38	2·53	1·07	0·91	1·14	0·07
8.	अपनी धुरी पर घूमने का समय [आवर्तन काल (Rotation Period)]	58 दिन	243 दिन	24 घण्टे	24·5 घण्टे	10 घण्टे	10·2 घण्टे	17·2 घण्टे	15·8 घण्टे	6·4 दिन
9.	सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने का समय [परिभ्रमण काल (Revolution Period)]	88 दिन	225 दिन	365¼ दिन	687 दिन	11·9 वर्ष	29½ वर्ष	84 वर्ष	165 वर्ष	248 वर्ष
10.	सतह का तापमान (सेल्सियस में)	−173° से 427°	462°	−89·6° से 58·0°	−143° से 17°	−157°	−178°	−216°	−214°	−236°
11.	वायुमण्डल से निकलने के लिये न्यूनतम वेग (किमी/सेकण्ड)	3·6	10·2	11·2	5·0	60·0	36·0	21·0	23·0	11·0 (?)
12.	उपग्रहों की संख्या (कुल 63)	00	00	01	02	16	20	15	08	01
13.	पृथ्वी के अनुपात में (पृथ्वी = 1)									
	• व्यास	0·38	0·94	1·00	0·53	11·14	9·36	4·09	3·52	0·23
	• संहिता	0·06	0·80	1·00	0·11	318·0	95·0	15·00	17·00	0·80
	• आयतन	0·06	0·92	1·00	0·15	1,318·00	736·00	64·00	39·00	0·10

में सौर परिवार के सभी सदस्यों के मिलकर बन सकने वाले ग्रह से भी बड़ा है। बहुत कम तापमान रहने तथा जहरीले वायुमण्डल के कारण यहाँ प्राणी जीवन की सम्भावना नगण्य है। अब तक इसके 16 उपग्रहों की जानकारी मिली है।

6. शनि (Saturn)

सभी ग्रहों में सबसे ज्यादा आकर्षक तथा बृहस्पति से कम लेकिन अन्य सभी ग्रहों में अपेक्षाकृत विशालकाय ग्रह 'शनि' अनेक विशेषताएँ लिए सूर्य से छठे स्थान पर है। 'शनि' बृहस्पति से भी अधिक चपटा है और चट्टानी पिंड, बर्फ की पर्त तथा हाइड्रोजन (क्रमशः 35 प्रतिशत, 20 प्रतिशत तथा 45 प्रतिशत) के आवरण से निर्मित है। अतः इसका घनत्व बहुत कम पृथ्वी का 13 प्रतिशत (0·715 ग्राम/घन सेमी) है और इसी कारण यह ही एक ग्रह है जो इस विशेषता के कारण पानी पर तैर सकता है। दूसरी विशिष्टता इस ग्रह के चारों ओर के छल्ले हैं, जो इस ग्रह के साथ-साथ कक्ष में घूमते हैं। यह छल्ले किसी वस्तु के छोटे-छोटे कणों से मिलकर बने हैं जिनकी कुल संहिता शनि ग्रह की संहिता के 1/27,000 से अधिक नहीं है। शनि पर मौसम परिवर्तन की सम्भावना नहीं है, क्योंकि यह अपने कक्ष में लगभग लम्बवत् घूमता है। मानव जीवन अपेक्षित वायुमण्डल के अभाव में असम्भव है। इसके उपग्रहों की संख्या 20 है।

7-8. यूरेनस और नेपच्यून (Uranus and Neptune)

यह सौर परिवार के दोनों सदस्य, जिन्हें क्रमशः 'अरुण' तथा 'वरुण' के नाम से पुकारते हैं, यद्यपि सूर्य से विभिन्न दूरियों पर हैं पर अनेक समानताएँ लिए हैं। बृहस्पति और शनि से बहुत छोटे और कम सतही तापमान वाले यह ग्रह ध्रुवों पर चपटे और मध्य में उभरे हुए, कम घनत्व वाले, अपनी-अपनी धुरी पर तेज गति से घूमने वाले लगभग एकसा ही वायुमण्डल रखते हैं। प्रत्येक का व्यास पृथ्वी के व्यास से लगभग चार गुना है और दोनों पर ही मीथेन गैस की सम्भावना व्यक्त की गई है। इसी समानता के कारण खगोलशास्त्री इन्हें सहोदरभाई की संज्ञा देते हैं। इन पर के उपग्रहों की संख्या क्रमशः 15 व 8 है।

यूरेनस ग्रह की एक विशेषता यह है कि यह ग्रह अपनी कीली पर पूरब से पश्चिम की ओर घूमता है, जबकि अन्य सभी ग्रह पश्चिम से पूरब की ओर घूमते हैं।

9. प्लूटो (Pluto)

सौर परिवार का सूर्य से सबसे अधिक दूरी पर (लगभग 5900 मिलियन किमी) 'प्लूटो' सबसे छोटा ग्रह है। इसके बारे में अधिक जानकारी अभी तक नहीं है, लेकिन यह समझा जाता है कि यह पानी और मीथेन के एक जमे हुए बर्फीले पिंड से निर्मित है। इसका एक उपग्रह 'चेरोन' (Charon) है जो मूल ग्रह से लगभग आधे आकार का है।

● उपग्रह
(Satellite)

सौर मण्डल में ग्रहों के अतिरिक्त कुछ ऐसे आकाशीय पिंड हैं जो ग्रहों के चारों ओर घूमते हैं। अलग-अलग गोलीय आकार के इन पिण्डों में अपना प्रकाश नहीं होता है, बल्कि यह भी सूर्य से प्रकाश लेते हैं। इन्हें उपग्रह कहते हैं। खगोलशास्त्री इन्हें 'चन्द्रमा' के नाम से भी पुकारते हैं। अब तक की जानकारी के अनुसार विभिन्न ग्रहों पर कुल उपग्रहों की संख्या 63 है (ग्रहवार उपग्रहों की संख्या सारणी 2·1 में दी गई है)।

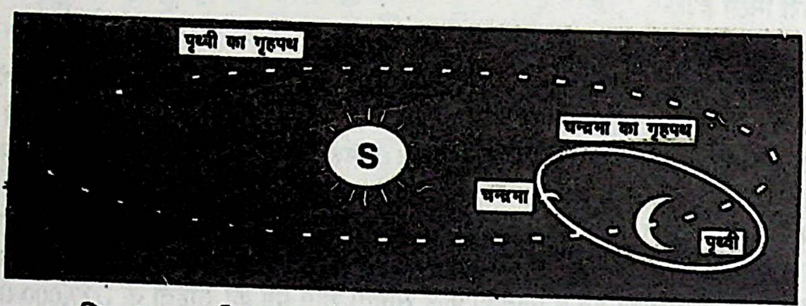
पृथ्वी जिस पर हम रहते हैं, उस पर केवल एक उपग्रह है, जिसे हम 'चन्द्रमा' के नाम से जानते हैं। इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका के कारण ही इसकी हम आगे चर्चा कर रहे हैं।

चन्द्रमा (Moon)

पृथ्वी ग्रह पर एकमात्र उपग्रह 'चन्द्रमा' अब तक के जाने गये चन्द्रमाओं में सबसे बड़ा है। 3,475 किमी व्यास वाले चन्द्रमा की पृथ्वी से औसत दूरी 3,85,000 किमी है।

पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाने का समय $27\frac{1}{3}$ दिन (27 दिन, 7 घंटे, 43 मिनट और 11·47 सेकण्ड) है तथा लगभग इतने हीं समय में वह अपनी कीली पर घूम जाता है। अब चन्द्र यात्रियों ने चन्द्रमा की

संरचना का आँखों देखा विवरण दे दिया है जिनसे किसी अनुमान की बात अब समाप्त हो गई है। उनके अनुसार चन्द्रमा पर पहाड़ी भाग हैं, मैदान हैं। वहाँ न तो पानी है और न ही किसी प्रकार का वायुमण्डल।



चित्र 2·3—पृथ्वी चन्द्रमा के साथ सूर्य के चारों ओर घूम रही है

सतही तापमान दिन में अधिकतम 100 डिग्री सेन्टीग्रेड तथा रात में न्यूनतम –180 डिग्री सेन्टीग्रेड तक हो जाता है। पृथ्वी के निवासियों को इसके दो विशेष लाभकारी कार्य हैं। पहला यह कि सूर्य से रोशनी प्राप्त कर पृथ्वी को 'रोशनी' देता है तथा दूसरे सूर्य के साथ मिलकर 'ज्वार-भाटा' उत्पन्न करता है जिससे अनेक प्रकार के व्यावहारिक तथा व्यावसायिक लाभ मिलते हैं।

चन्द्रमा सम्बन्धी सांख्यिकी (Lunar Statistics)

• पृथ्वी से दूरी	3,85,000 किमी
• व्यास	3,476 किमी
• परिधि	10,927 किमी
• सतही क्षेत्रफल	38 मिलियन वर्ग किमी
• तापमान	– 170°C से 127°C तक
• अपनी धुरी पर घूमने का समय [आवर्तन काल (Rotation Period)]	27 दिन 7 घण्टे 43 मिनट 11·47 सेकेण्ड
• पृथ्वी के चारों ओर घूमने का समय [परिभ्रमण काल (Revolution Period)]	27 दिन 7 घण्टे 43 मिनट 11·47 सेकण्ड
• पृथ्वी के चारों ओर घूमने की गति (Speed)	3.700 किमी/घण्टा
• आयु	4·60 बिलियन वर्ष
• गुरुत्वाकर्षण शक्ति	पृथ्वी की $\frac{1}{6}$
• संहिता	पृथ्वी की $\frac{1}{81}$
• आयतन	पृथ्वी का $\frac{1}{50}$
• वायुमण्डल	लगभग शून्य

सौर मण्डल का पृथ्वी पर पर्यावरणीय प्रभाव (Environmental Effect of Solar System on Earth)

सौर परिवार के सूर्य तथा पृथ्वी के उपग्रह चन्द्रमा का पृथ्वी पर पर्यावरणीय प्रभाव बहुत संक्षिप्त विवरण में बाँधा नहीं जा सकता। कुछ प्रमुख बिन्दुओं को समेकित कर यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास मात्र सम्भव है—

1. सूर्य से पृथ्वी को रोशनी, ताप व ऊर्जा मिलती है जिससे प्राणीमात्र व पेड़-पौधे और वनस्पति का जीवन सम्भव हो पाया है।
2. सूर्य से ही रोशनी प्राप्त कर चन्द्रमा रात में पृथ्वी को रोशनी देता है।
3. सूर्य की रोशनी की उपस्थिति में ही पेड़-पौधे और अन्य वनस्पति फोटो-सिन्थेसिस की प्रक्रिया से कार्बन डाइऑक्साइड गैस का अवशोषण कर ऑक्सीजन निकालते हैं, जिससे प्राणी जीवन चलता है।
4. सूर्य के ताप से पृथ्वी के अनेक प्रदूषण स्वयं ही प्राकृतिक रूप से नष्ट हो जाते है।
5. सूर्य के ताप से ही जल का वाष्पीकरण होता है जिससे वर्षा होती है।
6. पृथ्वी अपनी कीली पर 24 घंटे में पूरा चक्कर लगा लेती है, अतः सूर्य के सामने वाले हिस्से में प्रकाश अर्थात् दिन और पीछे वाले हिस्से में अंधेरा अर्थात् रात हो जाती है। इसका मतलब है कि पृथ्वी के आवर्तन से दिन-रात बनते हैं।

7. पृथ्वी के सूर्य के चारों ओर परिभ्रमण से मौसम बनते हैं। दिन और रात का छोटा बड़ा होना भी इसी से सम्बन्धित है।
8. सूर्य और चन्द्रमा की विशेष स्थिति से पृथ्वी पर चन्द्र ग्रहण और सूर्य ग्रहण होते हैं जो विशेष स्थिति में पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य की स्थिति प्रदर्शित करते हैं।
9. ज्वार-भाटा का सम्बन्ध भी सूर्य और चन्द्रमा की पृथ्वी से सापेक्ष स्थिति के कारण है जिससे अनेक व्यावहारिक लाभ हैं।

इस पूरे सौर परिवार के वर्णन से हमें पृथ्वी की तथा पूरे सौर मण्डल में विभिन्न अन्य ग्रहों और उपग्रहों की जानकारी मिली है जिसके आधार पर हम यह निश्चित रूप से कह सकते हैं कि पूरे सौर मण्डल में पृथ्वी ही एक ऐसा सुन्दर ग्रह है जिस पर जीवन सम्भव है तथा जहाँ मानव अत्यन्त स्वतन्त्रता, स्वच्छन्दता तथा शांति से रह सकता है। विशिष्ट पर्यावरण के कारण उसे सभी प्रकार की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी यहाँ निर्बाध रूप से सम्भव है।

फोटोसंश्लेषण
(Photosynthesis)

यह एक भोजन-निर्माण प्रक्रिया (Food-making Process) है जो वस्तुतः सूर्य के प्रकाश और गर्मी से हरी वनस्पतियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। वनस्पतियों में विद्यमान हरित पदार्थ क्लोरोफिल (Chlorophyll) सूर्य प्रकाश को आत्मसात् कर लेता है और प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देता है। इस प्रक्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड और जल मिलकर कार्बोहाइड्रेट्स और ऑक्सीजन का निर्माण कर देते हैं जिससे वनस्पति उपज में वृद्धि होती है। यह वनस्पति प्राणी जगत् (Animals) का भोजन बनता है।

श्वसन
(Respiration)

हरे पौधे व वनस्पतियाँ कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को फोटोसिन्थेसिस प्रक्रिया से भोजन और ऑक्सीजन में परिवर्तित कर देते हैं। इसके साथ ही वनस्पति और प्राणी जगत् भोजन का उपयोग ऑक्सीजन की सहायता से सम्पन्न करते हैं और दैनिक कार्यकलापों के लिये शक्ति उत्पन्न कर देते हैं। कार्य करने में उत्पन्न हुई ऑक्सीजन और भोजन समाप्त हो जाता है तथा कार्बन डाइऑक्साइड और जल वापस मिल जाता है। इसे श्वसन (Respiration) कहते हैं। यह 'फोटो संश्लेषण' (Photosynthesis) की विपरीत क्रिया है, लेकिन इन दोनों प्रक्रिया और संक्रियाओं से पृथ्वी स्तर की 'कार्बन डाइऑक्साइड' और 'ऑक्सीजन' का सन्तुलन बना रहता है।

अध्याय से सम्बन्धित प्रश्न
(QUESTIONS RELATED TO THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सूर्य की उत्पत्ति कैसे हुई ? विवेचना कीजिये।
2. सौर-मण्डल को परिभाषित करते हुये बताइये कि सूर्य से दूरी के प्रकार से उन्हें क्या-क्या नाम दिये हैं ?
3. सौरमण्डल से हमें क्या-क्या लाभ मिले हैं ? स्पष्ट कीजिये।
4. 'प्रकाश संश्लेषण' और 'श्वसन' कुल मिलाकर पृथ्वी पर ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड का सन्तुलन बनाये रखते हैं। कैसे ?
5. सूर्य से 'मौसम' कैसे बनते हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'अंतरिक्षीय वर्ष' किसे कहते हैं ?
7. आवर्तन काल और परिभ्रमण काल में क्या अन्तर है ?
8. 'सहोदर भाई' कहे जाने वाले ग्रहों की समानता बताइये।
9. सूर्यग्रहण कैसे होता है ?
10. 'शनि' ग्रह का संक्षिप्त विवरण दीजिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. जिन आकाशपिण्डीय वस्तु में अपना स्वयं का प्रकाश होता है, वह कहलाते हैं—
    (अ) ग्रह (ब) तारे
    (स) निहारिकायें (द) क्षुद्र ग्रह
12. किस ग्रह पर चन्द्रमाओं की संख्या सबसे अधिक है ?
    (अ) शनि (ब) बृहस्पति
    (स) शुक्र (द) मंगल
13. सूर्य की शेष आयु लगभग है—
    (अ) 5 अरब वर्ष (ब) 50 अरब वर्ष
    (स) 500 अरब वर्ष (द) 5,000 अरब वर्ष
14. 'फोबोस' किस ग्रह का उपग्रह है ?
    (अ) यूरेनस (ब) नेपच्यून
    (स) मंगल (द) प्लूटो
15. सूर्य की संरचना में सबसे अधिकता किस तत्त्व की है ?
    (अ) ऑक्सीजन (ब) ऑर्गन
    (स) हाइड्रोजन (द) हीलियम

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य चिन्हित कीजिये—

16. 'बृहस्पति' एक तारा है। (सत्य/असत्य)
17. 'उपग्रहों' को 'चन्द्रमाओं' के नाम से भी कह सकते हैं। (सत्य/असत्य)
18. सौरमण्डल का सबसे भारी ग्रह 'शनि' है। (सत्य/असत्य)
19. पृथ्वी के सबसे निकट ग्रह 'शुक्र' है। (सत्य/असत्य)
20. 'यूरेनस' अपनी धुरी पर पूर्व से पश्चिम की ओर घूमता है। (सत्य/असत्य)

3

पृथ्वी
[THE EARTH]

• प्रस्तावना
(Introduction)

जिस धरती पर हम रहते हैं, सोते हैं, खाते हैं, पीते हैं और यही नहीं बल्कि हम दिन-प्रतिदिन अनेक क्रिया-कलाप करते हैं, इसका जन्म लगभग 4 अरब 60 करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। पर क्या आपको कभी यह इच्छा होती है कि उस समय मैं जीवित होता तो अपनी आँखों से पृथ्वी की उत्पत्ति को देखता ? नदी-नाले, पहाड़-मैदान, सागर-महासागर, द्वीप-महाद्वीप कैसे बने ? इन्हें जानता। पर यह सब सम्भव ही कहाँ था ? उस समय तो जमीन पर कोई प्राणी जीवन था ही नहीं। अतः फिर पृथ्वी की रचना कैसे हुई ? कैसे बनी धरती हमारी ? इसे आधिकारिक रूप से कौन बताये ? सच तो यह है कि जो भी हमें वर्णन मिलता है और या जो भी रूप हमें धरती की रचना के बारे में बताया जाता है वह केवल वैज्ञानिक निष्कर्षों और अनुमानों पर आधारित है जिसमें भी निरन्तर परिवर्तन होते जा रहे हैं। पर इसका कोई और विकल्प है ही नहीं, अतः हमें वही स्वीकार करना है।



चित्र 3·1—पृथ्वी

पृथ्वी विज्ञान के शोधकर्त्ताओं के अनुसार अन्तरिक्ष में सूर्य के चारों ओर घूमने वाला एक बहुत बड़ा प्रकाशवान तारा अचानक तेजी से अनेक टुकड़ों में विखंडित हो गया। वह विस्फोट इतना भयानक और तीव्र था कि अन्तरिक्ष में ही उसके टुकड़े काफी दूर-दूर तक बिखर गये। उसी विस्फोट के एक बड़े टुकड़े से पृथ्वी का निर्माण हुआ। प्रारम्भ में यह पृथ्वी गैसीय रूप में आग के गोले जैसे गर्म थी। धीरे-धीरे यह ठंडी हुई। गैसीय पदार्थ के कुछ भाग के द्रवित होने से वायुमण्डल की रचना हुई जिसने पृथ्वी को इर्द-गिर्द घेर लिया। इसी वायुमण्डल की सहायता से ही हमें जीवित रहने के लिए प्राण वायु मिलती है। कुछ गैसीय पदार्थ ठंडा होकर पानी के रूप में द्रवीभूत हो गया जिससे महासागर निर्मित हुए। पृथ्वी के अन्दर जल भी इसी द्रवीकरण का परिणाम है। एक अन्य भाग ठंडा होकर चट्टानों, समतल या इसी प्रकार ठोस रूप में परिणित हो गया जो प्राणी जाति के रहने का आधार बना है।

इसके अलावा भी कई अन्य मत हैं जो पृथ्वी के निर्माण का ब्यौरा अलग-अलग प्रकार से देते हैं, लेकिन वे सभी समान रूप से इस बात को स्वीकार करते हैं कि पृथ्वी सहित आज हमारी जानकारी में आने वाले अनेक ग्रहों का निर्माण इसी प्रकार अन्तरिक्ष में घूमने वाले विभिन्न या किसी आकाशीय पिंड के टूटने और उसके छोटे-छोटे टुकड़ों से मिलकर बनने से हुआ जो बाद में गुरुत्वाकर्षण के कारण सूर्य के चारों ओर निश्चित प्रक्रिया के अनुसार घूमने लगें। वस्तुतः 'पृथ्वी' ग्रह का भी इसी प्रकार निर्माण हुआ।

तो यह है छोटी-सी कहानी पृथ्वी की प्रारम्भिक उत्पत्ति की। पर आज जो रूप पृथ्वी का हमारे सामने है उसकी निर्माण प्रक्रिया इतनी सरल नहीं रही है जितनी वह प्रतीत होती है। मानव जीवन का इतिहास तो केवल 50 हजार वर्ष पुराना है, जबकि पृथ्वी की उत्पत्ति का इतिहास लगभग 5 अरब वर्ष पूर्व का है। अतः किसी ने क्या देखा ? किस प्रकार वर्तमान रूप उभरा ? यह भी शोधकर्त्ताओं का अपना अनुमान है।

• ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)

पृथ्वी विज्ञान के शोध करने वाले वैज्ञानिकों के अनुसार जब पृथ्वी गर्म गैसीय पिंड के रूप में थी और फिर धीरे-धीरे जब वह ठंडी होने लगी तो तेजी से घूमते रहने के कारण द्रवीभूत हुए तरल में अधिक घनत्व वाले पदार्थ पिंड के केन्द्र में आ गये और अपेक्षाकृत हल्के पदार्थ सतह पर एकत्रित हो गये। ऊपरी सतहों के पदार्थों से चट्टानें बनीं जिससे भू-पटल का निर्माण हुआ। स्वाभाविक था कि भू-पटल भिन्न-भिन्न पदार्थों के मिलने से बना था, अतः यह एक-सतही न होकर ऊबड़-खाबड़ रहा। जो हिस्से ऊँचे उठ गये वे पहाड़, पर्वत श्रृंखलाओं के रूप में उभरे, समतल भूमि मैदान और पठार बने और निचले गड्ढे पानी के भण्डार। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी, जिसमें एक-चौथाई भाग भू-भाग तथा तीन-चौथाई भाग पानी है, अपने चारों ओर वायुमण्डल के आवरण में लिपटी एक ग्रह के रूप में उभरकर आई जो गुरुत्वाकर्षण के कारण सौर मण्डल का अंग बन गई। यह निश्चित मार्ग से गुजरती हुई $365\frac{1}{4}$ दिन में सूर्य का एक चक्कर लगाती है। इस समय को ही हम 'वर्ष' के नाम से पुकारते हैं।

भूगोलवेत्ताओं ने बताया कि पृथ्वी का आकार नारंगी की तरह गोल है जो सिरों पर चपटी है और बीच में गोलीय। इसकी परिधि 40,000 किमी और व्यास 12,800 किमी है। इसके गर्भ में छिपे हैं अनेक खनिज, जो मानव जीवन के लिए प्राकृतिक संसाधनों के रूप में उनके जीवन के आधार बने हैं। भू-पटल और उसके निर्माण में विभिन्न तत्त्वों का अनुमान भी ज्ञात कर लिया गया है जो सारणी 3·1 में दिया है।

यह पृथक्-पृथक् या समूह में मिलकर यौगिक बनाते हैं जिन्हें पृथ्वी विज्ञान में 'खनिज' के नाम से जाना जाता है। अनेक चट्टानें इन्हीं खनिजों से मिलकर बनी हैं। यहाँ पानी को भी 'खनिज' के रूप मे माना जाता है।

पृथ्वी पर द्वीपों, प्रायद्वीपों तथा महाद्वीपों का वर्गीकरण और नामकरण बहुत बाद की बात रही। जब मानव इस योग्य हुआ कि वह अपना जीवन सुख से काटने लगा तो वह अपने रहने के स्थान से दूर अलग-अलग स्थानों की जानकारी में लग गया। कोलम्बस द्वारा अमरीका तथा वास्कोडिगामा द्वारा भारत की जानकारी उसका उदाहरण है। अन्य स्थानों की जानकारी के साथ ही—(1) चारों ओर से पानी से घिरे भू-भाग को **द्वीप** जैसे ग्रीनलैण्ड, न्यू गाइना, बोरनिओ, (2) समुद्र में बाहर निकले भू-भागों को **प्रायद्वीप** जैसे—आयरलैण्ड, इटली और (3) बड़े-बड़े महासागरों से घिरे भू-भागों को **महाद्वीप** जैसे उत्तरी अमरीका, अफ्रीका, एशिया, यूरोप, आस्ट्रेलिया कहा जाने लगा।

सारणी 3·1
पृथ्वी के भूपटल (Crust) में विभिन्न खनिज तत्त्वों की मात्रा

तत्त्व संख्या	नाम तथा चिन्ह		भार प्रतिशत	आयतन प्रतिशत
8	ऑक्सीजन	(O)	46·60	93·77
19	पोटैशियम	(K)	2·59	1·83
11	सोडियम	(Na)	2·83	1·32
20	कैल्सियम,	(Ca)	3·63	1·03
14	सिलीकोन	(Si)	27·72	0·86
13	एल्युमिनियम	(Al)	8·13	0·47
26	लोहा	(Fe)	5·00	0·43
12	मैग्नीशियम	(Mg)	2·09	0·29
	अन्य तत्त्व		1·41	
	योग		100·00	100·00

यह है धरती की रचना का इतिहास, जिस पर हम शांति से रहकर जीना चाहते हैं।

एक बात और है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह आवश्यक नहीं कि पृथ्वी का जो रूप हम आज देख रहे हैं, जो पहाड़-पठार, द्वीप-महाद्वीप, सागर-महासागर हमारी आज की जानकारी में हैं, वे आगे भी इसी रूप में रहें।

कौन जाने कभी कोई भयंकर भूकम्प के फलस्वरूप बड़े-बड़े पहाड़ धँसकर नीचे चले जायें अथवा किसी महासागर की चट्टानें उभरकर ऊपर आकर इसका नया रूप ही बदल दें। तब पृथ्वी का नया रूप क्या होगा, उसे कौन जानता है ? वैसे दिन-प्रतिदिन की प्राकृतिक प्रक्रियाएँ, जैसे ग्लेशियरों का बनना और उनका गतिमय होना, पर्वतों का पानी से कटना तथा उसके कणों से समुद्र-झील या महासागर के तलों का ऊँचा हो जाना, कहीं अधिक पानी के एकत्रीकरण से भूमि भाग का जलमग्न हो जाना आदि इस प्रकार की हैं जिनसे निरन्तर पृथ्वी के रूप में परिवर्तन हो रहा है। शोधकर्त्ता भी जोर देकर आज यही कहते हैं कि पृथ्वी के ठंडा होने का क्रम रुका नहीं है, वह अभी भी अन्दर से काफी गर्म है और ठंडी होने की प्रक्रिया में किसी प्रकार के भी परिवर्तन सम्भव हैं।

• पृथ्वी की संरचना (Earth's Constitution)

धरती जिसे हम पृथ्वी कहें केवल वह भू-भाग नहीं है, जिस पर हम रहते हैं, दैनिक कार्यकलाप करते हैं, विरासत में प्राप्त हुए प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करते हैं और फिर न जाने कितने सामाजिक, नैतिक और व्यावहारिक दायित्वों का निर्वाह करते हैं। वस्तुतः यह एक ब्रह्माण्ड में सौर परिवार का वह सदस्य है, जो निरन्तर सूर्य का चक्कर लगाता है और जिस पर ही आज तक की जानकारी के अनुसार जीवन सम्भव है।

अतः मानव, पशु-पक्षी और वनस्पति यहाँ पर अपने-अपने जीवन चक्र के अनुसार अपना अपना अस्तित्व बनाये रखे हुए हैं।

पृथ्वी की बनावट और संरचना काफी जटिल है, लेकिन सामान्य रूप में यह एक नारंगी के आकार का पिण्ड है जो ध्रुवों पर चपटी तथा मध्य में (भूमध्य रेखा पर) उभरी हुई है। एक बडे आकार का पिण्ड (आयतन $1{\cdot}083 \times 10^{12}$ घन किमी, भार $5{\cdot}975 \times 10^{24}$ किग्रा) 29·76 किमी प्रति सेकण्ड की तेज गति से घूमकर अपने आपको एक निश्चित चक्र पथ पर व्यवस्थित एवं सन्तुलित रखता है।

खगोलशास्त्रियों के अनुसार पृथ्वी के बाहरी भाग को चार भागों में विभाजित किया गया है—

(अ) **स्थलमण्डल** (Lithosphere) : इसमें समस्त बाहरी भू-पटल, जिसमें सागर/महासागर की सतहें भी सम्मिलित हैं, आता है। इसकी मोटाई लगभग 50 किमी मानी जाती है।

(ब) **जलमण्डल** (Hydrosphere) : वे भाग जो सागर/महासागर/झीलों/नदियों में आते हैं, जलमण्डल के भाग हैं। जलमण्डल व स्थलमण्डल के आयतन में 7 : 3 का अनुपात है।

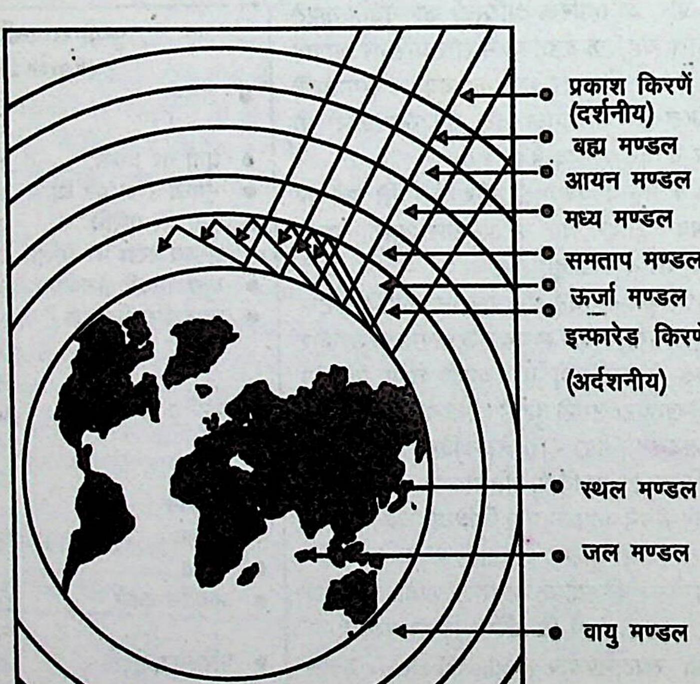
पृथ्वी सम्बन्धी आँकड़े (Earth Data)

• शक्ल	नारंगी की तरह गोल, पर ध्रुवों पर चपटी
• ध्रुवों पर व्यास	12,714 किमी
• भूमध्य रेखा पर व्यास	12,756 किमी
• ध्रुवों पर परिधि	40,003 किमी
• भूमध्य रेखा पर परिधि	40,075 किमी
• कुछ सतही क्षेत्रफल	510×10^6 वर्ग किमी
• भूपटलीय क्षेत्रफल	149×10^6 वर्ग किमी (सतही क्षेत्रफल का लगभग 29%)
• जलीय क्षेत्रफल	361×10^6 वर्ग किमी (सतही क्षेत्रफल का लगभग 71%)
• आयतन	$1{,}080 \times 10^9$ घन किमी
• संहिता	$5{\cdot}975 \times 10^{24}$ किग्रा
• घनत्व	5·52
• आवर्तन काल	23 घण्टे 56 मिनट 4·09 सेकण्ड
• परिभ्रमण काल	365 दिन 5 घण्टे 48 मिनट 45·51 सेकण्ड
• सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने की गति	29·76 किमी प्रति सेकण्ड
• आयु	4·6 बिलियन वर्ष
• वायुमण्डल	पृथ्वी की सतह से 80 किमी की ऊँचाई तक 99% लेकिन 1600 किमी तक उपलब्ध
• कोर (Core) का अन्दरूनी तापमान	4000° सेल्सियस

(स) **वायुमण्डल** (Atmosphere) : भू-भाग और जलमण्डल को चारों ओर से वायु के खोल से ढँक लेने वाले आवरण को वायुमण्डल कहते हैं। इसमें स्थलमण्डल व जलमण्डल दोनों ही समाहित हो जाते हैं। इसकी अधिकतम सीमा भू-भाग की सतह से लगभग 10,000 किमी तक स्वीकार की गई है।

(द) **जीवमण्डल** (Biosphere) : **पृथ्वी का वह भाग जिस पर जीवन सम्भव है, उसे जीवमण्डल (Biosphere) कहते हैं।** यह एक अपेक्षाकृत पतला-सा आवरण है जो पृथ्वी के भू-पटल की ऊपरी सतह पर एक छिलके की तरह माना जा सकता है, जिसमें जल, स्थल और वायुमण्डल का थोड़ा-थोड़ा भाग सम्मिलित है। इसकी मोटाई भू-पटल की सतह से लगभग 7 किमी ऊपर तथा 8 किमी गहराई तक है।

ये सभी मण्डल (स्थल, जल, वायु और जीव) गुरुत्वाकर्षण से इस प्रकार एक-दूसरे से बँधे हैं कि पृथ्वी के अपनी कीली पर घूमने तथा सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने में भी यह सन्तुलित रहते हैं। यह एक प्रकार का 'अन्तरिक्ष यान' (Space Ship) है, जिस पर वायु, भूमि और जल हैं और सूर्य की ऊर्जा तथा ग्रह के अपने आन्तरिक ताप से इस पर की सारी क्रियाएँ चलती रहती हैं। सभी प्राणी जगत् (पेड़-पौधे, पशु, मानव, कीड़े-मकोड़े आदि) अबाध गति से अपना जीवन निर्वहन करते हैं। पृथ्वी का व्यास लगभग 12,750 किमी है।



चित्र 3·2—विश्व का चित्र

मनुष्य और पशु भू-पटल की ऊपरी सतह पर रहते हैं। गर्भ में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन और अब सभ्यता के साथ बढ़े अनेक खाने-पीने और सुख-सुविधाओं के साधनों का उपयोग/उपभोग करते हैं। पीने को पानी वाष्पीकरण और निर्जलन (evaporation & precipitation) से मिलता है। भोजन के लिये प्राणियों ने अपने-अपने स्तर पर हल खोज निकाला है। आवास की व्यवस्था समयानुसार उपलब्ध होती जा रही है। प्राण-वायु का भंडार वायुमण्डल में है। सामान्य स्थिति में पृथ्वी एक स्वर्ग है जिस पर के सुन्दर जीवन की कल्पना ही सुखप्रद है।

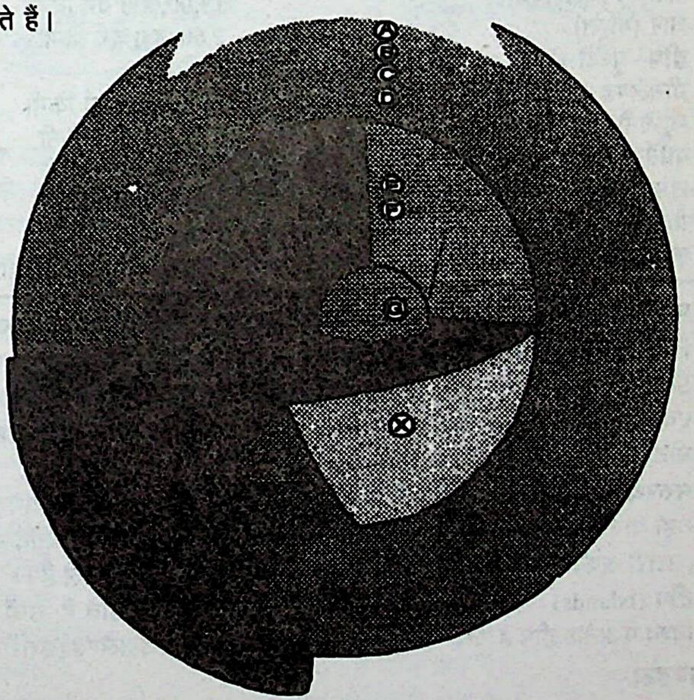
अब हम इन विभिन्न मण्डलों के बारे में चर्चा करेंगे—

स्थलमण्डल (Lithosphere)

स्थलमण्डल पृथ्वी का वह भाग है जिस पर हम निवास करते हैं, जिस पर पेड़-पौधे वनस्पति उगते हैं, जिसके अन्दर अनेक प्राकृतिक संसाधन भरे हैं और जो मिट्टी, चट्टानें और पिघले पदार्थों से ठोस पिण्ड रूप में बना है। यह पूरी पृथ्वी का 3/10 भाग है, शेष 7/10 भाग जल क्षेत्र में आता है।

इस ठोस भाग की आन्तरिक रचना हेतु चित्र 3·3 को देखें जिसमें स्थूल रूप से विभिन्न घटकों को दर्शाया गया है। इसका बिल्कुल अन्दर का भाग जिसे 'G' से दर्शाया है 'इनर कोर (Inner Core)' कहलाता है। इसे **'आन्तरिक सतभाग'** भी कहा जाता है। इस भाग की मोटाई (व्यास) लगभग 1,300 किमी है तथा यहाँ के पदार्थ का घनत्व 13 ग्राम प्रति घन सेमी है। इसके चारों ओर पिघले हुए पदार्थ का भाग 'E' और 'F' है जिसकी मोटाई लगभग 2,080 किमी है और इसे 'आउटर कोर (Outer Core)' कहते हैं।

इस आउटर कोर (Outer Core) से ऊपर B, C तथा D भाग की ठोस पर्तों को मेन्टल (Mental) कहते हैं जिसकी कुल मोटाई लगभग 2,900 किमी है। इसके ऊपर का भाग A जो 12 से 60 किमी मोटाई का है, भूपटल (Crust) कहलाता है। यह ऊपरी भाग चट्टानों से निर्मित है तथा इसी क्षेत्र में खनिज सम्पदा के भण्डार माने जाते हैं।



चित्र 3·3—पृथ्वी का स्थलमण्डल

पृथ्वी की इस रचना के सबसे अन्दर इनर कोर (Inner Core) के भाग का जो ऊपर से 6,370 किमी की गहराई पर है, तापमान 4,000 डिग्री सेन्टीग्रेड तक होता है।' यह ऊँचाई के अनुसार कम होता-होता ऊपर सामान्य तापक्रम 30°C से 40°C पर आ जाता है।

स्थलमण्डल की सबसे ऊपरी सतह पर बनावट और भौगोलिक स्थिति के अनुसार स्थानों को अलग-अलग निम्नलिखित नाम दिये गये हैं—

(1) **महाद्वीप (Continents) :** पृथ्वी के वह बड़े-बड़े क्षेत्र जो लगभग चारों ओर पानी से घिरे हुए हैं, महाद्वीप कहलाते हैं। एक-एक महाद्वीप में कई-कई देश हो सकते हैं। विश्व में कुल सात (एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमरीका, दक्षिणी अमरीका, यूरोप, आस्ट्रेलिया तथा अन्टार्कटिका) महाद्वीप हैं।

स्थलमण्डल पर प्रकृतिदत्त रचनाएँ
(NATURAL CONSTRUCTS ON LITHOSPHERE)

1. **महाद्वीप**—पृथ्वी के वह बड़े भाग जो लगभग चारों ओर से जल से घिरे हैं।
- एशिया
- अफ्रीका
- उत्तरी अमेरिका
- दक्षिणी अमेरिका
- यूरोप
- आस्ट्रेलिया
- अन्टार्टिका

2. **पहाड़ : उच्चतम चोटियाँ**—पृथ्वी की सतह पर बहुत बड़े उठे हुए भाग जिनकी चढ़ाई ढ़ालू हैं।

• माउन्ट एवरेस्ट	8,648 मीटर	• कंचनजंगा	8,597 मीटर
• माउन्ट गाडविन	8,611 मीटर	• नंगा पर्वत	8,126 मीटर
• अन्नपूर्णा	8,078 मीटर	• नंदा देवी	7,817 मीटर

3. **मरुस्थल**—भारी रेत से बने भू भाग मरुस्थल कहे जाते हैं।

• सहारा (उत्तरी अमेरिका)	90,65,000 वर्ग मी
• लिवयान (उत्तरी अफ्रीका)	16,83,500 वर्ग किमी
• अस्ट्रेलियान (आस्ट्रेलिया)	15,54,000 वर्ग किमी
• ग्रेट विक्टोरिया (आस्ट्रेलिया)	3,23,800 वर्ग किमी
• अरेबियन (अरेबिया)	13,00,000 वर्ग किमी
• थार (भारत)	2,60,000 वर्ग किमी

4. **द्वीप**—पृथ्वी के वह भू भाग जो पूरी तरह पानी से घिरे हैं।

• ग्रीनलैण्ड (आर्कटि्क महासागर)	21,75,600 वर्ग किमी
• न्यूगिनी (प० प्रशान्त महासागर)	8,21,030 वर्ग किमी
• बोर्नियो (हिन्द महासागर)	7,44,370 वर्ग किमी
• सुमात्रा (हिन्द महासागर)	4,73,600 वर्ग किमी
• ग्रेट ब्रिटेन (उ० अटलांटिक महासागर)	2,18,040 वर्ग किमी
• क्यूवा (कैरीवियन सागर)	1,14,522 वर्ग किमी और अन्य कई।

(2) **पहाड़ (Mountains)** : भू-पटल पर ऊँचे उठे हुए भागों से निर्मित चट्टानी स्थानों को पहाड़ कहते हैं। छोटी ऊँचाई वाले भाग पहाड़ी (Hills) के नाम से जाने जाते हैं। इनका ऊपरी भाग नुकीला होता है और इन्हें चोटियाँ (Peaks) कहते हैं। बगल की सतहें तिरछी खड़ी (steep) होती हैं। एवरेस्ट (Mt. Everest) तथा कंचनजंघा (Kanchenjunga) की ऊँचाई क्रमशः 8.848 तथा 8,579 मीटर है जो विश्व में सबसे ऊँची है।

(3) **मरुस्थल** (Deserts) : भारी रेत से बने भू-भागों को मरुस्थल अथवा रेगिस्तान कहा जाता है। यहाँ पानी नितान्त न्यून होता है, अतः आबादी अथवा पेड़ वनस्पति आदि नहीं होती हैं। सहारा (उत्तरी अफ्रीका) तथा थार (उत्तरी पश्चिमी भारत) ऐसे ही मरुस्थल हैं।

(4) **द्वीप** (Islands) : ऐसे-भू-भाग जो सभी ओर से पानी से घिरे होते हैं, उन्हें द्वीप कहा जाता है। विश्व में अनेक द्वीप हैं, जैसे—श्रीलंका (हिन्द महासागर), आइसलैण्ड (उत्तरी अटलान्टिक) आदि।

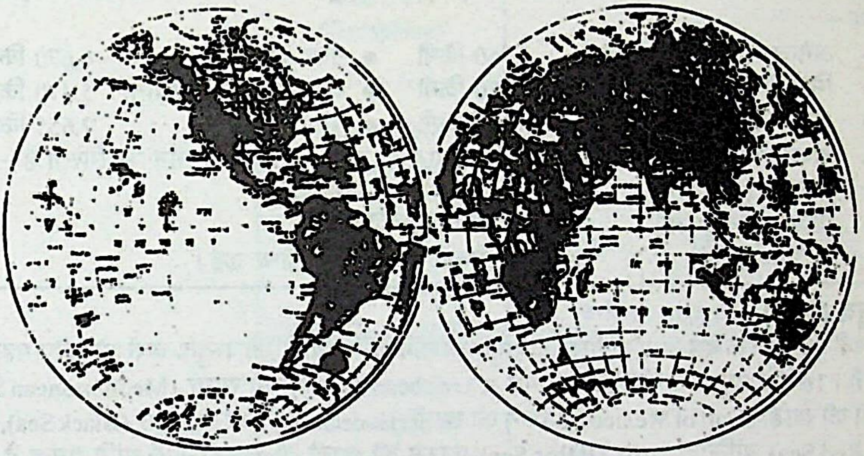
• जलमण्डल
(Hydrosphere)

जलमण्डल पृथ्वी का वह भाग है जो भू-भाग के चारों ओर पानी और बर्फ के रूप में चिपटा हुआ है। यह पूरी पृथ्वी का 7/10 भाग है और लगभग 1460 मिलियन घन किमी (1 अरब 46 करोड़ घन किमी) मात्रा में है। इस पूरी जल मात्रा का अधिकांश भाग (लगभग 97 प्रतिशत) महासागर और समुद्रों में है, जो पीने योग्य नहीं है। शेष 3 प्रतिशत पानी नदियों, झीलों, भूगर्भ में, ध्रुवों पर बर्फ के रूप में और वायुमण्डल में पानी की वाष्प के रूप में है, जिसमें से भी वाष्पीकरण (evaporation) तथा निर्जलन (precipitation) क्रिया से केवल 37,500 घन किमी ही (0·0025 प्रतिशत) पीने के काम में आ सकता है।

(अ) महासागर (Oceans)

यद्यपि विशाल जल के मुख्य भण्डार महासागर एक-दूसरे से लगे हैं, लेकिन तब भी भूगोलवेत्ताओं ने इन्हें महाद्वीपों की स्थिति के अनुसार अलग-अलग नाम दिये हैं। ये मुख्यतः पाँच हैं—

(1) प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) : यह सबसे बड़ा और पृथ्वी के 35·25 प्रतिशत (16,52,42,000 वर्ग किमी) भाग में फैला हुआ है। अधिकतम चौड़ाई 16,880 किमी और अधिकतम गहराई 11,516 मीटर (Mindanao Deep) लिये हुए यह महासागर सबसे पुराना माना जाता है।



चित्र 3·4—पृथ्वी का जलमण्डल

(2) अटलाण्टिक महासागर (Atlantic Ocean) : दूसरा विशाल महासागर पृथ्वी के 20·9 प्रतिशत (8,65,60,000 वर्ग किमी) क्षेत्र में है और इसकी अधिकतम गहराई 8,381 मीटर (Milwankee Deep) है।

(3) हिन्द महासागर (Indian Ocean) : पृथ्वी के दक्षिण में स्थित यह महासागर पृथ्वी के 14·65 प्रतिशत (7,34,30,000 वर्ग किमी) क्षेत्र को घेरे हुए है। इसकी अधिकतम गहराई 7,725 मीटर (Planet Deep) है।

(4) आर्कटिक महासागर (Arctic Ocean) : पृथ्वी के उत्तर में 1,32,80,000 वर्ग किमी में फैला यह महासागर बर्फ के रूप में जमा है जो व्यावहारिक रूप में किसी कार्य में नहीं आता है।

(5) अन्टार्टिका महासागर अथवा दक्षिणी महासागर (Antartica Ocean) : यह भी आर्कटिक महासागर की तरह पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर है और वर्ष के अधिकांश समय जमा रहता है।

जलमण्डल के विविध भण्डारण
(DIFFERENT STORAGE OF HYDROSPHERE)

1. **महासागर**—पृथ्वी की सतह पर जल के विशाल भण्डार
- प्रशान्त महासागर — 16,62,40,000 वर्ग किमी क्षेत्र में
- अटलान्टिक महासागर — 8,65,60,000 वर्ग किमी क्षेत्र में
- हिन्द महासागर — 7,34,30,000 वर्ग किमी क्षेत्र में
- आर्कटिक महासागर — 1,32,80,000 वर्ग किमी क्षेत्र में
- अन्टार्टिका महासागर

2. **समुद्र**—अपेक्षाकृत पृथ्वी के कम बड़े जल भण्डारण समुद्रों की श्रेणी में आते हैं—
- कैरीबियन समुद्र
- मैक्सिको की खाड़ी
- लाल सागर
- भूमध्य सागर
- काला सागर
- बाल्टिक सागर और अन्य कई।

3. **अन्य जल भण्डारण : झीलें**—
- सुपीरियर (कनाडा)
- विनीपेग (कनाडा)
- वेनर (स्वीडन) और अन्य कई।
- विक्टोरिया (पूर्वी अफ्रीका)
- टंगनीयका (पूर्वी अफ्रीका)

प्रकृतिजन्य जल स्रोत
(NATURAL WATER SOURCES)

1. **नदियाँ**—भारी मात्रा में स्वच्छ जल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने वाली प्राकृतिक व्यवस्था—

• अमेजन (दक्षिणी अमेरिका)	6,750 किमी	• नील (अफ्रीका)	6,670 किमी
• मिसीसिपी—मिसौरी (अमेरिका)	5,970 किमी	• यांग-टीसी-क्यांग (चीन)	5,470 किमी
• ओबी (रूस)	5,150 किमी	• गंगा (भारत)	2,655 किमी

2. **झरने**—पानी जो किसी पहाड़ी अथवा पहाड़ के ढालू किनारे से जमीन पर गिरता है—

- नियाग्रा (कनाडा)
- विक्टोरिया (जिम्बाब्वे)
- ऐंजिल (वेनेजुएला)
- रिबन (अमेरिका)
- यूटीगार्ड (नार्वे)
- गैवर्नी (फ्रांस) और अन्य कई।

(ब) समुद्र (Seas)

पृथ्वी पर पानी के बड़े अन्य भण्डारों को समुद्र का नाम दिया गया है, जो वस्तुतः चारों ओर द्वीप-महाद्वीपों से घिरे हैं। 16 बड़े समुद्रों में कैरीबियन समुद्र (Carribbean Sea), भूमध्य सागर (Mediterranean Sea), मैक्सिको की खाड़ी (Gulf of Mexico), हडसन की खाड़ी (Hudson Bay), काला सागर (Black Sea), लाल सागर (Red Sea), बाल्टिक सागर (Baltic Sea), फारस की खाड़ी (Persian Gulf) आदि प्रमुख हैं।

(स) नदियाँ, झीलें और प्रपात (Rivers, Lakes & Falls)

पृथ्वी पर अन्य जल स्रोतों में नदियाँ, झीलें और जल प्रपात प्रमुख हैं, जिनकी संख्या अनगिनत है। इसमें भी नदियों की उपयोगिता सर्वाधिक है क्योंकि ये व्यापार में भी सहायक सिद्ध होती हैं और इनके सहारे अनेक शहर और आबादी सुविधा प्राप्त होने के कारण बस जाते हैं। विश्व की सबसे बड़ी पाँच नदियाँ—1. अमेजन (Amazon)—दक्षिणी अमेरिका (6,750 किमी), 2. नील (Nile)—अफ्रीका (6,670 किमी), 3. मिसीसीपी-मिसौरी (Mississippi-Missouri)—अमेरिका (5,970 किमी), यांग टीसी क्यांग (Yangtze Kiang)—चीन (5,470 किमी) और ओबी (Obi)—रूस (5,150 किमी) हैं। भारत की गंगा नदी (River Ganges) की लम्बाई 2,655 किमी विश्व में क्रम से 31वाँ स्थान रखती है।

• वायुमण्डल
(Atmosphere)

यह विभिन्न गैसीय पदार्थों, जो सब मिलकर वायु के नाम से कही जाती है, का एक ऐसा आवरण है जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे रहती है और उसे हर एक प्रकार से सुरक्षित रखती है। वैसे सिद्धान्ततः वायुमण्डल स्वयं भी पृथ्वी का ही भाग है।

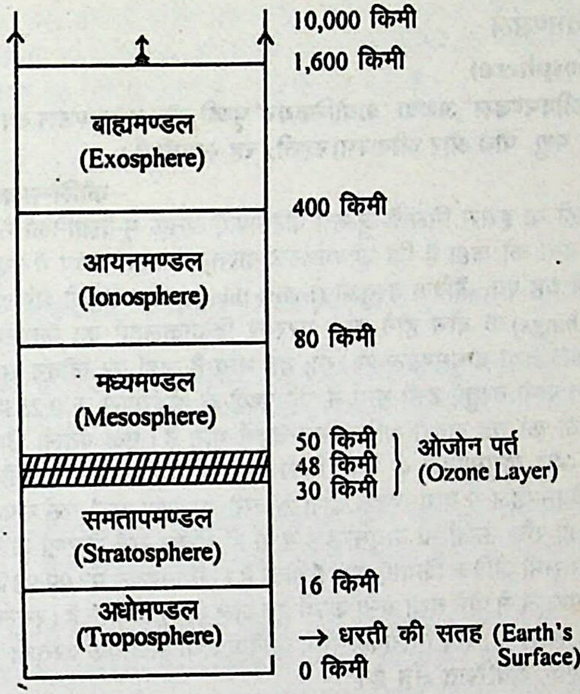
वायुमण्डल पृथ्वी की सतह से लगभग 10,000 किमी से भी अधिक ऊँचाई तक का वह भाग है जिसमें विभिन्न गैसें तथा अन्य पदार्थ अलग-अलग ऊँचाई तक रहते हैं। ये अपने आप अलग-अलग गोलीय कक्ष में बँट जाते हैं, जिनके अलग-अलग नाम दे दिये गये हैं।

(1) अधोमण्डल (Troposphere), (2) समतापमण्डल (Stratosphere),
(3) मध्यमण्डल (Mesosphere), (4) आयनमण्डल (Ionosphere) और
(5) बाह्यमण्डल (Exosphere)।

यह बताना बहुत कठिन है कि पृथ्वी की सतह से वायुमण्डल की अन्तिम पर्त कितनी ऊँचाई पर है? पर वैज्ञानिक आधार पर ऐसा अनुमान है कि यह 10,000 किमी अथवा इससे भी कुछ अधिक ऊँचाई तक हो सकती है। वायुमण्डल में बढ़ती ऊँचाई के साथ-साथ वायु का घनत्व कम होता जाता है, लेकिन एक निश्चित ऊँचाई के बाद पुनः वायु का घनत्व बढ़ने लगता है। इससे अलग-अलग ऊँचाई पर वायुमण्डल की विविध प्रकार से रचना के कारण उसकी कार्य शैली में परिवर्तन आ जाता है।

मोटेतौर से वायुमण्डल को पाँच भागों में बाँटा गया है—

1. **अधोमण्डल (Troposphere)** : इसे **'क्षोभमण्डल'** भी कहते हैं। यह पृथ्वी की ऊपरी सतह से 8 से 16 किमी की ऊँचाई तक होता है। वायुमण्डल की लगभग 80 प्रतिशत संहिता तथा जलवाष्प इस भाग



चित्र 3·5—पृथ्वी का वायुमण्डल

नोट—ऊँचाइयाँ वास्तविक माप से नहीं हैं।

में रहती है। मौसम आदि का बनना एवं अन्य इसी प्रकार की क्रियाएँ भी इसी भाग में होती हैं। इस भाग में ऊँचाई के साथ-साथ प्रति किमी ऊँचाई पर 6·5°C तापक्रम कम होता जाता है। आँधी, तूफान, बादल गर्जन तथा तड़ित की क्रियाएँ इसी मण्डल में घटित होती हैं। अतः मौसम विज्ञानी इस मण्डल की भविष्यवाणी करते रहते हैं, क्योंकि यह सुविधाजनक रूप में ज्ञात हो जाता है।

2. समतापमण्डल (Stratosphere) : अधोमण्डल की ऊपरी सतह से प्रारम्भ होकर पृथ्वी से 48 किमी की ऊँचाई तक '**समतापमण्डल**' की सीमाएँ हैं। इसी मण्डल की ऊपरी सतह पर ओजोन (O_3) की पर्त है जो पृथ्वी का सुरक्षा कवच है। यही पर्त सूर्य से आने वाली अल्ट्रावॉयलेट (पराबैंगनी) किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है जो त्वचा कैंसर का मुख्य कारण होती हैं। इस भाग में ऊँचाई के साथ-साथ तापमान बढ़ता जाता है। इस भाग में मौसम सम्बन्धी कोई गतिविधियाँ नहीं होतीं, अतः गर्जन, आँधी, तूफान आदि से मुक्त रहता है।

3. मध्यमण्डल (Mesosphere) : यह पृथ्वी से 80 किमी ऊँचाई तक है तथा समताप मण्डल से ऊपर है। यह ही वह स्थल है जहाँ सूर्य की किरणों से उत्पन्न ऊर्जा और ओजोन की पर्त का वास्तविक द्वन्द्व होता है। यहाँ फिर ऊँचाई के साथ-साथ तापमान गिरता जाता है। 80 किमी० की ऊँचाई पर यह –109°C तक हो जाता है।

4. आयनमण्डल (Ionosphere) : मध्यमण्डल से ऊपर 300 से 400 किमी की ऊँचाई तक आयनमण्डल कहलाता है। यह अंतरिक्षीय विकिरण (cosmic radiation) से जीवमण्डल की रक्षा करता है तथा रेडियो तरंगों के अवशोषण और परावर्तन को प्रभावित करता है।

5. बाह्यमण्डल (Exosphere) : इस मण्डल की ऊँचाई 400 किमी से प्रारम्भ होती है और सैद्धान्तिक रूप से 1,000 किमी तक होती है। इस मण्डल में हाइड्रोजन तथा हीलियम गैस की प्रधानता रहती है। इसे वायुमण्डल की अन्तिम पर्त माना जाता है।

जैसा कि पहले वर्णन किया है कि वायुमण्डल की अधिकतम सीमा 10,000 किमी तक हो सकती है। अतः इस शेष भाग में अब तक की जानकारी के अनुसार केवल अणु हाइड्रोजन (Atomic Hydrogen) का होना बताया गया है।

• जीवमण्डल
(Biosphere)

'जीवमण्डल' अथवा 'बायोस्फियर' पृथ्वी और वायुमण्डल का वह भाग है जहाँ पर जैविक वस्तुएँ (मनुष्य, पशु, पौधे और जीवाश्म) रहती/रह सकती हैं।

—कौलिन्स कोबिल्ड इंगलिश लैंगुएज डिक्शनरी

यही या इससे मिलती-जुलती परिभाषाएँ अनेक भू-वैज्ञानिकों ने **'जीवमण्डल'** की दी हैं और सभी ने इसी बात को कहा है कि जीवमण्डल वास्तव में अपने आप में स्वतन्त्र रूप से कोई क्षेत्र विशेष नहीं है, बल्कि यह एक जैविक वस्तुओं (living things) और उनको घेरे रखने वाली अजैविक वस्तुओं (non-living things) के बीच होने वाले परस्पर क्रियाकलापों का कार्यस्थल है। वस्तुतः यह स्थलमण्डल, जलमण्डल तथा वायुमण्डल से लगा वह भाग है जहाँ पर जीवन सम्भव है, क्योंकि मनुष्य और उससे सम्बन्धित सभी वस्तुएँ इसी भाग में, जो पृथ्वी के अर्द्धव्यास के 0·25 प्रतिशत से अधिक नहीं हैं, होती हैं। अतः पृथ्वी का यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग है। एक पतली झिल्ली-सा गोलीय आवरण पृथ्वी के भू-पटल और वायुमण्डल के बीच, जिसे मिट्टी की तह जोड़ती है, जीवमण्डल की वास्तविक स्थिति है।

जीवमण्डल में वायुमण्डल द्वारा ऑक्सीजन तथा अन्य गैसें उपलब्ध होती हैं जो जीवन के आधार हैं; साथ ही सौर ऊर्जा भी वायुमण्डल में से ही होकर सूर्य किरणों के रूप में पृथ्वी की सतह पर पहुँचती है जिससे सभी जैविक क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। जीवमण्डल पर 99·98 प्रतिशत ऊर्जा सूर्य से ही प्राप्त होती है। जलमण्डल से पीने तथा अन्य कार्यों हेतु जल की पूर्ति होती है। स्थलमण्डल सभी वस्तुओं तथा क्रियाओं का केन्द्र स्थल है। सब मिलाकर सभी जैविक तथा अजैविक वस्तुओं के परस्पर समन्वय तथा स्थायित्व का यह एक व्यवस्थित क्षेत्र है।

जीवमण्डल में किसी क्रिया का प्रारम्भ सौर ऊर्जा से ही होता है जो सूर्य किरणों के रूप में पृथ्वी पर आती है। इस ऊर्जा की सहायता से हरे पौधे (जिनमें क्लोरोफिल होता है) फोटोसिन्थेसिस क्रिया के अन्तर्गत कार्बन डाइऑक्साइड और जलवाष्प को कार्बोहाइड्रेट्स और ऑक्सीजन में बदल देते हैं। ऑक्सीजन वायुमण्डल में जाकर अपना पूर्व स्थान ले लेती है तथा कार्बोहाइड्रेट्स पौधों द्वारा स्वयं में समाशोषित कर लिये जाते हैं जो ऊर्जा के रूप में व्यवस्थित रहते हैं। यह ऊर्जा शाकाहारी (Herbivores) पशुओं द्वारा घास अथवा छोटी वनस्पति खाने से तथा फिर माँसाहारी पशुओं (Carnivores) द्वारा शाकाहारी पशुओं के खाने से और आगे बड़े पशुओं द्वारा छोटे माँसाहारी पशुओं के खाने से क्रमवार एक भोजन श्रृंखला के रूप में चलती रहती है। मनुष्य जिसकी श्रेणी शाकाहारी और माँसाहारी (Omnivores) दोनों में आती है, अपने में ऊर्जा वनस्पति तथा पशु दोनों से लेता है। सभी वनस्पति तथा पशुओं (मनुष्य सहित) की अधिकतर ऊर्जा उनकी अपनी जीवन-क्रिया के संचालन में ही समाप्त हो जाती है लेकिन जो बच जाती है वह मृत पदार्थ (dead matter) के रूप मे रह जाती है। यहाँ यह बताना उचित होगा कि भोजन श्रृंखला के दो मुख्य अंग होते हैं—1. उत्पादक (Producers or Autotrophs) विशेषतः हरी वनस्पति, जो स्वयं अपना भोजन तैयार करते हैं तथा 2. उपभोक्ता (Consumer or Heterotrophs) विशेषतः पशु (मनुष्य सहित), जो उपलब्ध भोजन का उपभोग करते हैं। चलती भोजन श्रृंखला में एक का भोजन दूसरे को तथा दूसरे का भोजन तीसरे को और इस प्रकार क्रम चलता रहता है और यह पिरामिड जंगल में शेर अथवा मनुष्य (Apex शीर्ष) पर जाकर रुक जाता है, जिन्हें हम इस तन्त्र का नियन्त्रक भी कह सकते हैं।

मृत पदार्थ (जिसमें पशु भी सम्मिलित हैं) को अपघटित करने वाले जीवाणु (Decomposers) पुनः इसको मूल तत्त्वों के रूप में ले जाते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड, पानी और ताप को जीवमण्डल में छोड़ देते हैं तथा शेष मिट्टी में मिल जाता है। आगे यह क्रम चलता रहता है तथा प्राकृतिक रूप से सभी व्यवस्थाएँ सन्तुलित तथा नियन्त्रित रहती हैं। मनुष्य, पशु, पौधे (वनस्पति) तथा जीवाश्मों का जीवन-चक्र चलता रहता है।

• सार्वभौमिक जीवन चक्र
(Global Life Cycles)

पृथ्वी के भू-पटल पर लगभग 100 ऐसे तत्त्व हैं, जो प्राकृतिक रूप में उपभोग हेतु उपलब्ध हैं, जिनमें से लगभग एक-तिहाई का उपभोग जीवधारियों द्वारा आवश्यक रूप से किया जाता है। शेष का उपभोग

आवश्यकतानुसार होता है। ये तत्त्व नष्ट नहीं होते हैं बल्कि एक विशेष संक्रिया चक्र से गुजरते हैं और अन्त में पुनः अपने पुराने रूप में प्रकृति में ही आ मिलते हैं। इनमें की एक सूची जिनमें वह तत्त्व समेकित हैं जो जीवधारियों के लिए विशेष भूमिका का निर्वाह करते हैं, यहाँ दी जा रही है–

(1). पूर्णतया गैसीय रूप में–
ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन तथा कार्बन। –

(2) आंशिक गैसीय रूप में–
सल्फर तथा जल।

(3) सामान्यतया गैसीय रूप में नहीं–
कैल्सियम, पोटैशियम, सिलीकोन, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, क्लोरीन, लोहा, एल्युमिनियम, सीजियम और मर्करी।

इन सभी के संक्रिया चक्र हैं, लेकिन इस अध्याय के परिवेश में हम इनमें से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण केवल (1) जलचक्र, (2) ऑक्सीजन चक्र, (3) नाइट्रोजन चक्र, (4) कार्बन चक्र, (5) ऊर्जा चक्र और (6) ताप ऊर्जा का ही वर्णन करेंगे।

1. जल चक्र (Water Cycle)

जीवमण्डल में पानी की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि यह वनस्पति, पशु और मनुष्य सभी के जीवन का आधार है। यह वायुमण्डल में गैस रूप (जलवाष्प) तथा पृथ्वी पर द्रव रूप (पानी) तथा ठोस रूप (बर्फ) में रहता है।

विश्व में जल के अथाह भण्डार हैं जो महासागर, सागर, झीलें, नदी एवं अन्य स्थानों (भूमिगत जल तथा ध्रुवों पर बर्फ के रूप में) पर संगृहीत हैं। जल चक्र में प्रारम्भिक क्रिया सूर्य की प्रचण्ड गर्मी से महासागर तथा पृथ्वी की सतह पर के समुद्रों, झीलों, नदियों तथा अन्य जल स्रोतों से जलवाष्प बनकर ऊपर आसमान में जाने से शुरू होती है। जलवाष्प से बादल बनते हैं और ये बादल वायुमण्डल में वायु की दिशा में गतिमान रहते हैं। इनकी ऊँचाई भी वायुमण्डल के तापमान पर निर्भर करती हैं। ज्यादा तापमान पर ये और ऊपर चले जाते हैं और जहाँ तापमान कम अथवा आर्द्रता होती है वहाँ पर अपना स्थान बनाते हैं। अधिक आर्द्रता पाकर ये वर्षा की बूँदों के रूप में नीचे आ जाते हैं तथा महासागर और पृथ्वी की सतह पर बरस जाते हैं।

जो पानी पहाड़ों पर गिरता है उसका कुछ भाग चट्टानी पहाड़ियों से बहकर नदी के रूप में बहता है। इसमें से कुछ मिट्टी में समा जाता है तथा शेष झीलों, बड़े जलाशयों एवं तालाबों में आ जाता है। इससे अधिक जल अन्ततोगत्वा समुद्र और महासागरों में जा मिलता है। पहाड़ों पर के पानी का कुछ भाग सीधे अन्दर ही अन्दर पहाडियों में चला जाता है जो झरनों के रूप में गिरता है या फिर बहुत नीचे जाकर भूमिगत जल में मिल जाता है। मिट्टी में का भी पानी वनस्पति के उगाने के अतिरिक्त भूमिगत जल का भाग बनता है, लेकिन यह बात निश्चित है कि पानी के आने-जाने की इस चक्रीय क्रिया में अन्त में जल की स्थिति पूर्व की भाँति स्थिर रहती है। जल चक्र मुख्यतः जल के वाष्पीकरण (evaporation) तथा निर्जलन (precipitation) से क्रियाशील रहता है।

2. ऑक्सीजन चक्र (Oxygen Cycle)

ऑक्सीजन का महत्त्व विशेषतः दो प्रकार से आँका जाता है। प्रथम तो यह प्राण वायु के रूप में मनुष्य तथा पशुओं की श्वसन क्रिया का आवश्यक अंग है तथा दूसरे यह सभी जीवित वस्तुओं की आन्तरिक संरचना का महत्त्वपूर्ण भाग है। इसके अतिरिक्त भी क्योंकि पृथ्वी पर सभी महत्त्वपूर्ण जैविक तत्त्वों के क्रियाकलाप ऑक्सीकरण (oxidation) तथा अपचयन (reduction) की आवश्यक क्रिया से ही सम्भव हैं, अतः ऑक्सीजन की वहाँ भी अत्यन्त उपयोगिता है।

जीवमण्डल में ऑक्सीजन की उपलब्धता अथवा कमी का सर्वाधिक दायित्व पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों पर ही है। मनुष्य वायुमण्डल से ऑक्सीजन ग्रहण करता है तथा निःश्वसन में कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ता है और इस प्रकार वह ऑक्सीजन की मात्रा में कमी तथा कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि करता है। इसके अतिरिक्त दैनिक उपयोग में ईंधन दहन से भी वह और ऑक्सीजन की मात्रा में कमी लाता है और इस क्रिया से प्राकृतिक रूप से संचित कार्बन को वायुमण्डल में छोड़कर अप्रत्यक्ष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि करता है, लेकिन यह बढ़ी हुई कार्बन डाइऑक्साइड सूर्य के प्रकाश में वनस्पति द्वारा अपनाई

जाने वाली फोटोसिन्थेसिस क्रिया के फलस्वरूप ऑक्सीजन में परिवर्तित हो जाती है और इस प्रकार ऑक्सीजन के भण्डारों में कोई कमी नहीं आती है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि ऑक्सीजन केवल वायुमण्डल में ही नहीं है, बल्कि इसकी भारी मात्रा महासागरों के पानी में घुली ऑक्सीजन के रूप में भी है जिससे वायुमण्डल की ऑक्सीजन की मात्रा की कमी की स्थिति में इन भण्डारों से स्वतः ही ऑक्सीजन मिल जाती है और इस तरह जीवमण्डल पर इन दोनों गैसों का सन्तुलन बना रहता है तथा ऑक्सीजन का चक्र चलता रहता है।

3. नाइट्रोजन चक्र (Nitrogen Cycle)

वायुमण्डल में नाइट्रोजन की मात्रा सबसे अधिक (लगभग 78 प्रतिशत) है लेकिन सीधे-सीधे इसका उपयोग नहीं हो पाता है। अतः इसको वनस्पति के उपयोग में लाने के लिए किसी घुलनशील लवणों अमोनिया अथवा अमीनो ऐसिड्स के रूप में परिवर्तित करना होता है जिससे वह मिट्टी में मिलकर तथा वहाँ से पौधों की जड़ों द्वारा वनस्पति में समाहित होकर उनमें प्रोटीन के रूप में व्यवस्थित हो जाये। यह संक्रिया प्रायः वायुमण्डल में तड़ित अथवा फोटोकैमीकल क्रिया द्वारा सम्पन्न होती है। यहाँ से यह नाइट्रोजन भोजन शृंखला के जरिये जीव प्राणीधारियों का अंग बनती है और कालान्तर में मृत जीव या पदार्थों के रूप में पहुँचती है। तब अपने आप में जटिल रासायनिक संक्रियाओं में से गुजर कर नाइट्रोजन का कुछ भाग वायुमण्डल की वायु में पहुँच जाता है तथा अन्य शेष भाग मिट्टी में नाइट्रेट्स के रूप में रह जाता है। यह नाइट्रेट पुनः वनस्पति के उपयोग में आ जाता है तथा क्रम चलता रहता है।

4. कार्बन चक्र (Carbon Cycle)

व्यावहारिक रूप में सभी कार्बनिक पदार्थ फोटोसिन्थेसिस की क्रिया के फलस्वरूप ही उत्पन्न होते हैं। वनस्पति सौर ऊर्जा की सहायता से फोटोसिन्थेसिस की क्रिया के अन्तर्गत कार्बन डाइऑक्साइड और जल से कार्बोहाइड्रेट में परिवर्तित हो जाती है। इस क्रिया में पानी के परमाणु (H_2O) में से हाइड्रोजन विखंडित होकर कार्बन डाइऑक्साइड के साथ मिल जाती है तथा ऑक्सीजन स्वतन्त्र होकर वायुमण्डल में आ जाती है। ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड एक-दूसरे पर अवलम्बित हैं तथा एक-दूसरे के जीवनदाता हैं। केवल ध्यान यही देना है कि इन क्रियाओं में संलग्न पेड़-पौधे तथा वनस्पति को पूरा संरक्षण मिले, जिनसे यह चक्र नियमित रूप से चलता रहे।

5. ऊर्जा चक्र (Energy Cycle)

जीवमण्डल की समस्त गतिविधियाँ सौर ऊर्जा (Solar Energy) से सम्पन्न होती हैं जिसका प्रतिशत समस्त जीवमण्डल पर प्राप्त ऊर्जा का क्लोरोफिल 99·98% है। यह सौर ऊर्जा पेड़-पौधे और हरी वनस्पतियों में विद्यमान क्लोरोफिल के साथ रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है और कार्बोहाइड्रेट्स और ऑक्सीजन का निर्माण करती है। यह स्वयं पौधों का भी भोजन बनती है तथा प्राणीमात्र के आहार का आधार बनती है। सर्वप्रथम शाकाहारी प्राणी इसका सेवन करते हैं (यह प्राणी Herbivores कहलाते हैं)। यह प्राणी आगे ऐसे प्राणियों का भोजन बनते हैं जिन्हें Omnivores कहते हैं। यह शृंखला कई पदों तक चल सकती है। इसे पर्यावरणविदों ने भोजन शृंखला (Food Chain) का नाम दिया है।

जो वस्तुएं बिना उपयोग के रह जाती हैं उन्हें विघटक (Decomposers) नष्ट-भ्रष्ट करके वापिस मिट्टी में मिला देते हैं। इस प्रकार यह चक्र चलता रहता है।

6. ताप चक्र (Heat Cycle)

प्राणी मात्र को सूर्य से मिलने वाली ताप ऊर्जा (Heat Energy) इतनी अधिक है कि उसका बहुत सीधा-साधा गणितीय फलन सम्भव नहीं है। एक गणना के अनुसार समुद्र तल पर भूमि पर प्राप्त होने वाली ताप ऊर्जा 15,000 कैलोरीज प्रति वर्ग मीटर प्रति मिनट है, अर्थात् 10 घंटे के औसत सूर्य प्रकाश से 90,00,000 कैलोरीज प्रति वर्ग मीटर प्रतिदिन है। प्रतिदिन की सौर ऊर्जा जो पृथ्वी की सतह पर प्राप्त होती है वह 684 बिलियन मैट्रिक टन कोयले ($6{\cdot}84 \times 10^{11}$ मैट्रिक टन) से उत्पन्न ताप के बराबर है। यह ऊर्जा पूरे विश्व की पृथ्वी की सतह पर 35 फीट मोटी बर्फ की तह को पिघला सकती है।

यह सौर ऊर्जा जिसे ताप ऊर्जा में प्रयोग में लें तो इसका 98% या तो अवशोषित हो जाती है या बिखर जाती है। शेष 2% ताप ऊर्जा का आधा अर्थात् 1% फोटोसंश्लेषण क्रिया में काम में आ जाती है।

सूर्य का ताप अनन्त है यदि हम अधिक ताप ऊर्जा का उपयोग करें तो वह हमें सुलभ हो सकती है और वर्तमान के किसी भी स्तर पर ऊर्जा की कमी को पूरा कर सकती है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पृथ्वी की संरचना का विस्तार से विवरण दीजिये।
2. जीवमण्डल क्या है ? क्या यहाँ प्राणी जीवन सम्भव है ?
3. सार्वभौमिक चक्र को स्पष्ट करते हुये जल-चक्र समझाइये।
4. वायुमण्डल में 'ओजोन पर्त' कहाँ स्थित है ? इसकी क्या भूमिका है ?
5. पृथ्वी के स्थलमण्डल के अन्दर की रचना किस प्रकार की है ? स्पष्ट करें।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. पृथ्वी के भूपटल में कौन-कौन से खनिज बहुतायत से होते हैं ?
7. अधोमण्डल प्राणी जगत को क्यों अधिक महत्त्वपूर्ण है ?
8. ताप चक्र में सूर्य का कितना योगदान है ?
9. भोजन शृंखला किस प्रकार चलती है ?
10. पृथ्वी किस गति से सूर्य का चक्कर लगाती है ? यह परिभ्रमण काल से किस प्रकार भिन्न है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. पृथ्वी पर स्थल और जल का अनुपात है—
    (अ) 5 : 5 (ब) 7 : 3
    (स) 3 : 7 (द) 4 : 6
12. पृथ्वी के अन्दरुनी कोर का तापमान लगभग होता है—
    (अ) 4000°C (ब) 3000°C
    (स) 2500°C (द) 2000°C
13. विश्व में सबसे ऊँची पर्वत श्रेणी है—
    (अ) कंचनजंगा (ब) नंगा पर्वत
    (स) माउन्ट एवरेस्ट (द) नंदा देवी
14. पृथ्वी का कुल सतही क्षेत्रफल है—
    (अ) 510 मिलियन वर्ग किमी (ब) 149 मिलियन वर्ग किमी
    (स) 361 मिलियन वर्ग किमी (द) 322·6 मिलियन वर्ग किमी
15. विश्व की सबसे लम्बी नदी कौन-सी है ?
    (अ) अमेजन (ब) नील
    (स) मिसीसिपी-मिसौरी (द) यांग टीसी क्यांग

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य को चिन्हित कीजिये—

16. ओजोन पर्त प्राणी जीवन को अल्ट्रावायलेट किरणों से रक्षा करती है। (सत्य/असत्य)
17. बादल, तूफान, वर्षा आदि समताप मण्डल में होते हैं। (सत्य/असत्य)
18. भारी रेत से बने भू-भागों को मरुस्थल या रेगिस्तान कहते हैं। (सत्य/असत्य)
19. हरे पौधों में फोटोसिन्थेसिस क्रिया सूर्य के प्रकाश में ही सम्पन्न हो सकती है। (सत्य/असत्य)
20. जल चक्र मुख्यतः जल के वाष्पीकरण तथा निर्जलन से क्रियाशील रहता है। (सत्य/असत्य)

4

पारिस्थितिकी
[ECOLOGY]

• प्रस्तावना
(Introduction)

जब से मानव का इस पृथ्वी पर इतिहास मिलता है तब से आज तक की उसकी रहने की स्थिति, उपलब्ध आवश्यक वस्तुएँ, वांछित सुविधाएँ और उसके जीवन की इच्छाएँ तथा आकांक्षाओं में इतनी असमानता है कि उसे न तो किसी पर्यावरणविद् और न ही किसी व्यावहारिक विज्ञान के विशेषज्ञ द्वारा सामान्यतया व्यक्त किया जा सकता है और न ही उस पर कोई व्यक्ति तत्काल निष्कर्ष निकाल सकता है। कारण स्पष्ट है कि प्रारम्भ में केवल प्रकृति आधारित सामान्य जीवन में रहने वाला मनुष्य समय के साथ-साथ इतना बदला है कि सभी प्रकार की कल्पनाएँ/परिकल्पनाएँ ही झुंठलाती नजर आती हैं। पहले कभी विलासिता की श्रेणी में गिनी जाने वाली वस्तुएँ, जैसे—सुख-सुविधापूर्वक आलीशान मकान, आने-जाने के स्वचालित वाहन, दूरभाष, तार अथवा फैक्स, जैसे संचार माध्यम, आमोद-प्रमोद के विभिन्न साधन सभी आज आवश्यकताओं की श्रेणी में आ गये हैं, वहीं आज आवश्यकता और प्राथमिकता की वस्तुओं (जल, वायु, भोजन) का अभाव होने लगा है। प्रकृति के अपार संसाधनों के भण्डार दिन-प्रतिदिन कम होते जा रहे हैं। बढती जनसंख्या ने सभी सोच और भविष्यवाणियों को नकार दिया है। इसके साथ ही एक समस्या ने और अपना विकराल मुँह फैलाया है और वह है 'प्रदूषण'। सब ओर प्रदूषण ने सामान्य जीवन के सामने प्रश्न चिन्ह ही लगा दिया है। तब आज एक ऐसी कल्पना भी जिसमें अनगिनत सुख-सुविधाओं के साधनों की बाहुल्यता है, आम आदमी को राहत नहीं पहुँचा पा रही हैं।

पिछले कुछ दशकों से **जीवन की गुणवत्ता** (Quality of Life) की बात चर्चा का विषय बन रही है। शुद्ध वायु, स्वच्छ भोजन, साफ-सुथरा और हवादार आवास तथा अन्य आवश्यक तथा अपेक्षित सुविधापूर्ण जीवन को सुख का आधार मानकर एक अच्छे जीवन की बात चल रही है और इसी के सन्दर्भ में पर्यावरण और **पर्यावरण गुणवत्ता** (Quality of Environment) भी अब सोच में आया है। जब तक वह वातावरण जिसमें हम रहते हैं, जिसे अब पर्यावरण कहें तो अधिक उचित होगा, वह अच्छा व स्वच्छ और प्रदूषित रहित नहीं होगा तब तक पर्यावरण गुणवत्ता की बात करना बेकार है। पर्यावरण-गुणवत्ता के बिना जीवन-गुणवत्ता सम्भव नहीं है, क्योंकि ये दोनों एक-दूसरे पर आधारित हैं तथा एक-दूसरे के पूरक और सम्पूरक हैं।

पर्यावरण को हमने पहले भी परिभाषित किया है। जो भी वस्तुएँ (जैविक अथवा अजैविक) हमें अपने आवरण में रखती हैं अथवा जिन वस्तुओं से हम घिरे हैं वही पर्यावरण के घटक हैं और मानव जीवन पर इन सभी का समेकित प्रभाव ही पर्यावरण कहलाता है। इसके आधार पर हम अपने जीवन को अच्छे या बुरे जीवन के रूप में नामांकित कर देते हैं और फिर एक अच्छे पर्यावरण की खोज का सिलसिला हमारी चर्चा का विषय बन जाता है। निश्चय ही मनुष्य का पर्यावरण से गहरा सम्बन्ध है जिसके बारे में विस्तृत रूप से जानना महत्त्वपूर्ण ही नहीं बल्कि नितान्त आवश्यक है। मनुष्य (प्रत्येक जीवधारी) का पर्यावरण तथा पर्यावरण के विभिन्न घटकों के सम्बन्ध में अध्ययन को पारिस्थितिकी (Ecology) नाम दिया है जिस पर हम आगे चर्चा करेंगे।

• पारिस्थितिकी क्या है ?
(What is Ecology ?)

Ecology ग्रीक शब्द, Oikos= Home अर्थात् घर अथवा आवास और Logos = Study अर्थात्

अध्ययन से मिलकर बना है, जिसका आशय है Ecology = Study of Home or Habitat अर्थात् घर अथवा आवास का अध्ययन। इस रूप में इस शब्द को कई परिभाषाएँ मिली हैं—

1. 'पारिस्थितिकी' किसी भी जीवधारी का उसके पर्यावरण के सन्दर्भ में अध्ययन है।
2. 'पारिस्थितिकी' जीवधारियों में तथा जीवधारी और पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।
3. 'पारिस्थितिकी' वनस्पति, पशु, मानव तथा उनके पर्यावरण के सम्बन्धों का अन्तिम परिणाम है।
4. इसे **Charles H. Southwick** ने और व्यापक रूप देने का प्रयास किया है—पारिस्थितिकी जीवधारियों के आपस में और उनके पर्यावरणों के सम्बन्धों का वैज्ञानिक अध्ययन है।

इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि 'पारिस्थितिकी' जहाँ केवल शब्दों से सहज प्रतीत होती है, उतना सीमित न तो उसका क्षेत्र है और न ही उतना आसान उसकी अध्ययन प्रक्रिया, क्योंकि आखिर यह पृथ्वी के असंख्य पशु, पौधे, मनुष्य, जीवाश्म और उनके अलग-अलग पर्यावरणों के सह-सम्बन्धों की बात है और इनके आपसी भेद-मतभेद, प्रक्रिया-प्रतिक्रिया और प्रभाव-कुप्रभावों के अध्ययन की बात है। अतः अब तक स्थूल रूप से सोचे जा रहे और समझे जाने वाले केवल प्राकृतिक पर्यावरण को ही पारिस्थितिकी का क्षेत्र नहीं मान सकते। निश्चय ही इसमें मनुष्य तथा अन्य जीवधारियों के पर्यावरण के जैविक (biological) तथा सामाजिक (Social) घटकों को भी सम्मिलित करना होगा। इसी के आधार पर हम यह कहेंगे कि अब पारिस्थितिकी (Ecology) पूर्व की भाँति केवल वनस्पतिशास्त्र (Botany) का अथवा जैविक विज्ञान (Life Sciences : Zoology, Botany & Anthropology) का ही क्षेत्र नहीं रह गया है बल्कि अब इसमें रसायन विज्ञान (Chemistry), भूगर्भ विज्ञान (Geology), भूगोल (Geography), मौसम विज्ञान (Meteorology), जलवायु विज्ञान (Climatology), जल विज्ञान (Hydrology), जीवाश्म विज्ञान (Palaeontology), पुरातत्व विज्ञान (Archaeology), समाज विज्ञान (Sociology), नक्षत्र विज्ञान (Astronomy) आदि सभी और उन सभी क्षेत्रों को, जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण और उसकी गतिविधियों से जुड़े हैं, पारिस्थितिकी अर्थात् पर्यावरणीय अध्ययन में सम्मिलित किया जाना है। अगर बहुत संक्षिप्त में हम यह कहें कि सभी प्राकृतिक विज्ञान (Natural Sciences) और सामाजिक विज्ञान (Social Sciences) का समस्त क्षेत्र पारिस्थितिकी में आता है, तो इसे नकारने का कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि हर स्थिति तथा हर वातावरण का मनुष्य व अन्य जीवधारियों पर प्रभाव पड़ता है।

पारिस्थितिकी क्या है ?
(What is Ecology ?)

पारिस्थितिकी विज्ञान की वह शाखा है जो सम्पूर्ण जीव जगत् के घटकों में परस्पर तथा सजीव वर्ग का अपने पर्यावरण से सहसम्बन्ध का अध्ययन करती है।

पारिस्थितिकी अर्थात् 'इकोलोजी' एक यूनानी शब्द से निकला है जिसका आशय 'घर के लिये' से है। पारिस्थितिकी वस्तुतः जीवमण्डल में अपने पर्यावरण का अध्ययन करती है।

पारिस्थितिकी तंत्र
(Ecosystem)

पृथ्वी की सभी वस्तुओं को मोटे तौर से दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, (1) प्राणी जगत् और (2) अजैविक वस्तुएँ। प्राणी जगत् में मनुष्य, पशु, पौधे और सूक्ष्म जीवाणु आते हैं तथा अजैविक वस्तुएँ अनेक हैं, जिनमें जल, मिट्टी, खनिज, प्रकाश, ऊर्जा, वायु आदि भी सम्मिलित हैं। प्राणी अकेला स्वयं अस्तित्व में नहीं रह पाता है, अतः कुछ या अनेक अजैविक वस्तुओं के साथ छोटी सी इकाई का निर्माण कर लेता है। यह इकाई आत्मनिर्भर होती है। प्राणी जगत् के जैविक वस्तुओं के साथ मिलकर बनाने के इस क्रियाकलाप को ही पारिस्थितिक तंत्र कहते हैं।

परितंत्र कई स्तरों पर कार्य कर सकता है, एक गांव की पोखर जैसा छोटा अथवा एक बहुत बड़ा वन क्षेत्र, हिमालय जैसा स्वतंत्र अथवा खेत जैसा पराश्रयी अथवा अवलम्बित। यही नहीं बल्कि एक पारिस्थितिकी तंत्र में कई परितंत्र भी कार्य कर सकते हैं।

पारिस्थितिकी तन्त्र (Ecosystem)

पर्यावरण अध्ययन एक अपेक्षाकृत कठिन कार्य है जिसमें अनेकानेक बातें समाहित हैं। सर्वप्रथम इस दिशा में 'पारिस्थितिकी तन्त्र' को जानना होगा जो पर्यावरण क्षेत्र में किसी भी एक सन्तुलित व्यवस्था स्थिति को निरूपित करती है।

इस तन्त्र में जिसे **'परितन्त्र'** भी कह सकते हैं, जितनी भी वस्तुएँ जीव-निर्जीव परस्पर सम्पर्क में आती हैं, वह सब मिलकर इस प्रकार एक-दूसरे से संयोग करती हैं कि एक सन्तुलित व्यवस्था बनी रहती है। चाहे एक छोटे से तालाब का उदाहरण लें अथवा एक महासागर का। इनका अलग-अलग एक **'पारिस्थितिकी-तन्त्र'** है जिसके आधार पर यह स्थिर रूप में अस्तित्व बनाये रखे हैं। इसी प्रकार **वन (Forest)** भी एक बड़ा, यद्यपि जटिल, परितन्त्र है, जो कितने ही कार्यों का सम्पादन कर पर्यावरण को सन्तुलित रखता है और स्वयं भी अपने आप को नियन्त्रित रखता है। इसी प्रकार **जीवमण्डल (Biosphere)** एक ऐसा बड़ा परितन्त्र है जिसमें अलग-अलग पारिस्थितिंकी तन्त्र सम्मिलित हैं और जो पूरे को अथवा अलग-अलग सभी को व्यवस्थित रखता है।

लेकिन परितन्त्र (Ecosystem) को एक विशेष रूप में परिभाषित करना कठिन कार्य है। इसकी व्यापक परिभाषा तलाशने से पहले हमें उन शब्दों की परिभाषा जाननी होगी जिनके आधार पर पारिस्थितिकी तन्त्र को व्यक्त कर सकें। वे हैं—

1. आबादी (Population)

एक निर्धारित स्थान में सामान्यतया एक ही जाति/प्रजाति के कार्यरत लोगों (जीवों) के समूह को आबादी कहते हैं। जैसे किसी महासागर में ह्वेल मछलियों की आबादी, कान्हा प्रोजेक्ट टाइगर में चीतों की आबादी, उत्तर प्रदेश में वृद्धों की आबादी आदि।

2. समुदाय (Community)

किसी एक स्थान पर कई प्रकार की आबादियों के समूह को समुदाय कहते हैं, जैसे रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान में वन्य जीव समुदाय, हरियाणा में दूध देने वाले जानवर समुदाय आदि।

3. आवास अथवा निवास (Habitat)

किसी जीवधारी का स्थान जहाँ पर वह रहता हो/बसता हो।

4. पर्यावरण (Environment)

जहाँ जीवधारी रहता/बसता हो, वहाँ की भौतिक तथा जैविक विशिष्टताएँ/विशेषताएँ अथवा लक्षण।

उपर्युक्त चार शब्दों के आधार पर हम किसी 'पारिस्थितिकी तन्त्र' को निम्न प्रकार परिभाषित कर सकते हैं—

'पारिस्थितिकी तन्त्र' किसी स्थान विशेष में रहने वाले जीवधारियों (वनस्पति, पौधे तथा पशु-मानव) में परस्पर तथा उनमें और पर्यावरण के मध्य होने वाले जटिल सम्बन्धों को बताता है।

अथवा

एक 'पारिस्थितिकी तन्त्र' किसी स्थान की आबादी, समुदाय, आवास और पर्यावरण को समाहित करते हुए वह व्यवस्था है जिसमें जैविक और अजैविक वस्तुओं के बीच सभी पर्यावरणीय क्रियाएँ/संक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं।

इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि 'पारिस्थितिकी तन्त्र' एक ऐसी स्वतन्त्र पर्यावरणीय इकाई है जो किसी जीव समूह और उसके इर्द-गिर्द भौतिक पर्यावरण के बीच सामंजस्य और समन्वय रखती है।

'पारिस्थितिकी तन्त्र' अथवा **'परितन्त्र'** पर्यावरण के अजैविक घटक (वायु, जल, भूमि और सौर ऊर्जा, आदि) तथा जैविक घटक (वनस्पति तथा पशु) दोनों के पारस्परिक संक्रियाओं पर आधारित है। यहाँ यह बताना उचित एवं सामयिक होगा कि इनकी क्रियाएँ/संक्रियाएँ ऊर्जा प्रवाह (Energy Flow) तथा पोषक चक्र (Nutrient Cycles) से सम्पादित होती हैं या यह कहें कि 'पारिस्थितिकी तन्त्र' एक ऐसी मशीन है जिसमें ऊर्जा तथा पोषक तत्त्वों का ईंधन उसे गति प्रदान करता है। इस पर अधिक विवरण हम आगे दे रहे हैं।

• पारिस्थितिकी तन्त्र के घटक (Components of the Ecosystem)

किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र के चार मुख्य घटक होते हैं, वे निम्न हैं—(1) अजैविक पदार्थ या वस्तुएँ (Abiotic Substances), (2) उत्पादक जीवधारी (Producer Organisms), (3) उपभोक्ता जीवधारी (Consumer

Organisms) और (4) विघटक जीवधारी (Decomposer Organisms)। इनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है—

1. अजैविक पदार्थ (Abiotic Substances)

अजैविक पदार्थ कार्बनिक अथवा अकार्बनिक दोनों ही हो सकते हैं जिनमें पानी, कार्बन डाइऑक्साइड, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, खनिज, लवण, अम्ल, क्षार, सभी तत्व एवं यौगिक (entire range of elements & compounds) आदि सम्मिलित हैं। किसी भी समय विशेष में ये जीवधारी को प्राप्त भी हो सकते हैं और कभी इनकी उपलब्धता कठिन मी हो जाती है। इनकी पारिस्थितिकी तन्त्र के क्रियाकलापों में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है, लेकिन कौन-सा आवश्यक पदार्थ कितनी जल्दी उपलब्ध होता है या नहीं ही होता है इस पर भी परितन्त्र की स्थिरता तथा कार्यकुशलता निर्भर होती है।

2. उत्पादक जीवधारी (Producer Organisms)

उत्पादक जीवधारी वह पादप (वनस्पति) और जीवाणु (Bacteria) होते हैं जो कार्बनिक यौगिकों का निर्माण करते हैं। इन्हें स्वयं उत्पादनकर्त्ता (Autotroph) भी कहते हैं। ये सूर्य की किरणों से प्राप्त ऊर्जा की सहायता से फोटोसिन्थेसिस संक्रिया के अन्तर्गत अकार्बनिक पदार्थों को कार्बनिक पदार्थों में बदल देते हैं और इस प्रकार अपना भोजन स्वयं बनाते हैं। विशेषतः हरे पादप या वनस्पति इसमें आती हैं। कुछ जीवाणु जो स्वयं अपना भोजन तैयार कर लेते हैं इस श्रेणी में गिने जाते हैं।

3. उपभोक्ता जीवधारी (Consumer Organisms)

ये वे सजीव जीवधारी (पशु तथा मनुष्य) हैं जो उत्पादक जीवधारियों द्वारा तैयार किये गये भोजन का उपभोग करते हैं। इस श्रेणी में आने वाले सजीव सदस्य स्वयं अपना भोजन नहीं बना पाते हैं अतः वह उत्पादकों द्वारा उपलब्ध कराये गये भोजन पर आश्रित होते हैं। इस संवर्ग के जीवधारियों को पुनः निम्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) **प्राथमिक उपभोक्ता अथवा शाकाहारी जीव** (Primary Consumers or Herbivores) : इस श्रेणी के जीव पूर्णतया वनस्पति या छोटे-छोटे पादपों पर आधारित होते हैं, इसी कारण इन्हें शाकाहारी जीवों की श्रेणी में रखा गया है। जंगलों में खरगोश, हिरन, तालाबों और अन्य जल स्रोतों में छोटी मछलियाँ, घरों तथा अन्य स्थानों पर मवेशी (गाय, बकरी, भैंस आदि), छोटे जीव, चूहे आदि इस श्रेणी में आते हैं।

(2) **द्वितीय उपभोक्ता अथवा माँसाहारी जीव** (Secondary Consumers or Carnivores) : इस श्रेणी के उपभोक्ता माँसाहारी होते हैं और उनका मुख्य भोजन वे शाकाहारी जीव होते हैं जो प्राथमिक उपभोक्ता के रूप में बताये गये हैं। यह कभी शाकाहारी भी हो सकते हैं, ऐसी स्थिति में वह प्राथमिक उपभोक्ता के लिए उपलब्ध भोजन का उपयोग कर लेते हैं। मनुष्य स्वयं इस नई श्रेणी का उभयहारी (Omnivores) कहलाता है जो स्वयं तो शाकाहारी है ही तथा शाकाहारी जीवों को भी भोजन के रूप में ग्रहण कर सकता है।

(3) **तृतीय उपभोक्ता** (Tertiary Consumers) : ये भी माँसाहारी उपभोक्ता होते हैं और इनका भोजन प्रायः माँसाहारी जीव (द्वितीय उपभोक्ता) होते हैं। इसके उदाहरण के लिए बाज (Hawk) उपयुक्त है जो नेवला को खा जाता है, जबकि नेवला चूहे को अपना भोजन बना लेता है। यह श्रृंखला और भी आगे जा सकती है और किसी-किसी स्थिति में तो उपभोक्ता चतुर्थ, पंचम या अधिक भी हो सकते हैं।

(4) **विघटक जीवधारी** (Decomposer Organisms) : विघटक जीवधारी प्रायः जीवाणु तथा कवक (फफूँद) आदि होते हैं जो समाप्त प्रायः सामग्री (dead matter) अथवा अन्य गंदगी या किसी प्रकार नष्ट हुई सामग्री को विभिन्न सरल और सामान्य पदार्थों में विघटित कर देते हैं। ये विघटित पदार्थ अजैविक वातावरण में घुल-मिल जाते हैं और तब उत्पादक जीवधारी पुनः इसका उपयोग कर सकते हैं। निःसन्देह विघटकों की पूरे परितन्त्र को चलाये रखने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि यह पूरे चक्र को पूरा करके तन्त्र में गति प्रदान करते हैं।

किसी भी सन्तुलित परितन्त्र में इन उपर्युक्त चारों घटकों का होना आवश्यक है। यह सम्भव है कि

अलग-अलग स्थितियों में उपभोक्ताओं की क्रमबद्धता में अन्तर आ जाये, लेकिन सामान्यतया सभी घटकों की क्रियाशीलता सभी परितन्त्रों में होती है।

● परितन्त्रों के प्रकार
(Types of Ecosystems)

क्रियाशीलता (functional) की दृष्टि से परितन्त्रों में विभिन्न स्थितियों के अनुसार कुछ विभिन्नताएँ तथा विविधताएँ होती हैं जिनके अनुसार अलग-अलग प्रकार के परितन्त्र बन जाते हैं। उनमें से कुछ निम्न हैं—

1. अपूर्ण परितंत्र (Incomplete Ecosystem)

सामान्यतया सभी परितन्त्रों में चारों उपर्युक्त वर्णित घटक (अजैविक पदार्थ, उत्पादक जीवधारी, उपभोक्ता जीवधारी तथा विघटक जीवधारी) होते हैं, लेकिन कभी-कभी ऐसे उदाहरण भी होते हैं जिनमें एक या एक से अधिक घटकों की उपलब्धता न हो। तब ऐसी स्थिति में उस परितन्त्र को अपूर्ण परितन्त्र ही कहेंगे। उदाहरण के लिये किसी गहरे समुद्र की गहराई में रोशनी के अभाव में हरी वनस्पति तथा पादप पनप नहीं पाते अथवा उग ही नहीं पाते अर्थात् उत्पादक (Producers) ही नहीं होते। तब वहाँ के जानवरों का भोजन वह सामग्री होती है जो ऊपरी सतह से मृत जानवर, पौधे अथवा अन्य कार्बनिक पदार्थ नीचे पहुँच जाते हैं। ऐसी स्थिति में उपभोक्ता (Consumers) तथा विघटक (Decomposers) तो अवश्य हो जाते हैं, लेकिन उत्पादक नहीं होता। सारा परितन्त्र बाहरी उत्पादक के सहारे चलता रहता है। सैद्धान्तिक रूप से यह अपूर्ण परितन्त्र है। ऐसे और भी कई उदाहरण हो सकते हैं।

कोई एक बड़ा शहर जिसमें न तो उत्पादक है और न ही विघटक है अपूर्ण परितन्त्र का दिलचस्प उदाहरण है। शहर में विभिन्न प्रकार के शाकाहारी जीवों (चूहे, बिल्ली, कुत्ता, चिड़ियाँ, गाय, बकरियाँ आदि) के लिए वनस्पति अथवा उनके योग्य शाकाहारी भोजन की उपलब्धि नहीं है। उसे पूरा करने हेतु बाहर से चारा, पत्तियाँ आदि मँगानी होती हैं। इस प्रकार 'उत्पादक' का कार्य बाहर से होता है या यों कहें कि उत्पादक की व्यवस्था बाह्य अथवा बाहरी होती है। इसके अतिरिक्त गंदगी, मृत पशु, मल-मूत्र आदि का निस्तारण भी शहर में नहीं हो पाता, अतः उसे भी बाहर निकालना होता है। इस प्रकार 'विघटक' की भूमिका का भी शहर में निर्वाह नहीं हो पा रहा होता है। तब ऐसा बिना दो महत्त्वपूर्ण घटकों के चलने वाला परितन्त्र (ecosystem) अपूर्ण ही कहलायेगा।

2. स्वयं समर्थ परितंत्र (Self-sufficient Ecosystem)

इस परितन्त्र को सामान्य परितन्त्र (Natural Ecosystem) अथवा स्वयं व्यवस्थित परितन्त्र (Self-maintained Ecosystem) अथवा स्वयं नियंत्रित परितन्त्र (Self-controlling Ecosystem) भी कहते हैं। इस प्रकार के परितन्त्रों में यदि कोई परिवर्तन या किसी वस्तु या घटक की कमी या वृद्धि होती है तो वहाँ के अन्य घटक स्वयं स्थिति को नियन्त्रण में ले आते हैं। एक जंगल के परितन्त्र का उदाहरण लें जिसमें बड़े पेड़ गिरते हैं, नये उगते हैं। अतः वहाँ की भोजन श्रृंखला (Food Chain), ऊर्जा प्रवाह (Energy Flow) और पोषक चक्र (Nutrient Cycle) में कोई व्यवधान नहीं आता है। यदि असामान्य रूप में कभी शाकाहारी और माँसाहारी जीवों की संख्या के अनुपात में स्पष्ट अन्तर आ भी जाता है तो कुछ प्रकृति और कुछ परितन्त्र की सामान्य प्रक्रिया उसे ठीक-ठाक कर देती है।

3. विकृत परितन्त्र (Degraded Ecosystem)

ऐसे परितन्त्र मुख्यतः घास के मैदान अथवा वह चरागाह होते हैं जहाँ उत्पादक की कमी से शाकाहारी और माँसाहारी उपभोक्ताओं के प्रतिशत में एक साथ कमी अथवा अधिकता हो जाती है या इन दोनों उपभोक्ताओं के आवश्यक अनुपात में अन्तर आ जाता है। ऐसी स्थिति में परितन्त्र विकृत होने लगता है और प्रायः अन्त में वह नष्ट ही हो जाता है।

4. अनियन्त्रित परितन्त्र (Uncontrolled or Cultural Ecosystem)

जब किसी परितन्त्र में मानव द्वारा ऐसी गतिविधियाँ शुरू कर दी जाती हैं जो सामान्यतया व्यक्ति विशेष के किसी विशेष लाभ में केन्द्रित हो तो वहाँ की स्थिरता और सन्तुलन समाप्त हो जाता है। शाकाहारी जीवों को नष्ट करने से माँसाहारी जीवों का जीवन संकट में पड़ जाता है। इस स्थिति में उपज तो मनुष्य

को मिल जाती है पर परितन्त्र समाप्त हो जाता है। कालान्तर में उपज भी इस प्रकार के कार्यकलापों से प्रभावित होती है।

• परितन्त्रिक स्थायित्व (Ecosystem Homeostasis)

प्रत्येक परितन्त्र स्वयं में परिपूर्ण होता है लेकिन यदि किन्हीं कारणों से इसमें कोई अव्यवस्था आती है तो प्राकृतिक रूप से वह अथवा उसके सभी जैविक तथा अजैविक घटक उस अव्यवस्था को दूर कर पुनः तन्त्र को व्यवस्थित और स्थिर बना देते हैं। परितन्त्र की यह सन्तुलित अवस्था 'परितंत्रिक स्थायित्व' (Ecosystem Homeostasis) कहलाती है।

इस स्थायित्व में जिन विभिन्न क्रियाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है उनमें से दो प्रमुख क्रियाओं और उनकी कार्य प्रणालियों का यहाँ वर्णन करेंगे—

1. ऊर्जा प्रवाह (Energy Flow)

पर्यावरणीय व्यवस्था में ऊर्जा का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसी की सहायता से जैविक और अजैविक वस्तुओं में क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। अपने गुणधर्म के अनुसार ऊर्जा किसी भी दिशा में जा सकती है अथवा भेजी जा सकती है लेकिन वापस इसे उसी क्रम में लौटाया नहीं जा सकता। इसीलिए यहाँ 'ऊर्जा चक्र' के स्थान पर 'ऊर्जा प्रवाह' शब्दावली को काम में लिया है क्योंकि यह एक रेखीय गति है चक्रीय नहीं।

सजीव प्राणधारी (Living Organisms) के लिए ऊर्जा का मूल स्रोत सूर्य ही है जिससे पृथ्वी की सतह पर ऊर्जा की अथाह मात्रा प्राप्त होती है, जो मोटे अनुमान के अनुसार 15,000 कैलोरी[1] प्रति वर्ग मीटर प्रति मिनट अर्थात् 9×10^6 कैलारी प्रति वर्ग मीटर प्रतिदिन (यदि सूर्य दिन में 10 घन्टे रहता है) है। यह इतनी सौर ऊर्जा है कि इससे पूरी पृथ्वी की सतह पर 35 फीट मोटी बर्फ की पर्त को पिघलाया जा सकता है। वस्तुतः यह ऊर्जा 684 बिलियन मैट्रिक टन (684×10^9 mt) कोयले से प्राप्त गर्मी के बराबर है, लेकिन यह सब ऊर्जा हमें उपलब्ध नहीं हो पाती है और अधिकतर (98 प्रतिशत) सौर ऊर्जा परावर्तित होकर बिखर जाती है। केवल 2 प्रतिशत भाग ही पृथ्वी के पास रहता है जिसमें से भी लगभग एक प्रतिशत सौर ऊर्जा ही हरी वनस्पतियों (पौधों) को मिल पाती है जो पर्यावरण के विभिन्न कार्यों में ऊर्जा के रूप में काम में आ सकती है।

सौर ऊर्जा को हरे पादप ही काम में ले सकते हैं, जहाँ वे इसे अपने में कार्बन का अपचयन करके कार्बोहाइड्रेट्स तथा प्रोटीन के रूप में समाहित कर लेते हैं। जो वस्तुतः ईंधन के रूप में काम आता है। शाकाहारी जीवों द्वारा इन पादपों का भोजन के रूप में उपयोग ऊर्जा का एक स्थान से दूसरे स्थान तक हस्तान्तरण है। यह रेखीय गति है जिसे हम ऊर्जा प्रवाह के नाम से कहते हैं। भोजन शृंखला का सम्पन्न होना इसी ऊर्जा प्रवाह के कारण ही संभव है।

2. जैविक-भू-रासायनिक चक्र (Biogeochemical Cycles)

इस अध्याय से पूर्व हम बता चुके हैं कि पृथ्वी के जीवमण्डल क्षेत्र में पारिस्थितिकी तन्त्र के परिप्रेक्ष्य में सजीव जीवधारी तथा निर्जीव वस्तुओं के मध्य अनेक आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण तत्त्वों का प्रभाव पड़ता है। ये तत्त्व, विशेषतः कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और सल्फर हैं जो प्रतिदिन अनेक क्रियाओं से गुजरते हैं, लेकिन प्रकृति में कुछ ऐसी व्यवस्था है कि सभी संक्रियाओं में से होकर भी ये तत्त्व अपने मूल रूप में एक निश्चित अवधि में वापस आ जाते हैं और आगे की क्रिया में पुनः निरन्तर सहायक होते हैं। यह प्रकृतिदत्त व्यवस्था जैविक-भू-रासायनिक चक्र कहलाता है।

इस सम्बन्ध में पिछले ही अध्याय में हमने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्बन चक्र (Carbon Cycle), जल चक्र (Water Cycle), ऑक्सीजन चक्र (Oxygen Cycle) तथा नाइट्रोजन चक्र (Nitrogen Cycle) के कार्यों का विवरण दिया है।

---

1. एक ग्राम-कैलोरी वह ताप की मात्रा है जो एक ग्राम पानी को एक डिग्री सेन्टीग्रेड तक गर्म करने में लगती है।

• अच्छे परितन्त्र के लिए आवश्यकताएँ (Requirements of a Good Ecosystem)

उपर्युक्त विस्तृत विवेचना के आधार पर हम एक अच्छे परितन्त्र के लिए अपेक्षित आवश्यकताएँ निम्न प्रकार समेकित कर सकते हैं—

1. परितन्त्र के आवश्यक घटक, अजैविक पदार्थ, उत्पादक, उपभोक्ता और विघटक अवश्य रहने चाहिए।
2. ऊर्जा निरन्तर और यथेष्ट मात्रा में मिलती रहनी चाहिए। स्पष्ट है यह ऊर्जा सौर ऊर्जा ही है।
3. ऊर्जा प्रवाह के साथ भोजन शृंखला की नियमित क्रियाशीलता होनी चाहिए।
4. प्रकृति से आवश्यक तत्त्वों की उपलब्धि व्यवस्थित रूप से होती रहे।

निःसन्देह एक **अच्छे परितन्त्र (Ecosystem)** से एक अच्छे पर्यावरण की आश्वस्तता बनती है और अच्छा पर्यावरण वस्तुतः अच्छा जीवन देता है। अतः हम सभी को एक अच्छे पर्यावरण में रहने की आशा रखनी चाहिए जो हमारे सन्तुलित क्रियाकलापों से ही सम्भव है।

• भोजन शृंखला और भोजन जाल (Food chain and Food web)

ऊर्जा के दो आधारभूत भौतिक नियम हैं—

(1) पृथ्वी पर न तो ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है और न ही उसे नष्ट किया जा सकता है; यह एक रूप से दूसरे में बदल जाती है।

(Energy on Earth is neither created nor destroyed; it is transformed from one type to another.) **—First Law of Thermodynamics.**

(2) कोई ऊर्जा प्रक्रिया तब तक स्वतः संभव नहीं है जब तक उसका समेकित रूप किसी कारण विखण्डित नहीं हो जाय।

(No energy process occurs spontaneously unless it is a degradation or dissipation from a concentrated form to a dispersed form.) —Second Law of Thermodynamics.

इस दूसरे नियम से यह परिणाम निकाला जा सकता है कि ऊर्जा के परिवर्तन में कुछ उसका भाग बिखर जाता है। अतः प्रत्येक प्रक्रिया में ऊर्जा का शत-प्रतिशत उपयोग नहीं हो सकता।

उपर्युक्त दोनों नियमों को यहाँ देने का मुख्य आधार यह है कि कोई भी 'पारिस्थितिक तन्त्र' (Ecosystem) बिना ऊर्जा के बना नहीं रह सकता। अतः यह जानना बहुत आवश्यक है कि किसी पारिस्थितिक तन्त्र में कितनी ऊर्जा प्रवेश पाती है और प्रयोग में आने के बाद कितनी बाहर निकलती है। यह ऊर्जा का हस्तान्तरण और उपयोग ही 'भोजन शृंखला' को जन्म देती है जिसका विस्तृत विवरण अभी हम कर रहे हैं।

भोजन शृंखला (Food Chain)

प्राणी जगत् के लिए ऊर्जा का मूल स्रोत सूर्य है। इससे अपार मात्रा में ऊर्जा पृथ्वी पर आती है जो वस्तुतः प्रकाश तथा ऊष्मा के रूप में होती है। इसका सीधा-सीधा उपयोग जन्तुओं और वनस्पतियों द्वारा नहीं हो पाता (कुछ अपवाद बैक्टीरिया को छोड़कर), अतः यह हरे पौधों द्वारा क्लोरोफिल की सहायता से ग्रहण कर ली जाती हैं और यह पौधे उस ऊर्जा को जल और कार्बोहाइड्रेट्स में परिवर्तित कर देते हैं। **इसी कारण इन पौधों को उत्पादक (Producers) कहा जाता है। उत्पादक स्वयं अपना भोजन तैयार करते हैं।**

> **भोजन शृंखला (Food Chain)**
>
> किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र में जीवधारियों का वह अनुक्रम जिसमें ऊर्जा का हस्तान्तरण होता रहता है, भोजन शृंखला कहलाती है। एक भोजन शृंखला में उत्पादक (Producers or Autotrophs) मुख्यतः हरे पौधे) जो अपना भोजन स्वयं तैयार करते हैं और उपभोक्ता (Consumers or Hetrotrophs : मुख्यतः पशु) जो उत्पादकों पर निर्भर करते हैं, होते हैं। उपभोक्ताओं को कई श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है, (1) प्रथम श्रेणी उपभोक्ता (शाकाहारी Herbivores), (2) द्वितीय श्रेणी उपभोक्ता (शाकाहारी एवं मांसाहारी Omnivores)। भोजन शृंखला में अपघटक (Decomposers) भी होते हैं जो मृत जीव तथा अपशिष्टों का भक्षण करते हैं। सभी घटक एक स्थाई परितंत्र में साथ-साथ काम करते हैं।

यहाँ यह बताना जानकारी के लिए उचित ही है कि सूर्य ऊर्जा की जितनी मात्रा हरे पौधों से टकराती है उसका 98% भाग परावर्तित हो जाता है। शेष 2% में से भी केवल आधे का ही उपयोग यह हरी वनस्पतियाँ कर पाती हैं, अर्थात् केवल 1% ऊर्जा का ही उपयोग होता है।

अब यह हरी वनस्पतियाँ जिनका भोजन बनती हैं, उन्हें **उपभोक्ता (Consumers)** कहा जाता है और निःसन्देह यह शाकाहारी (Herbivorous) होते हैं। इन्हें **'प्रथम श्रेणी का उपभोक्ता'** भी कहा जाता है। अब यह प्रक्रिया किसी **पोषी संरचना** (Trophic Structure) का एक स्तर (भाग) बन गई है।

आगे की प्रक्रिया में यह प्रथम श्रेणी के उपभोक्ता किन्हीं अन्य उपभोक्ताओं का आहार बनते हैं। उन उपभोक्ताओं को **द्वितीय श्रेणी के उपभोक्ता** कहा जाता है। निश्चय ही यह उपभोक्ता माँसाहारी (Carnivorous) होते हैं और उसी 'पोषी संरचना' का अगला स्तर बन जाते हैं। यह पोषी संरचना किसी चरम बिन्दु पर रुक जाती है। **'पोषी संरचना'** के लिये नीचे चित्र देखें—

↑ मोर	↑ उपभोक्ता–IV	माँसाहारी
↑ सर्प	↑ उपभोक्ता–III	माँसाहारी
↑ मेढक	↑ उपभोक्ता–II	माँसाहारी
↑ कीट	↑ उपभोक्ता–I	माँसाहारी
↑ घास	↑ उत्पादक	शाकाहारी
भोजन शृंखला	पोषी संरचना (स्तर वार)	जीव का प्रकार

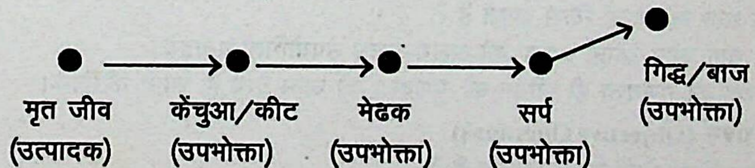
चित्र 4·1—पोषी संरचना

इस सारी प्रक्रिया में ऊर्जा का निरन्तर ह्रास होता रहता है। जब तक यह प्रक्रिया चलती रहे, यह चल सकती है। इसे ही भोजन शृंखला (Food Chain) का नाम दिया है।

The sequence of organisms through which energy is transformed in an ecosystem is called a 'Food Chain'.

[किसी भी पारिस्थितिकी तन्त्र में जीवधारियों का वह अनुक्रम जिसमें ऊर्जा का हस्तान्तरण होता रहता है, **'भोजन शृंखला'** कहलाती है।]

हम इसको एक चित्र से उदाहरण देकर और स्पष्ट करना चाहेंगे—



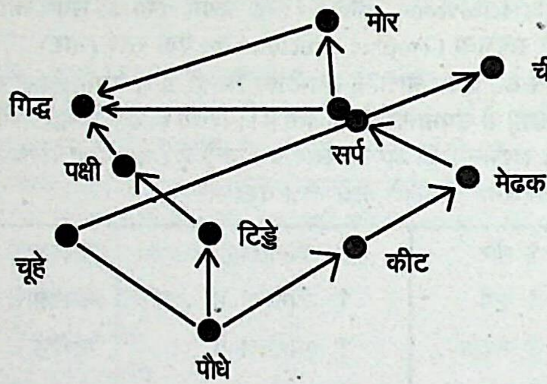
चित्र 4·2—भोजन शृंखला

हम यहाँ देख रहे हैं कि इस प्रक्रिया में केवल एक ही रेखिक क्रम (line sequence) है। किसी भी भोजन शृंखला में कुल क्रम पदों की संख्या 5 से 6 तक हो सकती है, लेकिन ऐसी स्थिति में निरन्तर ऊर्जा के कम होने से प्रक्रिया धीमी होती रहती है।

कभी भोजन शृंखला की यह प्रक्रिया बिल्कुल विपरीत भी होती है। जब कोई जानवर मृत हो जाता है, तो यह मृत जीव **'उत्पादक'** के रूप में हो जाता है। इसके सड़ने गलने से इनमें विभिन्न प्रकार के कीड़े पड़ जाते हैं या अन्य पशु-पक्षी इसे खाने लगते हैं—वह इस स्थिति में 'उपभोक्ता' बन जाते हैं और यह क्रम पुनः चल जाता है जब तक कि ऊर्जा क्रम समाप्त नहीं होता।

भोजन जाल (Food Web)

कभी ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है जबकि एक उत्पादक के बाद उपभोक्ताओं का क्रम कई-कई श्रेणियों में बदल जाता है और भोजन शृंखला के कई समूह एक ही प्रक्रिया में जुड़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में हम इसे भोजन जाल (Food Web) के नाम से पुकारते हैं। नीचे दिये चित्र से यह स्पष्ट हो जायेगा—



चित्र 4·3—भोजन जाल

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि विभिन्न श्रेणियों के जैविक घटकों को आपस में सूत्र में बाँधने वाली शक्ति ऊर्जा ही है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'पारिस्थितिकी' क्या है ? इसके आधार पर 'पारिस्थितिकी तंत्र' को स्पष्ट कीजिये।
2. अपूर्ण परितंत्र किसे कहते हैं ? उदाहरण देकर समझाइये।
3. 'पारिस्थितिकी तंत्र' के कितने घटक होते हैं ? उनका संक्षिप्त विवरण दीजिये।
4. 'भोजन शृंखला' किसे कहते हैं ? इसकी गति के लिये कौन-सी ऊर्जा कार्य में आती है ?
5. एक अच्छे 'परितंत्र' के लिये क्या-क्या आवश्यक है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'आबादी' और 'समुदाय' में अन्तर बताइये।
7. 'उत्पादक जीवधारी' के उदाहरण दीजिये।
8. 'परितन्त्रिक स्थायित्व' किसे कहते हैं ?
9. 'ऊर्जा चक्र' और 'ऊर्जा प्रवाह' की अलग-अलग उपयोगिता बताइये।
10. पर्यावरण की गुणवत्ता ही जीवन की गुणवत्ता को जन्म देती है, स्पष्ट कीजिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. खरगोश किस श्रेणी का उपभोक्ता है ?
    (अ) शाकाहारी (ब) मांसाहारी
    (स) उभयचारी (द) विघटक
12. सौर ऊर्जा का कितना भाग ही पृथ्वी पर आ पाता है ?
    (अ) 2% (ब) 1%
    (स) 98% (द) ·01%
13. 'विघटक' जीवधारी की मुख्य भूमिका होती है—
    (अ) नया उत्पादन करना (ब) नष्ट हुई सामग्री सामान्य पदार्थों में ले आना
    (स) उपभोक्ताओं की सहायता करना (द) विकृत पारिस्थितिकी तंत्र

14. निम्न में से कौन 'विघटक' नहीं है ?
   (अ) बैक्टीरिया (ब) फंफूद
   (स) मकड़ी (द) चूहा
15. जब एक ही भोजन की कई-कई भोजन शृंखला बन जाती हैं, तो उसे कहने लगते हैं—
   (अ) भोजन तंत्र (ब) भोजन जाल
   (स) भोजन प्रक्रिया (द) भोजन संश्लेषण

16-20. नीचे की सारणी में मिलान कीजिये—

अ	ब
• पारिस्थितिकी तंत्र	• वायु
• तृतीय उपभोक्ता	• सूर्य
• भोजन शृंखला	• हरे पौधे
• अजैविक पदार्थ	• मांसाहारी जीव
• फोटोसंश्लेषण	• वन

5

प्राकृतिक संसाधन
[NATURAL RESOURCES]

● **प्रस्तावना**
(Introduction)

मानव जीवन जिन आधारभूत साधनों पर आधारित है और जिनसे उसकी भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है वे सभी संसाधन कहलाते हैं, क्योंकि यह सभी प्रकृति से विरासत में मिले हैं और पर्यावरण के मुख्य घटक हैं, अतः इन्हें **प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)** कहते हैं। मुख्य प्राकृतिक साधनों में सौर ऊर्जा, वायु, जल, भूमि, वनस्पति, प्रकाश, पृथ्वी का ताप, जीवाश्म ईंधन, खनिज, जन्तु व सूक्ष्म जीव (Microbes) आदि सम्मिलित हैं। निःसन्देह ये सभी आवश्यक होते हैं और इनकी अधिक या कम उपलब्धता, इनकी निरापदता और प्रदूषणता और इनकी सापेक्ष उपयोगिताएँ मानव के सुख-दुःख, विलासिता और अभावों की स्थितियों से जुड़ी हैं। इसी से कुछ देश अधिक सम्पन्न और कुछ अभावग्रस्त श्रेणी में विभाजित कर दिये जाते हैं। यही संसाधनविहीनता कई देशों में प्रगतिबाधक होती है तथा अन्य देशों के सामने उसे हाथ पसारने को मजबूर कर देती है।

इसी आधार पर प्राकृतिक संसाधनों के लिये निम्न परिभाषा दी गई है—

"Any part of our natural environment such as land, water, air, minerals, forests, range lands, wild life, fish or even human population that man can utilize to promote his welfare may be regarded as a natural source."

(हमारे प्राकृतिक पर्यावरण का कोई भी अंग, जैसे भूमि, जल, वायु, खनिज, वन, चरागाह, वन्य जीव, मक्खी और यहाँ तक कि मनुष्य आबादी जिससे मनुष्य का कल्याण होता हो, प्राकृतिक संसाधन कहलाता है।)

—Environment and Natural Resources Conservation[1] P. R. Trivedi and K. N. Sudershan, p. 3.

राजीव सिन्हा[2] ने अपनी पुस्तक Human Ecology में प्राकृतिक संसाधनों के लिये लिखा है—

Natural Resources are those heavenly assets or divine gifts that have some utility. They are derived from the earth and the biosphere or atmosphere and exists independently of human activity.

(प्राकृतिक संसाधन वह ईश्वर प्रदत्त वस्तुएँ हैं जिनसे कोई न कोई लाभ होता है। ये पृथ्वी, जीवमण्डल, वायुमण्डल से प्राप्त होती हैं और मानव क्रिया से स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में रहती हैं।)

सभी वैज्ञानिक उपलब्धियों का आधार भी मुख्यतः प्राकृतिक संसाधन ही होते हैं। ऐसे विश्व में उदाहरण हैं कि केवल वन सम्पदा अथवा पानी (नदी) के बाहुल्य ने देशों को प्रगति की चोटी पर पहुँचाया है। जापान के अपने भू-भाग के 70 प्रतिशत वन तथा कनाडा के अपने भू-भाग के 47·3 प्रतिशत जंगल इन देशों की कहानी कहते हैं। दक्षिणी अमेरिका की अमेजन नदी (6,750 किमी लम्बी) और अफ्रीका की नील नदी (6,670 किमी लम्बी) ने इन देशों को और उसके किनारे-किनारे बसने वाले लोगों को कितना समृद्धशाली बनाया

---

1. **P.R. Trivedi and K. N. Sudarshan, Environment and Natural Resource Conservation (New Delhi : India, Commonwealth Publishers, 1994) p. 3**
2. **Rajeev K. Sinha, Human Ecology (Jaipur : India, INA Shree Publishers, 1988), p. 257.**

है, वह पूरे संसार से छिपा नहीं है। इन उदाहरणों ने लोगों को प्राकृतिक संसाधनों की संरक्षा और सुरक्षा (conservation & preservation) तथा उनके उचित उपयोग की बात को ठीक ठहराया है। जो देश इन संसाधनों की अवहेलना करते रहे और उनके दुरुपयोग के भागी रहे, वह आज पछता रहे हैं। इथोपिया, मध्य पूर्व के अनेक देश, फिलीपाइन्स आदि देश इस श्रेणी में हैं। यह बताने की आवश्यकता नहीं कि केवल एक प्रचुर मात्रा में साधन 'तेल' के आधार पर ईरान, इराक पूरे विश्व में अपना दबदबा बनाये हुए हैं। निश्चित ही प्राकृतिक संसाधन मनुष्य के भविष्य की जन्म-पत्री निर्णायक हैं, जिनकी संरक्षा, सुरक्षा, उपयोग और प्रबन्ध उचित रूप से किया जाना आवश्यक है।

• प्राकृतिक संसाधनों का वर्गीकरण (Classification of Natural Resources)

प्राकृतिक संसाधनों का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर अलग-अलग किया गया है, जिससे उनके बारे में और अधिक विस्तृत रूप से जाना जा सके, लेकिन इनमें से दो प्रमुख वर्गीकरणों को हम यहाँ दे रहे हैं—

प्रथम वर्गीकरण (First Classification)

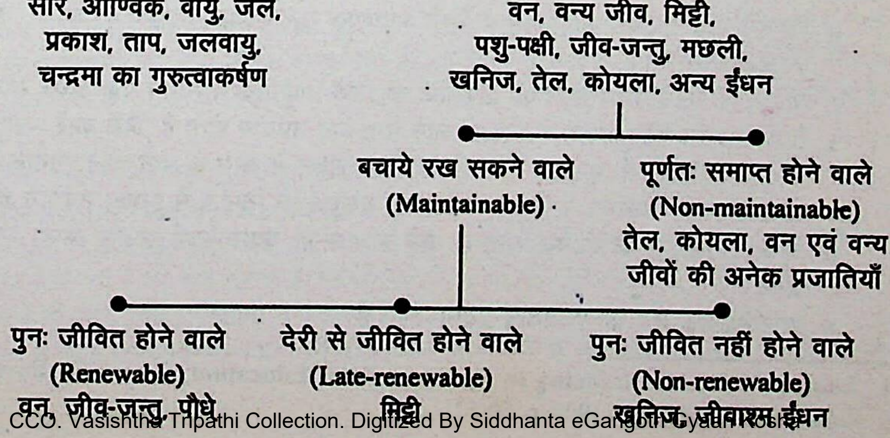
1. **जैविक (Biotic) :** इनमें वे सभी संसाधन सम्मिलित हैं, जिनमें जीवन होता है, जैसे पेड़-पौधे, वनस्पति, पशु-पक्षी, जीवाश्म (microbes), मछली तथा अन्य जलीय जीव।

2. **अजैविक (Abiotic) :** इन संसाधनों में मिट्टी, जल, वायु, ऊर्जा, प्रकाश और खनिज आते हैं। तेल, कोयला, नेचुरल गैस, पत्थर, जलवायु को भी अजैविक संसाधनों में शामिल किया जाता है।

द्वितीय वर्गीकरण (Second Classification)

इस प्रकार के वर्गीकरण में संसाधनों को उनकी (1) उपलब्धता (Availability), (2) समाप्त होने वाले (Exhaustible) (3) पुनः जीवित होने वाले (Renewable), (4) पुनः जीवित नहीं होने वाले (Non-renewable) तथा (5) देर से पुनः जीवित हो सकने वाले (Late-renewable) संसाधनों में विभाजन करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार के विभाजन में कोई संसाधन दो वर्गों में भी आ जाता है तथा पाठक अपनी बुद्धि से किसी संसाधनों को नये वर्ग में रख सकते हैं, यह उनका विवेक है।

प्राकृतिक संसाधनों को सुलभ और समझने के लिये वर्गीकरण को निम्न वर्गीकरण आरेख (Schematic Representation) में दिया जा रहा है—



यह सभी संसाधन पूरे पृथ्वी पर असमान रूप से उपलब्ध हैं। इसके साथ ही इनका अत्यधिक उपयोग अथवा दुरुपयोग भी होता है, जिससे केवल कुछ विकसित देश ही इनसे भरपूर लाभ उठाते हैं।

● प्राकृतिक संसाधनों का महत्त्व व आवश्यकता (Importance and Need of Natural Resources)

प्राकृतिक संसाधन प्रकृति से मिली वह सम्पदा है जिसे मनुष्य और जीव-जन्तुओं के कल्याण और सुखमय जीवन के लिये ही अलौकिक शक्ति (ईश्वर) ने बनाया है और हमें उपलब्ध कराया है। अब यह हम पर निर्भर करता है कि हम इसका किस प्रकार उपयोग करें, क्योंकि यह जीवन को चलाने के लिये आवश्यक तंत्र के क्रियाशील अवयव हैं।

(अ) महत्त्व (Importance)

प्राकृतिक संसाधनों के सन्दर्भ में[1]—निम्न बातें ध्यान देने योग्य हैं—

1. पृथ्वी पर के संसाधनों का न तो हर जगह वितरण समान है और न ही उपयोग।
2. संसाधनों की मात्रा की उपलब्धता, उसे प्राप्त करने की क्षमता, तरीका और तकनीकी योग्यता पर निर्भर है।
3. संसाधनों का मूल्य उसकी उपलब्धता और माँग पर निर्भर करता है।
4. संसाधनों की कमी से उसका मूल्य बढ़ जाता है या जब किसी संसाधन की बहुत माँग हो तो भी मूल्य में वृद्धि होती है।
5. संसाधनों की कमी के कारण उसकी उपलब्धता हेतु देश में अन्दर या देश-विदेशों में परस्पर अनेक विवाद हो जाते हैं।
6. संसाधनों के असमान उपयोग से भी विवादास्पद स्थिति होती है, जैसे अमेरिका कम आबादी पर भी भारत की अधिक आबादी के बावजूद अधिक संसाधनों का उपयोग करता है।
7. बढ़ती जनसंख्या के कारण संसाधनों के भण्डार में कमी आई है।
8. संसाधनों के अंधाधुन्ध उपयोग अथवा दुरुपयोग ने भी इनकी मात्रा को प्रभावित किया है। स्थिति यहाँ तक है कि कुछ संसाधन समाप्त प्रायः हो रहे हैं। उनके समाप्त होने से पूर्व निश्चय ही हमें उनके विकल्प खोजने होंगे।
9. अनेक विकासशील व अविकसित देश अपने संसाधनों को कम मूल्य पर विकसित देशों को बेच देते हैं। देश की अन्य प्राथमिकताओं की पूर्ति के लिए उन्हें ऐसा करना उनकी मजबूरी है।
10. संसाधनों के प्राप्त करने में पर्यावरण विकृति की सम्भावनाएँ भी रहती हैं।

(ब) आवश्यकता (Need)

जहाँ तक इनकी सीधे-सीधे उपयोग और आवश्यकता की बात है तो उन्हें हमें निम्न बिन्दुओं में समेकित करना चाहेंगे—

1. यह हमें भोजन, ईंधन और जीने के लिये आवश्यक वस्तुएें जैसे जल, वायु, प्रकाश, ताप आदि उपलब्ध कराते हैं।
2. व्यापार के लिये कच्चे माल की उपलब्धि के लिये प्राकृतिक संसाधन एक अच्छे स्रोत हैं।
3. तैयार सामान की गुणवत्ता में निखार लाने में इनका उपयोग होता है, जैसे कारें, प्लास्टिक की वस्तुऐं, रेफ्रीजरेटर्स, मनोरंजन के और दैनिक जीवन में काम में आने वाले सामान।
4. आवास स्थल, फर्नीचर, सजावट, कलात्मक वस्तुओं के निर्माण में इनका उपयोग होता है।
5. शक्ति (Energy) के व्यापक स्रोत हैं, जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जलीय ऊर्जा, लहर ऊर्जा आदि।
6. पारिस्थितिक तंत्र को स्थायित्व प्रदान करते हैं।

---

1. Source : Essential learning in Environmental Education; Centre for Environment Education, Ahmedabad, 1990, p. 60-62.

• प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण
(Conservation of Natural Resources)

प्राकृतिक संसाधन मानव जगत् के लिये मूल आधार हैं। अतः इनका संरक्षण कितना समीचीन और आवश्यक है यह बताने की बात नहीं है, लेकिन वर्तमान में उनका जिस तरह उपयोग हो रहा है, उससे भविष्य की पीढ़ियों को शेष क्या रह पायेगा? यह आज विचारने का प्रश्न है। इसके साथ ही उपलब्धता के साथ-साथ ये संसाधन कितने निरापद होंगे यह भी कम विचारणीय प्रश्न नहीं है क्योंकि केवल स्वार्थ तथा क्षणिक लाभ हेतु कुछ लोगों या देशों द्वारा ये निरन्तर प्रदूषित किये जा रहे हैं। संक्षिप्त में मोटेतौर पर प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के सन्दर्भ में निम्न उद्देश्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं—

1. संसाधनों का आवश्यकतानुसार ही सीमित उपयोग किया जाये जिससे वे अधिक दिनों तक रह सकें।
2. उन्हें प्रदूषित होने से बचाया जाये जिससे वह मनुष्यों के खराब स्वारथ्य का कारण न बनें।
3. मूलभूत आधार प्राकृतिक संसाधनों को आय का स्रोत न बनाया जावे।

यह बात बहुत महत्त्वपूर्ण है कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण केवल उसके उपयोग हेतु उपलब्धता के लिए ही नहीं है, बल्कि विश्व में पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार लाने और उसे अनमोल खजाने के शाश्वत सत्य के साथ संरक्षित रखने के लिए भी है। **स्पष्ट है कि पर्यावरण की गुणवत्ता (Quality of Environment) मनुष्य के जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) का आधार है।**

इन संसाधनों के लिये कुछ विशेष अध्याय (1) जैविक विविधता, (2) वन, (3) वन्य जीव, (4) वायु, (5) जल और (6) मृदा इसी पुस्तक में रखे गये हैं। विस्तृत विवरण के लिये उनका अवलोकन करें। साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के प्रदूषण के सन्दर्भ में भी काफी पठनीय सामग्री इसी पुस्तक में उपलब्ध है।

• प्राकृतिक संसाधनों के नष्ट होने के कारण
(Threats to Natural Resources)

वैसे तो कोई भी सामग्री हो उसका जब भी हम अनुचित रूप से प्रयोग करेंगे तो उसकी सामान्यतया ही गुणवत्ता में कमी आयेगी, पर फिर भी कुछ क्रियाकलाप ऐसे हैं जिनसे प्राकृतिक संसाधनों के निरन्तर कम होने अथवा नष्ट होने का खतरा सदैव बना रहता है। वह हैं—

1. जल का अत्यधिक प्रयोग अथवा दुरुपयोग,
2. लकड़ी का फर्नीचर, सजावट तथा ईंधन के रूप में प्रयोग,
3. कृषि फसलों से बिना किसी योजना के उत्पादन,
4. बहते पानी से खेतों की उपजाऊ मिट्टी का बह जाना,
5. अधिक उपज के लिये रासायनिक खादों का उपयोग,
6. अनेक पशु-पक्षियों और जीवों का शिकारियों द्वारा शिकार,
7. भूमिगत जल के भण्डारों को अनावश्यक रूप से खाली करना,
8. बढ़ती आबादी से अधिक संसाधनों का व्यय आदि।

हम जब तक प्राकृतिक संसाधनों का उचित, उपयुक्त तथा बुद्धिमतापूर्ण ढंग से उपयोग नहीं करेंगे तब तक संसाधनों की कमी की आशंका बनी ही रहेगी। कम-से-कम उन संसाधनों पर तो विशेष ध्यान देना आवश्यक है जो आज निर्बाध गति से उपयोग में लिये जा रहे हैं और जिनका समाप्त होना सर्वथा सत्य है।

• प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कैसे करें ?
(How to use the Natural Resources?)

इतनी चर्चा के बाद मूल प्रश्न यही रह जाता है कि आखिर इतने बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनों का सही उपयोग कैसे करें ? वह क्या तरीके हैं जिनसे मानव स्वार्थों की पूर्ति भी हो सके और संसाधनों को उचित संरक्षण भी मिल सके। गाँधीजी ने कहा था—

"प्रकृति में सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता है लेकिन किसी एक के भी लालच की नहीं।"

अतः यह स्पष्ट है कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और उनके उपयोग में कहीं विवाद नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि हम उतनां ही प्रकृति से लें, जितना आवश्यक है। उनका दोहन करें शोषण नहीं। प्रकृति में यह शक्ति है कि वह अपनी कमी स्वयं पूर्ति कर ले। सच तो यह है कि प्रकृति के संसाधनों का संरक्षण भी तो इसीलिए है कि उसे काम में लिया जा सके।

प्राकृतिक संसाधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण एवं आवश्यकतानुसार उपयोग ही हमारी कार्य शैली होनी चाहिए। प्राकृतिक संसाधनों के उचित उपयोग के कुछ मूल सिद्धान्त निम्न प्रकार प्रस्तुत हैं—

1. प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग पर्यावरणीय स्थितियों को ध्यान में रख कर किया जावे अर्थात् यह ध्यान रखा जावे कि इस उंपयोग से पर्यावरण विकृत अथवा दूषित न हो।
2. प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से दूसरों को हानि न पहुँचे।
3. पुनर्जीवित (renewal) होने वाले संसाधनों का इस प्रकार उपयोग हो जिससे उनके पुनः उत्पन्न होने की सम्भावना बनी रहे।
4. पुनर्जीवित नहीं होने वाले (non-renewal) प्राकृतिक संसाधनों का कम से कम अथवा बुद्धिमत्तापूर्ण और आवश्यकतानुसार ही उपयोग किया जाये जिससे वह आगे काफी समय तक रह सकें।

प्राकृतिक संसाधन के संरक्षण के सन्दर्भ में यह बात पूरी तरह समझनी है कि मूल तत्त्वों को नष्ट कर पृथ्वी पर रहना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है और हमें केवल अपने ही लिए नहीं बल्कि आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए भी सोचना है। प्रकृति से विरासत में मिले बहुमूल्य संसाधनों को पूरी तरह समाप्त करने का हमें अकेले ही हक नहीं है। यंह हमारे बच्चों की धरोहर है जिसे हमें संरक्षण के लिए इसलिए सौंपा है, ताकि हम उन्हें इसे ठीक-ठाक सौंप सकें।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. प्राकृतिक संसाधन क्या हैं ? इनकी उत्पत्ति स्रोत का विवरण दीजिये।
2. प्राकृतिक संसाधन की आवश्यकता एवं महत्त्व पर अपने विचार लिखिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. पुनः जीवित होने वाले तथा पुनः जीवित नहीं होने वाले प्राकृतिक संसाधनों में अन्तर बताते हुये उनके उदाहरण दीजिये।
4. प्राकृतिक संसाधनों के कम होने अथवा नष्ट होने के क्या सम्भावित कारण हैं ?
5. कभी समाप्त न होने वाले प्राकृतिक संसाधन कौन-कौन से हैं ? कोई तीन लिखिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

6-10. निम्न प्रश्नों का मिलान कीजिये—

प्रथम कॉलम	द्वितीय कॉलम
(अ) कभी समाप्त न होने वाले प्राकृतिक संसाधन	(क) कोयला
(ब) पुनः जीवित हो सकने वाले प्राकृतिक संसाधन	(ख) लकड़ी
(स) पुनः जीवित न हो सकने गले प्राकृतिक संसाधन	(ग) जल
(द) बहुत देरी से पुनः जीवित होने वाले प्राकृतिक संसाधन	(घ) ताप
(इ) अदृश्य प्राकृतिक संसाधन	(ङ) मिट्टी

6

जैविक विविधता
[BIODIVERSITY]

● प्रस्तावना
(Introduction)

एक समय था जब कि पृथ्वी पर की कृषि व्यवस्था तथा उस पर उत्पादित होने वाले खाद्य पदार्थों की मात्रा अथाह थी। लेकिन आज उस स्थिति में परिवर्तन आ गया है और अब वह केवल पर्याप्त (enough) की श्रेणी में आ गयी है। संतोष यही है कि यह सामग्री पुनः प्राप्त की जा सकती है। अतः यदि बहुत बुद्धिमता से उत्पादन का प्रबन्धन हो तो पूरे विश्व में रहने वाले प्राणी वर्ग को उसके खाने-पीने और अन्य पदार्थों की पूर्ति की जा सकेगी। पर इसके लिये प्राकृतिक विविधता (Nature's Diversity) का उपयोग करना होगा, जिसे आज हम जैविक विविधता (Biodiversity) के नाम से नामित करते हैं।

प्रारम्भ में विश्व में खाद्यान्न की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से 'हरित क्रान्ति' (Green Revolution) की कल्पना की थी, जिसे 1968 में संयुक्त राज्य के कृषि विभाग (United States Department of Agriculture) के निदेशक विलियम गैड (William Gaad) ने नाम दिया था। उन्होंने पाया कि अन्न की विशेष जाति से ही भारत और पाकिस्तान में गेहूँ तथा फिलीपाइन्स में चावल का अधिक उत्पादन हुआ है। बाद में भारत में पाँच मुख्य खाद्यान्न गेहूँ (Wheat), चावल (Rice), मक्का (Maize), बाजरा (Pearlmillet) और ज्वार (Sorghum) पर शोध कर अधिक उत्पादन वाली किस्म तैयार की। वस्तुतः यही कृषि क्षेत्र में विविधता (Diversity in Agriculture Field) कहलाई।

पर शनैः-शनैः यह जाना जाने लगा कि यह विविधता सभी सजीव पदार्थों व वस्तुओं (Biotic Substances) में है, और प्रगति के लिये इसका उपयोग सम्भव है, तभी से जैविक विविधता (Biological Diversity or Biodiversity) की उपयोगिता को प्रयोग में लाया जाने लगा।

आज जैविक विविधता (Biodiversity) को निम्नांकित तीन स्तरों पर देखा जाता है—

1. **प्रथम पारिस्थितिक तंत्र के स्तर पर :** जैसे (अ) पहाड़ी पारिस्थितिकी तंत्र, (ब) मैदानी पारिस्थितिकी तंत्र, (स) रेगिस्तानी पारिस्थितिकी तंत्र, (द) तटीय पारिस्थितिकी तंत्र आदि।
2. **द्वितीय-प्रजातियों के स्तर पर :** विशेषज्ञों ने विश्व में विभिन्न स्तर पर प्रजातियों का अंकन 15 लाख से 800 लाख तक किया है। सभी ने इन प्रजातियों की संख्या निर्धारण में अपने-अपने तर्क दिये हैं, पर यह निश्चय ही अनुमान लगाया जा सकता है कि यह संख्या काफी अधिक है।
3. **तृतीय-प्रजातियों के अन्तर्निहित स्तर पर :** हर प्रजाति के अन्दर ही असंख्य प्रकार की विविधता और विभिन्नता सम्भव है। उदाहरण के लिये फिलीपाइन्स के Rice Research Institute में 90,000 चावल के दानों का संरक्षण किया गया है, जो अलग-अलग प्रकार का उत्पादन देते हैं।

इस तरह अब 'जैविक विविधता' में सभी (1) प्राणी मात्र, (2) वनस्पति व पौधे, (3) बैक्टीरिया व सूक्ष्म जीव, (4) समस्त प्रजातियाँ तथा (5) सभी पारिस्थितिक तंत्र सम्मिलित हैं। इन सबके अन्तर्मिलन था अन्तर्क्रिया से पृथ्वी की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

जैव विविधता (Biodiversity)[1] की एक परिभाषा निम्न प्रकार दी गई है—

"Biodiversity is a term referring to the variations found among populations (gene pools), species, communities and ecosystems."

(जैविक विविधता से आशय उस परिवर्तन से है जो आबादी, प्रजातियाँ, समुदाय और पारिस्थितिक तंत्र में मिलता है।)

आबादी (Population) : एक स्थान पर एक ही प्रजाति के लोगों का समूह।

प्रजाति (Species) : भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणी वर्ग अथवा वनस्पतियाँ।

समुदाय (Community) : एक स्थान पर कई प्रकार की आबादियों का समूह।

पारिस्थितिक तंत्र (Eco-system) : पूरे समुदाय तथा निर्जीव वस्तुओं के साथ एक कार्यरत तंत्र।

• जैविक विविधता और उसका कार्यक्षेत्र (Biodiversity and Its Scope)

जैविक विविधता के विषय में एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तावना में प्रस्तुत किया गया है और साथ ही इसकी एक अधिकृत परिभाषा भी दी गई है। इससे यह तो स्पष्ट है कि,

"Biodiversity is a collective term that encompasses the variety of all living organisms—plants, animals and micro-organisms on earth. It includes diversity within species, between species and of ecosystems."—Connect : Vol. XXI, No.1, March 1996

(जैविक विविधता एक समूहवाची शब्द है जिसमें पृथ्वी के सभी प्रकार के सजीव प्राणी, पौधे-प्राणी (पशु)-सूक्ष्म जीव जन्तु, समाहित हैं। वस्तुतः इसमें प्रजातियों के अन्दर, प्रजातियों के बीच तथा परितंत्र की विविधताऐं सम्मिलित हैं।)

अतः जब भी हम जैविक विविधता की बात करते हैं तब हम पूरे पृथ्वी के परितंत्रों (स्थलीय, जलीय और वायुमण्डलीय) के अन्दर के समस्त सजीव और निर्जीव वस्तुओं के पारस्परिक व्यवहार की बात करते हैं। इस विविधता ने ही जीने के लिये यथेष्ट भोजन-पानी-वायु-कपड़ा-मकान की प्रचुरता उपलब्ध कराई है तथा अनेक प्रकार की सांस्कृतिक विविधता को भी जन्म दिया है। कुछ विशेषज्ञ तो यहाँ तक कहते हैं कि यदि जैविक विविधता को आज के वर्तमान रूप में नहीं देखा जाता तो शनैः-शनैः परम्पराऐं, रीति-रिवाज और अनेक प्रकार की पारम्परिक गतिविधियाँ ही समाप्त हो जातीं, और इस पृथ्वी के समस्त प्राणी वर्ग अत्यन्त कठिन स्थिति को भुगतते हुये न अपने लिये कुछ जुटा पाते और न आने वाली पीढ़ियों के लिये कुछ छोड़ते।

जैविक विविधता के विशिष्ट योगदान को यहाँ बिन्दुवार समेकित किया गया है (यद्यपि इनका विस्तृत विवरण आगे इसी अध्याय में और दिया गया है)—

1. भोजन, पानी, औषधियों तथा उद्योगों के लिये कच्चा सामान,
2. पानी की स्वच्छता,
3. मिट्टी की पुनः संरचना तथा उसके उपजाऊपन का नियंत्रण और रखाव,
4. जलीय क्षेत्रों की सुरक्षा,
5. अधिक ताप का नियंत्रण,
6. वायुमण्डल का रख-रखाव आदि।

इनसे हम यह निष्कर्ष तो निकाल ही सकते हैं कि जैविक विविधता हमारे जीवन के हर क्षेत्र में नितान्त उपयोगी है।

जैविक विविधता की विश्वस्तर पर महत्ता को स्वीकारते हुये संयुक्त राष्ट्र ने एक विशेष सत्र का 1992 में आयोजन रीओ-डी-जैनीरो में किया था। उसमें सभी आवश्यक विषय-वस्तु का विश्लेषण कर एक प्रतिवेदन के रूप में प्रसारित किया गया। यह प्रतिवेदन विशेषतः (1) जैविक विविधता क्यों ? (2) जैविक विविधता की योजना और क्रियान्विति, (3) जैविक विविधता की उपयोगिता, (4) जैविक विविधता के क्रियान्वयन में सहयोग और भागीदारी तथा (5) विशिष्ट शब्दावली के स्पष्टीकरण को

1. **Biodiversity : A Genetic Treasure : An article by C.R. Babu, Anupam Joshi and Nagesh Sardesai in Indian Farming vol. 43. No. 7, October 1993, p. 25.**

सार्वभौमिक उपयोग हेतु प्रस्तुत किया गया है। यह भी अपेक्षा की गई है कि सभी देश अपने-अपने स्तर पर जैविक विविधता की योजना तैयार कर उसका सफल क्रियान्वयन करें।

• संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित सम्मेलन में जैविक विविधता का विश्लेषण : 5 जून, 1992, रीओ डी जैनीरो, ब्राजील

(Analysis of Biodiversity in United Nations Convention : 5th June, 1992 : Rio de Janeiro-Brazil)

इस अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के सम्मेलन में जैविक विविधता का अन्तिम ड्राफ्ट तैयार किया गया जिसे वहाँ उपस्थित 100 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने अनुमोदित किया। इसमें मूल दस्तावेज में 42 अनुच्छेद थे तथा 2 परिशिष्ट I व II अन्त में जोड़े गये थे। उसके कुछ आवश्यक अंश यहाँ दिये जा रहे हैं[1]—

प्रस्तावना (Preamble)

(a) 'Conscious of the intrinsic value of biological diversity and of the ecological, genetic, social, economic, scientific, educational cultural, recreational and aesthetic values of biological diversity and its components.'

(जैविक विविधता के मूलभूत मूल्यों तथा जैविक विविधता के पारिस्थितिक, आनुवंशिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक, मनोरंजनात्मक, सौन्दर्यपरक तत्वों और उसके कारकों से अवगत होना।)

(b) 'Conscious also of the importance of biological diversity for evolution and for maintaining life sustaining systems of the biosphere.'

(विकास और जीवमण्डल के जीवन चक्र को बनाये रखने के लिये भी जैविक विविधता के महत्त्व को जानना।)

(c) 'Affirming that the conservation of biological diversity is a common concern of human kind.'

(स्वीकार करना कि जैविक विविधता का संरक्षण मानव कल्याण से सीधा सम्बन्धित है।)

(d) 'Reaffirming that states have sovereign rights over their own biological resources.'

(पुनः स्वीकार करना कि देशों को अपने जैविक संसाधनों पर पूरा अधिकार है।)

(e) 'Reaffirming also that states are responsible for conserving their biological diversity and for using their biological resources in a sustainable manner.'

(पुनः स्वीकार करना कि देश अपनी जैविक विविधता का संरक्षण करने तथा अपने जैविक संसाधनों को बनाये रखने के प्रकार से उपयोग लाने के लिये उत्तरदायी हैं।)

(f) 'Concerned that biological diversity is being significantly reduced by certain human activities.'

(चिन्तित होना कि जैविक विविधता मनुष्यों के किन्हीं कार्यकलापों से महत्त्वपूर्ण ढंग से कम होती है।)

(g) 'Aware of the general lack of information and knowledge regarding biological diversity and for the urgent need to develop scientific, technical and institutional capacties to provide the basic understanding upon which to plan and implement appropriate measures'.

(जानना कि जैविक विविधता के सन्दर्भ में ज्ञान और सूचना तथा वैज्ञानिकी, तकनीकी और संस्थागत क्षमताओं, जिस पर योजनाएँ और क्रियान्विति आधारित हैं, के विकास की महती आवश्यकता की मूलभूत समझ का सामान्य अभाव है।)

(h) 'Noting that it is vital to anticipate, prevent and attack the causes of significant reduction or loss of biological diversity at source.'

---

1. **स्रोत : International Environment Management, Dr. P. Rathnaswamy, Manas Publications, New Delhi (India), 1998, pp. 213.**

(ध्यान में लाना कि स्रोत पर की जैविक विविधता के महत्त्वपूर्ण रूप से कम होने अथवा लुप्त होने के कारणों पर पूर्वानुमान, रोकने तथा कारगर उपायों का किया जाना आवश्यक हैं।)

(i) 'Noting also that where there is a threat of significant reduction or loss of biological diversity, lack of full scientific certainty should not be used as a reason for postponing measures to avoid or minimize such a threat.'

(यह भी ध्यान में लाना कि जब कभी जैविक विविधता के महत्त्वपूर्ण ढंग से कम होने अथवा लुप्त होने का भय हो तब उस भय को कम करने अथवा उससे बचने के लिये किये जाने वाले उपायों को किसी वैज्ञानिक सत्यता के अभाव को कारण नहीं समझना चाहिये।)

(j) 'Noting further that the fundamental requirment for the conservation of biological diversity is the in situ conservation of ecosystems and natural habitats and the maintenance and recovery of viable populations of species in their natural surroundings.'

(यह भी ध्यान में रखना कि जैविक विविधता के संरक्षण के लिये सामान्य आवास स्थल के परितंत्र का संरक्षण तथा वहाँ की प्रजातियों की आबादी का रख-रखाव एक मौलिक आवश्यकता है।)

(k)'Noting further that ex-situ measures preferably in the country of origin, also have an important role to play.'

(यह भी ध्यान में रखना कि सामान्य आवास स्थल के बाहरी तंत्र, विशेषतः जहाँ से प्रजाति सम्बन्धित है, की भी बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है।)

(l) 'Recognizing the close and traditional dependence of many indigenous and local communities embodying traditional lifestyles on biological resources, and the desirability or sharing equitably benefits arising from the use of traditional knowledge, innovations and practices relevant to the conservation of biological diversity and the sustainable use of its components.'

(जानना कि जैविक विविधता और उसके घटकों के बनाये रखने के उपयोग के संरक्षण का देशी तथा स्थानीय समुदायों की जैविक संसाधनों के प्रति पारम्परिक निर्भरता और पारम्परिक ज्ञान, नवाचार और कार्यपद्धति के उपयोग से न्यायसंगत लाभ अपेक्षित है।)

(m) 'Recognizing also the vital role that women play in the conservation and sustainable use of biological diversity and affirming the need for the full participation of women at all levels of policy-making and implementation for biological diversity conservation.'

(पहचानना कि स्त्रियों की जैविक विविधता के संरक्षण तथा उसको बनाये रखने के कार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है और जैविक विविधता के संरक्षण के लिये नीति निर्धारण व क्रियान्विति हेतु हर स्तर पर स्त्रियों की सम्पूर्ण भागीदारी की आवश्यकता स्वीकार करना।)

(n) 'Stressing the importance of and the need to promote, international, regional and global cooperation among states and intergovernmental organizations and the non-governmental sector for the conservation of biological diversity and the sustainable use of its components.'

(जैविक विविधता के संरक्षण तथा उसके घटकों के उचित उपयोग के लिये देश, अन्तर्राज्यीय संस्थाओं और अराजकीय क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय, सम्भागीय तथा सार्वभौमिक स्तर पर आवश्यकता और महत्त्व पर बल देना।)

(o) 'Acknowledging that the provision of new and additional financial resources and appropriate access to relevant technologies can be expected to make a substantial difference in the world's ability to address the loss of biological diversity.'

(यह स्वीकार करना कि नवीन तथा अतिरिक्त वित्तीय संसाधन और प्रासंगिक तकनीक के उचित समावेश से ही विश्व से लुप्त हो रही जैविक विविधता में प्रभावी अन्तर की आशा की जा सकती है।)

(p) 'Acknowledging further that special provision is required to meet the needs of developing countries, including the provision of new and additional financial resources and appropriate access to relevant technologies.'

(यह भी स्वीकार करना कि विकासशील देशों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विशेष निवेश, नवीन तथा अतिरिक्त वित्तीय संसाधन और प्रासंगिक तकनीकों का उचित समावेश सहित, की आवश्यकता है।)

(q) 'Noting in this regard the special condition of the least developed countries and small island states.'

(इस सन्दर्भ में न्यूनतम विकसित देश और छोटे द्वीप समूहों को विशेष स्थितियों में रखने का ध्यान रखना।)

(r) 'Acknowledging that substantial investments are required to conserve biologically diversity and that there is the expectation of a broad range of environmental, economic and social benefits from those investments.'

(यह स्वीकार करना कि जैविक विविधता के संरक्षण के लिये पर्याप्त निवेश की आवश्यकता होती है और इस निवेश से पारिस्थितिक, आर्थिक और सामाजिक लाभों की भारी मात्रा में आशा की जा सकती है।)

(s) 'Recognizing that economic and social development and poverty eradication are the first and overriding priorities of developing countries.'

(यह स्वीकार करना कि आर्थिक और सामाजिक विकास तथा गरीबी उन्मूलन विकासशील देशों की प्रमुख प्राथमिकताऐं हैं)

(t) 'Aware that conservation and sustainable use of biological diversity is of critical importance for meeting the food, health and other needs of the growing world population for which purpose access to and sharing of both genetic resources and technologies are essential.'

(अवगत होना कि जैविक विविधता तथा उसके बनाये रखने के उपयोग का संरक्षण विश्व की बढ़ती आबादी को भोजन, स्वास्थ्य और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जिसके लिये आनुवंशिक संसाधन और तकनीकियों की उपलब्धता और हिस्सेदारी दोनों आवश्यक हैं।)

(u) 'Noting that, ultimately, the conservation and sustainable use of biological diversity will strength friendly relations among states and contribute to peace for humankind.'

(सूचित होना कि अन्ततः जैविक विविधता का संरक्षण तथा उसके बनाये रखने का उपयोग देशों की मित्रता सम्बन्धों को दृढ़ करेगा और मानव जाति की शांति में योगदान करेगा।)

(v) 'Desiring to enhance and complement existing international arrangements for the conservation of biological diversity and sustainable use of its components.'

(इच्छा रखना कि जैविक विविधता का संरक्षण तथा उसके घटकों को बनाये रखने का उपयोग वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं में वृद्धि कर उसमें सम्पूर्णता प्रदान करेगा।) and (और)

(w) 'Determined to conserve and sustainable use of biological diversity for the benefit of present and future generations.'

(निश्चय करना कि जैविक विविधता का संरक्षण तथा उसको बनाये रखने का उपयोग वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों को लाभ देगा।)

यह उपर्युक्त सभी बिन्दु जैविक विविधता के महत्त्व तथा उसकी आवश्यकता को प्रतिपादित करते हैं। ये यह भी बताते हैं कि आज जैविक विविधता और उसके घटकों का संरक्षण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय है और पौधों, प्राणी वर्ग और सूक्ष्म जीव-जन्तुओं का जीवन और उनसे आधारित भूमि, समुद्रीय तथा अन्य स्थानों का परितंत्र, जैविक विविधता पर ही निर्भर है।

● कुछ परिभाषाएँ (Some Definitions)

1. *'Biological Diversity'* means the variability among living organisms from all sources including *inter alia*, terrestrial, marine and other aquatic ecosystems and the ecological complexes of which they are part; this includes diversity within species, between species and of ecosystems.

('जैविक विविधता' से तात्पर्य समस्त स्रोतों, भूमि, समुद्र, जलीय परितंत्र तथा परितंत्र समूहों से उपलब्ध प्राणी वर्ग की उस पारस्परिक क्रियाशीलता से है जिसके वह अंग हैं; इसमें प्रजातियों में अन्दर ही अन्दर तथा प्रजाति और परितंत्र के मध्य विविधता सम्मिलित है।)

2. '*Biological Resources*' include genetic resources, organisms or parts thereof, populations or any other biotic component of ecosystems with actual or potential use or value for humanity.

('जैविक संसाधन' में आनुवंशिक संसाधन, प्राणी वर्ग, आबादी और परितंत्र के सभी सजीव घटक सम्मिलित हैं, जो मानव कल्याण के वास्तविक अथवा संभावित उपयोग के लिये हैं।)

3. '*In-situ conservation*' means the conservation of ecosystems and natural habitats and the maintenance and recovery of viable populations of species in their natural surroundings.

('In-situ' संरक्षण से आशय परितंत्र तथा आवास स्थल के संरक्षण और उसमें रहने वाली प्रजाति और आबादी के रखरखाव से है।)

4. '*Ex-situ conservation*' means the conservation of components of biological diversity outside their natural habitats.

('Ex-situ' संरक्षण से आशय जैविक विविधता के उन घटकों के संरक्षण से है जो सामान्य आवास स्थल से बाहर होते हैं।)

5. '*Habitat*' means the place or type of site where an organism or population naturally occurs.

('आवास' से तात्पर्य उस स्थान से है जहाँ एक प्राणी वर्ग अथवा आबादी सामान्यतया रहती है।)

6. '*Ecosystem*' means a dynamic complex of plant, animal and micro-organism communities and their non-living environment interacting as a functional unit.

('परितंत्र' से मतलब पौधों, प्राणियों और सूक्ष्म जीव-जन्तु के एक ऐसे सक्रिय समूह से है जो किसी कार्यरत इकाई में निर्जीव पर्यावरण के साथ पारस्परिक क्रिया करता है।)

7. '*Domesticated or cultivated species*' means species in which the evolutionary process has been influenced by humans to meet their needs.

('घरेलू अथवा तैयार की गई प्रजाति' से अर्थ उस प्रजाति से है जिसमें मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विकास प्रक्रिया का समावेश किया है।)

8. '*Sustainable use*' means the use of components of biological diversity in a way and at a rate that does not lead to the long term decline of biological diversity, thereby maintaining its potential to meet the need the aspirations of present and future generations.

('बने रहने अथवा बनाये रहने का उपयोग' से मतलब जैविक विविधता के घटकों का उपयोग उस प्रकार से तथा उस गति से है जिसमें जैविक विविधता में गिरावट अधिक समय तक न हो, और इस प्रकार वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों की सम्भावित आकांक्षाओं की पूर्ति हो सके।)

- **जैविक विविधता के घटकों को बनाये रखने का उपयोग (Sustainable Use of Components of Biological Diversity)**

अनुच्छेद 10 से (From article 10)—प्रत्येक सन्दर्भित संस्था, जहाँ तक सम्भव व उपयुक्त हो—
(Each contracting party shall, as far as possible and as appropriate,)

(a) Integrate consideration of the conservation and sustainable use of biological resources into national decision making.

(यह विचार जोड़ेगी कि जैविक संसाधनों का संरक्षण और उनका उचित उपयोग राष्ट्रीय निर्णयानुकूल है।)

(b) Adopt measures relating to the use of biological resources to avoid or minimize adverse impacts on biological diversity.

(जैविक संसाधनों के उपयोग के सन्दर्भ में ऐसे उपाय अपनायेगी जिससे जैविक विविधता को कम अथवा कोई हानिकर असर न हो।)

(c) Protect and encourage customary use of biological resources in accordance with traditional cultural practices that are compatible with conservation or sustainable use/requirements.

(पारम्परिक रीति-रिवाजों के अनुसार जैविक संसाधनों के व्यावहारिक उपयोग को उत्साहित और सुरक्षित रखेगी जो उपयुक्त उपयोग/आवश्यकता अथवा संरक्षण के अनुकूल हो।)

(d) Support local populations to develop and implement remedial action in degraded areas where biological diversity has been reduced.

(विकृत क्षेत्रों के विकास और क्रियान्वयन के लिये बनाई गई उपचारात्मक विधियों के लिये स्थानीय लोगों को सहारा देगी, जहाँ की जैविक विविधता कम हो गई हो।)

and (और)

(e) Encourage cooperation between its governmental authorities and its private sector in developing methods for sustainable use of biological resources.

(जैविक संसाधनों के उचित उपयोग के लिये विकसित किये गये उपायों में राजकीय प्रशासन और निजी क्षेत्र के सहयोग को उत्साहित करेगी।)

• जन सामान्य के लिये जैविक विविधता (Biodiversity for Common People)

भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देश जैविक विविधता (Biodiversity) की शब्दावली से परिचित बहुत अल्प समय पूर्व ही हुये। उस पर भी विडंबना यह कि वहाँ का सामान्य आदमी इसके बारे में कुछ नहीं जान सका। जिन देशों में (विकसित देशों को छोड़कर) इसे जानने का प्रयास किया गया वहाँ भी यह केवल रिपोर्ट, सरकारी कार्यवाही, कार्यदलों के गठन, देशानुकूल सिफारिशें, क्रियान्वयन रूपरेखा निर्माण तक सीमित रहा। एक अन्य सोचने योग्य बात यह रही कि जैविक विविधता का कार्यक्षेत्र केवल कृषि उत्पादन अथवा मछली उत्पादन तक मानकर इसे सम्बन्धित विभागों का कार्यक्रम बना दिया गया जबकि जैविक विविधता का कार्य क्षेत्र सभी प्रकार के (स्थलीय, जलीय, वायुमण्डलीय) सभी स्तर के परितंत्रों का था।

इस बात को समझाने के लिये कुछ विस्तृत विवेचना यहाँ दी जा रही है—

(अ) जैविक विविधता की आवश्यकता एवं महत्त्व (Need and Importance of Biodiversity)

व्यावहारिक जीवन में जैविक विविधता के महत्त्व व आवश्यकता को साधारणतया क्रमबद्ध करना कठिन है, क्योंकि यह प्राणी मात्र के जीवन के हर क्षेत्र को किसी-न-किसी प्रकार लाभ पहुँचाता है और वस्तुतः हमें स्वस्थ, सुखी, प्रसन्नचित्त और स्फूर्तिमय रखता है। दैनिक जीवन के आधार पर एक सूची यहाँ इसी क्रम में प्रस्तुत है—

1. हम जैविक विविधता में जीते हैं (We live in biodiversity.)। पृथ्वी पर की सभी चीजें जो हमें निरापद रूप से मिल पातीं हैं, उसका श्रेय जैविक विविधता को जाता है। पीने योग्य पानी, स्वच्छ वायु, उपजाऊ मिट्टी जिससे हमें अन्न मिलता है, इसी की देन है। पेड़ों से ऑक्सीजन का मिलना ,फैक्ट्रीज से निकली कार्बन डाइऑक्साइड को आत्मसात करना, घर और कार्यालय को शुद्ध हवा उपलब्ध कराना, खेतों में अनेक जीवों से अन्न को सुरक्षित रखना, अनेक कीड़े-मकोड़ों की सहायता से मिट्टी को उपजाऊ बनाना आदि विविध कार्य जैविक विविधता की महत्ता को ही बताते हैं। एक प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि यह हमें सुखमय जीवन के विभिन्न आयामों का स्रोत केन्द्र है।

2. खाने पर हमें जैविक विविधता मिलती है (We find biodiversity at the dinner.)। खाने की मेज पर उपलब्ध भोज्य सामग्री (अन्न, माँस, मछली, अंडे), दूध-दही, आइसक्रीम, फल, सब्जियाँ, अचार और अन्य सामग्री सभी प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जैविक विविधता का प्रतिफल हैं। खेतों से आहार, पशुओं से दूध, समुद्र से मांसाहारी पदार्थ, मुर्गियों से अंडे आदि जीव विविधता (genes diversity) से निरन्तर मिलती रहती है। जैविक विविधता गुणवत्ता (quality) बनाये रखती है।

3. जैविक विविधता हमें स्वस्थ रखती है (Biodiversity keeps us healthy.)। जैविक विविधता का एक और महत्त्वपूर्ण योगदान इसके द्वारा प्रतिपादित जंगल और वन्य प्रजाति से सम्बन्धित है। वह है कि यह हमें स्वस्थ रखती है। एक समय था जब कि विश्व की शत-प्रतिशत औषधियाँ केवल पेड़-

पौधों अथवा विभिन्न पशुओं और जीव-जन्तुओं से ही प्राप्त होती थीं और आज से कोई 50 वर्ष पूर्व भी कोई 3 अरब मनुष्य जंगली जड़ी-बूटियों और उनसे निर्मित विभिन्न दवाइयों पर ही आधारित थे। आज भी अनेक शोधों के बावजूद इन विविध प्रजातियों को नकारा नहीं गया है। चीन में 5100 प्रजातियों, अमेरिका में 3000 प्रजातियों का आज भी उपयोग एन्टीबायोटिक तथा अन्य दवाइयों में प्रयोग होता है। भारत में तो पूरा आयुर्विज्ञान उपचार प्रणाली इन घरेलू और जंगली पेड़-पौधों पर आधारित है। अनेक एलोपैथिक उपचारों में केवल नाम अंग्रेजी के हैं; जबकि दवाई में अन्तर्वस्तु (contents) सभी सामान्य पौधों के सत्व हैं। निश्चित ही यह प्रभावी उपचार प्रणालियाँ जैविक विविधता की पहचान कराती हैं।

4. जैविक विविधता हमें भोजन, आवास और कपड़ा उपलब्ध कराती है (Biodiversity provides food, shelter and clothes for us.)। किसी भी देश के कृषि क्षेत्र केवल अन्न उपजाने तथा अन्य उत्पादन देने के साध्य ही नहीं हैं बल्कि इसके साथ-साथ यह जैविक विविधता के भण्डार भी हैं, जिनकी सुरक्षा और संरक्षण से ही हम रह पा रहे हैं और जी पा रहे हैं। आवास हेतु लकड़ी, कपड़ों हेतु रूई, ऊन व अन्य पदार्थ और पेट भरने हेतु अनेक प्रकार के अन्न, फल, सब्जियाँ, मांस, मछली, दूध, क्रीम और इन सभी की अनेकानेक किस्में जैविक विविधता की ही देन हैं।

5. जैविक विविधता पारिस्थितिकी तंत्र को स्थायित्व प्रदान करती है (Biodiversity stables the ecosystem.)। किसी भी आबादी तथा प्रजाति का अस्तित्व तथा आवास विशेष में निर्जीव वस्तुओं से इनकी पारस्परिक संक्रिया से ही सम्भव है जिससे उनके पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता सुनिश्चित होती है। जैविक विविधता इन सभी पारिस्थितिक तंत्रों को नियमित रूप से चलते रहने में और उनको स्थायित्व प्रदान करने की महती भूमिका निभाती है।

6. जैविक विविधता हमारे व्यक्तित्व में नयापन लाती है (Biodiversity renews our spirit.)। हमारी पारम्परिक गतिविधियों में विविधताओं की समाविष्टि ने मनुष्य के जीवन में अनेक परिवर्तन किये हैं। केवल भोजन, आवास और कपड़ा ही नहीं बल्कि आमोद-प्रमोद की विविधता, रीति-रिवाजों में से पारम्परिक एकाकीपन का अलगाव, रहने-सहने के नये रंग-ढंग, स्वस्थ और स्वच्छ जीवन शैली की पद्धति, वार्तालाप का उल्लासित और उमंग भरा तरीका आदि सभी ने मनुष्य के व्यक्तित्व में एक ऐसा नयापन ला दिया है जिससे जीवन दर्शन का स्वरूप प्रसन्नतामय, सुखमय और शांतिपूर्ण हो गया है। अप्रत्यक्ष रूप से यह सब जैविक विविधता के फलस्वरूप ही है।

इनके अतिरिक्त भी जैविक विविधता का योगदान हम निम्न प्रकार भी पाते हैं—

7. जैविक विविधता हमें पारम्परिक शैलियों से सम्बन्ध जोड़े रखती है।
(Biodiversity keeps us in touch with our traditions.)

8. जैविक विविधता हमारी आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि करती है।
(Biodiversity boosts our economy.)

9. जैगिक विविधता हमें आश्चर्य में डालती है।
(Biodiversity feels us to wonder.)

10. जैविक विविधता हमारे ग्रह की सुरक्षा करती है।
(Biodiversity protects our planet.)

11. जैविक विविधता हमारी पृथ्वी को स्वच्छ रखती है।
(Biodiversity keeps our earth clean.)

12. जैविक विविधता हर क्षेत्र में वृद्धि करती है।
(Biodiversity makes progress in all fields.), आदि।

इस प्रकार जैविक विविधता की आवश्यकता और उसके महत्त्व को हम किस स्तर तक स्वीकारते हैं; यह हमारा अपना दृष्टिकोण है।

(ब) जैविक विविधता की सुरक्षा और संरक्षण के लिये वांछनीय कार्य (Steps for Preserving and Conserving the Biodiversity)

जन साधारण में और उनके परिवार के सभी सदस्यों को जैविक विविधता के महत्त्व को समझना चाहिये। अतः यह आवश्यक है कि उनके प्रति दिन के कार्यकलाप, चाहे वह घर में हों, चाहे बाहर, चाहे

शहर में शापिंग को जायें अथवा पर्यटन पर, चाहे जगते हों या सोते हों, इस उद्देश्य से सम्पन्न हों कि जैविक विविधता नष्ट न हो, दुरुपयोग न हो क्योंकि आपका कोई गलत कार्य व्यवहार अप्रत्यक्ष ही कई असाधारण हानि कर सकता है। पुस्तक की सीमा को देखते हुए केवल बिन्दु यहाँ दिये जा रहे हैं, विस्तार पाठक स्वयं करें।

1. अपने घर के बगीचें को जैविक विविधता का संरक्षण केन्द्र बनायें (यथासम्भव स्थानीय पौधों को महत्त्व दें)।
2. पानी का बुद्धिमतापूर्ण उपयोग करें, रिसते नलों को रोकें, लॉन संस्कृति को हतोत्साहित करें (बचे पानी से डैम भरे जा सकते हैं, जिससे अधिक जरूरत का उत्पादन हो सकता है)।
3. घर के कटे-टूटे वृक्ष-झाड़ियों को यूँ ही रहने दें (यह पक्षियों के आवास स्थल बनेंगे)।
4. अपने घर तथा आस-पड़ोस के स्थान तथा रास्ते और सड़कों पर उग रहे जंगली पौधों को रहने दें (इनमें असंख्य जैविक विविधता भरी पड़ी है जिन्हें हम जानते नहीं; सम्भव हैं कि इनमें अनेक औषधीय पौधे भी हों)।
5. खरीददारी करते समय अनचाहे पैकिंग की औपचारिकता से बचें; आखिर घर पर आकर इन्हें डस्टविन में डाल देंगे (प्राकृतिक संसाधन बचेंगे तो जैविक विविधता संरक्षित होगी)।
6. प्लास्टिक थैले (Carry Bags) का उपयोग न करें (यह घरों में, संस्थानों में ड्रेनेज को रोकेंगी, नदियों में अन्य जल स्रोतों के जानवरों को जानें लेंगी; वस्तुतः जैविक विविधता के सामान्य चक्र में बाधा डालेंगी)।
7. स्थानीय दवाइयों का प्रयोग करें; जी मिचलाने में अमृतधारा, एण्टीसेप्टिक लोशन के लिये नमक और फिटकरी, खून रोकने को हल्दी, खांसी के लिए अडूसा के पत्तों का रस आदि (जैविक विविधता का इससे अच्छा उपयोग क्या हो सकता है?)।
8. पुनः चक्रीय (Recycled) कागजों का पुस्तक, कापियाँ तथा ऑफिस कार्य में उपयोग करें (लाखों पेड़ों को बचाना और मिलियन्स घन मीटर पानी की बचत सम्भव है)।
9. घर में वृक्षों की गिरी पत्तियों से खाद बनाइये (यह अच्छी गुणवत्ता की भी होगी और पैसों की बचत अलग)।
10. मिट्टी की सुरक्षा कीजिये; इसे बरसाती पानी अथवा अन्य प्रकार से बह रहे जल के साथ जाने से रोकिये; मिट्टी बांधने वाले पौधे (Soil Binding Type Plantation) लगाइये (एक चम्मच पर मिट्टी में अरबों-खरबों बैक्टीरिया तथा सूक्ष्म जीव हो सकते हैं, जिनसे पूरे देश की भोजन समस्या हल करने के लिए अन्न उपजाया जा सकता है)।

इनसे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि जैविक विविधता के मुख्य आधार, (1) जल, (2) मिट्टी, (3) पौधे या वनस्पति तथा (4) बैक्टीरिया और सूक्ष्म जीव है जिनसे प्राणी मात्र का सुखमय जीवन सम्भव है।

• वन एवं पर्यावरण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा जैविक विविधताओं का संरक्षण (Conservation of Biodiversity by the Ministry of Forests and Environment, Government of India)

पर्यावरण एवं विकास की समस्याओं के निवारण तथा अनेक प्राणी जगत् की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु, जिनमें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और उनके सतत उपयोग को उच्च प्राथमिकता दी गई है, भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने कई कार्यक्रमों को स्वीकृति देकर उन पर क्रियान्विति प्रारम्भ की है। प्रत्येक कार्यक्रम में भविष्य में निरन्तर क्रमवार वृद्धि किये जाने का भी प्रावधान रखा गया है जिससे कार्यक्रम में न तो कोई शिथिलन आये और न ही उसकी वृद्धि में रोक हो। इनमें मुख्य हैं—(1) जीवमण्डल रिजर्व्स (Biosphere Reserves), (2) नमभूमि (Wetlands), (3) कच्छ वनस्पति (Mangroves) और प्रवाल भित्तियों (Coral Reefs)। इन पर संक्षिप्त विवरण हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं—

(अ) जीवमण्डल रिजर्व्स (Biosphere Reserves)

किसी भी स्थान के स्थाई विकास को संरक्षित रखने और उसे नष्ट होने से बचाने में वहाँ की वनस्पति (Plants), प्राणी (Animals) और सूक्ष्म जीव-जन्तु (Micro-organisms) की संख्या और उनका

भारत देश के कुछ महत्त्वपूर्ण आंकड़े (Important Data of the Country)		
कुल सतही क्षेत्रफल		329mh
वन क्षेत्र		63·73mh (19.39%)
इमारती लकड़ी पूर्ति		15 mh (4.56%)
ईंधन व चारा		25mh (7.59%)
राष्ट्रीय उद्यान एवं वन अभ्यारण्य (89 + 489 = 578)		15mh (4.56%)
प्रोजेक्ट टाइगर (27)		3.78mh (1·15%)
चिड़ियाघर		200
चीतों की संख्या	(1972 में)	1827
	(2001 में)	3508
हाथियों की संख्या		25,570

अपने पारिस्थितिक तंत्र (Ecosystem) में समन्वय होना अत्यन्त आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। इसी जैविक विविधता (Biodiversity) के कारण कुछ देश बहुत समृद्ध और खुशहाल हैं तथा अन्य देश अनेक प्राकृतिक आपदाओं के शिकार हो रहे हैं। पिछले 50 वर्षों के समय में लगभग 30% से 40% तक वन क्षेत्र कम हुये, अनेक बीमारियों तथा भोजन के अभाव से बहुत अधिक प्राणी समाप्त हो गये और पर्यावरणीय असंतुलन ने सूक्ष्म जीव-जन्तुओं को नष्ट कर दिया। पर फिर भी भारत ने अपनी जैविक विविधता को काफी सीमा तक बचाये रखा है। पूरे विश्व के केवल 2·20% क्षेत्रफल (भारत—3·28 × 10^6 km^2; विश्व-149·0 × 10^6 km^2) में आज 16% से अधिक मनुष्य और 20% से अधिक पशुओं की संख्या है। यह विश्व में लगभग सर्वाधिक है। वर्तमान में विश्व की कुल वनस्पति प्रजातियों का लगभग 7% (47,000 प्रजातियाँ) तथा प्राणी जगत् की 6% (81,000 प्रजातियाँ) भारत में हैं। इसी से इस देश की समृद्धि की जानकारी से परिचित हुआ जा सकता है।

इन सभी प्रजातियों के संरक्षण तथा देश की अन्य प्राकृतिक विविधताओं को पनपते रहने के लिये भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने आज तक 13 जीवमण्डल रिजर्व्स की स्थापना की है, जिनका विवरण प्रस्तुत सारणी में दिया है—

सारणी 6·1
देश के जीवमण्डल रिजर्व्स[1]

नाम	प्रदेश	क्षेत्रफल (वर्ग किमी में)	नोटिफिकेशन वर्ष
1. नीलगिरी	तमिलनाडु, केरल औरं कर्नाटक	5520	1986
2. नंदा देवी	उत्तरांचल	5861	1988
3. नोकरेक	मेघालय	820	1988
4. मानस	असम	2837	1989
5. सुन्दरवन	पश्चिमी बंगाल	9630	1989
6. मनार की खाड़ी	तमिलनाडु	10500	1989
7. ग्रेट निकोबार	अंडमान एंड निकोबार	885	1989
8. सिमलीपाल	उड़ीसा	4374	1994
9. डिब्रु डैइखोवा	असम	705	1997
10. डेहान्ग डेबान्ग	अरूणाचल प्रदेश	5112	1998
11. पचमढ़ी	मध्य प्रदेश	4927	1999
12. कंचनजंगा	सिक्किम	2620	2000
13. अगरतस्यमलई	केरल	1701	2001

स्रोत :

1. (a) **वार्षिक प्रतिवेदन**, पर्यावरण और वन मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, वर्ष 1987-88 से 2000-2001 तक।
   (b) **वार्षिक रिपोर्ट**, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2001-02, पृष्ठ 44।

इन जीवमण्डल रिजर्व्स के अतिरिक्त भी अन्य रिजर्व्स की स्थापना का कार्य भी प्रगति पर है। **इन रिजर्व्स के मुख्य उद्देश्यों को निम्न प्रकार समेकित किया गया है—**

1. **वनस्पति, प्राणी जगत् और सूक्ष्म जीव-जन्तुओं की सम्पूर्णता तथा विविधता का संरक्षण करना।**
   (To conserve diversity and integrity of plants, animals and micro-organisms.)
2. **पारिस्थितिकी संरक्षण तथा अन्य पर्यावरणीय पहलुओं पर शोधों को प्रोत्साहित करना।**
   (To promote research on ecological conservation and other environmental aspects.)
3. **पर्यावरणीय शिक्षा, जाग्रति तथा प्रशिक्षण की सुविधायें प्रदान करना।**
   (To Provide facilities for education, awareness and training relating environment.)
4. **पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से वैयक्तिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवेश को बनाये रखने में योगदान देना।**
   (To contribute in keeping individual, social and cultural status with environmental viewpoint.)

देश का 53,791 वर्ग किमी का भू भाग (1·63%) इन रिजर्व्स क्षेत्र के अन्तर्गत आता है जो पारिस्थितिकी की जैविक विविधता के संरक्षण के लिये निःसन्देह उत्साहवर्द्धक है।

(ब) नमभूमि (Wetlands)

नमभूमि पृथ्वी पर सबसे अधिक उत्पादक पारिस्थितिकी तंत्र है और मानव तथा प्राणी जगत् के कार्यकलापों के लिए इतना उपयोगी है कि इसका संरक्षण किया जाना बहुत महत्त्वपूर्ण बन गया है। अनेक क्रियाकलापों, (1) जल शुद्धि (Water Purification), (2) पानी के बहाव का नियन्त्रण (Regulation and Control of Water Flows), (3) मछली पालन (Fisheries), (4) वनस्पति, प्राणी जगत् और सूक्ष्म जीव जन्तुओं के आश्रय स्थल (Habitats for Plants, Animals and Micro-organisms), (5) मनोरंजन और पर्यटन स्थल (Places for Recreation and Tourism), (6) जल शोषक (Water Absorbant), (7) प्रदूषण कम करने (Lessening the Pollution), (8) भोज्य पदार्थ उत्पादक (Producer of Foods), (9) बाढ़ नियन्त्रण (Flood Control), (10) नदियों से बने नमभूमि क्षेत्र के तलछट की गंदगी को कम करना (Reduction of Sediment Loads, (11) अपशिष्ट जल का उपचार (Treatment of Waste Water), आदि में इनकी भूमिका पूरे विश्व में स्वीकारी गई है।

नमभूमि उस भूमि को कहा जा सकता है जो जलमग्न हो अथवा जिस पर पानी जमा हो, चाहे वह प्राकृतिक रूप से हो या कृत्रिम रूप से, स्थायी हो या अस्थायी, पानी बहता हुआ हो या रुका हुआ, तीखा-खारा पानी हो अथवा नमकीन हो (जिसमें समुद्री जल के क्षेत्र भी शामिल हैं)।

ऐसे क्षेत्रों में दल-दल, छिछले तालाब, बड़े तालाबों के किनारे के भाग, बाढ़ से घिरे मैदान, झीलें आदि शामिल होते हैं। प्रायः यह नदी के किनारे अधिक पनपते हैं।

भारत में भी ऐसे नमभूमि क्षेत्रों से लाभ लेने के लिये एक ठोस योजना के निर्माण हेतु एक राष्ट्रीय नमभूमि समिति का गठन सन् 1987 में किया, जिसका मुख्य कार्य, (1) नमभूमि क्षेत्रों का चयन (Recognition of Wetlands), (2) क्रियान्वयन की रूपरेखा (Outline of Action Plan) तथा (3) राज्य सरकारों की भूमिका (Role of State Governments) था।

इस राष्ट्रीय समिति ने नमभूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत मुख्य कार्यकलाप निम्न प्रकार अभिशंसित किये—

1. **प्राथमिकता वाले नमभूमि क्षेत्रों के लिये प्रबन्ध कार्य योजनाऐं तैयार करना और इनका कार्यान्वयन करना।**
   (Formation and implementation of management action plans of identified wetlands.)
2. **पर्यावरणीय मुद्दों और नमभूमि के प्रबन्ध से सम्बन्धित अनुसंधान कार्यकलापों को ठोस पारिस्थितिकी आधार पर बढ़ावा देना।**
   (Promotion of research activities relating to environmental issues and management of wetlands on sound ecological basis.)
3. **भारत में नमभूमि संसाधनों की स्थिति और समय के साथ-साथ उनकी क्षति का मूल्यांकन।**
   (Assessment of wetlands resources in India and their loss in time series.)

4. **राष्ट्रीय महत्त्व की नमभूमियों का पता लगाना।**
(Identification of wetlands of national importance.)
5. **अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग।**
(International Co-operation.)
6. **मानीटरिंग और मूल्यांकन।**
(Monitoring and Evaluation.)

इन बिन्दुओं के आधार पर प्रदेश स्तर पर निर्मित संचालन.समितियों (Steering Committees) ने जिन नमभूमियों की शिनाख्त की उनकी संख्या 22 है, जिन पर निर्धारित योजनानुसार कार्य चल रहा है।

सारणी 6·2
भारत में राष्ट्रीय स्तर पर चयनित नम भूमि[1]

क्र.सं.	नमभूमि	राज्य	नोडल शैक्षिक संस्था
1.	कोलेरू	आन्ध्र प्रदेश	ओस्मानिया विश्वविद्यालय
2.	वूलर	जम्मू एण्ड कश्मीर	जम्मू व कश्मीर विश्वविद्यालय
3.	चिलका	उड़ीसा	उत्कल विश्वविद्यालय
4.	लोकटक	मणिपुर	मणिपुर विश्वविद्यालय
5.	भोज	मध्य प्रदेश	भोपाल विश्वविद्यालय
6.	सांभर	राजस्थान	जोधपुर विश्वविद्यालय तथा काजरी
7.	पिछौला	राजस्थान	उदयपुर विश्वविद्यालय
8.	अष्ठमुड़ी	केरल	केरल विश्वविद्यालय
9.	हरिके	पंजाब	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना
10.	उजनी	महाराष्ट्र	पुणे विश्वविद्यालय
11.	कंजली	पंजाब	N.A.
12.	रेनुका	हिमाचल प्रदेश	N.A.
13.	काबर	बिहार	N.A.
14.	सस्थामकोटवा	केरल	N.A.
15.	सुखना	चंडीगढ़	N.A.
16.	नलसरोवर	गुजरात	N.A.
17.	सो मोरारी	जम्मू एण्ड कश्मीर	N.A.
18.	रोपड़	पंजाब	N.A.
19.	पोंगबांध	हिमाचल प्रदेश	N.A.
20.	चन्द्रताल	हिमाचल प्रदेश	N.A.
21.	दीपर बील	असम	N.A.
22.	पूर्वी कोलकाता	पश्चिमी बंगाल	N.A.

● N.A. = अप्राप्त (Not available)

*** इसके अतिरिक्त केवलादेव घना पक्षी विहार (राजस्थान) का भी चयन किया है, जिसमें मुर्गाबी प्रजाति के संरक्षण की बात है।**

**** पूर्वी कोलकाता (प० बंगाल) तथा पिछोला (राजस्थान) नमभूमि क्षेत्र, जो शहरी क्षेत्र में आते हैं और जिनके लिये प्रदूषण नियन्त्रण की विशेष उपचार की जरूरत है, पर राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना के अन्तर्गत ध्यान दिया जा रहा है।**

***** अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की नमभूमियों में जिनमें कुक्कुट आवास (Waterfowl Habitat) को प्राथमिकता दी गई है, निम्न को चयनित किया गया है—**

(1) चिल्का (उड़ीसा), (2) केवलादेव घना (राजस्थान)

स्रोत :
1. **K. J. S. Chatrath, Wetlands in India (New Delhi, India : Ashish Publishing House, 1992).**

(3) सांभर (राजस्थान) (4) वूलर (जम्मू एण्ड कश्मीर)
(5) लोकटक (मणिपुर) (6) हरिके (पंजाब)

भारत ने रामसर कन्वेन्शन पर हस्ताक्षर कर अपने आप को नमभूमि संरक्षण कार्यक्रम में महत्त्वपूर्ण भागीदार बना लिया है। उन्होंने इस क्षेत्र में अभी और 25 नमभूमियों की शिनाख्त करने का उत्तरदायित्व लिया है।

(स) कच्छ वनस्पतियाँ (Mangroves)

कच्छ वनस्पति क्षेत्र, लवण सह्य वन पारि-प्रणालियों (Salt Tolerant Forest Ecosytems) हैं जो कि विश्व के उष्ण कटिबन्धीय (Tropical) तथा उप उष्ण कटिबन्धीय (Sub-tropical) अन्तर्ज्वारीय (Intertidal) क्षेत्रों में मुख्य रूप से पाये जाते हैं। इन क्षेत्रों में बड़ी तादाद में पादप और जीव-जन्तु प्रजातियाँ पाई जाती हैं जो कि विकास के लम्बे समय के साथ चली आ रही हैं। इनमें लवण सहन करने की अभूतपूर्व क्षमता देखने को मिलती है। ये तटरेखा को स्थिर करती हैं तथा समुद्र की तरंगों के विरुद्ध बचाव का कार्य करती हैं। इनके आस-पास में रहने वाले लोगों को प्रचुर जैविक विविधता के आजीविका के स्रोत उपलब्ध होते हैं। कुछ वनस्पति क्षेत्र मधुवाटिका (Apiary) उद्योगों के सबल आधार बनते हैं।

भारतीय प्रशांत क्षेत्र (Indian Pacific Region) अपने प्रचुर कच्छ वनस्पति क्षेत्रों के लिये जाना जाता है। भारत में वृहद कच्छ वनस्पति क्षेत्र अनुमानतः 6740 वर्ग किमी है जोकि विश्व के कच्छ वनस्पति क्षेत्र का लगभग 7% है। भारत के कुल वनस्पति क्षेत्र का लगभग 80% पश्चिम बंगाल के सुन्दरवन तथा अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह में मिलता है। शेष आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा तथा कर्नाटक में फैला हुआ है।

कच्छ वनस्पति क्षेत्रों को संरक्षण तथा प्रबन्धन हेतु राष्ट्रीय स्तर पर कार्यक्रम सन् 1986 से चलाया गया। सन् 1986-87 में ही 15 ऐसे क्षेत्रों की शिनाख्त कर ली गई थी जिन पर सत्रवार योजनाएँ तैयार की गईं। प्रत्येक वर्ष इनमें से कुछ क्षेत्रों को कार्य करने की स्वीकृति (मय वित्तीय सहायता के) भारत सरकार द्वारा प्रदान कर दी जाती है। चयनित 15 कच्छ वनस्पति क्षेत्र निम्न हैं—

1. अण्डमान और निकोबार (अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह)
2. सुन्दरवन (पश्चिमी बंगाल)
3. भीतरकनिका (उड़ीसा)
4. कोरिन्गा (आन्ध्र प्रदेश)
5. गोदावरी डेल्टा (आन्ध्र प्रदेश)
6. कृष्णा एस्चुरी (आन्ध्र प्रदेश)
7. महानदी डेल्टा (उड़ीसा)
8. पिचावरम (तमिलनाडु)
9. पोइन्ट कैलीमर (तमिलनाडु)
10. गोवा (गोवा)
11. कच्छ की खाड़ी (गुजरात)
12. कुण्डापुर (कर्नाटक)
13. अचरा-रत्नागिरी (महाराष्ट्र)
14. मुधूपेट (तमिलनाडु)
15. खम्भात की खाड़ी (गुजरात)।

सन् 1999 में आये भीषण तूफान ने उड़ीसा में भयानक त्रासदी उत्पन्न कर दी थी, जिसमें बंगाल की खाड़ी क्षेत्र के जल ने भारी विनाश किया था। उस समय निम्न कच्छ वनस्पति क्षेत्रों (15) का विशेष रूप से चयन किया था जो समुद्री किनारे पर थे—

1. सुवरनरेखा (उड़ीसा)
2. देवी और धामरा (उड़ीसा)
3. रामनन्द (तमिलनाडु)
4. दक्षिण कन्नड़ (कर्नाटक)
5. देवगढ़ (महाराष्ट्र)
6. विजयदुर्ग (महाराष्ट्र)
7. कुन्डलिका और रेवडन्डा (महाराष्ट्र)
8. मुम्ब्रा दीवा (महाराष्ट्र)
9. वैतराना (महाराष्ट्र)
10. वसाई मनोरी (महाराष्ट्र)
11. श्रीवर्धन (महाराष्ट्र)
12. वारल (महाराष्ट्र)
13. टर्मवाडी (महाराष्ट्र)
14. कलसूरी (महाराष्ट्र)
15. पांडिचेरी (पांडिचेरी)

यद्यपि इन कच्छ वनस्पति क्षेत्रों की प्रगति जानने हेतु विभिन्न सम्बन्धित राज्यों के वन एवं पर्यावरण मंत्रियों की बैठक नियमितं रूप से होती रहती है तथापि इस सन्दर्भ में मई 2000 में हुई बैठक में

निर्धारित योजनानुसार कार्य करने की स्थिति पर संतोष व्यक्त किया गया। यह जानकारी भी दी गई कि 615 वर्ग किमी में कच्छ वनस्पति की क्षेत्र वृद्धि पिछले 10 वर्षों में हुई है, जो निःसन्देह प्रशंसनीय है।

(द) प्रवाल भित्तियाँ (Coral Reefs)

'प्रवाल' जिसे अंग्रेजी में Coral कहते हैं, एक विशेष प्रकार के प्राणी (Animal) के लिये प्रयुक्त होता है। यह प्राणी एक चूने के बने खोल में चिपका रहता है तथा वहीं बढ़ता है तथा लम्बवत् आकार में समुद्री चट्टान के रूप में उभरता जाता है। यह चट्टानी आकृति कुछ इस प्रकार से निर्मित होती है कि इनका ऊपरी भाग समुद्र तल की सतह तक रहता है।

प्रवाल भित्तियाँ उथले जल (shallow water) एवं समुद्री उष्णकटिबन्धीय पारि-प्रणालियों (Tropical Marine Ecosystem) से सम्बन्धित होती हैं तथा इनमें प्राणी जात (Faunal) और वनस्पति जात (Floral) की प्रचुर विविधता (Rich Diversity) होती है। इनसे तटीय निवासियों को कच्चा माल (विशेषत: Calcium Carbonate) प्राप्त होता है और क्षति तथा कटाव से नाजुक तटीय रेखा की सुरक्षा में इनका बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

भारत में प्रवाल भित्तियों के संरक्षण के लिये निम्न क्षेत्रों को चुना गया है—

1. अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह
2. लक्षद्वीप
3. मन्नार की खाड़ी तथा
4. कच्छ की खाड़ी।

(य) राष्ट्रीय उद्यान और वन्य जीव अभ्यारण्य (National Parks and Wildlife Sanctuaries)

विविध प्रकार के वन्य जीव और सघन वृक्षों की अनेक प्रजातियों के संरक्षण हेतु अनेक राष्ट्रीय उद्यान तथा वन अभ्यारण्य का रख-रखाव भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की देख-रेख में किया जा रहा है। इनकी संख्या मार्च 2002 तक निम्नांकित है—

1. राष्ट्रीय उद्यान	89
2. वन्य जीव अभ्यारण्य	489

इनका विस्तृत विवरण आगे अध्यायों में दिया गया है।

यही नहीं बल्कि ऐसे वन्य जीव जिनकी संख्या देश में निरन्तर घट रही है उनके लिये 'प्रोजेक्ट स्कीमें' चलाई जा रही हैं, जिनमें (1) चीता, (2) हाथी, (3) गेंड़ा आदि प्रमुख हैं। **इनका विवरण भी आगे अध्यायों में दिया गया है—अवलोकन करें।**

(र) वनस्पति उद्यानों की वित्तीय सहायता (Financial Assistance to Botanical Gardens)

इनकी संख्या देश में सैकड़ों में हैं। इनमें पादप अनुवंशी संसाधनों के संरक्षण तथा प्रचार सम्बन्धी कार्यकलापों की वृद्धि का कार्य (To augment the activities for conservation and propagation of plant genetic nesources) सम्पादित किया जाता है। यह योजना सन् 1991-92 से प्रारम्भ की गई थी तथा इसमें वह विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के वनस्पतिशास्त्र विभाग सम्मिलित कर लिये जाते हैं जो पादपों की विशेष प्रजातियों का संरक्षण करते हैं। प्रति वर्ष एक पूर्व निर्धारित समिति द्वारा कुछ ऐसे विशिष्ट उद्यानों को वित्तीय सहायता स्वीकृत की जाती है।

(ल) केन्द्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण (Central Zoo Authority)

केन्द्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण देश के चिड़ियाघरों की स्थिति सुधारने के बारे में तथा चिड़ियाघर के पशुओं को रखने और प्रजनन के लिये सुविधाऐं बढ़ाने के लिये तथा उन्हें ठीक से साधारण जनता को दिखाने के लिए प्रस्तुत करने का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। वर्तमान में इनकी संख्या लगभग 200 है। प्राधिकरण के मुख्य कार्यों को निम्न प्रकार समेकित किया जा सकता है—

1. चिड़ियाघर में रखे जाने वाले पशुओं की रहने की व्यवस्था, उनकी देखभाल तथा नियमित शारीरिक जांच।
2. चिड़ियाघर के लिये निर्धारित मानदण्डों पर मूल्यांकन तथा उनका स्तर निर्धारण।
3. पशुओं का उचित प्रकार से प्रजनन तथा आनुवंशिक विविधता को बनाये रखना।
4. चिड़ियाघर में कार्यरत कर्मचारी तथा अधिकारियों की नियमित एवं उचित प्रशिक्षण व्यवस्था।
5. पशुओं के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी को जनता तक उपलब्ध कराना।

इस प्राधिकरण का गठन 1992 में हुआ। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। इसके चेअरमैन पदेन

वन एवं पर्यावरण मंत्री होते हैं तथा 10 अन्य सदस्यों में से एक व्यक्ति पूर्णकालिक होता है, जो सचिव का कार्यभार सम्भालते हैं।

(व) राष्ट्रीय प्राणि उद्यान (National Zoology Park)

यह उद्यान राष्ट्रीय स्तर का दिल्ली में है और 176 एकड़ भूमि में फैला हुआ है। इसमें 1200 पशु तथा 135 दुर्लभ प्रजातियों के पक्षी वर्तमान में हैं। लोगों को नई जानकारी देने हेतु यह बहुत लाभकारी रहा है।

इसके अतिरिक्त भी कुछ अन्य प्रसिद्ध प्राणि उद्यान हैं, जो विभिन्न राज्य सरकारों के स्तर पर कार्यरत हैं—

1. पदभजा नायडू हिमालय प्राणी उद्यान, दार्जिलिंग (पश्चिम बंगाल),
2. श्री चमराजेन्द्र प्राणी उद्यान, मैसूर (कर्नाटक), और
3. नन्दनकानन प्राणी उद्यान, भुवनेश्वर (उड़ीसा)।

• जैविक विविधता के नष्ट होने क़ी आशंका (Threats to Biodiversity)

जैविक विविधता की आवश्यकता (Need), महत्त्व (Importance), उपादेयता (Utility), विस्तार (Scope), संरक्षण (Conservation) तथा इससे सम्बन्धित पहलुओं पर हमने पूर्व में विस्तार से चर्चा की है। हमने यह भी प्रयास किया है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित 'जैविक विविधता सम्मेलन' (International Convention on Bio-diversity) ने वर्तमान में इस पर ध्यान देने की किस स्तर पर अभिशंसा की है। इसके प्रतिवेदन के अनुच्छेद 13 (Article 13)[1] में जैविक विविधता के लिये जन शिक्षा और जागृति (Public Education and Awarness) में तो इसे जनसंचार (Media) द्वारा जनहित में प्रचारित करने तथा शिक्षा में पाठ्यक्रम में समावेश करने को कहा है (मूल दस्तावेज के अंश फुटनोट में दिये हैं)।

लेकिन जैविक विविधता के कम होने/नष्ट होने, लुप्त होने में मनुष्य की बड़ी भूमिका है, उसके ही अनेक क्रियाकलापों से ऐसा होता है उन्हें हम यहाँ बिन्दुवार समेकित कर प्रस्तुत कर रहे हैं—

1. तीव्र अवनीकरण (Tropical Deforestation),
2. प्रजाति संकटग्रस्त क्षेत्रों की अवहेलना (Neglect of Species Threatened Areas),
3. जैविक आक्रमण (Biological Invasions),
4. मृदा, जल और वायुमण्डल का प्रदूषण (Pollution of Soil, Water and Atmoshpere),
5. सार्वभौमिक जलवायु परिवर्तन (Global Climatic Change),
6. आबादी वृद्धि की तेज गति से प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपभोग (Use of more Natural Resources due to high rate of Population Growth),
7. कृषि, वानिकी और मत्स्य उद्योग में निरन्तर गिरावट (Steadily Narrowing in Agriculture, Forestry and Fisheries Industries),
8. पर्यावरण संरक्षण के रखरखाव के विरुद्ध आर्थिक नीतियाँ और व्यापार (Economic Policies and Trade against Maintenance of Environmatal Conservation),
9. जैविक विविधता के संरक्षण के लिये योजना और नीतियों के निर्माण का अभाव (Absence in making to Plans and Policies for the Conservation of Biodiversity), और (and)
10. सामान्य जन को सूचना और ज्ञान का अभाव (Lack of Information and Knowledge for Common Man)

---

1. **Article 13. Public Education and Awareness**
The Contracting Parties shall :
(a) Promote and encourage understanding of the importance of, and the measures required for, the conservation of biological diversity, as well as its propagation through media, and the inclusion of these topics in educational programmes and
(b) Cooperate as appropriate, with other states and international organizations in developing educational and public awareness programmes with respect to conservation and sustainable use of biological diversity.
Source : Internationl Environment Management; ibid

जैविक विविधता (Biodiversity) के सन्दर्भ में अब यह आवश्यक हो गया है कि, (1) सभी क्षेत्र की विभिन्न प्रजातियों को अच्छे परितन्त्र में रख उन्हें पनपने और उनमें वृद्धि होने में भरपूर सहयोग दिया जाय, (2) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर के सुझावों के अनुरूप राष्ट्रीय जैविक विविधता नीति (National Biodiversity Policy) बनाई जाय, (3) राज्य स्तर पर उपलब्ध साधन सुविधा और क्षमता के अनुकूल क्रियान्वयन योजनाओं का निर्माण हो, (4) आम आदमी को जैविक विविधता के सभी पहलुओं से अवगत कराय जाय। इसी से जहाँ एक ओर देश में विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता बढ़ेगी, वहीं दूसरी ओर देश का व्यापार के क्षेत्र में आर्थिक सम्पन्नता सुनिश्चित है। अच्छा और भरपेट भोजन, स्वच्छ पानी, साफ हवा, सुधरे आवास, रुचिपूर्ण पहनावा और मन की अथाह शान्ति और सुख को आम आदमी तक पहुँच जाने की अपूर्व कल्पना जैविक विविधता में ही है। हम इसे जानें और आवश्यक रूप से अपनायें।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'जैविक विविधता' से आप क्या समझते हो ? इन्हें किन-किन स्तरों पर देखा जाता है ?
2. 'जैविक विविधता' का कार्यक्षेत्र क्या है ? समुद्रीय क्षेत्र की सुरक्षा क्यों आवश्यक है ?
3. 'जैविक विविधता' के संरक्षण में राष्ट्रीय स्तर पर क्या प्रयास हुये हैं ?
4. 'जैविक विविधता' से क्या-क्या लाभ हैं ? आर्थिक योगदान पर अपने विचार लिखिये।
5. जीवमण्डल रिजर्व्स क्या हैं ? इनके चयन के पीछे क्या मुख्य उद्देश्य रहे हैं ? क्या यह जैविक विविधता का संरक्षण करते हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'जैविक विविधता' की कोई एक परिभाषा लिखिये।
7. 'जैविक विविधता' का प्राणी वर्ग की स्वस्थता में क्या योगदान है ?
8. 'जैविक विविधता' के संरक्षण में स्त्रियों की भूमिका का महत्त्व बताइये।
9. 'जैविक विविधता' के संरक्षण में आम आदमी किस तरह अपना योगदान दे सकता है ?
10. 'कच्छ वनस्पति' से क्या आशय है ? भारत में ऐसे क्षेत्र कहाँ-कहाँ पर हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'जैविक विविधता' पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन कहाँ आयोजित हुआ था ?
    (अ) पेरिस (फ्रांस) में　　(ब) रीओ डी जैनीरो (ब्राजील) में
    (स) देहली (भारत) में　　(द) सिडनी (आस्ट्रेलिया) में
12. एक स्थान पर कई प्रकार की आबादियों के समूह को कहते हैं—
    (अ) प्रजाति　　(ब) समुदाय
    (स) पारिस्थितिक तंत्र　　(द) भीड़
13. 'जैविक विविधता' को नष्ट करने में किसकी भूमिका सम्भव है ?
    (अ) जल　　(ब) मिट्टी　　(स) पौधे　　(द) पॉलिथीन बैग्स
14. भारत में वर्तमान में जीवमण्डल रिजर्व्स की संख्या कितनी है ?
    (अ) 12　　(ब) 16　　(स) 18　　(द) 20
15. राष्ट्रीय स्तर पर कितने नमभूमि क्षेत्रों की आज तक शिनाख्त कर ली गई है ?
    (अ) 16　　(ब) 18　　(स) 20　　(द) 22

निम्न प्रश्नों के हाँ/नहीं में उत्तर दीजिये—

16. जनसंख्या वृद्धि जैविक विविधता को कम करने का एक कारण है। (हाँ/नहीं)
17. चिल्का (उड़ीसा) झील अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व का नमभूमि क्षेत्र है। (हाँ/नहीं)
18. भारत में जैविक विविधता की राष्ट्रीय नीति का निर्माण हो चुका है। (हाँ/नहीं)
19. चिड़ियाघर जैविक विविधता संरक्षण का एक केन्द्र है। (हाँ/नहीं)
20. क्या रेगिस्तान जैविक विविधता को प्रभावित करते हैं ? (हाँ/नहीं)

7

वायु

[AIR]

• प्रस्तावना
(Introduction)

वायु मनुष्य के लिए एक आवश्यक जीवन रक्षा तत्त्व है। बिना इसके वह कुछ मिनट ही जीवित रह सकता है। वह सामान्य स्थिति में प्रतिदिन 22,000 बार साँस लेकर 16 किग्रा प्राण वायु (ऑक्सीजन) का उपयोग करता है जो उसे वायुमण्डल से प्राप्त होती है। वायुमण्डल में ऑक्सीजन के असीमित भण्डार हैं। स्पष्ट है कि अपेक्षित मात्रा में वायु ही उसके जीवन को सामान्य रूप से चलाती है। इसके साथ ही वायु की स्वच्छता भी आवश्यक है, जिससे मनुष्य का जीवन बिना किसी हानि (अस्वस्थता) के चलता रहे।

वायुमण्डल केवल वायु का भण्डारण ही नहीं है जिससे हमारी श्वसन क्रिया चलती रहती है वरन् यह एक विभिन्न गैसीय पदार्थों का ऐसा आवरण है जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे रहती है और विशेषतः सूर्य से आने वाली अत्यधिक ताप की किरणों से उसकी रक्षा करती है। यही आवरण पृथ्वी तथा पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्य, पशु तथा पौधों को सौर (solar) और अतंरक्षीय विकिरण (cosmic radiation) से होने वाली हानि से भी रक्षा करता है। यह एक ऐसा सुरक्षा कवच है जिसमें बन्द रही पृथ्वी की सभी क्रियाएँ और उस पर निवास करने वाले जीवधारी के सभी क्रियाकलाप अत्यन्त स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता से निष्पादित होते हैं।

यह प्राकृतिक संसाधन हमें विरासत में मिला है और इसकी मात्रा भी इतनी अधिक है कि जब तक पृथ्वी पर सृष्टि रहेगी तब तक सभी जीवधारियों के कितने भी उपयोग किये जाने पर भी इसके समाप्त होने की सम्भावना नहीं है। भौतिक वेत्ताओं ने यह अनुमान लगाया है कि पृथ्वी के सभी ओर की वायु की मात्रा लगभग $5,200 \times 10^{12}$ मैट्रिक टन है (एक घनमीटर वायु का तोल समुद्री सतह पर 1,170 ग्राम होता है)। और यह मात्रा लगभग स्थिर ही रहती है, चाहे इनके अवयवों के अनुपात में अन्तर आ जाये।

• वायु का संयोजन
(Composition of Air)

यूँ तो औपचारिक दृष्टि से वायु पृथ्वी तल से लगभग 1,000 किलोमीटर तक होती है, पर व्यावहारिक रूप में इसका अधिकांश भाग 250 किमी तक में सिमटा होता है। इस ऊँचाई तक वायु में विभिन्न गैसों का अनुपात निम्न प्रकार होता है—

सारणी 7·1

'वायु में विभिन्न गैसों का अनुपात

क्र.सं.	गैसों के नाम	मात्रा प्रतिशत (आयतन से)
1.	नाइट्रोजन	78·00 प्रतिशत
2.	ऑक्सीजन	20·95 प्रतिशत
3.	आर्गन	0·93 प्रतिशत
4.	कार्बन डाइऑक्साइड	0·04 प्रतिशत
5.	नीओन	0·001 प्रतिशत
6.	हीलियम, क्रिप्टोन, जेनोन, मीथेन, हाइड्रोजन, ओजोन, धूल के कण, पानी की भाप	0·079 प्रतिशत (प्रत्येक 0·001% से कम)
	कुल	100·00 प्रतिशत

वायु के विभिन्न अवयवों का विशिष्ट योगदान (Specific Contribution of Different Constituents of Air)

वायु की मानव जीवन में कितनी महती भूमिका है, वह इसी से जाना जा सकता है कि वह भोजन बिना कुछ दिन/महीने, पानी बिना कुछ घंटे बिता सकता है, लेकिन बिना वायु के कुछ मिनट भी नहीं रह सकता है क्योंकि वायु के द्वारा ही हम सांस लेते हैं, जिससे शरीर की सभी क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। इसके अतिरिक्त, (1) सूर्य से आने वाली हानिकारक अल्ट्रावायलेट (Ultra-violet) किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकना, (2) सूर्य के ताप से पृथ्वी को गर्म रखना, (3) बादलों के पानी को दूर-दूर तक ले जाकर बरसाना, (4) सुनने-सुनाने का माध्यम बनना, (5) इन्डस्ट्रीज तथा अन्य प्रकार से उत्पन्न विषैली गैसों को बहुत ऊपर तक ले जाकर उन्हें विरल बनाना आदि भी अनेक कल्याणकारी कार्य वायु द्वारा ही किये जाते हैं, लेकिन इसमें सम्मिलित होने वाली गैसों का भी बहुत प्रभावी योगदान होता है—

1. ऑक्सीजन की भूमिका (Role of Oxygen) : यह हमारी श्वसन प्रक्रिया का मुख्य स्रोत तथा साधन है। किसी भी प्रकार के जलने-जलाने में ऑक्सीजन का होना आवश्यक है। वस्तुतः जहाँ भी ईंधन के रूप में किसी भी पदार्थ का उपयोग किया जाता है वहीं ऑक्सीजन की उपस्थिति अवश्यम्भावी है। किसी भी रासायनिक संक्रिया में ऑक्सीजन की भूमिका अवश्य रहती है, वरना वह संक्रिया ही सम्भव नहीं, जैसे—सेब से सिरका बनाना, कच्चे आमों के अंचार बनाने से पहले उन्हें धूप और हवा में सुखाना आदि।

2. नाइट्रोजन की भूमिका (Role of Nitrogen) : नाइट्रोजन सामान्यतया एक निष्क्रिय गैस मानी गई है और इसका एक विशेष गुण यही है कि यह जलने की तेजी को कम करती है। इसी कारण सब चीजें आग पकड़ते ही बहुत तेजी से नहीं जलतीं। लेकिन इस गैस का विशिष्ट योगदान मिट्टी में मिलकर पौधों को जीवन देना होता है। नाइट्रोजन खाद के रूप में भी फसल उत्पादन के उपयोग में लाया जाता है।

3. कार्बन डाइऑक्साइड की भूमिका (Role of Carbon dioxide) : हरे पौधे सूर्य की रोशनी से ऊर्जा प्राप्त कर जल वाष्प और कार्बन डाइऑक्साइड से भोजन तैयार करते हैं, जो शाकाहारी जीवों का जीवन आधार बनता है। इस प्रक्रिया को फोटोसिन्थेसिस के नाम से जाना जाता है। कार्बन डाइ-ऑक्साइड स्वयं तो पौधों में समाहित हो जाता है और बदले में ऑक्सीजन उत्पन्न करता है, जिससे प्राणी अपनी श्वसन क्रिया में उसका उपयोग कर सकें।

4. जल वाष्प की भूमिका (Role of Water Vapours) : जल वाष्प के दो प्रमुख कार्य हैं। प्रथम तो यह वर्षा और पहाड़ों पर जमने वाली हिम (Snow) के लिये आवश्यक है। दूसरे यह कार्बन डाइ-ऑक्साइड के साथ मिलकर पृथ्वी से लौट रही (reflected) सूर्य की किरणों को रोककर उन्हें अवशोषित कर लेती है जिससे पृथ्वी को ताप मिलता है। इस ताप से वर्षा का होना, अधिक पेड़-पौधों का उगना, प्राणि जगत् को भोजन उपलब्ध कराना आदि बहुत करीब से सम्बन्धित हैं।

5. ओजोन की भूमिका (Role of Ozone) : यह ऑक्सीजन का ही एक रूप है जिसमें ऑक्सीजन के तीन अणु मिले होते हैं। इसी से रासायनिक भाषा में इसे O_3 से व्यक्त करते हैं। सूर्य से आने वाली हानिकारक अल्ट्रावायलेट किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकने में इसी गैस का मुख्य योगदान है। अल्ट्रावायलेट किरणें त्वचा कैन्सर को जन्म देती हैं जो बहुत हानिकारक रोग है।

6. धूल के कणों की भूमिका (Role of Dust Particles) : वैसे तो धूल के कणों का वायु में रहना कोई अच्छा लक्षण नहीं है, क्योंकि एक प्रकार से यह वायु की शुद्धता को नष्ट करती है। पर इन कणों के कई व्यावहारिक लाभ हैं, (1) वायु में रहकर उसे भारी बनाती है, जिससे उसका छितराना तथा यूँ ही सभी तरफ बह जाना कम होता है, और (2) प्रकाश की किरणों से उत्पन्न प्रकाश में इनकी सहायता से किसी भी वस्तु का दिखना सहज हो जाता है।

• वायु के व्यावहारिक उपयोग (Practical Use of Air)

वायु की उपयोगिता के बारे में हमने अभी-अभी उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका के रूप में कुछ विवरण दिया है और अधिक उपयोगों को हम यहाँ समेकित करने का प्रयास कर रहे हैं—

1. प्राणि वर्ग के लिये श्वसन प्रक्रिया का स्रोत व साधन,
2. स्वचालित वाहनों में ब्रेक्स (Brakes)
3. वायु दबाव के रूप में उपयोग : पहियों में हवा, फुटबाल और गुब्बारों में हवा,
4. गैस और वाष्प के रूप में रेफ्रीजरेटर और एअर कन्डीशनर्स में उपयोग,
5. हवाई जहाजों की उड़ान में दिशा तथा ऊँचाई नियंत्रित करना,
6. एअर क्लीनर्स : कमरे, फर्श और अन्य स्थानों की सफाई,
7. इण्डस्ट्रीज में इलेक्ट्रोस्टेटिक प्रेसीपिटेटर के रूप में उपयोग,
8. एअर रूम कूलर्स में प्रभावी उपयोग : गर्म हवा को कम तापमान से गुजार कर ठंडा करना,
9. तेज गति से होने पर पवन ऊर्जा का उत्पादन और
10. अस्थमा के रोगियों को चिकित्सीय उपयोग आदि।

वायु
(Air)

- वायु कई गैसों का मिश्रण है।
(Air is a mixture of several gases.)
- वायु हर जगह है।
(Air is everywhere.)
- वायु में भार होता है।
(Air has weight.)
- वायु स्थान घेरती है।
(Air takes up space.)
- वायु दबाव बनाती है।
(Air exerts pressure.)
- वायु जलाने में सहायक है।
(Air helps burning.)
- वायु पर तापमान का असर होता है : गर्म अथवा ठंडी।
(Temperature affects the air : hot or cold.)
- वायु में गति होने पर उसे 'समीर' कहते हैं।
(The moving air is known as 'wind'.)

• वायु की गुणवत्ता (Quality of Air)

पर्यावरण की दृष्टि से तो अपेक्षित यही है कि वायु स्वच्छ हो अर्थात् उसमें वही गैसों का मिश्रण हो जो ऊपर दिया गया है और उसमें विभिन्न गैसों का आयतन प्रतिशत भी बहुत अधिक विचलित (deviate) न हो, पर व्यावहारिक रूप में यह सम्भव नहीं है। अतः उसमें कुछ व्यापक प्रदूषकों की उपस्थिति रहती ही है। इसलिये इसके अतिरिक्त हमारे पास कोई विकल्प नहीं है कि हम वायु के उन सामान्य प्रदूषकों को उस सीमा तक स्वीकार कर लें जहाँ तक वह अधिक हानिप्रद नहीं है। इस स्वीकृत सीमा के आधार पर हम वायु गुणवंत्ता का विश्लेषण विभिन्न स्तर पर और विविध कार्यक्षेत्र में प्रस्तुत कर रहे हैं—

वायु गुणवत्ता का स्तर दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है—

1. परिवेशी वायु गुणवत्ता मानदण्ड (Ambient Air Quality Standards) : यह वह मानदण्ड है जो हमारे निवास तथा कार्य करने के स्थान के आसपास प्रायः रहता है। इसी से जनसाधारण अधिक प्रभावित होता है। अधिक मात्रा के प्रदूषकों से सामान्य जीवन अस्त-व्यस्त होना स्वाभाविक है और उससे अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित होने की आशंका बनी रहती है।

2. उत्सर्जित मानदण्ड (Emission Standards) : यह वायु के मानदण्ड किसी कार्य के सम्पन्न होने में उत्सर्जन क्रिया के फलस्वरूप होते हैं। इन्हें निष्पादित मानदण्ड (Standards of Performance) भी कह सकते हैं। मुख्यतः यह दो प्रकार के हैं, (1) उद्योग सम्बन्धी (Industrial) और (2) स्वचलित वाहन सम्बन्धी (Vehicular)।

इस अध्याय में हम केवल परिवेशी वायु गुणवत्ता मानदण्डों का उल्लेख करेंगे। केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड (CPCB) ने राष्ट्रीय स्तर पर अग्र प्रकार प्रदूषकों की मात्रा को स्वीकृत कर उन्हें बनाये रखने की अभिशंसा की है।

सारणी 7·2
राष्ट्रीय स्तर पर परिवेशी वायु गुणवत्ता मानदण्ड[1]

प्रदूषक	समयावधि	परिवेशी वायु में सान्द्रता (माइक्रोग्राम प्रति घनमीटर)		
		उद्योग क्षेत्र	आवासीय क्षेत्र	संवेदनशील क्षेत्र
सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2)	वार्षिक औसत	80 $\mu g/m^3$	60 $\mu g/m^3$	15 $\mu g/m^3$
नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2)	यथा	80 $\mu g/m^3$	60 $\mu g/m^3$	15 $\mu g/m^3$
सस्पेन्डेड पार्टीकल्स (SPM)	यथा	360 $\mu g/m^3$	140 $\mu g/m^3$	70 $\mu g/m^3$
कार्बन मोनोऑक्साइड (CO)	8 घंटे	5·0 mg/m^3	2·0 mg/m^3	1·0 mg/m^3
	1 घंटे	10·0 mg/m^3	4·0 mg/m^3	2·0 mg/m^3
लैड (Lead) (Pb)	वार्षिक औसत	1·0 $\mu g/m^3$	0·75 $\mu g/m^3$	0·50 $\mu g/m^3$

● ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैन्डर्ड्स (BIS) के द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड TV चैनल **'आज तक'** में प्रति रात्रि को मौसम-प्रदूषण में दिये जाते हैं। उनका अवलोकन करें।

● वायु से प्रभावित समस्याऐं (Air Prone Problems)

पर्यावरण के क्षेत्र में अनेक समस्याऐं हैं जिनका उल्लेख हम सम्बन्धित अध्यायों में करते रहेंगे, लेकिन इस समय जहाँ हम वायु को प्राकृतिक संसाधन के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं, वहाँ हमारा समस्या क्षेत्र सिमट जाता है। इसी सीमा को ध्यान में रखते हुये हम यहाँ चार प्रमुख समस्याओं, (1) **विश्वतापन** (Global Warming), (2) **अम्लीय वर्षा** (Acid Rains), (3) **ओजोन पर्त की क्षीणता** (Ozone Layer Depletion) और (4) **स्मोग** (Smog) का विश्लेषण कर रहे हैं। यह भी प्रयास किया जा रहा है कि समस्या के कारणों की जानकारी होने पर उसे कम करने या उससे पूर्णतः बचने के उपाय क्या सम्भव हैं। यदि समस्या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की है तो विश्वस्तर पर क्या-क्या प्रावधान आज चलन में हैं। आइये जानें—

(अ) विश्वतापन (Global Warming)

1. समस्या (Problem) : विश्वतापन बढ़ते हरितगृह प्रभाव (Greenhouse Effect) का परिणाम है, जिसमें पृथ्वी पर के तापक्रम में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इस बढ़ते तापमान का असर विश्वभर के मौसम तंत्र पर पड़ना अवश्यम्भावी है, जिससे कई समस्याओं की उत्पत्ति सम्भव है। विश्व के अनेक क्षेत्रों में पानी (वर्षा) आधिक्य होगा तो कहीं-कहीं क्षेत्र सूखे (कम वर्षा वाले अथवा रेगिस्तानी) हो जायेंगे। इसके परिणामस्वरूप खाद्यान्न उपज गड़बड़ा जायेगी और भोजन की कमी की आशंका बन सकती है। इस बात की भी सम्भावना है कि ध्रुवों पर की बर्फ पिघलने लगे जिससे समुद्री जल सतह की ऊँचाई में वृद्धि हो और अनेक निचले भू-भाग जलमग्न हो जायें। यह अनुमान है कि वर्तमान तापमान की वृद्धि गति से अगले 100 वर्षों में पृथ्वी पर का तापमान 3°C तक बढ़ जायेगा और फलस्वरूप 10 से 15 सेमी तक की जल सतह की वृद्धि से विश्व स्थिति बहुत अस्त व्यस्त हो जायेगी।

अनेक देशों के महत्त्वपूर्ण नमभूमि क्षेत्र, कच्छ वनस्पति और प्रवाल भित्तिक्षेत्र समाप्त हो जायेंगे, जिससे सम्पूर्ण विश्व की जैविक विविधता और उससे प्राप्त होने वाले आर्थिक लाभ से वंचित होना पड़ेगा। निचले परितंत्र नष्ट हो जायेंगे, नवीन परितंत्र जन्म लेंगे और प्राणियों की जीवन शैली पर भी शनैः-शनैः प्रभाव पड़ेगा।

---

1. **स्रोत :** P. K. Goyal and K.P. Sharma, **Environmental Guidelines And Standards In India** (Technoscience Publications, Jaipur : India, 1996), 65-66.

2. हरितगृह प्रभाव (Greenhouse Effect) : 'ग्रीनहाउस'[1] एक बहुत पुराना शब्द है जिसका आशय किसी बगीचे अथवा पार्क में उस भवन से है जिसमें शीशे की दीवारें और छत होती हो तथा जिसमें आप उन पौधों को उगाते हों जिन्हें अधिक ताप की आवश्यकता होती हो।

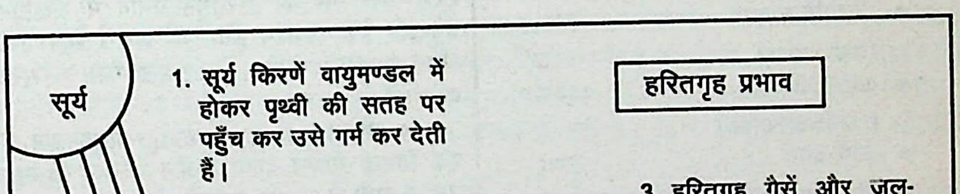
इसी शब्द को पर्यावरण के एक सिद्धान्त को प्रतिपादित करने हेतु 'ग्रीन हाउस प्रभाव' के रूप में काम में लिया गया है।

"ग्रीन हाउस प्रभाव पृथ्वी पर के तापमान में निरन्तर वृद्धि होने की समस्या है क्योंकि सूर्य से आने वाले ताप को पृथ्वी पर रोक तो लिया जाता है पर उसे वायुमण्डल से बाहर नहीं निकाला जा सकता है।"[2]

वस्तुतः ग्रीनहाउस प्रभाव का कारण मुख्यतः ग्रीनहाउस गैसें (कार्बन डाइऑक्साइड, स्मोग गैसें—मीथेन सहित), जलवाष्प और बर्फ कण होते हैं, जो वायुमण्डल में अपनी एक पर्त का आवरण बना लेते हैं।

सूर्य से आने वाली किरणें इस पर्त में से गुजर कर पृथ्वी पर टकराती हैं पर वहाँ से वापस लौटते तापीय विकिरण को अपने आप में अवशोषित कर लेती हैं और उसे वायुमण्डल से बाहर नहीं निकलने देतीं। इससे वायुमण्डल का ताप बढ़ जाता है। इसे ही 'ग्रीनहाउस प्रभाव' का नाम दिया है। A. Ryabchikov[3] ने अपनी पुस्तक **'The Changing Face of the Earth'** में इसको **'Hothouse Effect'** (पृष्ठ 162) नाम दिया है, क्योंकि उनके अनुसार कार्बन डाइऑक्साइड मुख्यतः पृथ्वी की सतह तथा अपने बीच एक ऐसा संभाग (घर) तैयार कर लेती है, जिसमें तापमान की वृद्धि होती है।

नीचे दिये गये चित्र से यह और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है—



चित्र 7·1—हरितगृह प्रभाव (Greenhouse Effect)

1. "A greenhouse is a building in a garden or park which has glass walls and a glass roof and in which you grow plants, that need to be kept warm or protected from winds or frost." **From Collins Cobuild English Language Dictionary,** Ed. John Sinclair and others, collins ELT, 8 Graftan Street London, 1988, p.637.
2. "The greenhouse effect is the problem of the gradual rise in temperature in the earth's temperature because heat is absorbed from the sun but cannot leave the atmosphere." ibid.
3. A. Ryabchikov, **The changing Face of the Earth** (Moscow : Progress Publishers, 1975), p. 162.

3. हरितगृह गैसें (Greenhouse Gases) : वैज्ञानिकों ने अब तक लगभग 30 हरितगृह गैसों की शिनाख्त की है, जिनमें से कुछ गैसें लाखों वर्ष से हैं। प्रमुख गैसों में, (1) कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide), (2) मीथेन (Methane), (3) जल वाष्प (Water Vapour), (4) नाइट्रस ऑक्साइड (Nitrous oxide) और (5) ओजोन (Ozone) हैं। अब इसमें प्रमुखता से क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स (Chlorofluoro carbons) और जुड़ी है। इन विभिन्न गैसों की वायुमण्डल में निम्न मात्रा आंकी गई है—

- कार्बन डाइऑक्साइड 49%
- मीथेन 18%
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स 14%
- नाइट्रस ऑक्साइड 6%
- अन्य गैसें 13%

4. मानव क्रियाकलापों का योगदान (Contribution of Human Activities) : विश्वतापन में मानव के अनेक कार्यकलाप भागीदार हैं, जो समय के साथ विकास से भी जुड़े हैं और उसके अदूरदर्शिता पूर्ण प्रक्रियाओं से भी। यह समझा जाता है कि निम्न भागीदारी उनकी (Global Warming) में है—

- ऊर्जा उत्पादन (Energy Production) 49%
- औद्योगिक कार्य (Industries) 24%
- अवन्यीकरण (Deforestation) 14%
- कृषि कार्य (Agriculture) 13%

स्रोत : World resources, 1990-91

5. सम्भावित समाधान (Possible Solutions) : कारणों को दृष्टिगत करते हुए अनेक समाधान विशेषज्ञों ने सुझाये हैं, उनमें से कुछ महत्त्वूर्ण सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं—

- जीवाश्म ईंधन, जैसे कोयला, तेल (पेट्रोल सहित) आदि का उपयोग कम किया जाय।
- व्यक्तिगत ऊर्जा व्यय में खपत कम करने की आदत डालें; उदाहरणार्थ कारों के बजाय बसों का अधिक उपयोग करें।
- आम जन भागीदारी को ऊर्जा का महत्त्व और उससे होने वाले दुष्परिणामों से परिचित कराया जाय। बाइसिकिल का उपयोग बहुत उत्तम व श्रेष्ठ है।
- अधिकाधिक वृक्षारोपण हो और वर्तमान में लगे वृक्षों की सुरक्षा की जाय। यह वृक्ष CO_2 को अवशोषित कर हरितगृह प्रभाव की समस्या को कम करेंगे।
- CFC's के प्रयोग वाले साधनों का इस्तेमाल रोका जाये।

हरितगृह गैसें
(Greenhouse Gases)

- **कार्बन डाइऑक्साइड** (Carbon dioxide) : CO_2—इस गैस की हरितगृह प्रभाव में सर्वाधिक प्रमुखता है। जीवाश्म ईंधन के जलने से (80%) और अवन्यीकरण से (20%) इस गैस के मुख्य कारण हैं।
- **मीथेन** (Methane) : CH_4—वायुमण्डल की एक तिहाई मीथेन दलदल और कीचड़ से स्वतः उत्पन्न होती है। अन्य कारणों में—(1) पशु-गोबर, (2) मृत पशु, (3) चावल के खेत, (4) अवन्यीकरण और (5) मनुष्य के मल-मूत्र हैं।
- **क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स** (Chlorofluorocarbons) : CFC's—यह गैस रेफ्रीजरेटर्स, एयर कण्डीशनर्स के निर्माण, प्लास्टिक उद्योग, ऐरोसोल्स के रूप में काम आती है। एक बार वायुमण्डल में रिसने पर अनेक वर्षों तक नष्ट नहीं होती है। भारत सरकार ने इसे समयबद्ध तरीके से बन्द करने का प्रोग्राम निश्चित किया है।
- **नाइट्रस ऑक्साइड** (Nitrous Oxide) : N_2O—इस गैस के निर्माण के, (1) नाइट्रोजन खाद के उत्सर्जन, (2) ऐंजिन्स के आन्तरिक दहन तथा (3) जीवाश्म ईंधन के दहन प्रमुख हैं।
- **ओजोन** (Ozone) : O_3—ओजोन स्ट्रेटेसफीयर (समताप मण्डल) में पृथ्वी का सुरक्षा कवच है, पर यह UV किरणों द्वारा विघटित कर दी जाती है। पृथ्वी की ऑक्सीजन के भाग में Ozone से निकली अणु ऑक्सीजन पृथ्वी सतह पर ओजोन की सान्द्रता में वृद्धि करती है और ग्रीनहाउस गैस के रूप में कार्यरत हो जाती है।
- **जल वाष्प** (Water Vapour) : H_2O—जल के कण भाप के रूप में सभी गैसों को बाँधने में सहायक होते हैं। वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति जल वाष्पीकरण से होती है।

(ब) अम्लीय वर्षा (Acid Rains)

1. समस्या और कारण (Problem and Causes) : वायु प्रदूषण के प्रभाव के फलस्वरूप अम्लीय वर्षा एक ऐसी पर्यावरणीय समस्या है जिसका असर बहुत लम्बे क्षेत्र तक पड़ता है और दूसरे देश अनजाने ही किसी एक देश की गलतियों का नुकसान उठाते हैं। वस्तुतः विभिन्न उद्योगों की विविध उत्पादन प्रक्रियाओं से निकली कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रिक ऑक्साइड गैसें जब चिमनियों से निकलकर वायुमण्डल में जाती हैं, तो वहाँ वह जलवाष्प से मिलकर क्रमशः कार्बोनिक अम्ल, सल्फ्यूरिक अम्ल तथा नाइट्रिक अम्ल बनाते हैं। यह गैसें परम्परागत ईंधन के दहन के फलस्वरूप तथा वाहनों से निकलने वाले exhaust से भी निकलकर वायुमण्डल में जाकर मिलती हैं। वर्षा के साथ यह अम्ल पृथ्वी पर आ जाते हैं और इसे ही अम्लीय वर्षा कहते हैं।

इस वर्षा से जमीन की मिट्टी में अम्लीयता बढ़ जाती है और pH मान में कमी होने के कारण मिट्टी के उपजाऊपन पर इसका प्रभाव पड़ता है। इससे जंगल नष्ट हो जाते हैं, बड़े-बड़े भवन-इमारतें-स्मारक आदि का क्षय होने लगता है। पानी के दूषित होने पर जलीय जानवर तथा वहाँ की वनस्पति को भी यह नुकसान पहुँचाती है। इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव सीधा मानव स्वास्थ्य पर इस रूप में पड़ता है कि प्राण वायु और जल में ही प्रदूषण नहीं हो जाता बल्कि अन्न तथा अन्य उगने वाले अनाज आदि भी दूषित हो जाते हैं।

ऐसे विश्व में अनेक उदाहरण हैं जिनमें विश्वविख्यात इमारतें इस प्रकार की वर्षा के कारण प्रभावित हुई हैं। इंग्लैण्ड का प्रख्यात सेंट पाल गिरजाघर, ब्रिटिश का संसद भवन, न्यूयार्क (अमेरिका) शहर की भव्य अट्टालिकाएँ, एथेन्स (यूनान) का शहर, स्विट्जरलैण्ड की झीलें, नार्वे और स्वीडन के वन-प्रदेश आदि का उल्लेख कई लेखकों ने अलग-अलग जगह किया है। कनाडा में 2000 से 4000 झीलें इस प्रकार की हो गई हैं, जिनमें जल जीवन सम्भव ही नहीं है। यह सब अम्लीय वर्षा के दुष्प्रभाव के कारण है।

इससे भी अधिक विडम्बना यह है कि जैसे हमने प्रारम्भ में वर्णन किया है, दोषी कोई होता है और नुकसान किसी और को उठाना पड़ता है। उद्योग कारखानों की ऊँची चिमनियों से निकले सल्फर और नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स वायु के वेग के साथ वायु की दिशा में हजारों किमी दूर तक बह जाते हैं और फिर आर्द्रता पाकर कहीं अम्लीय वर्षा के रूप में जा बरसते हैं। उत्तरी अमरीका की फैक्टरियों से निकले SO_2, NO_2 का असर कनाडा पर देखा गया है जबकि ब्रिटेन और फ्रान्स से निकले ऑक्साइड्स बहुत दूर नार्वे और स्वीडन तक पहुँचकर अम्लीय वर्षा से नुकसान पहुँचाते हैं।

भारत में अभी इसका प्रभाव बहुत अधिक नहीं है (शायद सर्वे की कमी रही हो) लेकिन बढ़ते उद्योग इकाइयों के समूह से निश्चित ही यह खतरा बहुत दूर नहीं है। हमें अपने देश की उन उद्योग इकाइयों को तो नियन्त्रित करना ही है, जो अम्लीय वर्षा का कारण बन सकती हैं, बल्कि अन्य देशों से पड़ सकने वाले कुप्रभावों से बचने के लिए भी कुछ उपाय सोचने होंगे।

2. अम्लीय सान्द्रता (Concentration of Acidity) : किसी भी रसायन अथवा वस्तु की अम्लीयता (Acidity) और क्षारीयता (Alkalinity) pH पैमाने पर मापी जाती है। यह पैमाना 0 से 14 तक अंकित होता है तथा लघुगुणक पद्धति पर आधारित है। एक उदासीन (Neutral) विलयन या घोल (Solution) का pH का मान 7 होता है। अम्लीय घोल का pH मान 7 से कम तथा क्षारीय घोल का मान 7 से अधिक रहता है। लघुगुणक सिद्धान्त पर आधारित पैमाने के कारण pH_4 अम्लीयता pH_5 अम्लीयता से 10 गुनी अधिक होती है। इसी प्रकार pH_9 क्षारीयता pH_8 क्षारीयता से 10 गुनी अधिक होती है।

मुख्यतया 3 प्रकार के अम्ल 'अम्लीय वर्षा' में होते हैं—

- सल्फर डाइऑक्साइड से गंधक का तेजाब (Sulphuric Acid),
- नाइट्रोजन डाइऑक्साइड से शोरे का तेजाब (Nitric Acid) और
- कार्बन डाइऑक्साइड से कार्बोनिक एसिड (Carbonic Acid)।

कार्बन डाइऑक्साइड गैस के उत्पन्न होने का मुख्य स्रोत जीवाश्म ईंधन का दहन है, जबकि सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड गैसों का अधिक भाग स्वचालित वाहनों के उत्सर्जन तथा उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाले धुँए से होता है।

3. अम्लीय वर्षा से हानि (Damage due to Acid Rains) : अम्लीय वर्षा से होने वाली हानियों को निम्न बिन्दुओं में समेकित किया जा सकता है–

(क) वृक्ष और मिट्टी (Trees and Soil) : अम्लीय वर्षा से पेड़ों की पत्तियां जल जाती हैं, ऊपरी सिरे नष्ट होने लगते हैं और तने कमजोर होते जाते हैं, जिससे पेड़ जल्दी गिर भी जाते हैं और नष्ट भी होने लगते हैं। सबसे अधिक असर मिट्टी पर पड़ता है। मिट्टी में विद्यमान अघुलनशील अल्यूमीनियम अम्लीय वर्षा से घुलनशील बन जाता है तथा मैगनीशियम को भी नष्ट कर देता है जिनसे वृक्षों की शक्ति कम हो जाती है। अनेक देश इस समस्या के शिकार हुये हैं, जिनका हल सहज नहीं सूझता।

(ख) नदियाँ और झीलें (Rivers and Lakes) : अम्लीय वर्षा अपने साथ लाई मिट्टी को जब नदियों और झीलों में डाल देती है तो उनके जल की अम्लीयता बढ़ जाती है। घुले अल्यूमीनियम से जल में विषैलापन आ जाता है। परिणामस्वरूप जल के जानवरों की अकाल मृत्यु भारी मात्रा में होती है जिसका असर भोजन की उपलब्धता में कमी स्वाभाविक है। इन क्षेत्रों का परितंत्र वस्तुतः आशंका के घेरे में आ जाता है।

(ग) इमारतें (Buildings) : जब अम्लीय वर्षा का अम्ल भवनों व इमारतों पर गिरता है तो सामान्यतया वह बिल्डिंग्र सामग्री से संक्रिया करता है। विश्व के अनेक ऊँचे-ऊँचे स्मारक, भवन आलीशान इमारतें इसका शिकार बनती हैं। स्थायी समाधान न हो सकने के कारण यह चिन्ता का विषय बना हुआ है।

(घ) बिना दोष के सजा (Punishment without Fault) : वायु के लिये कोई देश-विदेशीय सीमाऐं नहीं हैं। अम्लीय गैसों को ले जाने वाली वायु हजारों किलोमीटर उड़कर चली जाती हैं और जहाँ कहीं भी उसे आर्द्रता मिलती है वहीं जल के साथ संक्रिया करके अम्लीय वर्षा के रूप में बरस पड़ती हैं। इस प्रकार कहीं की गैसें कहीं पहुँच जाती हैं। इसके कुछ उदाहरण समस्या (अ) में दिये हैं।

4. सम्भावित समाधान (Possible Solutions) : यद्यपि इस समस्या को पूरी तरह से हल तो नहीं किया जा सकता, पर फिर भी कुछ उपाय इसे कम करने के किये जा सकते हैं–

- ऐसे ऊर्जा के स्रोतों का उपयोग कम करें जिससे SO_2 या NO_2 का उत्सर्जन अधिक हो।
- उद्योगों में स्क्रबर्स (Scrubbers) के उपयोग से उत्सर्जित होने वाली SO_2 गैस को स्रोत पर ही रोक लिया जाय।
- द्विपहिया वाहनों का उपयोग कम किया जाय।
- कारों में Catalytic Converter लगाये जायें।
- पानी और मिट्टी में चूने का उपयोग करे, जिससे उनकी अम्लीयता कम हो सके।

(स) ओजोन पर्त की क्षीणता (Ozone Layer Depletion)

1. समस्या और कारण (Problem and Cause) : वायुमण्डल में ओजोन का निर्माण एक स्वाभाविक प्राकृतिक क्रिया है। जब सूर्य की किरणें वायुमण्डल की ऊपरी सतह से टकराती हैं, तो उच्च ऊर्जा विकिरण से ऑक्सीजन (O_2) का कुछ भाग अणु ऑक्सीजन (O) से मिलकर ओजोन (O_3) में बदल जाता है। ऐसा वायुमण्डल में विद्युत अपघटन तथा मोटर वाहनों के विद्युत स्पार्क से भी होता है।

यह ओजोन एक पर्त रूप में स्ट्रेटोस्फीयर (समताप मण्डल) में पृथ्वी से लगभग 30 किलोमीटर की ऊँचाई पर रहती है। यह वस्तुतः एक रक्षा कवच के रूप में कार्य करती है और सूर्य के प्रकाश से पराबैंगनी (Ultra Violet) किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है। पराबैंगनी किरणें बहुत ही हानिप्रद हैं और इससे 'त्वचा कैन्सर' का खतरा रहता है।

ओजोन की मात्रा लगभग 10 ppm अर्थात् 10 लाख वायु परिमाण में 10 भाग है और सम्पूर्ण पृथ्वी पर हानिप्रद किरणों को वायुमण्डल से ऊपर ही रोके रखने का कार्य एक निश्चित क्रिया के अनुसार करती रहती है। पर अभी पिछले कुछ वर्षों में सुख-साधन की दिशा में 'क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स' का निर्माण कर हमने स्वयं आत्मघाती हथियार चला दिया है। क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग शीत उपकरण जैसे एअर कन्डीशनर्स, रेफ्रीजरेटर्स तथा अन्य उपकरणों में कूलेन्ट्स (ठंडा करने का पदार्थ) के रूप में किया जाता है; जिसका एक गुणधर्म यह भी है कि एक बार वायुमण्डल में छोड़े जाने पर यह नष्ट नहीं हो सकते और सीधे वायुमण्डल की ओजोन पर्त पर हमला कर उसे नष्ट करते हैं। क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स में उपस्थित

क्लोरीन ओजोन को ऑक्सीजन में विघटित कर देती है। इससे सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों (Ultra-violet Rays) को वायुमण्डल में से प्रवेश का अवसर मिल जाता है।

अमेरिका द्वारा पूर्व में चलाये जाने वाले 'कान्कोर्ड' वायुयान की अत्यन्त तेज चाल और तेज ध्वनि से ओजोन पर्त के विघटन की आशंका हो गई थी, जिसे मानव हित में प्रतिबन्धित कर दिया गया था। अब इसी सन्दर्भ में यह प्रयास किये जा रहे हैं कि CFC (क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स) का कोई ऐसा विकल्प बनाया जाय जिससे वर्तमान में हो रहे ओजोन पर्त के विघटन को रोका जा सके।

2. ओजोन पर्त की वर्तमान स्थिति (Present Status of Ozone Layer) : ओजोन सूर्य की अधिक गर्मी से भूमध्य रेखा पर अधिक बनती है। स्ट्रेटेस्फीयर (समताप मण्डल) से चलने वाली हवायें इस गैस को फिर पूरी पृथ्वी पर फैला देती हैं और इस तरह ओजोन पर्त की तह विरल हो जाती है। इससे पूर्व हम यह बता चुके हैं कि सूर्य से आने वाली UV किरणें ओजोन पर्त को लगातार छेदन कर पृथ्वी तक पहुँचने में लगी रहती हैं। इन दोनों कारणों से पृथ्वी के उस भाग में जहाँ पर सामान्यतया ओजोन रहती है, ओजोन पर्त की मोटाई कम होती जाती है। यह अंटार्टिका ध्रुव पर अधिक है। भूवेत्ता इसे छेद (Hole) के नाम से पुकारने लगे हैं। यह तो प्रकृति की कृपा है कि येन केन प्रकारेण वह इस पर्त को पुनः ठीक से स्थापित करती रहती है।

3. ओजोन पर्त के विघटन से सम्भावित दुष्प्रभाव (Possible Illeffects due to Ozone Layer Depletion) : ओजोन पर्त के विघटन से या न होने से कितने ही प्रकार के दुष्प्रभाव मनुष्य जीवन तथा उससे सम्बन्धित क्रियाकलापों पर हो सकते हैं—

- कई प्रकार की फसलों की मात्रा और गुणवत्ता में कमी,
- समुद्रीय परितंत्र का विघटन; अनेक वनस्पतियों और जलचरों के समाप्त होने की आशंका,
- मनुष्य पर कई जान लेवा रोगों का आक्रमण जैसे त्वचा कैन्सर, आँखों का मोतियाबिन्दु, इम्यून सिस्टम बिगड़ना आदि,
- भवनों की सामग्री का क्षय,
- स्मोग के बनने में योगदान आदि।

4. ओजोन पर्त को बचाने हेतु प्रयास (Efforts to save the Ozone Layer) : यह बहुत बड़ी जनसाधारण से सम्बन्धित विश्वस्तरीय ऐसी समस्या है, जिसके भविष्य में बहुत गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। अतः जनसाधारण से तो यही अपील है कि वे शनैः-शनैः उन उपकरणों का प्रयोग कम कर दें, जिनमें क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग होता है। घर में विशेषतः ऐसे उपकरण रेफ्रीजरेटर तथा एअर कन्डीशनर्स हैं। वैसे परफ्यूम में काम आने वाले ऐरोसोल्स (Aerosols) खेतों में छिड़काव की दवाइयाँ आदि भी प्रतिबन्धित होती हैं, क्योंकि एक बार इनमें की CFC जब वायुमण्डल में पहुँच जाती है तब वह कालान्तर तक नष्ट नहीं होती।

इस समस्या से जूझने के लिये विश्व स्तर पर प्रयास सन् 1985 से ही वियना समारोह, आस्ट्रिया (Vienna Convention, Austria) से प्रारम्भ हो गये थे, जहाँ पर इस बात पर विषद चर्चा हुई कि ओजोन पर्त के विघटन को रोकने के लिये विश्व के सभी देशों को मिलकर प्रयास करना चाहिये। सन् 1987 में मान्ट्रियल : कनाडा (Montreal : Canada) में एक पुनः बैठक (सम्मेलन) में दस्तावेज तैयार किया गया। जिसे मान्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol) के नाम से प्रसारित किया गया। भारत ने उस समय इस सम्मेलन में केवल प्रेक्षक (Observer) की भूमिका निवाही थी, पर बाद में उसने इस प्रोटोकोल पर हस्ताक्षर कर दिये। यह प्रोटोकॉल जून 1990 से स्वीकृत माना गया।

सन् 1989 में हेलेसिंकी : डेनमार्क (Helesinki : Denmark) में एक सभी यूरोपियन देशों तथा 82 अन्य देशों ने एक सम्मेलन आयोजित कर ओजोन पर्त के बचाने और सुरक्षित रखने के लिये समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया, जिससे CFC's के उत्पादन को और प्रयोग को रोका जा सके। भारत ने इस प्रोटोकॉल पर नवम्बर 1992 में हस्ताक्षर किये और 17.9.92 से इसको अपने देश में लागू माना गया।

भारत में ओजोन विघटन करने वाले पदार्थों के उत्पादन हेतु नियम (Regulation and Control Rules, 2000) बनाये हैं जिन पर कार्य चल रहा है। उन्हीं नियमों में एक समयबद्ध सारणी को भी समावेश किया गया है—

सारणी 7·3
भारत का ओजोन विघटन वाले पदार्थों के लिये प्रस्तावित निस्तारण कार्यक्रम

क्र० सं०	कार्यकलाप का नाम	निस्तारण तिथि
1.	ऐरोसोल उत्पादनों का निर्माण (Manufacture of Aerosol Products)	1.1.2003
2.	फोम उत्पादन हेतु पोलियोल का निर्माण (Manufacture of Polyol for Foam Products)	1.1.2003
3.	फोम उत्पादन (घरेलू रेफ्रीजरेटर्स सहित) का निर्माण (Manufacture of Foam Products including Foam of Domestic Refrigerators)	1.1.2003
4.	अग्नि शमन यंत्रों का निर्माण (Manufacture of Fire Extinguishers)	1.1.2001
5.	मोबाइल एअर कन्डीशनर्स का निर्माण (Manufacture of Mobile Air Conditioners)	1.1.2003
6.	अन्य सभी प्रकार के शीत उपकरणों का निर्माण (Manufacture of other Refrigeration & Products)	1.1.2003
7.	हाइड्रोक्लोरोफ्लूरोकार्बन्स के विविध उत्पादनों का निर्माण (Manufacure of Different Products using HCFC's)	1.1.2040
8.	मिथाइल ब्रोमाइड का उपयोग (Use of Methyl Bromide)	1.1.2015

स्रोत : Annual Report 2000-2001, Ministry of Environment and Forests, Govt. of India, New Delhi, p. 179.

अन्तर्राष्ट्रीय ओजोन पर्त सुरक्षा दिवस (The International Day for Protection of Ozone Layer) को प्रति वर्ष 16 सितम्बर को राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर मनाया जाता है। जनसाधारण को इस समस्या से अवगत कराने हेतु अन्य कई सेमीनारें, कार्यगोष्ठियाँ, सिम्पोजियम आदि आयोजित किये जाते हैं। एक द्विमाही (Bimonthly) पत्रिका (वातिस, VATIS) का प्रकाशन भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय स्तर पर नियमित रूप से किया जाता है।

(द) स्मोग (Smog)

1. समस्या और कारण (Problem and Cause) : यह शब्द वस्तुतः SMOGUE का अपभ्रंश है : SMOKE + FOGUE (धुआँ + कुहरा) या यों कहें कि स्मोग एक धुएँ, विषैली गैसें, वायु में तैरते अनेक तत्त्व व कार्बन के कण और पानी की भाप की मिली-जुली वह एक पर्त है जो पृथ्वी से कुछ ऊँचाई पर वायुमण्डल में एक आवरण सा बनाकर कुछ आवासीय भागों को ढँक लेती है। कुछ देर बाद ही ऑक्सीजंन की कमी के कारण लोगों को साँस की कठिनाई शुरू होती है और दम घुटने लगता है। निष्कर्ष सैकड़ों-हजारों प्राणियों का जीवन-अन्त। कितनी भयावह स्थिति है, कल्पना करें। इसका मुख्य कारण उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाले धुएँ व उनसे ही निकलने वाले विभिन्न तत्त्वों के सूक्ष्म कण (suspended particulate matter) हैं जिसकी कुछ भयावहता उद्योगों में लगाये जाने वाले नियन्त्रण उपकरणों (Treatment Plants) तथा चिमनियों की ऊँचाई में वृद्धि करके कम तो किया जा सकता है, पर एकदम रोका नहीं जा सकता।

सर्वप्रथम इस प्रकार की घटना का उल्लेख 1940 में लास ऐंजिल्स (अमेरिका) का मिलता है, जबकि SMOG के कारण कई हजार मौतें हुईं। 1952 की लंदन की घटना का तो अब नाम ही 'लंदन घटना' (London Episode) पड़ गया है जिसमें 4-5 हजार लोगों की साँस लेने की कठिनाई के कारण दम घुटने

से हुई मृत्यु का विवरण मिलता है। इन प्रकरणों के आधार पर ही अब बड़े-बड़े उद्योगों के बहुत निकट आवासीय कॉलोनी के निर्माणों को कम किया जा रहा है जिससे उपर्युक्त प्रकार की दुर्घटनाओं से बचा जा सके।

2. हानिकारक परिणाम (Ill Effects) : स्मोग, यह विषैला धुआं, श्वसन क्रिया को बुरी तरह प्रभावित करता है। दम घुटने लगता है, और यदि व्यक्ति काफी लम्बी अवधि तक इसमें फंस जाय तो वह मर भी सकता है। अस्थमा के रोगी को तो यह कुछ मिनट भी सहन नहीं है।

3. सम्भावित समाधान (Possible Solutions) : स्मोग कम-से-कम बने या बिल्कुल न बने यही इसका एक उत्तम और अन्तिम उपाय है। पर फिर भी वह स्थिति कैसे आवे इस हेतु कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं—

- कम धुंऐ वाले ईंधन का प्रयोग करें। खाना बनाने के लिये LPG या CNG गैस का उपयोग हो तो उत्तम है।
- स्वचालित वाहनों के कम उपयोग से उत्सर्जित धुंऐ की मात्रा में कमी आयेगी। सामूहिक बस अथवा बाइसिकिल काम में लें।
- द्विपहिया वाहन में टयूनिंग ठीक रखें, इससे उत्सर्जन की मात्रा कम होगी तथा धुंआ कम निकलेगा।
- कारों में Catalytic Converters का उपयोग करें; वैसे अब नये models में इस उपकरण की आवश्यकता नहीं है।

4. केन्द्रीय सरकार द्वारा किये जा रहे उपाय (Measures taken by Central Government) : भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने परिवहन विभाग तथा केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल के सहयोग से वायु में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों की जानकारी करने हेतु अनेक निगरानी केन्द्र स्थापित किये हैं लेकिन उनकी उपयोगिता केवल जानकारी प्राप्त करने तक सीमित है। कोई व्यावहारिक लाभ दिखाई नहीं देता। लाभ तो तभी होगा जब कि जनसाधारण में चेतना जाग्रत हो।

वायु प्राकृतिक संसाधन का एक प्रमुख अंग है, जिसकी पूरे जीवनपर्यन्त आवश्यकता है। साथ ही वह स्वच्छ भी हो और निरापद भी। अतः यदि बहुत सारे कार्यों के सम्पन्न करने में आलस्य व कठिनाई हो तो एक बात अवश्य करें। भरपूर वृक्षारोपण करें, उनकी सुरक्षा करें। कम-से-कम आपके घर के तथा उसके आस-पास के क्षेत्र की हरियाली से आप और आपका परिवार तो सुखी प्रसन्नचित्त और रोगरहित रहेगा।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. वायु क्या है ? इसमें घटक गैसों की भागीदारी बताइये।
2. वायु के विभिन्न अवयवों की क्या-क्या विशिष्ट भूमिकायें हैं ?
3. वायु के व्यावहारिक उपयोगों के बारे में बताइये।
4. विश्व तापमान क्या है ? विश्वतापन में हरितगृह प्रभाव का क्या योगदान है ?
5. ओजोन पर्त कहाँ स्थित है ? इसे विघटन से बचाने के लिये क्या किया जाना अपेक्षित है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. वायु के विभिन्न गुण (Properties) क्या-क्या हैं ?
7. हरितगृह गैसें कौन-कौन सी हैं और वह कैसे उत्पन्न होती हैं ?
8. अम्लीय वर्षा के क्या कारण हैं ? उससे क्या-क्या हानियाँ सम्भव हैं ?
9. 'स्मोग' गैसे बनता है ? इस समस्या को कैसे कम किया जा सकता है ?
10. 'हरितगृह प्रभाव' को कम करने में वृक्षों की क्या भूमिका है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. निम्न में से कौन-सी गैस हरितगृह गैस नहीं है ?

(अ) मीथेन (ब) कार्बन डाइऑक्साइड
(स) ऑक्सीजन (द) नाइट्रस ऑक्साइड

12. वायु में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा लगभग है—
(अ) 4·0% (ब) 0·4%
(स) 0·04% (द) 0·004%

13. अम्लीय वर्षा का pH मान हो सकता है—
(अ) 0 से 7 तक (ब) 7
(स) 7 से अधिक 14 से कम (द) 14

14. विश्वतापन का मुख्य कारण है—
(अ) अम्लीय वर्षा (ब) ओजोन पर्त का विघटन
(स) हरितगृह प्रभाग (द) स्मोग

15. स्मोग से मनुष्य को सबसे अधिक हानि निम्न प्रकार होती है—
(अ) साफ न दिखना (ब) श्वसन रोग
(स) वायुमण्डल में तापवृद्धि (द) काली वर्षा का होना

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

16. .... किरणें त्वचा केन्सर का कारण बनती हैं।
17. कार्बन डाइऑक्साइड गैस के अवशोषण के लिये .... बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।
18. .... गैस अम्लीय वर्षा लाती है।
19. पशु तथा मनुष्य के मलमूत्र से .... गैस का उत्सर्जन होता है।
20. वायु में गति होने पर उसे .... कहते हैं।

8

जल
[WATER]

• प्रस्तावना
(Introduction)

जल प्रकृति से विरासत में मिला वह संसाधन (Resource) है जो ब्रह्माण्ड में सृष्टि को बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण ही नहीं बल्कि एक आवश्यक घटक की भूमिका निभाता है। जल है तो जहान है, इसके विपरीत जल नहीं तो कुछ भी नहीं। वस्तुतः जल ही जीवन है। Goeche के अनुसार, **"प्रत्येक वस्तु जल से ही उत्पन्न हुई है और प्रत्येक वस्तु जल के द्वारा ही जीवित है।"**

जितने भी जीवधारी (प्राणी व पौधे) हैं उनकी संरचना में पानी का एक बड़ा भाग है। मनुष्य के स्वयं की बनावट में 65 प्रतिशत पानी है। यही नहीं बल्कि उसकी सम्पूर्ण क्रियाओं में और उसके स्वयं के रखरखाव में भी पानी का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। यह हड्डियों के बीच के जोड़ों को चिकना बनाये रखता है, ताकि वे आपस में रगडकर एक-दूसरे को हानि न पहुँचावें। ऊतक (Tissues) और पेशियों (Muscles) को घेर कर उन्हें आपस में चिपकने से रोकता है। शरीर के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अवयव, जैसे हृदय, मस्तिष्क आदि को पानी से बने द्रव का एक कवच संरक्षण प्रदान करता है। और तो और यह शरीर के अन्दर महत्त्वपूर्ण संचार माध्यम भी है तथा शरीर के विभिन्न हिस्सों के बीच सम्पर्क बनाये रखता है। यही पोषक तत्त्व, ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड का वाहक है और शरीर के मलिन पदार्थों को पसीना, मल और मूत्र के जरिये से बाहर ले जाता है। इसी कारण पानी की कमी मनुष्य को सहन नहीं हो पाती और अधिक जल की कमी से उसकी मृत्यु हो जाती है।

पेडों और वनस्पतियों में हरियाली इसी के कारण है। फल-फूल, सब्जी और कोई भी प्रकृति में उत्पन्न होने वाली वस्तु जल के बिना हो सके यह सम्भव नहीं। इसके बाद उसकी वृद्धि और उपयोगिता भी केवल जल के कारण है। मनुष्य को पानी की नितान्त आवश्यकता है। वृक्ष में 40 प्रतिशत तक पानी होता है। कुछ जलीय पौधों में तो जल की मात्रा 90 प्रतिशत तक हो सकती है। जैलीफिश (समुद्री जानवर) में 95 प्रतिशत, अंडे में 74 प्रतिशत और ककडी में 95 प्रतिशत जल की मात्रा होती है।

हम प्यास लगने पर पानी पीते हैं, भोजन पकाने में जल का उपयोग करते हैं, खेती करते हैं, नहाते हैं, कपड़े धोते हैं, कारखानों और उद्योगों को चलाते हैं और तो और अब बिजली का उत्पादन भी पानी से करने लगे हैं। सभी जगह हर समय ही जल का उपयोग आवश्यक होता है। पशु-पक्षी भी तो बिना पानी के कैसे जीवित रह सकते हैं ? सच तो यह है कि जल सारे संसार और उसकी विभिन्न गतिविधियों का आधार है।

• जल की संरचना
(Constitution of Water)

जल एक यौगिक है जिसका एक अणु (Molecule) हाइड्रोजन के दो परमाणु (Atoms) तथा ऑक्सीजन के एक परमाणु (Atom) के मिलने से बना है। यौगिक होने के कारण इसकी संगठनात्मक रचना (H_2O) में कोई अन्तर होने का प्रश्न ही नहीं है लेकिन, चूँकि यह एक अच्छा विलायक है अतः स्थान, वातावरण तथा अनेक क्रिया-प्रक्रिया में कई चीजें इसमें मिल जाती हैं और यह अशुद्ध हो जाता है। अतः विशुद्ध जल का सामान्यतया मिलना बहुत कठिन है। प्रयोगशालाओं के उपयोग हेतु अवश्य आसवन क्रिया से शुद्ध जल प्राप्त किया जाता है।

• जल के गुणधर्म
(Properties of Water)

शुद्ध जल रंगहीन, स्वादहीन, गन्धहीन, हानिकर रसायनों और जीवाणुओं से मुक्त तथा पारदर्शी होता है। यह हल्का होता है। यद्यपि इसका घनत्व आदर्श स्थिति में 4° सेल्सियस पर 1·0 (1 ग्राम प्रति घन सेमी) ही होता है पर तापमान कम होने के साथ-साथ घनत्व कम होता जाता है। स्पष्ट है तभी बर्फ के रूप में जल पानी की सतह पर तैरने लगता है। इसका जमाव बिन्दु (freezing point) 0° सेल्सियस तथा क्वथनांक बिन्दु (boiling point) 100° सेल्सियस होता है।

पीने योग्य पानी में प्रदूषक तथा अन्य तत्त्वों की स्वीकार्य सीमा
(Tolerance Limits of Pollutants and Other Elements in Potable Drinking Water)

गुण/पदार्थ	सहन सीमा BIS* स्तर	सहन सीमा ICMR** स्तर
1. रंग, हेजेन यूनिट्स	10	5-25
2. गंध	—	—
3. स्वाद	—	—
4. पीएच मान	6·5-8·45	7-8·5
5. लोहा (मिग्रा/लीटर)	0·3	0·3
6 कैलशियम (मिग्रा/लीटर)	75	75
7. मैगनेशियम (मिग्रा/लीटर)	30	50
8. मैंगनीज (मिग्रा/लीटर)	0·1	0·1
9. सल्फेट्स (मिग्रा/लीटर)	150	200
10. क्लोराइड्स (मिग्रा/लीटर)	250	200
11. फिनोलिक यौगिक (मिग्रा/लीटर)	0·001	0·001
12. सीसा (मिग्रा/लीटर)	0·01-0·1	0·01-0·1
13. आर्सेनिक (मिग्रा/लीटर)	0·05	0·05
14. सेलेनियम (मिग्रा/लीटर)	0·01	0·01
15. कैडमियम (मिग्रा/लीटर)	0·01	0·01
16. क्रोमियम (मिग्रा/लीटर)	0·01	0·01
17. पारा (मिग्रा/लीटर)	0·001	0·001
18. चांदी (मिग्रा/लीटर)	0·01	0·01
19. बैनम (मिग्रा/लीटर)	0·1	0·1
20. साइनाइड्स (मिग्रा/लीटर)	0·05	0·05
21. नाइट्रेट्स (मिग्रा/लीटर)	15	20
22. फ्लोराइड्स (मिग्रा/लीटर)	0·6-1·2	1·0
23. जस्ता (मिग्रा/लीटर)	5·0	5·0
24. कठोरता	300	300

* BIS : Bureau of Indian Standard
** ICMR : Indian Council of Medical Research

• जल के रूप
(Forms of Water)

जल ठोस, द्रव तथा गैसीय तीनों अवस्थाओं में स्वतन्त्र रूप से स्थिर (stable) रह सकता है। ठोस के रूप में बर्फ, द्रव के रूप में सामान्य जल तथा गैसीय रूप में भाप बन जाता है। इन तीनों रूप में केवल अवस्था में परिवर्तन होता है, गुणधर्म में कोई अन्तर नहीं होता है।

• जल की उपलब्धता
(Availability of Water)

भू-मण्डल में जल के अपार भण्डार हैं। इसकी विशालता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि यह वायुमण्डल और स्थलमण्डल के मध्य एक आवरण की तरह पृथ्वी को सब ओर से घेरे हुए है। यह पूरी पृथ्वी का 7/10 भाग है और आयतन में लगभग 1400 मिलियन घन किमी (एक अरब 40 करोड़ घन किमी) है। इस पानी के पूरे आवरण को जलमण्डल (Hydrosphere) कहते हैं। पृथ्वी की सतह का लगभग तीन-चौथाई तथा पूरे पानी की लगभग 97 प्रतिशत मात्रा महासागर तथा समुद्रों में सिमटी है, जबकि शेष 3% अलग-अलग रूप में अलग-अलग स्थानों पर है।

विश्व में कुल पानी की मात्रा को स्रोतों के आधार पर आगे दी गई सारणी में प्रस्तुत कर रहे हैं—

सारणी 8·1
स्रोतों के आधार पर जलमण्डल में जल की मात्रा

(हजार घन किमी में)

क्रम संख्या	स्रोत	जल का प्रतिशत	मात्रा (हजार घन किमी में)
1.	महासागरों में	97·2%	13,60,800·00
2.	भूमि से घिरे समुद्र व खारी झीलों में	0·008%	112·00
3.	ग्लेशियर्स तथा ध्रुवों पर जमी बर्फ	2·15%	30,100·00
4.	भूगर्भ में	0·625%	8,750·00
5.	नदियों और मीठे जल की झीलों में	0·0091%	127·40
6.	वायुमण्डल में	0·001%	14·00
7.	अन्य भण्डारण	0·0069%	96·60
	कुल जल मात्रा	100·00%	14,00,000·00

इसमें हम देखते हैं कि शुद्ध पानी की मात्रा 2·792% ही है जिसमें से 2·15% ग्लेशियर्स तथा ध्रुवों पर बर्फ के रूप में जमा है। अर्थात् कुल जल का 0·642% ⇒ 0·65% (1% से भी कम) शुद्ध जल हमें उपलब्ध है। पीने के लिये पानी की उपलब्धता वाष्पीकरण (Evaporation) तथा निर्जलन (Precipitation) प्रक्रिया से ही अन्तिम रूप से होती है। Charles H. Southwick[1] अपनी पुस्तक Ecology and the Quality of our Environment में लिखिते हैं कि यह वाष्पीकरण प्रक्रिया से मिलने वाली मात्रा लगभग 37,000 घन किमी ही है। अतः पीने के पानी की कमी आज बढ़ती मांग के सन्दर्भ में कमी होने लगी है।

Water Newsletter, IRC, the Hague (Netherlands), No. 247, February 1997 ने पानी का वितरण निम्न प्रकार दिया है—

समुद्रों/महासागरों में	97·5%
ग्लेसियर, ध्रुवों तथा भूगर्भ, नदियों और झीलों में (शुद्ध जल)	2·5%
कुल	100%

इनके हिसाब से पीने योग्य पानी जो नदी, झीलों तथा अन्य भण्डारों में है, उसकी कुल मात्रा शुद्ध जल का 0·26% है। यह पृथ्वी के कुल जल का 0·007% ही है जो renewable भी है और sustainable भी।

जल के सम्बन्ध में कुछ जानने योग्य बातें
(Some Important Points about Water)

- विश्व में जल की कुल मात्रा 1·4 हजार मिलियन घन किमी है।
- शुद्ध पानी की मात्रा कुल जल की मात्रा के लगभग 3% ही है।
- पीने योग्य पानी की उपलब्धता वर्तमान में कुल 37,000 घन किलोमीटर है, जिसका 50% ही पूरा विश्व इस समय उपयोग कर रहा है।
- सजीव वस्तुऐं अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये अपने भार का बड़ा भाग जल का रखती हैं :
- मनुष्य में 65%, हाथी में 70% पानी होता है।
- निर्जीव वस्तुओं में भी जल की मात्रा भारी प्रतिशत में होती है : आलू में 80%, टमाटर में 95% जल है।
- पृथ्वी पर जल कभी समाप्त नहीं हो सकता है, क्योंकि यह एक निश्चित जल चक्र से पुनः व्यय होकर वापिस आ जाता है।
- एक मनुष्य अपने पूरे जीवन (आयु 100 वर्ष) में लगभग 60,000 लीटर पीने के काम में लेता है। प्रति दिन उसकी जल के पीने की खपत 5 से 6 लीटर तक मानी गई है।
- जल पदार्थ तीनों अवस्थाओं, (1) ठोस (बर्फ), (2) द्रव (जल) और (3) गैसीय (जल वाष्प) में मिलता है।
- महासागरों के जल में लवण की मात्रा 35 ग्राम प्रति लीटर होती है।

• विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त जल के गुणधर्म
(Properties of Water Procured from Different Sources)

यह एक प्राकृतिक पदार्थ है जो हमें विभिन्न साधनों से प्राप्त होता है। इसके उपयोग की तथा इसके महत्त्व की चर्चा हम पहले भी कर चुके हैं। अब इनके कुछ गुण-धर्मों की चर्चा कर लें।

1. **महासागर तथा समुद्री जल** (Ocean & Sea Water) : यह जल खारा तथा अनेक लवणों से युक्त है। स्थिर जल के अलावा वर्षा तथा नदियों के जल के मिलने से अनेक प्रकार की वायुमण्डल तथा सतही गन्दगियाँ इसमें आ मिलती हैं। अतः यह न तो पीने योग्य होता है और न किसी उद्योग अथवा खेती के काम आ सकता है। इसमें विभिन्न प्रतिशत में क्लोरीन, सोडियम, मैग्नीशियम, सल्फर, कैल्शियम, पोटैशियम, ब्रोमीन, स्ट्रोनशियम और बोरोन के घुलनशील लवण होते हैं। इनके अतिरिक्त कार्बन, सिलीकोन, एल्युमिनियम, फ्लोरीन तथा आयोडीन भी सूक्ष्म मात्रा में मिश्रित होती है। अघुलनशील तथा तैरने वाले पदार्थों की कुछ मात्रा स्थान विशेष के आधार पर हो सकती है, क्योंकि उद्योगों और अनेक प्रकार के कारखानों से निकले हुए अपशिष्ट भी अन्ततोगत्वा इन्हीं में जा मिलते हैं।

पानी की अधिकतम विशाल मात्रा (लगभग 97 प्रतिशत) लिए यह आवागमन के लिए सहायक साधन के अतिरिक्त पानी के जानवरों (विभिन्न प्रकार की मछलियाँ) की प्राप्ति के साधन भी बनते हैं।

महासागरों और समुद्रों को लवणता की तीव्रता इससे जानी जा सकती है कि सामान्यतया इनके

---

1. Charles H. Southwick, Ecology and the Quality of Our Environment (Newyork : D. Van Nostrand Company, 1972), pp. 276-77.

प्रति 1 लीटर जल में नमक की मात्रा 35 ग्राम होती है। अतः इस जल के सेवन से मनुष्य मर जाता है। मनुष्य अधिकतम 1 लीटर में 5 ग्राम नमक ही सहन कर सकता है।

2. नदियों का जल (River Water) : पहाड़ों की बर्फ से पिघला हुआ पानी व वर्षा का पानी नदियों के रूप में पृथ्वी पर बहने लगता है। इसमें रास्ते की गन्दगी और अनेक अनचाही वस्तुएँ मिल जाती हैं। नदी के किनारे बसने वाले लोग इसमें कपड़े धोते हैं, बर्तन माँजते हैं और अपने घरों का कूड़ा-करकट तथा गन्दे पानी को भी इसी में डाल देते हैं। इस प्रकार साफ-सुथरा पानी गन्दा और पीने के अयोग्य हो जाता है, लेकिन पानी के निरन्तर और अधिक आवक से ये अशुद्धियाँ कम हो जाती हैं और इसे कहीं-कहीं छोड अन्य स्थानों से पीने के काम में ले लेते हैं। अपने देश में यह जल प्राप्त करने का एक मुख्य साधन है।

3. वर्षा का जल (Rain Water) : समुद्र तथा पृथ्वी की सतह से वाष्प बनकर जल ऊपर वायुमण्डल में जाता है तथा वहाँ से आर्द्रता पाकर वर्षा के रूप में जमीन पर आ गिरता है। सामान्यतया इसमें कोई अशुद्धियाँ नहीं होती हैं और इस पानी का संचय कर पूरे वर्ष तक पीने व अन्य घरेलू कार्य हेतु काम में ले लेते हैं। भारत जैसे देश में जहाँ पानी प्राप्त करने के साधन बहुत सीमित हैं वहाँ इसे बहुत निरापद और श्रेष्ठ मानते हैं। खेती में भी इस पानी का अधिकाधिक उपयोग होता है। यह पानी भूमिगत जल में भी वृद्धि करता है और कुओं और तालाबों में पानी की आपूर्ति में सहायक होता है।

वर्तमान में जहाँ उद्योगों तथा कारखानों से निकली हुई प्रदूषित गैसें जब वायुमण्डल में इस बरसते पानी में मिल जाती हैं, तब यह वर्षा का पानी अशुद्ध हो जाता है। विशेषकर सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स के साथ तो यह क्रमशः सल्फ्यूरिक तथा नाइट्रिक अम्ल बनाते हैं, जो इमारतों को और खड़ी फसलों को हानि पहुँचाते हैं।

4. झीलों का जल (Lake Water) : यह पृथ्वी की सतह पर प्राकृतिक रूप से बने हुए पानी के भण्डार हैं। इनका पानी शुद्ध, स्वच्छ, मीठा और पीने योग्य होता है। अन्य अनेक घरेलू कार्य हेतु भी इसका उपयोग करते हैं।

5. तालाब या पोखरों का जल (Tank or Pond Water) : गाँव के निचले स्थानों पर वर्षा के पानी को इकट्ठे होने का स्थान मिल जाता है और यह स्थानीय संगृहीत पानी का भण्डार होता है। इसे सामान्यतया पोखर कहते हैं। किनारों पर लोगों की सुविधा के लिए पक्का कर देने से इसी को तालाब के नाम से बोलते हैं।

गाँवों में पानी का यह एक आम और खास साधन होता है, लेकिन पशुओं के सीधे इसमें घुसकर पानी पीने से तथा लोगों द्वारा कपड़े धोने और कई प्रकार की गन्दगियाँ करने से यह पानी अशुद्ध हो जाता है और सीधे पीने योग्य नहीं रहता।

6. झरनों का जल (Spring Water) : वर्षा का पानी पहाड़ी चट्टानों के बीच इकट्ठा हो जाता है और फिर धीमे-धीमे यह किसी स्थान से गिरने लगता है। यह अत्यन्त निर्मल और शुद्ध जल होता है जिसे सीधे पीने के काम में ले सकते हैं।

7. कुओं का जल (Well Water) : वर्षा का पानी जमीन द्वारा सोख लिए जाने पर भूमिगत जल बन जाता है। अतः जब जमीन को खोदते हैं तो यह पानी निकल आता है और खोदे हुए स्थान कुएँ कहलाते हैं। इनमें पानी की सीमित मात्रा होती है लेकिन काम में लेने पर यह प्राकृतिक रूप से भूमिगत जल से अपना स्तर निरन्तर बनाये रखते हैं। ये स्रोत पीने तथा खेती के लिए समान रूप से काम में आते हैं।

इन कुओं को अधिक गहरा करने पर इनके पानी की मात्रा को बढ़ा सकते हैं। ऐसे गहरे कुएँ जिनका पानी कभी नहीं समाप्त होता, पाताल तोड़ कुएँ कहलाते हैं, क्योंकि ये सीधे भूमिगत जल के भण्डारों से मिल जाते हैं।

8. बावड़ियों का जल (Open Well Water) : जिन कुओं का आकार बडा होता है और जहाँ पानी तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी होती हैं, वे बावड़ियाँ कहलाती हैं। इनका स्रोत तथा उपयोग दोनों ही कुओं के प्रकार का होता है। अन्तर केवल इतना है कि कुओं से पानी किसी रस्सी या हैन्डपाइप द्वारा खींच कर निकाला जाता है, वहीं बावड़ियों से सीधे किसी बर्तन से लिया जा सकता है।

बावड़ियों में लोगों के पानी से सीधा सम्पर्क होने से वह प्रदूषित हो जाता है। अपने देश के राजस्थान जैसे प्रदेश में जहाँ पूर्व में बावड़ियों का बहुत चलन रहा, वहाँ के लोग 'नारू' रोग से ग्रसित होते रहे हैं, जो अत्यन्त जानलेवा और खराब रोग है। यदि इन्हें ढँककर रखें और इनका उपयोग ठीक हो तो यह पानी की पेयजल पूर्ति के अच्छे साधन होते हैं।

9. नलों का जल (Tap Water) : बड़े-बड़े पानी के भण्डार जैसे झील अथवा बाँध अथवा गहरे कुएँ के पानी को मशीनों द्वारा खींचकर और उसे सुविधाजनक तकनीकी से शुद्ध कर शहर या गाँवों के किसी ऊँचे स्थान पर बनाई गई टंकियों में पहुँचा दिया जाता है। यहाँ से यह पाइपों द्वारा घर-घर में उपलब्ध करा दिया जाता है। यह अपेक्षाकृत शुद्ध पानी होता है, क्योंकि इसकी शुद्धता की नियमित जाँच होती रहती है। यह पानी बहुत सीमित होता है, अतः इसका बहुत बुद्धिमता से आवश्यकतानुसार ही उपयोग करना चाहिए।

• पानी के उपयोग
(Uses of Water)

पानी के महत्त्व की चर्चा करते हुए पानी के उपयोग की बात पहले भी कही गई है, पर फिर भी प्राथमिकता तथा व्यय की दृष्टि से पानी के उपयोग की बात करना अनुचित नहीं होगा।

भारत कृषि प्रधान देश है अतः उपलब्ध पानी का अधिकतम भाग कृषि पर ही व्यय होता है। उस पर भी बढती आबादी के कारण पिछले दिनों से अधिक अन्न उपजाने की आवश्यकता हुई है, इससे कृषि कार्य हेतु और अधिक पानी व्यय होने लगा है। देश का लगभग 60-70 प्रतिशत जल इस कार्य हेतु व्यय होता है।

दूसरे स्थान पर उद्योगों अथवा विभिन्न कारखानों में पानी का प्रयोग है। इनमें बहुत पानी व्यय होता है, क्योंकि पानी के यहाँ विविध उपयोग हैं। संयन्त्रों को ठंडा करने के अतिरिक्त उत्पाद की प्रक्रियाओं में भी पानी का भारी उपयोग होता है। एक टन स्टील पिघलाने में 200 घन मीटर, एक टन निकिल के लिए 4,000 घन मीटर तथा 1 टन कागज निर्माण के लिए 100 घन मीटर पानी की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार एक टन नाइलोन के धागे निर्माण में 2500 से 5000 घन मीटर तक पानी का उपयोग होता है। शुद्ध पानी को संयन्त्र दूषित अथवा प्रदूषित कर बाहर निकालते हैं जो सामान्यतः पीने के पानी के स्रोतों से जा मिलते हैं। पर्यावरण के दृष्टिकोण से यह ठीक नहीं है तथा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। उद्योग चलाने वालों को इस निकलने वाले पानी को उपचार के बाद ही किसी स्रोत में मिलने देना चाहिए। अपने देश में इस क्षेत्र में पानी की खपत 15 से 20 प्रतिशत तक ही है, क्योंकि यहाँ उद्योग बहुत सीमित हैं। रूस में जहाँ उद्योगों की भरमार है, वहाँ का व्यय प्रतिशत 85 तक है।

पानी के व्यय के अनुसार तीसरे स्थान पर पीने का पानी है। इसमें घरेलू कार्य हेतु सभी पानी को शामिल कर सकते हैं, जिसमें नहाना, कपड़े धोना, खाना बनाना, घर के बाग-बगीचों में पानी भी सम्मिलित है। यद्यपि इसकी कुल व्यय मात्रा खेती व उद्योगों की तुलना में कम है, पर फिर भी बढ़ती आबादी के साथ इसका प्रयोग भी बढ़ रहा है। इस मद पर 5-10 प्रतिशत तक मात्रा व्यय होती है।

अब जल से विद्युत उत्पादन भी होने लगा है। यद्यपि यह बहुत सीमित है, पर पानी का एक अच्छा भाग इस हेतु भी व्यय होता है।

• पानी का बढ़ता अभाव और उसके कारण
(Increasing Scarcity of Water & Its Causes)

शुद्ध पानी के पूरे भूमण्डल पर इतने भण्डार हैं कि वह सिद्धान्ततः तथा व्यावहारिक दोनों तरह ही सामान्यतया समाप्त नहीं हो सकते, लेकिन ध्रुवों पर जमी बर्फ और ग्लेशियर्स तथा भूमिगत जल का एक बड़ा भाग हमारे कार्य में नहीं आ सकता है। फिर भी समुद्र और सतही जल के वाष्पीकरण और निर्जलन प्रक्रिया के परिणामस्वरूप जो पानी हमें मिलता है, और जिसे, चाहे हम सीधे वर्षा अथवा नदी के बहते जल को एकत्रित कर प्रयोग करें, चाहे बाँधों, झीलों और अन्य प्रकार से संगृहीत कर उपयोग में लेवें, वह मात्रा सीमित होते हुए भी काफी है। पृथ्वी पर यह मात्रा 37,000 घन किमी प्रतिवर्ष के हिसाब से उपलब्ध है, जो एक बड़ी मात्रा है और अभी कई शताब्दियों तक पानी की कमी की कोई चिन्ता करने का कारण नहीं है।

पर इन सबके होते हुए भी पानी के पूरे विश्व में, कुछ अपवादों को छोड़कर, सभी जगह अभाव की बात आ रही है। भारत में भी वही समस्याएँ हैं, इनका अवलोकन करें—

1. बढ़ती आबादी (Growing Population) : बढ़ती आबादी ने पानी का उपयोग बेतहाशा बढ़ा दिया है। पीने के पानी के अतिरिक्त भोजन हेतु, कृषि कार्यों पर तथा औद्योगिक इकाइयों में पानी का अधिक उपयोग इसके मुख्य कारण हैं।

2. पानी का असमान वितरण (Uneven Water Distribution) : जल की मात्रा सभी जगह समान रूप से उपलब्ध नहीं है। अतः इस असमान वितरण ने समस्याएँ उत्पन्न की हैं। जहाँ पानी अधिक है वहाँ न तो वहाँ के लोग पूरा उसका उपयोग कर पाते हैं, और न ही संचार माध्यम की न्यूनता से उसे कहीं और स्थानों पर भेज पाते हैं। अन्ततोगत्वा वह पानी बहकर समुद्र में जा मिलता है। अतः पानी के होते हुए भी अन्य कम पानी उपलब्ध वाले स्थान अभावग्रस्त लोगों की श्रेणी वाले स्थान बन जाते हैं।

3. बाँधों तथा ऐनीकटों का निर्माण (Construction of Dams & Anicuts) : पानी की उपलब्धि पूरे वर्ष भर अबाध गति से होती रहे इस हेतु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश में बाँधों के निर्माण का सिलसिला शुरू हुआ। बड़े-बड़े जंगल साफ कर बाँध बनाये और फिर नदियों के पानी को इनमें संगृहीत करने का प्रयास किया। प्रारम्भ में तो इनकी अच्छी उपयोगिता दिखी, क्योंकि कृषि कार्य हेतु इन जल भण्डारणों का अच्छा उपयोग होने लगा था। पर बाद में कई समस्याएँ आ गईं। बाँधों में मिट्टी के भराव के कारण उनकी भराव क्षमता कम हो गई और दूसरे नदियों का पानी जो बाँध निर्माण से पूर्व लोगों के सीधे काम आता था, उस पर रोक लग गई। बाँध अब यदा-कदा टूटने भी लगे और पानी के इस भण्डार ने विनाशलीला भी मचाई और पानी के बह जाने के कारण ये उतने उपयोग में भी नहीं आये।

इसके अतिरिक्त इन दिनों एक नयी योजना और प्रारम्भ हुई। इस योजना के अन्तर्गत जहाँ-जहाँ पर भी वर्षा का पानी आने की सम्भावना प्रतीत हुई वहीं छोटे-छोटे ऐनीकट बनाये गये। उस गाँव को या कुछ गाँवों को इससे चाहे कुछ स्थानीय लाभ भले ही मिला हो लेकिन पहले जिन जलाशयों में जहाँ काफी पानी इकट्ठा होता था वे अब खाली रहने लगे। इससे अब उस क्षेत्र के लाखों लोगों को पानी के अभाव का दुख भोगना पड़ रहा है।

4. पानी का अधिक उपयोग (Excess Use of Water) : पानी के अधिक उपयोग अथवा अनचाहे उपयोग ने भी पानी का कृत्रिम अभाव उत्पन्न किया है। पाँच-सितारा होटलों में टब बाथ व्यवस्था, फ्लश शौचालय, खुले नलों पर नहाना अथवा कपड़े धोना या दाँत माँजना, डिटरजेन्ट पाउडर का उपयोग आदि में पानी बेतहाशा व्यय होता है, जो पानी के अभाव का कारण बनते हैं। इस दुरुपयोग पर कितना पानी प्रति परिवार प्रतिदिन व्यय होता है इसका अवलोकन करें—

प्रति मनुष्य प्रति दिन जल का व्यय—

1. दाँत मंजन करना (2 लीटर),	2. शौचालय फ्लश करना (15 लीटर)
3. नलों का रिसना (10 लीटर),	4. खुले नल के नीचे हाथ धोना (5 लीटर)
5. बर्तन धोना (10 लीटर),	6. कपड़े धोना (20 लीटर)
7. शॉवर या टब बाथ (20-200 लीटर),	8. सफाई करना (15-20 लीटर)
9. पीने के लिये पानी (3 लीटर),	10. अन्य खर्च (10 लीटर)

सामान्य व्यय = 100 लीटर

बाथ टब संस्कृति = 300 लीटर

जब कि भारत के लिये आवश्यक आदर्श जल की मात्रा केवल 40 लीटर मानी गई है। सभी लोगों को पानी की नितान्त आवश्यकता की पूर्ति के लिये बनाई गई राष्ट्रीय जल नीतियाँ भी इस मात्रा के आस-पास हैं।

5. पानी का प्रदूषण (Water Pollution) : उद्योगों से अपशिष्ट जल, जिनमें अनेक प्रकार की अशुद्धियाँ होती हैं, निकाल कर उन्हें यूँ ही बिना साफ़ किये बहा दिया जाता है जो पानी के पीने के स्रोतों में जा मिलता है। इसी प्रकार घरेलू सीवेज का अन्तिम मिलन स्थल कोई न कोई पानी का स्रोत होता है। इससे वे स्रोत, जो लोगों के पीने के पानी की पूर्ति करते हैं, प्रदूषित हो जाते हैं और उनका उपयोग कम अथवा बन्द हो जाता है, जिससे पानी का अभाव होता है।

6. वर्षा जल को नहीं रोक पाना (Inability in Checking Rain Water) : एक तरफ वर्षा जल को ऐनीकट बनाकर रोकने से पानी का कृत्रिम अभाव होता है तो दूसरी तरफ ऐसी स्थिति भी आती है कि वर्षा जल जब नदी के रूप में बहता है तो उसका पूरा-पूरा उपयोग नहीं हो पाता और उसका अधिकांश पानी यूँ ही समुद्र में जा मिलता है। यदि इस पानी को ऐसे स्थानों तक पहुँचाया जा सकता जहाँ पानी का अभाव है तो दोनों ही समस्याएँ सुलझ सकती थीं। इस हेतु कई बार राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास हुए हैं, पर कोई निश्चित व्यावहारिक योजना तय नहीं हो सकी है।

• पानी के सही उपयोग हेतु सुझाव (Suggestions for Proper Use of Water)

पानी की उपलब्धता, उसके उपयोग के आधार पर आवश्यकता, कतिपय प्रकार से पानी का अभाव अथवा उसके दुरुपयोग को देखते हुए पानी के सही उपयोग हेतु कुछ सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. पानी का आवश्यकतानुसार, उचित एवं बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करें। पानी अत्यन्त सीमित है उसको कल के लिए बचावें।
2. पानी को प्रदूषित न करें। इससे जहाँ पानी का अभाव होता है वहीं प्रदूषित जल स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है। उद्योगों और कारखानों में मालिकों को चाहिए कि वे अपशिष्ट जल को साफ करके ही बाहर निकालें। कुएँ व अन्य स्थानों से जहाँ से पानी लेवें उन्हें ढँक कर रखें।
3. पानी का उचित संरक्षण करें। भारत जैसे देश में परम्परागत प्रणाली, जिसमें टाँके में वर्षा जल को इकट्ठा कर वर्ष भर उपयोग में लाने की व्यवस्था है, उपयोग में लावें।
4. पानी के दुरुपयोग को रोकें। घर के रिसते नल समय रहते ठीक हों तो काफी पानी बचाया जा सकता है।
5. पानी की बात को व्यक्तिगत विषय न समझें। इससे आपका अपना परिवार ही नहीं बल्कि पूरे समाज और पूरे देश का हित-अनहित जुड़ा है। राष्ट्रीय समस्या के सुलझाने में भागीदार बनिये। मोहल्ले में शक्तिशाली समिति गठित कीजिए और जन-साधारण को जल की समस्याओं और उसके सम्भावित निदानों से परिचित कराइए।

• जल समस्या समाधान हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास (National & International Efforts for Solving Water Problem)

1. संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन, 1977 (U. S. Water Conference, 1977)

विश्व में जल प्रदूषण और पेय जल की उपलब्धि के महत्त्व पर विचार करने हेतु 1977 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने पहला अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का जल सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन में प्रथम बार पेय जल और स्वच्छता के विषय को अन्य जल मुद्दों से अलग किया और यह सुझाव दिया कि शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों को सन् 1990 तक जल उपलब्ध कराने के लिए, जल गुणवत्ता तथा मात्रा के वास्तविक मानकों के साथ, पूर्व में अभिशंसित अन्तर्राष्ट्रीय दशक नीति को अपनाने के कार्यक्रम सम्पन्न किये जावें। सम्मेलन ने अनुमोदन किया कि प्रत्येक देश जल की अत्यधिक आवश्यकता वाली जनसंख्या को प्राथमिकता देते हुए सामुदायिक जल सप्लाई तथा स्वच्छता हेतु राष्ट्रीय योजनाएँ तथा कार्यक्रम बनावें।

इसमें पारित प्रमुख निर्णयों के प्रमुख अंश निम्न हैं—

(अ) पारित प्रस्ताव (Passed Resolutions) :

1. प्रत्येक धनाढ्य व निर्धन को, जो किसी भी रंग व जाति का हो, अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समुचित मात्रा में स्वच्छ पेय जल प्राप्त करने का अधिकार है।
2. यह सिफारिश की जाती है कि प्रत्येक राष्ट्र पेय जलदाय और जल-मल निष्कासन को प्राथमिकता देवे।
3. संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी सदस्य देशों से अनुरोध किया जाता है कि इस सम्बन्ध में कार्यक्रम बनावें कि किस प्रकार वे 1990 तक ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में स्वच्छ जल सुलभ करा पाना सम्भव कर सकेंगे।

(ब) वित्तीय लाभ (Financial Benefits) :

1. कम अस्वस्थता के कारण कम मानव शक्ति का ह्रास।
2. देश में अधिक जन शक्ति की उपलब्धता।
3. आय वृद्धि।
4. अधिक रोजगार।

(स) पर्यावरणीय लाभ (Environmental Benefits) :

1. स्वच्छ आवास, नगर और ग्राम।
2. भू-जल एवं सतही जल का कम प्रदूषण।
3. जल स्रोतों का अधिक अच्छा उपयोग।
4. बाढ़ में कमी।
5. भू-क्षरण में कमी।

2. अन्तर्राष्ट्रीय पेयजल का स्वच्छता दशक (1981-90) (International Drinking Water Cleanliness Decade, 1981-90)

संयुक्त राष्ट्र ने पेय जल एवं स्वच्छता दशक 1981-90 घोषित किया था। इसके परिणामस्वरूप 1 अप्रैल, 1981 से भारत में जल दशक कार्यक्रम की शुरूआत कर दी गई ताकि 31 मार्च, 1991 तक देश की जनसंख्या के शत-प्रतिशत लक्ष्यों को पूरा किया जा सके। इस सन्दर्भ में किये गये कार्यों के अनुरूप लाभान्वित जनसंख्या का विवरण निम्न प्रकार रहा—

सारणी 8·2
भारत में पेय जल और स्वच्छता सुविधाओं की स्थिति

क्षेत्र		लाभान्वित जनसंख्या (प्रतिशत)		
		1981	1985	1990
जलदाय :	नगरीय	72·3	72·9	86·4
	ग्रामीण	30·8	56·2	73·2
स्वच्छता :	नगरीय	55·1	28·4	44·7
	ग्रामीण	0·5	0·7	1·8

3. जल की आपूर्ति के लिये किये गये अनेक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास (Other Several International Efforts for Making Water Availability)

सारणी 8·3
जल आपूर्ति हेतु प्रयास
(1995 से अब तक)

क्र. सं. S. No.	समारोह/सम्मेलन Conference/Convention	स्तर Level	स्थान Place	तिथियाँ Dates	मुख्य विषय Main Theme
1.	Third Global Forum	International	St. Michael Barbados (West Indies)	30 Oct. to 3 Nov., 1995	People and Water Partners for Life.
2.	8th International Conference on Rain Water Catchment	"	Tehran (Iran)	21-25 April, 1997	Rain Water Catchment for Survival.
3.	Celebration of 'World Water Day'	All Countries	Different Places	22 March, 1996	Water for All.
4.	Global Water Symposium	International	Stockholm (Sweeden)	4-9 Aug., 1996	Safe-guarding Water

					Resources for Tomorrow.
5.	Fourth Global Forum	International	Manila (Philippines)	3-7 Nov., 1997	Water and Sanitation for All.
6.	International Conference on 'Water and Sustainable Development'	"	Paris (France)	19-23 Mar., 1998	Fresh Water for All.
7.	9th Stockholm Water Symposium	"	Stockholm (Sweeden)	9-12 Aug., 1998	Urban Stability through Integrated Water Management.
8.	International Symposium	"	Paris (France)	2-4 June, 1999	The Learning Society and the Water Management.
9.	Symposium on Efficient Water Use in Urban Areas	"	Kobe (Japan)	8-10 June, 1999	Innovative Ways of Finding Water for Cities.
10.	9th International Conference on Rainwater Catchment	"	Petrolina (Brazil)	6-9 July, 1999	Rainwater Catchment System.
11.	International Congress and Exhibition	"	Moscow (Russia)	29 May to 2 June, 2000	Water : Ecology and Technology.
12.	Internationl Symposium on Integrated Water Resources Management	"	California (U.S.A.)	9 Apr. to 12 Apr., 2000	Management of Water Quality and Quantity.
13.	2nd World Water Forum and Ministerial Conference	"	Hague (Netherlands)	17-22 March, 2000	Water Future.
14.	International Workshop on Fluoride	"	Bhopal (India)	23-24 June, 2001	Strategies Management and Mitigation.
15.	Fifth Global Forum on Water and Sanitation	"	Falls (Brazil)	24-29 Nov., 2000	Global Assessment
16.	10th International Conference on Rainwater Catchment	"	Mannheim (Germany)	10-14 Sept., 2001	Rainwater Harrestirg in Practice.
17.	Stockholm Water Symposium	"	Stockholm (Sweeden)	13-16 Aug., 2001	Water Scarcity for the 21st Century.

18.	International Conference on Fresh Water	"	Bonn (Germany)	3-7 Dec., 2001	Water Resources Protection.
19.	1st international Conference on Water and Health	"	Ottawa (Canada)	12-15 May, 2002	Protection of Drinking. Water.
20.	World Water Day	"	All Countries	22 March, 2002	Water for Develop ment.

4. भारत में राष्ट्रीय पेय जल मिशन (National Drinking Water Mission in India)

जल की बेरहम बरवादी, अनियंत्रित प्रयोग, प्रदूषण और जल के लिए तरसते हजारों गाँवों के करोड़ों लोगों की भलाई के लिए ठोस कदम के रूप में जल संसाधन की राष्ट्रीय परिषद में पेय जल की पूर्ति करने हेतु 1986 में राष्ट्रीय मिशन प्रारम्भ किया था। इस मिशन के तहत देश में उपलब्ध जल को प्राथमिकता के आधार पर क्रमशः पेय जल, कृषि, जल विद्युत, जल परिवहन, उद्योग आदि के क्रम में प्रयुक्त किये जाने के निर्देश तैयार हुए। इस नीति के अनुसार सन् 1991 तक देश की सारी आबादी को पीने का पानी उपलब्ध करवाने का संकल्प लिया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भिक वर्ष 1985 में भारत में 1,61,772 ऐसे समस्याग्रस्त गाँव थे जहाँ या तो कोई स्वच्छ पेय जल स्रोत नहीं था या निकटतम जल स्रोत 1·6 किमी से अधिक दूर था। जल मिशन ने राष्ट्रीय स्तर पर सम्मेलन, गोष्ठियाँ व कार्यशालाएँ आयोजित कीं, सर्वेक्षण कराये तथा देश में उपलब्ध समस्त वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारी एकत्रित की। इसके आधार पर देश की पेय जल क्षेत्र की समस्त मूल समस्याओं का पता लगाया गया और समाधानों से सम्बन्धित विधिवत् कार्यक्रम बनाकर उनकी क्रियान्विति की गई।

राष्ट्रीय पेयजल मिशन कार्यक्रमों के अन्तर्गत निम्न उपमिशन रहे हैं—

1. खारेपन पर नियन्त्रण,
2. फ्लोरोसिस पर नियन्त्रण,
3. अधिक लोहे को दूर करना,
4. गिनी कृमिकों को दूर करना,
5. वैज्ञानिक तरीकों से जल स्रोतों का पता लगाना; जल संरक्षण और भूमिगत जल की सम्पूर्ति करना, और
6. जल गुणवत्ता की निगरानी रखना।

भारत की 80 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है अतः गाँवों में शुद्ध पेय जल उपलब्ध कराने को प्राथमिकता देने हेतु पेय जल मिशन को **कृषि मन्त्रालय के ग्रामीण विकास विभाग** के अन्तर्गत रखा गया है। गाँवों को जल उपलब्ध कराने के लिए निम्नलिखित मानदण्डों को अन्तिम रूप दिया गया था—

1. मानवीय उपयोग के लिए प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 40 लीटर स्वच्छ पेय जल।
2. मरुस्थलीय जिलों में पशुओं के लिए प्रतिदिन प्रति पशु 30 लीटर अतिरिक्त जल।
3. जल स्रोत 15 मीटर की न्यूनतम गहराई तथा 100 मीटर की ऊँचाई के अन्तर पर 1·6 किमी दूरी पर होना चाहिए।
4. उस जल को स्वच्छ जल माना गया है जो जीवाणु प्रदूषण (गिनी कृमि, हैजा, टायफाइड) से मुक्त हो और जिसमें रासायनिक तत्त्व (अधिक फ्लोराइड, खारापन, अधिक लौह, आर्सेनिक, नाइट्रेट आदि) मौजूद न हों।

5. भारत में जल उपलब्धता के लिये किये जा रहे प्रयास (Efforts for Making Water Available in India)

(अ) राजीव पेय जल मिशन का गठन,
(ब) प्रधानमंत्री पेय जल योजना : सबको पानी,

(स) मुख्यमंत्रियों द्वारा प्रदेशों में जल के दुरुपयोग रोकने की अपील,
(द) वर्षा जल की एकत्रीकरण योजना,
(य) पुरानी बावड़ियों और कुओं तथा बांधों की सफाई,
(र) लान (Lawns) संस्कृति को रोकने के लिये जन चेतना,
(ल) गाँव-गाँव तक पानी पहुँचाने के लिये बांधों और नदियों से वितरिकाओं (Tributaries) का निर्माण।
(व) प्रदेश और जिले स्तर पर स्वयंसेवी संगठनों द्वारा जल के बुद्धिमतापूर्ण उपयोग के लिये जन जाग्रति,
(श) जल संरक्षण हेतु टांकों (Underground Tanks) का अभिनवन व निर्माण तथा
(ष) नये संकुल और ऊँची मंजिलों के भवनों में वर्षा जल भण्डारण व्यवस्था आवश्यक, आदि।

पानी अमूल्य है क्योंकि यह अप्राप्य है और जो भी जल उपलब्ध है उसका वितरण विश्वभर में समान नहीं है, अतः कुछ विकसित देश जहाँ इसका दुरुपयोग कर रहे हैं, वहीं विकासशील तथा अविकसित इसकी एक-एक बूंद को तरस रहे हैं। वर्षा से जो जल हमें मिलता है, उसे एकत्र न कर पाने के कारण उसे हम यूँही समुद्र में जाने दे रहे हैं। समुद्रीय जल की लवणता को दूर करने की न तो हमारे पास तकनीक है और न ही इतना धन, क्योंकि यह बहुत खर्चीली प्रक्रिया है।

भारत की राजधानी दिल्ली में जल के दुरुपयोग की कहानी Down to Earth : June 15, 2002 के अंक में अंकित की है। एक चार सदस्यीय उच्च वर्गीय परिवार का प्रतिदिन का जल व्यय निम्न प्रकार है—

व्यक्तिगत सफाई (Personal Cleaning)	720 लीटर
शॉवर बाथ (Shower Bath)	360 लीटर
फ्लश (Flush)	160 लीटर
पौधों को पानी (Watering Plants)	120 लीटर
कार का धोना (Washing Car)	300 लीटर
धुलाई की मशीन (Washing Machines)	140 लीटर
कुल	1800 लीटर

अर्थात् प्रति व्यक्ति व्यय = 450 लीटर

जबकि राष्ट्रीय औसत जिसको पाने के लिए पूरा देश चिंतित है वह केवल 40 से 60 लीटर प्रति व्यक्ति है। इसी प्रकार भारी जल व्यय अन्य बड़े शहरों, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, बंगलोर आदि में भी हो रहा है। बिडम्बना यह है कि राजस्थान, गुजरात जैसे प्रदेशों के दूरस्थ गांवों में यह औसत 10 लीटर प्रति दिन प्रति व्यक्ति भी नहीं है और वह भी कई-कई किलोमीटर की दूरी से लाना पड़ता है। हमें सभी को बताना होगा—

देश के सभी लोगों को पानी तभी मिलेगा जब हम इसका बुद्धिमतापूर्ण उपयोग करेंगे और दुरुपयोग को रोकेंगे। अन्यथा शुद्ध पानी का वितरण भी पेट्रोल-डीजल की तरह पम्पों से नप कर ही मिलने लगेगा और कई लोगों द्वारा की जा रही भविष्यवाणी 'अगला विश्व युद्ध कहीं पानी पर ही न हो जाय' कहीं सच ही नहीं हो जाये।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. जल के मुख्य स्रोत कौन-कौन से हैं ? इनमें से शुद्ध जल की मात्रा कितनी है ? बताइये।
2. जल के मुख्य उपयोग बताइये। भारत में सर्वाधिक जल किस उपयोग में आता है ?
3. पानी के सही उपयोग के लिये कुछ सुझाव दीजिये।
4. पानी का घरेलू उपयोग भी दुरुपयोगी किस प्रकार होता है ? अपना उत्तर उदाहरण देकर बताइए।
5. शुद्ध जल के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किये जा रहे प्रयासों पर प्रकाश डालिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. शुद्ध जल के गुणधर्म बताइये।
7. महासागरीय जल मानव तथा पशुओं के उपयोग में क्यों नहीं लिया जाता है।
8. भारत में पेय जल उपलब्ध कराने का राष्ट्रीय औसत कितना अभिशंसित है ? उसे पाने हेतु क्या प्रयास किये जाने अपेक्षित हैं ?
9. वर्षा जल को एकत्रीकरण करने की कोई व्यावहारिक प्रक्रिया बताइये।
10. भारत के प्रत्येक व्यक्ति को यथेष्ट पीने का पानी कैसे उपलब्ध हो सकता है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. जल का रासायनिक सूत्र है—
    (अ) HO (ब) H_2O
    (स) HO_2 (द) H_2O_2
12. विश्व जल दिवस प्रतिवर्ष किस दिन मनाया जाता है ?
    (अ) 5 जून (ब) 22 अप्रैल
    (स) 16 सितम्बर (द) 22 मार्च
13. पीने के पानी की कमी को दूर करने के लिये अब इस स्रोत की अभिशंसा की गई है—
    (अ) भू जल (ब) नदियों का जल
    (स) वर्षा जल (द) समुद्रीय जल
14. शुद्ध जल का pH मान होता है—
    (अ) 0 (ब) 7
    (स) 7 से कम (द) 7 से अधिक
15. शुद्ध जल में निम्न गुण धर्म नहीं होता है—
    (अ) रंगहीन (ब) गन्धहीन
    (स) स्वादहीन (द) भारहीन

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

16. विश्व में कुल पानी की मात्रा.......................बिलियन घन किलोमीटर है।
17. महासागरों के जल में नमक की मात्रा लगभग.......................ग्राम प्रति लीटर होती है।
18. जल का क्वथनांक बिन्दु (Boiling Point)....................... °C होता है।
19. ध्रुवों की बर्फ पिघलने से महासागरों की जल सतह.......................हो जायेगी।
20. पीने के पानी में फ्लोराइड की मात्रा.......................से अधिक नहीं होनी चाहिये।

9

भूमि
[LAND]

● प्रस्तावना
(Introduction)

भूमि पृथ्वी का वह भाग है, जिस पर हम निवास करते हैं, पशु-पक्षी और सभी जीव-जन्तु रहते हैं, जिस पर पेड़-पौधे और वनस्पति उगते हैं, जिसके अन्दर अनेक प्राकृतिक संसाधन (खनिज) भरे हैं। यह पूरी पृथ्वी का 3/10 भाग है और इसे स्थलमण्डल (Lithosphere) कहते हैं।

सामान्यतया जिस ऊपरी पर्त पर हमारी दैनिक क्रियाएँ होती हैं वह भू-पटल कहलाता है और इसे ही हम अपनी चर्चा का विषय भी मानते हैं, क्योंकि ऊपर से यही मालूम होता है कि यह सतही भाग ही हमारा सभी कुछ है, लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि यह भाग सभी क्रियाओं के अन्तिम परिणाम को ही प्रस्तुत करता है। अतः साधारण बोलने तथा समझने में हम भू-पटल को ही भूमि कह देते हैं, जबकि हमें अपने सभी कार्यों में स्थलमण्डल के लगभग सभी भागों की आवश्यकता होती है। पृथ्वी के खनिज जो हमारी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, भू-पटल के बहुत नीचे हैं। खेती जिस मिट्टी पर होती है और जिस पर अन्न पैदा होता है वह भी भू-पटल के नीचे ही है। भू-गर्भ जल और बड़े-बड़े पानी के भण्डारों (महासागर, समुद्र, झीलें, नदियों आदि) के नीचे के अन्तिम भाग भूमि से ही जा मिलते हैं। अतः व्यापक रूप में भूमि एक ठोस पिंड है जो अनेक चट्टानों से मिलकर बना है और जिसके ऊपरी भाग में अपेक्षाकृत कम कठोर भाग मिट्टी और अन्दर के भाग में खनिजों के संग्रह चट्टानें और अधिक तापमान के कारण पिघले पदार्थ हैं।

पर्यावरण की दृष्टि से हमारी चर्चा इस पूरे भू-भाग से है और जब हम 'भूमि' शब्द का प्रयोग करेंगे तो इन सब उपर्युक्त बातों को अपने ध्यान में रखकर ही बात करेंगे।

भूमि एवं मृदा
(Land and Soil)

भूमि पृथ्वी की सतह के पानी रहित ठोस भाग को, जिस पर किसी भी कार्य का निष्पादन किया जा सकता है, कहते हैं; जब कि मिट्टी (मृदा) भूमि की वह ऊपरी सतह है जिसमें खनिज व अन्य ऑर्गेनिक पदार्थ मिले होते हैं और जिस पर पेड़ पौधे उग सकते हैं या उगाये जा सकते हैं।

मिट्टी की अम्लीयता अथवा क्षारीयता का मान, जिसकी पैदावार और उत्पादन में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, उसके pH से किया जाता है।

अम्लीयता < 7, उदासीन $= 7$ और क्षारीयता > 7

मिट्टी वस्तुतः चट्टानों के टूटने-फूटने से बनती है जो पृथ्वी की विभिन्न भौतिक, रासायनिक तथा जैविक क्रियाओं द्वारा होती है। अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग खनिज चूर्ण और नदियों के साथ लाई गई पहाड़ों के टूट-फूट और घिसे चूरे से मिलकर बने पदार्थ जब मैदानी क्षेत्र में एकत्रित होते हैं तो वह मिट्टी के नाम से जानी जाती है। अलग-अलग स्थानों की मिट्टी को उनके निर्माण में आने वाले घटकों के आधार पर अलग-अलग नाम से ही पुकारते हैं। इनमें ही रंगों के आधार पर भूरी मिट्टी, काली मिट्टी, पीली मिट्टी; लवणों अथवा खनिजों के आधार पर क्षारीय मिट्टी, आम्लिक मिट्टी, बनावट के आधार पर चिकनी मिट्टी, बालू मिट्टी, भुरभुरी मिट्टी, दुमट मिट्टी आदि वर्गीकरण किये गये हैं जो अलग-अलग गुण लिए होती हैं और अलग-अलग प्रकार की उपज के लिए उपयोग में आती हैं।

अलग-अलग प्रकार की मिट्टी में अलग-अलग गुणधर्म होते हैं और वे अलग-अलग प्रकार के उत्पादों हेतु उपयोगी होती हैं। पानी की कितनी मात्रा कौनसी मिट्टी सोख लेती है उससे भी उपज का सीधा सम्बन्ध है, लेकिन यह आधिकारिक रूप से स्वीकार किया गया है कि ऊपरी सतह की 6 इंच (15 सेमी) मिट्टी में उन लवणों की अधिकता रहती है जिन पर उपज निर्भर करती है।

ऊपरी सतह (top soil layer) बहुत बारीक होती है और अनेक वर्षों में इसका निर्माण होता है और यही सभी प्रकार की उपज के लिए श्रेष्ठ मानी जाती है। इसकी निर्माण प्रक्रिया बड़ी जटिल तथा लम्बी अवधि में सम्पन्न होती है। ऊपर की सतह की एक इंच (2·5 सेमी) मिट्टी के बनने में सामान्यतया 100 से अधिक वर्ष लग जाते हैं जो प्रकृति के प्रकोप से अथवा हमारे त्रुटिपूर्ण कार्यों से अथवा ठीक से देख-रेख न करने पर मिनटों में ही नष्ट हो जाती है। इसी कारण देश में अनाज उत्पादन में कमी होती है और अपने लोगों के जीने का सहारा अन्य देशों पर निर्भर हो जाता है, जिसका वे अनेक प्रकार से लाभ उठाते हैं। हमारे मूल्यवान खनिज एवं अन्य वस्तुओं को कम मूल्य पर लेकर वह निरन्तर समृद्धिशाली भी बनते जाते हैं और हमारे ही बलबूते पर अधिक सुख-सुविधाओं का भी उपयोग करते हैं।

भूमि इस प्रकार एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है जो यदि सुरक्षित है तो न वह हमारे अच्छे आश्रय-स्थल के ही काम आता है, बल्कि हमारे पेट भरने के लिए अन्न व अन्य उपजें, पीने के लिए स्वच्छ जल, प्रकृति संतुलन के लिए घने वृक्ष सभी कुछ उपलब्ध कराता है, उनका आधार बनता है। विडम्बना यह है कि विश्व की कुल भूमि का 2·5 प्रतिशत (एक चालीसवाँ) भाग ही भारत में भूमि है और विश्व की 16·7 प्रतिशत आबादी (102 करोड़ लगभग) इस पर रहती है। यही ही नहीं बल्कि विश्व की आधे से अधिक भैंसें और गायों तथा बकरियों का सातवाँ हिस्सा भारत में है। अतः भूमि की उपयोगिता भारत में केवल अन्न उपजाने में ही नहीं बल्कि इन पशुओं के लिए चारा जुटाने के लिए भी है। अधिक अन्न उपजाने की विवशता ने चरागाहों पर कृषि कार्य करना प्रारम्भ कराया है। उसका असर यह हुआ है कि मवेशी जंगलों की ओर बढ़े हैं। जंगलों की कमी ने प्राकृतिक सम्पदा की कमी के साथ-साथ पर्यावरण असन्तुलन को भी जन्म दिया है।

● भूमि के प्रकार (Kinds of Land)

भूमि का उसके उपलब्ध प्रकार तथा उसके उपभोग के आधार पर हम निम्न वर्गीकरण करते हैं—

1. सामान्य भूमि (Natural Land) : यह भूमि भाग वह है जिस पर हमारी कृषि होती है और अन्न तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं को जिस पर उत्पन्न किया जाता है। यह भूमि हमारे जीवन का आधार है, उपयोगी है और देश की धरोहर है। इसकी मिट्टी अत्यन्त मूल्यवान है जिसकी सुरक्षा आवश्यक है।

इसी भूमि पर अनेक प्रकार के पेड़-पौधे, वनस्पति उगते हैं और घने जंगल भी इसी भूमि पर होते हैं। नवीनतम आँकड़ों के अनुसार भारत में भू-भाग के 25 प्रतिशत क्षेत्र में कृषि होती है जो सामान्य भूमि के अन्तर्गत आती है।

2. नमभूमि (Wetlands) : पानी के बड़े स्रोतों के आस-पास की मिट्टी कभी इतना पानी समा लेती है कि भूमि दलदली हो जाती है और वह कृषि तथा किसी अन्य कार्य के उपयोग लायक नहीं रह जाती है। इसे नमभूमि कहते हैं। वहाँ मकान या तो बन ही नहीं पाते हैं, और बनते हैं या पहले से बने होते हैं तो उनमें सीलन रहती है और पानी की बहुतायतता से प्रभावित रहते हैं। हमारे देश भारत में इस प्रकार की भूमि उन कृत्रिम नहरों के कारण हुई है जिनमें वर्षपर्यन्त पानी चलता है और जिनसे पानी रिस-रिस कर पास की भूमि में पहुँचता रहता है। निःसन्देह अधिक अन्न उपजाने के लिए किये गये पानी पहुँचाने के प्रयास ने एक राष्ट्रीय स्तर की समस्या को जन्म दिया है जो बहुत चिन्ता का कारण बन रही है।

ऐसा प्रयास किया जा रहा है कि एक तरफ तो निरन्तर पानी के स्रोतों से रिसने वाले पानी को किसी प्रकार रोका जाये तथा वहीं दूसरी ओर स्रोतों के किनारे-किनारे घनी वृक्षावली रोपी जाये जो ऐसे पानी को अपने आप में समाहित कर सके।

इसके विपरीत राष्ट्रीय स्तर पर नम भूमि को उपयोग की दृष्टि से हितकर माना है क्योंकि यह भारत में लाखों लोगों को भोजन (मछली पकड़ने, शिकार करने, झींगा संवर्धन आदि) तथा पशु-चारे की उपलब्धता आश्वस्त करते हैं। नम-भूमि या पक्षियों, सरीसृपों, मछलियों तथा अन्य प्राणी जातियों का पालन

भी करते हैं जो अत्यधिक आर्थिक और जीव-सौन्दर्यपरक महत्त्व के हैं। साथ ही बाढ़ नियन्त्रण, एक्विफर रिचार्जिंग, जल गुणवत्ता का नियमन करने, एक्वाकल्चर तथा मुर्गावियों के प्रजनन स्थान हेतु सम्भावित स्थानों के रूप में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। प्रदूषण उपशमन हेतु भी नम भूमि क्षेत्र का अपना महत्त्व है।

उपर्युक्त महत्त्व को देखते हुए राष्ट्रीय नम भूमि प्रबन्ध समिति ने देश में प्राथमिकता के आधार पर 22 नमभूमि क्षेत्रों का चयन किया है, जिन पर कार्य हो रहा है [विवरण अन्य अध्याय 'पर्यावरणीय समस्याएँ (प्राकृतिक)' में देखें]। भारत ने नमभूमि के बारे में एक रामसर कन्वेंशन पर हस्ताक्षर किये हैं, जिनके अन्तर्गत—(1) चिल्का (उड़ीसा), (2) केवलादेव घना (राजस्थान), (3) हरिके (पंजाब), (4) लोकटक (मणिपुर), (5) सांभर (राजस्थान) तथा (6) वूलर (जम्मू एण्ड कश्मीर) नम-भूमि क्षेत्रों को राष्ट्रीय महत्त्व का माना है।

3. बंजर भूमि (Wastelands) : जो स्थान या तो एकदम चट्टानी हैं और जहाँ मिट्टी बिल्कुल नहीं है अथवा वह स्थान, जहाँ की ऊपरी मिट्टी (top soil) प्राकृतिक प्रकोप या सुरक्षित न रख सकने की मनुष्य की त्रुटिपूर्ण क्रियाओं से बह गई हो, वह किसी भी प्रकार की उपज के योग्य नहीं रह जाते। यहाँ पानी के साधनों का भी अभाव होता है। यह बंजर भूमि क्षेत्र (wasteland area) कहलाते हैं। वायु से, पानी से तथा अन्य क्रियाओं से सामान्य भूमि का बंजर भूमि क्षेत्र में परिवर्तित होने का क्रम हमारे देश का दुर्भाग्य रहा है तथा इसी से अनेक आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड (National Wasteland Development Board) **का गठन हुआ है** जो बंजर भूमि को कृषि भूमि में परिवर्तन करने अथवा इस भूमि का और कोई अपेक्षाकृत अच्छा उपयोग हो सके, इस हेतु प्रयत्नशील है। इस बोर्ड के मुख्य उद्देश्य हैं—

1. वनरोपण गतिविधियों में अधिक तेजी लाना,
2. वनरोपण कार्यक्रम को लोगों, विशेषकर किसानों तथा भूमिहीनों, तक ले जाना और इसमें महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि करना,
3. अन्य सरकारी तथा गैर-सरकारी एजेन्सियों का अधिक-से-अधिक सहयोग प्राप्त करना,
4. ईंधन की लकड़ी तथा चारे के विकास पर अधिक बल देना, और
5. संस्थागत समर्थन प्राप्त करने के तौर तरीके ढूँढ़ना।

इस क्रम में भारत सरकार ने विभिन्न राज्यों को निर्देश दिये हैं कि वे न्यूनतम निर्धारित प्रतिशत भूमि क्षेत्र को इस योजना के तहत पेड़-पौधे, वनस्पति अथवा अन्य किसी-न-किसी उपज के कार्य हेतु योजना बनाकर उनकी क्रियान्वित करें, जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

— राजस्थान, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र	10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से अधिक
— देहली, उत्तर प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, दादरा हवेली (डामन एवं ड्यू सहित)	5 से 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र
— जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, गोवा, केरल, तमिलनाडु, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, बिहार, असम, सिक्किम, मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम, मणिपुर, नागालैण्ड और अरुणाचल प्रदेश	5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से कम

इस हेतु अनेक कार्यक्रम योजना बजट (Plan Budget) के तहत शुरू किये गये हैं जिनमें 50 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक भारत सरकार द्वारा अनुदान स्वीकृत किया जाता है।

[अधिक विस्तृत विवरण अगले अध्याय 'पर्यावरणीय समस्याएँ (प्राकृतिक)' में देखें]

4. रेगिस्तानी भूमि (Desert Land) : ये मोटी बालू वाले क्षेत्र होते हैं जिनमें मिट्टी के कण बड़े होते हैं और उनमें पानी को सोखने की क्षमता कम अथवा नहीं ही होती है। अतः इन क्षेत्रों में उपज नहीं होती। दूसरे यह पानी के अभाव से भी ग्रस्त होते हैं। साथ ही पास में जंगलों के न हो पाने के कारण भी वातावरण

में आर्द्रता नहीं समेट पाते और इस कारण वर्षा से भी वंचित रहते हैं। इस तरह ये क्षेत्र सीधे-सीधे रेगिस्तान ही हो जाते हैं। भारत का थार रेगिस्तान ऐसा ही क्षेत्र है जो 31·7 mh (मिलियन हेक्टेयर) में पंजाब, राजस्थान और गुजरात में फैला है। अधिक पशु-चराई, पानी की कमी तथा जल और वायु द्वारा भूमि क्षरण ने इसे मरुस्थल बना दिया है और यह निरन्तर बढ़ रहा है।

5. कच्छ वनस्पति वाली भूमि (Mangroves Land) : यह भूमि सामान्यतया महासागर/समुद्र तटों तथा मुहानों की सीमा में होती है। इस भूमि की विशेषता यह है कि यहाँ की मिट्टी में नमक ग्रहण करने की शक्ति होती है। अतः इसी कारण इस प्रकार की भूमि मुख्यतः उष्णकटिबन्धीय और उप उष्णकटिबन्धीय अन्तःज्वारीय क्षेत्रों में होती है। यहाँ उत्पन्न वनस्पतियाँ जिन्हें 'कच्छ वनस्पतियाँ' के नाम से बोलते हैं, समुद्र तटों को स्थिर रखती हैं और समुद्र द्वारा कटाव को रोकती हैं। भारत में कच्छ वनस्पतियाँ कुल 6.740 वर्ग किलोमीटर लम्बी तट रेखा पर पाई जाती हैं जो विश्व के कुल कच्छ वनस्पति क्षेत्र का लगभग 7 प्रतिशत है।

भारत में इस क्षेत्र की भूमि के उत्पादन पर भी भारी जैव हस्तक्षेप है तथा कई कारणों से अंधाधुंध और बेरहमी से इसका शोषण हो रहा है। इस शोषण को रोकने तथा इस भूमि की वनस्पतियों के संरक्षण और प्रबन्ध के लिए भारत सरकार ने एक **राष्ट्रीय कच्छ वनस्पति समिति** (A National Mangrove Committee) गठित की है जिसके निम्न लक्ष्य रखे हैं—

1. प्राकृतिक पुनःउत्पादन (National Regeneration),
2. नर्सरी बनाना (Raising of Nurseries),
3. वनीकरण (Afforestation), और
4. शिक्षा एवं जागरूकता (Education & Awareness)।

इस सन्दर्भ में भारत में 15 ऐसी कच्छ वनस्पति क्षेत्र (भूमि) की प्रारम्भिक रूप में शिनाख्त कर ली गई है जिन पर योजनाबद्ध कार्य प्रारम्भ हो रहा है। शनैः-शनैः कार्य प्रगति पर है। ये हैं—

1. उत्तरी अण्डमान (अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह)
2. निकोबार द्वीप समूह
3. सुन्दरवन (पश्चिम बंगाल)
4. भीतरकणिका (उड़ीसा)
5. कोरिंगा (आन्ध्र प्रदेश)
6. महानदी डेल्टा (उड़ीसा)
7. पिचवरम (तमिलनाडु)
8. गोवा (गोवा)
9. गोदावरी डेल्टा (आन्ध्र प्रदेश)
10. कच्छ की खाड़ी (गुजरात)
11. कुंडापुर (कर्नाटक)
12. अचरा रत्नागिरि (महाराष्ट्र)
13. बेम्बनाड (केरल)
14. प्वाइंट केलिमेरे (तमिलनाडु)
15. कृष्णा एस्चुअरी (आन्ध्र प्रदेश)

सन् 1990 में इनके अतिरिक्त भी 15 कच्छ वनस्पति क्षेत्रों का विशेष चयन किया है, जिनकी जानकारी अध्याय 6 (जैविक विविधता) में दी गई है।

● भूमि का अनुचित उपयोग अथवा दुरुपयोग (Misuse or Improper Use of Land)

भारत के कुल भू-भाग का क्षेत्रफल 329 mh है। निरन्तर बढ़ती आबादी के अनुसार निश्चय ही प्रति व्यक्ति यह भू-भाग कम होता जा रहा है। आजादी से पूर्व 1941 में यह 1·03 h था जो 1951 में 0·91 h,

1961 में 0·75 h, 1971 में 0·60 h, 1981 में 0·48 h, 1991 में 0·39 h, 1996 में 0·35h तथा अब 2002 के अन्त में 0·31 h आ गया है। इसमें से वह भाग निकाल दें जो वन क्षेत्र के लिए सुरक्षित है अथवा जो नमभूमि अथवा बंजर भूमि के हिस्से में हो गया है और फिर शेष सारी भूमि पर (आवास के अलावा) कृषि करें तो भी शायद यह देश के लिए काफी नहीं होगी, क्योंकि कृषि योग्य भूमि पर भी निरन्तर दबाव पड़ रहा है। अतः भूमि के उचित उपयोग की बात बहुत महत्त्वपूर्ण है।

भूमि की उपलब्धता को हम एक और दृष्टि से भी देखें—

1. प्रति वर्ष लाखों हेक्टेयर भूमि से ऊपरी सतह (top soil) नदी तथा वर्षा के जल अथवा बाढ़ से बह जाती है।
2. जल और वायु से भूमि-क्षरण लगातार हो रहा है।
3. रासायनिक खादों तथा कीटाणुनाशक दवाइयों से भूमि प्रदूषित हो रही है।
4. मिट्टी का एक बहुत बड़ा भाग अन्य कार्यों में प्रयोग हो रहा है जैसे मकानों के लिए ईंटों के बनाने में मिट्टी का उपयोग।
5. मवेशी तथा अन्य जानवरों द्वारा चराने हेतु भूमि क्षेत्र में चरागाहों का विकास।
6. बढ़ती जनसंख्या के कारण सड़कें, विविध आवासीय कॉलोनियाँ, जनहित हेतु अस्पताल, पोस्ट ऑफिस अथवा अन्य विभागों हेतु भवन निर्माण।
7. सुविधा हेतु एअरपोर्ट, बस अड्डे अथवा अन्य संचार कार्यों हेतु भूमि का आवंटन, और
8. खनन कार्य हेतु पट्टों का वितरण आदि।

अतः इस प्रकार भूमि क्षेत्र, जिसका कृषि हेतु उपयोग हो सके, कम हो रहा है। हमें जहाँ एक ओर अनावश्यक भूमि उपभोग को बन्द करना पड़ेगा वहीं ऐसे उपाय भी खोजने होंगे जिससे कृषि योग्य भूमि में उपज का प्रतिशत बढ़ जाये।

• भूमि के नष्ट अथवा दूषित होने के कारण (Causes of Destruction or Pollution of Land)

भूमि का ठीक से उपयोग न हो पाने के कई कारणों को मोटेतौर से दो बिन्दुओं में विभाजित किया जा सकता है। जिस पर विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे, वे हैं—

(अ) भूमि-क्षरण तथा (ब) भूमि-प्रदूषण।

(अ) भूमि-क्षरण (Soil Erosion)

भूमि-क्षरण एक ऐसा अभिशाप है जिसके द्वारा चाहे-अनचाहे, जाने-अनजाने जाने कितनी भूमि यूँ ही नष्ट हो जाती है। पिछले 100 से 200 वर्षों की अवधि में बनी मिट्टी की ऊपरी सतह (top soil) कुछ ही दिनों में तेज वर्षा अथवा आँधी और तूफान से बह जाती है अथवा उड़ जाती है। मिट्टी नष्ट तो बहुत कम समय में ही हो जाती है, जबकि उसके बनने में बहुत समय लगता है। अतः मिट्टी की रक्षा करना बहुत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है।

यह भूमि-क्षरण जल और हवा दोनों से होता है—

1. जल द्वारा भूमि-क्षरण (Soil Erosion by Water) : जहाँ वनस्पति क्षेत्र विरल तथा अपर्याप्त होता है और जहाँ आस-पास भी सघन पेड़ नहीं होते वहाँ की भूमि की मिट्टी की सतह धीमे-धीमे क्षय होती जाती है और उसका आभास भी नहीं हो पाता। वर्षा की बूँदों से भूमि की मिट्टी पर कटाव होता है और वर्षा जल के बहने के साथ ही मिट्टी भी बह जाती है। यदि तेज वर्षा होती है तो यह कटाव और भूमि क्षय और शीघ्र तथा अधिक होता है।

इससे बचाव के कई उपाय हो सकते हैं, जिनमें—(1) भूमि की जुताई पानी की निकास व्यवस्था के लम्बवत् करने से मिट्टी का कटाव और भूमि-क्षरण कम हो जाता है, (2) खेतों व भूमि के आस-पास घने वृक्ष लगाये जायें क्योंकि वर्षा की तेज बूँदों को वृक्ष अपने ऊपर लेकर बूँदों की तेजी को कम करता है तथा फिर पानी को मिट्टी में से धीमे-धीमे जाने देता है और (3) खेतों अथवा भूमि भाग के ऊपरी हिस्सों

में, जहाँ से वर्षा के पानी की आवक है, छोटे-छोटे एनीकट बनाये जायें, इससे पानी उस ऐनीकट में रुक जाये तथा फिर उसे अपनी सुविधा से धीमे-धीमे कम गति से काम में ले सकें।

2. वायु द्वारा भूमि-क्षरण (Soil Erosion by Wind) : वायु के तेज प्रवाह से भी भूमि-क्षरण होता है। वायु अपने साथ मिट्टी के छोटे-छोटे कणों को भूमि से उठाकर बहुत दूर ले जाती है तथा वहाँ से पुनः वायु वेग के साथ यह मिट्टी कण एक तूफान के रूप में बहुत दूर उड़ जाते हैं और पिछले भूमि भाग को यूँ ही छोड़ जाते हैं।

इसके बचाव के लिए भी जिन तरीकों को सुझाया गया है उनमें से—(1) वायु की दिशा के विपरीत खेतों की रक्षा करना तथा (2) वायु की नमता बनाये रखना, जिससे मिट्टी सहज ही उड़ने न पाये, प्रमुख हैं।

अतः यह उचित है कि दोनों ही प्रकार के भूमि-क्षरण के कारणों से मिट्टी के क्षय को रोकने के लिए निम्न दो बातों का अपनाना आवश्यक है—

(i) पानी के बहाव अथवा वायु के प्रवाह के विरुद्ध रक्षा पेटियों (Shelter Belts) की व्यवस्था करना, तथा

(ii) खेतों के आस-पास सघन वृक्षावली लगाना।

इससे काफी सीमा तक भूमि क्षय रुक सकता है।

(ब) भूमि प्रदूषण (Soil Pollution)

भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े या जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो, भू-प्रदूषण कहलाता है। इसे और ध्यान से देखें—

1. मिट्टी की अम्लीयता (Soil Acidity)

ये विकार आर्द्र क्षेत्रों की भूमियों में पाया जाता है। आर्द्रता के कारण जब भूमि में हाइड्रोजन (H_2) आयन्स की आण्विक प्रगाढ़ता अधिक और हाइड्रोक्सिल (HCl) आयन्स अपेक्षाकृत कम होते हैं तो अम्लीय विकार उत्पन्न हो जाते हैं जिससे मिट्टी के घोल का पीएच. मान सदैव 7 से कम रहता है। इस विकार के कारण एल्युमिनियम, लोहा अधिक घुलनशील होने से पौधों के लिए विष का कार्य करते हैं तथा मैंगनीज यौगिक की मात्रा बढ़ने से पौधों की अपचयन क्रिया रुक जाती है। मृदा जीवाणुओं की क्रियाशीलता भी मन्द होती है। फसलों को कैल्सियम, मैग्नीशियम, मोल्बिडन, फॉस्फोरस कम मात्रा में उपलब्ध होता है जिसके फलस्वरूप फसल उत्पादन में गिरावट आ जाती है। भूमि में सिलिका तथा क्वार्ट्ज की अधिकता होने से तथा जैविक पदार्थों के अपघटन से, क्षारों के निक्षालन होने तथा निरन्तर अमोनियम सल्फेट जैसे उर्वरकों का प्रयोग करने से भूमि में अम्लों की मात्रा बढ़ जाती है। इस विकार को सुधारने के लिए भूमि में चूने का प्रयोग, क्षारीय उर्वरकों का प्रयोग, समुचित जल निकास व्यवस्था करके, पोटाशयुक्त खादों का प्रयोग करके तथा अम्ल सहिष्णु फसलें उगाकर आदि क्रियाओं द्वारा दूर किया जा सकता है।

2. मिट्टी की क्षारीयता (Soil Alkalinity)

ये विकार शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में अधिक वाष्पीकरण के कारण होता है। भूमि की ऊपरी सतह पर सोडियम, कैल्सियम, मैग्नीशियम, पोटाश के क्लोराइड्स, कार्बोनेट्स, बाई-कार्बोनेट्स तथा कभी-कभी नाइट्रेट्स भी पाये जाते हैं जिनके कारण ये विकार उत्पन्न होते हैं। इन मिट्टियों में हाइड्रोक्सिल आयन्स की सान्द्रता हाइड्रोजन आयन्स की अपेक्षाकृत अधिक होती है। इन मिट्टियों का पीएच. मान सदैव 7 से अधिक होता है।

ये विकार भूमि में क्षारीय लवणों के वाष्पीकरण से, जल निकास का उचित प्रबन्ध न होने से, नहरी जल से निरन्तर सिंचाई करने से, सोडियम नाइट्रेट्स आदि उर्वरकों के निरन्तर प्रयोग से होता है। इस विकार का मिट्टी पर विषैला प्रभाव होता है। पौधे अधिक मात्रा में सोडियम की मात्रा को अवशोषित करते हैं जिससे पौधों की वृद्धि तथा विकास नहीं होता है तथा भूमि की भौतिक, रासायनिक, जैविक दशा बिगड़ जाती है। इससे फसल उत्पादन न्यूनतम ही प्राप्त होती है।

इस विकार को दूर करने हेतु लवणों को खुरचकर, निक्षालन कर तथा बहाकर आदि क्रियाओं द्वारा हटाया जा सकता है तथा जिप्सम का प्रयोग, जैविक खादों का अधिक प्रयोग एवं क्षार सहिष्णु फसलें उगाकर भी क्षारीय विकार दूर किया जा सकता है।

3. रासायनिक और कीटनाशक दवाओं का भूमि पर प्रभाव (Effect of Pesticides and Chemical Fertilizers)

आज उत्पादन बढ़ाने के लिए खेतों में रासायनिक खादों, कीटनाशक, शाकनाशी एवं कवकनाशक रसायनों का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है जिससे भूमि में हानिकारक तत्त्वों की मात्रा बढ़ने से भूमि प्रदूषित हो रही है। उदाहरण के लिए अमोनियम सल्फेट उर्वरक का खेतों में लगातार प्रयोग करने से भूमि में अम्ल की मात्रा बढ़ जाती है। इसी प्रकार सोडियम नाइट्रेट से क्षारीय विकार पैदा हो रहा है। कीटों को नष्ट करने के लिए डी. डी. टी., बी. एच. सी. जैसे अधिक हानिकारक विषों का अधिक मात्रा में प्रयोग किये जाने से भूमि में इन रसायनों का अंश कई वर्षों तक रहता है जिससे मृदा प्रदूषित होने के साथ-साथ इन विषों का अंश अनाजों में आने से मानव में नये-नये रोग व बीमारियाँ फैल रही हैं जो मानव समाज के लिए अभिशाप हैं।

भारत सरकार द्वारा अनाजों, शाकों आदि में डी. डी. टी. व बी. एच. सी. जैसे रसायनों का प्रयोग नहीं करने की सिफारिश की गई है।

रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक रसायनों का निरन्तर अधिक मात्रा में यदि प्रयोग किया जाता रहा तो मृदा प्रदूषण के कारण मृदा उत्पादन शक्ति का ह्रास तो होता ही रहेगा साथ ही साथ इस प्रदूषण का प्रतिकूल प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता रहेगा। उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक रसायनों का प्रयोग कम करके इनके स्थान पर जैविक खाद, भू-परिष्करण/यांत्रिक क्रियाओं को प्राथमिकता देनी होगी तभी हम भूमि प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य को सुरक्षित रख सकते हैं।

● बिगड़ी भूमि के पुनः सुधारने अथवा कृषि योग्य बनाने हेतु उपाय (Ways to Improve or Reclaim the Spoiled Land)

भूमि क्षरण द्वारा कृषि योग्य भूमि के बचाव के उपाय पहले दिये हैं, लेकिन जो भूमि प्रदूषण से दूषित हो गई है अथवा खनन कार्य जैसी गतिविधि से नष्ट हो गई है, उसे पुनः कैसे प्राप्त करें ? यह एक जटिल प्रश्न है। विशेषज्ञों ने इस हेतु सुझाव दिये हैं कि उन्हें पहले कृत्रिम प्रकार से मिट्टी खाद के आवरण से युक्त कर इस रूप में लावें कि उस भूमि पर कोई चीज उगने की सम्भावना बने और फिर उनमें पहले भूमि सुधारने वाली फसलों को लगावें—तब आगे और अन्य वृक्ष, झाड़ियाँ आदि लगावें। इन्हें तब कृषि कार्य, सघन वृक्षावली, पानी संग्रह केन्द्र अथवा आमोद-प्रमोद स्थल के रूप में उपयोग में लिया जा सकता है। जो स्थान खनन से इतने खराब हो गये हों कि जगह ऊबड़-खाबड़ हो गयी हो तो वहाँ का लेण्डस्केप तैयार कराकर उसमें स्विमिंग पूल, खेलने के स्थान व बाग-बगीचे आदि लगाये जा सकते हैं।

एक बात की ओर और ध्यान दिया जा सकता है कि आज जब भी कोई विशेष आवास, बाँध, स्टेडियम अथवा मनोरंजन स्थल के निर्माण की बात हुई या नई-नई कॉलोनियों के विकास की योजना बनीं तब आवश्यकता के अनुसार कहीं से भी भूमि का आवंटन सुविधा की दृष्टि से कर लिया जाता है। क्यों न इस खराब भूमि को उस कार्य हेतु उपयोग में लावें ? जिससे दोनों ही समस्याओं का समाधान एक साथ सम्भव है।

भूमि बहुत महत्त्वपूर्ण साधन है। इसके उचित उपयोग से हम आर्थिक रूप से सम्पन्न भी हो सकते हैं और विपरीत में असह्य स्थिति में भी आ सकते हैं। प्रत्येक मनुष्य के योगदान से ही देश की भावी स्थिति की अच्छी सम्भावनाएँ बन सकती हैं। कहते हैं—अच्छी भूमि—अच्छा अन्न। अच्छा अन्न—अच्छा मन।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. भूमि का उपभोग के आधार पर कैसे वर्गीकरण कर सकते हैं ?
2. नमभूमि क्षेत्र की क्या विशेषताएँ हैं ? कोई 5 नमभूमि क्षेत्र बताइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. भूमि और मृदा में क्या अन्तर है ?
4. कच्छ वनस्पति क्षेत्र क्यों महत्त्वपूर्ण है ?
5. भूमि क्षरण से क्या हानि हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

सही प्रश्नों पर ✓ तथा गलत प्रश्नों × का चिन्ह लगाइये–

6. मिट्टी की ऊपरी सतह के निर्माण में कई-कई वर्ष लग जाते हैं। ( )
7. रासायनिक खादों तथा कीटनाशक दवाइयों से भूमि का संरक्षण होता है। ( )
8. मिट्टी के अम्लीय विकार को दूर करने के लिये क्षारीय उर्वरक प्रयोग में लाना चाहिये। ( )
9. रेगिस्तानी क्षेत्र में चिकनी मिट्टी होती है। ( )
10. बंजरभूमि का उपयोग मनोरंजन स्थल, स्टेडियम और भण्डारण के लिये करना उपयुक्त हो सकता है। ( )

10

वन

[FORESTS]

● प्रस्तावना (Introduction)

ऐसे क्षेत्र जो सामान्यतया उपेक्षित अथवा कृषिविहीन हों और जहाँ घने लम्बे वृक्ष उगे हों, वन की परिभाषा में आते हैं। इन्हें 'जंगल' भी कहते हैं, जिसकी मूल भावना सम्भवतः यही रही है कि जिसमें वन्य जीव भी रहते हों, लेकिन व्यावहारिक रूप से वनों का आशय उसकी विविध प्रकार की उपयोगिता के आधार पर भी स्वीकार की गई है। उदाहरणार्थ ऐसे स्थान जहाँ से ईंधन, लकड़ी, चारा और अन्य वन उपज मिलती हो और निकटवर्ती गाँव अथवा कस्बे के निवासी उसे अपने जीवनयापन का या उनके निजी उपयोग में काम आने वाली वस्तुओं का प्रदान करने का माध्यम मानते हों, वन कहलाते हैं।

वैधानिक दृष्टि से वनों का आशय उन क्षेत्रों से है जो वन अधिनियम में वर्णित विभिन्न श्रेणियों में से, किसी एक श्रेणी के अन्तर्गत घोषित कर दिये गये हों। पर्यावरण की दृष्टि से वन पेड़-पौधे और वनस्पति से आच्छादित वे क्षेत्र हैं जो वायुमण्डल की कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं और प्रकाश संश्लेषण की संक्रिया से वापस ऑक्सीजन देकर वायुमण्डल को सन्तुलित रखते हैं।

अतः निश्चय ही परिभाषा की दृष्टि से वन पेड़-पौधे, वनस्पति तथा जीव-जन्तु के ऐसे स्थल हैं जो प्राकृतिक संसाधन के महत्त्वपूर्ण घटक के रूप में जाने जा सकते हैं और जिन पर प्राणी मात्र (मनुष्य व पशु) का अस्तित्व टिका है।

इस परिभाषा से भारत देश जिसका भौगोलिक (भू-भाग का) क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किमी (329 mh) है वहाँ सन् 1999-2000 में वन 6,37,293 वर्ग किमी (63·7% mh) में हैं जो लगभग 19·39 प्रतिशत होता है, जबकि कृषि क्षेत्र लगभग 46 प्रतिशत है।

● वनों का महत्त्व (Importance of Forests)

विज्ञान ने यद्यपि पिछले कई सौ वर्षों में इतनी प्रगति कर ली है कि अब दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं अथवा अनेक प्रकार के आवश्यक और सुख-सुविधा के साधनों में वैकल्पिक पदार्थों का उपयोग कर लकड़ी के इस्तेमाल को कम कर दिया है, लेकिन फिर भी लकड़ी की खपत में कोई कमी नहीं है। कारण प्रथम तो जिन वस्तुओं को लकड़ी से बनाने में पहले भी प्राथमिकता दी जाती थी वहाँ बहुत अन्तर नहीं आया है, जैसे रेलवे में लकड़ी के स्लीपर, रेलवे कोच, कार्यालय के फर्नीचर, बड़े-बड़े भवनों के दरवाजे, खेल का सामान, संगीत के उपकरण आदि। भारत में तो लकड़ी का बहुत अधिक उपयोग शवदाह के लिए होता है। उसमें भी संस्कृति के अनुरूप कोई परिवर्तन नहीं है। फिर जहाँ लकड़ी का उपयोग कम भी किया है उस कमी को बढ़ती जनसंख्या के दबाव ने पूरा कर दिया है।

वनों का प्रयोग केवल लकड़ी को ईंधन या कच्चे माल के रूप में प्रयोग करने तक सीमित नहीं है, बल्कि इनके अनेक पर्यावरणीय एवं भौगोलिक महत्त्व हैं—

1. ये पानी और मिट्टी जैसे महत्त्वपूर्ण संसाधनों की सुरक्षा और संरक्षा (Preservation & Conservation) करते हैं। भूमि क्षरण रोकते हैं, भू-सतही जल को रोककर उन्हें स्वच्छ कर भूमिगत जल में भेजते हैं तथा जमीन की नमी को बनाये रखते हैं।

2. ये नदियों के प्रवाह को नियमित करते हैं, उनके प्रदूषण को नियंत्रित करते हैं, मिट्टी को बहकर जाने से रोकते हैं, बाढ़ रोकते हैं या कम करते हैं।
3. वन आच्छादित क्षेत्र वायुमण्डल की आर्द्रता बनाये रखते हैं, जिससे अधिक वर्षा की सम्भावना रहती है।
4. अनेक पशु-पक्षी और जीव-जन्तुओं का ये आश्रय-स्थल होते हैं। शेर जैसे वन्य जीव को आश्रय देकर पर्यावरण सन्तुलन की भूमिका निर्वाह करने में सहायक बनते हैं।
5. वनों से औषधियाँ प्राप्त होती हैं, जिनसे अनेक अस्वस्थ लोगों का उपचार सम्भव है।
6. कई प्रकार के कुटीर उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं, जैसे बेंत का फर्नीचर, खिलौने आदि।
7. गोंद, लाख, कत्था, शहद, रबड़, मोम और न जाने कितने प्रकार की गौण उपज वनों से प्राप्त होती हैं।
8. मनोरंजन स्थल के रूप में विकसित कर इन्हें आय का साधन बनाया जा सकता है।
9. जल-चक्र तथा वायु-चक्र में प्रमुख भूमिका निभाते हैं।
10. ये ऑक्सीजन (प्राण वायु) के संचित कोष स्थल हैं जो कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर ऑक्सीजन देते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से विश्वतापन रोकने में इनकी महती भूमिका है।
11. वन भूमि की उर्वरकता को बढ़ाते हैं। वृक्षों से भूमि पर गिरने वाली पत्तियाँ आदि सड़-गलकर मिट्टी में मिल जाती हैं इससे मिट्टी को जीवाश्म की प्राप्ति होती है।
12. उद्योगों से होने वाले प्रदूषण को रोकते हैं। घनी वृक्षावली कई प्रकार की विषैली गैसों का अवशोषण करती है। वृक्ष ध्वनि प्रदूषण को भी कम करते हैं।

आर्थिक दृष्टि से एक पेड़ का मूल्यांकन कलकत्ता विश्वविद्यालय के एक कृषि वैज्ञानिक डा. तारक मोहनदास ने किया है। उनके अनुसार 50 वर्ष आयु के 50 टन भार वाले एक वृक्ष को यदि अगले 50 वर्षों तक जिन्दा रखा जाये तो उसका प्रतिदान निम्न प्रकार होगा—

विवरण	मूल्य (रुपयों में)
1000 किलो प्रतिवर्ष के हिसाब से 50 वर्षों में उत्पन्न 50,000 किग्रा ऑक्सीजन का 5 रु. की दर से	2·50 लाख
वायु प्रदूषण पर नियन्त्रण	5·00 लाख
जल का पुनर्चक्रीकरण तथा आर्द्रता पर नियन्त्रण	3·00 लाख
भू-क्षरण की रोकथाम तथा उर्वरा शक्ति में बढ़ोतरी	2·50 लाख
पत्तियों से प्रोटीन व वसा निर्माण	0·20 लाख
पशु-पक्षी, कीड़ों तथा पौधों का संरक्षण	2·50 लाख
कुल आर्थिक लाभ	15·70 लाख

यदि इसी पेड़ को काटकर इसकी लकड़ी बेची जाये तो उसका कुल अधिकतम मूल्य 5,000 रु. ही मिलेगा जो उपर्युक्त का केवल 0·3 प्रतिशत है।

अतः यह स्पष्ट है कि वन हमारे लिए आर्थिक, पर्यावरणीय और भौगोलिक सभी दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। हमें इनकी रक्षा करनी चाहिए।

● भारत की राष्ट्रीय वन नीति (National Forests Policy of India)

भारत की वनों के प्रबन्ध के लिए सबसे पहली राष्ट्रीय वन नीति सन् 1894 में बनाई गई जिसमें वनों की संरक्षा (preservation) तथा आरक्षित (reserved) और सुरक्षित (protected) वनों के निर्माण की ठोस व्यवस्था थी। इस नीति के अनुसार—

1. पहाड़ी ढलानों पर के वनों की सुरक्षा होनी चाहिए।
2. वनों का प्रबन्ध पूर्णतया व्यावसायिक होना चाहिए।

3. जहाँ भी कृषि योग्य भूमि वन क्षेत्र में आती हो उसे कृषि कार्य हेतु उपयोग में लानी चाहिए। साथ ही कृषि का स्थायी प्रकार भी होना चाहिए।
4. स्थानीय लोगों के लाभ के लिए उत्कृष्ट प्रकार के वन तैयार करने चाहिए।

स्पष्ट है कि यह नीति विशेषतः कृषि के विकास की ओर इंगित थी।

सन् 1921 में वनों को राज्य अधीन कर दिया गया लेकिन तब तक ईंधन और लकड़ी की आवश्यकता की पूर्ति हेतु बहुत-सा वन क्षेत्र प्रथम विश्व युद्ध (1914-18) में नष्ट हो चुका था। दूसरे विश्व युद्ध (1939-45) में पुनः युद्ध की आवश्यकता के लिए वन कटे और रही सही वन कटने की प्रक्रिया लकड़ी से सम्बन्धित खोले गये कारखानों की पूर्ति के लिए जारी रही। आजादी के बाद जब जमींदारी समाप्त हुई तो सभी प्रकार के वन राज्य सरकार ने अपने अधीन ले लिए और **उस समय की वस्तुस्थिति के आधार पर सन् 1952 में दूसरी राष्ट्रीय वन नीति घोषित हुई। इसमें यह प्रावधान था कि भू-भाग के 33·3 प्रतिशत में वन क्षेत्र होने चाहिए।**

इस दूसरी राष्ट्रीय वन नीति (Second National Forest Policy)[1] में विशेषतः यह बात इंगित की गई कि प्रत्येक प्रकार की भूमि को उसी प्रयोग के लिए आवंटित किया जाये जिस हेतु वह उपयुक्त है तथा जिससे अधिक-से-अधिक उत्पादन हो और भूमि की उपयोगिता भी बनी रहे। स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं की यथासंभव पूर्ति का ध्यान रखा जावे तथा इस आवंटन प्रक्रिया में कोई काम ऐसा नहीं हो जिससे न तो सरकार को हानि पहुँचे और न ही भावी पीढ़ी को कोई स्थायी अभाव उत्पन्न हो। इस नीति[2] में निम्नलिखित मूल सिद्धान्त निर्धारित किये गये—

1. वनों को कार्यमूलक आधार पर वर्गीकृत करना (आरक्षित वन, राष्ट्रीय वन, गाँव के वन आदि)।
2. स्थानीय तथा सामान्य लोगों के कल्याण के लिए कृषि एवं वन भूमि में सन्तुलन बनाये रखना।
3. वनों के अन्धाधुन्ध कटाव को रोकना तथा वानिकी का विस्तार करना।
4. विभिन्न आवश्यक एवं उचित उपयोग में लाने हेतु लकड़ियों की नियमित पूर्ति हेतु प्रयास करना।
5. नदियों के उद्‌गमस्थल, भू-क्षरण वाले क्षेत्र तथा समुद्रतटीय रेत के टीलों को रोकने के लिए वहाँ के क्षेत्र में लकड़ी की कटाई एकदम रोकना तथा वृक्षारोपण करना।

इस नीति में यद्यपि काफी वन संरक्षण की बात और मानव उपयोग की संकल्पना रखी गई थी पर फिर भी व्यावहारिक रूप से प्रत्येक स्तर पर कई कठिनाइयाँ उभर कर आईं और कई सुझाव संशोधन के लिए उठे। अतः इस हेतु विशेष रूप से बनाई गई एक नवनिर्मित कमेटी ने 1976 में नई राष्ट्रीय वन नीति के लिए संशोधन सहित सुझाव प्रस्तुत किये। **श्री आर. एस. पठान[3] के अनुसार सन् 1988 में नवीनतम नीति में वन संसाधनों के प्रबन्धन में जन-साधारण की भागीदारी का प्रावधान है। स्वीकार करने के बाद यह तीसरी राष्ट्रीय वन नीति कहलाई। तब से वनों के प्रबन्धन में बहुत कठिनाइयाँ आई हैं, पर कोई नई वन नीति आज तक नहीं बन पाई है। प्रतिवर्ष कुछ सुझाव केवल कागजों तक सीमित रहते हैं।**

● वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 (Forest Conservation Act, 1980)

अन्य प्रयोजनों के लिए वन भूमि के अंधाधुन्ध अनारक्षण और उपयोग को रोकने के लिए सन् 1980 में वन (संरक्षण) अधिनियम अधिनियमित किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी आरक्षित वन को अनारक्षित घोषित करने या वन भूमि को गैर वन प्रयोजन के लिए उपयोग में लाने के लिए केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक होगी। वन भूमि को गैर वन भूमि के कार्य हेतु आवंटन के साथ ही यह प्रतिबन्ध भी है कि उतनी ही अथवा उसके समतुल्य क्षेत्र में वन (पेड़) लगाने होंगे।

---

1. **Source : Annual Reports 1986-87 to 1992-93,** Ministry of Environment & Forest, Govt. of India, C. G. O. Complex, Lodhi Road, New Delhi.
2. **स्रोत : पर्यावरण शिक्षा एवं पर्यावरण संरक्षण :** डॉ. भोपाल सिंह : आर्य बुक डिपो, करोल बाग, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ 156-157.
3. **Source :** An article, **'Mass Mobilisation of Forest Dwellers : A Requirement for Sustainable Forestry' :** R. S. Pathan; Published in Report : **Forests for Sustainable Development;** Ed. Deshbandhu & L. M. Sharma, Indian Environmental Society, New Delhi, 1991, p.101.

भारत सरकार के पर्यावरण विभाग की 1986-87 की रिपोर्ट के अनुसार सन् 1980 से पूर्व जहाँ 1·5 लाख हेक्टेयर वन क्षेत्र प्रति वर्ष कट रहे थे, वहीं इस अधिनियम के बाद से केवल 5,500 हेक्टेयर वन क्षेत्र ही औसत प्रति वर्ष वन क्षेत्र कटने लगे। उल्लेखनीय है कि अधिनियम 25 अक्टूबर, 1980 से प्रारम्भ हुआ था। विभिन्न वर्षों की उपयुक्त रिपोर्ट बताती है कि नियमानुसार आवेदन करने पर लोगों को वन क्षेत्र से गैर वन उपयोग हेतु भूमि का आवंटन हो रहा है और नियमित रूप से व्यक्ति तथा संस्थाएँ इस हेतु भारत सरकार को आवेदन कर रही हैं। कार्य में गति लाने और लोगों को सुविधा देने के लिए भारत सरकार ने देश में 6 स्थानों (बंगलौर, भोपाल, भुवनेश्वर, लखनऊ, शिलोंग और चंडीगढ़) पर क्षेत्रीय कार्यालय खोल दिये हैं। राज्य सरकारों को ये निर्देश दिये हैं कि वे अपने क्षेत्र के आवेदन इन क्षेत्रीय कार्यालयों के मार्फत ही स्वीकार करावें।

● वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 का संशोधन
(Amendment of Forest Conservation Act, 1980)

वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के उपबन्धों के उल्लंघन को रोकने के लिए वर्तमान उपबन्धों को अधिक कठोर बनाने के वास्ते अधिनियम का संशोधन किया गया है जिसमें निम्नलिखित उपबन्ध शामिल हैं—

1. कोई भी राज्य सरकार अथवा अन्य आदेश जारी नहीं कर सकते जिनमें ये निर्देश दिये गये हों कि कोई वन भूमि अथवा उसका कोई हिस्सा केन्द्र सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना किसी व्यक्ति अथवा किसी ऐसे प्राधिकरण, निगम, एजेन्सी या किसी अन्य संगठन को पट्टे पर या अन्यथा दी जाये, जिसका स्वामित्व प्रबन्ध अथवा नियन्त्रण सरकार के अधीन न हो।

2. वनेतर प्रयोजनों की परिभाषा में चाय, कॉफी, मसाले, रबर, ताड़, तिलहनी पौधों, बागवानी सम्बन्धी फसलों और औषधियों पौधों को शामिल करके उसके क्षेत्र का विस्तार किया गया है।

3. स्पष्टीकरण के तहत एक और अनुच्छेद जोड़ दिया गया है, ताकि उसमें ऐसे कार्यों को भी शामिल किया जा सके जो कि वन प्रयोजनों के भाग के रूप में वन सरंक्षण, विकास और प्रबन्ध के लिए अनुप्रासंगिक हैं, क्योंकि मूल अधिनियम में इनका उल्लेख नहीं था, और

4. जो कोई भी अधिनियम की धारा 2 के उपबन्धों का उल्लंघन करेगा या उल्लंघन की प्रेरणा देगा उसको 15 दिन तक की सामान्य कैद का दण्ड दिया जावेगा। इसमें वे सरकारी कर्मचारी भी शामिल होंगे जो अपराध घटित होते समय प्रत्यक्षतः प्रभारी होंगे।

5. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 की धारा 3 के तहत गठित सलाहकार समिति को संशोधित वन संरक्षण नियमों के अनुसार पुनर्गठित किया गया है। पर्यावरण और वनरोपण के क्षेत्र में तीन ख्याति प्राप्त हस्तियों को गैर सरकारी सदस्यों के रूप में समिति में शामिल किया गया है।

● वन कानून
(Forest Legislation)

प्रथम भारतीय वन अधिनियम सन् 1927 में बना जिसके अन्तर्गत राज्य सरकारों द्वारा वन-प्रबन्ध किया जाता रहा है, लेकिन उसके बाद 1952 और फिर 1988 की भारतीय वन नीति के घोषित हो जाने पर इस बात की आवश्यकता महसूस की जा रही है कि इस नीति परिवर्तनों के अनुकूल वन कानून में यथा प्रकार परिवर्तन/संशोधन हो। अतः पिछले वन अधिनियम में वांछनीय संशोधनों के आधार पर मसौदा तैयार कर राज्य सरकारों के पास उनके सुझावों के लिए भेज दिया गया है। गतिविधि प्रगति पर है।

● देश में वनों की वर्तमान स्थिति
(Present Status of Forests in the Country)

भारत के 329 mh भौगोलिक क्षेत्र में 63·73 mh (लगभग 19·39 प्रतिशत) वन क्षेत्र हैं जो सरकारी रिकार्ड में दर्ज हैं और ये भी सभी स्वीकारते हैं कि वास्तविक स्थिति में इस क्षेत्र में सभी स्थानों पर वन नहीं हैं, और कहीं-कहीं तो केवल खाली स्थान तक हैं। देश के विभिन्न राज्यों के भू-भाग तथा उनके क्षेत्रों की स्थिति देखें, जो अग्र प्रकार हैं—

सारणी 10·1
देश के विभिन्न राज्यों के वन क्षेत्र[1]

विभिन्न वर्षों में वन क्षेत्र की स्थिति						
	प्रदेश/केन्द्र शासित प्रदेश	भौगोलिक क्षेत्र (वर्ग किमी में)	वन क्षेत्र (वर्ग किमी में)			
			1995	1997	1999	वर्तमान स्थिति
1.	आन्ध्र प्रदेश	275068	47112	43290	44229	16·08%
2.	अरूणाचल प्रदेश	83743	68621	68602	68847	82·21%
3.	असम	78438	24061	23824	23688	30·20%
4.	बिहार	173877	26561	26524	26474	15·23%
5.	गोवा (दमन द्वीव सहित)	3702	1250	1252	1251	33·79%
6.	गुजरात	196024	12320	12578	12965	6·61%
7.	हरियाणा	44212	603	604	964	2·18%
8.	हिमाचल प्रदेश	55673	12501	12521	13082	23·50%
9.	जम्मू एण्ड कश्मीर	222236	20433	20440	20·441	9·20%
10.	कर्नाटक	191791	32382	32403	32467	16·93%
11.	केरल	38863	10336	10334	10323	26·56%
12.	मध्य प्रदेश	443446	135164	131195	131830	29·73%
13.	महाराष्ट्र	307690	43843	46143	46672	15·17%
14.	मणिपुर	22327	17558	17418	17384	77·86%
15.	मेघालय	22429	15714	15657	15633	69·70%
16.	मिजोरम	21081	18576	18775	18338	86·99%
17.	नागालैण्ड	16579	14291	14221	14164	85·43%
18.	उड़ीसा	155707	47107	46941	47033	30·21%
19.	पंजाब	50362	1342	1387	1412	2·80%
20.	राजस्थान	342229	13280	13353	13871	4·05%
21.	सिक्किम	7096	3127	3129	3118	43·94%
22.	तमिलनाडु	130058	17766	17064	17078	13·13%
23.	त्रिपुरा	10486	5538	5540	5745	54·79%
24.	उत्तर प्रदेश	294411	33986	33994	34016	11·55%
25.	पश्चिमी बंगाल	88752	8276	8349	8302	9·42%
26.	उत्तरांचल	—	—	—	—	—
27.	झारखण्ड	—	—	—	—	—
28.	छत्तीसगढ़	—	—	—	—	—
29.	दिल्ली	1483	26	26	88	5·93%
30.	अण्डमान एण्ड निकोबार	8249	7615	7613	7606	92·21%
31.	चंडीगढ़	114	07	07	07	6·14%
32.	दादरा और नगर हवेली	491	204	204	202	41·14%
33.	दमन एण्ड द्वीव	112	—	03	03	2·68%
34.	लक्षद्वीप	32	00	00	00	00
35.	पाण्डिचेरी	492	00	00	00	00
	कुल	3287263	639600	633397	637293	19·39%
		328.73mh	63.96mh	63.34mh	63.73mh	

अ. नये निर्मित राज्यों के स्वतंत्र आंकड़े अभी उपलब्ध नहीं हैं, इन्हें (1) उत्तरांचल (उत्तर प्रदेश), (2) झारखंड (बिहार) तथा (3) छत्तीसगढ़ (मध्य प्रदेश) के साथ पढ़ें।

ब. कुल वन क्षेत्र 1993/19·47%, 1995/19·46%, 1997/19·27% और 1999/19·39%

1. **Source : Survey of the Environment from 1995 to 2001; The Hindu, 7, Parthsarthy Gardens, chennai (India).**

नेशनल रिमोट सैन्सिंग एजेन्सी (NRSA) के प्रतिवेदन के अनुसार प्रतिवर्ष वनों की कटाई के फलस्वरूप वन क्षेत्र में वनों का प्रतिशत निरन्तर कम हो रहा है और निश्चय ही अच्छे वनों (पेड़ों का घनत्व 30 प्रतिशंत या अधिक) का प्रतिशत 15-16 प्रतिशत से अधिक नहीं है। इसी प्रकार विरल वन क्षेत्र में वनों का प्रतिशत लगभग 9-10 प्रतिशत ही है। कुल मिलाकर वन क्षेत्र में वनों की स्थिति 11 से 12 प्रतिशत के मध्य है।' इसमें वह वन भाग भी सम्मिलित है जो सामाजिक या अन्य वानिकी के माध्यम से बढ़ाया गया है। स्थिति का जायजा लें कि अपेक्षित 33 प्रतिशत (110 mh) वन क्षेत्र के मुकाबले 1952 में 23 प्रतिशत वन क्षेत्र (75 mh) माने गये और 50 वर्ष बाद 2002 के प्रारम्भ में 19·4 प्रतिशत (63·7 mh) वन क्षेत्र हैं अर्थात् अनेक प्रयासों के बावजूद प्रतिवर्ष देश में निरन्तर वन क्षेत्रों की हानि हो रही है। यदि यही स्थिति रही तो अगले 15 या 20 वर्षों में कितने वन क्षेत्र रह जायेंगे, यह विचारणीय प्रश्न है ?

अतः हमारे सामने वनों की जो यह दयनीय स्थिति है (कारण कि वास्तविक 10-12% वन क्षेत्रों पर किसी देश की स्थिरता और अस्तित्व कैसे रहता है, यह आश्चर्य है) इससे दो बातों की स्पष्ट आवश्यकता प्रतीत होती है, (1) जो वन क्षेत्र 23 प्रतिशत हैं उनकी स्थिति सुधार कर उन्हें वास्तव में वन युक्त (पेड़ों से युक्त) बनाया जाये और (2) वन क्षेत्रों का विस्तार 33 प्रतिशत हो अर्थात् लगभग 110 mh क्षेत्र में वन क्षेत्रों को फैलाया जाय। यह 33 प्रतिशत वन क्षेत्र की अभिशंसा कोई नई नहीं है। 1952 की राष्ट्रीय वन नीति में यह प्रस्तावित थी और यह आश्चर्य है कि आज 50 वर्ष की लम्बी अवधि के अन्तराल में भी हम अपने किसी लक्ष्य को पाने में सफल नहीं हो सके हैं।

• वनों के विनाश के कारण
(Causes of Forests' Destruction)

वनों के विनाश के कारणों के लिए यह बहुत आसान है कि इनकी एक लम्बी सूची तैयार कर दी जाये तब जब चाहे फिर उसे प्राथमिकता के आधार पर क्रमबद्ध कर दिया जाये, लेकिन मूल रूप से वन विनाश के पीछे बढ़ती जनसंख्या का दबाव और उसके साथ ही निरन्तर बढ़ते पशुधन को ही स्वीकार करना होगा। जहाँ भोजन पकाने के लिए ईंधन और शवदाह के लिए लकड़ी की आवश्यकता के लिए वन कटे वहीं पशुओं के चारे के लिए भी जंगल साफ हो गये। जितने वन कटे, उस अनुपात में वृक्षारोपण नहीं हुआ और परिणाम यह निकला कि वन क्षेत्रों का निरन्तर ह्रास होता रहा।

दूसरे स्थान पर लकड़ी का इमारती उपयोग तथा फर्नीचर और अन्य सुख-सुविधा के लिए लकडी की आवश्यकता ने भी बनों को नष्ट किया। जहाँ बिना लकड़ी के भी काम चल सकता था, वहाँ पर भी शान-शौकत के नाम पर लकड़ी का उपयोग हुआ और एक-दूसरे की होड़ ने इसे और बढ़ावा दिया।

आबादी बढ़ी, भोजन के लिए अन्न की अधिक उपज आवश्यक थी, वन काट कर खेत बना दिये गये। पानी की कमी की पूर्ति के लिए बाँध बनाये, अनेक जंगल समाप्त कर दिये गये। आवास हेतु मकानों की आवश्यकता हुई तो गाँव और कस्बे आस-पास के पेड़ युक्त स्थानों पर गाज गिरी। कल्याणकारी राज्यों की जनता को मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की नीति ने यह विनाश लीला अप्रत्यक्ष रूप से ही कर डाली। परिणाम पर अधिक ध्यान ही नहीं दिया गया; भविष्य की चिन्ता किसे थी ?

वन क्षेत्रों के विनाश के लिए देश की औद्योगिक क्रान्ति भी कम जिम्मेदार नहीं। एक ओर जहाँ कारखाने चलाने के लिए ईंधन के रूप में वनों का इस्तेमाल हुआ वहीं कच्चे माल की पूर्ति हेतु भी यही जंगल काम आये। खेल का सामान, बच्चों के खिलौने, रेल के स्लीपर और डिब्बे, कृषि के औजार, गाँवों में खेती के लिए हल और अनाज ढोने को गाड़ियाँ, शहरों में धनाढ्यों के ड्राइंग रूमों की साज-सज्जा और बनावटी दीवारें तथा छतें आदि न जानें कितने चाहे-अनचाहे लकड़ी के प्रयोग ने वनों की शामत ला दी। लकड़ी का उपयोग चलता रहा, वन कटते रहे।

पानी के अन्धाधुन्ध उपयोग अथवा दुरुपयोग से भी वृक्षों पर संकट आया। सतही जल के अतिरिक्त भूमिगत पानी के उपयोग से भूमिगत जल की गहराई दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई और वृक्षों की जड़ों को पानी की कमी ने हिला दिया। दड़े-बडे वृक्ष सूख गये, नष्ट हो गये और इसका सीधा असर वन क्षेत्रों पर पड़ा। इसके अतिरिक्त जो भी काम प्रकृति के अनुकूल नहीं किये गये अथवा जहाँ भी प्रकृति से छेड़छाड की उसका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव वनों पर पड़ा।

• वन संरक्षण के लिये केन्द्र सरकार द्वारा उपाय
(Efforts of Central Government for Forests Conservation)

वनों की खराब स्थिति को देखते हुये (केवल भूमि भाग के 19·39% क्षेत्र में वन) केन्द्र के लिये चिंता का विषय है। उन्होंने भी अनेक कार्यक्रम चलाकर वनों की वृद्धि के लिये नई दिशा दी है। वह हैं—

1. ईंधन के वैकल्पिक स्त्रोतों का उपाय (Use of Alternate Sources of Fuel) : ईंधन की लकड़ी के कारण वनों पर पड़ने वाले बोझ को कम करने के लिये वनों के आस-पास बसे उन शहरों को LPG की आपूर्ति करने के लिये अभिनिर्धारित किया गया है जिनकी आबादी 5000 से अधिक है। पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मन्त्रालय इस आपूर्ति पर नियमित रूप से ध्यान देंगे। राज्य सरकारों को भी ऐसी सलाह दी गई है कि इन नगरों में मिट्टी के तेल की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित करें। वन क्षेत्रों से इमारती लकड़ी की तस्करी और अवैध कटाई को रोकने के लिये निवारक उपाय करने की भी सलाह दी गई है।

2. जैविक हस्तक्षेप से वनों की सुरक्षा (Protection of Forests from Biotic Interferences) : जैविक हस्तक्षेप से वनों की सुरक्षा के लिये आधारभूत ढांचे के विकास की स्कीम 1986-87 से आरम्भ की गई थी। इस स्कीम के अन्तर्गत अवैध कटाई, अवैध कब्जे और चराई को रोकने के प्रभावी सुरक्षा उपाय करने के लिये राज्य सरकारों को 50% केन्द्रीय सहायता दी जाती है। इसका मुख्य लक्ष्य वनों की वृद्धि करना है।

3. वन-अग्नि नियंत्रण योजना (Forest Fire Control Strategy) : भारत में आधुनिक दावानल नियंत्रण पद्धतियों की शुरुआत' नामक् केन्द्रीय प्रायोजित स्कीम सन् 1992-93 से प्रारम्भ की गई है। इसमें निम्न उद्देश्य रखे गये हैं—

(1) प्राकृतिक और कृत्रिम दोनों प्रकार के वनों की सुरक्षा तथा उनके संरक्षण को देखते हुये दावानल को नियमित करना,
(2) दावानल की घटनाओं और उसके फैलाव को कम करके वनों की उत्पादकता में सुधार लाना,
(3) दावानल को रोकने, उसका पता लगाने और उसके शमन में मूल सिद्धान्तों और तकनीकों का विकास, परीक्षण और प्रदर्शन करना, और
(4) कार्मिकों को दावानल प्रबन्ध में भागीदारी के लिये तैयार करने हेतु उन्हें प्रशिक्षण कार्यक्रम के जरिये प्रशिक्षित करना,

इन कार्यों हेतु चयनित राज्यों को शत प्रतिशत केन्द्रीय सहायता दी जाती है।

4. प्राकृतिक साधनों का संरक्षण (Conservation of Natural Resources) : प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु निम्न कार्यों की स्वीकृति तथा वित्तीय सहायता केन्द्र सरकार द्वारा दी गई है—

(1) जीवमण्डल रिजर्व्स का चयन व उनका रख-रखाव।
(2) नमभूमि, कच्छ वनस्पति तथा प्रवाल भित्तियाँ।
(3) झील संरक्षण।
(4) जैव-विविधता संरक्षण।
(5) वनस्पति उद्यानों को सहायता और
(6) औषधीय पौधों की अधिक उपज।

5. मरुस्थलीयकरण को रोकना (Combating Desertification) : अनुमान है कि भारत के भौगोलिक क्षेत्र की 61.9% भूमि शुष्क है और मरुस्थलीय समस्याओं से प्रभावित है। जहाँ एक ओर पश्चिमी राजस्थान के जिलों तथा गुजरात तथा हरियाणा के आस-पास के क्षेत्रों का गर्म रेतीले मरुक्षेत्रों के रूप में पता चला है वहीं दूसरी ओर जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश में दो-दो जिलों को ठंडे मरुक्षेत्रों के रूप में पता लगाया गया है। मरुस्थलीकरण से निपटने के लिये भारत ने भी अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेशन पर अक्टूबर 1994 में हस्ताक्षर किये हैं।

6. वनोपज में हिस्सेदारी (Sharing in Forest's Produce) : जो वन क्षेत्र निरन्तर गिरावट पर हैं और वहाँ वनों से कुछ नहीं मिल पा रहा है, वहाँ पर केन्द्र सरकार ने एक नई केन्द्रीय प्रवृतित योजना

प्रारम्भ की है। आस-पास के अनुसूचित जाति-जनजाति तथा ग्रामीण निर्धनों की सहायता से अवक्रमित वन क्षेत्रों में सुधार लाकर उन्हें उन्नत बनाना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है। दैनिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त कार्य करने वालों को वन उपज में से भी पूर्व निर्धारित भागीदारी मिलेगी। यह योजना 1992-93 से कार्यान्वित की जा रही है।

7. संयुक्त वन प्रबन्धन (Joint Forest Management) : यह योजना भी अवक्रमित वनों को उन्नत बनाने के लिये ही लगभग उपर्युक्त प्रकार की ही है। पर इसमें कोई भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकता है। 1 जनवरी, 2000 में 10.25 मिलियन लोग 36 हजार ग्रामीण वन सुरक्षा समिति की सहायता से इस कार्य में लगे थे। कार्यप्रगति पर है। राज्य सरकारें इन योजनाओं की मध्यस्थता करती हैं। वन मंत्रालय इस योजना की सहायता से 7mh भूमि में से अधिकांश को सघन वनों में परिवर्तन कर लेने का लक्ष्य रखती है।

● वन विनाश का सम्भावित समाधान (Possible Solution of Forests Destruction))

कठिन प्रश्न होते हुए भी इसका उत्तर आसान है। कारण यह है कि उस स्थिति की हमें जानकारी है जब प्रकृति की हमारे ऊपर बड़ी कृपा थी। शुद्ध वायु, स्वच्छ जल, उर्वरक और प्रदूषण रहित भूमि तथा लहलहाते हुए वृक्षों वाले वन सभी हमें उपलब्ध थे। समय के साथ-साथ कुछ आवश्यकताओं ने और कुछ सुख-सुविधाओं की होड़ ने जीवन रक्षक पेड़ों की बर्वादी की। पर्यावरण सन्तुलन के लिए आवश्यक वनों को नष्ट कर दिया गया। अतः अब एक बार फिर पूरे देश को, देश के एक-एक व्यक्ति को पुरानी स्थिति प्राप्त करने हेतु जूझना होगा। सरकार को चाहे अपनी तीसरी भारतीय वन नीति 1988 में भी संशोधन करना पड़े, कुछ ऐसे कठोर प्रतिबन्ध लगाने होंगे, जिससे वनों की रक्षा हो सके और नये वृक्षों के लगाने की शुरूआत हो। इसके साथ ही जन साधारण में इस प्रकार चेतना जगानी होगी जिससे उनकी वृक्षों की सुविधा के लिए रुचि बढ़े।

लक्ष्य बहुत सीधा और स्पष्ट है। अपनी खोई वन सम्पत्ति (23 प्रतिशत वन क्षेत्र) को वापस लाना है और द्वितीय राष्ट्रीय वन नीति के अनुकूल (33 प्रतिशत वन क्षेत्र तक) वनों का विस्तार करना है।

सरकार से अपेक्षा है कि वह तत्काल प्रतिबन्ध लगावे—

1. पेड़ों की कटाई एक साथ रोक दी जावे। केवल औषधि वाले वृक्ष अपवाद रहें।
2. कार्यालयों में फर्नीचर, स्कूलों में टेबिल-स्टूलें, लकड़ी के न हों। वैकल्पिक रूप से प्लास्टिक अथवा एल्युमिनियम का प्रयोग सम्भव है।
3. ईंधन के रूप में लकड़ी के विकल्प के रूप में सौर ऊर्जा तथा गोबर गैस का उपयोग किया जाये। जहाँ तक गैस उपलब्ध कराई जा सकती हो, उसे वितरित किया जाये।
4. शवदाह हेतु विद्युत शवदाह गृहों के उपयोग का चलन शुरू किया जाये। सुधरी हुई (विकसित) शवदाह प्रणाली में लकड़ी कम व्यय होती है उसका लाभ लिया जाये।
5. कई संयंत्र जिनमें रंगाई-धुलाई के लिए लकड़ी का ईंधन के रूप में भारी मात्रा में प्रयोग होता है, उनमें भी कोई वैकल्पिक व्यवस्था की जानी चाहिए।
6. पशु-धन की चराई के लिए गोचरों की पुरानी पद्धति को अपनाया जाये। इससे उनके भोजन की व्यवस्था भी चलती रहेगी और वन रक्षा में भी सहायता मिलेगी।

इसके साथ ही सरकार निश्चित रूप से सहयोग करे, उनको—

1. जो वृक्ष लगाना चाहते हों, उन्हें पौधे उपलब्ध कराये जायें, तकनीकी जानकारी दी जाये।
2. जो राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार चलें, उन्हें सम्मानित और पुरस्कृत किया जावे।
3. जो लोगों में वनों के प्रति संरक्षण और विस्तार हेतु रुचि जगावें, उनकी प्रशंसा की जाये। समाज में उनकी पहचान (recognition) बनाई जाये।

जनसाधारण को भी चाहिए कि वे अपने उत्तरदायित्व का राष्ट्रहित में निर्वाह करें। लकड़ी का उपयोग कम से कम करें और जो अधिक उपयोग करते हों उन्हें निरुत्साहित करें। जो वृक्ष लगे हों, चाहे वह घर में हों, स्कूल में, अस्पताल में, पंचायत में हों, सड़क के किनारे हों या गाँव के बीच में, उनकी रक्षा

करें। नये वृक्ष लगावें। यह आवश्यक है कि लोग अब यह समझें और अपने-अपने मानस में बिठावें कि "वनों की रक्षा ही जीवन की रक्षा है।"

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. वनों की उपयोगिता बताते हुये स्पष्ट करिये कि यह प्राणी जीवन के आधार हैं ?
2. वनों को विनाश से कैसे बचाया जा सकता है ?.
3. गेहूँ के भारी उत्पादक पंजाब में वन क्षेत्र केवल 2·80% है, ऐसा क्यों ? क्या इसकी तुलना हरियाणा के 2·18% से की जा सकती है ?
4. वन क्षेत्र में वृद्धि हो, इस हेतु कोई ठोस योजना बताइये।
5. दूसरी राष्ट्रीय वन नीति में क्या मूल सिद्धान्त रखे गये थे ? विवेचना करिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'वन संरक्षण अधिनियम' की मूल बातें समेकित करिये।
7. जनसंख्या वृद्धि से वन क्षेत्रों पर क्या प्रभाव पड़ा ?
8. लकड़ी के उपयोग को कम कैसे किया जा सकता है ?
9. वन क्षेत्र को परिभाषित करिये।
10. वन क्षेत्रों की प्रशासनिक व्यवस्था क्या है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ टी. मोहनदास ने एक पेड़ से कितना वार्षिक लाभ बताया है ?
    (अ) 15·07 लाख रु. (ब) 15·37 लाख रु.
    (स) 15·70 लाख रु. (द) 15·77 लाख रु.
12. वनों की भूमिका निम्न चक्र में नहीं होती है—
    (अ) जल (ब) वायु
    (स) कार्बन (द) फॉस्फोरस
13. भारत में सबसे अधिक प्रतिशत वन-क्षेत्र किस प्रदेश में हैं ?
    (अ) मेघालय (ब) मिजोरम
    (स) नागालैण्ड (द) अण्डमान एण्ड निकोबार
14. पाण्डिचेरी में कितने प्रतिशत वन क्षेत्र हैं ?
    (अ) 4·05% (ब) 0·00%
    (स) 2·80% (द) 2·68%
15. वन निम्न का मुख्य आधार है ?
    (अ) कच्चामाल (ब) कार्बन डाइऑक्साइड
    (स) ऑक्सीजन (द) जीवों का आवास

16-20. प्रश्नों के उत्तर सामने कोष्ठक में दीजिये—

- प्रथम राष्ट्रीय वन नीति कब बनी ? ( )
- वर्तमान में भारत में कितने प्रतिशत वन क्षेत्र हैं ? ( )
- शवदाह गृह में जलाने के लिये प्रायः किस ईंधन का प्रयोग होता है ? ( )
- स्कूल फर्नीचर में लकड़ी का कोई विकल्प क्या हो सकता है ? ( )
- वन संरक्षण अधिनियम किस वर्ष में बना ? ( )

11

सामाजिक वानिकी
[SOCIAL FORESTRY]

● **प्रस्तावना**
(Introduction)

वन (Forests) हमारे जीवन आश्रयदाता हैं। यह कितने लाभदायक हैं और इनके बिना इस स्वर्ग कही जाने वाली धरती पर कैसे रह पायेंगे, इसका विवरण और विश्लेषण हमने पिछले अध्याय में किया है। इनकी वृद्धि (Growth), प्रबन्धन (Management) और रख-रखाव (Maintenance) का कार्य जिस किसी भी तरीके से किया जाता है उसे वानिकी (Forestry) नाम दिया गया है। **अतः वानिकी वृक्षारोपण सम्बन्धी सभी कार्यकलापों की एक व्यवस्था है (Forestry is the methodology of management of forest planting and maintenance)।**

केवल सुविधा और आम व्यक्ति के समझने के लिये इसके अनेक क्षेत्र सम्बन्धी नाम दे दिये गये हैं—

1. स्थान विशेष सम्बन्धी (Relating to Places)

(i) ग्रामीण वानिकी (Rural Forestry) : ग्राम समाज की भूमि तथा गाँव के अन्दर निवासियों के भूखण्डों पर वृक्षारोपण।

(ii) नगरीय वानिकी (Urban Forestry) : शहरी क्षेत्र में वनों के विकास, विस्तार और व्यवस्था सम्बन्धी कार्य।

2. कार्य की दृष्टि से (Pertaining to Field)

(i) कृषि वानिकी (Agriculural Forestry) : फसलों के उत्पादन के क्षेत्र में।

(ii) उद्यान वानिकी (Horticultural Forestry) : फल और फूलों के क्षेत्र में।

3. स्वामित्व के प्रकार से (Relating to Ownership)

(i) राजकीय स्वामित्व (Government Ownership) : भूमि जो राज्य सरकारों के अधीन है।

(ii) जमींदारी प्रथा (Jamidari System) : जिसका मालिकाना हक किसी विशेष व्यक्ति के अधीन रहता है।

(iii) गांव के अधीन (Attached to the Villages) : इनमें विशेषकर 'गोचर' भूमि होती है जहाँ पशु चराई का काम स्वतंत्र और निर्भीकता से किया जाता रहा है। मन्दिर के अहाते की भूमि भी इसी श्रेणी में आती है जिसकी देखभाल खासतौर पर मन्दिर का पुजारी ही करता है। इस भूमि पर गाँव के लोगों का समूहिक हक होता है।

4. संभागित्व के प्रकार से (As per Participation)

- **वैयक्तिक** (Individual)
- **शामिलाती** (Joint)
- **सामूहिक** (Collective)
- **राजकीय व्यवस्था** (Governmental Management)

लेकिन इन सभी व्यवस्थाओं में गांव के निर्धन लोग, पराश्रयी तथा अन्य उस श्रेणी के व्यक्तियों को जिन्हें पूर्व से ही सामाजिक व्यवस्था में उचित स्थान नहीं मिल पाया, कहीं भी जुड़े नहीं हैं। वह तो पारिश्रमिक रूप से ही जीवन भर अपने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ गुजारा करते रहे हैं। अतः उनका न तो गांव से ही कोई अति निकट का जुड़ाव है और न ही ग्रामीण कृषि व्यवस्था से।

सन् 1952 के भारत के आंकड़े बताते हैं कि उस समय 329mh भूमि पर 75mh (22.79%) वन क्षेत्र थे जबकि राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार 33% वन क्षेत्र (110mh) अपेक्षित थे। तो कितना भारी अन्तराल वनों की स्थिति में स्पष्ट रूप से दृष्टिगत रहा है। यह 75mh वन क्षेत्र भी निरन्तर सिकुड़ रहा है (विशेषतः खाद्यान्न उपजाने के लिये कृषि क्षेत्र में वृद्धि तथा अनेक प्रकार की इन्डस्ट्रीज, आवागमन के साधन, सड़कें और विकास कार्य के कारण वनों का कटना)। सन् 2001 में वन क्षेत्र अब 63.73mh पर ही हैं। जो कुल भूमि का 19.39% होता है। इन आंकड़ों की व्यावहारिकता पर भी विश्वास कम हो रहा है। Sensory Remote System से जब 10-12% वनों की बात की जानकारी की बात मिले तो देश का भविष्य अधर में झूलने लगता है। 110mh - 63.73mh = 46.27mh = 4.627 लाख वर्ग किमी क्षेत्र में वन कैसे लगें ? इस विचार ने नई योजनाओं को बनाने की राह की ओर इंगित किया है। देश के वनों की नवीनतम स्थिति के लिये 'वन' के अध्याय को देखें।

देश के सभी ग्रामीण क्षेत्र के उन लोगों को जिन पर वस्तुतः काम नहीं है और देश का इतना वनहीन क्षेत्र जिसकी कोई ठोस साज संवार अथवा व्यवस्था नहीं है, को यदि सामूहिक रूप से किसी प्रकार जोड़ दिया जाय तो समस्या का समाधान सम्भव है। यहीं से 'सामुदायिक वानिकी' Community Forestry) की विचारधारा उठी है, जिसे बाद में 'सामाजिक वानिकी' (Social Forestry) का नाम दिया गया है। वस्तुतः यह विचार 1970 के आसपास का रहा है।

सामाजिक वानिकी
(Social Forestry)

सामाजिक वानिकी देश के निरन्तर नष्ट हो रहे वनों की स्थिति सुधारने और अधिक से अधिक भू भाग पर वृक्षारोपण करने के लिये राष्ट्रीय कृषि आयोग (National Commission on Agriculture : 1976) द्वारा अभिशंसित वह कार्यक्रम है जिससे ग्रामीण भारत की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियों में सम्पूर्ण परिवर्तन लाया जा सके। सन् 1999 के आंकड़ों के अनुसार भारत के भू भाग पर केवल 19.39 प्रतिशत क्षेत्र में वन हैं जो 0.06 हेक्टेयर प्रति मनुष्य के हिसाब से हैं। विशेषज्ञों के अनुसार 33 प्रतिशत वन क्षेत्र आवश्यक हैं, जिनसे वृक्षों का प्रति व्यक्ति क्षेत्र 0.11 हेक्टेयर होता है।

सामाजिक वानिकी के मुख्य उद्देश्य, (1) राजकीय वन क्षेत्रों को छोड़कर शेष सभी वृक्ष लगाये जा सकने वाले भू भाग पर वृक्षारोपण, (2) नष्ट हुये वन क्षेत्रों को सुधारना और (3) वायु क्षारण से कृषि उपज की रक्षा करना है। **इस कार्यक्रम में आम जनता की भागीदारी, सहयोग और साझेदारी प्रमुख हैं, अतः इसे 'जनता का, जनता द्वारा और जनता के लिये' कार्यक्रम' भी कहा जाता है।** इसी सहभागिता के आधार पर इसे 'सामुदायिक वानिकी' भी कहा जाता है।

हमारे देश में इस कार्यक्रम का शुभारम्भ भारत सरकार की गजट विज्ञप्ति के वाद। जून, 1990 से ही हुआ। सर्वप्रथम गुजरात राज्य से प्रारम्भ होकर फिर शनैः-शनैः कुछ अन्य प्रदेशों में भी चलाया गया। इस कार्यक्रम को, (1) विश्व बैंक तथा (2) कनाडा, स्वीडन और अमेरिका की विकास एजेन्सियों से वित्तीय सहायता मिली। प्रारम्भ में चार प्रकार के कार्यक्रम, (1) नष्ट हुये वनों का सुधार (Reforestation of Degraded Forests), (2) कृषि वानिकी (Farm Forestry), (3) विस्तार वानिकी (Extension Forestry), (4) विकृत स्थानों को उपयोगी बनाना (Recreation Forestry), इस योजना में चलाये गये।

• सामाजिक वानिकी (Social Forestry)

जैक वैस्टोबी (Jack Westoby) ने नई दिल्ली (भारत) में 1968 में आयोजित Ninth Commonwealth Forestry Conference में इस नये नाम 'सामाजिक वानिकी' का उल्लेख करते हुये कहा था कि आज भारत जैसे विकासशील देश को ऐसे तंत्र (System) की आवश्यकता है जो यहाँ के निवासियों की मूल-भूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर सकता हो और उन्हें आर्थिक लाभ के साथ-साथ सहयोग, सहभागिता और अपनापन की ओर भी आकर्षित कर सकता हो। 1973 में National Commission on Agriculture (राष्ट्रीय कृषि आयोग) ने अपनी अन्तरिम रिपोर्ट में इस तथ्य को प्रस्तुत करते हुए लिखा था—**"समुदाय की वानिकी सम्बन्धी क्रियाकलापों में सक्रिय साझेदारी ही सामाजिक वानिकी का आधार बन सकती है** (Involvement and participation of the community in forestry related activities are essential components of the social forestry.)।

इसी आधार पर सामाजिक वानिकी को उन्होंने निम्न प्रकार परिभाषित करने का प्रयास किया था—

'Social Forestry may be called as the forestry of the people, by the people and for the people.'

(सामाजिक वानिकी को जनता की, जनता द्वारा, जनता के लिये वानिकी कहा जा सकता है।)

लेकिन यह परिभाषा अपने आप में बहुत सम्पूर्ण नहीं मानी गई क्योंकि 'सामाजिक वानिकी' के कार्य क्षेत्र में केवल, (1) खाली पड़ी भूमि (Vacant Lots), (2) बंजर भूमि (Waste Lands), (3), नष्ट हो रहे वन क्षेत्र (Degraded Forests) तथा (4) गोचरों की पुनः स्थापना (Rehabilitation of Pastures) में वन लगाना और विकसित करना ही नहीं था बल्कि उसका वास्तविक लक्ष्य—

(1) Tackling all the interconnected, interrelated and independent problems in rural societies-social, economical, political, cultural and/or technological that prevail in rural sector.

(ग्रामीण समाज में चल रही पारस्परिक सम्बन्धित, सम्मिलित तथा स्वतंत्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और तकनीकी समस्याओं को हल करना।) तथा

(2) Incorporating cooperative, contributory and participatry inputs within the present administrative and technological frame work.

(वर्तमान प्रशासनिक और तकनीकी तंत्र के साथ सहयोग, सहभागिता और अंशदायी निवेशों को सम्मिलित करना।)

था। अतः सामाजिक वानिकी को पुनः निम्न प्रकार परिभाषित करने की आवश्यकता हुई।

"Social forestry is the science and art of growing trees and/or other vegetation on all land available for the purpose, in and outside traditional forest area and managing the existing forests with intimate involvement of the people and more or less integrated with other operations, resulting in balanced and complementary land use with a view to provide a wide range of goods and services to the individuals as well as to the society."

(सामाजिक वानिकी परम्परागत खेतों के अन्दर या बाहर किसी भी प्रकार की उपलब्ध भूमि पर वृक्ष एवं अन्य वनस्पतियों को उगाने की कला अथवा विज्ञान है, जिसमें लोगों की अन्तरंग सहभागिता हो और जिससे भूमि के सही उपयोग के साथ व्यक्तियों तथा समाज को अनेक प्रकार के लाभ मिल सकें।)

इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि सामाजिक वानिकी का अपना विशिष्ट कार्यक्षेत्र है। उसके अपने विशिष्ट लक्ष्य और उद्देश्य हैं और उसकी सफलता अथवा असफलता के अपने मापदण्ड हैं। **डॉ० के० एम. तिवारी** ने अपनी पुस्तक 'Social Forestry in India' में लिखा है—

All schemes of social forestry must conform to the basic idea that the people living below the poverty line must be the maximum beneficiaries in a way that they genuinely feel that they are the part and parcel of the scheme. They should feel that they are the real owners of the forest wealth of their country. If this is achieved then the social forestry programme would be a success."

(सामाजिक वानिकी के सभी कार्यक्रम इस मूल विचार को प्रतिपादित करते हों कि गरीबी रेखा के नीचे के लोगों को इस योजना का अधिकाधिक लाभ मिले और वे ही इस योजना में मुख्य संभागी हैं। उन्हें यह भी महसूस होना चाहिये कि वे देश की वन सम्पदा के मालिक हैं। यदि यह लक्ष्य मिल जाता है तो सामाजिक वानिकी प्रोग्राम की सफलता निश्चित है।)

• सामाजिक वानिकी के उद्देश्य (Objectives of Social Forestry)

भारत देश जो कभी वन सम्पदा के सन्दर्भ में अत्यन्त समृद्ध रहा होगा (जिसका वर्णन हमारे पुराने ग्रंथों में मिलता है), उसकी स्थिति आज इतनी शोचनीय हो जायेगी इसकी कल्पना ही भयभीत कर देती है। वनों की कमी और बढ़ती जनसंख्या के अनुसार कृषि क्षेत्र में वृद्धि ने प्रकृति तंत्र को असहाय बना दिया है। आवास तथा अन्य विकास कार्य में लगी भूमि ने भी वनों का एक बड़ा भाग आत्मसात कर लिया है। देश के निवासी कुछ आधुनिक सुविधाओं को प्राप्त कर अपने आप को गौरान्वित महसूस करते हैं, वहीं आम जनता, विशेषकर ग्रामों में रहने वाली, को न भरपेट भोजन है, न स्वच्छ आवास है। भोजन पकाने को ईंधन की कमी, पशुओं को चारे का अभाव और जीविका उपार्जन न कर सकने की विवशता ने उन्हें लाचार और पंगु बना दिया है। बंधुआ मजदूरों की श्रेणी में केवल पेट भरने के लिये पूरा परिवार जहाँ तहाँ कार्य करना उनकी मजबूरी है। इन्हीं समस्याओं के समाधान ने ही 'सामाजिक वानिकी' को जन्म दिया है।

राष्ट्रीय कृषि आयोग (National Commission on Agriculture) ने अपनी 1976 की अंतिम रिपोर्ट में सामाजिक वानिकी की परिधि में पुनः वनीकरण (Reforestation), नष्ट हो रहे वनों के उन्नयन (Rehabilitation of Degraded Forests), कृषि वानिकी (Farm Forestry) और विस्तार वानिकी (Extension Forestry) को ग्रामीण क्षेत्र में पनपाने की ओर ध्यान केन्द्रित करते हुये बताया था कि भारत के लिये यह प्रत्यय (Concept) बहुत नया नहीं है। यह वस्तुतः Royal Commission on Agriculture (RCA) जो भारत में 1928 में आयोजित हुआ था, की सिफारिशों की पुनरावृत्ति मात्र है, जिसमें ग्रामीण लोगों की जलाऊ लकड़ी और पशुओं के चारे की आवश्यकता की पूर्ति हेतु 'ग्रामीण वनों' (Village Forests) की बात कही गई थी जिससे संरक्षित वनों को भी बचाया जा सके और निर्धन गाँव के लोगों की कठिनाइयों को भी दूर किया जा सके।

राष्ट्रीय कृषि आयोग (NCA) ने सामाजिक वानिकी ने निम्न उद्देश्य प्रस्तावित किये थे—

1. ग्रामीण क्षेत्र में जलाऊ लकड़ी की आपूर्ति तथा गोबर को खेत में खाद के रूप में प्रयोग करने हेतु बचाना।
2. ग्राम निवासियों की मवेशी के लिये चारे की आवश्यकता की पूर्ति करना।
3. ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू, कुटीर उद्योग तथा वन आधारित लघु उद्योगों को चलाने हेतु कच्चे माल की आपूर्ति करना।
4. सामाजिक वानिकी गतिविधियों से निर्धन ग्रामीणों को जीविका उपार्जन हेतु रोजगार उपलब्ध कराना।
5. गाँवों में नष्ट हो रहे वन भूमि क्षेत्र पर (1) पुनर्वनीकरण, (Reforestation), (2) पुनर्द्धार (Rehabilitation) और (3) पुनर्स्थापन (Rerestoration) करना।
6. राष्ट्रीय वन नीति (1951) की अभिशंसा के अनुरूप भूमि के 33% भाग में वनों का लक्ष्य प्राप्त करना।
7. ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में मनोरंजन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना। और
8. शहरी क्षेत्र के ध्वनि प्रदूषण को कम करना और शहरी परिदृश्य में सुन्दरता की वृद्धि करना।

• 'सामाजिक वानिकी' का कार्य क्षेत्र (Coverage and Scope of Social Forestry)

राष्ट्रीय कृषि आयोग (NCA) ने 'सामाजिक वानिकी' को निम्न चार क्षेत्रों में विभाजित किया है—

1. नष्ट हो रहे वन क्षेत्रों में पुनर्वनीकरण (Reforestation of Degraded Lands) : यह वह क्षेत्र हैं जो आबादी के आसपास के तो हैं, पर इन पर कोई ध्यान नहीं देने से निरन्तर नष्ट हो रहे हैं। छितराये वृक्ष, कटी-फटी झाड़ियाँ और चाहे-अनचाहे जंगली पैदावार के झुण्ड घिनौना-सा दृश्य उत्पन्न करते हैं। इन्हें वहीं सुधारात्मक उपचार की आवश्यकता है और यदि जरूरी हो तो नये वृक्षों को रोपने का कार्य प्रारम्भ किया जा सकता है।

2. कृषि वानिकी (Farm Forestry) : किसानों द्वारा अपने खेतों के अन्दर और बाहर, खेतों की मेड़ों पर, आने-जाने के रास्तों पर और सामुदायिक क्षेत्र में वृक्षारोपण इस वानिकी में सम्मिलित है। हवाओं के जोर कम करने तथा लगे हुये पहले पौधारोपण की सुरक्षा (Wind Breaks and Shelter Belts), रेल की पटरियों तथा सड़कों के साथ-साथ और किसी भी प्रकार से बंजर हुई भूमि (Waste Lands) पर वृक्षारोपण भी इसी श्रेणी में आता है। पंचायत घर, चिकित्सालय, विद्यालय आदि में भी वृक्ष लगाने का कार्य कृषि वानिकी के अन्तर्गत होता है।

3. विस्तार वानिकी (Extention Forestry) : इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें (1) नहरों के किनारे, (2) रेल लाइन तथा सड़कों के दोनों ओर, (3) उच्च वोल्टेज के बिजली के तारों के नीचे, बड़े-बड़े जलाशयों की पाल और (4) जो भी भूमि भाग अनुपयोगी हो, वृक्ष लगाने के कार्य को सम्मिलित किया जाता है।

4. मनोरंजक वानिकी (Recreation Forestry) : विकृत हुए वन क्षेत्रों को सुधारकर उन्हें उस रूप में लाना जो आम जनता का मनोरंजन भी कर सकें, जैसे—(1) बैठने के छायादार स्थान बनाना, (2) पिकनिक स्थलों का निर्माण, (3) खेलने-कूदने, नौका बिहार, घुड़सवारी स्थल आदि की व्यवस्था तथा (4) चिड़ियाघर और अजायबघरों का निर्माण आदि।

एम. सीताराम राव[1] ने अपनी पुस्तक 'सोशल फोरेस्ट्री' में सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत कार्यों का विस्तृत विवरण निम्न प्रकार समेकित किया है—

1. खेतों पर वायु-अवरोधक (Wind Breaks) लगाना।
2. सुरक्षा पट्टियाँ (Shelter Belts) तैयार करना।
3. सड़कों के दोनों ओर घनी और व्यापक वृक्षावली लगाना।
4. गाँवों में सामूहिक स्थानों तथा बंजर भूमि पर वृक्षारोपण।
5. रेल लाइनों के दोनों ओर तथा नहरों के किनारों पर वृक्षारोपण।
6. बड़े-बडे कार्यों पर वृक्षों के झुण्ड (Clusters) के प्रकार से वृक्षारोपण।
7. गाँवों के आस-पास तथा राज्य-मार्गों पर यात्रियों के विश्राम स्थल बनाने हेतु वृक्षारोपण।
8. सिंचाई के लिए बनाये गये तालाब तथा बाँधों के पास घना वृक्षारोपण।
9. दलदली भूमि को सुखा कर उसे उपयोग में लाने हेतु वृक्षारोपण।
10. नदियों और झरनों के सहारे-सहारे वृक्षारोपण।
11. भूमि क्षरण की सम्भावना वाले क्षेत्रों में वृक्षारोपण।
12. भूमि संरक्षण उपाय हेतु वृक्षारोपण।
13. पर्यावरण सन्तुलन व स्वच्छ बनाने हेतु नगरों के प्रमुख स्थानों पर वृक्षारोपण।
14. सिंचाई योजनाओं के कमाण्ड एरिया में वृक्षारोपण।

इनके अतिरिक्त भी अनेक स्थान हो सकते हैं जहाँ वृक्षारोपण किया जाना सम्भव है, उसे इस सूची में जोड़ लें।

• सामाजिक वानिकी कार्यक्रम में भागीदारी (Participation in Social Forestry Programme)

यह हमने पूर्व में इंगित किया है कि 'सामाजिक वानिकी' का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण निर्धनों के जीवन को शोचनीय स्थिति से उठाकर उन्नत रूप में लाना है। अतः उनकी सक्रिय भागीदारी तो इस कार्यक्रम में आवश्यक रूप में होगी ही, पर इस कार्यक्रम से किन-किन लोगों, संस्थानों और विभागों को जोड़ने से प्रायोजना की सफलता को निश्चित और निर्बाध गति मिल सकेगी, उस हेतु एक सूची प्रस्तावित है—

1. **भूमिहीन एवं साधनहीन व्यक्ति** (पुरुष और महिलायें) जिनकी वृक्षारोपण में कार्य में रुचि हो।
2. **छोटे किसान** जिन्हें अपने खेतों की मेढ़ों तथा घरों के पिछवाड़े में वृक्ष लगाने हों।
3. **बड़े किसान** जिन्हें अपने खेतों के किसी भाग में वृक्षारोपण करना हो।
4. **पंचायतें** जिन्हें गाँव के सामुदायिक भूमि भाग पर वृक्ष लगाने हों।
5. **विद्यार्थी एवं अध्यापक** जिन्हें शिक्षण संस्थाओं में वृक्षारोपण कार्य करना हो।
6. **औद्योगिक घराने** जिन्हें अपने-अपने उद्योग स्थलों पर ध्वनि प्रदूषण को कम करने अथवा बाहरी वातावरण को सुन्दर बनाने हेतु वृक्षावलियाँ लगानी हों।
7. **सेना की छावनियों** में सुन्दर परिदृश्य बनाने हेतु वृक्षारोपण करना हो।
8. **राज्य विभाग** जिन्हें अपने-अपने कार्यालयों के अहातों में सुन्दरता बढ़ाने हेतु वृक्षारोपण करना हो।
9. **रेल विभाग** जिन्हें प्लेटफार्म, रेल लाइनों के दोनों ओर और कर्मचारियों के आवास स्थल पर वृक्ष लगाने हों।
10. **ग्राम पंचायतें** अपने गांव के पर्यावरण को स्वच्छ बनाने हेतु वृक्षारोपण करती हों।
11. **वन विभाग** जिन्हें राज-मार्गों, नहरों, जलाशयों आदि पर वृक्षारोपण करना हो।
12. **स्वयंसेवी संस्थाएँ और उनके सहयोगी** जो वृक्षारोपण कार्य सम्पन्न कराने में अग्रसर रहते हों।

इन सभी का सहयोग 'सामाजिक वानिकी' प्रायोजना को प्रश्रय देगा, ऐसा विश्वास किया जा सकता है।

---

1. M. Sita Ram Rao, **Introduction to Social Forestry** (New Delhi : Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Second Edition, 1987), pp. 88.

● 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम की उपयोगिता (Utility of Social Forestry Programme)

यह तो स्पष्ट ही है कि अन्ततोगत्वा 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम है तो वनारोपण कार्यक्रम ही, अतः जो भी लाभ वृक्षों के सघन होने से हो सकते हैं वह तो इस प्रायोजना से मिलेंगे ही, लेकिन जो वृक्षारोपण विशेष स्थानों पर किये जाने का इस कार्यक्रम में उल्लेख है उनसे सम्बन्धित अच्छे परिणामों की भी इस कार्यक्रम से आशा कर सकते हैं। एक सूची के अनुसार कार्यक्रम की उपयोगिता को निम्न बिन्दुओं में रखा जा सकता है—(1) पर्यावरण में सुधार, (2) प्रदूषण में कमी, (3) जनसाधारण की मूलभूत आवश्यकताओं, ईंधन, लकड़ी, खाद एवं अन्य वस्तुएँ आदि की पूर्ति, (4) उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति, (5) पक्षियों के लिए आवास अथवा आश्रय, (6) वायु के तेज तूफानों से बचाव, (7) आर्द्रता का संरक्षण, (8) भूमि क्षरण पर रोक, (9) बंजर और बेकार भूमि का उपयोग, (10) रोजगार की सम्भावनाएँ, (11) ध्वनि प्रदूषण पर नियन्त्रण, (12) आमोद-प्रमोद स्थलों का विकास, (13) राष्ट्रीय वनों पर दबाव से राहत, (14) ग्रामीण अंचल में आत्म-निर्भरता, (15) वर्षा की मात्रा में सुधार, (16) वायु-प्रदूषण नियन्त्रण और (17) बाढ़ तथा सूखे की कमी।

● पौधों के रोपण के स्थान (Places of Planting of Saplings)

पौधे कहाँ-कहाँ लगाये जायें इस हेतु कुछ स्थान विशेषों पर ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। ऐसी ही एक सूची प्रस्तावित है—

1. गाँव में (In Villages) : घर का बाड़ा, कुऐ तथा जलाशय के पास, देवालय-मन्दिर-मस्जिद-गुरुद्वारा, शमशान-कब्रिस्तान, खेत-खलिहान-मेड़, पंचायतघर-चौपाल, स्कूल, औषधालय, बंजर भूमि, मकानों के बाहर, सड़क को जोड़ने वाले रास्ते, खेल के मैदान आदि।

2. शहरों में (In Urban Area) : घरों के अहाते, सड़कों के सहारे, नदी-तालाब-जलाशय की पाल, रेल और बस के प्लेटफार्म-अहाते तथा उन्हें जोड़ने वाले रास्ते, प्राचीन इमारतें, मकबरे-मन्दिर-मस्जिद, शमशान-कब्रिस्तान, ऐतिहासिक किले, महल, समाधि स्थल, गिरजाघर, होटल, डाक बंगले, चिकित्सालय, विभिन्न कार्यालय, स्कूल-कॉलेज-छात्रावास, कचहरी, बैंक-अदालतें, नगरपालिका, डिस्ट्रिक्ट कलेक्टरेट, तहसील, बच्चों के पिकनिक स्पौट्स, खेल के मैदान, राजपथ व शहर की सड़कें, रेल लाइनों के दोनों ओर, धर्मशालाऐं, उच्च वोल्टेज के तारों के नीचे आदि।

3. खेतों के बाहर व अन्दर (Outside and Inside of Farm Fields) : इसमें पौधारोपण विशेषतः तीन बातों को ध्यान में रखकर करना होता है—

(i) हवाओं के तेज वेग को रोकने हेतु : जिन्हें 'वायु अवरोधक' (Wind Breaks) के नाम से कहते हैं। पौधों की कई कतारें और गहन झाड़ियाँ तेज हवाओं की गति के लम्बवत रूप में लगाने से पहले से लगे वृक्ष तथा कृषि को बचा लेते हैं। बहुत सघन वृक्ष इस कार्य हेतु चुने जाते हैं।

(ii) हवाओं की तेजी से भूमि की नमी को कम कर देने अथवा पूर्णतया सुखा देने के लिये 'सुरक्षा पट्टियों' (Shelter Belts) का प्रावधान किया जाता है। कई-कई वृक्षों की कतारें वायु वेग के समकोणीय रूप में लगाकर वायु के वेग में कमी कर दी जाती है जिससे रोपे हुये पौधे अपेक्षाकृत ठीक से रह पाते हैं।

(iii) जलाऊ ईंधन, चारा तथा इमारती लकड़ी के वृक्ष खेतों के अन्दर लगाये जाते हैं। यह अभिशंसा की गई है कि गांव के 10% कम-से-कम भूमि पर इस तरह के वृक्ष लगें, जिससे कार्य करने वालों को कई कठिनाइयों से निजात मिले और अच्छा रोजगार मिलता रहे।

4. उद्योग परिसरों में (In Industrial Area) : यहाँ वृक्ष विशेषतः दो लक्ष्यों को लेकर लगाये जाते हैं—(1) परिसर को सुन्दर बनाना और (2) परिसर को ही ध्वनि प्रदूषण से मुक्त रखना। वैसे कुछ वृक्ष विषैली गैसों को भी सोख लेते हैं।

5. विभिन्न कार्यालयों में (In Different Offices) : कार्यालय परिसर को सुन्दर व आकर्षक बनाने के लिये सजावटी पौधे, फल-फूल वाले वृक्ष लगाये जाने का चलन है।

6. अन्य स्थानों पर (At Other Places) : अन्य स्थानों पर भी ऐसे वृक्षों का रोपण किया जाना उचित रहता है, जो शीघ्र उग भी आवें और अधिक-से-अधिक छाया और शीतलता दें।

• पौधों का चयन
(Selection of Species)

यह सहज कार्य नहीं है क्योंकि भिन्न-भिन्न स्थानों की आवश्यकताऐं भिन्न-भिन्न हैं, और कौन-सा वृक्ष उन अपेक्षाओं को पूरी कर सकेगा यह केवल विशेषज्ञ ही बता सकता है। विशेषज्ञों के आधार पर एक ऐसी सूची यहाँ समेकित है—

1. वायु अवरोधक (Wind Breaks) हेतु : जाल, करंज, नीम, इमली, शीशम, फालसा, जामुन, आम, सहजना, काजू, थूहर, रामबांस, कनेर, निर्गुनी आदि।

2. सुरक्षा पट्टियों (Shelter Belts) हेतु : सीताफल, फालसा, यूक्लेप्टिस, सरु, अमरूद, अनार, बेर, बांस, सुबबूल, ढाका आदि।

3. लकड़ी के लिये (For Wood Lots) : जामुन, बांस, शीशम, नीम, बबूल, करंज, अरीठा, रामबांस, यूक्लेप्टिस, झाल, सागवान आदि।

4. जलाशयों की पाल पर (On Canal Banks) : जामुन, शीशम, महुवा, नीम, आम, बबूल, अर्जुन, इमली, बहेड़ा, यूक्लेप्टिस, करंज, बांस, पीपल, बड़।

5. रेल लाइनों के दोनों ओर (On Both Sides of Rail Lines) : रामबांस, मूंज, सागवान, जामुन, यूक्लेप्टिस, बबूल, ढ़ाक, सिरस, आदि।

6. सड़कों के दोनों ओर (On Both Sides of Roads) : शीशम, आम, बबूल, अर्जुन, सिरस, नीम, पीपल, कदम, बरगद, कनकचम्पा, जामुन, गुलमोहर, अमलतास, आदि।

7. दफ्तरों और विभागों के अहातों में (In Premises of Offices and Departments) : गुलमोहर, सिरस, बोगनविलिया, कनेर, कचनार, बरगद, अशोक, आम, जेकरेण्डा, केसिया, सिल्वर ओक, अमलतास।

8. दलदली स्थानों पर (On Swampy Areas) : यूक्लेप्टिस, जामुन, करंज, नीम, बरगद, बबूल, बांस, जाल।

9. चारे के लिये (For Fodder) : खेजड़ी, बेर, बबूल, सुबबूल, अरडू, सहजना, पीपल आदि।

10. जलाऊ लकड़ी के लिये (For Fuel Wood) : बबूल, सुबबूल, धौक, खेजड़ी, जंगलजलेबी, चुरैल, इजरायली शीशम, सिरस, सागवान आदि।

11. समुद्री तट क्षेत्र के लिये (For Coastal Areas) : सरु, काजू, आकाशमुनि, नारियल, सफेदा, विलायती बबूल आदि।

12. नम भूमि स्थलों के लिये (For Wetlands Places) : आकाशमुनि, बबूल, सफेदा, जारूल, कांजी, विलायती बबूल, जामुन, अर्जुन आदि।

• सामाजिक वानिकी की आलोचना
(Criticism of Social Forestry)

सामाजिक वानिकी की कार्यप्रणाली, उद्देश्य व निर्धारित लक्ष्य परम्परागत वानिकी से सर्वथा भिन्न हैं, अतः स्पष्ट है कि इसका प्रबन्धन और कार्य करने के तरीके भिन्न होंगे। वन अधिकारियों को पूर्ण जानकारी से अवगत नहीं कराने से जहाँ इस कार्यक्रम को कई असफलताऐं मिली हैं, वहीं संभागी किसान अथवा सामाजिक वानिकी में लगे रोजगारी कर्मचारी और मजदूर अपने लालच को रोकने में भी सफल नहीं हो सके हैं। पूरी सफलता न मिल पाने के कारण इस योजना की अनेक स्तर पर आलोचना हुई है। उनमें से कुछ यहाँ प्रस्तुत हैं—

1. वानिकी प्रोग्राम से उपलब्ध होने वाले ईंधन, चारे और सामान्य लकड़ी की उपलब्धता ग्रामीण निर्धन व्यक्ति को नहीं हो पाई अपितु सामग्री को पैसे के लालच से बेचने का सिलसिला चल पड़ा।
2. आम आदमी का प्रायोजना से संभागित्व बहुत कम रहा; अधिक लोग जुड़ नहीं पाये।
3. वृक्ष प्रजाति का चयन विरोधाभास में ही रहा।
4. प्रायोजना से अधिक लाभ सम्पन्न लोगों को ही मिला, वास्तविक संभागी जिन्हें इस कार्यक्रम से लाभ पहुँचना था वस्तुतः पीछे धकेल दिये गये।

5. वन उपज को उठाने और उसे बाहर ले जाने में शासकीय कठिनाइयों ने अड़चने पैदा कीं; अतः बहुत लोग विमुख हो गये।
6. संलग्न विविध स्तर के अधिकारियों के तालमेल में कमी का नुकसान प्रायोजना को उठाना पड़ा। अनेक कार्य बीच में ही अटक गये।
7. बाजार भाव की स्थिति संतुलित न होने के कारण संभागियों को उतना लाभ नहीं मिल पाया जितनी अपेक्षा थी; निराशा हाथ लगी।
8. तकनीकी अधिकारियों के अभाव के कारण उपलब्धि कम रही; मार्गदर्शन का भी अभाव रहा।

इन सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि योजना चाहे कितनी अच्छी रही हो, उसका क्रियान्वयन समुचित तरीके से नहीं हो सका। पूरी प्रायोजना ही आलोचना का शिकार बनी।

• सामाजिक वानिकी कार्यक्रम में सुधार के लिये सुझाव (Suggestions for Improvement in Management of Social Forestry Programme)

राष्ट्रस्तर पर चलाई जा रही 'सामाजिक वानिकी' प्रायोजना की सफलता में कहीं रुकावट न रहे इस हेतु कुछ सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. 'सामाजिक वानिकी' (Social Forestry) का नाम बदल कर 'राष्ट्रीय वानिकी' (National Forestry) रख दिया जाय।

2. पूरे देश की आवश्यकता, मांग और सप्लाइ के आधार पर सर्वे कराके योजना को व्यावहारिक रूप से पुनः दनाया जावे।

3. प्रायोजना में स्थानीय लोगों के संभागित्व पर पूरा ध्यान दिया जाय, जिससे उनका अपनापन जुड़े।

4. वृक्ष प्रजाति के चयन में विरोधाभास को स्थान न मिले। विशेषज्ञ सामूहिक रूप से मिलकर हर दृष्टि से देखकर प्रजाति की स्वीकृति देवें।

5. राज्य सरकार और ग्राम पंचायतों में अच्छा तालमेल हो।

6. तकनीकी तथा वित्तीय समस्या रुकावट का कारण न बने।

7. प्रति छमाई उपलब्धि को प्रसारित किया जाय और आर्थिक हिस्सेदारी का नियमित रूप से बैंक के मार्फत वितरण हो।

8. जिले स्तर पर ग्रामीण बाजार लगाये जायें जहाँ माल की खुली बिक्री हो। विचौलियों का कोई स्थान न हो।

9. चारा, घरेलू काम की लकड़ी, जलाऊ ईंधन की आवश्यकता की नियमित पूर्ति हो। यह ग्रामीणों की समस्या न रहे।

निःसन्देह सामाजिक वानिकी एक जन उपयोगी और सामाजिक क्रान्ति का कार्यक्रम है, जिससे देश की बहुमुखी प्रगति सम्भव है। इसके अतिरिक्त पूरे देश में विगत वर्षों में वन-क्षेत्रों में हुई क्षति को पेड़ों के बाहुल्य से पूरा करने में भी सहायक है, लेकिन इसमें सरकारी प्रशासन की कार्यकुशलता, जनता की सक्रिय भागीदारी और सामाजिक दृष्टिकोण में लोगों का सामूहिक परिवर्तन सभी का योगदान समयानुकूल आवश्यक है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न (QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'सामाजिक वानिकी' प्रायोजना के उद्देश्य बताइये।
2. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम में किन-किन की भागीदारी अपेक्षित है ?
3. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम की उपयोगिता समझाइये।
4. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम की आलोचना क्यों हुई ?
5. केन्द्र स्तरीय योजना 'सामाजिक वानिकी' की सफलता के लिये सुझाव दीजिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'सामाजिक वानिकी' को जनता द्वारा, जनता का, जनता के लिये क्यों कहा जाता है ?
7. 'कृषि वानिकी' और 'विस्तार वानिकी' में क्या अन्तर है ?
8. वायु अवरोधक क्या होते हैं ? उनकी क्या महती भूमिका है ?
9. नम भूमि क्षेत्र में किस प्रकार के वृक्ष होने चाहिये ?
10. किसी दफ्तर के अहाते को सजाने के लिये किस प्रकार के वृक्ष अच्छे रहेंगे ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'सामाजिक वानिकी' का प्रारम्भ कब से हुआ ?
    (अ) सन् 1928 से (ब) सन् 1976 से
    (स) सन् 1980 से (द) सन् 1990 से
12. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम का सर्वप्रथम शुभारम्भ किस प्रदेश से हुआ ?
    (अ) राजस्थान (ब) मध्यप्रदेश
    (स) गुजरात (द) बिहार
13. 'सामाजिक वानिकी' को अन्य किस नाम से भी पुकारते हैं ?
    (अ) कृषि वानिकी (ब) विस्तार वानिकी
    (स) ग्रामीण वानिकी (द) सामुदायिक वानिकी
14. 'राष्ट्रीय कृषि आयोग' ने अपनी अन्तिम रिपोर्ट कब प्रस्तुत की ?
    (अ) सन् 1973 में (ब) सन् 1976 में
    (स) सन् 1980 में (द) सन् 1990 में
15. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम में वृक्षारोपण का अन्तिम लक्ष्य क्या है ?
    (अ) 75mh (22.8%) (ब) 110mh (33%)
    (स) 63.8mh (19·39%) (द) 130mh (40%)

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य को चिन्हित कीजिये तथा उत्तर दीजिये–

16. 'सामाजिक वानिकी' कार्यक्रम में निर्धन ग्रामीणों को रोजगार देना एक लक्ष्य है। (सत्य/असत्य)
17. ईंधन, चारा और घरेलू लकड़ी की आवश्यकता 'सामाजिक वानिकी' प्रायोजना के कार्यक्रमों से सम्भव है। (सत्य/असत्य)
18. 'मनोरंजन वानिकी' का कोई एक उदाहरण दीजिये।
19. ग्रामीण क्षेत्र में सामुदायिक भूमि किसे कहते हैं ? एक उदाहरण दें।
20. उद्योग परिसरों में सघन वृक्षारोपण क्यों ? एक कारण बताइये।

12

वन्य जीव
[WILD LIFE]

● प्रस्तावना
(Introduction)

सैद्धान्तिक रूप से वन्य जीव की परिभाषा में वह सब पशु-पक्षी और पेड़-पौधे सम्मिलित हैं जिनमें जीवन है और जो जंगल में रहते हैं, बसते हैं। इनमें घरेलू और पालतू जानवर तथा मनुष्य द्वारा स्वयं अपने लाभ और उपयोग के लिए उगाये गये पौधे (वनस्पति) शामिल नहीं हैं।

लेकिन व्यावहारिक तौर पर 'शाब्दिक' अर्थ के अनुसार इससे लोगों का आशय केवल उन पशु-पक्षियों से ही है, जो शहर से दूर घने जंगलों में प्रकृति के अंचल में बसते हैं और स्वतन्त्र रूप से जीते हैं। समय के अनुसार इनकी संख्या में कमी आ जाने के कारण यद्यपि इनकी देखरेख और इनका संरक्षण विभिन्न देशों की सरकारों द्वारा अपने-अपने तरीकों से किया जाता है, पर फिर भी उनका आन्तरिक दर्शन यही है कि इन वन्य जीव बाहुल्य क्षेत्रों में जीवों को स्वतंत्र रूप से रहने दिया जाय। केवल भोजन, पानी और आवास स्थल की न्यूनता इनकी किसी परेशानी का कारण नहीं बने।

यहाँ यह जिक्र करना सामयिक होगा कि भारत के संविधान में भी वन्य जीवों में केवल 'वन्य पशु और पक्षी' ही शामिल किये गये हैं। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 में भी यही बात अपनाई गई और 1976 में जब यह संभाग केन्द्र से राज्य सरकारों को सौंपा गया तब भी यह भूल जारी रही। अतः पूर्णतया यह दोनों संभाग 'वन' एवं 'वन्य जीव' अलग-अलग ही अब माने जाने लगे हैं यद्यपि इनका प्रशासनिक स्तर पर सभी जगह नामकरण लगभग एकसा समान रूप से 'वन एवं वन्य जीव' होता है।

विश्व में अनगिनत प्रजातियाँ जीव-जन्तुओं की रही हैं जिनकी संख्या कभी करोड़ों और अरबों में आँकी जाती रही है (सम्भवतः यह अतिश्योक्ति हो) लेकिन अब शनैः-शनैः इनमें कमी हुई है। भारत इस क्षेत्र में अति समृद्ध रहा है। 350 प्रकार के स्तनपायी (Mammals), 1200 प्रकार के पक्षी (Birds) तथा 20,000 से भी अधिक प्रकार के कीड़े-मकोड़े (Insects) और 750 प्रकार के सरीसृप (Reptiles) आज भी यहाँ हैं (अनुमान है कि भारत में, दक्षिणी अमेरिका को छोड़कर विश्व की सबसे अधिक पक्षियों की प्रजातियाँ हैं)।

इनमें से लगभग 66 प्रकार के स्तनपायी, 38 पक्षियों की प्रजातियाँ और 18 प्रकार की सरीसृप प्रजातियाँ लुप्तप्राय श्रेणी में आ गई हैं; एक स्तनपायी तथा 3 पक्षी प्रजाति समाप्त हो चुकी हैं। फिर भी हमारा देश इस क्षेत्र की विविधता के लिए सौभाग्यशाली है। शेर और चीते जैसे महाशक्तिशाली, हाथी जैसा विशालकाय, गेंडा जैसा मजबूत, रीछ जैसा भयानक, खूबसूरत हिरन और बारहसिंघा, खरगोश-तीतर-तिलोर-गोडावन जैसे सुहावने तथा साही (Porcupine) जैसी तीखी जाति के अनेक वन्य पशु हैं जिनको भारतीय वन्य पशु विविधता में जोड़ा जा सकता है।

● वन्य जीवों का वर्गीकरण
(Classification of Wild Life)

मोटेतौर पर वन्य जीवों का वर्गीकरण निम्नलिखित तीन मुख्य श्रेणियों में किया गया है। इन्हीं में सभी प्रकार के पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि को सम्मिलित किया गया है। वह हैं—

1. **स्तनपायी (Mammals)** : यह वह पशु होते हैं जिनकी मादाएँ बच्चों को जन्म देती हैं (अण्डे नहीं) तथा अपने शरीर से ही उन्हें दूध पिलाती हैं। निश्चय ही रीछ, सांभर, लंगूर, व्हेल (मछली) आदि सभी स्तनपायी श्रेणी में आते हैं।

इस श्रेणी में अन्य—1. शेर, 2. बघेरा, 3. चीता, 4. भेड़िया, 5. भालू, 6. बिज्जू, 7. लोमड़ी, 8. हिरन, 9. चिंकारा, 10. चौसिंगा, 11. नील गाय, 12. जंगली चूहा, 13. गीदड़, 14. जरख, 15. हाथी, 16. सूअर आदि आते हैं।

2. **पक्षी** (Birds) : ऐसे जानवर जिनके पंख होते हैं (दो पैर होते हैं तथा दो पंख) और जो अंडों से पैदा होते हैं, पक्षी कहलाते हैं। कबूतर, मोर, चिड़िया, तोता आदि इसी श्रेणी में गिने जाते हैं।

इस श्रेणी में अनेक अन्य—1. मुर्गा, 2. तिलोर, 3. गोडावन, 4. सारस, 5. बाज, 6. उल्लू, 7. कठफोड़वा, 8. गौरैया, 9. चमगादड़, 10. बटेर, 11. हंस, 12. बुलबुल, 13. गिद्ध, 14. कौवा, 15. कोयल, 16. मुर्गाबी आदि हैं।

3. **सरीसृप** (Reptiles) : इस प्रकार के जानवरों में पर्तदार त्वचा (scaly skin) होती है तथा इनकी मादाएँ अंडे देती हैं। इनमें कछुआ, साँप, छिपकली तथा मगर आते हैं।

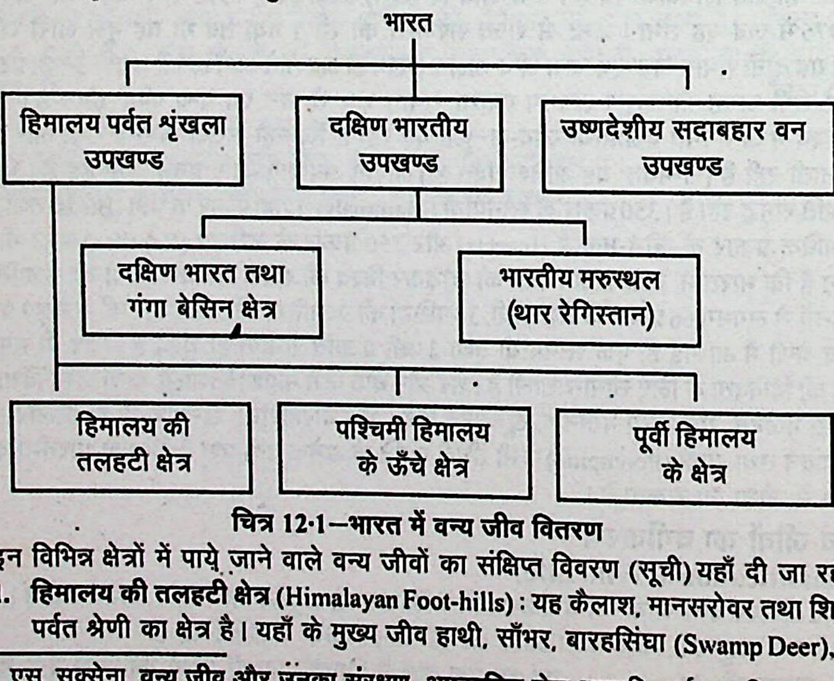
अन्य उदाहरणों में—1. अजगर, 2. केंचुआ, 3. गिरगिट, 4. घड़ियाल, 5. टिड्डी, 6. दरियाई घोड़ा, 7. मछली, 8. बिच्छू, 9. मेढक, 10. गोह, 11. केकड़ा, 12. मकड़ी आदि सम्मिलित किये जा सकते हैं।

[**कीड़े-मकोड़े** (Insects) : ऐसे छोटे जानवर जिनके 6 पैर होते हैं तथा अधिकतम जो उड़ सकते हैं वे इस श्रेणी में आते हैं और इन्हें पक्षियों (Birds) में गिनते हैं।]

• भारत में वन्य जीव वितरण
(Distribution of Wildlife Animals in India)

जैसा कि पूर्व में भी वर्णित किया गया है भारत आज भी वन्य जीव सम्पदा में धनी है। वी. एस. सक्सेना[1] के अनुसार यहाँ अनुमानतः 500 प्रकार के स्तनपायी, 1330 प्रकार के पक्षी, 235 प्रकार के सर्प, 150 प्रकार की छिपकली, 30 प्रकार के कछुए, 3 प्रकार के मगर, 142 प्रकार के उभयचारी (Amphibians), 109 प्रकार की मीठे पानी की मछलियाँ, 107 प्रकार की विषैले अथवा खारे पानी की मछलियाँ तथा कोई 30,000 प्रकार के कीट-पतंग पाये जाते हैं।

भौगोलिक दृष्टि से इन वन्य पशुओं को निम्नांकित चित्र 12·1 में क्षेत्र वार विभाजित किया गया है—



चित्र 12·1—भारत में वन्य जीव वितरण

इन विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले वन्य जीवों का संक्षिप्त विवरण (सूची) यहाँ दी जा रही है—

1. **हिमालय की तलहटी क्षेत्र** (Himalayan Foot-hills) : यह कैलाश, मानसरोवर तथा शिवालिक पर्वत श्रेणी का क्षेत्र है। यहाँ के मुख्य जीव हाथी, साँभर, बारहसिंघा (Swamp Deer), चीतल,

---

1. वी. एस. सक्सेना, वन्य जीव और उनका संरक्षण, अप्रकाशित लेख [सम्प्रति-पर्यावरण विभाग राजस्थान, जयपुर (भारत), 1989], पृष्ठ 61 से 84 तक, साभार।

गेंडा, जंगली भैंसा, शेर, बघेरा, जंगली कुत्ता (Wild Dog), सियार, जरख, सूअर, भालू (Sloth Bear), रीछ (Himalayan Black Bear), आसामी खरगोश (Hisped Hare), सुनहरी लंगूर, घड़ियाल, मगर, अजगर आदि हैं।

2. **पश्चिमी हिमालय के ऊँचे क्षेत्र** (High Altitudes of Western Himalayan) : कश्मीर तथा पश्चिमी लद्दाख से कुमायूँ तक के इस क्षेत्र में जंगली तिब्बती गधा, याक, जंगली बकरी प्रजाति में ताहर, भरल (Blue Sheep), हंगुल (Kashmiri Stag), कस्तूरी मृग (Musk Deer), उड़न गिलहरी (Kashmir Bully Flying Squirrel), बर्फानी बघेरा (Snow Leopard), भेड़िया, लोमड़ी, रीछ (Black Bear), गिद्ध, गोल्डन ईगल, बाज आदि वन्य पशु हैं।
3. **पूर्वी हिमालय क्षेत्र** (Eastern Himalaya Hills) : यह भाग शंकुधारी वन क्षेत्रों के अन्तर्गत ही आता है तथा अपेक्षाकृत कम बर्फ वाला है। जीवों में यहाँ गोरल (Goral), जंगली भैंसा (Wild Buffalo), हाथी (Elephant), जंगली सूअर (Wild Boar), साही (Porcupine), गौर (Gaur), वाह (Red-panda), भीमकाय गिलहरी (Giant Squirrel) आदि प्रमुख हैं।
4. **दक्षिण भारत तथा गंगा बेसिन क्षेत्र** (South India and Ganga Basin Region) : यह विविध प्रकार की हरियाली और वनों का क्षेत्र है। एक ओर जहाँ जंगलों की सघनता है वहीं शुष्क कंटकीय झाड़ीयुक्त भाग भी इस संभाग में आता है। अतः यहाँ वन्य जीवों की विविधता और संख्या दोनों की भरमार है। इसमें मुख्यतः हाथी, गौर, सूअर, साँभर, चीतल, पारा, बारहसिंगा, काकर, चौसिंगा, कालाहिरण, चिंकारा, नीलगाय, ढोल (Wild Dog), शेर, बघेरा, बिल्ली, जरख, गीदड़, भालू, सियागोश (Caracal), बिज्जू, घड़ियाल, मगर, मगरमच्छ (Marsh Crocodile) तथा पक्षियों में गोडावन, सफेद सारस आदि हैं।
5. **भारतीय मरुस्थल-थार रेगिस्तान** (Indian Desert-Thar Desert) : यह सामान्यतया रेगिस्तानी क्षेत्र है तथा इसमें कच्छ और सौराष्ट्र का दलदली प्रदेश भी सम्मिलित कर लिया जाता है। यहाँ वन्य प्राणियों में जंगली गधा, काला हिरन, चिंकारा, नीलगाय, बघेरा, भेड़िया, रेगिस्तानी गीदड़, बिल्ली, सियागोश, रेगिस्तानी लोमड़ी (Desert Fox), गोह, बामनी, फुरसा साँप (Sascaled Wiper), तिलोर, मोर, झक (Tiny Eagle) आदि हैं।
6. **उष्णदेशीय सदाबहार वन अथवा इंडोमलायन उपखण्ड** (Tropical Forests or Indo-Malayan Region) : घनी वर्षा वाली असम, जयन्ती तथा खासी पर्वत श्रेणियाँ, पश्चिमी घाट तथा नीलगिरी पर्वत इसमें शामिल हैं; अंतः घने और लम्बे वृक्षों की बहुतायत है। यहाँ नीलगिरी ताहर, नीलगिरी भारटेन, ऊदविलाव, सुनहरी लंगूर, नीलगिरी लंगूर, असमी बन्दर, नागाहिल बन्दर, पूँछ विहीन बन्दर (Stump Tailed Macaque), कई किस्म की बिल्लियाँ, चमगादड़, उड़न गिलहरी, आदि बहुतायत से प्राप्य हैं। इसके साथ ही अण्डमान निकोबार द्वीपों के वन्य प्राणियों में अण्डमानी सूअर, केकड़ा, भक्षी बन्दर, डॉलफिन, किलर ह्वेल, पक्षियों में अण्डमानी धनेश (Narcodum Hornbill), निकोबारी कबूतर (Nicobar Pigeon), सरीसृप में मगरमच्छ, जलीय गोह (Water Lizard), हरी छिपकली (Green Lizard), साँप (Coral Snake), समुद्री साँप, निकोबारी अजगर, हरा कछुआ (Green Turtle) आदि मिलते हैं।

• लुप्तप्राय वन्य जीव
(Threatened Wildlife of Species at Verge of Extinct)

इतिहास साक्षी है कि विश्व में सर्वाधिक वन्य जीवों की विविधता और प्रचुरता वाला देश भारत स्वयं अपनी भूलों के कारण आज इस स्थिति में आ गया है कि कई प्रजातियाँ तो नष्ट होकर समाप्त हो गईं। अनेक जातियाँ विनाश के कगार पर हैं और लुप्तप्राय होने की स्थिति में हैं। वन्य शेर अफ्रीका के बाद भारत में ही पाया जाता था, जिसका आज केवल नाम रह गया है अथवा रह गये हैं वह चित्र जिनसे पिछले इतिहास की पुष्टि हो सकती है। इसके लिए आज जिन कारणों को बताया जा सकता है, वह अग्रलिखित हैं—

1. विगत वर्षों में राजा-महाराजा व जागीरदार लोग अपने शौक के लिए वन्य पशुओं (शेर, बघेरा, चीता, रीछ आदि) का शिकार करते थे और इन पशुओं की खालों को अपने खास कमरे में लगाया करते थे। बाहर से आने वाले मेहमानों के लिए विशेष शिकार की व्यवस्था आम बात थी।
2. भारी जनसंख्या के दबाव के कारण घने जंगल, जो इनके सुरक्षित आवास थे, कृषि उत्पादन, मकान निर्माण और बाँधों तथा बिजली उत्पादन केन्द्र बनाने हेतु काटे गये। वन्य जीवों का असुरक्षित स्थानों से पलायन हुआ और वह मर गये अथवा मार दिये गये। अतः संख्या पर उसका प्रभाव पड़ा।
3. घने जंगल अथवा वन्य जीव आवास गृहों के सुरक्षित क्षेत्र में घरेलू और पालतू जानवरों के प्रवेश से वहाँ की घास आदि में अत्यधिक कमी आई। जंगल का प्राकृत्तिक सन्तुलन ब्रिगड़ गया। भोजन शृंखला में विघ्न पैदा हुआ। अतः वन्य जीवों का स्वतः पारिरिथतिकी तन्त्र नष्ट हो गया। पानी की कमी भी एक कारण बनी।
4. माँस, खालें, बाल, आईवरी तथा जीव विशेष के सींगों की माँग से अनाधिकृत रूप से शिकार करने को बढ़ावा मिला और बहुतायत से वन्य जीव समाप्त हो गये।
5. वनों की रक्षा को तैनात प्रशासन तन्त्र की क्षमता भी उतनी प्रभावी नहीं हो सकी जितनी अपेक्षा थी। अतः चोरी छिपे शिकार, ग्रामीण लोगों का अवैध प्रवेश, प्रतिबन्धित क्षेत्र में अत्यधिक चराई और वन-अग्नि (Forest Fire) आदि कई समस्याओं ने वन क्षेत्रों की सार्थकता को कम कर दिया। वन्य प्राणी प्रभावित हुए।

और भी अनेक इस प्रकार के कारण हो सकते हैं, जिनका प्रभाव वन्य पशुओं पर पड़ा है। विभिन्न प्रकार की कीटनाशी दवाइयों के प्रयोग ने कीट-पतंगों को नष्ट किया है तो अनेक जलचर कुछ मानव स्वार्थ पूर्ति हेतु। कुछ समुद्रीय प्रदूषण के कारण और कुछ उनकी कोई सुरक्षा न होने के कारण काल के ग्रास बन गये। इस सबने मिलाकर प्रकृति तन्त्र को गड़बड़ाया है और नष्ट किया है। निःसन्देह यह चिन्ता का विषय है और हर स्तर पर इन वन्य जीवों की रक्षा करना, इनकी प्रजाति को बढ़ने देने हेतु प्रयास आवश्यक हैं।

यह भी बहुत महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय है कि चाहे थल हो या जल, प्रत्येक तंत्र में एक भी प्रजाति अथवा श्रेणी के जीवों की कमी से ही सारी भोजन शृंखला (Food Chain) टूटने लगती है और उसका सारा असर पूरे वन्य जीव तन्त्र पर पड़ता है।

• रेड-डेटा बुक
(The Red-data Book)

प्राकृतिक संरक्षण की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था (International Union for Conservation of Nature and Natural Resources—IUCN) ने अपने अधीनस्थ 'सरवाइवल सर्विस कमीशन' (Survival Service Commission) संस्थान के द्वारा एक विशेष लाल किताब (Red Book) का प्रकाशन किया है। इसमें सभी प्रकार की वन्य जीवों सम्बन्धी जानकारी—(1) लुप्त हो रही जीव-प्रजातियाँ, (2) उनके आश्रय स्थल, (3) वर्तमान में उपलब्ध जीवों की संख्या और (4) लुप्त हो रहे अंथवा कम हो रहे जीवों के कारण, दी गई है। इसी पुस्तक में विशेषज्ञों द्वारा विभिन्न वन्य प्राणियों की लुप्त हो रही प्रजातियों को बचाने के लिए मार्गदर्शन भी दिया गया है।

इसकी अब तक पाँच पुस्तकें अन्तर्राष्ट्रीय रेड-बुक (International Red Book) प्रकाशित हो चुकी हैं, जिसकी प्रथम पुस्तक का प्रकाशन 1 जनवरी, 1972 को हुआ था। इनका संक्षिप्त विवरण निम्न है—

1.	प्रथम पुस्तक	236 प्रजातियाँ (292 उप-प्रजातियाँ)	स्तनधारी (Mammals)
2.	द्वितीय पुस्तक	287 प्रजातियाँ (341 उप-प्रजातियाँ)	पक्षी (Birds)
3.	तृतीय पुस्तक	36 प्रजातियाँ एवं उप-प्रजातियाँ	मरुस्थलीय उभयचर (Amphibians)
		तथा 119 प्रजातियाँ एवं उप-प्रजातियाँ	सरीसृप-रेंगने वाले (Reptiles)

4.	चतुर्थ पुस्तक	दुर्लभ एवं अप्राप्य प्रजातियाँ एवं उप-प्रजातियाँ	मछलियाँ (Fishes)
5.	पंचम पुस्तक	दुर्लभ एवं अप्राप्य प्रजातियाँ एवं उप-प्रजातियाँ	पौधे-वनस्पतियाँ (Plants)

प्रत्येक रेड-बुक में प्रजातियों का निम्नलिखित चार मुख्य भागों में वर्णन है—

1. लुप्त प्राय या लुप्त हो रही प्रजातियाँ जिनके बचाव का पूरा ध्यान रखना आवश्यक है **(यह जानकारी लाल रंग के पृष्ठों पर मुद्रित है)।**
2. ऐसी दुर्लभ प्रजातियाँ जो संख्या में बहुत कम हैं और कुछ निश्चित स्थानों पर ही उपलब्ध हैं। इनके बारे में यह आशंका है कि यह कहीं समाप्त न हो जायें **(यह जानकारी सफेद रंग के पृष्ठों पर मुद्रित है)।**
3. लुप्त हो रही ऐसी प्रजातियाँ जिनकी संख्या निरन्तर और तेजी से कम होती जा रही है **(यह जानकारी पीले रंग के पृष्ठों पर मुद्रित है)।**
4. ऐसी प्रजातियाँ जिनके बारे में आशंका है कि वह कम हो रही हैं, पर जिनके बारे में पूरा विवरण उपलब्ध नहीं है **(यह जानकारी पुस्तक के अन्त में भूरे रंग के पृष्ठों पर मुद्रित है)।**

विशेष : बाद में एक भाग उन प्रजातियों के लिए भी जोड़ा गया है, जिन्हें बचा लिया गया है (उनके लिए हरे पृष्ठ लगे हैं)।

राष्ट्रीय स्तर पर भी रेड-बुक बनाई गई हैं और इनमें राष्ट्र स्तर की नियमित प्रविष्टियों के किये जाने का प्रावधान है। वास्तव में यह वन्य जीव, पौधे तथा वनस्पतियों की रक्षा के लिए एक ऐसा प्रयास है जिससे दुर्लभ अथवा कम होने वाली प्रजातियों को पूर्ण वैज्ञानिक रूप से बचाने की योजना बनाने तथा उसी क्रियान्विति का अवसर मिलता है।

● वन्य जीव सम्पदा का महत्त्व (Importance of Wildlife Commodity)

वन्य जीवों का महत्त्व निःसन्देह बहुआयामी है और इनका क्षेत्र केवल पर्यावरणीय ही नहीं, बल्कि विशुद्ध वैज्ञानिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक भी है। इन पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ यहाँ दी जा रही हैं

1. **ये जंगल की सघनता तथा उसकी हरीतिमा बनाये रखते हैं :** जिन जंगलों में वन्य पशु रहते हैं वहाँ सामान्यतः न तो कोई घरेलू और पालतू पशु घुस पाते हैं और न ही सामान्य आदमी अपना प्रवेश ले पाते हैं। परिणामस्वरूप वन सम्पदा के ह्रास की सम्भावनाएँ बहुत ही कम हो जाती हैं और इसके विपरीत जंगल निर्बाध रूप से पनपते हैं। शाकाहारी जीवों को यथेष्ट भोजन मिलने से भोजन शृंखला की गति बनी रहती है। माँसाहारी शीर्षस्थ वन्य जीव सन्तुलन बनाये रखते हैं। वृक्षों की सघनता बढ़ती है और शुद्ध पर्यावरण बना रहता है।
2. **ये पर्यावरण की शुद्धता के सही सूचक हैं :** वन्य जीव चाहे स्थलीय हों, जलचर हों अथवा उभयचर हों, इनकी खास उपस्थिति शुद्ध और अशुद्ध पर्यावरण की सूचना अत्यन्त प्रभावी रूप से देती है। उदाहरण के लिए एक घरेलू मक्खी की उपस्थिति जहाँ प्रदूषित वातावरण (पर्यावरण) बताती है वहीं एक भँवरा (Black Bee) विशुद्ध वातावरण का द्योतक है; यदि किसी जल स्रोत के इर्द-गिर्द भारी संख्या में टिलुआ (Blackwinged Stilts), जिरिया (Ring Plover) तथा टिटहरी (Sand Pipers) मिलते हों, तो यह पानी की गुणवत्ता (Chemical Properties) में कमी बताते हैं लेकिन यदि वहीं बड़ी कुररी (River Terns), राम चिरैया (King Fishers) अथवा बत्तख (Teals) आदि की अधिकता हो तो निश्चय ही वह जल स्वच्छ है और पीने योग्य है। आकाश में पक्षियों का अभाव वायु-प्रदूषण इंगित करता है वहीं हुद-हुद (Hoopoe), खंजन पक्षी (Wegtails) और शकरखोरा (Sunbirds) हरियाली और शुद्ध पर्यावरण में ही आते हैं और भी ऐसे कई अन्य उदाहरण सम्भव हैं जो उक्त बात की सत्यता को प्रतिपादित करते हैं।

3. **ये प्रदूषण कम करके स्वच्छ पर्यावरण प्रदान करते हैं :** कुछ वन्य जीव ऐसे भी हैं, जैसे गीदड़, जंगली सूअर और बिज्जू जो वन क्षेत्र की गंदगी को समाप्त कर देते हैं। गिद्ध, कौवे तथा क्रोंच पक्षी सड़े-गले जानवरों को चट कर जाते हैं। बुलबुल, तोता और कई प्रकार के पक्षी पेड़ों से गिरने वाले फूल-फल-पत्तियों को उठा ले जाते हैं और इस प्रकार वनों की सफाई में योगदान देते हैं। कछुआ, मछली, मगर आदि इसी प्रकार पानी की गंदगी को मिटा देते हैं और पानी को स्वच्छ रखते हैं।
4. **ये जैविक नियन्त्रण बनाये रखते हैं :** प्रकृति में अनेक प्रकार के पशु, पक्षी, कीट-पतंग और जलचर हैं। इनकी वृद्धि इनके अपने नियमानुसार होती है, लेकिन प्रकृति में ही कुछ ऐसा प्रावधान है कि इनमें से प्रत्येक की संख्या का वह अपने शाश्वत नियमों के अनुसार नियन्त्रण में रखती है। वैसे वन्य जीवों की भोजन श्रृंखला के अन्तर्गत भी शाकाहारी और मांसाहारी जीवों में अन्ततः एक सन्तुलन रहता है। इस सन्दर्भ में हम यदि चूहे का उदाहरण लें तो यह जानें कि एक दिन में 6 चूहे एक मनुष्य का भोजन चट कर जाते हैं और इनकी वृद्धि भी इतनी तीव्र है कि **एक नर-मादा चूहे का जोड़ा** एक वर्ष में 880 बच्चे पैदा कर सकता है; और यदि एक जोड़ा अपनी संतति सहित **7 वर्षों तक की अवधि** तक सन्तानोत्पत्ति करता रहे तो यह संख्या **9 खरब से ऊपर** हो जायगी (9,40,37,00,00,000), लेकिन साँप, चीलें, उल्लू, बिल्लियाँ, लोमड़ी, नेवला, तिलोर आदि इन्हें चट कर जाते हैं और इनकी संख्या में वृद्धि नहीं होने देते। इसी प्रकार अनेक कीट-पतंगे भी दूसरे कीड़ों और पक्षियों का भोजन बनते हैं। इसी सन्दर्भ में टिड्डियों का उदाहरण भी कम दिलचस्प नहीं है। जब यह चलती हैं तो अरबों और खरबों की संख्या में होती हैं और जहाँ पर यह बैठती हैं, वहाँ की वनस्पति का सफाया कर देती हैं, लेकिन अनेक पक्षी जिनमें कौए, मैना, गोडावन, गिरगिट आदि शामिल हैं, इन्हें स्रोत पर ही नहीं बढ़ने देते। इस प्रकार वन्य जीव पर्यावरण में जैविक नियन्त्रण रखते हैं।
5. **यह आहार के सम्पूरक हैं :** वन्य जीव प्रोटीन युक्त माँस देते हैं और इस क्रम में तीतर, चिकोर, हरियल, हिरन, खरगोश, सूअरं आदि गिने जा सकते हैं। मछली, केकड़ा, साँप, झींगा आदि भी भोजन के अंग बने हैं। इससे अन्न की कमी की पूर्ति हुई है।
6. **यह विशेष खाद की पूर्ति कर देते हैं :** अपनी स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुरूप जब यह चलते हैं, उड़ते हैं तो इनकी बीटें रास्ते में ही गिर जाती हैं। इन बीटों का खाद के रूप में प्रयोग बहुत लाभप्रद हुआ है।
7. **ये शोध प्रक्रिया के साधन बनते हैं :** विश्व में निरन्तर मानव जीवन को और सुखमय बनाने तथा उनके कष्ट दूर करने के लिए शोध होते रहते हैं। उनमें चूहे, बन्दर, खरगोश आदि को प्रयोग हेतु काम में लेते हैं।
8. **यह आर्थिक समृद्धि के भण्डार हैं :** वन्य जीवों को अलग-अलग इतने आर्थिक लाभ के लिए काम में लिया जाता है कि इनकी सूची समेकित करना भी अत्यन्त कठिन है। हाथी दाँत, गैंडा और जंगली भैंसा सींग, मृग-कस्तूरी, शेर-बघेरा-चीता-साँप और मगर की खालें बहुत ऊँची कीमतों पर विदेशों में बिकती हैं। अनेक जीवों से कपड़े की पोशाकें, सौन्दर्य प्रसाधन और औषधि निर्माण होता है। कुल मिलाकर यह आर्थिक सम्पन्नता के आधार हैं।
9. **ये स्वस्थ मनोरंजन व ज्ञान प्रदान करते हैं :** अनेक टूरिस्ट (विदेशी व स्वदेशी) वन्य जीव स्थलों को देखने जाते हैं और वन्य जीवों के कार्यकलापों से मनोरंजन भी प्राप्त करते हैं। विविध प्रकार का बहुमूल्य ज्ञान भी अप्रत्यक्ष रूप से अर्जित होता है। वन्य जीवों के संरक्षण हेतु मानस भी लोगों में बनता है जो शुभ लक्षण है।
10. **ये पुरातन सांस्कृतिक गरिमा की याद दिलाते हैं :** भारत धर्म और संस्कृति का देश रहा है। वन्य जीवों के सरंक्षण हेतु इनको अनेक त्यौहारों और पर्वों से जोड़ने के पीछे एक पुष्ट आधार था, जिससे लोग इन्हें बचाये रखें। नागपंचमी (नाग देवता), दशहरा पूजन (अश्व), गोवर्धन पूजा (गोवंश),

(गोवंश), शिवरात्रि (नन्दी पूजन) आदि ऐसे ही उदाहरण हैं। इनके अलावा भी मछलियों को आटे की गोली, चींटियों को आटा, गाय को गोग्रास, कुत्ते की रोटी आदि को इसी सन्दर्भ में सम्मिलित किया जा सकता है।

अतः यह स्पष्ट है कि वन्य जीव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं और इनकी अनेक क्षेत्रों में समतुल्य उपादेयता है, जो इस बात पर प्रभाव डालती है कि इनको नष्ट होने से बचाया जाना चाहिए और इनका संरक्षण मानव कल्याण हेतु करना चाहिए।

● वन्य जीव सुरक्षा एवं संरक्षण (Protection and Conservation of Wild Life)

भारत में प्रशासनिक तौर पर वन्य पशु (जीव) की सुरक्षा और संरक्षण का समस्त उत्तरदायित्व विभिन्न राज्य तथा केन्द्र प्रशासित प्रदेशों की सरकारों को सौंपा हुआ है, लेकिन ऐसे निर्देश जो नीति के अन्तर्गत आते हों और समान रूप से पूरे देश में लागू किये जाने हों, वह भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय से ही अन्तिम रूप में प्रसारित होते हैं। वन्य जीवों की सुरक्षा और सरंक्षण हेतु पिछले लगभग 2 दशकों से केन्द्र स्तर पर ऐसे अनेक प्रयास हुए हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण आगे दिया जा रहा है–

1. वन्य प्राणी (संरक्षण) अधिनियम, 1972 (The Wild Life Protection Act, 1972)

वन्य जीवों की सुरक्षा के लिए वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 पारित किया गया जिसमें वन्य जीवों के कल्याण से सम्बन्धित अनेक बिन्दु अत्यन्त प्रभावी रूप से सम्मिलित हैं। इस पर भी उसमें आवश्यकतानुसार संशोधन प्रथम 1986 में तथा द्वितीय 1991 में किये गये हैं। अधिनियम की क्रियान्विति हेतु भारत सरकार के वन्य जीव संरक्षण निदेशक की सहायता के लिए नई दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता और चेन्नई में चार उपनिदेशक हैं। संकटापन्न प्रजातियों के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी कार्यों के सफल निष्पादन करने की जिम्मेदारी भी उन्हीं की है तथा वे वन्य जीवों की सुरक्षा और वन्य जीवों से सम्बन्धित व्यापार और वाणिज्य नियमों को लागू करने में स्थानीय अधिकारियों की सहायता भी करते हैं, जिसमें इन जीवों का आयात और निर्यात भी शामिल है।

यह उल्लेखनीय है कि इससे पूर्व भी वन्य जीवों की सुरक्षा के लिए निम्नलिखित अधिनियम बनाये गये थे। इनका उपयोग वन्य जीव संरक्षण हेतु होता रहा है–

1. मद्रास वन्य हाथी संरक्षण अधिनियम, 1873 (The Madras Wild Elephant Preservation Act, 1873)
2. अखिल भारतवर्षीय हाथी संरक्षण अधिनियम, 1879 (All India Elephant Preservation Act, 1879)
3. वन्य पशु और पक्षी संरक्षण अधिनियम, 1912 (The Wild Birds and Animals Protection Act, 1912)
4. बंगाल गैंडा संरक्षण अधिनियम, 1932 (The Bengal Rhinoceros Protection Act, 1932)
5. असम गैंडा संरक्षण अधिनियम, 1954 (The Assam Rhinoceros Protection Act, 1954)

2. भारतीय वन्य जीव बोर्ड की स्थापना (Establishment of Indian Board of Wild Life–IBWL)

इस वन्य जीव बोर्ड की स्थापना सन् 1952 में की गई थी तथा वन्य जीवों के लिए अनेक कार्य इस बोर्ड द्वारा किये गये जिनमें मुख्यतः राष्ट्रीय उद्यानों तथा वन अभयारण्यों के निर्माण का नाम उल्लेखनीय है। इस बोर्ड के मनोनीत अध्यक्ष भारत के प्रधानमन्त्री होते हैं। सन् 1991 में इसका पुनर्गठन किया गया जिसमें इसके निश्चित कार्यों का पुनः निर्धारण किया गया है, जिनमें–(1) वन्य जीवों की सुरक्षा और संरक्षण हेतु भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को सलाह देना, (2) राष्ट्रीय उद्यान, वन अभयारण्य तथा प्राणी-उद्यानों की देख-रेख सम्बन्धी सलाह और सुझाव, (3) वन्य जीवों तथा उनसे निर्मित वस्तुओं के आयात में सरकार को सुझाव देना, (4) वन्य जीवों के प्रति लोगों की दिलचस्पी जाग्रत करना, (5) समय-समय पर वन्य जीवों की सुरक्षा और संरक्षण की स्थिति का अध्ययन करना आदि शामिल हैं। **वस्तुतः भारतीय वन्य जीव बोर्ड वन्य जीव सम्बन्धी नीति बनाने के लिए देश की शीर्षस्थ सांविधिक संस्था है।**

3. भारतीय जीव-जन्तु कल्याण बोर्ड (Animal Welfare Board of India)

वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय भारत सरकार के अन्तर्गत इस बोर्ड की स्थापना जीव-जन्तुओं के कल्याण के लिए की गई है। यह एक स्वायत्त सहायता अनुदान संस्थान है जिसके निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं—

1. जीव-जन्तु कल्याण की योजनाओं और उनकी क्रियान्विति को बढ़ावा देना।

2. वन्य जीवों पर अत्याचारों को रोकना, तथा

3. वन्य जीव-जन्तुओं के लिए कल्याण संगठनों को आश्रय गृहों, पशु-शरण स्थलों और आवारा पशुओं के इलाज के लिए पशु-चिकित्सा अस्पताल चलाने के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना।

4. राष्ट्रीय उद्यान और वन अभयारण्यों की स्थापना (Establishment of National Parks and Wildlife Sanctuaries)

वन्य जीवों की समुचित सुरक्षा और संरक्षण देने हेतु राष्ट्रीय उद्यान तथा वन अभयारण्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर प्रभावी रहे हैं। वर्तमान में इनकी संख्या 578 (89 राष्ट्रीय उद्यान और 489 वन अभयारण्य) है जो 1·53 लाख वर्ग किमी क्षेत्र में फैले हुए हैं। इनके रख-रखाव के अनेक मद हैं, जिन पर भारत सरकार द्वारा 50% से 100% तक वित्तीय सहायता दी जाती है।

(इनका विस्तृत विवरण इसी पुस्तक के एक अलग अध्याय में है, उसका अवलोकन करें)

5. विशिष्ट प्रजातियों के लिए विशेष संरक्षण योजनाएँ (Special Conservation Schemes for Particular Species)

(1) प्रोजेक्ट टाइगर योजना (Project Tiger Scheme) : देश में बाघों की महत्त्वपूर्ण जनसंख्या के संरक्षण को सुनिश्चित करने के लिए **'बाघ परियोजना'** 1 अप्रैल, 1973 से प्रारम्भ की गई थी।

(2) अन्य योजनाएँ (Other Schemes) : उपर्युक्त योजना के ही समतुल्य कुछ अन्य जीवों के लिए भी निम्नलिखित योजनाएँ प्रारम्भ की गई हैं—

वन्य प्राणी का नाम	प्रारम्भ वर्ष
1. हंगुल (Hangul)	1970
2. शेर (Lion)	1972
3. मगर (Crocodile)	1974
4. हिरन (Brown Antlered Deer)	1981
5. गैंडा (Rhinoceros)	1987
6. हिम चीता (Snow Leopard)	1987
7. हाथी (Elephant)	1991

इनका अधिकृत रूप से विस्तृत विवरण भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय से प्रतीक्षित है।

6. प्राणी उद्यान (Zoological Parks)

वन्य जीवों के प्रति जन-साधारण में (विशेषकर बच्चों में) रुचि रखने, जानकारी बढ़ाने, सरंक्षण भावना को पनपाने हेतु लगभग प्रत्येक राज्य में जीव-जन्तु गृह (Zoo's) संचालित हैं जिनको राज्य सरकारें नियंत्रित करती हैं। केन्द्रीय स्तर पर निम्नलिखित प्राणी उद्यान अपनी विशिष्टता रखते हैं—

(1) राष्ट्रीय प्राणी उद्यान, नई दिल्ली (National Zoological Park, New Delhi) : राष्ट्रीय प्राणी उद्यान, नई दिल्ली में, जो 214 एकड़ भूमि में फैला हुआ है, वर्तमान में 1198 जीव हैं जो 54 स्तनपायी, 85 पक्षी तथा 16 सरीसृप प्रजातियों से हैं। प्रति वर्ष इस उद्यान को 16-17 लाख लोग देखते हैं। इस उद्यान का मुख्य उद्देश्य दर्शकों में वन्य जीवों के प्रति जागरूकता और उनके सरंक्षण के प्रति रुचि जाग्रत करना है।

(2) पद्मजा नायडू हिमालयन प्राणी उद्यान, दार्जिलिंग (Padmaja Naidu Himalayan Zoological Park, Darjeeling) : यह प्राणी उद्यान दार्जिलिंग में पश्चिमी बंगाल सरकार का एक स्वायत्तशासी

संस्थान है। इसमें वन्य जीवों की अनेक संकटापन्न और दुर्लभ प्रजातियों का निवास व प्रजनन होता है। यह उद्यान पूर्वी हिमालय क्षेत्र के जीव-जन्तुओं के व्यवहार तथा प्रजनन बायोलोजी पर अनुसंधान आयोजित करता है और आगन्तुकों को उच्च स्तर पर जीव-जन्तुओं और पेड़-पौधों के बारे में सीखने का अवसर प्रदान करता है।

(3) श्री चमराजेन्द्र प्राणी उद्यान, मैसूर (Sri Chamarajendra Zoology Park, Mysore) तथा

(4) नन्दनकानन जीव विज्ञान उद्यान, भुवनेश्वर (Nandankanan Biological Park, Bhubneshwar)। देश के ऐसे प्राणी उद्यान हैं, जहाँ चिड़ियाघर सम्बन्धी प्रशिक्षण आयोजित किये जाते हैं।

7. केन्द्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण (Centre Zoo Authority)

वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 के अन्तर्गत देश के सभी चिड़ियाघरों की देखरेख और उनमें रखे जाने वाले जीवों के संरक्षण के लिये केन्द्र सरकार द्वारा सन् 1992 में 'केन्द्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण' की स्थापना की थी। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। इस प्राधिकरण में 10 सदस्य, एक पूर्णकालिक सदस्य-सचिव होते हैं जिसके पदेन अध्यक्ष वन एवं पर्यावरण मंत्री भारत सरकार हैं। केन्द्र सरकार वित्तीय सहायता देकर जानवरों के वास तथा उनकी चिकित्सीय देखभाल की व्यवस्था करता है।

8. वन्य जीव प्रशिक्षण संस्थान, भारत (Wildlife Institute of India)

सर्वप्रथम इस संस्था का संस्थापन कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत सन् 1982 में हुआ। बाद में इसे पर्यावरण एवं वन विभाग मंत्रालय में ले लिया। इसका मुख्यालय देहरादून (उत्तरांचल) में है तथा यह संस्था एक स्वतंत्र इकाई के रूप में कार्य करती है। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य राजकीय तथा अराजकीय व्यक्तियों को वन्यजीव सम्बन्धी शोध, शिक्षण, देख-रेख और उनकी बेहतर जीवन के बारे में सिखाना है। इस संस्था से वन्य जीवों के संरक्षण के लिये तकनीकी ज्ञान कराया जाता है।

9. वन्य जीवों की दुर्लभ (संकटापन्न) प्रजातियों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कन्वेंशन (The Convention on International Trade in Endangered Species of Wild Fauna & Flora—CITES)

वन्य जीवों की संकटापन्न प्रजातियों के अवैध अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को रोकने हेतु वाशिंगटन (सं. राज्य अमेरिका) कन्वेंशन पर भारत ने भी अन्य देशों के साथ हस्ताक्षर किये हैं, जिसमें वन्य जीवों के आयात और निर्यात पर नियन्त्रण लगा है। भारत से—(1) ह्वेल मछली, (2) कस्तूरी मृग, (3) कछुआ, (4) मगर, (5) गोह, (6) गेंडा, (7) हाथी दाँत, (8) साँप की खालें, (9) जंगली भैंसों के सींग आदि अनेक वन्य जीव तथा उनके उत्पादों की विदेशों में बहुत माँग है। चोरी छिपे इनका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एक ओर वन्य जीवों की संख्या में कमी ला रहा है, वहीं इनसे हो सकने वाली आर्थिक आय से भी हाथ धोना पड़ रहा है। उपर्युक्त संस्था प्रत्यक्ष रूप से वन्य जीव संरक्षण में सहायक है।

10. विश्व वन्य जीव कोष (World Wild Life Fund—WWF)

'विश्व वन्य जीव कोष', जिसका अब नया नाम 'प्रकृति के लिए विश्वव्यापक कोष' (Worldwide Fund for Nature) हो गया है, की 1986 में सिसली में रजत जयन्ती मनाई गई। पेड़-पौधे तथा वन्य जीवों के लिए 130 देशों में, 4,000 योजनाएँ बनाकर उनको सुचारू रूप से चलाये जाने का श्रेय WWF—N को जाता है। भारत में 1 अप्रैल, 1973 से प्रारम्भ हुए 'बाघ-परियोजना' कार्यक्रम (Project Tiger Programme) इसका एक अनन्य उदाहरण है जिसमें उसने प्रारम्भ में 10 लाख अमेरिकी डालर का आर्थिक अनुदान दिया था। तत्कालीन भारत की प्रधानमन्त्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने भी बाघों की गिरती संख्या से चिन्ता व्यक्त करते हुए अपने देश में इस योजना को शुरू करने के लिए उस समय अपने कोष से 10 लाख अमेरिकी डालर देने की सहमति दी थी। वर्तमान में देश के 14 राज्यों में 27 बाघ परियोजना रिजर्वों में अब तक लगभग 35 मिलियन अमेरिकी डालर व्यय हो चुका है।

11. वन्य जीव संरक्षण में उल्लेखनीय कार्य हेतु पुरस्कार (Award & Fellowships for Exceptional Work in the Field of Wildlife Conservation)

पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय भारत सरकार ने सन् 1995-96 से वन्य जीव संरक्षण और शोध के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने वाले अधिकारी व क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं को एक पुरस्कार (राजीव गाँधी एवार्ड)

तथा दो फैलोशिप (सालिम अली/कैलाश सांखला) प्रति वर्ष देने का प्रावधान किया है। इससे वन्य जीव क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों में उत्साह व स्पर्द्धा बढ़ेगी, जो निःसन्देह प्रशंसनीय है।

• वन्य जीव संरक्षण हेतु व्यावहारिक सुझाव (Practical Suggestions for Wildlife Conservation)

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वन्य जीव संरक्षण हेतु किये जा रहे प्रयासों का कुछ संक्षिप्त विवरण ऊपर दिया गया है लेकिन दिन-प्रतिदिन के लिए क्या करणीय (Do's) कार्य अपेक्षित हैं, उस हेतु कुछ निम्न सुझाव यहाँ समेकित हैं—

1. राष्ट्रीय उद्यान और वन्य अभयारण्य की संख्या और निर्धारित क्षेत्रफल में वृद्धि कर वन्य जीवों के संरक्षण में और रुचि ली जानी चाहिए। इन पर होने वाले व्यय के बजट में भी वृद्धि करनी चाहिए जिससे आवासीय स्थल को वन्य जीवों के अनुकूल बनाया जा सके।
2. अवैध शिकार, सुरक्षा क्षेत्र में घरेलू जानवरों की चराई पर और अधिक नियन्त्रण और रोक लगानी चाहिए। अवैध व्यापार की रोक आवश्यक है।
3. दुर्लभ वन्य जीवों की रक्षा हेतु विशेष प्रायांजनाएँ बनाई जानी चाहिए।
4. पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम में 'वन्यजीव' को भी शामिल करते हुए उसके बारे में अधिक से अधिक जानकारी बच्चों व अन्य जनसाधारण को देने की योजना की क्रियान्विति करनी चाहिए।

वन्य जीव प्रकृति सन्तुलन में अपना अलग विशिष्ट स्थान व महत्त्व रखते हैं। इनके संरक्षण में पर्यावरण में सन्तुलन होता है, इस भावना को बने रहने से ही जन कल्याण है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. वन्य जीवों का वर्गीकरण किस आधार पर किया जाता है ? प्रत्येक वर्ग के कुछ उदाहरण भी दीजिये।
2. 'रेड-डेटा' बुक क्या है ? इसे क्यों संधारित किया जाता है ? बताइये।
3. वन्य जीव सम्पदा के महत्त्व पर टिप्पणी कीजिये।
4. वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 से पहले भी इस क्षेत्र में कोई अन्य अधिनियम थे ? उनके नाम दीजिये।
5. 'भारतीय वन्य जीव बोर्ड' की स्थापना के पीछे केन्द्र सरकार का क्या उद्देश्य था ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. राजस्थान का पक्षी 'गोणावन' समाप्ति के कगार पर है, टिप्पणी करिये।
7. 'केन्द्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण' क्यों स्थापित किया गया है ?
8. विश्व वन्य जीव कोष-प्रकृति की संरक्षण में क्या भागीदारी रही है ?
9. वन्य जीव संरक्षण में उल्लेखनीय कार्य हेतु कौन-कौन से राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार दिये जाते हैं?
10. वन्य जीवों पर अत्याचार रोकने हेतु केन्द्र सरकार ने क्या कदम उठाये हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'कोयल' को किस श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है ?
    (अ) पक्षी (ब) सरीसृप
    (स) कीट-पतंग (द) स्तनपायी
12. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित 'रेड-डेटा बुक' में कितनी पुस्तकें हैं ?
    (अ) 5 (ब) 6
    (स) 1 (द) 4
13. वन्य जीव प्रशिक्षण संस्थान, भारत (Wildlife Institute of India) का मुख्यालय कहाँ है ?
    (अ) भोपाल (ब) नई दिल्ली
    (स) देहरादून (द) कोयम्बटूर

14. विश्व वन्य जीव कोष-प्रकृति का मुख्यालय कहाँ है ?
    (अ) नई दिल्ली (ब) देहरादून
    (स) लखनऊ (द) जयपुर
15. कैलाश सांखला, जिनके नाम पर वन्यजीव सम्बन्धी फैलोशिप दी जाती है, का मूल निवास कहाँ का है ?
    (अ) कुरुक्षेत्र (हरियाणा) (ब) झांसी (मध्य प्रदेश)
    (स) जयपुर (राजस्थान) (द) नई दिल्ली

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य चिन्हित कीजिये–

16. वन्य जीव आहार के सम्पूरक भी हैं। (सत्य/असत्य)
17. भोजन श्रृंखला वन्य जीवों के कारण ही बनती है। (सत्य/असत्य)
18. कुत्ता एक वन्य जीव है। (सत्य/असत्य)
19. 'भारतीय वन्य जीव बोर्ड' वन्य जीव सम्बन्धी नीति बनाने के लिये देश की शीर्षस्थ सांविधिक संस्था है। (सत्य/असत्य)
20. प्रस्तावित 'शेर प्रोजेक्ट' प्रायोजना भारत के शेरों को बचाने तथा उनमें संख्या वृद्धि करने का भारत सरकार का एक सरकारी प्रयास है। (सत्य/असत्य)

13

बाघ परियोजना
[PROJECT TIGER]

• प्रस्तावना
(Introduction)

जंगल में वन एवं वन्य जीव प्रकृति का सन्तुलन बनाये रखते हैं। वन जहाँ वन्य जीवों के आवास स्थल होते हैं, वहीं ये वन्य जीव अपना भोजन एक निश्चित भोजन श्रृंखला के तहत उसी वन क्षेत्र से पाते रहते हैं। छोटे-छोटे शाकाहारी जीव (Hervivores) घास (वनस्पति) पर आधारित होते हैं, जो अपेक्षाकृत बड़े जीवों (Carnivores) का भोजन होते हैं। एक निश्चित भोजन श्रृंखला के अन्तर्गत यह जीव माँसाहारी जीवों की खुराक बनते हैं। यह एक क्रम है जो निरन्तर चलता रहता है, जब तक कि कोई अप्राकृतिक घटना या विशेष रूप से अपनाई योजना से इसे छेड़ा न जाये। **इस श्रृंखला में बाघ (Tiger) शीर्ष पर होता है और उसे ही इस चक्र का नियंत्रक माना जाता है। अतः निःसन्देह बाघ पर्यावरण के क्षेत्र में प्रकृति सन्तुलन के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटक होता है।**

भारत में वन एवं वन्य जीव सम्पदा सदैव से ही बहुतायत में और प्रकृति अनुकूल रही है जिससे निःसन्देह प्रकृति का सन्तुलन निर्बाध रूप से चलता रहा है। भारत के जंगलों में बाघों की संख्या की बहुतायत का केवल इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि इस सदी के प्रारम्भ में इनकी संख्या लगभग 40,000 बताई जाती है, लेकिन केवल मनोरंजन और प्रतिष्ठा के लिए इनका शिकार, बड़े-बड़े भवन और आलीशन इमारतों में इनकी खालों का प्रदर्शन और सजावट के लिए इनकी उपलब्धि ने इनकी संख्या को कम कर दिया। इधर इनके आवास-स्थल घने जंगलों का भी देश के विकास के नाम पर भारी विनाश हुआ। बाँधों के लिए जमीन ली गई, घने जंगल काट दिये गये। मकानों के निर्माण और बड़े-बड़े उद्योगों के लिए भी वन क्षेत्र काम में आये। इस सबका असर यह हुआ कि प्रकृति सन्तुलन तन्त्र के महत्त्वपूर्ण घटक बाघ की संख्या में निरन्तर कमी आती गई। सन् 1972 में जब पहली बार देश में आधिकारिक रूप से बाघ-गणना हुई तो इनकी कुल संख्या 1,827 बताई गई।

देश की बढ़ती जनसंख्या भी इस विनाश का एक प्रमुख कारण रही है। गाँव के लोगों ने अपने पेट भरने के लिए अधिक अन्न उपजाने हेतु शनैः-शनैः आस-पास के जंगलों की ओर बढ़ना शुरू कर दिया। मवेशियों को चराने के लिए जंगल की वनस्पति का उपयोग हुआ। छोटे-मोटे जंगली जानवरों का शिकार भी चोरी छिपे हुआ। इससे सारी स्थिति पर असर पड़ा। बाघों को निर्भय आवास और अपर्याप्त भोजन के अभाव में एक जगह से दूसरी जगह पलायन करना पड़ा। कुछ अपनी स्वयं की मौत के ग्रास बने और अनेक शिकारियों के हाथों समाप्त हो गये।

सन् 1970 का वर्ष इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहेगा जबकि बाघों की निरन्तर घटती संख्या के कारण इसके शिकार पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इसी क्रम में 'भारतीय वन्यजीव मण्डल' की अभिशंसा पर सन् 1972 में वन्यजीव (सुरक्षा) अधिनियम भी संसद से पारित हुआ जिसमें बाघों की रक्षा, सुरक्षा और उनकी देखभाल शामिल थी।

लेकिन केवल शिकार के प्रतिबन्ध तथा वन्यजीव (सुरक्षा) अधिनियम से बाघों की सुरक्षा सम्भव नहीं थी। अतः यह प्रस्तावित किया गया कि देश में बाघ बहुतायत क्षेत्रों को 'आरक्षित क्षेत्र' (Reserved Area) घोषित कर दिया जाय जिसमें कुछ क्षेत्र को 'कोर क्षेत्र' (Core Area) रखा जाय जहाँ कोई बाहरी

व्यवधान न हो, और उसके बाहर के कुछ क्षेत्र को 'बफर क्षेत्र' (Buffer Zone) के नाम से रखा जाय जिसकी प्राकृतिक सम्पदा का सुरक्षानुकूल उपयोग भी किया जा सकता है।

इस तरह 'बाघ परियोजना' (प्रोजेक्ट टाइगर) नामक केन्द्रीय प्रायोजित योजनागत स्कीम 1 अप्रैल, 1973 से प्रारम्भ की गई जिसके दो निम्न मुख्य उद्देश्य रखे गये—

1. भारत में वैज्ञानिक, आर्थिक, सौन्दर्यपरक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक महत्त्व के लिए बाघों की उपयोगी संख्या का अनुरक्षण सुनिश्चित करना।
2. ऐसे जैविक महत्त्व के क्षेत्र का लोगों के हित, शिक्षा और मनोरंजन के लिए राष्ट्रीय विरासत के रूप में हमेशा परिरक्षण करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अब तक 14 राज्यों में 27 बाघ रिजर्व तथा 2 विस्तार स्थापित किये गये हैं, जिनका कुल क्षेत्रफल 37,761 वर्ग किमी है। अब हम इन प्रोजेक्ट टाइगर्स के बारे में कुछ अधिक जानना भी चाहेंगे। इनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है। (पाठकों की सुविधा के लिए इन्हें हमने अंग्रेजी वर्ण के क्रमानुसार ही लिया है)

● प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व्स (Project Tiger Reserves)

1. बान्दीपुर (कर्नाटक) [Bandipur (Karnataka)]

पश्चिमी घाट (Western Ghats) के अंचल में एक अत्यन्त सुव्यवस्थित और संरक्षित वन्य जीव रिजर्व 'बान्दीपुर' वन्य जीवों का एक विशाल आश्रय स्थल है जिसे इसकी भौगोलिक स्थिति व अन्य प्राकृतिक सुविधाओं के कारण ही राष्ट्रीय उद्यान का स्तर मिला है तथा इसे प्रोजेक्ट टाइगर योजना के उपयुक्त स्वीकार किया गया है। 1930 के दशक में केवल 60 किमी क्षेत्र में बना यह क्षेत्र निकट के ही वेनुगोपाल वन अभ्यारण्य के 1941 में मिलने से वृहद रूप में आ गया जो निरन्तर विस्तार पाकर आज 866 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। उत्तर में नागर-होल राष्ट्रीय पार्क—कर्नाटक (Nagarhole National Park-Karnataka), दक्षिण में मुदुमलाई अभ्यारण्य—तमिलनाडु (Mudumalai Sanctuary-Tamilnadu) और पश्चिम में वाईनेड अभ्यारण्य—केरल (Wynad Sanctuary-Kerala) से घिरा हुआ यह स्थान अपनी गुणवत्ता के कारण दक्षिणी भारत का सबसे बड़ा हाथियों का आवास स्थल भी माना जाता है।

अधिकतर यह पहाड़ी स्थान घाटियों के प्रकार का है जिसमें वन्य जीव सामान्यतया अपने आपको सुरक्षित समझते हैं। नूगू (Nugu) नदी इस क्षेत्र के मध्य से तथा काबिनी (Kabbini) नदी इसके उत्तर तथा पश्चिमी सीमा से लगकर बहती है तथा पानी की अथाह पूर्ति करती है। 625 मिमी से 1250 मिमी तक वार्षिक वर्षा से सघन वन संरक्षित हैं जिससे बाघों के लिए आदर्श स्थान बन गया है। इसके अतिरिक्त इस राष्ट्रीय उद्यान में विभिन्न प्रकार के अन्य वन्य जीव भी बहुतायत से हैं, जिनमें चीतल (Chital), साँभर (Sambar), चौसिंगा (Chausinga), गौर (Gaur), जंगली रीछ (Wild Bear), भालू (Sloth Bear), लंगूर (Langur), तेंदुआ (Leopard), नेवला (Common Mongoose & Stripped-Neck Mongoose), जंगली कुत्ता (Wild Dog), गिलहरी (Giant & Flying Squirrel), कस्तूरी मृग (Musk Deer), बिलाव (Civet) आदि मुख्य हैं।

रेंगने वाले (Reptiles) जीवों में मगर (Crocodiles), साँप (Snakes) और गिरगिट (Garden-Lizard) तथा पक्षियों में कठफोड़वा (Wood Pecker), बटेर (Quails), धनेश (Pied Hornbill), हरे तोते (Green Pigeon), क्रोंच (Stork), छोटा बत्तख (Teal), सारस (Pond Herons), जल पक्षी (Water Fowl) और जल मुर्गी (Moorhen) आदि प्राप्य हैं।

दक्षिण भारत में एक अच्छा दर्शनीय और विविध प्रकार की वन्य जानकारी उपलब्ध कराने वाला यह आकर्षक राष्ट्रीय उद्यान है।

2. बक्सा (पश्चिमी बंगाल) [Buxa (West Bengal)]

यह वन अभ्यारण्य (Wildlife Sanctuary) पश्चिमी बंगाल के शीर्ष उत्तर में वहाँ स्थित है जहाँ हिमालय पर्वत श्रेणी से आने वाली अनेक नदियाँ पहाड़ों से मैदानी भाग में प्रवेश लेती हैं। सन्कोज (Sankos) नदी इसकी पूर्वी सीमा पर बहती है तथा अन्य नदियों में राईडक (Rydak), जयन्ती (Jainti), बाला (Bala),

डीमा (Dima) और पना (Pana) प्रमुख हैं, जिनसे यह क्षेत्र सदैव हरा-भरा और वन्य जीवों के आश्रय के उपयुक्त रहता है। एक तरफ बंगाल के सघन जंगल तथा दूसरी ओर असम का 'मन्सा' टाइगर रिजर्व और तीसरी तरफ भूटान के वन क्षेत्र से प्राकृतिक रूप से घिरा हुआ 'बक्सा' टाइगर रिजर्व अनेक प्रकार के वन्यजीवों को संरक्षण दिये हुए हैं। हाथियों के लिए अनुकूलता के कारण असम और भूटान से पलायन होने वाले हाथी यहाँ अपना आश्रय बनाते हैं।

वन्य पशुओं में हाथी (Elephant), सांभर (Sambar), मुन्तजैक (Muntjac), चीतल (Chital), जंगली सूअर (Wild Pig), गौर (Gaur), लघुपुच्छ बन्दर (Rhesus Monkey), लंगूर (Langur), बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), बिलाव (Civet), भालू (Sloth Bear), सेही (Porcupine), हार्नबिल (Hornbill) और जंगली बिल्ली (Leopard Cat) आदि हैं। राइडक में महसीर (Mahseer) जलजीव बहुतायत में हैं।

काफी सख्त देखरेख के बावजूद इस क्षेत्र पर पड़ौसी आबादी का अधिक दबाव है। मवेशियों के चरागाह के रूप में काम में आने के कारण बफर जोन लगभग बंजर बनता जाता है, पर फिर भी प्रयास कर इसको व्यवस्थित रखने के लिए सरकारी और गैर सरकारी संस्थाएँ निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

3. कोरबेट (उत्तर प्रदेश) [Corbett (Uttar Pradesh)]

उत्तर प्रदेश में 'कोरबेट' राष्ट्रीय उद्यान एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि लिए सदियों से विश्व में जाना पहचाना वन्य जीव संरक्षण स्थल है। असीम वन सम्पदा युक्त हिमालय पर्वत शृंखलाएँ, लहराती शिवालिक पहाड़ियाँ और विस्तृत हरे-भरे मैदानी क्षेत्र में स्थित इस टाइगर रिजर्व को प्रकृति ने सभी सुविधाएँ विरासत में ही उपलब्ध कराई हैं जिससे यह स्वतः ही बाघों के लिए आकर्षण बना है और इसी कारण जहाँ देश के अधिकतम बाघों को सुरक्षा देने का कार्य यह उद्यान अपने आप में सँभाले हुए है, वहीं इसकी महत्ता के कारण प्रथम प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व के रूप में भी इसका ही चयन हुआ है। सच तो यह है कि इस स्थान की उपयुक्तता ने ही 'बाघ परियोजना' को प्रारम्भ करने की प्रेरणा दी जिसके आधार पर फिर अनेक स्थानों का इसी योजना के तहत चयन हुआ है।

विविधता लिए अन्य वन्य पशुओं में हाथी (Elephant), लंगूर (Langur), बन्दर (Rhesus Monkey), चीतल (Chital), सांभर (Sambar), जंगली सूअर (Wild Pig), विभिन्न प्रकार के हिरन (Hog & Barking Deer), सियार (Jackal), गोरल (Goral) की प्रमुखता है। जल जीवों में घड़ियाल (Gharial), मगर (Crocodile) तथा महसीर (Mahseer) और कलबसु (Kalbasu) जैसी मछलियाँ हैं। अनेक प्रकार के सर्पों—अजगर (Python), गेहुवन साँप (Cobra) तथा क्रेट (Krait) और वाईपर (Viper) की अनगिनत संख्या है।

राष्ट्रीय सर्वे के आधार पर लगभग 585 प्रकार की पक्षी प्रजातियाँ यहाँ मिलती हैं, जिनमें मोर (Peacock), कौवे (Crow), गिद्ध (Vulture), कठफोड़वा (Woodpeacker), पीलक (Oriole), बत्तख (Ducks & Teals), जल कौवा (Cormorant), सुग्गा (Parakeet), जंगल मुर्ग (Jungle Fowls), सारिका (Laughing Thrush), तीतर (Partridge), ड्रोंगो (Drongo), कलीज (Kaleej) मुख्य रूप से मिल जाती हैं। प्रशिक्षित स्टाफ, आवश्यक प्रबन्ध व्यवस्था, बफर क्षेत्र में वृद्धि, नियंत्रित मानव प्रवेश, संतुलित परितन्त्र के फलस्वरूप निश्चय ही बाघों की संख्या वृद्धि उत्साहवर्द्धक रही है जिससे इनकी उपादेयता की औचित्यता सिद्ध हुई है।

4. दुदुवा (उत्तर प्रदेश) [Duduwa (Uttar Pradesh)]

उत्तर उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र में स्थित यह टाइगर रिजर्व उत्तर प्रदेश में हिमालय की तराई तथा तराई के मैदानों के बीच में स्थित है। घने घास के मैदान में सघन वृक्षों की विविधता है जिनमें साल, बहेड़ा, शीशम, खैर, जामुन, कुसुम, गूलर, सेंमल आदि मुख्य हैं। खुले जंगल और अनेक प्राकृतिक जलाशयों से युक्त इस क्षेत्र में बाघ तथा उसकी प्रजाति तेंदुआ, चीता आदि को उपयुक्त वातावरण उपलब्ध है जिससे बाघ-परियोजना का मन्तव्य पूरा हुआ है।

वन्य पशुओं में (शाकाहारी तथा माँसाहारी) हिरन (Spotted, Hog & Barking Deer), साँभर (Sambar), जंगली रीछ (Wild Bear), भालू (Sloth Bear) मुख्य हैं। स्थानीय तथा प्रवासी पक्षियों की लगभग 375 प्रजातियाँ बताई जाती हैं, जिनमें धनेश (Hornbill), लाल मुर्ग (Red Jungle Fowl), कठफोड़वा (Wood

Pecker), पीलक (Orioles), विभिन्न प्रकार की बत्तखें (Ducks), कलहंस (Goose), जल कौवा (Cormorants), क्रौंच (Storks) आदि सम्मिलित हैं। यहाँ का पारिस्थितिकी तन्त्र गेंडे (Rhinoes) के लिए उपयुक्त होने के कारण इस जाति को पुनः बसाने का कार्य यहाँ 1985 से प्रारम्भ किया था, जिसके फलदायक परिणाम मिले हैं। एक निश्चित योजना के तहत संरक्षण और विकास गति पर हैं।

5. इन्द्रावती (मध्य प्रदेश) [Indrawati (Madhya Pradesh)]

इन्द्रावती नदी के किनारे पर स्थित यह रिजर्व मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा उड़ीसा के घने जंगलों की शृंखला समूह में जुड़ा है। घने जंगल और स्वच्छ पानी के अनेक प्रपातों से इसका प्राकृतिक सौन्दर्य ही नहीं निखरा है बल्कि इसे वन्य जीवों के स्वच्छन्द विचरण हेतु सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं। जंगली भैसों (Wild Buffaloes) के लिए देश का सबसे बड़ा और सबसे अच्छा आश्रय स्थल है। लुप्त हो रही बारासिंगा (Branderi Barasinga) जाति के लिए भी संरक्षण हेतु इस रिजर्व को उपयुक्त माना है, जो अभी तक केवल 'कान्हा' टाइगर रिजर्व तक सीमित था। प्राकृतिक सम्पदा में सागवान, अमलतास, आँवला, आँजन, अर्जुन, बहेड़ा, तेंदु, पलास और टिन्सा तथा बाँस के बड़े-बड़े पेड़ हैं। अतः शाकाहारी जीवों को पर्याप्त आहार सुविधा उपलब्ध है।

अन्य वन्य पशुओं में चीतल (Chital), साँभर (Sambar), नील गाय (Blue Bull), काला सांड (Black Bull), चौसिंगा (Chousinga), चिंकारा (Chinkara), जंगली सूअर (Wild Pig), भालू (Sloth Bear), गौर (Gaur) तथा विभिन्न प्रजातियों के हिरन सम्मिलित हैं।

मनुष्य के उपयोग को नियंत्रित कर इसे और सुविधाओं से युक्त बनाया जा रहा है, जिससे इसके मुख्य लक्ष्य बाघ (Tiger), जंगली भैंसा (Wild Buffalo) तथा बारासिंगा (Barasinga) को संरक्षण मिल सके।

6. कलाकड–मुण्डनथुरई (तमिलनाडु) [Kalakad—Mundanthurai (Tamilnadu)]

देश के दक्षिण में यह आखिरी छोर का टाइगर रिजर्व है जो तमिलनाडु प्रदेश की दो 'कलाकड' तथा 'मुण्डनथुरई सेन्चुरीज' के मध्य स्थित है। देश के पश्चिमी समुद्र तट तथा दक्षिण भारत की मिश्रित आर्द्रता तथा शुष्क जलवायु पर आधारित सदाबहार तथा घने वृक्षों वाला यह वन्य अभ्यारण्य कई विविधता लिए हुए है जिसमें वन्य जीवों की ही विविधता प्रमुख है।

माँसाहारी वन्य पशुओं में बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), जंगली बिलाव (Civet), लकड़बग्घा (Hyena), गीदड़ (Jackal) आदि तथा शाकाहारी जन्तुओं में हाथी (Elephant), कई प्रकार के वानर (Different types of Macaques), गौर (Gaur), सांभर (Sambar), नीलगिरी ताहर (Nilgiri Tahr), जलमुर्गी (Water Birds), तीतर (Partridges), बटेर (Quail), फुदकी (Warbeer), सहेली (Minivet), छपका (Nightjar) आदि मिलते हैं।

सुरक्षा व्यवस्था और व्यवस्थित करने, मवेशी चराई रोकने, लोगों की व्यक्तिगत सम्पत्तियों के झगड़े समाप्त करने आदि पर प्रशासन का प्रयास है। भविष्य की योजनाओं में इस टाइगर रिजर्व के स्तर को 'राष्ट्रीय उद्यान' में परिवर्तित कराना मुख्य लक्ष्य है।

7. कान्हा (मध्य प्रदेश) [Kanha (Madhya Pradesh)]

देश का सर्वाधिक चर्चित 'कान्हा' राष्ट्रीय पार्क का विगत लगभग 70 वर्षों का इतिहास कई उतार-चढ़ाव लिए है। 1933 में निर्मित वन अभ्यारण्य का स्तर जब 1955 में राष्ट्रीय पार्क के रूप में परिवर्तित हुआ तब इसके कोर क्षेत्र का क्षेत्रफल केवल 318 वर्ग किमी था। उस पर भी पड़ौसी गाँवों के लोगों का अतिक्रमण, बलपूर्वक मवेशी चराई, ईंधन के रूप में वन क्षेत्रों का ह्रास सभी इस क्षेत्र की प्रगति के बाधक बने, लेकिन शनैः-शनैः स्थितियों को सँभाल कर इसे 'प्रोजेक्ट टाइगर' क्षेत्र में ले लिया। विरासत में मिली प्राकृतिक सम्पदाओं ने इसे पुनः ऐसे घने, आकर्षक और दर्शनीय स्थल के रूप में ला दिया जिससे इसे देश के श्रेष्ठ उद्यानों में गिना जा सकता है।

अब चीतल (Chital), बारासिंगा (Barasinga), साँभर (Sambar), गौर (Gaur) और जंगली सूअर (Wild Pig) की बहुतायत है। 1975 में बारासिंगा की 66 की संख्या का वर्तमान में 500 के लगभग हो जाना तथा

1972 की बाघों की संख्या 43 से 1994 के प्रारम्भ म लगभग 150 तक हो जाना निश्चित ही प्रगति प्रदर्शित करता है। अब यह टाइगर रिजर्व 1,945 वर्ग किमी. क्षेत्र में है।

8. मानस (असम) [Manas (Assam)]

देश के उत्तर-पश्चिम में स्थित यह टाइगर रिजर्व असम का एक ऐसा वन्य जीव क्षेत्र है, जिसका क्षेत्रफल (कोर क्षेत्र) बहुत कम है, पर बाघ (Tiger), गेंडा (Rhino) और हाथी (Elephant) जैसे महत्त्वपूर्ण पशुओं का आश्रय स्थल बन पूरे देश के लिए स्पर्धा का क्षेत्र बना हुआ है। इसका श्रेय वस्तुतः प्रकृति को ही है। भारी वर्षा, नदियों के साथ लाई मिट्टी, कंकड़-पत्थर से बने मैदानी क्षेत्र और पहाड़ी ढालू चट्टानें सभी ने मिलकर एक ऐसे परितन्त्र को जन्म दिया है, जो वन्य जीवों के लिए अद्वितीय है। मानस नदी ने जनसम्पदा को जहाँ समृद्ध बनाया है वहीं जलाशयों की सदैव पूर्ति कर प्राथमिक आवश्यकता को पूरा किया है।

हाथी (Elephant), गेंड़े (Rhinoes), जंगली भैंसे (Wild Buffaloes), गौर (Gaur), साँभर (Sambar), जंगली सूअर (Wild Pig), हिरन (Swamp & Hog Deer), लंगूर (Capped & Golden Langur), बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), भालू (Sloth Bear), घड़ियाल (Ghariyal), अजगर (Python) आदि अनेक पशु-पक्षी और जल-जीव इस क्षेत्र में अच्छी संख्या में हैं।

अवैध शिकारों की बदस्थिति तथा उपजाऊ भूमि का ग्रामीणों द्वारा निरन्तर अतिक्रमण यहाँ की प्रमुख समस्याएँ हैं जिन्हें धीमे-धीमे नियन्त्रित किया जा रहा है।

9. मेलघाट (महाराष्ट्र) [Melghat (Maharashtra)]

'मेलघाट' अभ्यारण्य पश्चिमी घाट (Western Ghats) की तलहटी में है और मिश्रित प्रकार का कुछ भाग पहाड़ी और कुछ मैदानी है। पश्चिम में सघन सागवान के जंगल हैं। मानसून, शीत तथा ग्रीष्मकाल में ऋतुओं के साथ-साथ वनस्पति में परिवर्तन आ जाता है जिससे प्राकृतिक स्थितियों में भी परिवर्तन निश्चित होता है। इसका प्रभाव वन्य जीवों पर भी पड़ता है। ताप्ती और पूर्णा नदियाँ यथेष्ट जल पूर्ति के साधन हैं।

गौर (Gaur), साँभर (Sambar), चिन्कारा (Chinkara), जंगली सूअर (Wild Pig) और हिरन (Barking Deer) की बहुतायत है। चीतल (Chital) और नीलगाय (Blue Bull) अल्प संख्या में हैं। बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard) और वन बिलाव (Wild Dog) प्रमुख माँसाहारी वन्य पशु हैं।

भारी मवेशी चराई और वन अग्नि (Forest Fire) मुख्य समस्याएँ हैं, जिनके लिए सभी प्रबन्ध किये गये हैं। बाघ परियोजना क्षेत्र मेलघाट की सफलता की पुष्टि इससे होती है कि पिछले वर्षों में न केवल बाघों की संख्या में वृद्धि ही हुई है बल्कि उनके अवैध शिकार पर भी कड़ाई से रोक लगी है।

10. नागार्जुनसागर (आन्ध्र प्रदेश) [Nagarjunsagar (Andhra Pradesh)]

देश के दक्षिण मध्य में स्थित यह टाइगर रिजर्व कृष्णा नदी के आवाह क्षेत्र (catchment area) में आता है। मध्य और पश्चिमी भाग पठारी है, शेष भाग घुमावदार घाटियों तथा नदी के साथ लाये कंकड़-पत्थर आदि के संग्रह से ऊबड़-खाबड़ है, लेकिन जल की प्रचुरता और परितन्त्र की अनुकूलता से वन्य जीवों को सुरक्षा है। कृष्णा नदी पर बने बाँध 'नागार्जुनसागर' के नाम पर ही इस रिजर्व का नाम पड़ा है।

वन्य पशुओं में बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), लकड़बग्घा (Stripped Hyena), भालू (Sloth Bear), जंगली बिलाव (Civet), ऊदबिलाव (Indian Otter), नील गाय (Blue Bull), चेन्कारा (Chinkara), चौसिंगा (Chausinga), साँभर (Sambar), चीतल (Chital), जंगली सूअर (Wild Pig) आदि सम्मिलित हैं। कई किस्म के लंगूर (Langur & Bonnet Macaque) हैं। इण्डियन पेन्गोलिन (Indian Pangolin) अब लुप्त प्रायः स्थिति में हैं। सर्वे के आधार पर लगभग 125 प्रकार की स्थानीय तथा प्रवासी पक्षी प्रजातियाँ यहाँ उपलब्ध होती हैं।

समान रूप से बाहरी ग्रामीण निवासियों के भूमि अतिक्रमण हस्तक्षेप से तथा वन उत्पाद विक्रय से इस रिजर्व की प्रगति में बाधाएँ आई हैं, जिन्हें सुलझाया जा रहा है। कोर क्षेत्र में और प्रतिबन्ध लगाये जा रहे हैं तथा आधुनिकतम संचार व्यवस्था से वन्य जीवों की देख-रेख व नियन्त्रण किया जा रहा है।

11. नामदफा (अरुणाचल प्रदेश) [Namdapha (Arunachal Pradesh)]

'नामदफा' राष्ट्रीय पार्क में वन्य पशुओं की विविधता है, जो यहाँ के विविधतापूर्ण परितन्त्र से सीधे सम्बन्धित हैं। हिमालय की समुद्र तल से 200 मीटर से 4500 मीटर तक की ऊँचाई वाले पहाड़ी, पठारी और मैदानी क्षेत्र में बना यह रिजर्व अनेक प्रकार की वनस्पति तथा अन्य वन सम्पदा संजोये है। पानी के अनगिनत संग्रह स्थल हैं और नदियों का अनवरत पानी इस क्षेत्र में होकर ब्रह्मपुत्र में जा मिलता है।

सम्भवतः देश का यही एक ऐसा राष्ट्रीय पार्क है जहाँ बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), हिमचीता (Snow Leopard) और बादली चीता (Clouded Leopard) की प्रजातियाँ एक साथ मिलती हैं। अन्य वन्य पशुओं में हाथी (Elephant), जंगली सूअर (Wild Pig), सेही (Porcupine), गौर (Gaur), जंगली भैंसा (Wild Buffaloes), हिरन (Barking, Hog Deer & Musk Deer), जंगली बकरी तथा अनेक पक्षियों की प्रजातियाँ मिलती हैं।

यद्यपि इस रिजर्व की पहुँच बहुत आसान नहीं है, अतः कई मायने में यह क्षेत्र काफी सुरक्षित है। पर तब भी भूमि अतिक्रमण की स्थिति से निपटना यहाँ की प्रमुख समस्या है, जिस पर व्यवस्थित योजना से प्रयास किया जा रहा है।

12. पलामू (बिहार) [Palamau (Bihar)]

'पलामू' टाइगर रिजर्व बिहार प्रान्त में स्थित है जहाँ की अपेक्षाकृत शुष्क जलवायु से क्षेत्र में उतनी सघनता वृक्षों की नहीं है जितनी एक राष्ट्रीय पार्क के नाम से आशा की जाती है। अधिकतर जंगल में साल व बाँस लगे हैं। अधिकतर उत्पाद संरक्षित होने के बजाय मानव की लालच का शिकार बन कर नष्ट हो जाते हैं और इसी से इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी न तो सन्तुलित ही है और न ही इसकी प्रगति दृष्टिगत है। कोल (Koel) नदी तथा उसकी सहायक नदियाँ केवल पानी का स्रोत हैं, जो पर्याप्त नहीं हैं और गर्मियों में जल अभाव हो जाता है। जल की तलाश में वन्य जीव रिजर्व में ही स्थान बदलते रहते हैं। 1300 मिमी की वर्षा ऐसे अधिक ताप वाले क्षेत्र के लिए पर्याप्त नहीं है।

इसके बावजूद विगत अनेक वर्षों से चले आ रहे विविधतापूर्ण परितन्त्र में अनेक प्रकार के वन्य पशु यहाँ बसते हैं। हाथी (Elephant), चीतल (Chital), साँभर (Sambar), लघु पुच्छ बन्दर (Rhesus Monkey), लंगूर (Common Langur), खरगोश (Hare), सेही (Porcupine), गौर (Gaur), नील गाय (Blue Bull), हिरन (Barking Deer), ढोल (Wild Dog), जंगली सुअर (Wild Pig), बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), भेड़िया (Wolf), गीदड़ (Jackal), लकड़बग्घा (Hyena) इसमें सम्मिलित हैं। लगभग 1,000 पक्षी प्रजातियाँ मिलती हैं। तीतर, अनेक प्रकार के मुर्ग (Peafowl, Red Jungle Fowl), बहुतायत से हैं।

अनेक व्यवस्थाओं के साथ पानी की नियमित व्यवस्था तथा वन क्षेत्र का सघन वनीकरण पर अधिक ध्यान केन्द्रित है।

13. पेरियार (केरल) [Periyar (Kerala)]

पश्चिमी घाट में पेरियार नदी के नाम पर नामकरण हुए 'पेरियार' टाइगर रिजर्व का पूरा परितन्त्र विशेषतः जल पर आधारित है। वर्षों से छोटे-छोटे प्राकृतिक रूप से बने द्वीप कृत्रिम झील के अन्दर एक ऐसा स्थलीय, जलीय और भूगर्भीय पारिस्थितिकी तन्त्र का निर्माण करते हैं जिससे क्षेत्र में दर्शकों का तो आकर्षण होता ही है बल्कि साथ ही वन्य एवं अन्य जीवों को भी समुचित आश्रय प्रदान करते हैं। वन सम्पदा की दृष्टि से कुछ भाग बहुत सघन तथा सदा हरियाली वाले हैं, कुछ भागों में आंशिकी हरियाली है तथा कुछ सूखे (baren) भी हैं।

वन्य पशु में हाथी (Elephant), गौर (Gaur) तथा हिरन (Deer) उल्लेखनीय हैं। जल क्षेत्र के पास लंगूर (Langur & Macaque), साँभर (Sambar), हिरन (Mouse Deer & Barking Deer), जंगली सूअर (Wild Pig), सेही (Porcupine), बाघ (Tiger), तेंदुआ (Lepoard) और ढोल (Wild Dog) मिल जाते हैं। जलीय जीवों में इंडियन डार्टर (Indian Darter), जल कौवा (Cormorant), क्रौंच (Stork) आदि प्रमुख हैं।

टाइगर रिजर्व की स्थितियाँ सामान्यतया सन्तोषप्रद हैं तथापि चराई रोकने, टूरिस्ट के दबाव को नियंत्रित करने तथा अवैध शिकार रोकना प्रगति के लिए आवश्यक एवं उचित प्रतीत होते हैं।

14. रणथम्भोर (राजस्थान) [Ranthambore (Rajasthan)]

राजस्थान के विशाल रेगिस्तानी एवं वीरान क्षेत्र में 'रणथम्भोर' राष्ट्रीय पार्क सचमुच प्रकृति का एक

करिश्मा है और इसे रेगिस्तान में मरुस्थल की संज्ञा दी जा सकती है। अरावली और विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी के मिलन स्थल पर निर्मित रिजर्व का परितन्त्र इतना सन्तुलित एवं व्यवस्थित है कि पूरे वर्ष पर्यन्त न तो जीवों को कोई भोजन का अभाव रहता है और न ही पानी का। पानी की पूर्ति प्रकृति के अलावा कृत्रिम रूप से बनाये गये जलाशयों को कुओं से भरकर कर ली जाती है। यह एक सघन पहाड़ी जंगलों तथा उसके चारों ओर विशाल वीराने क्षेत्र के बीच व्यवस्थित परितन्त्र की अद्वितीय मिसाल है जिसमें वन्य जीवों ने भी विकृत पर्यावरण के साथ अपने आपको समाहित तथा समायोजित कर लिया है।

दोनों ही श्रेणी शाकाहारी और माँसाहारी पशुओं में साँभर (Sambar), चीतल (Chital), नील गाय (Blue Bull), जंगली सूअर (Wild Pig) और चिंकारा (Chinkara) तथा बाघ (Tiger) और तेंदुआ (Leopard) हैं। भालू (Sloth Bear), अजगर (Python), गेहुँवन साँप (Cobra) और मगर (Crocodile) भी पाये जाते हैं। अनेक प्रकार के पक्षी भी मिलते हैं जिनमें तीतर (Partridge), बटेर (Quail), जल मुर्ग (Water Fowls), बत्तख (Teal), सुग्गा (Parakeet) और बगुला (Egret) आदि उल्लेखनीय हैं।

गर्मियों में पानी का अभाव तथा निकटस्थ ग्रामीणों का उद्यान क्षेत्र में अतिक्रमण नियमित एवं सामान्य बात है। पानी का समुचित प्रबन्ध हुआ है। अतिक्रमण रोकने हेतु प्रशासन सजग है।

15. सरिस्का (राजस्थान) [Sariska (Rajasthan)]

राजस्थान प्रदेश में ही 'सरिस्का' टाइगर रिजर्व पुनः रेगिस्तानी क्षेत्र में अपनी स्वतन्त्र एकल अद्वितीय पारिस्थितिकी पर टिका है। पूरा क्षेत्र पहाड़ी है तथा मध्य में दो छोटे भाग पठारी हैं, जिन्हें 'कंकवारी' और 'किरास्का' के नाम से पुकारते हैं। पूरे क्षेत्र के वन क्षेत्र बहुत घने नहीं हैं, पर शाकाहारी जीवों के लिए पर्याप्त भोजन उपलब्ध करा देते हैं, जिन पर माँसाहारी वन्य जीव अविलम्बित रहते हैं। पानी का अभाव कृत्रिम रूप से जलाशयों को कुएँ से भर कर दूर किया जाता है। वर्षा 650 मिमी वार्षिक औसत भी पर्याप्त नहीं है।

यहाँ पर वन्य पशुओं में साँभर (Sambar), चीतल (Chital), नील गाय (Blue Bull), चौसिंगा (Chausinga), चिंकारा (Chinkara), स्याहं गोश (Caracal), लकड़बग्घा (Hyena), गीदड़ (Jackal), लंगूर (Langur) तथा बिज्जू (Ratel) मुख्य हैं। अन्य जीवों में लहटोरा (Shirkes), सुग्गा (Parakeets), तीतर (Patridges) और मोर (Pea Fowl) आदि सम्मिलित हैं।

राष्ट्रीय उद्यान को संरक्षित रखने के लिए अनेक प्रकार के नियमों/उपनियमों का कठोरता से पालन किया जाता है, क्योंकि यह एक ऐसा क्षेत्र है कि जहाँ के वन्य जीवों का अपना जीवन भी उद्यान के तन्त्र पर आश्चर्यजनक रूप से आधारित है।

16. सिमलीपाल (उड़ीसा) [Simlipal (Orrisa)]

'सिमलीपाल' उड़ीसा प्रान्त में प्रकृति का एक अदभुत स्थान है जहाँ ढालू पहाड़ियाँ, सघन वनस्पति क्षेत्रों से आधारित घाटियाँ, उपजाऊ भूमि, पहाड़ियों से निकलते झरने, बारहमासी नदियाँ और आकर्षक नयनाभिराम नीला आकाश सभी कुछ अद्वितीय हैं। 2500 मिमी वार्षिक वर्षा से पूरा वातावरण नम व आर्द्रता लिए है। अधिकतर क्षेत्र हरा भरा है। ऋतु परिवर्तन के साथ कुछ भागों में शुष्कता आती है, पर पूरा तन्त्र उसे स्वीकार कर लेता है।

यह राष्ट्रीय उद्यान बाघों के अतिरिक्त हाथियों (Elephants) के लिए प्रसिद्ध है। अन्य वन्य पशुओं और जीवों में बाघ (Tiger), तेंदुआ (Leopard), ढोल (Wild Dog), साँभर (Sambar), मुन्जटैक (Munjtak), गौर (Gaur), जंगली सूअर (Wild Pig), चीतल (Chital), चौसिंगा (Chausinga), पेन्गोलिन (Pangolin), लंगूर (Langur), मोर (Peafowl), लकड़बग्घा (Hyena), गीदड़ (Jackal) और गिद्ध (Vulture) उल्लेखनीय हैं।

अवैध शिकार से रोक, वन-आग (Forest Fire) पर नियन्त्रण तथा कोर क्षेत्र से ग्रामीणों का निष्कासन कठिन समस्याएँ हैं, जिन पर ध्यान अपेक्षित है।

17. सुन्दरबन (पश्चिमी बंगाल) [Sunderbans (West Bengal)]

'सुन्दरबन' देश का एकमात्र कच्छ वनस्पति के परितंत्र का प्रतिनिधित्व करता है। वहीं सभी टाइगर रिजर्व से अधिक संख्या में बाघों का संरक्षण भी इसी क्षेत्र में होता है। यह गंगा और ब्रह्मपुत्र के मिलन

स्थल पर स्थित है तथा उन्हीं की स्थिति के अनुसार संचालित है। मछलियों के प्रजनन का यह एक प्रमुख स्थल है और इसकी सँकरी खाड़ियाँ तथा समुद्री तट मछलियों के अच्छे संरक्षण में सहयोग करते हैं।

वन्य पशुओं में बाघ (Tiger), चीतल (Chital), जंगली सूअर (Wild Pig), लघुपुच्छ बन्दर (Rhesus Monkey) प्रमुख हैं। जलजीवों में मगरमच्छ यहाँ की थाती है।

18. वाल्मीकि (बिहार) [Valmiki (Bihar)]

गंडक नदी के सहारे प्राकृतिक साल के वनों से परिपूर्ण यह टाइगर रिजर्व नेपाल के 'रायल चितवन' राष्ट्रीय उद्यान के दक्षिण में स्थित है। हरे-भरे क्षेत्र वाले इस रिजर्व में घने बेंत (Cane) के वृक्षों की भरमार है जो यहाँ के बाघों के अच्छे आश्रय स्थल बनते हैं।

वन्य पशुओं में विविध प्रकार के हिरन (Hog Deer, Spotted Deer), साँभर (Sambar), जंगली सूअर (Wild Pig), भालू (Sloth Bear), चौसिंगा (Chausinga), नील गाय (Blue Bull), गौर (Gaur), लकड़बग्घा (Hyena), तेंदुआ (Leopard), जंगली कुत्ता अथवा ढोल (Wild Dog), लंगूर (Langur) आदि मिलते हैं। पक्षियों में मोर (Pea Fowl), विभिन्न प्रकार के मुर्गे (Red Jungle Fowl, Spur Fowl), तीतर (Partridges-Grey, Black and Swamp), प्रवासी बत्तखें (Migratory Ducks) सम्मिलित हैं। रेंगने वाले जीवों में घड़ियाल (Ghariyal), अजगर (Python), साँप (Cobra) और कछुआ (Tortoise) प्रमुख हैं।

इस टाइगर रिजर्व से प्रशासन को बहुत अपेक्षायें हैं, लेकिन वहीं चराई की समस्या, वन-अग्नि तथा लोगों के अनाधिकृत प्रवेश से यह अभी स्वतन्त्र नहीं है। समस्याओं का समाधान राष्ट्रीय स्तर पर किया जा रहा है।

19. पेंच (मध्य प्रदेश) [Pench (Madhya Pradesh)]

सत्र 1992-93 में यह बाघ रिजर्व क्षेत्र पूर्व घोषित राष्ट्रीय उद्यान 'पेंच' में ही बना है। मध्यं प्रदेश का यह तीसरा टाइगर रिजर्व क्षेत्र है। इससे पूर्व 'कान्हा' तथा 'इन्द्रावती' क्रमशः 1973-74 तथा 1982-83 में बने थे। इसकी सम्पूर्ण भौगोलिक स्थित, कोर क्षेत्र, बफर क्षेत्र तथा वहाँ की वानिकी और वन्य विवरण की पूरी जानकारी अधिकृत रूप से अभी अपेक्षित है।

20. तदोबा-अन्धेरी (महाराष्ट्र) [Tadoba-Andheri (Maharastra)] 1993-94

21. बान्धवगढ़ (मध्य प्रदेश) [Bandhavgarh (Madhya Pradesh)] 1993-94

उपर्युक्त दोनों टाइगर रिजर्व वर्ष 1993-94 में ही बने हैं। 'बान्धवगढ़' पूर्व में ही राष्ट्रीय उद्यान था, जबकि 'तदोबा' राष्ट्रीय उद्यान तथा 'अन्धेरी' वन अभ्यारण्य को मिलाकर टाइगर रिजर्व 'तदोबा-अन्धेरी' बनाया है। पूरा अधिकृत विवरण शीघ्र अपेक्षित है।

22. पन्ना (मध्य प्रदेश) [Panna (Madhya Pradesh)] 1994-95

23. डम्फा (मिजोरम) [Dampha (Mizoram)] 1994-95

यह दोनों टाइगर रिजर्व सत्र 1994-95 में बने हैं जिनका कुल क्षेत्रफल क्रमशः 542 और 500 वर्ग किमी है। विस्तृत विवरण प्राप्त करने का प्रयास हो रहा है।

24. भादरा (कर्नाटक) [Bhadra (Karnataka)] 1998-99

25. पेंच (महाराष्ट्र) [Pench (Maharastra)] 1998-1999

26. पाखुई नामेरी (Pakhui Nameri) 1999-2000

27. बोरी-सतपुड़ा-पचमढ़ी (Bori-Satpura-Pachmarhi) 1999-2000

तथा 2 विस्तार (Extension) है जिनका अभी विवरण प्राप्त नहीं है।

• प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व्स की सूची
(List of Project Tiger Reserves)

यह सभी बाघ रिजर्व साधन सुविधा, नियन्त्रण क्षमता तथा प्रस्तावित योजनानुसार अलग-अलग वर्षों में स्थापित किये गये। उनका वर्षवार स्थापना, विवरण एवं विस्तार आदि की जानकारी अग्रांकित तालिका में समेकित है—

सारणी 13·1

बाघ परियोजना के रिजर्व्स का विवरण

क्र० सं०	बाघ रिजर्व का नाम	सम्बन्धित प्रदेश	क्षेत्र (वर्ग किमी में) कोर	बफर	कुल	स्थापित वर्ष
1.	बाँदीपुर	कर्नाटक	523	343	866	1973-74
2.	कार्बेट	उत्तर प्रदेश	338	978	1316	" " "
3.	कान्हा	मध्य प्रदेश	940	1005	1945	" " "
4.	मानस	असम	470	2370	2840	" " "
5.	मेलघाट	महाराष्ट्र	388	1289	1677	" " "
6.	पलामू	बिहार	213	813	1026	" " "
7.	रणथम्भोर	राजस्थान	392	942	1334	" " "
8.	सिमलीपाल	उड़ीसा	845	1905	2750	" " "
9.	सुन्दरबन	प. बंगाल	1330	1255	2585	" " "
10.	पेरियार	केरल	350	427	777	1978-79
11.	सरिस्का	राजस्थान	498	368	866	" " "
12.	बक्सा	प. बंगाल	315	444	759	1982-83
13.	इन्द्रावती	मध्य प्रदेश	1258	1541	2799	" " "
14.	नागार्जुन सागर	आन्ध्र प्रदेश	1200	2368	3568	" " "
15.	नामदफा	अरुणाचल प्रदेश	1808	177	1985	1982-83
16.	दुदुवा	उत्तर प्रदेश	648	163	811	1987-88
17.	कलाकड मुण्डनथुरई	तमिलनाडु	571	229	800	1988-89
18.	वाल्मीकि	बिहार	336	504	840	1989-90
19.	पेन्च	मध्य प्रदेश	293	465	758	1992-93
20.	तदोबा-अन्धेरी	महाराष्ट्र	} 792*	} 990*	620	1993-94
21.	बान्धवगढ़	मध्य प्रदेश			1162	1993-94
22.	पन्ना	मध्य प्रदेश	} 490*	} 552*	542	1994-95
23.	डम्फा	मिजोरम			500	1994-95
24.	भादरा	कर्नाटक			492	1998-99
25.	पेंच	महाराष्ट्र			257	1998-99
26.	पाखुई नामेरी	अरुणाचल प्रदेश	} 1320*	} 3315	1206	1999-2000
27.	बोरी-सतपुड़ा-पचमढी	मध्य प्रदेश			1486	1999-2000
					1194	1999-2000
28-29	दो विस्तार					
	योग		15,318	22,443	37,761	

* आँकड़े तदर्थ व अराजकीय स्तर पर हैं।

** प्रधानमन्त्रीजी की अध्यक्षता में एक संचालन समिति बाघ रिजर्वों के प्रबन्ध के बारे में दिशा-निर्देश देती है। संचालन समिति (बाघ रिजर्व) के गैर सरकारी सदस्य तथा संचालन समिति (बाघ रिजर्व) द्वारा नामित चार वैज्ञानिक संस्थाएँ बाघ परियोजना की अर्द्ध-वार्षिक समीक्षा करती हैं।

प्रदेशवार प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व्स (Statewise Project Tiger Reserves)			
प्रदेश का नाम	संख्या	प्रदेश का नाम	संख्या
आन्ध्र प्रदेश	01	महाराष्ट्र	03
अरुणाचल प्रदेश	02	मिजोरम	01
असम	01	उड़ीसा	01
बिहार	02	राजस्थान	02
कर्नाटक	02	तमिलनाडु	01
केरल	01	उत्तर प्रदेश	02
मध्य प्रदेश	06	पश्चिमी बंगाल	02
कुल प्रदेश = 14, कुल प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व्स = 27			

परियोजना के अनावर्तक व्यय के लिए प्रतिवर्ष कुल लगभग 175-200 लाख रु० की राशि भारत सरकार द्वारा विभिन्न बाघ रिजर्वों के नव-निर्माण कार्य, पीने के पानी के जलाशय, रख-रखाव व मरम्मत कार्यों के लिए उपलब्ध कराती है। इसके अतिरिक्त आवर्तक व्यय हेतु भारत सरकार तथा राज्य सरकार का योगदान 50-50 प्रतिशत होता है। यह राशि प्रतिवर्ष भारत सरकार द्वारा लगभग 6-7 करोड़ रुपये होती है जो योजना के महत्त्व को प्रतिपादित करती है। इसके अतिरिक्त विशिष्ट समस्याओं के निराकरण, शोध-कार्यों तथा बाघ रिजर्वों के उत्थान के लिए विशेष धन राशि भी उपलब्ध कराई जाती है।

प्रतिवर्ष बाघों की गिनती बाघ रिजर्वों के प्रशिक्षित अधिकारियों, अधीनस्थ फोरेस्ट रेन्जर्स, फोरेस्ट गार्ड्स तथा फोरेस्टर द्वारा की जाती है। सफल क्रियान्वित योजना से यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि इस दुर्लभ वन्य जीव (बाघ) को बचाने और इनकी संख्या में वृद्धि करने में भारत एवं राज्य सरकारें और यहाँ तक कि स्वयं सेवी संस्थाएँ अत्यन्त चिन्तित एवं सजग हैं। पर्यावरण संरक्षण एवं सन्तुलन के क्षेत्र में यह एक आशातीत उपलब्धि मानी जायेगी।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' योजना की आवश्यकता क्यों पड़ी ?
2. 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' स्कीम के मुख्य उद्देश्य बताइये।
3. 'मानस (असम)' टाइगर रिजर्व का विस्तृत विवरण दीजिये।
4. प्रति वर्ष 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' नहीं बनाये जा पा रहे ? इसके पीछे क्या सोच है ?
5. 'प्रोजेक्ट टाइगर' और राष्ट्रीय पार्क' में क्या अन्तर है ? क्यों एक ही वन्य क्षेत्र दोनों प्रकार का हो सकता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' में क्या केवल 'टाइगर्स' ही रहते हैं ?
7. 'कोर' और 'बफर' क्षेत्र में क्या अन्तर है ?
8. 'पेंच (मध्य प्रदेश)' और 'पेंच (महाराष्ट्र)' दोनों टाइगर रिजर्व कब-कब बने ? किसी एक का वर्णन करिये।
9. 'प्रोजेक्ट टाइगर' स्कीम में दो विस्तारों को भी रखने की केन्द्र सरकार ने सन् 1999-2000 में स्वीकृति दी है ? इन विस्तारों पर टिप्पणियाँ कीजिये।
10. कच्छ वनस्पति पर आधारित 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' कौन-सा है ? विवरण दें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'प्रोजेक्ट टाइगर' प्रायोजना कब से प्रारम्भ हुई ?
    (अ) 1963 से (ब) 1973 से
    (स) 1983 से (द) 1993 से
12. 'बांदीपुर' टाइगर रिजर्व किस प्रदेश का है ?
    (अ) उत्तर प्रदेश (ब) मध्य प्रदेश
    (स) कर्नाटक (द) उड़ीसा
13. किस प्रदेश में सबसे अधिक टाइगर रिजर्व्स हैं ?
    (अ) मध्य प्रदेश (ब) महाराष्ट्र
    (स) राजस्थान (द) केरल

14. भारत में सर्वप्रथम टाइगर रिजर्व कहाँ स्थापित हुआ था ?
(अ) कान्हा (उत्तर प्रदेश) (ब) बक्सा (पश्चिमी बंगाल)
(स) वाल्मिकी (बिहार) (द) कोरवेट (उत्तर प्रदेश)
15. निम्न में से कौन-सा टाइगर रिजर्व राजस्थान प्रदेश में है—
(अ) पलामू (ब) रणथम्भोर
(स) बक्सा (द) पेरियार

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिये—

16. भारत में सबसे बड़े क्षेत्र में फैला टाइगर रिजर्व कौन-सा है ? ( )
17. भारत में कितने प्रदेशों में 'प्रोजेक्ट टाइगर योजना' चलाई जा रही है ? ( )
18. 'प्रोजेक्ट टाइगर' योजना के आवर्तक व्यय में केन्द्र और राज्य सरकार की क्या भागीदारी है ? ( )
19. 'बाघ परियोजना' की प्रबन्ध संचालन समिति का पदेन अध्यक्ष कौन होता है ? ( )
20. मिजोरम के प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व का नाम बताइये। ( )

14

अन्य वन्य जीव परियोजनाएँ
[OTHER WILDLIFE PROJECTS]

● प्रस्तावना (Introduction)

प्रकृति सन्तुलन के लिए वन एवं वन्य जीव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। वन प्राकृतिक सम्पदा और संसाधन के मुख्य स्रोत हैं जो प्राणी जगत् के जीवन को सुचारु रूप से चलाने में सहायक हैं, तो वन्य जीव पारिस्थिति तन्त्र को स्थायित्व प्रदान करने में अपनी भागीदारी निभाते हैं। वन की सुरक्षा भी वन्य जीवों के सहारे आशाजनक रहती है। इसी महत्त्व को स्वीकार करते हुये विश्व के सभी देशों ने वन और वन्य जीवों के संरक्षण की ओर सदैव ध्यान दिया है। भारत में भी जहाँ वन क्षेत्रों को अधिक महत्ता दी और अभयारण्य तथा राष्ट्रीय उद्यान बनाये--विकसित किये वहीं वन्य जीवों के लिए भी अनेक योजनायें बनाईं। इसका विवरण अध्याय-12 (वन्य जीव) में उपलब्ध है।

दुर्लभ वन्य जीवों की सुरक्षा और उनकी संख्या में वृद्धि की ओर ध्यान देने की दिशा में वन्य जीव प्रोजेक्ट्स (Wildlife Projects) बनाये गये, जिनमें 'बाघ-परियोजना' (Project Tiger) सर्वप्रथम सन् 1973 में शुरू किया गया। अब तक (मार्च 2002 तक) ऐसे 27 स्थानों के अभयारण्यों को 'बाघ परियोजना' स्कीम में चुना गया है, जहाँ पर विशेषतः बाघों को संरक्षण दिया जा रहा है। इस परियोजना का विवरण अध्याय 13 में है।

पिछले 20 वर्षों में जिन वन्य जीवों के लिए इसी प्रकार की अन्य परियोजनाएँ बनाई गई हैं, उनमें से जिन पर भारत सरकार द्वारा कार्यवाही प्रारम्भ कर दी गई है, वह हैं--(1) हंगुल (Hangul)-1970, (2) शेर (Lion)-1972, (3) मगर (Crocodile)-1974, (4) हिरन (Brown Antlered Deer)-1981, (5) गेंडा (Rhinoceros)-1987, (6) हिम चीता (Snow Leopard)-1987, (7) हाथी (Elephant)-1991। इन सभी के बारे में संक्षिप्त जानकारी यहाँ समेकित है।

● विभिन्न प्रोजेक्ट्स (Different Projects)

1. हंगुल परियोजना (Project Hangul)

यूरोपीय रेड डियर प्रजाति का यह हिरण पूरी दुनियाँ में केवल कश्मीर क्षेत्र में पाया जाता है। इसे कश्मीरी बारहसिंघा के नाम से भी जाना जाता है। 9,000 से 16,000 फीट तक ऊँची ठण्डी पहाड़ियों में बसने वाला हंगुल आज दुर्लभ पशु प्रजाति में माना जा रहा है जिसकी अधिकतम संख्या 400 से अधिक नहीं है। 48"–50" (120 सेमी–125 सेमी) ऊँची कद काठी के इस हिरन का औसत भार 200 किग्रा पाया गया है। सींगों की लम्बाई लगभग 40" से 45" (100 से 110 सेमी तक) होती है तथा इसके सींगों में 11 से 16 तक उपशाखाएँ देखी गई हैं। मादा हिरन में सींग नहीं होते हैं। हल्के से लेकर गहरे भूरे रंग में पाया जाने वाला यह हिरन अब कश्मीर के केवल दाचीगाम राष्ट्रीय उद्यान में संरक्षित है। जगल में यह सदैव झुण्ड में रहते हैं और बडे फुर्तीले स्वभाव के कारण दौडने में माहिर होते हैं।

इस जाति को दुर्लभ प्रजाति में मानकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रेड डेटा बुक में सम्मिलित कर लिया गया है। भारत ने इसे संरक्षण देने हेतु हंगुल परियोजना (Hangul Project)--1970 में प्रारम्भ की है। प्रारम्भ

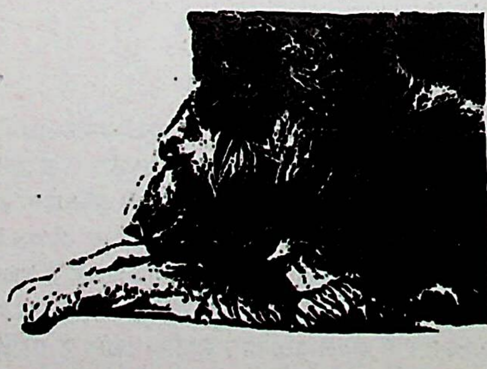


चित्र 14·1—हंगुल

में इस संरक्षण से संख्या में आशातीत वृद्धि हुई (1988 की गणना के अनुसार लगभग 818), लेकिन चोरी छिपे शिकार के कारण उसे अधिक दिनों तक नहीं बचाया जा सकेगा, अतः इस प्रजाति को बचाने की राष्ट्र स्तर पर चिन्ता है।

2. शेर परियोजना (Project Lion)

शेर जिसे बब्बर शेर के नाम से भी पुकारते हैं, जंगल का राजा कहलाता है। इसकी दहाड़ ही काफी-काफी दूर तक लोगों को दहलाने के लिए काफी है। एशियाई शेर आज भी भारत के अलावा मेसोपोटेमिया और ईरान में बताया जाता है। अफ्रीका के जंगलों में भी इनके पाये जाने की जानकारी मिली है। भारत में कभी यह उत्तर भारत से मध्य भारत तक के क्षेत्र में मिलता था पर अब केवल 'गिर' जंगलों तक ही सीमित है। 'गिर' को सन् 1969 में ही राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दिया गया है जो गुजरात के जूनागढ़ जनपद में है। शिकारियों के कारण इसकी संख्या में इतनी कमी आई (कुल 100 के लगभग) कि इस वन्य जीव को दुर्लभ प्रजाति में मानने लगे। 1972 में 'शेर परियोजना' के तहत इसे संरक्षण दिया गया जिसका असर यह हुआ कि वर्तमान में इनकी संख्या लगभग 300 के आस-पास पहुँच गई है।



चित्र 14·2—शेर

भारतीय शेर की लम्बाई औसतन 9 फीट होती है (भारतीय शेर की रिकार्ड लम्बाई 9 फीट 7 इंच तथा अफ्रीकन शेर की अधिकतम लम्बाई 10 फीट 7 इंच मापी गई है)। पूरा शरीर बालों से ढका, पूँछ पर लम्बे बालों का गुच्छा होता है। कंधों के ऊपर तथा पेट के पास बालों का झब्बा तथा मुँह पर भी बाल छितरे होते हैं। शेर अधिकतर भूरे रंग के ही होते हैं। स्वभावतः दिन में पेड़ों के साये में आराम करते हैं और झुटपुटा होते ही शिकार को निकल पड़ते हैं। शाम को अथवा दिन निकलने से पूर्व ये दहाड़ते हैं।

इनका मादा से मिलने का माह लगभग अक्टूबर अथवा नवम्बर होता है और 4 माह बाद (प्रजनन काल 116 दिन) बच्चे हो जाते हैं, जिनकी संख्या 5 तक हो सकती है। कुल आयु 30 वर्ष तक की होती है लेकिन 5 वर्ष की आयु में यह सबसे अधिक शक्तिशाली हो जाता है।

यह वन्य जीव भारत की शान है, जिसे बचाया जाना बहुत आवश्यक है।

3. मगरमच्छ परियोजना (Project Crocodile)

विश्व में मगरमच्छ की कई प्रजातियाँ बताई जाती हैं, जिनमें से तीन—(1) घड़ियाल, (2) लवण जलीय तथा (3) मगर मुख्य प्रजातियाँ सभी भारत में उपलब्ध हैं। देश के केवल एक राज्य उड़ीसा को यह मान प्राप्त है कि उसकी दो वन्य जीव शरणस्थली, (1) 'सिमलीपाल' राष्ट्रीय उद्यान और (2) 'भीतरवनिका' वन्य जीव अभयारण्य में इस जीव को संरक्षण दिया जा रहा है। वैसे कुछ मगर 'सुन्दरबन' (पश्चिमी बंगाल) और 'मैरिन' (अण्डमान) राष्ट्रीय उद्यानों में भी रखे गये हैं, लेकिन उनकी संख्या अधिक नहीं है।



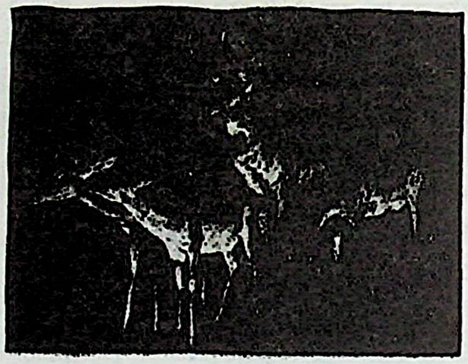
चित्र 14·3—मगरमच्छ

मगरमच्छ की इस प्रजाति पर ध्यान तब गया जबकि यह पाया गयां कि एक महत्त्वपूर्ण जल-जीव समाप्ति के कगार पर पहुँच रहा है। यह परेशानी तब जानकारी में आई जब शिकारियों ने इसे अवैध व्यापार के लिए पकड़ना शुरू किया और जनमानस में यह भ्रान्ति फैलानी शुरू की कि इससे मानव जाति के जीवन को खतरा है, लेकिन भारत सरकार ने इसमें हस्तक्षेप किया और UNDP के विशेषज्ञ के सर्वे के आधार पर इसे संरक्षण देने का मानस बनाया। 1974 में 'मगरमच्छ परियोजना' अस्तित्व में आ गई और फलस्वरूप लवण जलीय मगरमच्छों के लिए 'डांगामल' (भीतरकनिका अभयारण्य में स्थान) तथा घड़ियाल और मगर के लिए सिमलीपाल राष्ट्रीय उद्यान के पास क्रमशः 'टिकरपारा' और 'रामतीर्थ' में केन्द्र स्थापित कर दिये गये। हाल ही की गणना में अब इनकी संख्या में काफी बढ़ोत्तरी हुई है और इसे लगभग 800 से 1000 तक के मध्य आँका जा रहा है जब कि कई हजारों की संख्या में प्रजनन से प्राप्त अण्डों को इन जलाशयों से बाहर निकाल दिया गया है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि एक ऐसी स्थिति आ गई थी कि इन मगरमच्छों की संख्या कुल 100 के आस-पास रह गई थी और प्रजाति के समाप्त होने का ही भय हो चला था।

4. संगाई हिरन परियोजना (Project Brow-antlered Deer)

मणिपुर की उत्तरी पश्चिमी सीमा में पहाड़ियों और वनों के बीच है—'केबुल- लाभजोआ' राष्ट्रीय उद्यान और इसी उद्यान में है यह दुर्लभ प्राणी 'संगाई हिरन' जो सदैव नाचता सा रहता है। भारत में यह और कहीं उपलब्ध नहीं है। गहरे भूरे अथवा काले रंग के इस हिरन की लम्बाई लगभग 1 मीटर तथा ऊँचाई

1·4 मीटर होती है। पूँछ बहुत छोटी होती है तथा शाखाओं-उपशाखाओं वाले इसके सींग बहुत सुन्दर होते हैं और दोनों ओर समान घुमाव लेकर ऊपर तक बढ़ते हैं, जिनकी लम्बाई 1·5 मीटर तक होती है।

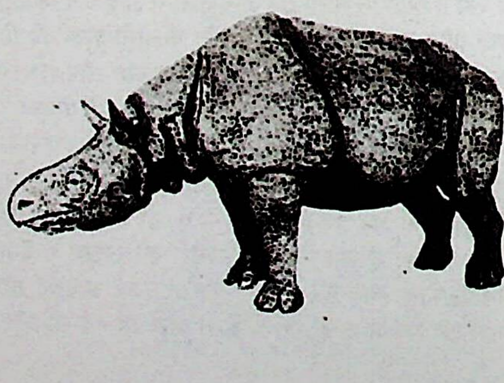


चित्र 14·4—संगाई हिरन

भारत के वन्य जीवों के लुप्तप्राय होने वाले समूह में 'संगाई हिरन' का नाम भी सूचीबद्ध था क्योंकि 1959 में इनकी कुल संख्या 100 आँकी गई थी। बाद में फिर प्राकृतिक प्रकोप से ऐसा अवसर भी आया जब कि यह मात्र 14 रह गये। शिकार पर पूर्ण प्रतिबन्ध, केवल 'लाभजोआ' जैसे छोटे से अभयारण्य को राष्ट्रीय पार्क बनाना और फिर 1981 में 'संगाई परियोजना' की मान्यता ने इसे बचा लिया। अब इसकी संख्या लगभग 80 हो गई है। 'केबुल लाभजोआ' अब पूरी तरह केवल इस प्रजाति को बचाने, संरक्षण देने तथा संख्या में वृद्धि करने हेतु समर्पित है।

5. गैंडा परियोजना (Project Rhinoceros)

पृथ्वी पर मिलने वाला दूसरे क्रम का सबसे बड़ा विशालकाय जीव (हाथी के बाद) 'गैंडा' आज वन्य जीव क्षेत्र में चिन्ता का विषय बन गया है। विश्व में कई हजारों की संख्या में पाये जाने वाले इस जीव की संख्या अब मात्र 5,000 के आस-पास रह गई है जिसमें से आज भारत में लगभग 1500 की संख्या बताई जाती है।



चित्र 14·5—गैंडा

विश्व में गैंडों की पाँच प्रजातियाँ मिलती हैं—दो अफ्रीका में और तीन एशिया में। अफ्रीका में मिलने वाली दो जातियों—ब्लेक राइनो तथा व्हाइट राइनो एवं एशिया की सुमात्रा राइनो में दो सींग होते हैं।

शेष एशिया की दोनों जातियों—जाव राइनो और इंडियन राइनो में एक सींग पाया जाता है। भारत में इसका मुख्य शरण-स्थल आसाम के जंगलों में है और इसी कारण 'काजीरंगा' राष्ट्रीय उद्यान का यह मुख्य संरक्षित वन्य जीव है।

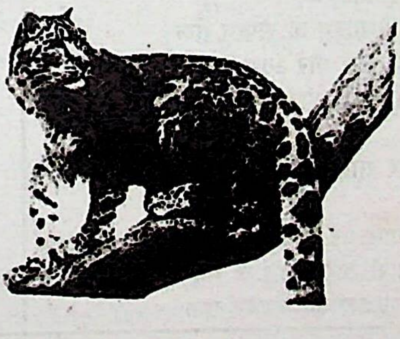
एक सामान्य भारतीय गेंडे की ऊँचाई 2 मीटर तक होती है तथा बीच में शारीरिक गोलाई 3·5 मीटर तक। सींग की लम्बाई 40 सेमी से 60 सेमी तक की होती है। वजन पैदा होने के समय 50-60 किलोग्राम होता है जो पूर्ण वयस्क होने पर 1800 से 2000 किग्रा तक हो सकता है। मोटी खाल वाला वन्य जीव अपनी बदसूरत बनावट के कारण अत्यन्त भयावह दिखता है।

इस जाति को संरक्षण देने हेतु भारत सरकार ने सन् 1987 में 'गेंडा परियोजना' स्वीकृत की थी और फिर अनेक समस्याओं से ग्रसित होने के कारण सत्र 1992-93 में पूरी योजना को असम राज्य को हस्तांतरित कर दिया। तभी से असम के दोनों राष्ट्रीय उद्यान 'काजीरंगा' और 'मानस' इस वन्य जीव गेंडे के बचाव के लिए समर्पित हैं। उत्तर प्रदेश के 'दुदुवा' राष्ट्रीय उद्यान में भी कुछ प्रयास किये जा रहे हैं लेकिन वहाँ की रिपोर्ट बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं है।

6. हिम चीता परियोजना (Project Snow Leopard)

तेंदुआ से अपेक्षाकृत छोटा यह वन्य जीव 'हिम चीता' हिमालय पर्वत श्रृंखला में कश्मीर से सिक्किम तक पाया जाता है। इसकी लम्बाई 1 मीटर से 1·5 मीटर तक होती है। पूँछ की लम्बाई लगभग 1 मीटर होती है। शरीर का रंग हल्के भूरे से सफेद तक होता है। बड़े-बड़े चकत्ते (धब्बे) पूरे शरीर पर होते हैं।

हिमालय की ऊँची पहाड़ी पर रहते हैं। दिन को आराम करके रात को भोजन के लिए शिकार करते हैं। सुन्दर दिखने वाले इस जीव को समाप्त करने का मुख्य आकर्षण इसकी वेशकीमती खाल है, जिसकी विदेशों में बहुत माँग है। अवैध और चोरी छिपे शिकार की वजह से इसकी जाति भी दुर्लभ वन्य जीवों में आ गई है। भारत सरकार ने इसे संरक्षण देते हुए सन् 1987 में 'हिम चीता परियोजना' प्रारम्भ की है। पूरे हिमालय में 12 हिम चीता रिजर्वों को प्रस्तावित किया था, जिसको अभी तक अन्तिम रूप नहीं दिया जा सका है।



चित्र 14·6—हिम चीता

7. हाथी परियोजना (Project Elephant)

विश्व में पृथ्वी का सबसे विशाल जानवर 'हाथी' है जो पूरे विश्व में मिलता है। मोटेतौर पर इसकी दो प्रजातियाँ हैं जिनमें से एक भारतीय तथा दूसरी अफ्रीकी होती है। 3 से 4 मीटर तक की ऊँचाई लिए यह विशालकाय जीव 4000 से 5000 किलोग्राम वजन का हो सकता है। लम्बे कान, लम्बी सूंड, छोटी पूंछ

और बहुत छोटी आँखों वाला हाथी जंगली भी होता है और पालतू भी, जिसे जीविका कमाने में उपयोग में लिया जाता है। नर हाथी के दाँत होते हैं जिनके कारण ही हाथी अमूल्य बन गया है। मादा हाथी में इनका अभाव होता है।

भारत में हाथियों की संख्या वर्तमान में भी काफी है जो 30,000 तक आँकी गई है। लेकिन रख-रखाव और संरक्षण देने की इनकी बड़ी समस्या है। इनको जीवित रखने के लिए भी इतनी धनराशि की आवश्यकता है जो सामान्य व्यक्ति के लिए संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त मानव और हाथियों के बीच संघर्ष समाप्त करने और हाथियों के प्रवास और आबादी की रफ्तार में वृद्धि करने की महती आवश्यकता है। इसी हेतु भारत सरकार ने 1991 से ही 'हाथी परियोजना' प्रारम्भ कर दी थी। इन रिजर्व्स की सूची सारणी 14·1 में है—

वर्ष 1998 में प्रदेशवार अनुमानतः हाथियों की संख्या
(Statewise Approximate Number of Elephants in Year 1998)

राज्य	औसत संख्या
आन्ध्र प्रदेश	46
अरुणाचल प्रदेश	2,500
असम	5,500
बिहार	550
कर्नाटक	5,500
केरल	3,500
मेघालय	2,750
उड़ीसा	1,750
तमिलनाडु	2,400
उत्तर प्रदेश	875
पश्चिमी बंगाल	200
कुल	25,571

स्रोत : वार्षिक प्रतिवेदन, 1998-99, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ 62.

सारणी 14.1
हाथी परियोजना रिजर्व्स के स्थान

क्र.सं.	रिजर्व्स के स्थान	क्षेत्रफल (वर्ग किमी में)	अनुमानित जनसंख्या
1.	दक्षिणी-पश्चिमी बंगाल, दक्षिण-पूर्वी बिहार से उड़ीसा तक	8,365	3,000
2.	अरुणाचल के कामेन्ग से असम के सोनितपुर तक	7,500	1,580
3.	असम के डिब्रू से अरुणाचल के देवोमाली तक	5,000	1,800
4.	असम के काजीरंगा-करबी आंगलोंग से नागालैण्ड के इन्टाकी तक	4,500	1,800
5.	असम के ब्रेल से मेघालय के सेफंग तक	1,500	150
6.	मेघालय के बालपकरन और आस-पास के क्षेत्र	1,800	2,500
7.	तमिलनाडु के नीलिगिरी और पूर्वीघाट, केरल और कर्नाटक	11,500	5,000
8.	केरल की नीलाबर साइलैन्ट बैली से तमिलनाडु के कोयम्बटूर तक	2,500	600
9.	तमिलनाडु के अनामलाई से केरल के पेराम्बीकुलम तक	3,000	1,500
10.	केरल के पेरियार से तमिलनाडु के मदुरई तक	3,000	1,700
11.	राजाजी से उत्तर प्रदेश के कोरबेट तक	8,000	750
	कुल	56,665	20,380

स्रोत : वार्षिक प्रतिवेदन, 1998-99, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ 62.

यह विडम्बना की बात रही कि योजना के बन जाने के बाद भी अभी तक इस दिशा में कोई ठोस कार्य नहीं हुआ। जहाँ-जहाँ भी हाथी बहुतायत में थे वहीं के जंगलों में स्थित अभयारण्य अथवा राष्ट्रीय उद्यानों को इस वन्य जीव की सुरक्षा का उत्तरदायित्व सौंप दिया।

अभी हाल ही में (1994 के अन्त में) एक 'हाथी परियोजना' का निदेशक नियुक्त किया है जो देश के हाथी योजना राज्य के कार्य का अवलोकन व समन्यवयन करेगा। इस योजना के प्रस्तावित राज्यों में अनुमानतः हाथियों की संख्या ऊपर बॉक्स में दी गई है।



चित्र 14·7—हाथी

परियोजना के सामयिक मानीटरिंग के लिए एक कमेटी का गठन किया गया है जिसके अध्यक्ष वन एवं पर्यावरण मंत्री भारत सरकार के हैं। विश्वास किया जाता है कि अब इस परियोजना की क्रियान्विति होगी और कुछ सफलता भी मिलेगी।

• सम्भावित अन्य प्रोजेक्ट्स (Possible Other Projects)

इसके अतिरिक्त भी वन्य जीव क्षेत्र में कई ऐसे जीव हैं, जिन्हें अभी या कभी कालान्तर में संरक्षण देना आवश्यक होगा। ऐसे संभावना वाले क्षेत्र यहाँ केवल प्रथम दृष्टया जानकारी देने हेतु दिये जा रहे हैं—

सारणी 14.2
सम्भावित अन्य प्रोजेक्ट्स

क्र. सं.	प्रस्तावित वन्य जीव परियोजना	सम्बन्धित अभयारण्य अथवा राष्ट्रीय उद्यान केन्द्र
1.	जंगली गधे (Wild Asses)	ध्रंगधरा अभयारण्य (गुजरात)
2.	स्लोथ बीअर (Sloath Bear)	शूलपनेश्वर अभयारण्य (गुजरात)
3.	मगरमच्छ (Crocodile) (लवणीय जल)	क्रोकोडाइल (लोहा बैरेक) अभ्यारण्य (अण्डमान एण्ड निकोबार द्वीप समूह)
4.	जंगली भैंसा (Wild Buffalo)	बहरामगढ़ अभयारण्य (मध्य प्रदेश)
5.	मोर (Peacock)	पीकोक आइलैण्ड अभयारण्य (अण्डमान एण्ड निकोबार द्वीप समूह)।
6.	कछुआ (Turtle)	अभी निश्चित नहीं।

उपर्युक्त वन्य जीव परियोजनाओं के विवरण से हमें यह आश्वस्तता तो अवश्य मिलती है कि अब सामान्य और दुर्लभ वन्य जीवों की ओर भारत सरकार का ध्यान गया है और वह अब देश की भावी पीढ़ी के लिए ऐसा कार्य अवश्य करेगी जिनसे उसका समय सुखमय हो सके।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'हाथी परियोजना' के बारे में विस्तार से वर्णन कीजिये।
2. किन-किन परियोजनाओं को केन्द्र सरकार ने कब-कब से प्रारम्भ किया है ?
3. केन्द्र सरकार द्वारा अन्य वन्य जीवों के लिये क्या प्रस्तावित परियोजनाएँ हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

4. 'काजीरंगा' राष्ट्रीय उद्यान गेंडे संरक्षण के लिये क्यों अधिक उपयुक्त हैं ?
5. 'हिमचीता' के संरक्षण के लिये 12 रिजर्व्स के स्थानों की शिनाख्त की है, वह किस क्षेत्र में हैं ?
6. रिजर्व्स बनाये जाने के बाद भी वहाँ की व्यवस्था के असंतोषजनक होने के क्या कारण हैं ?
7. वन्य जीवों के चोरी छिपे शिकारों के पीछे क्या विशिष्ट मंशा रहती है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

8. हंगुल किस प्रदेश में प्रायः मिलता है ?
   (अ) मिजोरम (ब) मेघालय
   (स) जम्मू एण्ड कश्मीर (द) असम
9. हाथी परियोजना के रिजर्व्स की संख्या वर्तमान में कितनी है ?
   (अ) 07 (ब) 11
   (स) 09 (द) 13
10. मगरमच्छ योजना किस राष्ट्रीय उद्यान में चलाई जा रही है ?
   (अ) बान्दीपुर (कर्नाटक) (ब) सुन्दर वन (पश्चिमी बंगाल)
   (स) पेरियार (केरल) (द) सिमलीपाल (उड़ीसा)
11. गेंडा किस क्षेत्र का मुख्य वन्य जीव है ?
   (अ) असम (ब) बिहार
   (स) उड़ीसा (द) पश्चिमी बंगाल

निम्न प्रश्नों के उत्तर एक शब्द में दीजिये—

12. 'संगाई हिरन' परियोजना कब से प्रारम्भ हुई ? ( )
13. 'हिमचीता' परियोजना के प्रारम्भ होने का वर्ष क्या है ? ( )
14. 'वर्तमान में भारत में हाथियों की अनुमानतः संख्या कितनी है ? ( )
15. 'जंगली भैंसा' परियोजना का प्रस्तावित स्थान कौन-सा है ? ( )

15

राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य
[NATIONAL PARKS & SANCTUARIES]

• प्रस्तावना (Introduction)

आदिकाल से ही वन एवं वन्य जीव विश्व में महत्त्वपूर्ण रहे हैं, क्योंकि जाने-अनजाने इनकी इतनी भूमिकायें रही हैं कि उनका गिनना-गिनाना केवल एक प्रयास मात्र ही रहेगा। जब मानव ने इस पृथ्वी पर जन्म लिया तो वनों ने उन्हें आश्रय दिया, आवास दिया, खाने को भोजन उपलब्ध कराया और जीवन की मूल आवश्यकताओं वायु-जल-भूमि की निरापद पूर्ति का संवाहक बना। वन्य जीव वनों के आवश्यक घटक रहे और पूरे वन तन्त्र, जिसे आज हम पारिस्थितिकी तन्त्र अथवा परितन्त्र (Ecosystem) के नाम से पुकारते हैं, को नियंत्रित करते रहे। पूरे विश्व के असीमित भूमि भाग पर केवल प्राकृतिक विरासत के रूप में वनों (जंगलों) का ही सघन जाल था। वन्य जीव स्वतन्त्र रूप से बसते थे।

हजारों वर्षों तक यह क्रम चलता रहा। मनुष्य ने जैसे-जैसे अपनी सोच में प्रगति की, वह अपने ढंग से वन उत्पादनों का उपयोग करने लगा। वन्य जीव भी उसके भोजन के अंश बने। सम्भवतः यहीं से मनुष्य और वन्य जीवों के बीच एक उपभोक्ता (Consumer) और उपलब्ध सामग्री (Commodity) का सम्बन्ध विकसित होने लगा। इस प्रारम्भिक शुरूआत ने वन्य जीवों में असुरक्षा का भय फैलाया और वे प्रकृति दत्त अपने सुरक्षित आश्रय की तलाश में वनों के गहरे (सघन) क्षेत्र में धीमे-धीमे चलते गये। अतः वन्य जीवों की उपलब्धता अब सामान्यतया समान रूप से प्रत्येक स्थान पर न होकर कुछ हिस्सों और भागों तक सीमित होने लगी। जहाँ की जलवायु, वनस्पति जिनको जहाँ रास आयी वह वहीं बस गये।

समय के साथ-साथ जैसे-जैसे पृथ्वी पर मनुष्य और पशुओं तथा अन्य जीव-जन्तुओं की आबादी बढ़ी वैसे-वैसे वनों की आवश्यकता का महत्त्व अधिक समझा जाने लगा और इसीलिए ऐसे सघन जंगल जो आबादी से दूर भी थे और जिन्हें मानव उपयोग से बचाया भी जा सकता था उन्हें प्रतिबन्धित किया गया। इनको ही वन अभ्यारण्य अथवा केवल अभ्यारण्य (Sanctuary) कहा गया। वस्तुतः यह वह क्षेत्र थे जहाँ सघन वन थे और अनगिनत विविध प्रकार के वन्य जीव थे। पूरे विश्व में हर देश में ऐसे अभ्यारण्य बनाये गये जिनका नियन्त्रण, प्रशासन उस देश की सरकार पर हुआ करता था। कालान्तर में इनके विविध उपयोग तथा महत्त्व की दृष्टि से इनके कई नामकरण हुए। केवल प्रतिबन्धित क्षेत्र को Closed Area, प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने और दिखाने की दृष्टि से Games Reserve तथा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रख-रखाव और नियन्त्रण के अन्तर्गत विशिष्ट नियमों और उपनियमों से संचालित वन क्षेत्र को राष्ट्रीय उद्यान (National Parks) का नाम दिया गया। बाद में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पारिभाषित इन संरक्षित क्षेत्रों का बड़ा स्पष्ट विभाजन कर दिया गया। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 [The Wildlife (Protection) Act, 1972] के अध्याय 4 (Chapter-iv) में राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य (National Parks & Sanctuaries) के निर्माण, संरक्षण और कार्य प्रणाली का पूरा विवरण दिया है।

चूँकि हमारे इस अध्याय की चर्चा केवल राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य तक ही सीमित है, अतः हम अपने देश भारत के परिप्रेक्ष्य में केवल उपर्युक्त दोनों पर ही जानकारी प्रस्तुत करेंगे।

• भारत में राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य (National Parks & Sanctuaries in India)

यद्यपि वन संरक्षण की बात भारत में प्रथम राष्ट्रीय वन नीति, 1927 से ही प्रारम्भ हो गई थी और

बाद में विश्व के अन्य देशों के अनुरूप राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य की स्थापना भी हुई थी, लेकिन इस क्षेत्र में वास्तविक प्रगति देश की आजादी के भी बहुत बाद ही हुई। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि भारत जैसे विशाल भू-भाग (329 mh) वाले क्षेत्र में सन् 1960 में राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभ्यारण्यों की कुल संख्या केवल 65 थी। लगभग पिछले 42 वर्षों के अन्तराल में इनमें आशातीत वृद्धि हुई और 31 मार्च, 2002 तक 578 ऐसे क्षेत्रों (89 राष्ट्रीय उद्यान तथा 489 अभ्यारण्य) का निर्धारण (9 गुने से भी अधिक) एक असाधारण उपलब्धि ही मानी जायेगी। पिछले कुछ वर्षों में जिस गति से ये बने हैं, उसका समेकित विवरण निम्नांकित सारणी में दिया गया है—

सारणी 15·1
भारत में विगत वर्षों में राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य

देश का कुल भू-भाग = 329 mh
आरक्षित वन क्षेत्र = 75 mh
[mh = मिलियन हेक्टेयर]

वर्ष 31 मार्च की स्थिति	संख्या			पिछले वर्ष की वृद्धि	अधिगृहीत भूमि क्षेत्र	वन क्षेत्र का प्रतिशत	कुल भूमि भाग का प्रतिशत
	राष्ट्रीय उद्यान	अभ्यारण्य	कुल				
1960	—	—	65	—	—	—	—
1984	51	242	293	228	9·8 mh	13·1*	2·98*
1985	52*	244*	296*	3*	9·9 mh	13·2*	3·00*
1986	53	247	300	4	10·0 mh	13·3	3·04
1987	59	254	313	13	13·2 mh	17·6	4·01
1988	63	358	421	108	13·3 mh	17·7	4·04
1989	65	388	453	32	13·6 mh	18·1	4·13
1990	67*	400*	467*	14*	13·8 mh	18·4	4·19
1991	70	412	482	15	13·9 mh	18·5	4·22
1992	73	416	489	07	14·0 mh	18·7	4·25
1993	75	421	496	07	14·1 mh	18·8	4·28
1994	75	421	496	00	14·1 mh	18·8	4·28
1995	80	441	521	25	14·7 mh	19·7	4·47
1996	85	445	530	9	14·9 mh	19·9	4·53
1997	85	445	530	00	14·9 mh	19·9	4·53
1998	"	"	"	00	14·9 mh	19·9	4·53
1999	"	"	"	00	14·9 mh	19·9	4·53
2000	"	"	"	00	14·9 mh	19·9	4·53
2001	88	490	5~8	48	15·3 mh	20.4	4·65
2002	89	489	578	00	15·3 mh	20·4	4·65

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली।

* यह आँकड़े व्यक्तिगत तौर पर एकत्रित किये गये हैं।

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि यद्यपि अपने देश (भारत) के कुल भूमि भाग का केवल 4·65 प्रतिशत ही राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य के अन्तर्गत आता है पर तब भी निर्धारित वन क्षेत्र (75 mh) का 20·4 प्रतिशत का इस श्रेणी में लिया जाना उत्साहवर्द्धक ही कहा जायेगा। इस प्रकार काफी भू-भाग में अच्छे वनों की आश्वस्ति दिखाई देती है, जो पर्यावरण सन्तुलन की दृष्टि से देश के हित में ही है।

इन राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य का विभिन्न राज्यों और केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में वितरण का अवलोकन आगे दी गई सारणी में करें—

सारणी 15·2
भारत में प्रदेशवार राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य
(31 मार्च, 2002 तक की स्थिति)

प्रदेश	संख्या		
	राष्ट्रीय उद्यान	वन अभ्यारण्य	कुल
1. अण्डमान और निकोबार	09	96	105
2. आन्ध्र प्रदेश	04	21	25
3. अरुणाचल प्रदेश	02	11	13
4. असम	05	15	20
5. बिहार	01	11	12
6. चन्डीगढ़	00	01	01
7. छत्तीसगढ़	03	10	13
8. दादरा और नागर हवेली	00	01	01
9. दमन और दीव	00	01	01
10. दिल्ली	00	01	01
11. गोवा	01	06	07
12. गुजरात	04	21	25
13. हरियाणा	01	07	08
14. हिमाचल प्रदेश	02	32	34
15. जम्मू और कश्मीर	04	15	19
16. झारखण्ड	01	10	11
17. कर्नाटक	05	21	26
18. केरल	03	12	15
19. मध्य प्रदेश	09	25	34
20. महाराष्ट्र	05	35	40
21. मणिपुर	01	03	04
22. मेघालय	02	03	05
23. मिजोरम	02	04	06
24. नागालैण्ड	01	03	04
25. उड़ीसा	02	18	20
26. पंजाब	00	10	10
27. राजस्थान	04	24	28
28. सिक्किम	01	05	06
29. तमिलनाडु	05	19	24
30. त्रिपुरा	00	04	04
31. उत्तरांचल	06	06	12
32. उत्तर प्रदेश	01	23	24
33. पश्चिमी बंगाल	05	15	20
कुल	89	489	578

राष्ट्रीय उद्यान का कुल क्षेत्रफल
= 37,496.72 वर्ग किमी

वन अभ्यारण्य का कुल क्षेत्रफल
= 117,000.80 वर्ग किमी

देश का भौगोलिक क्षेत्रफल
= 32,87,263 वर्ग किमी

राष्ट्रीय उद्यानों का क्षेत्रफल %
= 1·14

वन अभ्यारण्यों का क्षेत्रफल %
= 3·56

स्रोत : **Courtesy Wildlife Institute of India, Dehradun.**

• राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों के रख-रखाव पर किया जा रहा व्यय
(Expenditure on Maintenance on National Parks and Sanctuaries)

देश में राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्यों की वर्तमान संख्या काफी संतोषप्रद मानी जा सकती है, लेकिन इनके रख-रखाव पर कितना व्यय होता है यह कोई कम चौंकाने की बात नहीं है। देश में राष्ट्रीय नीति के अनुसार सभी राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य का प्रशासनिक विभाग सम्बन्धित प्रदेश का वन विभाग ही रखा गया है। सितम्बर 1985 में भारतीय वन्य जीव मण्डल (The Indian Board for Wildlife) ने इन क्षेत्रों पर राज्य वन विभाग के पूरे बजट का 15 प्रतिशत व्यय करने की सिफारिश की है, जबकि औसतन इन पर 2 से 2·5 प्रतिशत तक से अधिक व्यय नहीं होता। इससे इन क्षेत्रों के अपेक्षित रूप से रख-रखाव के लिए स्वयंमेव प्रश्न-चिन्ह लग जाता है।

इतने बड़े देश के सभी राज्यों के इन क्षेत्रों पर हुए व्यय के आँकड़ों की प्राप्ति सम्भावना तो अत्यन्त कठिन है, लेकिन सन् 1989 में राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण विभाग के तत्त्वाधान में इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, नई दिल्ली (IIPA : New Delhi) द्वारा राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य पर तैयार की गई वस्तु स्थिति रिपोर्ट (Status Report) में कुछ राज्यों (17) का दो वर्ष का व्यय विवरण अग्रांकित तालिका में दिया गया है—

सारणी 15·3
वन विभाग के बजट के अनुपात में राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों पर किये जा रहे व्यय का विवरण

व्यय (लाख रुपयों में)

राज्य	1982-83			1983-84		
	वन विभाग का व्यय	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों पर व्यय	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य पर प्रतिशत व्यय	वन विभाग का व्यय	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों पर व्यय	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य पर प्रतिशत व्यय
आन्ध्र प्रदेश	2088·632	18·693	0·89	2554·467	42·347	1·66
अरुणाचल	475·930	0·635	0·13	650·890	3·974	0·61
बिहार	1884·020	39·170	2·08	2171·987	39·980	1·80
गोवा	126·491	11·700	9·25	157·611	14·681	9·31
हरियाणा	947·610	4·500	0·47	1050·930	4·137	0·39
हिमाचल प्रदेश	2009·360	16·570	0·82	2150·260	17·630	0·82
कर्नाटक	2849·134	36·839	1·29	3386·283	50·370	1·49
केरल	1311·710	39·520	3·01	1605·060	37·100	2·31
महाराष्ट्र	4132·780	74·510	1·80	4122·290	86·438	2·10
मणिपुर	180·310	5·400	2·99	222·550	2·934	1·32
मेघालय	144·850	19·310	13·33	168·600	23·732	14·08
मध्य प्रदेश	12423·137	197·060	1·59	13760·668	269·730	1·96
उड़ीसा	1316·430	61·850	4·70	1186·130	82·270	6·94
राजस्थान	1531·670	71·380	4·66	1829·520	74·860	4·09
सिक्किम	194·980	11·011	5·65	253·430	3·086	1·22
तमिलनाडु	1558·600	71·530	4·59	2050·370	80·723	3·94
पश्चिमी बंगाल	2572·220	96·950	3·77	2913·310	102·560	3·52
योग	35747·863	776·628	2·17	40225·356	935·552	2·33

यह सम्भव है कि बदलते परिवेश में, जबकि आज वन एवं वन्य जीव क्षेत्र को राष्ट्र स्तर पर अधिक मान्यता मिल रही है, इन क्षेत्रों पर भारत सरकार के निर्देशों के अनुरूप राज्य सरकारें अधिक प्रतिशत व्यय कर रही हों, पर तब भी अधिकतम 1983-84 में 2·33 प्रतिशत और अभिशंसित 15 प्रतिशत में इतना अधिक अन्तर है कि उसे पाटना बहुत कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है।

● राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों के रख-रखाव हेतु भारत सरकार का संरक्षण : वित्तीय सहायता

[Patronage (Financial Assistance) of Govt. of India for Maintenance of National Parks and Sanctuaries]

राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों के निर्माण अथवा नामकरण हेतु यद्यपि भारत सरकार द्वारा निश्चित निर्देशन है और उनके पीछे नहीं अथवा अधिक महत्त्व तथा अपेक्षाकृत कम महत्त्व की भावना भी अन्तर्निहित नहीं है, पर फिर भी किसी प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य की दूसरे प्रदेश के ऐसे ही क्षेत्रों से

तुलना नहीं की जा सकती। यह सम्भव है कि कहीं का अभ्यारण्य किसी दूसरे प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान से भी अच्छे स्तर का हो। अतः राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य को निश्चित ही प्रथम अथवा दूसरा दर्जा नहीं दिया जाता। हाँ यह अवश्य है कि राष्ट्रीय उद्यान की महत्ता इस बात से निःसन्देह जुड़ी है कि उस उद्यान विशेष में किस प्रजाति को संरक्षण दिया जा रहा है। देश में वर्तमान में 27 टाइगर प्रोजेक्ट हैं जो अलग-अलग राष्ट्रीय उद्यानों से सम्बन्धित हैं (पूरा विस्तृत विवरण अलग अध्याय में दिया है)। इसी प्रकार पिछले कुछ वर्षों से 'हिम चीता परियोजना' (Project Snow Leopard), 'हाथी परियोजना' (Project Elephant—since 1992 only), 'गेंडे का संरक्षण' (Conservation of Rhinoes) आदि हेतु भी विशेष कार्य योजनायें प्रारम्भ हुई हैं। इनके लिए भारत सरकार द्वारा आवर्तक (recurring) तथा अनावर्तक (non-recurring) वित्तीय सहायता नियमित रूप से विशिष्ट कार्यों हेतु उपलब्ध कराई जा रही है। यह राशि उन राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभ्यारण्यों को मिलती है जहाँ के आवेदन आवश्यकता और उपयोगिता की प्राथमिकता के आधार पर राष्ट्र स्तर पर निर्मित कमेटी द्वारा स्वीकृत किये जाते हैं। इस वित्तीय प्रावधान में क्षेत्र की भौतिक स्थितियों में सुधार, वन्य जीवों के लिए पीने के पानी की उपलब्धता, सुरक्षा हेतु आवश्यक उपकरण, संचार व्यवस्था, कर्मचारियों की सुविधायें आदि अनेक मद सम्मिलित किये जाते हैं। कुछ मदों पर 100 प्रतिशत तथा अन्य पर 50 प्रतिशत अनुदान उपलब्ध कराया जाता है।

विगत कुछ वर्षों में भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों को उपलब्ध कराई गई वित्तीय सहायता का संक्षिप्त विवरण यहाँ सारणी में दिया जा रहा है—

सारणी 15·4
राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों को भारत सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई वित्तीय सहायता

राशि (लाख रुपयों में)

सत्र	वित्तीय सहायता		
	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की संख्या	वित्तीय सहायता	किस हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई गई
1985-86	53 राष्ट्रीय उद्यान तथा 247 अभ्यारण्य	97·00	राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य के अनावर्तक व्यय पर 100 प्रतिशत सहायता तथा केवल राष्ट्रीय उद्यान के आवर्तन व्यय पर 50 प्रतिशत सहायता।
1986-87	59 राष्ट्रीय उद्यान तथा 254 अभ्यारण्य	220·00	उपर्युक्त प्रकार।
1987-88	25 राष्ट्रीय उद्यान तथा 67 अभ्यारण्य	270·00	अग्नि सुरक्षा, जल संसाधन सुधार, प्राकृतिक वास संरक्षण, बेतार प्रणाली की स्थापना, कर्मचारियों के आवास तथा वाहनों के रखने की व्यवस्था आदि।
1988-89	N. A.	अनावर्तक –100% आवर्तक –50%	राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभ्यारण्य की उचित देखभाल तथा उनका रख-रखाव।
1989-90	N. A.	अनावर्तक –100% आवर्तक –50%	उपर्युक्त प्रकार।

1990-91	36 राष्ट्रीय उद्यान तथा 150 अभ्यारण्य	अनावर्तक –100% आवर्तक –50%	हिमचीता योजना का संरक्षण, अभ्यारण्यों के निर्माण, सुरक्षा तथा आधारभूत ढाँचों का सृजन, चोरी छिपे शिकार तथा वन्य जीवों का अवैध व्यापार हेतु नियन्त्रण।
1991-92	28 राष्ट्रीय उद्यान तथा 123 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	चोरी छिपे शिकार को रोकना और अवैध व्यापार की रोकथाभ, असम में गेंडे का संरक्षण, पारिस्थितिकी सुधार की नई स्कीम का प्रारम्भ।
1992-93	30 राष्ट्रीय उद्यान तथा 140 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	उपर्युक्त कार्य हेतु तथा 75 लाख की राशि गेंडे संरक्षण योजना के लिए असम सरकार को दी गई।
1993-94	35 राष्ट्रीय उद्यान तथा 135 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की चल रही योजनाओं को चालू रहने हेतु।
1994-95	32 राष्ट्रीय उद्यान तथा 171 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	पारिस्थितिकी सन्तुलन हेतु।
1995-96	33 राष्ट्रीय उद्यान तथा 169 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	विकास कार्य हेतु।
1996-97	42 राष्ट्रीय उद्यान तथा 130 अभ्यारण्य	उपर्युक्त प्रकार	सामान्य व्यवस्था एवं पारिस्थितिकी विकास कार्यों हेतु।
1997-98	26 राष्ट्रीय उद्यान तथा 164 अभ्यारण्य	"	उपर्युक्त कार्य हेतु।
1998-99	40 राष्ट्रीय उद्यान तथा 147 अभ्यारण्य	"	उपर्युक्त कार्य हेतु।
1999-2000	32 राष्ट्रीय उद्यान तथा 158 अभ्यारण्य	"	अनावर्ती प्रकृति की चुनी हुई मदों के लिये।
2000-2001	157 राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य	"	अनेक विशिष्ट वन्य जीवों की सुरक्षा हेतु निर्माण कार्य।
2001-2002	180 राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्य	"	उपरोक्त कार्य हेतु।

* N. A. = Not Available (उपलब्ध नहीं)।

• राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की विधिसम्मत स्थिति (Legal Status of National Parks & Sanctuaries)

राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों का समान रूप से निर्धारण (निर्माण) तथा उनका प्रबन्ध सन् 1972 में वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम 1972 के बनने के बाद ही प्रारम्भ हुआ, जिसे सभी राज्यों ने (जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर जिसमें अलग ही स्वतन्त्र रूप से अधिनियम बना है) स्वीकार किया। इस अधिनियम के अध्याय 4, में जो विशेष रूप से राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य के सन्दर्भ में ही है, इनकी निर्माण प्रक्रिया से लेकर सम्पूर्ण क्रियान्विति और प्रबन्ध तक के लिए उचित मार्गदर्शन दिया है।

यहाँ यह बताना सामयिक एवं उचित रहेगा कि इस राष्ट्रीय अधिनियम से पूर्व देश के विभिन्न राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की व्यवस्था हेतु कुछ राज्यों में उनकी अलग-अलग कानून व्यवस्था थी जिनके अनुसार इनका उचित प्रबन्ध किया जाता था। उत्तर प्रदेश का हैली राष्ट्रीय उद्यान अधिनियम, 1936, जिसके अन्तर्गत 'हैली राष्ट्रीय उद्यान' (जिसका नाम अब 'कार्बेट' राष्ट्रीय उद्यान रख दिया गया है) की स्थापना की गई थी, इसका एक उदाहरण है।

वर्तमान वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 में राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की केवल निर्माण प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि उसमें (1) उनका किस प्रकार प्रबन्ध किया जाना है, (2) किन-किन अधिकारियों की क्या-क्या प्रदत्त शक्तियाँ हैं, (3) किन-किन प्रकार की गतिविधियों की वहाँ अनुमति है या नहीं है तथा (4) इनके उपयोग की दिशा में और औचित्य आदि सभी सम्मिलित हैं। यथा प्रकार—

1. अभ्यारण्य के निर्माण की सम्पूर्ण प्रक्रिया, जिसके लिए सम्बन्धित क्षेत्र के जिला कलेक्टर को अधिकृत किया गया है, सेक्शन 18 से 26 तक में दी गई हैं।
2. अभ्यारण्यों में प्रवेश हेतु प्रतिबन्ध तथा उनकी स्थिति विशेष में नियन्त्रित अनुमति सेक्शन 27 से 32 तक में उपलब्ध हैं।
3. इन अभ्यारण्यों तथा उद्यानों का नियन्त्रण और देख-रेख प्रदेश के मुख्य वन्य जीव प्रतिपालक (Chief Wildlife Warden) द्वारा की जाती है। उस हेतु निर्देश सेक्शन 33 व 34 में दिये गये हैं।
4. अभ्यारण्यों का राष्ट्रीय उद्यान के रूप में परिवर्तन/परिवर्द्धन तथा उसकी सभी व्यवस्थाओं हेतु मार्गदर्शन सेक्शन 35 व 38 में है।

यहाँ यह बात जानना बहुत आवश्यक है कि एक अभ्यारण्य और एक राष्ट्रीय उद्यान में मूलभूत क्या अन्तर है ? इस सन्दर्भ में दो मुख्य बातें हैं—

1. **'अभ्यारण्य', कोई भी वह क्षेत्र जहाँ वन क्षेत्रों (वन्य जीव सहित) का संरक्षण राज्य सरकार चाहती हो, के निर्माण की प्रक्रिया वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 के सैक्शन 18 के तहत घोषणा के आधार पर हो जाती है; इसके बाद आगे की प्रक्रिया सेक्शन 19 से 26 तक में वर्णित है।** सामान्यतया अभ्यारण्य में निर्धारित नियमों के पालन के साथ कुछ आवश्यक तथा अनिवार्य गतिविधियों की स्वीकृति औचित्य-अनौचित्य के आधार पर पड़ौसी निवासियों को प्रदान कर दी जाती है।
2. **'राष्ट्रीय उद्यान' के सन्दर्भ में—**
   (अ) **निर्माण प्रक्रिया में किसी भी क्षेत्र को (चाहे वह पूर्व में अभ्यारण्य ही हो) अधिनियम के सेक्शन 35 के तहत उद्यान क्षेत्र घोषित करना होता है तब आगे वह सभी प्रक्रियायें करनी होती हैं जो अभ्यारण्य स्थापित करने के लिए की जाती हैं।**
   (ब) **कुछ कठोर प्रतिबन्ध आवश्यक रूप से लगाये जाते हैं, जिनमें—**
   (1) मवेशी की चराई रोकना,
   (2) आम आदमियों के प्रवेश पर रोक,
   (3) किसी भी प्रकार के शिकार करने अथवा वन उत्पाद को क्षेत्र के बाहर से जाने की अनुमति नहीं, तथा
   (4) ऐसी कोई गतिविधि जिससे वन्य जीव असुरक्षित हो, कठोरता से पालन आदि मुख्य हैं।

• राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों की समस्याएँ व उनका प्रबन्ध (Problems and Managements of National Parks & Sanctuaries)

(अ) राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य की समस्याएँ (Problems of National Parks and Sanctuaries)

इन्हें सुविधा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(क) यह उस प्रकार की समस्यायें हैं, जो प्राकृतिक हैं और इन पर मनुष्य का कोई जोर नहीं है। केवल उन समस्याओं को कम करने हेतु कुछ प्रयास अवश्य किये जा सकते हैं। इनमें (1) सूखा (Drought), (2) बाढ़ (Flood), (3) पानी का अभाव (Scarcity of Water), (4) अधिक तापमान अथवा अत्यधिक कम तापमान (High Temperature or Very Low Temperature), (5) पानी का एकत्रीकरण (Water-logging), (6) महामारी (Epidemics), (7) तूफान और चक्रवात (Storms and Cyclones), (8) वन अग्नि (Forest Fires), (9) एक ही क्षेत्र में वन विविधतायें (Different Forest Types in One Area) तथा (10) समुद्रतल से विभिन्न ऊँचाइयाँ (Different Altitudes from Sea Level) आदि सम्मिलित की जा सकती हैं।

इन सब समस्याओं को समय और आवश्यकतानुसार कम करने अथवा इनका समाधान करने का प्रयास किया जाता है।

(ख) यह समस्यायें विशेषतः व्यक्तिगत लाभ से सम्बन्धित होती हैं और पास के गाँवों के लोगों द्वारा उत्पन्न की जाती हैं। कुछ स्थितियाँ ऐसी भी होती हैं कि पड़ोसी लोगों के पास कोई अन्य विकल्प न होने के कारण उन्हें अनचाहे ही अवांछनीय कार्यों में लिप्त होना पड़ता है। इनमें, (1) क्षेत्र के अन्दर रहने वाली आबादी द्वारा उद्यान अथवा अभ्यारण्य का विभिन्न प्रकार से उपयोग, (2) मवेशियों द्वारा चराई, (3) वन्य जीवों का अवैध शिकार, (4) वन उत्पादों (विशेषतः लकड़ी) की चोरी, (5) क्षेत्र का आम रास्ते की तरह उपयोग, (6) भ्रमण पर आने वाले लोगों (Tourists) द्वारा सामान्य शांति क्षेत्र में कोलाहल अथवा शांति भंग करना, (7) भूमि अधिग्रहण, (8) वन्य जीवों द्वारा मनुष्य अथवा मवेशी पर आक्रमण, (9) जनता तथा वन्य-अधिकारियों के बीच संघर्ष, (10) वन-अग्नि (Forest Fires) आदि कुछ मुख्य रूप से गिने जा सकते हैं।

इन समस्याओं के उत्पन्न होने के कारणों में लोगों में उपर्युक्त वर्णित स्वार्थ पूर्ति, बढ़ता लालच और आवश्यकताओं का दबाव के अतिरिक्त अपने देश के प्रति उनकी वफादारी और लगाव का अभाव मुख्यतः है। न तो उन्हें प्राकृतिक पर्यावरण के नष्ट होने की चिन्ता है और न ही आने वाले भविष्य की पीढ़ी की आवश्यकताओं एवं सुख-सुविधाओं की।

(ब) राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्यों का प्रबन्ध (Management of National Parks and Sanctuaries)

प्रदेश का वन्य जीव विभाग अपने बनाये हुए नियमों के आधार पर अपने सीमित प्रशासनिक दल द्वारा इन क्षेत्रों की भरसक रक्षा और संरक्षण करता है। दोषी व्यक्तियों को वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम 1972 के तहत दंडित भी करता है। पर वह दण्ड प्रावधान बहुत कठोर नहीं है, अतः इससे किसी को भी भय नहीं है। निःसन्देह प्रकृति के संरक्षण हेतु कठोर दण्डों का प्रावधान आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रों के रख-रखाव हेतु कुछ सुझाव निम्न प्रकार समेकित किये जा सकते हैं—

1. इन क्षेत्रों में **'बफर जोन'** के क्षेत्र में वृद्धि कर उसमें लोगों के प्रवेश को नियमित और नियंत्रित करना चाहिए। **'कोर क्षेत्र'** में और अधिक प्रतिबन्ध लगाने चाहिए।
2. उद्यानों एवं अभ्यारण्यों के रख-रखाव हेतु राज्य सरकार द्वारा अधिक धनराशि का प्रावधान उचित एवं आवश्यक है।
3. प्रशिक्षित स्टाफ में बढ़ोत्तरी तथा अधिकारियों एवं अन्य कर्मचारियों को अधिक आवासीय सुविधायें।
4. सामान्यतया शिकारों पर रोक; यदि अनुमति देनी ही हो तो परिमिट प्रणाली का प्रचलन।
5. टूरिस्ट्स का नियंत्रित प्रवेश; यदि संभव हो तो विभागीय गाइडों की व्यवस्था।
6. क्षेत्रों को प्रदूषण से मुक्त (विशेषतः पीने के पानी का प्रदूषण) रखने हेतु सावधानियाँ एवं प्रयास।
7. राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों के सन्दर्भ में आवश्यक साहित्य प्रकाशन और उसका भरपूर वितरण, जिससे सामान्य लोग भी इन महत्त्वपूर्ण संरक्षित क्षेत्रों के महत्त्व को जान सकें।
8. वन-अग्नि (Forest Fire) के बचाव की पुख्ता व्यवस्था; लेकिन यदि लग जाये तो उससे जूझने हेतु कर्मचारियों को गहन प्रशिक्षण और उपयोग में ली जाने वाली सामग्री/उपकरणों की यथेष्ट मात्रा का संग्रहण।
9. स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करना।
10. अनुभवी पशु-चिकित्सक एवं स्टाफ की नियुक्ति तथा आवश्यक उपकरणों और औषधियों की उपलब्धता जिससे आवश्यकता होने पर वन्य जीवों की चिकित्सा की जा सके।

राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य केवल सघन वन क्षेत्रों के रख-रखाव के स्थल ही नहीं हैं, बल्कि ऐसे साधन हैं जिनकी सहायता से प्रकृति सन्तुलन हेतु वन्य जीवों की सुरक्षा कर प्राकृतिक पर्यावरण को सन्तुलित रखा जा सकता है। विकृत पर्यावरण में सुधार हेतु भी इन क्षेत्रों के निर्माण, संरक्षण और विकास का महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्रत्येक जन-नागरिक को इनकी महत्ता समझनी चाहिए और राष्ट्रहित में इनकी सुरक्षा में यथोचित सहयोग देना चाहिए।

• देश के कुछ मुख्य राष्ट्रीय उद्यान[1]
(Some Important National Parks of the Country)

आइये अब कुछ देश के कुछ प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों के बारे में जानकारी करें। पिछले अध्याय-13 में भारत द्वारा मान्यता प्राप्त 'बाघ परियोजना' के 27 केन्द्रों में से 19 का विस्तृत विवरण दिया है। यह भी लगभग सभी (कुछ को छोड़कर) राष्ट्रीय उद्यान हैं। अतः इनकी पुनरावृत्ति न करके अन्य राष्ट्रीय उद्यानों के बारे में जानकारी पहुँचाने का प्रयास कर रहे हैं। पाठकों की सुविधा की दृष्टि से इनका क्रम राष्ट्रीय उद्यान के अंग्रेजी के प्रथम वर्णाक्षर से प्रारम्भ किया है। इससे यह संभव है कि एक प्रदेश के यदि एक से अधिक राष्ट्रीय उद्यान हों, तो वे साथ-साथ न आवें। इस क्रम को पाठक अपनी सुविधानुसार अपनी तरह से अपने स्तर पर ठीक कर सकते हैं।

मार्च 2002 तक भारत सरकार ने 89 उद्यानों को नेशनल पार्क का दर्जा दिया है। उनमें से ही 18 राष्ट्रीय उद्यानों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है—

1. बलपकरम (मेघालय) [Balpakaram (Meghalaya)]

मेघालय के दो राष्ट्रीय उद्यानों में से एक बलपकरम 220 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। दुर्लभ गति के पेड़-पौधे और वन्य जीव यहाँ की धरोहर हैं। घने जंगल हैं क्योंकि यहाँ पेड़-पौधों को धार्मिक नाम पर काटने की मनाही है। जाने का उपयुक्त समय अक्टूबर से अप्रैल तक का है। निकटतम रेलवे स्टेशन गोहाटी है, जहाँ देश के सभी स्थानों से कई प्रकार से पहुँचा जा सकता है। राष्ट्रीय उद्यान में ठहरने की सुविधा नहीं है, इससे थोड़ी कठिनाई अवश्य होती है। 'हूलौक गिब्बन' दुर्लभ पशु प्रजाति यहाँ देखने को मिल सकती है। स्लो बोरिस (शर्मिन्दी बिल्ली) की दुर्लभ प्रजाति यहाँ है। अन्य पशु जीवों में भालू, जंगली भैंसा, लैपर्ड कैट शामिल हैं।

2. बान्धवगढ़ (मध्य प्रदेश) [Bandhavgarh (Madhya Pradesh)]

विन्ध्याचल पर्वत की छोटी-छोटी अनेक पहाड़ियों के मध्य यह राष्ट्रीय उद्यान अपने अन्दर एक ऐतिहासिक स्मृति संजाये हुये हैं और वह यह है कि इसे सफेद बाघों की जन्मभूमि कहा जाता है, जिनकी संख्या आज नगण्य है। पूरे भारत में कुल सफेद बाघ 32 बताये जाते हैं, जिनका आम पर्यटकों द्वारा किसी भी वन्य क्षेत्र में दुर्लभ माना जाता है, फिर भी लोग यहाँ इन्हीं बाघों में से किसी एक की झलक देखने हेतु खिंचा चला आता है। 448 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में 500 से अधिक वनस्पति प्रजातियाँ हैं तथा वन्य जीवों में तेंदुए, गौर, चीतल, सांभर, नील गाय, चौसिंगा, जंगली सूअर, रीछ, जंगली कुत्ते और काले हिरन देखने को मिलते हैं। बाघ की पीले रंग की प्रजाति (पीला बाघ) यहाँ है। इसी के संरक्षण हेतु सत्र 1993-94 में इस राष्ट्रीय उद्यान को 'प्रोजेक्ट टाइगर' योजना में शामिल किया है।

'बान्धवगढ़' जाने के लिए नवम्बर से अप्रैल तक का मौसम उपयुक्त है। यहाँ पर राजकीय तथा प्राइवेट कई विश्रामस्थल हैं। वायुमार्ग से जाने वालों को खजुराहो से 210 किमी दूरी तय करनी होती है। कटनी-बिलासपुर रेलवे लाइन पर उमरई स्टेशन से सड़क दूरी केवल 30 किमी है। प्राकृतिक सौन्दर्य और घने जंगल यहाँ की अत्यन्त विशेषताएँ तथा यहाँ की धरोहर हैं।

3. बेंकटेश्वर (आन्ध्र प्रदेश) [Bankteshwar (Andhra Pradesh)]

आन्ध्र प्रदेश के दक्षिणी छोर पर तिरुमलै-तिरुपति की पवित्र पहाड़ियों के अंचल में स्थिति 'वेंकटेश्वर' राष्ट्रीय उद्यान पर्यटकों का मन मोह लेता है। 350 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ यह उद्यान अभी हाल ही में राष्ट्रीय उद्यान के रूप में स्थापित हुआ है। अक्टूबर से मार्च तक का समय इस उद्यान को देखने का उत्तम रहता है। वायु, सड़क तथा रेल सीधी सभी सेवाओं से जुड़ा है। पहले तिरुपति पहुँचना होता है जहाँ से यह उद्यान केवल 31 किमी है। आवास व्यवस्था सुलभ है। अन्य वन्य जीवों में बाघ, तेंदुए, हिरन, गौर,

---

1. **मुख्य स्रोत : हिन्दुस्तान (हिन्दी) दैनिक समाचार-पत्र (देहली)** : दिनांक 26 नवम्बर 1995, रविवासरीय परिशिष्ट, पृष्ठ 1 से 8 तक; फीचर : **अभय हो चलें अरण्य की ओर** : लेखक अनिल डबराल, गाँव मैलानी, पो. आ. खीरी—लखीमपुरी (उत्तर प्रदेश)—262701 से साभार।
अन्य स्रोत : The Hindustan Times (Daily) News Papers & **The Times of India (Daily)** News Papers of Different Dates of **New Delhi : Annual Reports of Ministry of Environment & Forests, Government of India,** Paryavaran Bhawan, CGO Complex, Lodi Road, New Delhi of Years 1992-93 to 2001-02.

भालू, सूअर, लोमड़ी, भेड़िया आदि देखने को मिलते हैं। तिरुपति मन्दिर के पास होने के कारण पर्यटकों की संख्य, दिन-रात बढ़ती जाती है।

4. दाचीगाम (कश्मीर) [Dachigam (Kashmir)]

कश्मीर का राष्ट्रीय उद्यान 'दाचीगाम' 141 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है और हंगुल जाति के हिरन का प्रमुख संरक्षण केन्द्र है। इसे सन् 1987 में ही राष्ट्रीय उद्यान के रूप में मान्यता मिली है। ग्रीष्म ऋतु में मार्च से जून तक की अवधि पर्यटन की दृष्टि से अनुकूल एवं सुविधाजनक है। पहुँचने हेतु जम्मूतवी पहुँचना होता है, जहाँ देश के किसी भी कोने से वायु, सड़क अथवा रेल मार्ग से पहुँचा जा सकता है। यहाँ से 320 किमी की दूरी टैक्सी से तय करनी होती है। श्रीनगर से केवल 20 किमी दूरी पर होने के कारण आवास व्यवस्था की कोई समस्या नहीं है। अन्य वन्य जीवों में कस्तूरी मृग, तेंदुआ, काला तथा भूरा भालू, जंगली बिल्ली, लाल लोमड़ी मिल जाते हैं। जंगली बकरी यहाँ का एक अन्य प्रमुख आकर्षण है।

5. डम्फा (मिजोरम) [Dampha (Mizorum)]

मिजोरम राज्य का एकमात्र राष्ट्रीय उद्यान, जिसे 1976 में अभ्यारण्य के रूप में विकसित किया गया, 'डम्फा' को सन् 1992 में ही यह दर्जा प्राप्त हुआ और आश्चर्य की बात है कि वर्ष 1994 में ही इसे 'प्रोजेक्ट टाइगर' के रूप में भी संस्थापित कर दिया है। राज्य के पूर्वोत्तर छोर पर तलगांव नदी के किनारे 600 वर्ग किमी में फैले इस राष्ट्रीय उद्यान की विशेषता सदाबहार हरियाली, दुर्लभ वन्य जीव और निखरा प्राकृतिक सौन्दर्य है। निकटतम रेलवे स्टेशन सिल्चर है। सड़क मार्ग से निकटतम कस्बे फाइलिंग पर पहुँचना होता है, जहाँ से इस उद्यान की दूरी केवल 10 किमी है। बरसात को छोड़कर पूरे वर्ष कभी भी जाया जा सकता है। वन्य जीवों में हिरण, जंगली बकरी, भालू और लंगूर प्रमुख हैं। अजगर तथा कोबरा साँप यहाँ पर्यटकों का आकर्षण भी है और दिल दहलाने वाला वाकया भी। ग्रेट इंडियन हार्नबिल (Hornbill) यहाँ की खास पहचान है।

6. घना राष्ट्रीय पक्षी उद्यान (राजस्थान) [Ghana National Bird Sanctuary (Rajasthan)]

राजस्थान के भरतपुर नगर (जिला मुख्यालय) में भारत के कुल 24 पक्षी विहारों में एक पक्षी विहार है जिसे 'घना पक्षी विहार' के नाम से पुकारा जाता है और अपनी विशिष्ट विशेषताओं के कारण विश्व के मानचित्र पर उभरकर अंकित है। कुल 29 वर्ग किमी क्षेत्र में फैले इस राष्ट्रीय उद्यान में लगभग आधे क्षेत्र में उथली पानी की झीलें हैं जिनमें जलीय परिंदों के लिए कीड़े-मकोड़े, मछलियाँ तथा विशेष प्रकार की घास उपलब्ध रहती है। प्रजनन के लिए यहाँ जगह-जगह पर पेड़, झाड़ियाँ तथा ऐसे सुरक्षित प्राकृतिक व कृत्रिम स्थान दोनों प्रकार के उपलब्ध हैं, जहाँ परिन्दे अपनी नैसर्गिक क्रियाकलापों में खो जाते हैं। इस उद्यान में लगभग 350 प्रकार की पक्षी प्रजातियाँ पाई जाती हैं। प्रवासी पक्षी साइबेरियन क्रेन्स यहाँ का मुख्य आकर्षण है जो कई हजारों किलोमीटर से निश्चित समय पर यहाँ आते हैं और अपनी निश्चित अवधि के बाद वापस प्रस्थान कर जाते हैं। घना पक्षी विहार रेल, सड़क तथा वायुमार्ग से पहुँचा जा सकता है। निकटतम हवाई अड्डा आगरा केवल 65 किमी दूरी पर है। अगस्त से मार्च तक का समय पर्यटकों के लिए उपयुक्त है। उद्यान में भी और शहर भरतपुर में भी अच्छी आवास व्यवस्था उपलब्ध है। यहाँ पर पाये जाने वाले विशेष पक्षियों में बुज्जा (आइविस), जांघिल (पेन्टेड स्टार्क), कलहंस (गीज), चेती (टील), बगुले (इग्रेट), कोर्मोरेंट, टिकरी, पनकौआ, बुलबुल, राजहंस, सोन चिड़िया, तीतर, बटेर, क्रोंच, बाज, सारस, गोल्डन प्लोवर तथा सारिका आदि प्रमुख हैं।

7. गिर (गुजरात) [Gir (Gujrat)]

गुजरात के जूनागढ़ जिले में स्थित राष्ट्रीय उद्यान भारत की केवल एकमात्र 'शेरों' की संरक्षण स्थली है। यह दुर्लभ जाति पिछले वर्षों में अत्यधिक शिकार होने के कारण लगभग लुप्त हो चली थी, जिसे अब बचाया जा रहा है। ऐसा अनुमान है कि इस समय इस राष्ट्रीय उद्यान 'गिर' में लगभग 300 शेर हैं। अक्टूबर से जून तक का समय गिरि राष्ट्रीय उद्यान में जाने हेतु उपयुक्त है। वायु, सड़क तथा रेल सेवाओं से यहाँ तक पहुँचा जा सकता है। प्रमुख नगरों से इस उद्यान की दूरी (अहमदाबाद-408 किमी, जूनागढ़-60 किमी, पोरबंदर-185 किमी, भावनगर-250 किमी और वेदावल-42 किमी) है। उत्तम आवास व्यवस्था मिल जाती है। अन्य वन्य जीवों में लकड़बग्घा, सांभर, नील गाय, चीतल, चौसिंगा और जंगली सुअर मिलते हैं।

8. काजीरंगा (असम) [Kaji Ranga (Assam)]

एक सींग वाले गेंडों के लिए प्रसिद्ध मशहूर राष्ट्रीय उद्यान 'काजीरंगा' असम के उत्तर-पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित है। 430 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले इस उद्यान की गणना विश्व के प्रसिद्ध गेंडे चरागाहों में की जाती है क्योंकि इसका विस्तार अनेक जलाशयों तथा दलदली जमीन से घिरा है, जो इस जाति के रहने के अनुकूल है। सन् 1926 से ही अभ्यारण्य के रूप में घोषित इस उद्यान को राष्ट्रीय पार्क का स्थान 1974 में मिला। भ्रमण के लिए फरवरी से मई तक का मौसम अत्यधिक उपयुक्त है। वायुमार्ग से निकटतम हवाई अड्डा 'जोरहाट' उद्यान से केवल 96 किलोमीटर सड़क मार्ग से जुड़ा है। सड़क मार्ग से गुहाटी तक पहुँचने पर 217 किलोमीटर का रास्ता तय करना होता है। **'गेंडा परियोजना'** (Project Rheinos) भारत सरकार द्वारा निर्देशित कार्यक्रम का यह केन्द्रीय स्थल है। अन्य वन्य जीवों में जंगली हाथी, जंगली भैंसे बहुतायत से हैं। जंगली हिरन, सांभर, हॉग डीयर, जंगली सूअर भी मिलते हैं। लगभग 200 प्रजातियों के पक्षियों में धनेश, विज्जा, सारस, गरुड़, हवासिल और बतख शामिल हैं।

9. कंचनजंगा (सिक्किम) [Kanchanjunga (Sikkim)]

सिक्किम के उत्तरी छोर पर स्थित उद्यान 'कंचनजंगा' की स्थापना 1977 में की गई। यह राज्य का केवल एकमात्र राष्ट्रीय उद्यान है जो 850 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। प्रकृति सौन्दर्य से भरपूर तथा दुर्लभ वन्य जीव प्रजातियों वाले इस राष्ट्रीय उद्यान में वर्तमान में किसी विदेशी को जाने की अनुमति नहीं है। देशवासी अनुमति पत्र से प्रवेश पाते हैं। जाने का उपयुक्त समय अक्टूबर से दिसम्बर तथा फरवरी से मई है। निकटतम रेलवे स्टेशन न्यू जलपाइगुड़ी है। जहाँ से टैक्सी से सड़क दूरी 221 किलोमीटर है। अत्यन्त ठंडे प्रदेश में रह सकने वाले वन्य जीव जैसे हिमचीता, कस्तूरी मृग, भरल, थाकिन, थूरल, सीरो और जंगली गधे मिलते हैं। यद्यपि यह विवाद का विषय है कि जाइन्ट पान्डा अथवा 'पांडा' भारत में उपलब्ध है, तब भी वन्य जीव विशेषज्ञ इसे कंचनजंगा में प्राप्य बताते हैं। पार्क में बहुत ही सीमित आवास व्यवस्था है।

10. केबुल लाजमाओ (मणिपुर) [Kebul Lajmao (Manipur)]

मणिपुर का 'केबुल लाजमाओ' राष्ट्रीय उद्यान केवल 40 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। इसका एक बड़ा भाग झील में तैरता रहता है, अतः इसे 'फ्लोटिंग पार्क' भी कहा जाता है। प्रकृति की देन से भरपूर यह उद्यान विशेषकर संगाई हिरन से भरा पड़ा है तथा देश का प्रमुख इस दुर्लभ जाति का संरक्षण केन्द्र है। पर्यटन की दृष्टि से अक्टूबर से अप्रैल तक का समय सबसे उपयुक्त है। पहुँचने का रास्ता बहुत सुविधाजनक नहीं है। वायु अथवा सड़क मार्ग से इम्फाल पहुँचना होता है जहाँ से यह उद्यान 45 किमी है। ठहरने के लिए आवास व्यवस्था सहजता से मिल जाती है। अन्य वन्य पशुओं में हॉग डियर, जंगली सूअर, उदबिलाव, गिलहरी और लंगूर पाये जाते हैं।

11. माधव (मध्य प्रदेश) [Madhava (Madhya Pradesh)]

आगरा-बम्बई राजमार्ग पर मध्य प्रदेश की ऐतिहासिक नगरी शिवपुरी स्थित 337 वर्ग किलोमीटर में फैले यह राष्ट्रीय उद्यान प्रकृति, सौन्दर्य और संस्कृति का संगम है जिसे पर्यटक जीवन भर भुलाने में असमर्थ होते हैं। इसे सन् 1959 में राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दिया गया। उद्यान की दो झीलें (1) सांख्य सागर और (2) चन्द्रपारा, कृत्रिम होते हुये भी, वर्ष भर पानी से लवालव भरी रहती हैं जो यहाँ का मुख्य आकर्षण हैं। चिंकारा छोटे आकार की हिरन की दुर्लभ प्रजाति का यहाँ विशेष रूप से संरक्षण होता है। अन्य वन्य जीवों में तेंदुआ, जरख, चीतल, सांभर, सूअर, काला हिरन, जंगली भालू, नील गाय, बन्दर और लंगूर सम्मिलित हैं। पर्यटकों के लिए यह उद्यान वर्ष भर खुला रहता है। आवास की व्यवस्था हेतु यहाँ कई होटल हैं, जहाँ विश्राम और भोजन व्यवस्था सुलभ है। वन्य जन्तुओं को सुविधा से देखने हेतु यहाँ अनेक वाच टावर बने हैं।

12. महावीर (गोवा) [Mahavir (Goa)]

गोवा के पूर्वी छोर पर स्थित राज्य का इकलौता राष्ट्रीय उद्यान 'महावीर' गोवा जाने वाले पर्यटकों के लिए एक आवश्यक दर्शनीय स्थान है। 1967 में जन्मे इस अभ्यारण्य को सन् 1978 में राष्ट्रीय उद्यान का स्थान मिला जो कुल 107 वर्ग किलोमीटर स्थान में फैला है। अक्टूबर से मार्च तक का मौसम सैर करने के लिए उपयुक्त है। निकटतम रेलवे स्टेशन कोलम से केवल 5 किमी है। आवास व्यवस्था

उपलब्ध है। प्राकृतिक सौन्दर्य, समुद्री वातावरण और मनमोहक मौसम में अनेक वन्य जीवों के देखने का लाभ उठाया जा सकता है। तेंदुआ, हाथी, भालू और हिरनों की कई प्रजातियाँ देखी जा सकती हैं। निर्भय विचरती जंगली बिल्लियाँ यहाँ का मुख्य आकर्षण है।

13. मुदमलै (तमिलनाडु) [Mudmalay (Tamilnadu)]

प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर दक्षिण भारत का राष्ट्रीय उद्यान तमिलन्नाडु के चार उद्यानों में से एक है जो 130 वर्ग किमी में फैला हुआ है। 1990 में राष्ट्रीय उद्यान का स्थान प्राप्त करने वाले इस उद्यान की लोकप्रियता यहाँ की प्राकृतिक सम्पदा ही है। नीलगिरी की पहाड़ियों में स्थित इस स्थान पर जाने का समय अप्रैल से जून तथा सितम्बर से नवम्बर उपयुक्त है। तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक के सीमावर्ती क्षेत्र में स्थित होने के कारण यहाँ तीनों राज्यों से पर्याप्त सुविधायें सुलभ हैं। यहाँ के वन्य जीवों में 'गौर' की संख्या सर्वाधिक है। अन्य वन्य जीवों में बिल्ली, भालू, लकड़बग्घा, नील गाय, चीतल प्रमुख हैं। आवास व्यवस्था का अभाव है।

14. मैरिन (अण्डमान) [Marin (Andaman)]

अण्डमान एण्ड निकोबार द्वीप समूह देश का ऐसा केन्द्र शासित प्रदेश है जहाँ सबसे अधिक वन अभ्यारण्य (100 से अधिक) हैं पर उनमें से अभी तक 8 को ही राष्ट्रीय उद्यान का स्थान प्राप्त है। वंडूर में स्थित मैरिन राष्ट्रीय उद्यान वस्तुतः समुद्री जीवों के रख-रखाव और संरक्षण के लिए है। समुद्री जीव मूंगा की अद्भुत कारीगरी का स्पष्ट नमूना है यह मैरिन पार्क। अनेक प्रकार की मछलियाँ तथा समुद्री कछुए के प्रजनन का केन्द्र है यह। दक्षिणी अण्डमान के पश्चिमी तट पर 281 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले इस उद्यान को देखने का सर्वोत्तम समय दिसम्बर से अप्रैल तक का है। वायुमार्ग अथवा समुद्री मार्ग से अण्डमान की राजधानी पोर्टब्लेयर पहुँचकर इस राष्ट्रीय उद्यान में पहुँचा जा सकता है जो वहाँ से केवल 20 किमी दूर है।

15. पिनवैली (हिमाचल प्रदेश) [Pinvalley (Himachal Pradesh)]

हिमाचल प्रदेश की ऊँची पहाड़ियों तथा दुर्गम घाटियों के बीच तिब्बत और नेपाल की सीमा पर यह राष्ट्रीय उद्यान स्थित है। अत्यधिक कम तापमान होने के कारण वर्ष में 7-8 माह तक बर्फ से ढका रहता है। केवल अप्रैल से जुलाई तक पर्यटक जा सकते हैं जिन्हें जोखिम का शौक हो। इसी कारण यहाँ पर विशेष ठंड में रह सकने वाले वन्य जीव जैसे हिमचीता, जंगली बकरी, बर्फ का भेड़िया, छोटा मारमोह, भूरी लोमड़ी आदि पाये जाते हैं। ठहरने की व्यवस्था का अभाव है तथा पहुँचने के साधन भी बहुत सुविधाजनक नहीं है। शिमला पहुँचकर वहाँ से इस स्थान तक पहुँचना ठीक रहता है।

16. राजाजी (उत्तर प्रदेश) [Rajaji (Uttar Pradesh)]

हिमालय की तराई, गंगा के मैदान और शिवालिक पहाड़ियों के मध्य बसे इस 'राजाजी' राष्ट्रीय उद्यान की स्थापना सन् 1993 में की गई। 820 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला यह उद्यान सीधे सड़क मार्ग से (लखनऊ-509 किमी, दिल्ली-231 किमी, देहरादून-14 किमी, हरिद्वार-9 किमी, ऋषिकेष-6 किमी और कोटद्वार-35 किमी) जुड़ा है और वह सभी लगभग इतने निकट हैं कि केवल इन स्थानों पर ठहरकर दिन में इस उद्यान को देखा जा सकता है। पर्यटक अपने भ्रमण के दौरान हाथी की सवारी का लाभ उठाते हैं। लगभग 200 किस्म के रंग-बिरंगे पक्षी की आवाजें इस उद्यान को गुंजाती रहती हैं। वन्य जीवों में हाथी, तेंदुआ, सांभर, चीतल, काकड़, घूरल तथा नील गाय प्रमुख हैं। चीतल बहुतायत से तथा आसानी से देखे जा सकते हैं। उत्तर प्रदेश के समस्त वनों के आधे से अधिक हाथी (1993 की गणना के अनुसार-522) इसी उद्यान में हैं। उद्यान पर्यटकों के लिए वर्ष भर खुला रहता है। पार्क के बीचोंबीच गंगा नदी बहती है यह एक अत्यन्त आकर्षण है।

17. संजय गांधी उद्यान (महाराष्ट्र) [Sanjay Gandhi Park (Maharastra)]

महाराष्ट्र के मुख्य शहर तथा राजधानी बम्बई के उत्तरी किनारे पर स्थित यह राष्ट्रीय उद्यान पहले वोरीवली नाम से अभ्यारण्य था, जिसे 1983 में राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दे दिया गया। 'टाइगर सफारी' इस उद्यान का मुख्य आकर्षण है, जिन्हें पर्यटक विशेष वाहनों से बहुत सहजता से देख सकते हैं। अन्य जीवों में जंगली बिल्ली, नेवला, चौसिंगा, सांभर, जंगली भालू और गेंडा तथा नील गाय दिखती हैं। अनेक प्रकार के पक्षी (250 प्रजातियाँ) तथा लगभग 1000 से भी अधिक प्रजातियों के पेड़-पौधे हैं। उद्यान में झीले

हैं और पर्यटकों को घुमाने हेतु सफारी वाहन तथा छोटी रेलगाड़ी की व्यवस्था है। पहुँचने का निकटतम स्थान वोरीवली है जो सड़क तथा रेल दोनों से जुड़ा है। निकटतम हवाई अड्डा सांताक्रूज है जो उद्यान से केवल 15 किमी दूर है। पर्यटकों के लिए यह उद्यान वर्षपर्यन्त खुला है। आवास व्यवस्था सीमित ही उपलब्ध है।

18. सुल्तानपुर (हरियाणा) [Sultanpur (Haryana)]

अरावली पर्वत शृंखलाओं के अंचल में 'सुल्तानपुर' राष्ट्रीय उद्यान दिल्ली की सीमा से लगे हरियाणा राज्य के गुड़गांवा जिले में स्थित है। बहुत ही छोटे क्षेत्र में फैला (1·47 वर्ग किमी) यह राष्ट्रीय उद्यान लगभग पूरा कृत्रिम है, पर अपनी विशेषताओं के कारण दुर्लभ जाति के प्रवासी पक्षियों का केन्द्र बन गया है जहाँ प्रति वर्ष लगातार इन पक्षियों की संख्या बढ़ रही है। अक्टूबर से फरवरी तक का समय बहुत अच्छा रहता है, पर्यटक की दृष्टि से। पहुँचने का सबसे सरल रास्ता सड़क है (गुड़गाँव-15 किमी, दिल्ली बस स्टेशन-56 किमी, जयपुर-300 किमी तथा चन्डीगढ़ से 384 किमी) जहाँ सुविधानुसार कभी पहुँचा जा सकता है। आवास व्यवस्था बहुत उत्तम और काफी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। अनेक प्रजातियों के पक्षी यहाँ देखे जा सकते हैं, जिनमें सारस, क्रेन, स्पाट बिल, गीज, बतख, नीलकंठ, बुलबुल, फाख्ता और मैना प्रमुख हैं।

राष्ट्रीय उद्यानों की संख्या अभी यहीं रुकी नहीं है। वर्तमान में 490 वन अभ्यारण्य में से लगातार नियमित रूप से यह क्रमोन्नयन जारी है। सत्र 2000-01 में 3 अभ्यारण्यों को 'नेशनल पार्क' का दर्जा दिया गया है। अभी हाल ही में समेकित सूचना के अनुसार निकट भविष्य में लगभग 60 अभ्यारण्यों पर राष्ट्रीय उद्यानों के रूप में क्रयोलत करने की कार्यवाही प्रस्तावित है। विशेष श्रेणी में आ जाने से इन उद्यानों की देखरेख और अच्छे ढंग से हो सकेगी। मानव जाति के यह निश्चय ही हित में है और सुखी भविष्य के लिए शुभ संकेत भी है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों को चिन्हित करने के पीछे भारत सरकार का क्या उद्देश्य था ? बताइये।
2. किसी भी अभ्यारण्य का नियंत्रण अधिकारी (Chief Wildlife Warden) किस-किस कार्य हेतु लोगों को प्रवेश की अनुमति दे सकता है ? और कैसे ?
3. किसी भी अभ्यारण्य को राष्ट्रीय उद्यान के रूप में कैसे घोषित किया जाता है ?
4. राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्यों की मुख्य समस्याएँ क्या हैं ? विवेचना कीजिये।
5. एक मुख्य वन्य जीव प्रतिपालक (Chief Wildlife Warden) के नाते आप किसी राष्ट्रीय उद्यान को आदर्श रूप में लाने हेतु क्या-क्या करना चाहोगे ?

लघुउत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. अभ्यारण्य में किन-किन लोगों को प्रवेश की अनुमति है ?
7. राष्ट्रीय उद्यान और वन अभ्यारण्य में क्या अन्तर है ?
8. काजीरंगा (असम) राष्ट्रीय उद्यान के बारे में बताइये।
9. राष्ट्रीय उद्यानों के साथ 'पारिस्थितिकी विकास' कार्य कराये जाने का क्या आशय है ?
10. केन्द्र एवं राज्य सरकारें राष्ट्रीय उद्यानों को देखने के लिए आम नागरिकों को क्यों उत्साहित करती हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. भारत देश में वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम कब बना ?
    (अ) सन् 1952 में (ब) सन् 1962 में
    (स) सन् 1972 में (द) सन् 1982 में

12. भारत में राष्ट्रीय उद्यानों की वर्तमान संख्या कितनी है ?
    (अ) 70 (ब) 75
    (स) 85 (द) 89
13. किस प्रदेश में वन अभ्यारण्य सर्वाधिक हैं ?
    (अ) अण्डमान एण्ड निकोबार (ब) मध्य प्रदेश
    (स) उड़ीसा (द) बिहार
14. दिल्ली में राष्ट्रीय उद्यान हैं—
    (अ) 04 (ब) 03
    (स) 02 (द) 00
15. केन्द्र सरकार राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्यों की रख-रखाव हेतु आवर्तक व्यय पर कितना सहयोग करती है ?
    (अ) कुछ नहीं (ब) 50%
    (स) 75% (द) 100%

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य चिन्हित कीजिये—

16. अभ्यारण्यों में बिना परमिट के शिकार करना वर्जित है। (सत्य/असत्य)
17. अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यानों की देखरेख प्रदेश के वन्य जीव विभाग द्वारा की जाती है। (सत्य/असत्य)
18. किसी अभ्यारण्य को 'प्रोजेक्ट टाइगर रिजर्व' बनाने से पहले उसका 'राष्ट्रीय उद्यान' स्तर पर होना आवश्यक है। (सत्य/असत्य)
19. महावीर राष्ट्रीय उद्यान राजस्थान में है। (सत्य/असत्य)
20. केबुल लाजमाओ (मणिपुर) राष्ट्रीय उद्यान को 'फ्लोटिंग पार्क' के नाम से भी जानते हैं। (सत्य/असत्य)

●

16

ऊर्जा

[ENERGY]

• प्रस्तावना
(Introduction)

जिस प्रकार बिना पानी, हवा और भोजन के कोई प्राणी जीवित नहीं रह सकता उसी प्रकार बिना ऊर्जा के न तो वह गतिमान हो सकता है और न ही उसकी चेतनता विद्यमान रह सकती है। यह केवल ऊर्जा ही है जो वस्तुतः जड़ और चेतन में अन्तर स्पष्ट करती है। 'ऊर्जा' को इसी कारण निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया गया है—

"किसी कार्य को करने की क्षमता को ऊर्जा कहते हैं।"

(Energy is the capacity to perform work.)

यह परिभाषा विशेषतः प्राणी जीवन के सन्दर्भ में इस सीमा तक सम्बन्धित है कि अनेक प्रकार के जीवन आधारित कार्यों में, यहाँ तक कि साँस लेने तक में भी, ऊर्जा का उपयोग होता है। ऊर्जा जीवन के अस्तित्व को बनाये रखने तथा उसको सुचारु रूप से चलाते रहने के लिए अति आवश्यक है, लेकिन अपने जीवन के अतिरिक्त अन्य जितने भी कार्य जो सम्पन्न होते हैं या किये जाते हैं, वह भी 'ऊर्जा' से ही होते हैं, अतः ऊर्जा को निम्नलिखित प्रकार से भी परिभाषित करते हैं—

"किसी तन्त्र/संयन्त्र/मशीन को चलाने के लिए उपयोग में लाई गई शक्ति को 'ऊर्जा' कहते हैं।"

(Energy is the power used by any system/instrument/machine to work.)

इन दोनों अत्यन्त स्थूल परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि जब भी कोई कार्य सम्पन्न होता है अथवा किया जाता है, उसमें जिस शक्ति का उपयोग होता है, उसे ही 'ऊर्जा' (Energy) कहते हैं।

• ऊर्जा के विभिन्न रूप
(Different Forms of Energy)

ऊर्जा के विभिन्न रूपों में हम उन्हें निम्नलिखित प्रकार से समेकित करते हैं—

(1) सौर ऊर्जा (Solar Energy)
(2) तापीय ऊर्जा (Thermal or Heat Energy)
(3) विद्युतीय ऊर्जा (Electric Energy)
(4) चुम्बकीय ऊर्जा (Magnetic Energy)
(5) गतिज ऊर्जा (Kinetic Energy)
(6) स्थितिज ऊर्जा (Potential Energy)
(7) आण्विक ऊर्जा (Nuclear Energy)
(8) रासायनिक ऊर्जा (Chemical Energy) एवं अन्य भी।

इन ऊर्जा के विविध रूपों में 'सौर ऊर्जा' सूर्य से प्राप्त होती है। आण्विक ऊर्जा आण्विक ईंधन-यूरेनियम 235 के विखण्डीकरण से मिलती है। गतिज ऊर्जा तथा स्थितिज ऊर्जा क्रमशः किसी वस्तु की गति से और अपनी स्थिति (गुरुत्वाकर्षण) के अनुसार प्राप्त होती है। शेष सभी ऊर्जाओं के रूप तापीय, विद्युतीय, चुम्बकीय और रासायनिक परस्पर परिवर्तन से होते हैं, क्योंकि यह उल्लेखनीय है कि **थर्मोडायनेमिक्स के प्रथम नियम के अनुसार ऊर्जा न तो उत्पन्न की जा सकती है और न ही इसे नष्ट किया जा सकता है; केवल उसका एक प्रकार से किसी दूसरे प्रकार में रूपान्तर हो सकता है।** उदाहरण के लिए वनस्पति,

पेड़-पौधे सौर ऊर्जा को अपने में अवशोषित कर उसे 'रासायनिक ऊर्जा' में परिवर्तित कर लेते हैं, जो उनके स्वयं की वृद्धि तथा आगे संचालन हेतु कार्य में आती है। पशु जो इस वनस्पति में संरक्षित 'रासायनिक ऊर्जा' का उपयोग करते हैं, वह अपने आपको ठीक-ठाक रखते हैं तथा शेष ऊर्जा को 'तापीय ऊर्जा' तथा 'गतिज ऊर्जा' में बदल देते हैं और आगे बढ़ाकर अन्य को गति प्रदान करते हैं। निष्कर्ष तो यह है कि जीवन की सम्पूर्ण संक्रिया ऊर्जा के रूपान्तर (conversion), उपयोग (utility), संग्रहण (storage) तथा स्थानान्तरण (transfer) पर आधारित है और यह क्रम 'ऊर्जा' का चलता रहता है जिससे प्राणी मात्र का जीवन गतिमय होता है।

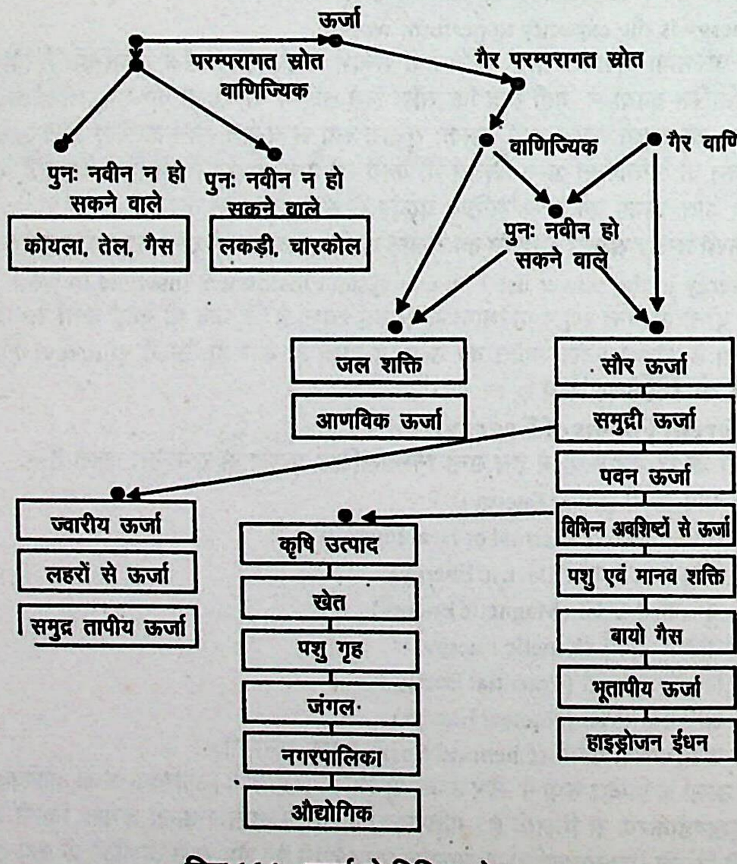
● ऊर्जा के स्रोत
(Sources of Energy)

ऊर्जा के स्रोतों को वर्गीकरण की दृष्टि से निम्नलिखित तीन प्रकार से बाँटते हैं—

(1) प्रयोग के अनुसार (According to their Use)

(अ) वाणिज्यिक ऊर्जा (Commercial Energy) : इसमें कोयला, तेल और प्राकृतिक गैसें, जल विद्युत तथा आण्विक ईंधन आते हैं।

(ब) गैर वाणिज्यिक ऊर्जा (Non-commercial Energy) : इसमें मुख्यतः वन स्रोत से प्राप्त ईंधन, चारकोल सम्मिलित होते हैं। अन्य प्रकार के ईंधन जिनमें उपले, कृषि अपशिष्ट तथा अन्य वनों, कपड़ा उद्योग, घरेलू अथवा उद्योगों का कूड़ा-करकट, आदि भी इसमें शामिल किये जा सकते हैं।



चित्र 16·1—ऊर्जा के विभिन्न स्रोत

(2) प्राप्ति के अनुसार (According to their Sources)

(अ) परम्परागत स्रोत (Conventional Sources) : इसमें जीवाश्म ईंधन (Fossil Fuels) ही मुख्य हैं, जिनमें कोयला, तेल, गैस तथा लकड़ी को सम्मिलित किया जाता है।

(ब) **गैर परम्परागत स्रोत** (Non-conventional Sources) : इसमें सौर ऊर्जा, आण्विक ऊर्जा, जल ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायो गैस, समुद्रीय ऊर्जा, पशु तथा कृषि अपशिष्ट से प्राप्त ऊर्जा आदि सम्मिलित हैं।

(3) पुनः पूर्ति के प्रकार से (According to their Replenishment)

(अ) **पुनः नवीन न होने वाले** (Non-renewal Sources) : इस श्रेणी में लगभग सभी परम्परागत स्रोतों से प्राप्त तेल, कोयला और गैस आते हैं। लकड़ी परम्परागत ईंधन स्रोत होते हुये भी इस प्रकार के स्रोतों में सम्मिलित नहीं की जाती है, क्योंकि यह पुनः उत्पादन किए जा सकने वाली वस्तुओं की श्रेणी में आती है।

(ब) **पुनः नवीन हो सकने वाले** (Renewal Sources) : इस विभाजन के अन्तर्गत शेष सभी स्रोत जिनमें सौर ऊर्जा, आण्विक ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा, जल ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा एवं अन्य इसी प्रकार से उत्पादित हो सकने वाली ऊर्जा को शामिल किया जा सकता है।

इस वर्गीकरण को एक दृष्टि में देखने हेतु उपर्युक्त चित्र का अवलोकन करें।

• ऊर्जा का महत्त्व और उसकी आवश्यकता (Need and Importance of Energy)

'ऊर्जा' पृथ्वी पर सभी जीवित-अजीवित प्राणियों और वस्तुओं के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि उनकी प्रगति और वृद्धि के लिए भी ऊर्जा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। मनुष्य की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा उनका उचित उपयोग बिना ऊर्जा के सम्भव ही नहीं है। वस्तुतः उठना-बैठना, आना-जाना, खाना-पीना, मनोरंजन, आवागमन के साधन, सुख-सुविधाओं का उपयोग आदि सभी कार्यकलापों के लिए ऊर्जा की आवश्यकता है। अतः ऊर्जा का दो प्रकार से उपयोग होता है, (1) अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तथा अपना स्वयं का जीवन जीने के लिए और (2) अपने व अन्य देश की विकास की योजनाओं के लिए। निश्चय ही यह प्रत्येक देश की अपनी आर्थिक क्षमताओं पर निर्भर करता है कि वहाँ कितनी ऊर्जा उपलब्ध है ? अथवा कितनी ऊर्जा उपलब्ध हो सकती है ?

अब ऊर्जा केवल आवश्यकता के ही लिए ही नहीं बल्कि आज वह देशों के समृद्धता नापने का मापदण्ड भी बन गया है, क्योंकि सीधे-सीधे अधिक ऊर्जा अधिक आर्थिक विकास को परिलक्षित करता है और आर्थिक सम्पन्नता किसी भी देश की विकास की छवि को विश्व पटल पर प्रस्तुत करती है। जैसे विकसित देश अमेरिका पूरे विश्व की ऊर्जा का तीन-चौथाई भाग से भी अधिक (लगभग 80%) अपने ऊपर खर्च कर लेता है, जबकि उसकी आबादी पूरे विश्व की आबादी का केवल 5% है। इसके विपरीत विश्व में ऐसे देश भी हैं, जहाँ इतनी विपन्नता है कि वे अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर पाते। यह उदाहरण विभिन्न देशों में ऊर्जा की असमानता बताते हैं और विश्वव्यापी संकट को भी प्रदर्शित करते हैं।

ऊर्जा संकट विश्वव्यापी है, इसके अनेक कारण हैं—

1. आज मनुष्य की प्राथमिकताओं में अन्तर आया है, अतः ऊर्जा की आवश्यकता प्रति व्यक्ति बढ़ गई है। सुख-सुविधाओं की उपलब्धता में भी ऊर्जा का ही योगदान है।
2. निरन्तर बढ़ती जनसंख्या ने अधिक ऊर्जा का उपयोग किया है, जो निरन्तर बढ़ती जाती है और ऊर्जा संकट की भागीदार बन रही है।
3. ऊर्जा का उपयोग भी बहुत उचित नहीं है। आवागमन के ही साधन-सुविधा की बात करें; 40 व्यक्ति एक बस द्वारा किसी स्थान पर पहुँचते हैं, तो वह उस ईंधन का 2·5% ही व्यय करते हैं जो प्रत्येक व्यक्ति के स्वतन्त्र रूप से उसी स्थान पर 'कार' से जाने पर होता है।
4. हम ऊर्जा का दुरुपयोग भी करते हैं। खाली कमरों में पंखे चलते हैं, बिजली जलती है, पर हम बन्द नहीं करते। हमें आलस्य भी है और परवाह भी नहीं है, लेकिन हमारी इस आदत का प्रभाव ऊर्जा व्यय पर पड़ता है। और भी कई कारण हो सकते हैं जिनसे चहुँ ओर ऊर्जा संकट की समस्या मुँह फैलाये खड़ी दिखती है। विश्व प्रगति रुकने लगी है और अनेक छोटे देशों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है।

हम इस संकट से कैसे उबरें ? निम्नलिखित तीन समाधान सम्भव हैं—

1. हम ऊर्जा का दुरुपयोग रोकें; किसी भी स्तर पर उसे नष्ट न होने दें।
2. हम ऊर्जा का उपयोग कम अथवा सीमित कर दें अथवा उतना ही करें जितनी ऊर्जा हमें उपलब्ध हो सकती हो।
3. हम अपने देश की आवश्यकतानुसार योजनाएँ तैयार करें और उतनी ऊर्जा की आवश्यक रूप से व्यवस्था करें जितनी अपेक्षित हो। परम्परागत तरीकों से ऊर्जा उपलब्धि यदि सम्भव न हो तो गैर-परम्परागत तरीके के वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत खोजें और उनका उपयोग करें।

इन तीन समाधानों में से क्रम संख्या 1 व 3 दोनों को स्वीकार करने से ही प्रगति सम्भव है।

इसके अतिरिक्त भारत जैसे देश के लिए एक समाधान और बहुत व्यावहारिक है और वह है कि ग्रामीण क्षेत्र में ऊर्जा का अधिकतम भाग खाना पकाने में होता है, उस हेतु हम उपयोग करें—(1) विरासत में मिलने वाले पशु-धन अवशिष्ट गोबर के उपलों का, (2) सौर ऊर्जा से संचालित सौर कुकर का, (3) गाँव स्तर पर ही तैयार हो सकने वाली बायो गैस का और (4) कृषि अवशिष्टों का (इनका विवरण आगे दिया है)। साथ ही परम्परागत तरीके से काम में आने वाले चूल्हों का नवीनतम तकनीक के आधार पर परिष्करण कर उनका उपयोग भी ऊर्जा की बचत में अत्यन्त सहायक हो सकता है।

घरेलू ऊर्जा के व्यय में बचत करने हेतु अन्य व्यावहारिक सुझाव यह भी हैं—

(1) खाना बनाने में प्रेशर कुकर्स का प्रयोग करें। कम समय में कम ऊर्जा व्यय पर शीघ्र खाना बनता है।

(2) एक साथ ही पूरे परिवार का खाना बनावें तथा एक साथ खाने की आदत डालें इससे बार-बार खाना गर्म करने से छुटकारा मिल सकता है और ऊर्जा की बचत भी निश्चित है।

(3) जो वस्तुएँ, जैसे दाल, चावल, अधिक देर से गलती हों, उन्हें कुछ समय पूर्व ही पानी में भिगो दें। वह जल्दी पकेंगी और ऊर्जा की बचत होगी।

(4) सामूहिक चूल्हे (तंदूर) का रिवाज भी ईंधन बचत में सहायक है।

उपर्युक्त जितनी भी चर्चा की गई है, उसका विशेष प्रयोजन यही है कि ऊर्जा की आवश्यकता को अधिक प्रयोजनमयी कैसे बनाया जा सके ? जिससे देश की गति में व्यवधान भी न हो और वहाँ के निवासी एक अच्छा सुखमय शांतिपूर्ण जीवन भी जी सकें।

• भारत में ऊर्जा की वर्तमान खपत की स्थिति तथा भविष्य की माँग (Present Status of Consumption of Energy in India and Future Demand)

अन्य विकसित एवं विकासशील देशों की तरह भारत ने भी आजादी के बाद से ही औद्योगिक क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है, साथ ही देश के लोगों में रहन-सहन का परिवर्तन तथा परिवहन की सुविधाएँ, संचार व्यवस्था, आधुनिक कृषि उपकरणों का उपयोग, चिकित्सा तथा मनोरंजन आदि क्षेत्र में भी नये आयाम प्रस्तुत हुये हैं। इन सबसे निश्चित ही ऊर्जा की खपत में निरन्तर वृद्धि हुई है। **ओ. पी. विमल एण्ड पी. डी. त्यागी**[1] के अनुसार भारत में कुल ऊर्जा खपत 1953-54 में 186·3 mtcr[2] थी जो 1978-79 में (25 वर्ष के अन्तराल में) 492·3 mtcr हो गई (जो लगभग $2\frac{1}{2}$ गुना है)। लेकिन जिस गति से ऊर्जा के उपयोग में वृद्धि हो रही है उसके अनुसार उसके अगले 20 वर्ष बाद भी सन् 2000-2001 तक 1181·3 तथा 2001-2011 तक 1,700·00 mtcr हो जायेगी (लगभग $3\frac{1}{2}$ गुना)। इसका संक्षिप्त विवरण अग्रांकित सारणी में दिया गया है—

---

1. O. P. Vimal and P. D. Tyagi, **Energy from Biomass** (New Delhi : Acricole Publishing Academy, 1984), p. 4.
2. mtcr : यह एक ऊर्जा की इकाई है जिसका आशय है **मिलियन टन कोल रिप्लेसमेन्ट**; अर्थात् जितनी ऊर्जा एक मिलियन टन कोयला जलने से प्राप्त होती है इसे कहीं mtce (मिलियन टन कोल इक्विवेलेन्ट) भी कहते हैं।

* इसी प्रकार ऊर्जा का एक अन्य यूनिट mtoe अर्थात् **मिलियन टन आयल इक्विवेलेन्ट** भी होता है।

सारणी 16·1
1953-54 से 2000-2010 तक भारत में ऊर्जा खपत
(वाणिज्यिक एवं गैर-वाणिज्यिक प्रकार सहित)

अवधि	ऊर्जा खपत विवरण				
	mtcr (मिलियन टन कोल रिप्लेसमेन्ट)			प्रतिशत में	
	वाणिज्यिक	गैर वाणिज्यिक	कुल	वाणिज्यिक	गैर वाणिज्यिक
1953-54	60·4	125·9	186·3	32·4	67·6
1960-61	101·2	145·5	246·7	41·0	59·0
1965-66	147·0	159·6	306·6	47·9	52·1
1970-71	197·3	172·2	369·5	53·4	47·6
1975-76	252·7	194·6	447·3	56·5	43·5
1978-79	294·3	198·0	492·3	59·7	40·3
1987-88	499·2	202·8	702·0	71·1	28·9
2000-2001*	1,017·8	163·5	1181·3	86·2	13·8
2001-2010*	1,500·0	200·00	1,700·00	88·2	11·8

* Interpolated.

इस सारणी से एक जानकारी और मिलती है कि समय के साथ-साथ वाणिज्यिक ऊर्जा में खपत निरन्तर बढ़ी है तथा गैर वाणिज्यिक ऊर्जा की खपत में उसी अनुसार कमी हुई है। सम्भवत: यह अनुमान लगाया जाना भी कभी कठिन रहा होगा कि 1953-54 में वाणिज्यिक ऊर्जा की खपत 32·4%, 1987-88 में 71·1% हो जायेगी तथा जिसकी सम्भावना 2000-01 में 86.2% और 2001-2010 में 88·2% तक है।

● ऊर्जा के परम्परागत स्रोत (Conventional Sources of Energy)

वाणिज्यिक ऊर्जा के स्रोत, जो कोयला, तेल व गैस तथा लकड़ी तक सीमित हैं, इस इतने भार को उठा पायेंगे यह सम्भावना बहुत कठिन है, क्योंकि विशेषज्ञों के अनुसार इनमें से प्रथम तीन संसाधन जो पुनः नवीनीकरण नहीं (Non-renewable) की श्रेणी में आते हैं बहुत निकट भविष्य में समाप्त होने वाले हैं। निम्नांकित सारणी देखें—

सारणी 16·2
भारत में खनिज स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा का भण्डार एवं व्यय विवरण

संसाधन (स्रोत)	कुल भण्डारण	वार्षिक उत्पादन	उपलब्धता का अधिकतम समय	विशेष विवरण
कोयला (मिलियन टन में)	80,950 mt	100-150 mt	500 वर्ष	400 फीट तक ही वर्तमान में निकाला जा रहा है और नीचे और अधिक सम्भावना।
लिग्नाइट (मिलियन टन में)	2,000 mt	6 mt	350 वर्ष	

पेट्रोलियम (मिलियन टन में)	200mt	6-7mt	50 वर्ष	एक सर्वे के अनुसार लगभग 3,000 mt भारत भूमि पर तथा 1,000 mt समुद्र में और मिलने की सम्भावना।
प्राकृतिक गैस (बिलियन घन मीटर)	65bm^3	1·5 से 1·6bm^3	50 वर्ष	प्रतिवर्ष लगभग 1·0 bm^3 का उपयोग हो पाता है, शेष गैस नष्ट हो जाती है। भविष्य में और प्राप्त होने की सम्भावना।

इस सारणी से हम बड़े मोटे रूप से यह जान सकते हैं कि देश में परम्परागत ईंधन का वर्तमान स्टाक बहुत सीमित है और इसी कारण कुछ अन्य वैकल्पिक स्रोत खोजने ही होंगे। लकड़ी का वाणिज्यिक ऊर्जा के रूप में उपयोग देश के गिरते वन प्रतिशत को देखते हुए बहुत उपयुक्त नहीं है। अतः नवीनतम स्रोतों में **जल शक्ति** (Hydro Power) तथा **आण्विक ईंधन** (Nuclear Fuel) अथवा ऐसे ही अन्य ईंधन स्रोत का उपयोग उचित एवं श्रेष्ठ रह सकता है। वर्तमान में भी काफी मात्रा में इन स्रोतों से ऊर्जा प्राप्त हो रही है तथा निकट भविष्य में कई अधिक गुनी वृद्धि सम्भव है। **सौर ऊर्जा** (Solar Energy) तथा अन्य कई स्रोत भी वैकल्पिक रूप में उपयोग में लाये जा सकते हैं, उनका विवरण आगे दे रहे हैं।

● ऊर्जा के गैर परम्परागत तथा वैकल्पिक स्रोत (Non-conventional and Alternate Sources of Energy)

1. वाणिज्यिक उपयोग हेतु (For Commercial Use)

(1) जल शक्ति (Hydro Power) : भारत में 'जल विद्युत ऊर्जा' की अधिकतम सम्भावनाओं की अधिकृत जानकारी ज्ञात करने के लिए केन्द्रीय जल एवं ऊर्जा आयोग (Central Water and Power Commission) ने एक विशाल सर्वेक्षण 1953-60 के मध्य किया। इसमें देश की विभिन्न नदियों अथवा उसके समूहों के संग्रहण क्षेत्र में बनाये जा सकने वाले 'जल विद्युत केन्द्र', पानी की उपलब्धता और अन्य सम्बन्धित बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए जल-विद्युत ऊर्जा की मात्रा के सम्भावित उत्पादन का संकलन किया। उपर्युक्त आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि वर्तमान में पूरे देश में 41 मिलियन किलोवाट (41 mkw) जल विद्युत का दैनिक उत्पादन किया जा सकता है, जो 60 प्रतिशत गुणांक भार (Load Factor) से 216 ट्रिलियन वाट प्रति घंटा (216 Twh) होती है। 1980 में हो रहे उत्पादन 27 Twh की तुलना में यह 8 गुनी है। अतः इस बहुत भारी मात्रा में 'जल ऊर्जा' का उत्पादन कर इसे वाणिज्यिक उपयोग में लाया जा सकता है।

इस ऊर्जा के उत्पादन की सर्वाधिक चर्चित विशेषता यह है कि इसमें बहुत ही सीधे-सीधे तरीके से जल को ऊपर से नीचे तक एक टरबाइन पर गिराने से ही जेनेरेटर को चालू कर विद्युत का उत्पादन किया जा सकता है। अधिकांश स्थानों पर जहाँ पानी स्वतः ही ऊँचाई से गिरता है वहाँ कोई अतिरिक्त ऊर्जा संयन्त्र की भी आवश्यकता नहीं होती है, पर जहाँ बहते पानी को ऊपर उठाकर नीचे गिराने की प्रक्रिया विशेष प्रकार से बनाये गये ढलानों (Hydraulic Ramps) से करनी होती है, वहाँ यह कार्य प्राकृतिक वायु दबाव से चलने वाले पम्पों के उपयोग से किया जा सकता है और जिस पर कोई आवर्तक व्यय नहीं होगा। इसके अतिरिक्त यह केन्द्र प्रतिदिन पूरे चौबीसों घंटे महीनों तक बिना किसी रख-रखाव के चलते रह सकते हैं। प्रदूषण की तो कोई सम्भावना ही नहीं।

भारत में जल शक्ति की प्राप्य सम्भावनाओं की जानकारी हेतु अग्रांकित सारणी का अवलोकन करें—

सारणी 16·3

भारत में जल विद्युत प्राप्त होने की सम्भावनाएँ[1]

(क्षेत्र—राज्य, नदियाँ तथा प्रोजेक्ट के प्रकार पर आधारित-प्रतिशत में)

क्षेत्र व राज्य		नदियों का सम्बन्ध		प्रोजेक्ट का प्रकार	
दक्षिण क्षेत्र आन्ध्र प्रदेश कर्नाटक केरल तमिलनाडु	 6·0 8·2 3·7 1·7	1. दक्षिणी भारत (अ) पश्चिम की ओर बहने वाली नदियाँ (ब) पूर्व की ओर बहने वाली नदियाँ	 10·4 21·0	(अ) बहती नदियाँ (ब) पानी का भण्डारण	25·0 75·0
योग	19·6	योग	31·4		
पश्चिमी क्षेत्र गुजरात मध्य प्रदेश महाराष्ट्र	 1·6 11·2 4·6	2. मध्य भारत की नदियाँ	10·4		
योग	17·4				
पूर्वी क्षेत्र बिहार उड़ीसा पश्चिमी बंगाल	 1·5 5·0 0·1				
योग	6·6	योग	10·4	योग	100·0
उत्तरी क्षेत्र हिमाचल प्रदेश जम्मू एण्ड कश्मीर पंजाब एण्ड हरियाणा राजस्थान उत्तर प्रदेश	 4·5 8·7 3·3 0·4 9·2	3. गंगा बेसिन 4. सिन्ध बेसिन (जितना भाग भारत में है)	11·4 16·0	(अ) उच्च शीर्ष* वाला (High Head) (ब) मध्यम शीर्ष** वाला (Medium Head) (स) निम्न शीर्ष*** वाला (Low Head)	33·1 58·0 8·9
योग	26·1	योग	27·4		
उत्तर-पूर्व क्षेत्र असम (मेघालय, नागालैण्ड, मिजोरम सहित) मणिपुर	 28·2 2·1	5. ब्रह्मपुत्र बेसिन	30·8		
योग	30·3	योग	30·8	योग	100·0
कुल योग	100·0	कुल योग	100·0		

* जिनकी ऊँचाई 1,000 फीट से अधिक है। ** जिनकी ऊँचाई 100 से 1,000 फीट के मध्य है।
*** जिनकी ऊँचाई 25 से 100 फीट के मध्य है।

1. Smil Vaclov and William E. Knowland, ed. **Energy in the Developing World** (New York : Oxford University Press, 1980), p. 180. * अनाधिकृत स्रोत से उद्धृत है।

उपर्युक्त सारणी बताती है कि देश के उत्तर-पूर्व क्षेत्र में जल विद्युत ऊर्जा की सर्वाधिक सम्भावनाएँ (30·3 प्रतिशत) हैं। दूसरे स्थान पर उत्तरी क्षेत्र (26·1 प्रतिशत) आता है। यह वह क्षेत्र है जहाँ सामान्यतया अन्य ऊर्जा संसाधन विशेषतः कोयला नहीं है। अतः व्यावहारिक रूप में इस प्रकार की ऊर्जा उस कमी को भी पूरा करती है जहाँ ऊर्जा पहुँचाने की कठिनाई है।

(2) आण्विक ऊर्जा (Nuclear Energy) : भारत में आण्विक ऊर्जा का उत्पादन कुल देश की ऊर्जा उत्पादन का लगभग 2·6% है। प्रति वर्ष के उच्च लक्ष्य निर्धारण पर कुल उत्पादन में वृद्धि होती है। सन् 1996-97 में यह लक्ष्य 250 बिलियन यूनिट* रखा था जिसमें आण्विक ऊर्जा का भाग लगभग 6·76 बिलयन यूनिट (अर्थात् लगभग 2·7%) था।

भारत आज विश्व के उन तेरह इने-गिने देशों (संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, यू.के. फ्रान्स, कनाडा के बाद) में आता है जिन्हें 'आण्विक ऊर्जा केन्द्र' डिजाइन करने, बनाने, स्थापित करने और चलाने की स्वतन्त्र रूप से जानकारी हासिल है। अतः इसी विश्वास पर देश में ऊर्जा की कमी को पूरा करने लिए इस क्षेत्र में सन् 2,000 तक 10,000 MWe ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया हुआ था। जिसे हम अभी तक भी पूरा नहीं कर पाये हैं।

वर्तमान में सात आणविक ऊर्जा केन्द्र, (तारापुर—2×160, राजस्थान—2 × 220, मद्रास—2 × 235 और नरोरा—1 × 235) कुल 1,465 MWe शक्ति के कार्यरत हैं। सात केन्द्र, (नरोरा—1 × 235, ककरापार (गुजरात)—2 × 235, राजस्थान—2 × 235, और काइगा (कर्नाटक)—2 × 235) = 1,645 MWe निर्माणाधीन हैं। इसके अतिरिक्त 16 आणविक केन्द्रों (काइगा—4 × 235, तारापुर—2 × 500, राजस्थान—4 × 500 और कुदानकुलम—2 × 1000 + 6 × 500) = 8,940 MWe शक्ति की योजना को अन्तिम रूप दिया जा रहा है। यह आशा है कि निकट भविष्य में 12,050 MWe उर्जा इस क्षेत्र में बनने लगेगी।

आण्विक ऊर्जा के लिए इस समय 'यूरेनियम' (U_{237}) का प्रयोग किया जा रहा है जिसका देश में कुल भण्डारण 22,000 टन आंका गया है जो अत्यन्त सीमित है, लेकिन दूसरे चरण में प्लूटोनियम तथा यूरेनियम (U_{238}) का प्रयोग होगा (प्लूटोनियम, U_{237} के उपयोग के बाद निकाला गया तत्त्व है)। तीसरे और अन्तिम चरण में U_{233} थोरियम का उपयोग किया जाना है जिसके देश में विशाल भंडार हैं। एक सर्वे[1] के अनुसार केरल, रांची (पश्चिमी बंगाल) तथा बिहार में 4,50,000 टन थोरियम उपलब्ध है। इससे असीमित ऊर्जा उत्पादन सम्भव है जो 5 मिलियन Twh (पाँच मिलियन ट्रिलियन वाट प्रति घंटा) तक हो सकती है। यह वर्तमान ईंधन (यूरेनियम) से सन् 2,000 तक निर्धारित लक्ष्य 500 Twh से दस हजार गुना है।

इस ऊर्जा पर व्यय अधिक है जो भारत जैसे देश के लिए सामान्यता बहुत कठिन कार्य है तथा इसके विकिरण से होने वाले शारीरिक विकार के कारण भी इसे अधिक उत्साह नहीं मिल सकेगा।

2. गैर वाणिज्यिक उपयोग हेतु (For Non-commercial Use)

(1) सौर ऊर्जा (Solar Energy) : भारत जैसे देश में जहाँ वर्ष के अधिक समय में प्रचण्ड गर्मी पड़ती है, अर्थात् सूर्य का तेज प्रकाश मिलता है, सौर ऊर्जा का बहुत व्यापक उपयोग किया जा सकता है। वैसे भी वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत के रूप में सूर्य एक ऐसा असीमित प्रकाश भण्डार है जो पृथ्वी के जन्म के साथ ही (कई अरब वर्ष पूर्व) जन्मा और तब से आज तक निरन्तर प्रतिक्षण अपनी 40 लाख टन हाइड्रोजन को जलाकर इतने ही टन हीलियम में परिवर्तित कर प्रकाश पुंज बना हुआ है तथा विशाल ऊर्जा उत्पन्न कर रहा है। इस विशाल ऊर्जा का कुछ भाग विकिरण द्वारा पृथ्वी पर पहुँचता है जिसका उपयोग उपकरणों की सहायता से ताप ऊर्जा तथा विद्युत ऊर्जा के रूप में किया जा रहा है।

भारत को सौर ऊर्जा 5,000 ट्रिलियन kwe प्रतिवर्ष मिल रही है, जो पूरे देश की अगली कई शताब्दियों तक की आवश्यकता से भी अधिक है (प्रतिदिन का औसत 4-7 kwe प्रति वर्ग मीटर होता है)।

अपने देश में सौर ऊर्जा को तापीय ऊर्जा में बदल कर सोलर कुकर, सोलर वाटर हीटर, सौर वायु-तापक, सौर हरित गृह, सौर प्रशीतन, सौर पम्पन, सौर-औद्योगिक प्रक्रिया तापन आदि में काम लिया

---

* अनाधिकृत स्रोत से उद्धृत है।

1. Smil Vaclov and William E. Knowland, ed., Ibid.

जा रहा है। विद्युत ऊर्जा के रूप में परिवर्तित कर विद्युत प्रकाश, रेडियो तथा टी. वी. चलाने में भी देश ने काफी सफलता पाई है। भारत में इन उपयोगों को जनता तक पहुँचाने हेतु 20 गाँवों में सोलर गाँव का रूप दिया है जहाँ जल पम्प, घरेलू प्रकाश, सड़कों के खम्भों की लाइटें समुदायिक टी. वी. सौर विद्युत के सहारे चल रहे हैं। शनैः-शनैः इसकी आम आदमी द्वारा रुचिपूर्वक प्रयोग किये जाने की सम्भावना बहुत बढ़ रही है।

इस ऊर्जा के सबसे मुख्य लाभ में—(1) प्रकाश ऊर्जा का अथाह भण्डार तथा (2) प्रदूषण रहित ऊर्जा है। सौर ऊर्जा से चलने वाले उपकरण महँगे हैं और उनका प्रारम्भिक व्यय भी कुछ अधिक ही है, लेकिन इसके बाद फिर कोई व्यय न होना भी कम लाभप्रद नहीं है।

नये प्रयोगों में अन्नामलाई विश्वविद्यालय, IIT खड़गपुर तथा बम्बई और कृषि विश्वविद्यालय लुधियाना ने सौर ड्रायर के प्रयोग से धान, मिर्चें, गोला आदि अनेक वस्तुओं को कम समय में सुखाकर व्यापार के लिए नई दिशा खोली है।

खारे पानी को सौर ऊर्जा से मीठे पानी में परिवर्तन के प्रयोग भी सफल हो रहे हैं और यदि व्यापक रूप से इसमें सफलता प्राप्त हुई तो पीने के पानी की उपलब्धता की बहुत बड़ी परेशानी से छुटकारा मिल जायेगा। सबसे बड़ी यह बात होगी कि इसके लिए कोई बड़े संयन्त्र की समस्या न होकर केवल गाँव स्तर पर स्वनिर्मित उपकरण (Improvised Apparatus) से ही यह कार्य सम्भव हो सकेगा।

इस ऊर्जा से गाँवों में परम्परागत ऊर्जा की कमी का अहसास भी नहीं होगा और वहाँ के अधिकांश लोगों की सभी आम जरूरतें पूरी होंगी, ऐसा विश्वास किया जा सकता है। अभी खास समस्या सौर ऊर्जा के भण्डारण की है, जिस पर निरन्तर शोध कार्य चल रहे हैं।

(2) लहरों से ऊर्जा (Energy from Waves) : अब तक सैद्धान्तिक रूप से केवल जानकारी रखने वाले देश भारत ने अपना पहला 'लहरों से ऊर्जा' प्रोजेक्ट के संचालन में सफलता प्राप्त कर विश्व में अपनी प्राथमिकी दर्ज करा दी है। 'समुद्री विकास के केन्द्रीय विभाग' (Union Government of Ocean Development) के तत्वावधान में 'समुद्री इंजीनियरिंग केन्द्र, आई. आई. टी. मद्रास' (Ocean Engineering Center, IIT, Madras) के 'वेव इनर्जी ग्रुप' (Wave Energy Group) ने 150 mw शक्ति के इस प्रोजेक्ट का कार्य 'स्टेट हार्वर इंजीनियरिंग डिपार्टमेन्ट त्रिवेन्द्रम' (State Harbour Engineering Department, Trivandrum) में सम्पन्न किया है।

इस ऊर्जा स्रोत के दो मुख्य लाभ हैं : (1) इससे कोई प्रदूषण की सम्भावना नहीं है और (2) यह निरन्तर चलने वाली अथकनीय लहरों के संचालन पर आधारित है; अतः इससे वर्षपर्यन्त ऊर्जा प्राप्त हो सकती है।

इस उत्पादन में संयन्त्र का व्यय भी बहुत अधिक नहीं है, पर चूँकि यह समुद्र अथवा विशाल जल संग्रह केन्द्र पर ही सम्भव है, अतः देश में व्यापक रूप से यह लाभप्रद नहीं है।

(3) पवन ऊर्जा (Wind Power) : वायु द्वारा संचालित पवन संयन्त्र (Wind Mills) का उपयोग बहुत पुराना होने पर भी भारत में बहुत अधिक लोकप्रिय नहीं बना है, लेकिन जब वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत की बात चली है तो यह एक अच्छा स्रोत हो सकता है। गुजरात, महाराष्ट्र, केरल, तमिलनाडु, उड़ीसा के समुद्री किनारों के पास जहाँ वायु वेग अधिक है वहाँ यह अत्यन्त सफल हो सकती है (यह उल्लेखनीय है कि वायु ऊर्जा[1] अपने वेग की घनीय मात्रा के तुल्य होती है, लेकिन 16 किमी प्रति घंटे से कम वेग वाली वायु पर ऊर्जा की मात्रा नगण्य है)।

वर्तमान में मध्य भारत के गंगा-सिंधु के मैदानी क्षेत्र में पवन ऊर्जा की सहायता से अनेक जगह 30 मीटर तक की गहराई से पानी खींचने तथा छोटे घरेलू आवश्यकता की पूर्ति कर देने वाले 2 kwh के विद्युत संयन्त्र काम कर रहे हैं।

---

1. The Energy in the wind varies as the cube of its velocity, but below 16 km per hour, there may be very little energy.
—Source : Alternative Technology : Edited by K. D. sharma and M. A. Qureshi, Indian Institute of Advance Study, Simla, 1979. p. 83.

अपने देश में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार 'पवन ऊर्जा' का उत्पादन 45,000 MWe तक सम्भव है, जबकि वर्तमान में केवल 1,080 MWe का ही उत्पादन हो रहा है जो 1% से भी कम है।

इस ऊर्जा की भी विशेषता यही है कि किसी प्रकार का रख-रखाव सहित, कोई व्यय नहीं है और प्रदूषण मुक्त है। अपने देश में इस ऊर्जा के अधिकाधिक उपयोग की सम्भावनाओं पर विचार करना चाहिए।

(4) वन उत्पाद (लकड़ी) से ऊर्जा [Energy from Forest Produce (Wood)] : आजादी के बाद सन् 1951 में भारत सरकार द्वारा अधिगृहीत वन क्षेत्र 75 mh माना गया जो कुल भू-क्षेत्र 329 mh का लगभग 23% है। इसमें से 60% अर्थात् 45 mh भाग को वन उत्पाद के रूप में प्रयोग करने के हेतु अंकित किया गया तथा शेष 40% को रिजर्व क्षेत्र में रखा गया। इन अंकित वन क्षेत्रों से इमारती लकड़ी, खेल का सामान, फर्नीचर, रेल के डिब्बे और स्लीपर आदि के अतिरिक्त विशेष रूप से जिन-जिन्सों पर अधिक व्यय हुआ है वह—(1) घरेलू ईंधन तथा (2) शवदाह हैं। बड़े-बड़े कारखानों की भट्टियों में भी लकड़ियों को काम में लिया जाता रहा है। एक सर्वेक्षण के अनुसार केवल जलाऊ ईंधन के रूप में ही लगभग 126 मिलियन टन लकड़ी प्रति वर्ष व्यय हो जाती है और व्यय इसके अतिरिक्त हैं; जिस पर भी यदि इतना ही व्यय भार और मानें तो लगभग 250 मिलियन टन लकड़ी का व्यय प्रति वर्ष वन क्षेत्रों में से हो रहा है। इतनी लकड़ी लगभग 400 मिलियन घन मीटर लकड़ी से प्राप्त हो सकती है, जिससे पूरा देश ही प्रभावित होगा।

अतः इस स्रोत का उपयोग यदि बेहद आवश्यकता के लिए ही करें तो ही उचित रहेगा। अन्यथा इसे ऊर्जा के स्रोतों की गणना से बाहर कर दें यही श्रेयस्कर है।

(5) फसल अवशिष्ट तथा उपले (Agriculture Waste & Cow Dung) : यह देश कृषि प्रधान देश है। भारत की अधिकांश आबादी गाँवों में रहती है, अतः **गाँवों के लोग** अपनी घरेलू ईंधन की आवश्यकताएँ स्थानीय रूप से प्राप्त लकड़ी, फसल अवशिष्ट तथा गोबर से बने उपले से पूरा कर लेते हैं। इन तीनों चीजों का उपयोग क्रमशः 65%, 20% तथा 15% है; **लेकिन जहाँ शहरी क्षेत्र है,** वहाँ यह उपयोग थोड़ा भिन्न होकर लकड़ी 68·5%, तेल अथवा गैस 16·9%, उपले 8·3%, कोयला 2·3%, विद्युत 0·6% एवं अन्य 3·4% है।

इन दोनों प्रकार की आबादियों में लकड़ी का उपयोग लगभग 65 से 70% है, जिसे कम करने अथवा न करने की चर्चा अभी हम पहले कर चुके हैं। उपलों का उपयोग यद्यपि अधिक मात्रा में मिलने से होता है, लेकिन चूँकि अन्यथा यह एक बहुत अच्छा खाद है जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि हो सकती है। अतः उपलों का प्रयोग भी दूर दृष्टि से राष्ट्र हित में नहीं है।

कृषि अवशिष्ट देश में इतनी भारी मात्रा में उपलब्ध हैं कि यदि उस पूरे का उपयोग ऊर्जा उत्पादन में किया जा सके, तो एक ओर तो खेतों से बेकार संग्रहण को हटाया जा सकता है, दूसरे उसे ऊर्जा उत्पादन जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य में लगाकर अनेक बहुमूल्य ऊर्जा स्रोतों को बचाया जा सकता है। विमल और त्यागी ने इस प्रकार के निरर्थक अथवा प्रयोजनहीन (Wastes) की एक सूची दी है जो ऊर्जा के योग्य है। निम्नांकित सारणी देखें—

सारणी संख्या 16·4
निरर्थक एवं प्रयोजनहीन अवशिष्ट

क्षेत्र	अवशिष्ट
1. कृषि उत्पाद केन्द्र (Agro-processing Centre)	धान के छिलके (Rice Husk), गन्ने की खोई (Bagasse), शीरा (Molasses), खोपरा छिलका (Coconut Shell), मूँगफली के छिलके (Ground-nut Shell), मक्का की गुल्ली (Maize Cobs), आलू तथा कॉफी के बेकार भाग (Potato and Coffee-wastes)।

2. खेत (Farms`	चावल के पुआल (Rice Straw), कपास तथा जूट की डंडिया (Cotton and Jute Sticks)।
3. पशु गृह (Animal Sheds)	उपले (Cow Dung), मुर्गियों की वीट (Poultry Excreta)।
4. जंगल (Forests)	छालें (Barks), छिपटियाँ (Chips), छीलन अथवा क्षौर (Shavings), बुरादा (Sawdust)।
5. नगरपालिका अवशिष्ट (Municiple Waste)	शहरी कूड़ा (City Refuse), मल (Sewage)।
6. औद्योगिक अवशिष्ट (Industrial Waste)	कपड़े उद्योग अवशिष्ट (Textile Waste), प्लास्टिक अवशिष्ट (Plastic Waste)।

इनका शत-प्रतिशत उपयोग किया जाना अपेक्षित है।

(6) पधु-धन शक्ति तथा मानव शक्ति (Animal Power and Man Power) : अपने देश भारत में पशु-धन भी अत्यन्त पर्याप्त संख्या में है, जिसमें ऊँट, बैल, भैंसा, खच्चर, गधा से श्रम का कार्य लिया जाता है और ये ऊर्जा के बहुत बड़े भाग की पूर्ति करते हैं। ये खेत जोतते हैं, फसल के पकने पर उसकी घिंटाई करते हैं, सामान ढोते हैं; अतः बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। मनुष्य भी अपने पूरे दिन के कम-से-कम 8 घंटे का परिश्रम करके काफी ऊर्जा में योगदान देता है।

(7) बायो गैस (Bio Gas) : इसे भारत में सामान्यतया गोबर गैस (Gober Gas) के नाम से जानते हैं क्योंकि मूलतः यह पशुओं के गोबर (Cow Dung) से तैयार होती है। अब काफी समय बाद कुछ अन्य पदार्थों, जिनमें मानव मल (Sewage), सब्जियों व फलों की सड़ी हुई रद्दी (Rotten Vegetables and Fruits Waste), जल कुम्भी (Water hyacinth), कृषि तथा उद्योगों के अवशिष्ट (Agriculture and Industries Waste) आदि से भी इसे तैयार किया जा सकता है।

बायो गैस संयन्त्र कार्बनिक युक्त सेल्युलोस (Cellulose containing organic materials) के बिना वायु के किण्वयन (fermentation in the absence of air) से निकलने वाली ज्वलनशील गैस 'मीथेन' के सिद्धान्त पर कार्य करता है। सामान्यतया गोबर के प्रयोग से तैयार की गई गोबर गैस में 65% मीथेन, 30% कार्बन डाइऑक्साइड, 1% हाइड्रोजन सल्फाइड तथा अल्प मात्रा में ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन तथा कार्बन मोनोऑक्साइड गैसें होती हैं। गैस में पाई जाने वाली गंध हाइड्रोजन सल्फाइड के कारण होती है।

संयन्त्र की रचना भी बहुत सरल है। एक बड़े व्यास की गोल टंकी अथवा गोलाकार हौज, जिसे 'डाइजेस्टर' (Digester) कहते हैं, में दो तरफ दो निकास रास्ते होते हैं। मुख्य बर्तन डाइजेस्टर में गोबर अथवा अन्य पदार्थ को डाल देते हैं (घोल—गीला गोबर: पानी = 5 : 4)। इसे गैस होल्डर से ढँक कर बन्द करते हैं। यह गैस होल्डर एक वाल्व के रूप में काम करता है, जो डाइजेस्टर में उत्पन्न होने वाली गैस को निकलने देता है, अन्यथा उसे बन्द रखता है। संयन्त्र के चालू करने के लिए डाइजेस्टर के एक रास्ते से पूर्व में किण्वयन की हुई गोबर की स्लरी (Fermented Dung + Water Slurry) डाल देते हैं। इससे डाइजेस्टर में किण्वयन होता है। गैस होल्डर के निकास से गैस एकत्रित की जाती है अथवा वितरित कर दी जाती है। डाइजेस्टर के एक अन्य निकास रास्ते से काम में आई स्लरी (Slurry) निकलती जाती है, जो खेतों में खाद के रूप में काम में ली जा सकती है। संयन्त्र के चालू रखने के लिए पहले निकास रास्ते से ही और गोबर का घोल (स्लरी) डालते रहते हैं। वर्तमान में अब इस गैस संयन्त्र के नये मॉडल भी डिजाइन हुये हैं, जो सुविधाजनक हैं।

संयन्त्र पर होने वाले व्यय का एक अनुमान[1] सन् 1980 में खादी ग्राम उद्योग कमीशन भारत सरकार (Khadi Village Industries Commission-KVIC, Govt. of India) ने अग्रांकित सारणी के अनुसार प्रसारित किया था (बिल्कुल ताजे आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं)—

1. K. D. Sharma and N. A. Qureshi. ed., **Alternative Technology**, Ibid. p. 138.

सारणी 16·5

बायो गैस उत्पादन मूल्य

मूल्य (रुपयों में)

मद	5000 घन फीट = लगभग 150 घनमीटर प्रतिदिन	100 घन फीट = 3 घनमीटर प्रतिदिन	60 घन फीट = लगभग 2 घन मीटर प्रतिदिन
प्रारम्भिक व्यय	41,000·00	2,500·00	1,500·00
आवर्तक व्यय प्रतिवर्ष (A)	4,350·00	265·20	159·12
रख-रखाव व्यय प्रतिवर्ष (B)	2,381·00	47·62	28·62
श्रम (मजदूर) व्यय प्रतिवर्ष (C)	5,475·00	109·50	65·70
प्रतिवर्ष कुल व्यय (A + B + C)	12,206·00	422·32	253·44
ऊर्जा मूल्य (पैसा प्रति kwh)	4·95	8·57	8·57
वर्तमान विद्युत दर (पैसा प्रति kwh)	11·0	11·0	11·0

उपर्युक्त सारणी में नवीनतम मूल्य डाल कर फिर ऊर्जा की दरों में तुलना करें।

आँकड़े पुराने होने से आज की कीमत से इन मूल्यों की तुलना नहीं करें। यहाँ सारणी देने का आशय केवल मात्र इतना है कि बायो गैस का उत्पादन मूल्य केवल 5 पैसे प्रति kwh पड़ता है, जबकि विद्युत दर 11 पैसे है। अर्थात् ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में बायो गैस का उत्पादन न केवल ऊर्जा समस्या को हल करता है बल्कि आर्थिक रूप से भी लाभकारी है। स्लरी के रूप में मिलने वाली खाद इसके अतिरिक्त लाभप्रद है।

व्यावहारिक रूप से इसका प्रयोग कितना सहज सम्भव है, यह निम्नांकित सारणी में देखें—

सारणी 16·6

गोबर गैस उत्पादन की व्यावहारिकता

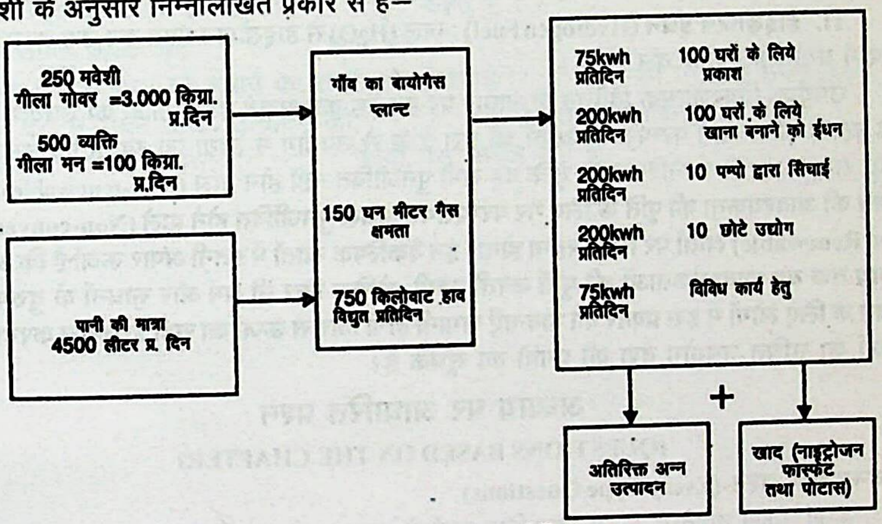
संयंत्र की प्रतिदिन गैस उत्पादन क्षमता (घन मीटर)	अनुमानित पशुओं की संख्या*	गीले गोबर की प्रतिदिन आवश्यकता** (किलोग्राम)	कितने व्यक्तियों के लिए उपयुक्त
1	2-3	25	3-4
2	4-5	50	5-8
3	6-7	75	9-12
4	8-9	100	13-16
5	10-12	125	16-20
6	12-14	150	21-24
8	16-18	200	28-32
10	20-22	250	36-40

* भारत में औसत एक पशु की गोबर मात्रा 11·45 किग्रा प्रतिदिन है।

** एक मैट्रिक टन गीले गोबर (1000 किग्रा) से 67·10 घन मीटर बायो गैस का उत्पादन होता है।

उपर्युक्त सारणी के आधार पर एक 5-8 व्यक्तियों के छोटे परिवार के लिए 2 घन मीटर (6·0 घन फीट) क्षमता का संयंत्र यथेष्ट है, जिसके लिए औसतन 50 किग्रा गीला गोबर (4 पशुओं से प्राप्त) सहज ही उपलब्ध हो सकता है।

एक सौ घर वाले 500 मनुष्यों वाले गाँव, जिसमें 250 की संख्या में मवेशी हैं, उसमें लगभग 150 घन मीटर क्षमता का बायो गैस संयंत्र लगाने पर आवश्यकतानुसार ऊर्जा की सभी माँगें पूरी हो सकती हैं, जिसमें 100 घरों के लिए प्रकाश व्यवस्था, खाना बनाने की ईंधन पूर्ति, सिंचाई के लिए 10 जल पम्पों के लिए ऊर्जा, 10 छोटे उद्योगों को विद्युत तथा अन्य कार्यों हेतु भी ऊर्जा सम्मिलित है। यह विश्लेषण शर्मा और कुरैशी के अनुसार निम्नलिखित प्रकार से है—



चित्र 16·2—बायो गैस का कार्य विवरण

यह गैस ग्रामीण क्षेत्र की सभी आवश्यकताएँ पूरी कर सकती है। गाँव स्वयं आत्मनिर्भर हो सकते हैं। इस गैस की खाद पर मच्छर नहीं आते; गैस अधिक ज्वलनशील, गन्धहीन, रंगविहीन तथा स्वाद रहित होती है, न यह जहरीली है।

देश में वर्तमान में लगभग 30 लाख बायो गैस संयंत्र लगे हैं जो पूरे देश की क्षमता का लगभग 25% है।

8. भू-तापीय ऊर्जा (Geothermal Energy) : पृथ्वी के अन्दर चट्टानों के नीचे कई ऐसे स्थल हैं जहाँ अत्यधिक ताप है और यह ताप कभी गर्म पानी के स्रोतों के रूप में और ज्वालामुखी फटने के समय गर्म लावा के रूप में बाहर निकलता है। इस ताप को ऊर्जा के रूप में प्रयोग लेने के प्रयास पिछले कई वर्षों से किये हैं और इनसे सफलतापूर्वक विद्युत उत्पन्न करने अथवा शीत भण्डारण (Cold Storage) चलाने हेतु उपयोग किये हैं। विश्व के वह तमाम हिस्से जो ज्वालामुखी क्षेत्र में आते हैं, इस प्रकार की ऊर्जा के उत्पन्न करने के अच्छे केन्द्र बन सकते हैं, जिनमें प्रशान्त महासागर के तटीय भाग अलस्का से चिली तक, न्यूजीलैण्ड से इन्डोनेशिया तथा जापान तक, केन्या, युगान्डा, इथोपिया तथा भूमध्यसागर के आस-पास के क्षेत्र विशेष रूप से आते हैं। भारत में लगभग 350 ऐसे क्षेत्रों की जानकारी मिली है, ज़हाँ से भू-तापीय ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है। उत्तर-पश्चिम हिमालय, पश्चिमी घाट, नर्मदा व सोन घाटी और दामोदर घाटी के क्षेत्र में इस ऊर्जा के असीम भण्डार हैं।

9. ज्वारीय ऊर्जा (Tidal Energy) : यह ऊर्जा समुद्र में उठने वाले ज्वार के चढ़ने और उतरने की क्रिया से ही प्राप्त की जा सकती है और इस प्रकार का उत्पादन विश्व के कई देशों ने किया है जिसमें चीन व रूस प्रमुख हैं। भारत में कच्छ और कैम्बे की खाड़ी तथा सुन्दरबन क्षेत्र (हुगली नदी के किनारे) में ज्वारीय ऊर्जा से शक्ति उत्पादन सम्भव है। लक्षद्वीप तथा अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह में भी

संभावनाएँ हैं। इस प्रकार की ऊर्जा की विशेषता यह है कि यह प्रदूषण रहित है तथा चाहे थोड़ी मात्रा में हो, पर अनन्त है और कालान्तर तक मिलने ही वाली है।

10. समुद्री ताप ऊर्जा (Ocean Thermal Energy) : समुद्र की ऊपरी सतह के तापमान (28° से 30° सेल्सियस) तथा बहुत गहराई पर तापमान (5° से 7° सेल्सियस) के अन्तर से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। बिना समाप्त हुये अबाध गति से मिलने वाली ऊर्जा प्रदूषण रहित है, यही इस ऊर्जा की विशेषता है। मध्य समुद्र में भी इस प्रकार की ऊर्जा का उत्पादन करके वहीं पर स्थानीय रूप से इसका उपयोग किया जा सकता है, जिसमें समुद्री खनन, शोध तथा समुद्रीय प्रबन्ध शामिल हैं। भारत में लक्षद्वीप में ऐसा एक प्रयास किया गया है।

11. हाइड्रोजन ईंधन (Hydrogen Fuel) : जल (H_2O) से हाइड्रोजन प्राप्त कर उसे तरल ईंधन के रूप में प्रयोग हेतु शोध चल रहे हैं।

उपर्युक्त विवरणात्मक विवेचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि ऊर्जा का उपयोग निरन्तर बढ़ रहा है और उसमें परम्परागत स्रोतों को इस तेजी से उपयोग में लाया जा रहा है कि उनका बहुत शीघ्र समाप्तप्राय होना निश्चित है। चूँकि वह सभी पुनर्जीवित नहीं होने वाले (Non-renewable) हैं, **अतः विश्व की आवश्यकता की पूर्ति के लिए गैर परम्परागत अथवा पुनर्जीवित होने वाले (Non-conventional and Renewable) स्रोतों पर निर्भर रहना होगा। इन वैकल्पिक स्रोतों में इतनी अपार ऊर्जा है कि असीमित समय तक यह आवश्यकताओं की पूर्ति करती रहेगी, लेकिन फिर भी श्रम और साधनों के दुरुपयोग से बचने के लिए लोगों में इस प्रकार की भावनाएँ जगानी होंगी जिससे ऊर्जा का सही इस्तेमाल करना सीखें। ऊर्जा का उचित उपयोग देश की प्रगति का सूचक है।**

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'ऊर्जा' किसे कहते हैं ? यह किन-किन रूपों में उपलब्ध हो सकती है ?
2. 'ऊर्जा' के उपलब्ध स्रोत कौन-कौन से हैं ? पुनः नवीन न होने वाले ऊर्जा स्रोतों के नाम बताइये।
3. भारत में 'आणविक ऊर्जा' का क्या भविष्य है ? वर्तमान में इस ऊर्जा उत्पादन के क्या लक्ष्य हैं ?
4. 'सौर ऊर्जा' से हम अपनी घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे करेंगे ?
5. 'बायो गैस' एक प्रभावी प्रदूषण रहित लाभप्रद उपकरण है, समझाइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'जलीय ऊर्जा' का उत्पादन कैसे होता है ?
7. वन उत्पाद को ईंधन के रूप में क्यों नकारा जा रहा है ?
8. 'ऊर्जा' की प्राणीमात्र को क्या आवश्यकता होती है ?
9. 'ऊर्जा' के परम्परागत स्रोत क्या-क्या हैं ?
10. 'प्राकृतिक गैस' का मुख्य उपयोग क्या है ? यह किस प्रकार निर्मित होती है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'पवन ऊर्जा' के लिये वायु वेग कम से कम कितना होना चाहिये ?
(अ) 4 किमी प्रति घंटा (ब) 8 किमी प्रति घंटा
(स) 12 किमी प्रति घंटा (द) 16 किमी प्रति घंटा
12. वर्तमान में वाणिज्यिक उपयोग हेतु किस ईंधन का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है ?
(अ) कोयला (ब) लकड़ी
(स) बायो गैस (द) कृषि अपशिष्ट
13. 'सौर ऊर्जा' से कौन-सा कार्य सम्भव नहीं है ?
(अ) गर्म पानी (ब) प्रकाश विद्युत
(स) शव दाह (द) खाना बनाना

14. 'गोबर गैस' (बायो गैस) में गन्ध का क्या कारण है ?
(अ) मीथेन गैस (ब) हाइड्रोजन सल्फाइड गैस
(स) कार्बन मोनोऑक्साइड (द) नाइट्रोजन गैस
15. हाइड्रोजन ईंधन प्राप्त करने का मुख्य स्रोत क्या रहेगा ?
(अ) गंधक का अम्ल (H_2SO_4) (ब) नमक का तेजाब (HCl)
(स) पानी (H_2O) (द) हाइड्रोकार्बन्स (HC)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये--

16. किसी कार्य करने की क्षमता को........................कहते हैं ?
17. 'जल शक्ति ऊर्जा' का........................स्रोत है।
18. ग्रामीण क्षेत्र में ईंधन को बचाने का सबसे सरल उपाय........................का उपयोग करना है।
19. अपने देश में 'पवन ऊर्जा' उत्पादन की........................MWe तक सम्भावनायें हैं।
20. वर्तमान में देश में लगभग........................'बायो गैस' संयंत्र लगे हैं।

17

सामान्य प्रदूषण
[GENERAL POLLUTION]

● प्रस्तावना
(Introduction)

जब कोई वस्तु किसी अन्य अनचाहे पदार्थों से मिलकर अपने भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों में परिवर्तन ले आती है और वह या तो उपयोग के काम की नहीं रहती अथवा स्वास्थ्य को हानि पहुँचाती है, तो वह प्रक्रिया और परिणाम दोनों ही **'प्रदूषण'** (Pollution) कहलाते हैं। वह पदार्थ अथवा वस्तुएँ जिनसे प्रदूषण होता है **'प्रदूषक'** (Pollutants) होते हैं। प्रदूषण की ऐसी ही व्याख्या अनेक स्थानों पर मिलती है—

> **"प्रदूषण अनचाही वस्तुओं के मिलने से होता है जिंससे प्राकृतिक अथवा मानव कृत पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।"**
>
> **"वायु, जल और भूमि में किसी भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक अनचीते परिवर्तन से, जिससे प्राणीमात्र के स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण को प्रभावी तौर से हानि पहुँचती हो, प्रदूषण कहलाता है।"**

इन परिभाषाओं के आधार पर ही हम यह समझ सकते हैं कि मनुष्य की जीवन प्राथमिकताओं में वायु, जल और भूमि की भी यदि निरापदता नहीं है तो एक अच्छे जीवन की कल्पना भी कैसे की जा सकती है ? निःसन्देह पर्यावरण के प्रदूषण ने मानव जीवन को संकट में भी डाल दिया है और भयग्रस्त भी बना दिया है। इससे बचने के लिए जो भी आवश्यक जानकारी एक सामान्य व्यक्ति को अपेक्षित है वह हम यहाँ देने का प्रयास करेंगे। [हम यहाँ यह भी बताना चाहेंगे कि इस पुस्तक में बहुत उच्चस्तरीय जानकारी की आवश्यकता नहीं है, अतः हम इस सामग्री को अत्यन्त व्यवस्थित कर व नियंत्रित रूप में दे रहे हैं]।

● पर्यावरणीय प्रदूषण
(Environmental Pollution)

'पर्यावरणीय प्रदूषण' एक ऐसा शब्द है जिसका आशय मुख्यतः लोगों के आस-पास के क्षेत्र को प्रदूषित करना है (Environmental Pollution is a term that refers to all the ways in which surrounding of vicinity of people is polluted.)। यह कार्य मुख्यतः लोगों द्वारा ही उनके गलत कार्यों से होता है। धुंऐं और विभिन्न गैसों से वायु खराब होती है जिससे सांस लेना भी कठिन हो जाता है; पानी में अनेक रसायनों तथा आपत्तिजनक स्रावों से वह दूषित हो जाता है जो पीने के पानी की कठिनाई के साथ ही समुद्री जीवों के जीवन को भी नष्ट करता है तथा अधिक रासायनिक खाद और कीटाणुनाशक दवाइयों से मिट्टी की उर्वरता को हानि पहुँचती है जिससे अन्न उत्पादन में कमी की आशंका भी बनी रहती है। यह तीनों प्रकार के प्रदूषण, (1) वायु प्रदूषण (Air Pollution), (2) जल प्रदूषण (Water Pollution) तथा (3) भूमि प्रदूषण (Soil Pollution) मनुष्य तथा अन्य जीवधारियों के लिये अत्यन्त हानिप्रद हैं, जिन पर हम आगे चर्चा करेंगे।

इनके अतिरिक्त भी कई प्रकार के प्रदूषण हैं, जिनका प्राणी जीवन पर बहुत कुप्रभाव पड़ता है। इन सबकी एक समेकित सूची यहाँ दी जा रही है।

• प्रदूषण के प्रकार (Types of Pollution)

मुख्यतः निम्न प्रकार के प्रदूषणों को पर्यावरण के क्षेत्र में सम्मिलित किया जाता है—

1. वायु प्रदूषण (Air Pollution)
2. जल प्रदूषण (Water Pollution)
3. भूमि प्रदूषण (Land or Soil Pollution)
4. ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)
5. वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution)
6. तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)
7. विकिरणीय प्रदूषण (Pollution due to Radiation)
8. समुद्रीय प्रदूषण (Marine Pollution)
9. औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution)
10. कूड़े-कचरे से प्रदूषण (Waste Disposal Pollution)
11. घर तथा उद्योगों से निकलने वाले जलस्राव से प्रदूषण [Domestic and Industrial Waste Water (effluent) Pollution]
12. अन्य प्रकार से प्रदूषण (Pollution from Other Sources)

❑ वायु प्रदूषण (Air Pollution)

(अ) कारण (Causes) :

वायु प्रदूषण में प्रदूषक मुख्यतया गैसें होती हैं तथा कुछ ठोस के सूक्ष्म कण होते हैं, जो घरेलू ईंधन के दहन, वाहन से निकलने वाले उत्सर्ग (exhaust), सड़े-गले पदार्थों तथा कूड़े-करकट से निकलने वाली गैसें तथा विभिन्न प्रकार के उद्योगों के संयन्त्रों की चिमनियों से निकलने वाले धुएँ के रूप में निकलते हैं। इन विभिन्न प्रदूषकों की संख्या अनगिनत है और यह अलग-अलग प्रकार से स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं। इनमें से कुछ मुख्य निम्नांकित सारणी में समेकित हैं—

सारणी 17·1

वायु प्रदूषण फैलाने वाले सामान्य प्रदूषक

प्रदूषक	स्रोत	हानि प्रभाव
1. एल्डीहाइड्स (Aldehydes) : Al	वसा, तेल अथवा ग्लिसरोल की पृथक्कीकरण क्रिया से।	नाक तथा सांस लेने में जलन होती है; बदबू फैलती है।
2. अमोनिया (Ammonia) : NH_3	विस्फोटक पदार्थ, रोगन, उर्वरक तथा रंग बनाने की रासायनिक प्रक्रिया में; शोधक कारखाने तथा ईंधन दहन से।	श्वसन संस्थान में सूजन; आँख और त्वचा को हानि पहुँचाती है।
3. आरसाइन्स (Arsines) : As	आर्सेनिक युक्त तत्वों तथा अम्लों की प्रक्रिया से; धातु जोड़ने वाले टाँके से।	रक्त के लाल कणों को नष्ट करता है; गुर्दों को प्रभावित करता है; पीलिया हो सकता है।
4. कार्बन मोनोक्साइड (Carbon Monoxide) : CO	वाहनों और उद्योगों में अधजले हाइड्रोकार्बन्स तथा ईंधन दहन से।	रक्त में ऑक्सीजन की कमी करता है; सिर दर्द, दृष्टि दोष और स्नायु सम्बन्धी रोग हो सकते हैं।
5. क्लोरीन (Chlorine) : Cl_2	कपास तथा आटे के ब्लीचिंग से; क्लोरीन सिलैण्डर के रिसाव से और अनेक अन्य रासायनिक प्रक्रियाओं से।	श्वसन संस्थान को प्रभावित करता है; आँखों में जलन नाक में तकलीफ के कारण सांस लेने में कठिनाई।

6. हाइड्रोजन साइनाइड (Hydrogen Cyanide): HCN	भट्टियों के दहन, धूम्रीकरण और रासायनिक पदार्थों के निर्माण से।	गले में खुश्की, धुँधली दृष्टि, सिर दर्द आदि।
7. हाइड्रोजन फ्लोराइड (Hydrogen Fluoride): HF	पेट्रोलियम शुद्धीकरण, एल्युमिनियम और उर्वरक के उत्पाद से।	सांस के साथ शरीर में प्रवेश कर सभी स्थानों पर क्षय करता है।
8. हाइड्रोजन सल्फाइड (Hydrogen Sulphide); H_2S	रिफाइनरीज तथा रासायनिक कारखानों से; पेपर मिल्स तथा दूषित पानी के शुद्धीकरण संयन्त्र से।	गले और आँखों में जलन; मिचली लाता है। सिर दर्द और नींद न आने की बीमारी होती है।
9. नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides): NO_X	वाहनों के निष्कासन से, सॉफ्ट, कोयले के दहन से; पेट्रोलियम पदार्थों के उपयोग से।	फेफड़ों पर प्रभाव डालता है।
10. सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide): SO_2	कोयला और तेल के दहन से।	छाती में जकड़न, सिरदर्द, उल्टी तथा श्वसन संस्थान की बीमारियों से मृत्यु तक; तेजाबी वर्षा से फसल और इमारतों को हानि।
11. सस्पेन्डेड पार्टीकल्स (Suspended Particulate Matter): SPM	कारखानों की चिमनियों से।	आँखों की जलन, छींकना, केन्सर का कारण।
12. पारे की भाप (Mercury Vapours): Hg	पारे के शोधन संयन्त्र से, प्रयोगशाला में पारे के उपयोग से तथा पारेयुक्त कीटनाशक से।	सूँघने पर बेहोशी, मिनीमाटा रोग होना।
13. केडमियम (Cadmium): Cd	धातु (Cd) निकालने वाले संयन्त्र, इलैक्ट्रोप्लेटिंग, कैडमियम पदार्थों के वैल्डिंग तथा ताँबा, जस्ता और शीशे के शोधन में अतिरिक्त उत्पादन के रूप में; कीटनाशक दवाइयों तथा खादों से।	अधिक विषैला; गुर्दे को हानि पहुँचाता है, ब्रोन्काइटिस, हृदय, जिगर व मस्तिष्क के रोग; आँतों में सूजन; कैंसर की सम्भावना।
14. फॉस्फोरस (Phosphorous): P	फॉस्फेट वाली खादें; मोटर वाहन तथा जहाजों में क्षय रोकने के उपयोग में।	त्वचा में जलन, विषैला असर तथा नाड़ी संस्थान को हानि पहुँचाता है।
15. बोरोन (Boron): B	बोरोन शोधक संयंत्र से; पेट्रोल में मिलाने पर; कोयले के दहन से।	चिड़चिड़ापन तथा सूजन आ जाती है; नाड़ी सस्थान को प्रभावित करता है।
16. बैन्जपायरीन (Benzpyrene)	यह तम्बाकू धूम्रपान, धुएँ और गैसोलीन निस्सारण से निकलती है।	अत्यन्त विषैली तथा कैन्सर का कारण है।
17. स्मोग (Smog)	यह पानी के कण तथा वायुमण्डल में कई अन्य प्रदूषक (SPM) तथा NO_X, ओजोन (O_3) तथा आर्गेनिक ऑक्साइड से बनती है।	दम घुटने से मृत्यु तक सम्भव है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures) :

1. **घरेलू ईंधन** दहन से छुटकारा पाना स्वयं ही अपने आप निरन्तर परम्परागत स्रोतों की कमी के कारण हो रहा है। उसके स्थान पर कुकिंग गैस, बायो गैस और सोलर उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। पुरानी पद्धति में भी निर्धूम चूल्हे तथा नवीन विकसित प्रणाली के चूल्हे और स्टोव से काफी परिवर्तन आया है।
2. **वाहन से निकलने वाले उत्सर्गों** के लिए कुछ उपाय वाहन-प्रदूषण वाले अध्याय में दिये हैं। कृपया उसका अवलोकन करें।
3. **विशेषतः वायु-प्रदूषण औद्योगिक क्रान्ति के बाद बढ़ा है।** विभिन्न प्रकार के संयन्त्र अनेक प्रकार के प्रदूषक बाहर निकालते हैं, जिनमें से कुछ के प्रभाव सारणी संख्या : 17·1 में दिये हैं। विविध संयन्त्रों से निकलने वाले विभिन्न अन्य प्रदूषक तथा उनकी **'सहन सीमा'** (Tolerance Level) में रुचि रखने वाले पाठक अपने **'राज्य के प्रदूषण निवारक एवं नियंत्रण मण्डल'** (State Pollution Prevention and Control Board) से सम्पर्क कर सकते हैं।

❑ जल प्रदूषण (Water Pollution)

जल प्रदूषण से तात्पर्य उस जल से है जिसमें कोई विजातीय (घुलनशील अथवा अघुलनशील) वस्तु मिल गई हो और जिसमें वस्तुतः उसके भौतिक, रासायनिक एवं जैविक तत्त्वों में परिवर्तन आ जाने के कारण उसके मौलिक गुणों में भी परिवर्तन आ गया हो।

यह जल अपनी गुणवत्ता खो देता है और मनुष्य, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे और यहाँ तक कि कृषि और उद्योगों के लिए भी हानि पहुँचाता है। इसे प्रदूषित अथवा अशुद्ध जल कहते हैं।

जो वस्तुएँ जल में मिलकर उसे प्रदूषित करती हैं, वह प्रदूषक (Pollutants) कहलाती हैं।

(अ) जल प्रदूषण के कारण (Causes of Pollution of Water)

जल के प्रदूषित होने के कई कारण हैं और उन कारणों के पीछे या तो मनुष्य द्वारा उसका अनुचित उपयोग होता है अथवा उसके कुछ अप्राकृतिक कृत्य इसका कारण बनते हैं। बढ़ती आबादी के साथ अधिक अन्न की आवश्यकता और अनेक अन्य आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति हेतु औद्योगिक क्षेत्र की बाहुल्यता ने अप्रत्यक्ष रूप से जल प्रदूषण में भारी वृद्धि की है। इसके अलावा भी दैनिक जीवन में मनुष्य के कार्य करने के साथ-साथ किसी न किसी प्रकार जल प्रदूषित होने की सम्भावना बनी रहती है। इनका समेकित विवरण निम्नांकित है—

1. मनुष्य के दैनिक कृत्यों से गन्दगी : हम प्रतिदिन नहाते हैं, कपड़े धोते हैं, भोजन पकाते हैं, बर्तन माँजते हैं। उस सब में पानी का ही प्रयोग होता है। लेकिन उस कार्य के बाद वह पानी प्रदूषित हो जाता है और पीने या अन्य किसी ऐसे कार्य में नहीं आ सकता जहाँ शुद्ध जल की आवश्यकता हो। अनचाहे जगह मल-मूत्र विसर्जन (विशेषतः पानी के स्रोतों के आस-पास)और सीवरेज लाइन से गन्दा मल और पानी जब अन्य जल स्रोतों में मिल जाता है तब उन स्रोतों का समस्त जल अशुद्ध अथवा प्रदूषित हो जाता है। यह जल प्रदूषण का मुख्य और सबसे बड़ा कारण है।

2. औद्योगिक अपशिष्ट : औद्योगिक इकाइयों द्वारा उपयोग में ले लिए गये जल में अनेक प्रकार के लवण, अम्ल, क्षार, गैसें तथा रसायन घुले होते हैं। जल में घुले हुए ये औद्योगिक अपशिष्ट सीधे ही इकाइयों से निकलकर नदी, तालाब, झील अथवा अन्य जल स्रोतों में प्रवाहित कर दिये जाते हैं जिनसे मनुष्य, जीव-जन्तु, वनस्पति सभी जो उस जल का उपयोग करते हैं, प्रभावित होते हैं। बढ़ते औद्योगीकरण के साथ प्रदूषण की वृद्धि की सम्भावना बढ़ रही है।

3. अपमार्जक (डिटरजेन्ट) : बढ़ती हुई औद्योगिक प्रगति के फलस्वरूप सफाई के लिए नये-नये अपमार्जक (डिटरजेन्ट) बाजार में आ गये हैं। इनका उपयोग भी दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। जब अपमार्जक पानी में घुलकर जलाशयों में पहुँचते हैं तो पानी की सतह पर इनके ठोस कणों की पतली पर्तें बन जाती हैं। इन परतों के कारण सूर्य का प्रकाश जल में प्रवेश नहीं कर पाता, जिसके परिणामस्वरूप जल में ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में नहीं घुल पाती और जल प्रदूषित हो जाता है। ऑक्सीजन की कमी होने से जल जीवों तथा वनस्पति पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

4. कृषि रसायन : उत्पादन बढ़ाने के लिए खेतों में रासायनिक खादों का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। वर्षा के जल के साथ इनकी एक अच्छी मात्रा नदी, तालाबों एवं झीलों या अन्य जल स्रोतों में

चली जाती है। इसके फलस्वरूप जल में शैवाल वनस्पति बढ़ जाती है। शैवाल द्वारा अपने विकास में जल की अधिकांश ऑक्सीजन के उपभोग कर लेने से जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। इससे जल जीवों तथा मानव पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

5. कीटनाशी रसायन : फसलों को कीड़ों से बचाने तथा उनके संरक्षण के लिए अनेक प्रकार के कीटनाशक रसायनों का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। खेती में उपयोग के बाद विषैले रसायन वर्षा के पानी में घुलकर नदियों एवं तालाबों तक पहुँचते हैं और जल को प्रदूषित कर देते हैं।

6. औद्योगिक तापीय प्रदूषण : विभिन्न प्रकार के उद्योगों में संयन्त्रों को ठण्डा करने के लिए जल का उपयोग किया जाता है तथा उपयोग के बाद उष्ण जल को नदी, तालाबों तथा अन्य जल स्रोतों में प्रवाहित कर दिया जाता है। इससे जल स्रोतों का तापमान बढ़ जाता है और प्राकृतिक सन्तुलन के बिगड़ने से जीवों की क्षति होती है।

7. खनिज तेल : समुद्रों के जल मार्ग में खनिज तेल ले जाने वाले जहाजों के दुर्घटनाग्रस्त होने से अथवा उनके द्वारा भारी मात्रा में तेल के जल सतह पर छोड़ने से तो जल प्रदूषण होता ही है, लेकिन भूमि पर भी तेलों के बिखरने के कारण जल प्रदूषण होता है। भूमि पर बिखरने वाला तेल मिट्टी के साथ बहकर जलाशयों में पहुँचकर प्रदूषण फैलाता है।

8. शवों के जल प्रवाह से प्रदूषण : नदियों के किनारे बसे नगरों में शवों को जल में प्रवाहित किये जाने का प्रचलन है। जीवाणुओं सहित मानव एवं पशुओं के शव नदियों में प्रवाहित कर दिये जाते हैं। इससे नदियों का जल प्रदूषित हो जाता है। कई स्थानों पर जली, अधजली लाश, प्रज्वलित अग्नि और राख को नदी में प्रवाहित कर देते हैं जिससे जल के तापमान में वृद्धि होती है और जल प्रदूषित हो जाता है।

(ब) जल के मुख्य प्रदूषक तत्त्व (Main Pollutants in Water)

जल में मिश्रित प्रदूषक तत्त्व मानव, वनस्पति एवं जीव जन्तुओं पर दुष्प्रभाव छोड़ते हैं। कुछ प्रदूषक तत्त्व तो तत्काल दुष्प्रभाव प्रदर्शित कर देते हैं और कुछ धीरे-धीरे अपना असर दिखाते हैं। जल में मिले हुए प्रदूषक तत्त्वों के शीघ्र प्रभाव के रूप में अनेक बीमारियाँ जन्म लेती हैं। पानी में मिश्रित तत्त्व जब एक सीमा से अधिक मात्रा में पानी में घुल जाते हैं तो उनका मानवीय स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इनमें से कुछ निम्न हैं—

1. फ्लोराइड (Fluorides) : अकार्बनिक फ्लोराइड बहुत ही जहरीला पदार्थ होता है। इसकी लगातार मात्रा लेने से वजन का कम होना, खून की कमी, दाँतों की बीमारियाँ, अंगों का असाधारण विस्तार, हड्डियों का मुड़ जाना, जोड़ों में दर्द आदि बीमारियाँ हो जाती हैं। फ्लोराइड पश्चिमी राजस्थान के भूमिगत जल में पाया जाता है। जल में फ्लोराइड की मात्रा 1 पी. पी. एम. से अधिक होने पर बच्चों के दाँतों में छेद हो जाते हैं। 1·5 पी. पी. एम. से अधिक होने पर दाँतों पर धब्बे पड़ जाते हैं तथा दाँतों की चमक समाप्त हो जाती है और वे पीले पड़ जाते हैं।

2. सीसा (लैड-Lead) : यह एक जहरीला तत्त्व है जो निर्धारित सीमा से अधिक मात्रा में घुलने पर जन-स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। इससे जिगर और गुर्दे प्रभावित हो जाते हैं; महिलाओं में गर्भपात तथा, हीमोग्लोबिन की कमी और मानसिक ह्रास का कारण जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं।

3. पारा (Mercury) : यह प्रोटोप्लाजमिक जहर है जो रक्त संचारण तन्त्र में अवशोषित होने के बाद लीवर, गुर्दा, स्पलीन एवं हड्डी में जमा हो जाता है। इससे मुँह एवं मसूड़ों पर बुरा असर पड़ता है। अम्लीय पारा बहुत जहरीला होता है। पारे के किसी भी यौगिक की मात्रा लगातार शरीर में जाने से मिनीमाटा रोग हो जाता है।

4. फिनोल (Phenol) : यह कार्बनिक एवं अत्यन्त जहरीला पदार्थ है। यह त्वचा एवं अन्तःझिल्ली को बहुत प्रभावित करता है। 60 इंच क्षेत्र त्वचा पर फिनोल के प्रभाव से ही मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। यह गुर्दे, लिवर, स्प्लीन एवं फेफड़ों पर बुरा असर डालता है। 15 से 20 मिनट तक त्वचा के सम्पर्क में रहने से सिर दर्द, माँशपेशियों में कमजोरी, कम दिखाई देना, कम सुनना तथा जल्दी-जल्दी श्वाँस के कारण बेहोशी हो जाती है तथा कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है।

5. सोडियम (Sodium) : अत्यन्त सक्रिय तत्त्व होने के कारण यौगिक के रूप में ही पाया जाता है। इन यौगिकों में जहरीलापन केवल धन-आयन के कारण ही होता है।

6. जस्ता (Zinc) : जस्ता स्वयं जहरीला नहीं होता, परन्तु इसके यौगिक थोड़े जहरीले होते हैं। जब जस्ते को गर्म किया जाता है तो जिंक ऑक्साइड बनता है जिससे ब्रास फाउन्डर रोग एवं ब्रास चिलस नामक बीमारियाँ हो जाती हैं। जिंक क्लोराइड की अधिक मात्रा फेफड़ों को खराब कर सकती है। जिंक ऑक्साइड की अधिक मात्रा लेने से तेज उल्टियाँ होने लगती हैं।

7. नाइट्राइड (Nitrides) : बहुत खतरनाक पदार्थ हैं। इससे बच्चों में 'ब्लूबैबी' नामक बीमारी हो जाती है। उल्टियाँ होना तथा त्वचा का रंग गहरा हो जाना इसके मुख्य प्रभाव हैं।

8. पेथोसेनिक बैक्टीरिया अथवा आर्मेनिज़्म (Pathosanic Bacteria or Armanism) : स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक होते हैं। इनसे हैजा, मोतीझरा, इन्फेक्शन, हेपाटाइट आदि बीमारियाँ फैलती हैं। अधिक मात्रा होने पर महामारी भी फैल सकती है।

(स) जल प्रदूषण के दुष्प्रभाव (Effects of Water Pollution)

प्रदूषित जल मानव जाति, समुद्री जीवों तथा जलीय पादपों को हानि पहुँचाता है। इससे उनका जीवन खतरे में पड़ जाता है और वृद्धि भी रुक जाती है।

जल प्रदूषण से सबसे अधिक प्रभाव मानव के स्वास्थ्य पर पड़ता है जिसके अन्तर्गत वह विविध प्रकार के रोगों से ग्रसित हो सकता है जिनमें मुख्यतः 1. अतिसार, 2. पेचिस, 3. जुकाम, 4. श्वास-कास, 5. लकवा, 6. हैजा, 7. मोतीझरा, 8. चर्म रोग, 9. अन्धापन, 10. नारू, 11. कृमि, 12. पीलिया, 13. रतिरोग, 14. शोध तथा अन्य पेट के रोग हैं।

आजकल सबसे अधिक प्रकोप पेय जल में फ्लोराइड की अधिक मात्रा के कारण हो रहा है, जिसमें रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो जाती है, दाँत पीले होकर गिरने लगते हैं तथा हाथ व पैरों की हड्डियों में लचक आ जाती है और शरीर बेडौल हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास चल रहे हैं और विदेशी सहायता से फ्लोराइड वाले क्षेत्रों के पानी में से फ्लोराइड की मात्रा कम करने के उपाय किये जा रहे हैं।

(द) जल शुद्ध करने के उपाय (Ways to Reclaim Pure Water)

जल शुद्ध करने के लिए विभिन्न उपाय जल में होने वाली अशुद्धियों तथा उसकी मात्रा पर निर्भर करता है फिर भी उनका एक संक्षिप्त विवरण, जिन विधियों से अशुद्ध जल को परिष्कृत किया जा सके, यहाँ दिया है—

1. प्राचीन उपाय (Traditional Methods) : (1) कपड़े से छानना, (2) लकड़ी के कोयला से छानना, (3) ताँबे के बर्तन में रखना, (4) उबालना, (5) सूर्य के प्रकाश में रखना, (6) ईंट बुझाना आदि।

2. प्रचलित उपाय (Conventional Methods) : (1) नीचे से क्रमशः कंकड़, गुटिकाओं, मोटी बालू, कोयला चूर्ण व महीन बालू से छानना, (2) फिटकरी, गन्धक, मेंथी (बीज चूर्ण), निर्मली, कमल की जड़ से शुद्धि करना।

3. आधुनिक उपाय (Modern Methods) : (1) कुआँ, बावड़ी में पोटैशियम परमेंगनेट व फिटकरी डालना, नियमित सफाई करना, (2) कुओं को नियमित साफ रखना, ढँककर रखना, (3) बावड़ी में से सीढ़ियाँ हटाना, (4) कुओं और तालाबों के पास का ढलान जल स्रोतों से दूर रखना, (5) नालियाँ व गटर लाइनों को जल स्रोतों से दूर रखना, (6) तालाबों से नियमित मिट्टी निकालना, (7) फिल्टर प्रोसेसिंग पद्धति का प्रयोग करना (फिटकरी, क्लोरीन, मेंथी चूर्ण का प्रयोग), आदि।

4. क्रिया/संक्रिया की दृष्टि से पीने के पानी को साफ करने की विधियाँ (Mechanical Methods for Purification of Water)

(क) भौतिक विधियाँ (Physical Methods)

1. निथारकर : इस विधि में पानी को कुछ समय के लिए तालाब, टैंक या बर्तन आदि में ठहरने देते हैं। इससे अशुद्धियाँ भारी होने के कारण नीचे बैठ जाती हैं और ऊपर साफ पानी आ जाता है।

2. उबालकर : पानी को उबालने से उसमें विद्यमान कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं और घुली हुई अशुद्धियाँ दूर हो जाती हैं। उबला हुआ पानी पीने में स्वाद रहित, फीका एवं अरुचिकर लगता है, परन्तु यह पानी पीने योग्य होता है। इस जल को स्वादिष्ट बनाने के लिए एक बर्तन से दूसरे बर्तन में कई बार उँड़ेलना चाहिए। इससे इसमें वायु मिश्रित हो जाएगी और पानी पीने में अच्छा लगेगा।

3. स्रावण विधि से : यह पानी को शुद्ध करने की सर्वोत्तम विधि है। इसमें पहले पानी को उबालकर भाप में परिवर्तित कर दिया जाता है और फिर उस भाप को शीतकों द्वारा द्रवीभूत कर देते हैं। यह पानी अत्यन्त स्वच्छ और गुणकारी होता है। इस विधि से विलेय-अविलेय दोनों प्रकार की अशुद्धियाँ दूर हो जाती हैं। इस पानी का उपयोग दवाओं तथा रासायनिक कार्यों में अधिक होता है।

(ख) रासायनिक विधियाँ (Chemical Methods)

1. अवक्षेपण या स्कन्धन : कीचड़ वाले पानी को शुद्ध करने के लिए फिटकरी बड़ी उपयोगी है। पानी में फिटकरी घोल देने से मिट्टी आदि अघुलनशील अशुद्धियाँ नीचे बैठ जाती हैं। बैक्टीरिया तथा अन्य तैरने वाली मलिनताओं को फिटकरी दूर कर देती है। प्रायः 1 गैलन पानी के लिए 6 ग्रेन/अथवा 1 लीटर पानी के लिए ½ ग्राम फिटकरी पर्याप्त होती है।

2. निष्संक्रमण : इस विधि के अन्तर्गत ऐसी वस्तुओं को पानी में मिलाया जाता है जिनसे बैक्टीरिया आदि कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। इस कार्य के लिए जो कीटाणुनाशक पदार्थ प्रायः प्रयुक्त किए जाते हैं—लाल दवा या पोटैशियम परमैंगनेट, तूतिया या नीला थोथा, क्लोरीन गैस या टिकियाएँ, ब्लीचिंग पाउडर या विरंजक चूर्ण, चूना, आयोडीन, ब्रोमीन आदि।

(ग) यांत्रिक साधनों द्वारा (By Mechanical Methods)

रासायनिक विधियों से शुद्ध किए हुए जल को पूर्णतः शुद्ध करने के लिए यांत्रिक साधनों का उपयोग किया जाता है। इस विधि में प्रयुक्त होने वाले यन्त्रों को निस्संदक यन्त्र कहते हैं। ये यन्त्र दो प्रकार के होते हैं—एक घरेलू तथा दूसरे सार्वजनिक। यांत्रिक विधि में जल की शुद्धि छानने की रीति से होती है। इस विधि में पहले पानी को तालाबों में लाकर इकट्ठा किया जाता है जहाँ मिट्टी व गंदगी नीचे बैठ जाती है, फिर चौबीस घंटे की धूप व हवा से कीटाणु मर जाते हैं। इसके बाद पानी को दूसरे तालाबों में ले जाते हैं। इन्हें 'फिल्टर बैड्स' कहते हैं। इन तालाबों में रेत व बजरी की मोटी तहें होती हैं। इन तहों में से होकर पानी छनता हुआ नली से होकर जल संग्रहालय में जाता है, जहाँ से सारे नगर को नलों द्वारा वितरित किया जाता है।

☐ भूमि प्रदूषण (Land or Soil Pollution)

(अ) भूमि प्रदूषण (Land Pollution)

भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन, जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े या तथा जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो, भू-प्रदूषण कहलाता है।

(ब) भूमि-प्रदूषण के स्रोत (Sources of Land Pollution)

भू-प्रदूषण की समस्या ठोस अपशिष्ट पदार्थों के निक्षेपण की समस्या का ही दूसरा नाम है। पर वृहद दृष्टिकोण से इसके अन्तर्गत मृदाक्षरण, मृदा के विभिन्न स्रोतों से रासायनिक प्रदूषण, भू-उत्खनन, ज्वालामुखी उद्गार इत्यादि समस्त मानवकृत तथा प्राकृतिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप भूमि से आधारभूत गुणों में होने वाले परिवर्तनों का समावेश भी इस प्रदूषण का कारण बनता है।

सामान्यतया भू-प्रदूषण निम्न कारणों से होता है—

1. घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)
2. नगरपालिका अपशिष्ट (Municipal Wastes)
3. औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes)
4. कृषि अपशिष्ट (Agricultural Wastes)
5. अन्य प्रकार (Other Sources)

(1) घरेलू अपशिष्ट : घरेलू अपशिष्ट के अन्तर्गत मुख्यतः सूखा कचरा तथा रसोई का गीला जूठन सम्मिलित होते हैं। सूखे कचरे में झाड़न-बुहारन के फलस्वरूप एकत्रित धूल, रद्दी, कागज, लकड़ी, पत्तियाँ, काँच या चीनी मिट्टी के टूटे बर्तन, शीशियाँ, टीन के डिब्बे, टायर, प्लास्टिक सामग्री आदि होते हैं।

रसोई से निकले पदार्थों में सब्जियाँ, दालों व फलों के छिलके, सड़े-गले फल, फलों की गुठलियाँ, चाय की पत्तियाँ, अण्डों के छिलके तथा खाने के उपरान्त बची जूठन सम्मिलित होती हैं।

घरेलू कूड़ा-करकट 'लापरवाही व अज्ञानतावश' बहुत से लोग अपने घरों से थोड़ी दूरी पर डालते हैं। गाँवों में तथा छोटे कस्वों में इस कचरे के ढेर देखे जा सकते हैं। इस प्रकार का अव्यवस्थित कचरा भी भू-प्रदूषण का कारण बनता है।

(2) नगरपालिका अपशिष्ट : नगरपालिका सम्पूर्ण प्रकार का शहरी कूड़ा-करकट, मानव मल, मरे जानवरों इत्यादि के अपशिष्ट पदार्थों को एक स्थान पर शहर के बाहर डालती रहती है। यह भी भू-प्रदूषण का कारण है।

(3) औद्योगिक अपशिष्ट : बढ़ते हुए औद्योगीकरण के कारण बहुत सारे अपशिष्ट होते हैं जो विषैले और हानिकारक होते हैं। जब ये सीधे या पानी के साथ बहकर भूमि पर गिरते हैं तो भूमि प्रदूषण करते हैं।

(4) कृषि अपशिष्ट : खेतों में अनावश्यक बचे पौधे के ढेर जब वर्षा के जल के साथ मिलते हैं तो वे सड़ने लगते हैं तथा प्रदूषण का कारण बनते हैं। खेतों में प्रयोग की जाने वाली खादें, कीटनाशियों तथा पेस्टीसाइड्स से भी भू-प्रदूषण होता है।

(स) भूमि प्रदूषण का नियन्त्रण (Control of Soil and Land Pollution)

भूमि पर अधिकांश प्रदूषण ठोस अपशिष्ट (Solid Waste) का होता है जिसे हटाकर दूसरे स्थान पर ले जाने में समय, श्रम और धन तीनों का व्यय होता है, लेकिन इसका कोई विकल्प नहीं है। सामान्यतया इसके तीन चरण होते हैं—

1. अपशिष्ट का संग्रह (Collection of Wastes)
2. अपशिष्ट का निस्तारण (Disposal of Wastes) और
3. संसाधनों की पुनर्प्राप्ति (Recovery of Resources)

उपर्युक्त वर्णित तीसरे चरण के अनुसार कुछ अपशिष्ट का भाग पुनः चक्रांकित (recycle) किया जा सके तो यह सर्वोत्तम है, क्योंकि इससे प्राकृतिक साधनों के संरक्षण को बल मिलेगा।

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution), वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution) तथा औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution) की चर्चा अलग-अलग अध्याय में की गई है। कृपया आगे अध्यायों का अवलोकन करें।

❑ तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)

(अ) कारण (Causes)

इस प्रदूषण का स्रोत मुख्यतः तापीय विद्युत गृह है। इस विद्युत गृह से दो प्रदूषक ही गणना योग्य है और वह दोनों ही बहुत भयानक और दूरगामी हानि पहुँचाने वाले हैं। इनमें से, (1) सम्पूर्ण प्रक्रिया के बाद बहुत अधिक ताप वाले पानी का निकलना और उसका उसी स्रोत में मिल जाना जहाँ से विद्युत गृह के संयन्त्र को चलाने और उसे ठंडा करने के लिए जल लिया जा रहा है। इससे उस जल के जलीय जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है; अनेक जीवन समाप्त हो जाते हैं और मछलियाँ अथवा अन्य जानवरों के लिए यह शून्य स्थल बन जाते हैं और (2) उसकी चिमनी से निकलने वाली राख, जो अधिक ताप के कारण भी हानिकारक है और जहाँ बरसती है वहाँ की वनस्पति, पेड़-पौधे और फसलों को नष्ट कर देती है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इसके उपाय निम्न प्रकार सुझाये गये हैं—

1. संयन्त्र से निकलने वाले उच्च ताप के जल को फब्बारे के रूप में अधिक क्षेत्र में फैलने दिया जाय। जब ताप सहन स्तर (tolerance level) तक आ जाय तब ही उसे पुनः स्रोत में मिलने दें।
2. राख का उपयोग अब इमारत बनाने के लिए ईंटों के लिए किया गया है, वह सफल प्रयोग हुआ है। इससे प्रदूषण समस्या भी कम होगी और प्रदूषक का अच्छा उपयोग भी होगा। राख को अधिक क्षेत्र में बिखरने से रोकने के लिए कुछ कृत्रिम साधन अपनाने होंगे।

❑ विकिरणीय प्रदूषण (Pollution due to Radiation)

(अ) कारण (Causes)

विकिरणीय प्रदूषण के कई कारण हैं, जिनमें मुख्यतः, (1) प्रकाश की किरणों (Infra-red Rays) का पृथ्वी से टकराकर विकिरणीकरण होना, (2) आकाशीय विकिरण, (3) रेडियोधर्मी पदार्थों के उपयोग लेने पर (विशेषकर अणु शक्ति पर आधारित विद्युत गृह अथवा अन्य संस्थान), (4) अणु हथियारों का परीक्षण करने पर, (5) X Rays मशीनों का उपयोग, (6) रेडियो थैरेपी (कैन्सर का इलाज) आदि हैं। इनसे विशेष हानि शरीर के किसी भी भाग पर, अन्दर बाहर, जलने से होती है। यह भयानक परिणाम वाला प्रदूषण है और कई वर्षों बाद कभी भी प्रभावी प्रतिक्रिया कर सकता है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इसकी गिरफ्त में आने के बाद कोई बचाव अथवा सुरक्षा उपाय नहीं है। केवल बचाव हेतु इन रेडियोधर्मी तत्त्वों के सम्पर्क की सम्भावना से भी दूर रहना ही है। X Rays तथा रेडियोथैरेपी का उपयोग बहुत ही आवश्यक हो, तो करें।

❑ समुद्रीय प्रदूषण (Marine Pollution)

(अ) कारण (Causes)

इस प्रकार के प्रदूषण का सम्बन्ध आम आदमी से नहीं होने के कारण इसका लोगों के ध्यान में अधिक महत्त्व नहीं है, लेकिन विश्व में तो अनेक देशों को समुद्री सीमा छूती ही है। भारत में भी लगभग तीन तरफ समुद्र ही है। अतः बहुत लम्बे समुद्री तट वाला अपना देश है। (1) औद्योगीकरण, (2) समुद्री किनारे अधिक बसावट, (3) समुद्र से तेल का लाना-ले जाना, (4) अनेक विद्युत तथा अन्य आवश्यक संयन्त्रों का समुद्री किनारे के क्षेत्र में रख-रखाव, (5) बन्दरगाहों पर यातायात तथा आयात और निर्यात कार्य आदि अनेक कारण हैं जिससे समुद्री प्रदूषण होता है। एक बहुत विशेष कारण यह भी है कि जहाज, जो तेल वाहक होते हैं, उनसे तेल रिस-रिसकर समुद्री पानी को खराब कर देता है। इस सबका प्रभाव समुद्री जीवों पर पड़ता है, जो बहुत बड़े व्यापार का केन्द्र है। जल और वायु भी अप्रत्यक्ष रूप से दूषित होते हैं।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

यह सामान्य प्रक्रिया से रोका नहीं जा सकता। भारत सरकार ने भी इसे अति विशिष्ट क्षेत्र घोषित किया है तथा अलग से ही उसकी देख-रेख तथा रख-रखाव का नियन्त्रण होता है। व्यवस्थित कार्य प्रणाली जिससे समुद्री जल को प्रदूषण से बचाया जा सके, इसका एकमात्र निदान है।

❑ कूड़े-कचरे से प्रदूषण (Waste Disposal Pollution)

(अ) कारण (Causes)

यह प्रदूषण इस प्रकार की सामग्री से होता है जो घर में अथवा अन्य कार्यस्थल पर बेकार हो गई तथा उपयोग में ले ली गई वस्तुओं से शेष रहीं चीजों को कूड़े के रूप में फेंक दी जाती हैं। इनमें मुख्यतः शीशियाँ, क्राकरी के टुकड़े, प्लास्टिक के डिब्बे, पोलीथीन के बैग्स आदि हैं। इसके अतिरिक्त कागज के टुकड़े, पैकिंग में आये पुट्ठे के कार्टून्स, घरेलू साइकिल के स्पेयर्स व अन्य लोहे-पत्तियों के टुकड़े आदि भी इस प्रकार कूड़े का भाग बनते हैं। मकानों का मलवा, कृषि कार्यों से बचा अवशेष, किन्हीं फैक्टरियों से निकला कचरा व अपशिष्ट और न जाने कितनी प्रकार की चीजें होती हैं, जो किसी काम की नहीं मानकर कूड़े-कचरे का भाग बनती हैं। यह अब विश्वव्यापी समस्या हो गई है। अमेरिका जैसा धनाढ्य देश तो अब मोटरकार जैसी चीज को भी खराब होने पर नष्ट करने के लिए कूड़े में डाल देता है। इससे स्थान की कमी होती है, गंदगी बढ़ती है तथा इनका कहीं ले जाकर पहुँचाना भी काफी व्यय वाला और सिरदर्द बन जाता है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इस प्रकार के प्रदूषक संग्रह से बचाव केवल इन सभी को या तो नष्ट करने से अथवा किसी प्रकार के उपयोग लेने से ही सम्भव है। कुछ वस्तुएँ जैसे कागज, शीशे के टुकड़े, पुट्ठे के टुकड़े आदि को

पुनः चक्रण कर वही चीजें बनाने में काम आ जाती हैं, पर यह कार्य वही देश कर पाते हैं जिनके पास इस प्रकार की उच्च तकनीकी सुविधा है। कुछ पदार्थ जैसे पोलिथिन, प्लास्टिक के टुकड़े जो आसानी से नष्ट नहीं होते, उनमें का कुछ भाग तो पुनः चक्रण (recycle) हो जाता है, शेष भाग को जमीन में दबाने का ही प्रयास करते हैं, क्योंकि शायद आज विश्व में सबसे अधिक दुःखदायी ठोस अपशिष्ट (Solid Waste) में यही प्लास्टिक अथवा पोलीथीन की थैलियाँ होती हैं जिनका प्रयोग तो दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, पर इनके नष्ट करने की कोई उचित व्यवस्था नहीं है।

कुछ कूड़े-कचरे का प्रयोग अब मकान बनाने के ब्लाक्स बनाने के लिए किया जा रहा है। दूसरे जलाकर इसको मकानों में गर्मी पहुँचाने के साधन के रूप में प्रयोग कई देशों ने किया है। कुछ कार्बनिक पदार्थों को खाद के रूप में भी काम में लिए जाने की सम्भावना है। इस ओर पूरे विश्व के उच्च तकनीकी लोग पूरी निष्ठा से इसका अत्यन्त व्यवस्थित हल खोजने में लगे हैं।

❑ घर तथा उद्योगों से निकलने वाले जलस्राव से प्रदूषण (Domestic and Industrial Waste Water Disposal Pollution)

(अ) कारण (Causes)

बिना जल के न तो घर का न ही किसी उद्योग का काम चल सकता है। जल का जहाँ दोनों स्थानों पर कार्य में लिए जाने का उपयोग है, वहीं घर में इसका उपयोग बर्तन धोने, नहाने और सफाई कार्य में होता है। उद्योगों में मशीनों व संयन्त्रों को ठंडा करने में इनका बहुत योगदान है। दोनों ही स्थिति में जल प्रदूषित हो जाता है। इस प्रकार से जल में अनेक प्रदूषक तत्त्व जिनमें घरेलू डिटरजेन्ट भी शामिल हैं अथवा उद्योगों के उत्पाद से सम्बन्धित कुछ पदार्थों के भाग मिले होते हैं, वहीं उद्योगों से उच्च ताप पर निष्कासित जल से भी कितनी ही हानियाँ हो सकती हैं, जिसका उल्लेख हमने 'तापीय प्रदूषण' वाले बिन्दु में किया है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

घरेलू पानी का उपयोग विशेषतः किचन गार्डन में किया जाता है, जिससे पानी का सदुपयोग भी होता है। हाँ यहाँ डिटरजेन्ट जरूर एक समस्या है। एक ओर जहाँ इसके प्रयोग से अधिक पानी के इस्तेमाल की समस्या है वहीं इसका पानी साग-सब्जी आदि उगाने में उपयोगी नहीं है। औद्योगिक संस्थानों के जल को उपचार संयन्त्र (Treatment Plants) की सहायता से उस स्तर तक लाया जाना बहुत आवश्यक है जहाँ वह मानव उपयोग हेतु हानिप्रद न हो। इस जल को सीधे पीने के पानी के स्रोतों से भी दूर रखने की आवश्यकता है, यद्यपि जमीन पर कहीं भी गिर जाने पर पानी आखिर 'भू जल' का भाग बन जाता है और वृहद वृत्त (bigger circle) में इसे कहीं न कहीं उपयोग में लाना होता है। उच्च ताप वाले पानी को फब्बारे के रूप में निकाल कर ठंडा करके ही कहीं निकाल कर मिलाना चाहिए।

❑ अन्य प्रकार से प्रदूषण (Pollution from Other Sources)

यद्यपि हमने ऊपर विभिन्न अलग-अलग पदों में अनेक प्रकार के प्रदूषणों की चर्चा की है, पर फिर भी सभी प्रकार के प्रदूषणों को इसमें सम्मिलित कर पायें यह सम्भव नहीं। बिना कोई भूमिका के कुछ ऐसे ही अन्य प्रदूषणों को यहाँ देने का प्रयास कर रहे हैं—

(i) **जलकुम्भी (Eutrophication)** : रुके हुए पानी में जलकुम्भी एक आम बात हो गई है। एक बार किसी जलाशय में प्रारम्भ होने के बाद यह इतनी तेजी से बढ़ती है कि लगभग सारे जलाशय की ऊपरी सतह को ढँक लेती है। अनेक बार मानव श्रम से इसे अनेक स्थानों से हटाने का प्रयास किया है, पर उसमें शत-प्रतिशत सफलता नहीं मिल पाती है। इसके पैदा होने का मुख्य कारण वह जल है जो अन्य स्थानों से बह कर किसी जलाशय में मिलता है। आने वाला अथवा बहने वाला जल अपने साथ कुछ पोषक तत्त्व साथ में लाता है जो इस प्रकार की घास को जन्म देता है। अब इसे भोजन शृंखला में कहीं स्थान देकर इसकी उपयोगिता में वृद्धि की ओर विशेषज्ञ लगे हैं। खाद के रूप में भी कहीं इसका उपयोग हो इस ओर भी काफी ध्यान है।

(ii) **कृषि अपशिष्ट (Agricultural Waste)** : मनुष्य की तीसरी जीवन प्राथमिकता, जल तथा वायु के बाद भोजन है। जैसे-जैसे जनसंख्या में वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे अधिक अन्न की

आवश्यकता होती है। अधिक अन्न उपजाने के प्रयोगों ने खेतों में विविध प्रकार की खादों के उपयोग प्रारम्भ किये हैं। इससे अधिक अन्न तो उपजता ही है, लेकिन वर्षा जल के साथ जब इन खादों के अवशेष बाहर आ जाते हैं तो इनके अनेक घटक जमीन अथवा जलाशय, जहाँ पर यह आते हैं, को अनुपयोगी अथवा कम उपयोगी कर देते हैं। कुछ कृषि अपशिष्ट वह भी होता है जो फसल काटने के बाद बच रहता है अथवा फसल उगाते समय अपने आप उगता है। कीटनाशकों के उपयोग ने भी प्रदूषण फैलाया है।

भौतिक रूप से जो अपशिष्ट इस प्रकार का है जिसे पशु चारे के रूप में खा सकें, उसके उपयोग हो जाने से तो कोई आगे समस्या ही नहीं। हाँ, खादों के प्रयोग पर अंकुश लगा कर उसे नियंत्रित करने की अवश्य आवश्यकता है। अधिक खादों का उपयोग बहुत अधिक दिनों तक जमीन के हित में भी नहीं है। इसी प्रकार कीटनाशी दवाइयों का भी उपयोग अत्यन्त नियंत्रित और व्यवस्थित ही होना चाहिए।

• सारांश
(Conclusion)

विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की चर्चा करते हुए यह सोचते भी भय होने लगा है कि आखिर प्राणी इस पृथ्वी पर जीवित कैसे हैं ? उसे खाने, पीने, सोने, सांस लेने अथवा कोई भी कार्य करने में निरापदता की तो बात ही नहीं आती। एक अनजाना भय, अनचाही आशंका और कभी भी अप्रिय घटना की सम्भावना ने मनुष्य का जीवन दूभर कर दिया है। **इसका अधिक दोष बढ़ती आबादी है जिसने अधिक औद्योगिक प्रगति को बढ़ावा दिया और जिससे अधिक प्रदूषण फैला है। दूसरा दोष देश की आर्थिक व्यवस्था को दिया जा सकता है,** क्योंकि भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्वर्गीय **श्रीमती इन्दिरा गाँधी** के शब्दों में—

"आबादी से गरीबी आती है और प्रदूषण गरीबी का आवश्यक परिणाम है।"

(**Population** leads to **Poverty** and **Pollution** is the necessary outcome of **Poverty.**)

इसी कारण आर्थिक विपन्नता वाले देशों में प्रदूषण की समस्या अधिक है।

इससे भी अधिक उत्तरदायी हमारे देश की सामाजिक तथा नागरिक उत्तरदायित्व न वहन करने की आदत है। न तो वर्तमान पीढ़ी इस ओर स्वयं ध्यान देती है और न ही भावी पीढ़ी को सिखाने का प्रयास करती है। वस्तुओं के ठीक से उपयोग न करने, जीवन की शैली को अव्यवस्थित रूप से ही चलाये जाने तथा अपने स्वार्थ और सुविधा के लिए दूसरों की परेशानियों की ओर ध्यान न देने से ही कई समस्याओं ने जन्म लिया है जिसमें प्रदूषण भी एक है व मुख्य है।

प्रशासन चाहे जितनी योजनाएँ बनावे, कितनी ही व्यवस्थाएँ करे, प्रदूषण को रोका नहीं जा सकता। इसको नियंत्रित अथवा कम अवश्य किया जा सकता है, पर उसमें निःसन्देह आम आदमी को प्रभावी भूमिका निभानी होगी।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. प्रदूषण किसे कहते हैं ? पर्यावरण में प्रदूषण कैसे हो सकता है ? कोई एक उदाहरण दीजिये।
2. घरेलू ईंधन के विकल्प क्या-क्या हो सकते हैं, जिससे वायु प्रदूषण से बचा जा सके ?
3. तापीय प्रदूषण से क्या हानियाँ हैं ? इसे कैसे कम किया जा सकता है ?
4. समुद्रीय प्रदूषण के क्या कारण हैं ? इसे कैसे दूर किया जा सकता है ?
5. पोलीथीन बैग्स आज भयानक रूप से प्रदूषण फैला रहे हैं, उनसे कैसे बचा जा सकता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. कोई 5 प्रकार के प्रदूषणों के नाम लिखिये।
7. जल में फ्लोराइड की अधिक मात्रा किस प्रकार हानि पहुँचाती है ?
8. घरेलू अपशिष्ट में प्रायः क्या होता है ?

9. जलकुम्भी पर संक्षिप्त नोट लिखिये। क्या इसका कोई उपयोग भी सम्भव है ?
10. अपमार्जक (डिटरजेन्ट) किस प्रकार हानिकारक है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. स्वचालित वाहनों से निम्न प्रकार का प्रदूषण होता है–
    (अ) वायु प्रदूषण (ब) जल प्रदूषण
    (स) विकिरण प्रदूषण (द) तापीय प्रदूषण
12. प्रदूषक 'बैन्जपायरिन' से निम्न रोग सम्भव है–
    (अ) अस्थमा (ब) कैन्सर
    (स) रक्तचाप (द) मधुमेह
13. बच्चों में मंदबुद्धि का कारण प्रायः निम्न प्रदूषक होता है–
    (अ) जिंक (ब) पारा
    (स) कैडमियम (द) लैड
14. जल शुद्ध करने का एक प्राचीन उपाय रहा है–
    (अ) निथारना (ब) छानना
    (स) उबालना (द) फिटकरी डालना
15. अपशिष्ट निस्तारण को भी निम्न प्रकार से उपयोगी बनाया जा सकता है ?
    (अ) गड्ढ़े भरना (ब) जलाशयों में डालना
    (स) पुनः चक्रित करना (द) जला देना

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये–

16. जिन वस्तुओं से वायु, जल, भूमि प्रदूषित होती है, वह........................कहलाते हैं।
17. नगरपालिका अपशिष्ट में........................को सम्मिलित किया जा सकता है।
18. जलाशयों में उग आने वाली घास को........................कहते हैं।
19. जब भूमि का pH मान 8 हो तो वह भूमि........................कहलाती है।
20. सल्फर डाइऑक्साइड गैस से........................प्रदूषण होता है।

18

ध्वनि प्रदूषण
[NOISE POLLUTION]

● प्रस्तावना
(Introduction)

ध्वनि (Sound) सदैव हमारे साथ रहती है। प्रातः उठते ही चिड़ियों की चहचहाहट अथवा अलार्म घड़ी की आवाज से हमारी दिनचर्या प्रारम्भ होती है, जो घूमने के समय कुत्तों के भौंकने, गाय के रंभाने, दिन में सड़कों पर के यातायात (कार, बस, ट्रक, मोटर साइकिल आदि) और रात को घर पर मनोरंजन (रेडियो, टीवी, टेपरिकॉर्डर, डैस्क) के साथ समाप्त होती है। यही नहीं बल्कि खाना बनाते और खाते समय बर्तनों का खटकना-टकराना, आपसी वार्तालाप, हंसी-मजाक में भी आवाज ही आवाज रहती है। इसे हम देख नहीं सकते और न ही इसमें कोई भार अथवा आयतन होता है। इस अहसास को ही, जिसे हम केवल सुन सकते हैं, 'ध्वनि' कहते हैं।

कई वैज्ञानिकों ने 'ध्वनि' को निम्न प्रकार परिभाषित करने का प्रयास किया है—

1. **'A sound is something that you can hear.'**
   (ध्वनि कुछ ऐसी चीज है जिसे हम सुनते हैं।)
2. **'Whenever you hear, it is sound.'**
   (जब कभी हम सुनते हैं, वह ध्वनि होती है।)

इस ध्वनि के कुछ गुण एवं क्रियाकलापों की हम यहाँ संक्षिप्त में चर्चा करेंगे—

● ध्वनि
(Sound)

(अ) उत्पत्ति (Origination) : अपने दिन-प्रतिदिन के अनुभव से हम यह जानते हैं कि शांत वातावरण में कोई आवाज नहीं होती है। जब कभी कोई वस्तु गिरती है, किसी अन्य वस्तु से टकराती है, गति करती है, तभी आवाज सुनाई पड़ती है। बोलने, संगीत उपकरणों से निकलते स्वर, पशु-पक्षियों की आवाजें, बस-रेल-वायुयान से उत्पन्न कोलाहल से भी आवाजें आती हैं। पर यह आवाजें हमें तभी सुनाई पड़ती हैं जब वे वस्तु से हम तक किसी प्रकार पहुँच पाती हैं। यह आवाज (ध्वनि) का पहुँचना बहुत ही सामान्य लेकिन सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रक्रिया है।

जब किसी वस्तु से आवाज उत्पन्न होती है तब वह कम्पित होने लगती है। यह कम्पन उस वस्तु के आस-पास की वायु में कम्पन पैदा कर देती है जो वस्तु के केन्द्र से सभी दिशाओं में फैलने लगते हैं। यही कम्पन जब हमारे कानों तक पहुँचते हैं तो मस्तिष्क इन्हें 'ध्वनि' की संज्ञा देकर प्रसारित कर देता है और हम उस आवाज को कानों की सहायता से सुन लेते हैं। इसीलिये ध्वनि उत्पत्ति के लिये कहा जाता है कि 'कम्पन से ही ध्वनि उत्पन्न होती है' (Every sound is generated by only vibrations of some object.)।

इसी आधार पर ही 'ध्वनि' को निम्न प्रकार भी परिभाषित किया गया है—

'Scunds are the vibrations that are propagated from the object to reach us.'

(ध्वनि वस्तु से प्रसारित होने वाले कम्पन हैं, जो हम तक पहुँचते हैं।)

(ब) महत्त्व (Importance) : प्राणी मात्र के लिये सुखी जीवन जीने के लिये अनेक चीजों तथा सहायताओं की आवश्यकता होती है। उनमें से सुनना भी ऐसा एक महत्त्वपूर्ण साधन है जिसकी

अनुपस्थिति की सामान्यतया कोई कल्पना नहीं करता है। इसके महत्त्व को हम क्रमबद्ध करने का प्रयास ही कर सकते हैं—

1. ध्वनि बोलने की क्रिया से अन्य व्यक्तियों या प्राणियों से सम्पर्क बनाये रखती है। अन्य व्यक्तियों को भी ध्वनि ही हमसे जोड़े रखती है।
2. ध्वनियाँ, जो किसी संगीत उपकरण अथवा मधुरभाषी पक्षियों से सुनने को मिलती हैं, हमें प्रसन्नता और आनन्द प्रदान करती हैं।
3. रेडियो, दूरदर्शन के प्रसारण ध्वनि के द्वारा ही हमें पूरे विश्व की गतिविधियों से परिचित कराते हैं।
4. ध्वनि अपनी अलग पहचान से विभिन्न आवाजों के आधार पर विभिन्न प्राणियों की आवाज अथवा वस्तुओं की उपस्थिति से अवगत करा देते हैं।
5. अनेक भयानक आवाजें जैसे कार, बस, ट्रक के हार्न, बिजली की कड़क, अग्निशमन वाहन की घंटिया, शेर की दहाड़ हमें किन्हीं अनजाने अंदेशों से अवगत कराते हैं।
6. ध्वनि से किसी भी वस्तु (Object) की दूरी का भी पता अनुमान से लग सकता है।
7. आज वर्तमान में तो अनेक चिकित्सीय क्रियाकलापों में ध्वनि की तीव्रता का उपयोग होने लगा है।
8. ध्वनि ही पुरुष और स्त्री स्वर को पहचान कर व्यक्ति विशेष की पहचान कर सकता है, आदि।

इससे स्पष्ट है कि ध्वनि हमारी दिनचर्या का एक आवश्यक साधन है जिससे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अनेक गतिविधियां परस्पर समन्वित होती हैं।

(स) गति (Movement of Speed) : दैनिक जीवन में हम देखते हैं कि आवाज का स्रोत कहीं होता है और उसे सुनने वाला प्राणी (मनुष्य व पशु) कहीं अलग स्थान पर होता है। निश्चित है कि वह आवाज स्रोत से मनुष्य तक चलकर आती है। यही 'ध्वनि' की गति (Speed) कहलाती है। चूंकि आवाज स्रोत से कम्पन द्वारा आगे बढ़ती है, अतः कम्पन से ही ध्वनि एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचती है।

कम्पन को जानने के लिये एक बड़ा कंकड़ अथवा पत्थर का टुकड़ा स्थिर पानी में डालें। हम देखेंगे कि उस बिन्दु से, जहाँ पर कोई वस्तु डाली गई थी, लहरें उठना प्रारम्भ होती हैं और वह केन्द्र बिन्दु से निरन्तर आगे बढ़ती जाती हैं। ध्वनि का लहरों के माध्यम से बढ़ना उसकी गति (Speed) कहलाती है। इसी आधार पर 'ध्वनि' को भी नई परिभाषा मिल गई है—

'A Sound is something that we can hear which is propagated through waves produced from some object'.

(ध्वनि एक ऐसी वस्तु है जो किसी स्रोत से उत्पन्न होकर लहरों द्वारा प्रसारित होती है, जिसे हम सुन सकते हैं।)

यह उदाहरण पानी में पत्थर फेंकने से उत्पन्न लहरों (तरंगों) पर आधारित था, अतः यहाँ ध्वनि प्रसारण का माध्यम पानी रहा, लेकिन जब हम परस्पर बातें करते हैं अथवा धरातल पर कोई आवाज सुनते हैं तब ध्वनि का माध्यम 'वायु' ही रहता है। इसी प्रकार अलग-अलग माध्यम में ध्वनि को सुना जा सकता है, लेकिन इन अलग-अलग माध्यमों में ध्वनि की गति भी अलग-अलग होती है। इन गतियों के लिये साथ दिये ब्लाक को देखें।

ध्वनि विभिन्न माध्यमों में ही प्रसारित होती है, अतः शून्य (Vacuum) अथवा वायुमण्डल परिधि के बाहर (Outer Space) में ध्वनि नहीं होती।

विभिन्न माध्यमों में ध्वनि की गति
(Speed of Sound in Different Mediums)
(मीटर प्रति सेकन्ड)

माध्यम	गति
वायु	332
जल	1,496
लकड़ी	4,100
लोहा	5,200
शीशा	4,540
ईंट	3,650
ऐल्यूमीनियम	5,000

स्रोत : The World Book Encyclopedia, p. 48

(द) विशेषताऐं (Characteristics) : ध्वनि की विशेषताओं को निम्न प्रकार जाना जा सकता है–

1. बारंबारता (Frequency) : किसी वस्तु या स्रोत से उत्पन्न प्रति सेकण्ड कम्पनों की संख्या 'बारंबारता' कहलाती है (The number of vibrations produced by an object per second is known as frequency.)। वस्तुतः कम्पन्न तरंगों का निर्माण करती हैं। प्रत्येक एक तरंग से दूसरी तरंग तक की दूरी तरंगदैर्ध्य (Wavelength) के नाम से जानी जाती है। यह कितनी तंरगें प्रति सेकण्ड में बन रही है, इसे ध्वनि की बारंबारता कहते हैं।

यह hertz में मापी जाती है। एक कम्पन प्रति सैकण्ड को एक hertz के माप से पुकारते हैं। सामान्यता मनुष्य 20 से 20,000 hertz तक की ध्वनि सुन सकता है, लेकिन कुछ पशु जैसे कुत्ता, पक्षी जैसे चमगादड़ इससे कहीं अधिक ध्वनि सुन सकते हैं। 15,000 hertz से अधिक स्तर की ध्वनि मनुष्य के श्रवण यन्त्र को हानि पहुँचा सकते हैं।

2. तारत्व (Pitch) : ध्वनि की बारम्बारता ही ध्वनि के उतार-चढ़ाव (lowness or highness) को निर्धारित करती है। इसे तारत्व (Pitch) कहते हैं। बारंबारता अधिक होगी तो तारत्व भी अधिक होगा जब कि इसके विपरीत नीचे स्वर की ध्वनि (कम तारत्व) की बारंबारता भी कम होगी।

3. तीव्रता (Intensity) : ध्वनि तरंगों के साथ कितनी शक्ति प्रवाहित हो रही है, यह ध्वनि की तीव्रता कहलाती है (The intensity of a sound is related to the amount of energy flowing through the sound waves.)। यह तीव्रता कम्पन के उस उच्चतम स्तर पर निर्भर करती है, जिससे ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं। इसे प्रचुरता या विस्तीर्णता (Amplitude) कहा जाता है।

4. प्रबलता (Loudness) : यह ध्वनि के उस स्तर का ज्ञान कराती है जिस शक्ति (तीव्रता या (intensity) से वह हमारे कानों को सुनाई पड़ती है। यह तीव्र (high) और मंद (low) हो सकती है। इसे डेसीबल (dB) में मापा जाता है जिसे अलेक्जेण्डर ग्राहम बैल ने अपने शोध से निर्मित ध्वनि मापन यन्त्र के आधार पर प्रस्तुत किया।

एक बैल (एक बैल का दसवां भाग) उस आवाज की तीव्रता का न्यूनतम माप है जो एक मनुष्य के द्वारा सुना जा सकता है। 'डेसीबल मापी' लघुगुणक सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार 10dB बढ़ने पर 10 गुना, 20dB बढ़ने पर 100 गुना और 30dB बढ़ने पर 1000 गुना हो जाती है। उदाहरण के लिये फुसफुसाहट (Whisper) 10dB, ध्यानमग्न दो व्यक्तियों की बातचीत 20dB तथा सामान्य समूह में वार्तालाप 30dB होता है। एक सामान्य मनुष्य के लिये 70-80dB के मध्य की ध्वनि उचित एवं उपयुक्त होती है। इसे मनुष्य की सहन सीमा (Tolerance Level) भी माना गया है।

विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न ध्वनियों की तीव्रता या प्रबलता (Intensity or Loudness) को यहाँ नीचे की सारणी में समेकित किया गया है–

सारणी 18.1
ध्वनि माप सारणी

ध्वनि परिमाण					
क्र.सं.	ध्वनि	प्रबलता (डीबी में)	क्र.सं.	ध्वनि	प्रबलता (डीबी में)
1.	शांत	00	10.	पुस्तकालय	35-40
2.	सांस लेना	10	11.	टेलीफोन की घंटी	70
3.	पत्तियों की खड़खड़ाहट	20	12.	टेलीविजन परिवार के साथ	70
4.	धीमी बातचीत	20-30	13.	वेक्यूम क्लीनर	80
5.	सामान्य बातचीत	30	14.	प्रिन्टिंग प्रेस	80
6.	घड़ी की टिक-टिक	30	15.	बच्चों का खेल	60-80
7.	रेडियो से संगीत	50-60	16.	रोड ट्रेफिक	60-90
8.	ऊँचे स्वर से बातचीत	60	17.	घास काटने की मशीन	90-100
9.	ऑफिस की आवाज	50-60	18.	भारी ट्रक यातायात	90-100

19.	मोटर साइकिल	105	25.	चेतावनी साइरन	150
20.	रेलगाड़ी की सीटी	110	26.	पटाखे और बम्ब	120-170
21.	डैक संगीत	110-115	27.	खान विस्फोट	120-140
22.	वायुयान	90-130	28.	गैस कुकर विस्फोट	120-140
23.	बिजली की गड़गड़ाहट	120	29.	आमने-सामने वाहन भिड़न्त	140-170
24.	जैट वायुयान	140	30.	फैक्ट्री वायलर कर फटना	सीमा से परे

* एक मनुष्य सामान्यतया 80 डीबी तक की ध्वनि सहन कर सकता है।

** 120 डेसीबल से अधिक आवाज मनुष्य को कई शारीरिक कष्ट दे सकता है।

5. गुणवत्ता (Quality) : हर ध्वनि की अपनी अलग पहचान होती है, जिससे तत्काल यह जाना जा सकता है कि यह ध्वनि किसकी है ? अपने कमरे या किसी विशेष स्थान पर बैठे-बैठे मनुष्य, पशु, रेलगाड़ी, भूकम्प, बिजली की कड़क, वस्तु के गिरने-टूटने, संगीत उपकरण आदि की आवाजें पहचाना जाना सामान्य बात है। यही नहीं बल्कि दो व्यक्तियों में भी आवाज के आधार पर किसी व्यक्ति विशेष को पहचाना जा सकता है। संगीत ध्वनियों में तो उपकरणों की जानकारी तथा विशेष राग रागनियों की पहचान इसी विशेषता पर आधारित है।

(इ) वर्गीकरण (Classification) : ध्वनि को सुने जाने के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया गया है—(1) संगीतात्मक ध्वनियाँ (Musical Sounds) और (2) शोर अथवा कोलाहल (Noises)। यह ध्वनियां किसी भी प्रबलता की हो सकती हैं। कभी कम प्रबलता की ध्वनि अप्रिय लगने लगती है तो कभी तीव्र प्रबलता की ध्वनि आनन्ददायक और प्रियकर। इनको संक्षिप्त रूप से निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं—

1. **संगीतात्मक ध्वनियां** (Musical Sounds) : यह वह ध्वनियाँ हैं जो आनन्ददायक और मनलुभावनी (pleasant and interesting) होती हैं। गायन (Singing), वादन (Instruments Playing) और नृत्य (Dance) इसके अन्तर्गत आते हैं। रेडियो, TV, डैस्क म्यूजिक से निकलने वाला संगीत और कुछ कोयल, मोर जैसे पक्षियों की आवाजें इसी प्रकार की ध्वनियों में सम्मिलित की जा सकती हैं। पर इसमें भी आवाज की प्रबलता (loudness and pitch) की बहुत प्रभावी भूमिका रहती है। उदाहरण के लिये ऊँचे स्वर का पॉप संगीत (Pop Music) सिर दर्द बन जाता है, वहीं धीमे आवाज की गजलें मन मोह लेती हैं।
2. **शोर अथवा कोलाहल** (Noises) : यह ध्वनियाँ अप्रिय परेशानी और बेचैन करने वाली आवाजें (unpleasant, annoying and distracting sounds) हैं जिनसे मन व्याकुल हो उठता है। इन ध्वनियों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है—
   — **A harsh disagreeable sound.** (एक अप्रिय अरुचिकर ध्वनि।)
   Chambers 21st Century Dictionary : Allied Chambers (India), New Delhi, 1997.
   — **'A sound especially one that is loud, unpleasent or disturbing.'**
   (एक ध्वनि जो विशेषतः तीव्र, अप्रिय और बेचैनी वाली हो।)
   Concise oxford dictionary : Oxford University Press, X Edition (2001) great charendon street, Oxford ox 2 CDP.
   — **'A sound that is undesired by the recipient.**
   (एक ध्वनि जो प्रापक द्वारा अनचाही हो।)
   A New Dictionary of Physics, ed. H.J. Gray and Alan Isaacs Longmans Group limited London, 1975.

ध्वनि माप की भाषाओं में सामान्यतया 80dB से अधिक तीव्रता की ध्वनियाँ 'शोर' के दायरे में आती हैं।

• ध्वनि प्रदूषण
(Noise Pollution)

विज्ञान की निरन्तर प्रगति के साथ ही मनुष्य को जीवन के हर क्षेत्र में अनेक उपलब्धियाँ मिली

हैं। पर वहीं उसे अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा है तथा अनेक परेशानियाँ भी विरासत में मिली हैं। सुनने के लिये आवश्यक ध्वनि यंत्रों ने जहाँ जीवन को प्रसन्नचित्त, आनन्दमय और सुख से जीने के साधन दिये हैं, वहीं उनके गलत उपयोग से मन को व्याकुलता, शरीर को कष्ट और अनचाहे क्षणों में जीने की विवशता भी मिली है। तेज आवाज में संगीत, आवागमन के साधनों की असह्य आवाज, कारखानों की लगातार चलती मशीनों की तीव्र ध्वनि, भीड़भाड़ का कोलाहल, सभी ने तो मनुष्य को अत्यधिक व्यथित कर दिया है। इन सबका सीधा प्रभाव कानों की श्रवण शक्ति पर पड़ा है। ऊँचे सुनने से जहाँ मनुष्य की मानसिकता में हीनभावना का प्रवेश होने लगता है वहीं तेज ध्वनि से उच्च रक्तचाप, अल्सर, हृदयाघात, मानसिक विकार और ऐसे ही अनेक रोग होना पाये जाते हैं। वस्तुतः यह ध्वनि विकार है जो अदृश्य है और अत्यधिक प्रभावी है। इसे ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution) का नाम दिया गया है, जिस पर हम यहाँ बिन्दुवार चर्चा करेंगे।

(अ) ध्वनि प्रदूषण के मुख्य स्रोत (Chief Sources of Noise Pollution)

सुविधा की दृष्टि से ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—(1) प्राकृतिक (Natural) और (2) मनुष्य द्वारा उत्पादित (Man Generated)।

1. प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources) : इस श्रेणी में प्राकृतिक प्रकोप जैसे आंधी, तेज वर्षा, तूफान, भूकम्प बिजली की कड़कड़ाहट आदि आते हैं।

2. मनुष्य द्वारा उत्पादित स्रोत (Man Generated Sources) : इस संवर्ग में कारकों की संख्या अनगिनत है जिन्हें हम कुछ मोटे शीर्षकों में समेकित कर सकते हैं—

(i) **परिवहन के साधन** (Means of Transport) : ट्रक, कारें, स्कूटर, मोटर साइकिल, मोपेड, बसें, एवं अन्य स्वचालित वाहन जैसे हवाई जहाज, रेलगाड़ी आदि।

(ii) **कारखाने और उद्योग** (Factories and Industries) : मशीनें, साइरन, जेनेरेटर्स एवं अनेक यान्त्रिक उपकरण।

(iii) **मनोरंजन के साधन** (Means of Amusement) : रेडियो, टी. वी., टेपरिकार्डर, ट्रांजिस्टर आदि; नृत्य व डिस्को संगीत।

(iv) **घरेलू उपकरण** (Domestic Appliances) : वाशिंग मशीन, कूलर्स, लानमूवर्स, मिक्सी, प्रेशर कुकर, वैक्यूम क्लीनर, एअरकंडीशनर्स आदि।

(v) **पूजास्थल पर के उपकरण** (Prayer Instruments) : हारमोनियम, ढोलक, तबला, घुँघरू, लाउड-स्पीकर्स।

(vi) **सैनिक अभ्यास की वस्तुएँ** (Material of Infantry Exercise) : टैंक, मशीनगनें, हथगोले, अभ्यास में विस्फोटक सामग्री।

इसके अलावा भी आटे की चक्की, मकानों का निर्माण (आर. सी. सी. डालना) आदि अनेक और भी स्रोत हैं। शहरी भीड़, चहल-पहल भरे बाजार, सिनेमागृह, बड़े-बड़े भाषणों के आयोजन भी ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं।

(ब) ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव (Effect of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण से मनुष्य पर शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार का प्रभाव पड़ता है जो ध्वनि की तीव्रता के आधार पर कम और अधिक भी होता है और अलग-अलग प्रकार का भी। साथ ही प्रभाव का परिणाम निम्नलिखित बातों पर भी निर्भर करता है—

1. अवधि (अन्तराल),
2. दिन में या रात में किस-किस समय,
3. स्थान का सम्पूर्ण शोर स्तर,
4. ध्वनि की तीव्रता, आवृत्ति स्तर,
5. नियमित जीवन की कार्यशैली,
6. व्यक्ति की संवेदनशीलता (सहने की क्षमता),

7. व्यक्ति की आयु और
8. सुरक्षा के उपकरणों की क्षमता एवं विश्वसनीयता।

कुछ और भी बिन्दु इसमें शामिल किये जा सकते हैं जिनके आधार पर ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव सम्भव है।

1. शारीरिक प्रभाव (Physical Effects) : ध्वनि प्रदूषण का सबसे हानिप्रद प्रभाव श्रवण-यन्त्र (श्रवणेन्द्रिय) अथवा कानों पर पड़ता है। बहुत तेज आवाज से अथवा ऐसी जगह काम करने या रहने से जहाँ निरन्तर अधिक शोर रहता है, कान का पर्दा फट जाता है या फट जाने का भय रहता है। अतः कम सुनाई देना, कानों में सीटी की आवाजों का आना, कान का सुन्न हो जाना प्रायः हो जाता है। ऐसी भी स्थिति सम्भव है कि बिल्कुल ही सुनाई न देने लगे।

अन्य शारीरिक प्रभावों में यह पता लगाया गया है कि शोर हृदय, पाचन-तन्त्र तथा तान्त्रिक-तन्त्र पर भी प्रभाव डालता है। अधिक शोर में रहने वाले व्यक्ति में रक्तचाप का बढना, हृदय गति का तेज होना और दिल के दौरे के पड़ने की सम्भावना रहती है। पाचन-तन्त्र के गड़बड़ा जाने से अल्सर हो जाते हैं। स्नायुतन्त्र विशेषज्ञों के अनुसार शोर पीड़ितों में सिर दर्द, बेचैनी, चक्कर आना, जी मिचलाना और थकान के अलावा एक खास प्रकार की मिर्गी भी आ सकती है। इस प्रकार के रोगी को चर्च की घंटियों, पाप संगीत और पियानो की आवाज से दौरे पड़ने लगते हैं।

तेज शोर से वार्तालाप करने में जोर लगाने से स्वर यन्त्र में सूजन आ जाती है, गले में खराश हो जाती है जो बाद में स्थाई रोग बन जाता है। ध्वनि प्रदूषण से आँखों पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। आँखों की पुतली का आकार छोटा हो जाता है। रंग पहचानने की क्षमता में कमी आ जाती है तथा रात्रि में दृष्टि क्षमता कम हो जाती है। शरीर की बाहरी त्वचा में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होना तथा बारीक चर्म पर्त उतरने की आशंकाएँ भी बनी रहती हैं।

2. मानसिक प्रभाव (Mental Effects) : अधिक शोर से व्यक्ति में सहन शक्ति की कमी, चिड़चिड़ापन, बात-बात पर चीखना, अनिद्रा, भ्रम, एकाग्रता में कमी तथा कार्य क्षमता में कमी आ जाती है। बौद्धिक क्षमता का ह्रास होता जाता है।

(स) ध्वनि प्रदूषण से बचने के उपाय (Precautionary Measures of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण से मनुष्य को कितनी और किस-किस प्रकार की हानि हो सकती है इसकी जानकारी के बाद यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पर्यावरण के क्षेत्र में यह दिखाई न देने वाला वह मीठा जहर है जो अनजाने ही लोगों को धीमे-धीमे मृत्यु तक पहुँचा सकता है। इस पर बहुत गहराई से चिन्तन करना चाहिए तथा इससे बचने के व्यापक उपाय किये जाने चाहिए—

1. शोर का ध्वनि स्रोत पर ही नियन्त्रण : शोर जिस यन्त्र या उपकरण से हो रहा है उन यन्त्र/उपकरण/मशीनों को इस प्रकार डिजाइन किया जाना चाहिए जिससे शोर उत्पन्न करने वाले उपकरणों जैसे—ट्रक, बस, स्कूटर, मोटर साइकिल, मोपेड, मशीनें, वायुयान आदि के इंजनों को या तो शोर नियन्त्रण कवचों से ढँका जा सके जिससे शोर कम हो जाय या फिर शोर न करने वाले इंजन तैयार किये जावें। मोटर साइकिल, स्कूटर, गाड़ियों के साइलेन्सरों की नियमित चैकिंग हो, जिससे शोर कम हो। साइरन, हार्न आदि का प्रयोग आबादी क्षेत्र में प्रतिबन्धित हो।

वृक्षों की गहरी मोटी पट्टी शोर को कम करती है। उद्योगों के निकट तथा सड़क के दोनों ओर वृक्ष लगाये जाने चाहिए। थोर, तेंदू, बेल पत्र, जामुन, ग्वारपाठा, केबड़ा, आम, कनेर, पीपल, करन्ज, यूकेलेप्टिस, आसापाला, नीम, पापड़ी, रोहणी, इमली और गुलमोहर आदि अच्छे ध्वनि चूषक हैं।

2. शोर को फैलने से रोकना : कमरों, कारखानों की दीवारों में ध्वनि अवशोषक पदार्थों का उपयोग करके शोर को फैलने से रोका जा सकता है। जो व्यक्ति अधिक शोर वाले स्थानों (फैक्ट्री, औद्योगिक संस्थान, एयरपोर्ट, एक्सप्लोजन (explosion) कार्य आदि पर कार्य करते हों, उन्हें कानों के 'ईयर प्लगस' की सुविधा दी ज़ानी चाहिए। ऐसी व्यवस्था भी शोर के प्रभाव को कम कर सकती है जिसमें कर्मचारी को एक साथ बहुत लम्बे समय तक शोर के स्थान पर न रहना पड़े या कार्य न करना पड़े।

3. शोर की अभिशंषित सीमाओं का पालन करना : हम यह पहले बता चुके हैं कि एक औसत व्यक्ति के ध्वनि की श्रवण क्षमता, जिसे वह दिन-प्रतिदिन के काम में स्वीकार करता है, 80 डीबी होती है।

ध्वनि आवृत्ति 1000 हर्ट्ज स्वीकारी गई है, लेकिन यह भी हर स्थिति में समान नहीं होती है। स्थान (होटल, सोने का कमरा, पुस्तकालय, अस्पताल आदि), समय (प्रातः, दोपहर, सायं, रात्रि, अर्द्धरात्रि आदि), आयु (बालक, जवान व वृद्ध) और मानसिक स्थिति का भी आवश्यक असर होता है। कभी कम ध्वनि भी प्रदूषण का माध्यम बन जाती है और कभी अधिक आवाज भी टाल दी जाती है।

विभिन्न स्थानों पर अभिशंषित और स्वीकार किये जाने योग्य ध्वनि सीमा निम्नांकित तालिका में दर्शाई गई है–

सारणी 18·2
अभिशंषित एवं स्वीकार किये योग्य ध्वनि सीमा

क्षेत्र	विशिष्ट स्थल	ध्वनि सीमा (डीबी में)
स्टूडियो	रेडियो, टी. वी., अन्य संगीत	30-38
सभा भवन	संगीत सभाएँ, चलचित्र, प्रतियोगी खेल	34-38
विद्यालय	अध्ययन कक्ष, पुस्तकालय, प्रयोगशालाएँ, व्याख्यान कक्ष	38-42
प्रार्थना स्थल	पूजा गृह, बाहरी बरामदा	38-42
चिकित्सालय	प्राइवेट कक्ष, आपरेशन कक्ष, कौरीडोर वार्ड्स	38-42
आवास	ग्रामीण क्षेत्र, शहरी क्षेत्र, कॉलोनीज	34-42
रेस्टोरेन्ट्स	भोजन कक्ष, अल्पाहार गृह, बार (शराब घर)	50
स्टोर्स	डिपार्टमेन्टल, रिटेल, सुपरमार्केट	50-54
कार्यालय	प्राइवेट, बैंक, लेखा सम्बन्धी	46-50
वर्कशाप्स	मशीन शॉप, कारपेन्टर शॉप, इलेक्ट्रिक शॉप	70
होटल	नृत्य गृह, निवास कक्ष, प्रतीक्षा कक्ष	42-46
स्पोर्ट्स	जिमनेजियम, स्विमिंग पूल	46-50

(स्रोत : एनवायरमेन्टल क्वालिटी मैनेजमेन्ट : बिन्दु एन. लोहानी, पृष्ठ 112)

कोई भी ध्वनि स्रोत कितने समय तक आवाज करता है यह भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। अधिक तीव्रता वाली ध्वनि यदि अधिक देर तक सुनी जाय तो उसे हानिप्रद की श्रेणी में रखेंगे। 'लोहानी'[1] ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य योग्य शोर सीमा की अवधि को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है–

सारणी 18·3
स्वीकार्य योग्य शोर सीमा की अवधि

ध्वनि तीव्रता (डीबी में)	प्रतिदिन अधिकतम समय
85 डीबी	120 मिनट से अधिक
90 डीबी	120 मिनट से कम
95 डीबी	50 मिनट से कम
100 डीबी	25 मिनट से कम
105 डीबी	16 मिनट से कम
110 डीबी	12 मिनट से कम
115 डीबी	8 मिनट से कम
120 डीबी	5 मिनट से कम

1. बिन्दु एन. लोहानी, **एनवायरमेन्टल क्वालिटी मैनेजमेन्ट** (न्यू देहली : साउथ एशियन पब्लिशर्स, 1984), चैप्टर 4–**स्टैन्डर्ड सैटिंग एण्ड क्राइटेरिया**–पृष्ठ 108।

इससे यह स्वतः ही स्पष्ट है कि अधिक देर तक आवाज में चलने वाला डिस्को, जो सामान्यतया रुचिनुकूल भी है, से भी श्रोता क्यों परेशान हो जाते हैं ? 140 डीबी के आस-पास ध्वनि वाले जैट हवाई जहाज की आवाज को असह्य होते हुए भी इसलिये सहन कर लेते हैं क्योंकि उसके उतरने व चढ़ने की कुल समयावधि 1 मिनट से भी कम होती है।

4. व्यवस्थाओं में अपेक्षित परिवर्तन करना : शोर से होने वाला परिणाम (ध्वनि प्रदूषण का हानिकारक असर) तो उन पर पड़ना ही है, जो वहाँ रहते हैं, अतः जहाँ व्यक्तिगत सम्भव हो वहाँ स्वयं और जहाँ सरकार अथवा संस्थान के अधिकारी प्रभारी हों उन्हें उन व्यवस्थाओं में परिवर्तन कर लेना/देना चाहिए जिससे शोर का न्यूनतम असर पड़े।

कुछ बातें यहाँ सुझाई गई हैं—

1. अपने घरों में रेडियो, टी. वी., टेपरिकार्डर अथवा अन्य मनोरंजन के साधनों को धीमी आवाज में बजायें; सामूहिक कीर्तन, भजन व अखण्ड पाठ जैसे कार्यक्रमों में ऊँची आवाज में लाउडस्पीकरों का उपयोग न करें। स्वयं घर में धीमे बोलें तथा परिवार के सभी सदस्यों को भी धीमे बोलने के लिए कहें।
2. ट्रकों व अन्य भारी वाहनों को यथासम्भव आबादी वाले भागों से निकलने पर रोक लगे। वाहनों के हार्न्स भी तेज आवाज वाले (एयर हार्न्स) न हों। दुपहिया स्वचलित वाहन एवं अन्य कारें, बसें आदि के साइलैन्सरों की नियमित जाँच हो जिससे तेज आवाजों से बचा जा सके। अधिक आवाज वाले कारखाने व उद्योगों को शहर से काफी दूर स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिए।
3. संवेदनशील स्थान जैसे अस्पताल, विद्यालय, अधिक आबादी वाले क्षेत्रों को 'साइलैन्स जोन्स' बना दिया जावे।
4. वृक्ष भी ध्वनि का अवशोषण करते हैं। बड़ी-बड़ी फैक्ट्री, कारखानों के बाहर वृक्षों की मोटी परतों का रोपण करना चाहिये। वृक्ष ध्वनि की तीव्रता को भी कम करते हैं, अनेक प्रकार की जहरीली गैसों को अवशोषित कर लेते हैं तथा मनभावता वातावरण भी बनाये रखते हैं।

5. ध्वनि प्रदूषण के बारे में शिक्षित करना : सभी स्तर व सभी आयु वर्गों के लोगों को ध्वनि प्रदूषण के कारण और उससे होने वाले दुष्परिणामों के बारे में यथेष्ट जानकारी दी जानी चाहिए। समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, रेडियो कार्यक्रम, टी. वी. सीरियल, फिल्म डोकमेन्टरीज, पोस्टर्स आदि कई प्रभावी विधाओं को अपनाया जा सकता है। जैसे-जैसे लोगों को इस अदृश्य प्रदूषण की जानकारी मिलेगी, वैसे-वैसे उनमें शोर से बचने का मानस बनेगा और ध्वनि प्रदूषण से उन्हें राहत मिलेगी।

विद्यालयों में बच्चों को ध्वनि प्रदूषण के बारे में जानकारी देनी चाहिए तथा उन्हें व्यवहार में ढालने को प्रेरित करना चाहिए। वह कक्षा-कक्षों में, पुस्तकालय में कम बोलें; धीमे स्वर में बोलें। यह प्रभाव उन्हें घर पर भी धीमे बोलने को प्रेरित करेगा।

6. ध्वनि प्रदूषण और कानून : जैसे किसी भी समस्या को ठीक से व्यवस्थित करने के लिए कानूनी प्रावधान रखे गये हैं उसी प्रकार ध्वनि-प्रदूषण को रोकने के लिए भी कानून बनाये जाने आवश्यक हैं। अनेक देशों में ऐसे कानून बने हैं और अन्य में इस प्रदूषण को अत्यन्त हानिकारक मानकर बनाये जा रहे हैं। इंग्लैण्ड में शोर रोकथाम अधिनियम, 1960 (नॉइज एबेटमैन्ट एक्ट, 1960) बना है जिसमें रात्रि को 9 बजे से प्रातः 8 बजे तक ध्वनि विस्तारक यन्त्रों पर रोक है। अमेरिका में ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम के लिए शोर नियन्त्रण अधिनियम, 1972 (नॉइज् कन्ट्रोल एक्ट, 1972) बनाया है। जापान में मूल कानून में प्रदूषण निरन्त्रण के सन्दर्भ में पर्यावरणीय जागृति व नियन्त्रण हेतु यथेष्ट प्रावधान है।

लेकिन भारत में शोर नियन्त्रण के सन्दर्भ में कोई अलग से स्पष्ट केन्द्रीय कानून नहीं है। अभी हाल में ही पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 (एनवायरमेन्टल प्रोटेक्शन एक्ट, 1986) में ऐसी व्यवस्था रखी गई है जिसमें किसी भी प्रकार के प्रदूषण के सन्दर्भ में नियम बनाये जा सकते हैं और उन पर विधि संगत कठोरता से पालन किया जा सकता है। इस अधिनियम के तहत इसके सेक्शन 15 में नियमों के पालन न करने पर कड़ी सजायें प्रस्तावित हैं। कानून की अवहेलना पर दोषी व्यक्ति को 5 वर्ष तक की सजा या एक लाख रुपये तक का आर्थिक दण्ड या दोनों दी जा सकती हैं। पहली सजा के बाद

भी यदि प्रदूषण जारी रहता है तो दोषी व्यक्ति को और आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है, जो पाँच हजार रुपये प्रतिदिन तक हो सकता है। यदि प्रदूषण एक वर्ष तक की अवधि से आगे भी चलता है तो दोषी को सात वर्ष तक की कैद दी जा सकती है। पर आज इस अधिनियभ के तहत ध्वनि प्रदूषण के सन्दर्भ में नियम बना कर उन्हें संसद से पारित कराने की महती आवश्यकता है।

इससे पूर्व शोर के सन्दर्भ में जन-उपद्रव को रोकने के लिए सुझाये इंडियन पेनल कोड के सैक्शन 268 अथवा क्रिमीनल प्रोसीजर कोड, 1973 के दसवें अध्याय के सैक्शन 133 तथा ग्यारहवें अध्याय के सैक्शन 144 को काम में लिया जाता था। इनकी सजायें इतनी कम थीं कि इनका कोई महत्त्व ही नहीं था।

राज्य स्तर पर मध्य प्रदेश ने 'संगीत और शोर नियन्त्रण अधिनियम, 1950 (कन्ट्रोल ऑफ म्यूजिक एण्ड नॉइजेज एक्ट, 1950), बिहार सरकार ने 'ध्वनि विस्तारक यन्त्र को बजाने पर नियन्त्रण अधिनियम, 1955 (कन्ट्रोल ऑफ दी यूज ऑफ प्ले ऑफ लाउडस्पीकर एक्ट, 1955) और राजस्थान सरकार ने शोर नियन्त्रण अधिनियम, 1963 (नॉइज कन्ट्रोल एक्ट, 1963) बनाये थे, पर उनकी व्यापक यथार्थता सिद्ध नहीं हो सकी और किसी न किसी प्रकार यह प्रभावहीन रहे हैं।

ध्वनि प्रदूषण को कम करने और उससे बचने के लिए हर स्तर पर बहुत चिन्तन की आवश्यकता है, क्योंकि प्रदूषण के क्षेत्र में धीमे-धीमे जन साधारण की उपेक्षा पाकर इसमें जाने-अनजाने निरन्तर वृद्धि हो रही है। मानव को स्वस्थ, सन्तुलित और समाज में समायोजित होने के लिए उसे इस समस्या से छुटकारा पाना होगा।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'ध्वनि' किसे कहते हैं ? इसकी उत्पत्ति के स्रोत क्या हैं ?
2. 'ध्वनि' की क्या-क्या विशेषताएँ हैं ? ध्वनि की गुणवत्ता (Quality of Sound) को समझाइये।
3. 'शोर' की अभिशंसित सीमाओं का पालन किया जाना क्यों आवश्यक है ?
4. ध्वनि प्रदूषण व्यक्तियों पर क्या प्रभाव डालता है ?
5. ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय बताइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'ध्वनि' हमारे कानों तक कैसे पहुँचती है ?
7. 80dB से भी अधिक आवाज को हम कभी-कभी कैसे सहन कर लेते हैं ?
8. 'हर्ट्ज' (hertz) और 'डैसीबल' (decibel) में अन्तर बताइये।
9. कोई आवाज ऊँची है या नीची है, इस तथ्य को हम ध्वनि की भाषा में कैसे व्यक्त करेंगे ?
10. सामान्य ध्वनि तथा शोर में क्या विशिष्ट अन्तर होता है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'एक कर्कश आवाज' इसे हम कहाँ प्रयोग में लायेंगे—
    (अ) संगीतात्मक ध्वनि (ब) ऊँची आवाज
    (स) शोर (द) प्रबलता
12. डैसीबल को संक्षिप्त रूप में हम लिखते हैं—
    (अ) DB (ब) Db
    (स) db (द) dB
13. बारंबारता का माप होता है—
    (अ) डैसीबल (ब) हर्ट्ज
    (स) सेमी (द) मीटर

14. एक सामान्य व्यक्ति कितने डैसीबल तक की आवाज सहन कर सकता है ?
   (अ) 80 (ब) 100
   (स) 120 (द) 140
15. निम्न में से कौन सा ध्वनि प्रदूषण का प्राकृतिक स्रोत नहीं है—
   (अ) भूकम्प (ब) बादलों का फटना
   (स) तूफान (द) मिक्सी की आवाज

निम्नलिखित प्रश्नों का हाँ/नहीं उत्तर दीजिये—

16. ध्वनि प्रसारण के लिये कोई न कोई माध्यम आवश्यक होता है। (हाँ/नहीं)
17. पानी में ध्वनि की गति से वायु में ध्वनि गति कम होती है। (हाँ/नहीं)
18. ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव सभी आयु वर्ग पर समान होता है। (हाँ/नहीं)
19. कानूनी प्रावधान से ध्वनि प्रदूषण को रोका जा सकता है। (हाँ/नहीं)
20. क्या पॉप संगीत को 'शोर' कहेंगे ? (हाँ/नहीं)

19

वाहनों से प्रदूषण
[VEHICULAR POLLUTION]

● प्रस्तावना
(Introduction)

निरन्तर बढ़ती हुई विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति ने जहाँ देश को अनेक उपलब्धियाँ दी हैं, सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध कराये हैं और जनसाधारण को वैज्ञानिक सोच का आधार दिया है वहीं अनेक जटिलताएँ और समस्याएँ भी विरासत में दी हैं। इनमें से एक प्रमुख समस्या स्वचलित वाहनों से होने वाले वायु-प्रदूषण की है जो समय के साथ-साथ भयानक और विकराल होती जा रही है। सड़क पर दौड़ते पेट्रोल व डीज़ल से चलने वाले वाहन, चाहे कार, बस या ट्रक हों, चाहे स्कूटर, मोटर साइकिल और मोपेड हों, सब मिलाकर एक ऐसा माहौल प्रस्तुत करते हैं कि पैदल चलने वाले तो क्या स्वयं वाहनों में सवार व्यक्ति भी अपने आगे चलने वाले वाहन से निकलने वाले विषैले धुएँ से परेशान हो जाते हैं और अनचाहे ही इस स्थिति से ग्रसित हो मन ही मन बड़बड़ाते हैं और अगले व्यक्ति को कोसते हैं। निरन्तर बढ़ती आबादी को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक वाहन व्यवस्था के लिए चलाये जाने वाले स्कूटर रिक्शा, मोटर साइकिल रिक्शा तथा टैम्पो ने तो प्रदूषण फैलाने में अन्य प्रकार के वाहनों को भी न जाने कितने पीछे छोड़ दिया है। यह अनुमान है कि शहरों में तो 60 प्रतिशत प्रदूषण इन वाहनों के कारण ही है, जो सम्भवतः इस समस्या से सबसे ज्यादा ग्रसित और त्रस्त हैं।

● वाहनों का वर्गीकरण
(Classification of Vehicles)

स्वचलित वाहनों को विभिन्न प्रकार के ईंधन उपयोग के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

1. पेट्रोल से चलने वाले वाहन : जैसे कार, जीप, स्कूटर, मोपेड, मोटर साइकिल, स्कूटर तथा मोटर साइकिल रिक्शा आदि।
2. डीज़ल से चलने वाले वाहन : जैसे बस, ट्रक, टैम्पो आदि।

बदलती टैक्नोलोजी ने इस विभाजन को भी गड़बड़ा दिया है और अब कई प्रकार की कारें, जीप और स्कूटर तथा मोटर साइकिल रिक्शा भी डीज़ल से चलने वाली आ गई हैं। इसका प्रमुख कारण पेट्रोल की लगातार कम होती स्थिति और महँगाई है, क्योंकि सामान्यतया पेट्रोल का भाव डीज़ल के भाव से प्रति लीटर लगभग तिगुना है। एक कारण यह भी है कि पेट्रोल का भण्डारण और वितरण डीज़ल से अपेक्षाकृत महँगा और विध्वसंक है।

● वाहनों से निकलने वाले मुख्य प्रदूषक
(Main Pollutants in the Vehicle Exhausts)

पेट्रोल व डीज़ल वाहनों से निकलने वाले मुख्य प्रदूषक निम्नलिखित होते हैं—

1. कार्बन मोनोक्साइड (Carbon monoxide)
2. कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide)
3. अधजले हाइड्रोकार्बन्स (Unburnt Hydrocarbons)
4. सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide)

5. नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides)
6. लैड यौगिक (Lead Compounds)
7. धुआँ (Smoke)
8. सूक्ष्म कण (Particulates)

यह सभी प्रदूषक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं और निर्बाध रूप से समस्त सजीव एवं निर्जीव वस्तुओं पर अपना कोई न कोई प्रभाव डालते हैं। इसके अतिरिक्त इन प्रदूषकों के समन्वित उत्सर्जन के फलस्वरूप वाहनों के साइलैन्सरों से निकलने वाली 'गन्ध' भी कम हानिकारक नहीं है जो मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन और घबराहट तथा बैचेनी उत्पन्न करती है।

इन प्रदूषकों का जन-साधारण पर सामूहिक प्रभाव होता है, क्योंकि यह सभी हवा में मिलकर उसे विषैली कर देते हैं और वायु में सस्पेन्डेड पर्टीक्यूलेट मैटर (SPM : तैरते पदार्थों के कण) की मात्रा में वृद्धि करते हैं, जो हमें साँस लेने पर हानि पहुँचाते हैं। इन SPM की सुरक्षा-सीमा रिहायशी स्थानों के लिए 150 पीपीएम तथा औद्योगिक क्षेत्र के लिए 600 पीपीएम स्वीकार की गई है, लेकिन आज की वस्तुस्थिति में इन सीमाओं की कोई महत्ता नहीं रह गई है। सड़कों के व्यस्त चौराहे, लोगों के अपने-अपने कार्यालयों में आने-जाने के समय पर बस, स्कूटर या टैम्पो स्टैन्ड और जहाँ पर देखें वहीं सब स्थान मानों प्रदूषण स्थल के पर्याय बन गये हैं। सभी घबराकर उस स्थिति से पीछा छुड़ाने का प्रयास करते हैं जो उनके बस की बात नहीं है।

पेट्रोल व डीज़ल वाहनों से निकलने वाले मुख्य प्रदूषकों की सामान्य मात्रा निम्न प्रकार से अभिशंसित है—

सारणी 19·1
पेट्रोल तथा डीजल वाहनों से उत्सर्जित प्रदूषकों की मात्रा

उत्सर्जन	अभिशंसित मात्रा	
	पेट्रोल वाहन	डीजल वाहन
कार्बन मोनोक्साइड (CO)	3 प्रतिशत	—
सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2)	40 पीपीएम	400 पीपीएम
नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (NO_x)	1100 पीपीएम	300 पीपीएम
अधजले हाइड्रोकार्बन्स (HC)	150 पीपीएम	20 पीपीएम
पर्टीक्यूलेट मैटर (SPM) (सूक्ष्म कण)	0·1 ग्राम/घनमीटर	0·01 ग्राम/घनमीटर

निःसन्देह इतनी मात्रा में वाहनों से निकलने वाले विभिन्न प्रदूषक सुरक्षा सीमा में स्वीकार्य हैं। किसी भी प्रकार के अधिक मात्रा में निकलने वाले प्रदूषकों के लिए वाहन चालक को स्वयं ही कारण जानना चाहिए और उसे ठीक भी कराना चाहिए।

● प्रदूषकों का वर्गीकरण (Classification of Pollutants)

पेट्रोल अथवा डीजल से चलने वाले स्वचलित वाहनों से होने वाले वायुमण्डल के प्रदूषण की अधिकता का इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि शहर का 60 प्रतिशत प्रदूषण केवल इन विविध प्रकार के वाहनों के कारण ही होता है। बाहरी तौर से कम दिखने वाले पेट्रोल से चलने वाले वाहनों द्वारा प्रदूषण डीजल से चलने वाले वाहनों से अपेक्षाकृत अधिक होता है। इसी प्रकार दो स्ट्रोक वाले इंजन चार स्ट्रोक वाले इंजनों से अधिक प्रदूषण फैलाते हैं, क्योंकि तकनीक के अलावा इनकी संख्या भी बहुत अधिक है।

स्वचालित वाहनों का प्रदूषण वाहनों के साइलेन्सरों से निकलने वाली गैसों और अन्य पदार्थों पर आधारित है, जिनकी सूची ऊपर दी गई है। इनका दो प्रकार का वर्गीकरण उपलब्ध है—

1. एल. पी. ऐस्टेनिन तथा के. एन. ब्लैगोस्कलोनोब[1] के अनुसार

स्वचालित वाहनों से निकलने वाले पदार्थों को 6 विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया है। इस वर्गीकरण से हानि वाले और कम अथवा न हानि वाले पदार्थों की जानकारी सहजता से संभव है।

(अ) प्रथम ग्रुप : इसमें नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, हाइड्रोजन और पानी की भाप को शामिल किया जा सकता है जो विषैली नहीं है। कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) को भी इसमें जोड़ा जा सकता है, जो बहुत खतरनाक नहीं है।

(ब) द्वितीय ग्रुप : इस श्रेणी में कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) आती है, जो अत्यन्त विषैली है और बहुत अधिक मात्रा (12 प्रतिशत तक) में निकलती है।

(स) तृतीय ग्रुप : इस समूह में नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स रखे गये हैं, जिसमें नाइट्रोजन मोनोक्साइड तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2) जैसी विषैली गैसें आती हैं।

(द) चतुर्थ ग्रुप : इसमें अनेक कार्बोहाइड्रेट्स पदार्थ, जैसे—इथाइलीन, ऐसीटीलीन, मीथेन, प्रोपेन, टोल्यून, बेन्जपाइरीन आदि होते हैं। बेन्जपाइरीन कैन्सर का कारण बनता है।

(इ) पंचम ग्रुप : इसमें एल्डिहाइड श्रेणी का फार्मेलीन अत्यन्त विषैला पदार्थ लिया गया है।

(फ) षष्टम ग्रुप : इसमें डीजल से चलने वाले वाहनों से निकलने वाले कार्बन हैं, जो कैंसर कारक हैं।

2. ए. एस. सुबरामनियान[2] के अनुसार

स्वचालित वाहनों से निकलने वाले उत्सर्जकों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(अ) नियमित प्रदूषक (Regulated Pollutants) : इनमें (1) कार्बन मोनोऑक्साइड (Carbon monoxide : CO), (2) हाइड्रोकार्बन्स (Hydrocarbons : HC), (3) नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides : NO_x) और (4) सूक्ष्म कण (Particulate Matters : PM) आते हैं, जिनके आधार पर वायुमण्डल में फैल रहे प्रदूषणों के लिये नियंत्रक नियम/उपनियम बनाये जाते हैं।

(ब) अनियमित प्रदूषक (Unregulated Pollutants) : यह सभी प्रदूषक विषैले होते हैं, जैसे (1) लैड (Lead : Pb), (2) सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide : SO_2), (3) बैन्जीन (Benzene), (4) सूक्ष्म कण (Particulate Matters : PM) आदि।

इन दोनों प्रकार के प्रदूषकों में विशिष्ट विभिन्नता यह है कि प्रथम प्रकार के प्रदूषक (नियमित प्रदूषक) के कारण मुख्यतः (क) इंजन तथा वाहन का डिजाइन (Design of the Engines and Vehicles), (ख) परिचालन स्थितियाँ (Operating Conditions) तथा (ग) स्थान का वातावरण (Environment of Place) होते हैं, जबकि द्वितीय प्रकार के प्रदूषक (अनियमित प्रदूषक) ईंधन की गुणवत्ता (Quality of Fuel) पर आधारित होते हैं तथा किसी नियम/उपनियम के अन्तर्गत बंध नहीं सकते जब तक कि ईंधन के घटकों में ही वांछित परिवर्तन न हो।

● विभिन्न प्रदूषकों के हानिकारक प्रभाव (Harmful Effects of Different Pollutants)

आयें अब इन विभिन्न प्रदूषकों की संरचना, इनसे होने वाली हानि तथा यदि सम्भव हो तो इनसे बचने और बचाने के उपायों पर चर्चा करें।

1. कार्बन मोनोक्साइड (Carbon monoxide : CO)

पेट्रोल चलित वाहनों में वायु, कारब्यूरेटर तथा थ्रोटिल के द्वारा इंजन में जाती है तथा थ्रोटिल ही वायु की मात्रा भेजने को नियंत्रित करता है। कारब्यूरेटर वायु में पेट्रोल मिलाता है। आदर्श स्थिति में इंजन में भेजी गई वायु व पेट्रोल की मात्रा का सही अनुपात 14 : 5 है। इस दशा में दहन के उत्पाद मुख्यतः कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी होते हैं। अगर मिश्रण में वायु की मात्रा कम होती है तो पेट्रोल के पूरे दहन के लिए ऑक्सीजन की मात्रा कम पड़ती है और ईंधन का सम्पूर्ण दहन नहीं हो पाता है, तब उत्पादों

1. L.P. Astanin and K.N. Blagosklonov, **Conservation of Nature** (USSR : Russian Text Progress Publishers, 1983), pp. 148.
2. A.S. Subramanian, **"Fuelled Pollution : A Question of Quality". Article in the survey of the Environment-2000** [The Hindu, Kasturi & Sons Ltd., Chennai (India), 2000], pp. 121-25.

में कार्बन डाइऑक्साइड के साथ-साथ कार्बन मोनोक्साइड भी कार्बन के आंशिक दहन के कारण बनती है। स्पष्ट है कि जितनी वायु की मात्रा पेट्रोल के साथ अपेक्षित अनुपात से कम पहुँचेगी उतनी ही कार्बन मोनोक्साइड अधिक बनेगी।

डीज़ल वाहनों में वायु और ईंधन का दहन बहुत उच्च ताप पर होता है तथा वायु और ईंधन की मात्रा का अनुपात भी सदैव स्वतः नियन्त्रित रहता है। अतः ईंधन का दहन पूर्णतया कार्बन डाइऑक्साइड एवं पानी में हो जाता है। इस प्रकार या तो कार्बन मोनोक्साइड बनती ही नहीं है और यदि बनती भी है तो उसकी मात्रा अपेक्षाकृत अत्यन्त अल्प होती है।

कार्बन मोनोक्साइड एक अत्यन्त विषैली गैस है जो रक्त में पाये जाने वाले हीमोग्लोबिन पदार्थ से क्रिया कर कार्बोक्सी-हीमोग्लोबिन बनाती है जिससे रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। शरीर में ऑक्सीजन की कमी से शारीरिक क्रियायें मन्द हो जाती हैं तथा व्यक्ति घुटन का अनुभव करने लगता है। श्वसन द्वारा ली गई वायु में कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा 600 पीपीएम से अधिक होने पर मृत्यु जैसे घातक परिणाम सम्भव हैं। इस प्रदूषक का विशेष असर श्वसन प्रक्रिया पर होता है और फेफड़ों की सामान्य कार्य प्रणाली को प्रभावित करता है। हृदय रोगियों तथा गर्भवती महिलाओं और गर्भस्थ शिशुओं के लिए अधिक घातक है।

कार्बन मोनोऑक्साइड की उत्पत्ति को वाहन के इंजन की सही ट्यूनिंग कराने से कम किया जा सकता है। इससे वायु और ईंधन का सही अनुपात इंजन को मिलता रहेगा और ईंधन के सम्पूर्ण दहन के कारण इस गैस का उत्सर्जन न्यूनतम अथवा नगण्य रहेगा।

2. कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide : CO_2)

यह ऊपर वर्णित किया गया है कि ईंधन के वायु के साथ सम्पूर्ण दहन होने पर कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी उत्पाद के रूप में उत्सर्जित होते हैं। यह अपेक्षाकृत कम हानिकारक है और वायु चक्र में एक घटक के रूप में अन्तर्निहित हो जाती है। यद्यपि इसके अन्य प्रभाव में विश्वतापन प्रमुख है जो इस समय का चर्चा का विषय नहीं है।

3. अधजले हाइड्रोकार्बन (Unburnt Hydrocarbons : HC)

इनके बनने का मुख्य कारण वाहन के इंजन के दहन कक्ष की अपेक्षाकृत ठंडी दीवारों के पास ईंधन का पूरी तरह नहीं जल पाना है। अतः निर्वात पम्प द्वारा कुछ बिना जले अथवा अधजले हाइड्रोकार्बन्स वायुमण्डल में छोड़ दिये जाते हैं। थ्रोटिल के असंयत रूप से उपयोग के कारण भी (अचानक तेजी से खोलना अथवा बन्द करना) अधजले हाइड्रोकार्बन्स वाहन से उत्सर्जित होते हैं। अधजले हाइड्रोकार्बन्स का उत्सर्जन अधिकतर ऐसे वाहनों से होता है जिन्हें 'दो स्ट्रोक' श्रेणी में माना जाता है। इनमें स्कूटर, तिपहिया स्कूटर व टैम्पो, मोटर साइकिल और मोपेड आते हैं।

वाहनों से उत्सर्जित बिना जले अथवा अधजले हाइड्रोकार्बन्स शरीर में साँस के साथ प्रवेश लेते हैं और कैन्सर जैसी भयानक बीमारी को जन्म देते हैं। फेफड़ों को यह अधिक प्रभावित करते हैं। वायुमण्डल में अनेक रासायनिक अभिक्रियाओं में भाग लेकर कई हानिकारक रसायन पदार्थों का निर्माण करते हैं। **यह दुर्भाग्य की बात है कि इस समस्या का भी कोई सम्पूर्ण समाधान नहीं है।**

4. सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide : SO_2)

इसका निर्माण भी इंजन के दहन कक्ष में होता है जो ईंधन में रहने वाले सल्फर यौगिकों के जलने से उत्पन्न होता है। श्वसन के साथ शरीर में प्रवेश कर यह गैस फेफड़ों तथा शरीर के अन्दर अनेक भाग, जहाँ से यह गुजरती है, हानि पहुँचाती है। गले की घुटन, नाक से रक्त का बहना, आँखों में जलन, खाँसी तथा ब्रोंकाइटिस और कई शारीरिक व्याधायें इससे होती हैं।

नाइट्रोजन डाइऑक्साइड की भाँति वायुमण्डल की आर्द्रता के साथ सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है, जो भूमि प्रदूषण, फसलों का नष्ट होना तथा पीने के पानी के स्रोतों को दूषित करने का मुख्य कारण बनती है। सल्फर डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा वायु की गुणवत्ता को कम करती है और उसे विषैली बनाती है।

चूँकि इस गैस का उत्पाद ईंधन में पाये जाने वाले सल्फर यौगिकों के ऑक्सीकरण के कारण होता है, अतः इससे बचाव केवल ईंधन में सम्बन्धित यौगिकों के न रहने से ही सम्भव है जो उपभोक्ता के हाथ की बात नहीं है।

5. नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides : NO_x)

नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स इंजन के दहन कक्ष में उच्च ताप पर ऑक्सीजन और नाइट्रोजन के मिलने से बनते हैं। यह उच्च ताप स्पार्क प्लग में ज्वलन से उत्पन्न होता है जो 2500 डिग्री सेल्सियस तक भी सम्भव है।

नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स (NO_x) सामान्यतया नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2) के रूप में बनते हैं, जिनमें नाइट्रिक ऑक्साइड का प्रतिशत लगभग 95 प्रतिशत तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड 5 प्रतिशत होता है। नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) की मात्रा बहुत कम 0·5 पीपीएम (0·00005%) होती है जो नगण्य है। यद्यपि यह नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) स्वयं स्वास्थ्य को कोई हानि नहीं पहुँचाते हैं, लेकिन इनका अधिकांश भाग नाइट्रोजन डाइऑक्साइड में (NO_2) में परिवर्तित हो जाता है, जो अत्यन्त विषैली और घातक गैस है।

यह श्वसन क्रिया को प्रभावित करते हैं तथा सूँघने और दृष्टि की शक्ति को हानि पहुँचाते हैं। वायुमण्डल में पानी (आर्द्रता) के साथ नाइट्रिक अम्ल बनाते हैं, जिससे वायुमण्डल विषाक्त होता है। वर्षा के रूप में नाइट्रिक अम्ल भूमि को खराब करते हैं, फसल को नष्ट करते हैं और पानी के स्रोतों को प्रदूषित करते हैं। बड़ी-बड़ी इमारतों को तेजाबी वर्षा से प्रभावित कर उनके सौन्दर्य को नष्ट करते हैं।

इस समस्या से बचाव की कोई अत्यन्त कारगर तकनीक अभी तक ज्ञात नहीं है।

6. लैड (Lead : Pb)

ईंधन के स्वतः विस्फोटन को रोकने के लिए मूल स्रोत पर ही 'टेट्रा इथाइल लैड' ईंधन में मिलाया जाता है, जिसके ऑक्सीकरण से ही लैड यौगिक वायुमण्डल में आते हैं, जो अत्यन्त विषैले और घातक हैं। वायुमण्डल में पाये जाने वाले लैड का अधिकांश भाग वाहनों द्वारा ही उत्सर्जित होता है। श्वसन अथवा अन्य किसी भी प्रकार लैड के छोटे-छोटे कण शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और गुर्दे, मस्तिष्क और स्नायु संस्थान को प्रभावित करते हैं। यह यौगिक पक्षाघात का कारण भी बनता है। बच्चों के लिए बहुत हानिकारक है तथा विशेषतः उनकी स्मरण शक्ति को नष्ट करता है और उनमें आलस्य पैदा कर काम करने की शक्ति को कम करता है।

इससे बचाव तभी सम्भव है जबकि स्रोत पर ही लैड यौगिक मिलाने का कोई विकल्प उपयोग में लाया जाय। केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल द्वारा किये गये शोध में यह बताया है कि सड़कों के दोनों ओर जामुन की सघन वृक्षावली लगाने से इसके हानिकारक प्रभाव को कुछ हद तक कम किया जा सकता है, क्योंकि इस जाति के वृक्ष लैड यौगिकों को अवशोषित कर लेते हैं।

7-8. धुआँ और सूक्ष्म कण (Smoke and Particulates : SPM and PM)

वाहनों के चलने के समय उनके साइलैन्सरों से निकलने वाले धुएँ में पाये जाने वाले विभिन्न प्रदूषकों का विस्तृत विवेचन हम कर चुके हैं। पर फिर भी धुआँ तत्काल आँखों, नाक व त्वचा पर अपना प्रभाव डालता है और शारीरिक हानि पहुँचाता है। **एक ही स्पीड पर और निर्धारित चाल से साइलेन्सर की धुआँ की मात्रा को नियंत्रित और कम किया जा सकता है।**

इसके अतिरिक्त भी दो पदार्थ (1) बैन्जीन (Benzene) तथा (2) ओजोन गैस (Ozone Gas) भी भारी हानि पहुँचाते हैं।

इन सभी का एक संक्षिप्त सामूहिक लेखा-जोखा निम्न सारणी में समेकित किया गया है, जिससे एक दृष्टि में ही वाहनों से निकलने वाले सभी प्रदूषकों से जानकारी मिल सके।

सारणी 19.2

विभिन्न प्रदूषकों के स्रोत तथा उनका प्रभाव

क्र. सं.	प्रदूषक	मुख्य स्रोत	प्रभाव
1.	कार्बन मोनोऑक्साइड (Carbon monoxide) : CO	सभी प्रकार के स्वचालित वाहन; बिना केटेलेटिक कनवर्टर वाले वाहनों से अधिक।	हीमोग्लोबिन की कमी से शरीर में ऑक्सीजन की मात्रा में कमी होना; अधिक हृदय रोग की संभावना; श्वसन क्रिया को भी प्रभावित करता है; घुटन पैदा करता है।

2.	कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide) : CO_2	कार्बन मोनोऑक्साइड के आक्सीजनीकृत से।	अपेक्षाकृत कम हानिकारक; मात्रा भी नगण्य।
3.	अधजले हाइड्रोकार्बन्स (Unburnt Hydro-carbons) : HC	पेट्रोल चलित वाहनों से अधिक; दो स्ट्रोक श्रेणी वाले वाहन जैसे—स्कूटर, मोटरसाइकिल तथा मोपेड से अधिक; निर्वात पम्पों से निकला अधजला ईंधन।	आँखों में जलन; श्वसन क्रिया पर प्रभाव; कैन्सर जैसी भयानक बीमारी उत्पन्न करते हैं।
4.	सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide) : SO_2	पेट्रोल तथा डीजल दोनों प्रकार के वाहनों से सल्फर के कारण।	श्वसन क्रिया प्रभावित; खाँसी व अस्थमा; हृदय रोग तथा केन्सर की संभावना; अपंग बच्चों का जन्म; आँखों में जलन।
5.	नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides) : NO_x	डीजल के वाहनों से अधिक, पेट्रोल वाहनों से कम।	आँखों में जलन; श्वसन में कठिनाई; अस्थमा की संभावना; केन्सर वृद्धि में सहायक।
6.	लैड (Lead) : Pb	पेट्रोल वाहनों से लैड यौगिकों के मिलाने के कारण।	मस्तिष्क, जनन संबंधी तथा रक्त संचार तन्त्रों को प्रभावित करता है। बच्चों को मंद बुद्धि वाला बना देता है; उच्च रक्त-चाप तथा श्वसन क्रिया पर प्रभाव।
7.	सूक्ष्म कण (Particulate Matters) : PM	डीजल वाहनों से अधिक; दो स्ट्रोक श्रेणी वाले वाहनों से विशेष।	श्वसन क्रिया को प्रभावित करता है।
8.	बैन्जीन (Benzene)	वाहनों के ईंधन से दहन क्रिया के फलस्वरूप।	कैन्सर का मुख्य कारण; गर्भवती महिलाओं द्वारा अपंग बच्चों का जन्म।
9.	ओजोन (Ozone) : O_3	हाइड्रोकार्बन्स तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड्स की संक्रिया से।	आँखों में जलन; श्वसन क्रिया प्रभावित; संक्रामक रोगों का कारण; बीमारी में वृद्धि।

स्रोत : Survey of the Environment-2000; The Hindu.
Types of Pollutants and their effects, p. 123

• उत्सर्जित प्रदूषकों के मानक (Pollution Emission Standards)

वाहनों से होने वाले प्रदूषण को नियंत्रित करने एवं उसके व्यापक नियमन हेतु 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' (WHO) ने विभिन्न प्रकार के वाहनों से उत्सर्जित होने वाले विभिन्न प्रदूषकों का एक मानक प्रस्तावित किया है, जो निम्न प्रकार है—

सारणी 19·3
वाहनों के विभिन्न उत्सर्जित प्रदूषकों के मानक

(मात्रा : ग्राम प्रति किलोमीटर)

वाहन	सूक्ष्म कण	सल्फर डाइ-ऑक्साइड	नाइट्रोजन ऑक्साइड	कार्बन मोनो-ऑक्साइड	हाइड्रोकार्बन्स
हल्के वाहन (पेट्रोल)	0·33	0·68	3·20	4·00	6·00
भारी वाहन (पेट्रोल)	0·45	0·39	0·99	0·21	11·00
भारी वाहन (डीज़ल)	0·75	1·50	2·10	2·10	12·70
मोटर साइकिल	0·20	0·02	0·07	10·00	17·00

यह प्रयास होना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के वाहन इन प्रस्तावित सीमाओं का पालन करें तभी वाहन से होने वाले प्रदूषण पर नियन्त्रण किया जाना सम्भव है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने पूरे विश्व के देशों के लिये उपर्युक्त वाहन प्रदूषण के मानक प्रस्तावित तो किये पर इन्हें कुछ देश ही, जिनके पास आर्थिक साधन और तकनीक उपलब्ध थी, पूरे कर पाये। शेष देश अधिकतम प्रयास करने और जूझने के सिवा कुछ नहीं कर सके, क्योंकि उनकी प्राथमिकताओं में यह कई स्तर नीचे रहा। जिन समृद्धशाली देशों ने इसमें सफलता पाई उन्होंने निम्न तरीकों को अपनाया—

1. इंजिन की बनावट में परिवर्तन,
2. साइलेन्सर की स्थिति में बदलाव,
3. केटेलेटिक कनवर्टर्स का उपयोग,
4. ईंधन में सल्फर, बैन्जीन, लैड आदि जैसे विषैले पदार्थों के कम उत्सर्जन हेतु शोध तथा प्रयोग [विशेषकर बिना लैड वाला पेट्रोल (Unleaded Petrol)]

इन बिन्दुओं में हम अन्तिम दो पदों की विशेष रूप से चर्चा करेंगे—

❑ केटेलैटिक कनवर्टर (Catalytic Converter)

यह एक विशेष रूप से निर्मित साधन अथवा यन्त्र हैं जिसे वाहनों के 'टेल पाइपों' के साथ लगाया जाता है जो वाहनों में ईंधन के जलने के फलस्वरूप उत्पन्न विषाक्त उत्सर्जन को हानिरहित उत्पादों में बदल देता है। सामान्य 'केटेलेटिक कनवर्टर' में संवेदनशील धातुओं, जैसे प्लेटीनम, रेडियम और पैलेडियम, का प्रयोग किया जाता है जो कार्बन मोनोक्साइड और हाइड्रोकार्बन को ऑक्सीकृत कर कार्बन डाइऑक्साइड और जलवाष्प में बदल देता है। 'तीनमार्गी केटेलेटिक कनवर्टर' (Three Way Catalytic Converter) में नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स जो प्रदूषणकारी तत्त्वों में प्रमुख हैं, अवकृत होकर वायुमण्डलीय नाइट्रोजन में परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रकार 'केटेलेटिक कनवर्टर्स' कुछ क्षणों में ही विषाक्त पदार्थों को हानि रहित यौगिकों में बदल देता है। इससे 'उत्प्रेरक परिवर्तक' (Catalytic Converter) युक्त वाहनों से प्रदूषण भार कम हो जाता है।

इस प्रकार के उपकरण का उपयोग हमारे देश में वस्तुतः सन् 1995 से ही प्रारम्भ हुआ, जबकि विकसित और अन्य विकासशील देश में इनका प्रयोग काफी पहले से ही होने लगा था। यह उपकरण विशेषतः पेट्रोल और डीजल की कारों के लिये प्रचलन में आया जिनकी संख्या लाखों में थी और उनमें निरन्तर वृद्धि हो रही थी।

❑ सीसा रहित पेट्रोल (Unleaded Petrol)

अभी कुछ वर्ष पहले तक जो हम सामान्य पेट्रोल का उपयोग कर रहे थे उसमें ईंधन के स्वयं विस्फोटन को रोकने के लिये मूल स्रोत पर ही टेट्रा इथाइल लैड (Tetra Ethyl Lead) मिलाया जाता था। यह कार्य तेल शोधन कारखानों में 'एण्टी नाकिंग' कम्पाउण्ड के तौर पर ईंधन के ऑप्टेन गुण बढ़ाने के लिये आवश्यक था (ईंधन के उच्च ऑक्टेन संख्या से इंजिन में नॉकिंग के कारण खराबी नहीं आती)। पर चूँकि लैड एक बहुत विषैला पदार्थ है और इसके रसायन (यौगिक) उत्सर्जन के समय वायुमण्डल में जाते हैं तो ये बहुत हानिकारक होते हैं तथा विषैला और घातक प्रभाव प्राणी जगत् पर डालते हैं, अतः इसकी मात्रा को कम करने की आवश्यकता महसूस हुई। श्वसन से यह लैड कण शरीर से प्रवेश कर जाते हैं जिससे मस्तिष्क, जिगर, गुर्दे तथा आंतों की कार्यकुशलता प्रभावित होती है। यह पक्षाघात का कारण भी बनता है और बच्चों की स्मरण शक्ति को नष्ट करता है। गर्भवती महिलाओं के लिए भी इससे कई प्रकार की हानियाँ हो सकती हैं।

सीसा रहित पेट्रोल सबसे पहले देश के 4 महानगरों में प्रारम्भ किय गया था और फिर शनैः-शनैः दूसरे बड़े शहरों में भी अब सीसा रहित पेट्रोल ही मिल रहा है। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पहले जहाँ पेट्रोल में लैड की मात्रा 0.15 ग्राम प्रति लीटर थी, वह सीसे-रहित पेट्रोल में क्रम तो हो गई

पर तब भी यह अभी 0.013 ग्राम प्रति लीटर है, जिसे भी बच्चों के मानसिक विकास में रुकावट डालने का कारण बताया गया है। अब यह प्रयास किया जा रहा है कि लैड की मात्रा 0.00% ग्राम प्रति लीटर रहे। इस हेतु ईंधन के घटकों पर शोध चल रहे हैं।

□ **पेट्रोल में बैन्जीन की मात्रा में कमी (Less Proportion of Benzene in Petrol)**

बैन्जीन एक ऐसा घातक और विषैला पदार्थ है, जिससे केन्सर होने का भय रहता है। इसकी सुरक्षित मात्रा 3.5% (आयतन से) स्वीकार की गई है, लेकिन दिल्ली में अधिक पेट्रोल की खपत के कारण इसकी मात्रा केवल 1% (आयतन से) रखी गई है। संभावना है कि पूरे देश में ही बेन्जीन उत्सर्जन की मात्रा 1% (आयतन से) हो जाय।

□ **पेट्रोल तथा डीजल वाहनों में सल्फर की मात्रा (Quantity of Sulphur in Petrol & Diesel driven Vehicles)**

ईंधन में सल्फर की अधिक मात्रा से उत्सर्जन में सल्फर डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा अपेक्षित ही है, जो बहुत हानिकारक गैस है। यह प्रयास किया जा रहा है कि वर्तमान में ईंधन में सल्फर की स्वीकृत मात्रा 0.05 से 0.1% (भार से) को 0.015% (भार से) तक ले आया जाय। अनेक विकसित देश तो यह लक्ष्य पूर्व में ही प्राप्त कर चुके हैं और अब यह देश सन् 2005 तक 0.005% (भार से) का लक्ष्य प्राप्त करने लगे हैं।

• भारत के सुप्रीम कोर्ट द्वारा कारों के लिये निर्धारित मानक (Prescribed Standards for Cars by Supreme Court of India)

पेट्रोल तथा डीजल कारों के लिये भारत की सुप्रीम कोर्ट ने अपने आदेश दिनांक 29 अप्रैल, 1999 से यूरो-I (Euro-I) तथा यूरो-II (Euro-II) के नाम से निम्न मानक निर्धारित किये हैं—

सारणी 19.4
पेट्रोल तथा डीजल कारों के लिये यूरो-I, यूरो-II मानदण्ड

स्तर	कार्बन मोनोऑक्साइड : CO (ग्राम/किमी)		हाइड्रोकार्बन्स + नाइट्रोजन ऑक्साइड : $HC + NO_x$: ग्राम/किमी		सूक्ष्म कण : PM ग्राम/किमी	
	पेट्रोल	डीजल	पेट्रोल	डीजल	पेट्रोल	डीजल
1996	8.68-12.40	5.7	3-4.36	2.2	–	–
यूरो-I (2000 से लागू; दिल्ली में 1 जून 1999 से)	3.16	3.16	1.13	1.13	–	0.18
यूरो-II (2005 से लागू; दिल्ली में 1 अप्रैल, 2000 से)	2.20	1.00	0.50	0.70 से 0.90	–	0.08 से 0.10

स्रोत : Down To Earth, CSE New Delhi, May 31, 1999; p. 15

• यूरो-III व यूरो-IV में सल्फर, लैड तथा बेन्जीन की मात्रा में निरन्तर और कमी होगी।

• अन्य प्रकार के वाहनों के लिये उत्सर्जन मानक : 1991-2000
(Emission Standards for other Vehicles : 1991-2000)

सारणी 19.5
अन्य प्रकार के वाहनों के लिये उत्सर्जन मानक
(1991-2000)

(अ) पेट्रोल चलित वाहन–

क्र. सं.	वाहन का प्रकार और प्रदूषक	मात्रा (ग्राम/किमी)		
		अप्रैल, 1991	अप्रैल, 1996	अप्रैल, 2000
1.	द्विपहिया वाहन–			
	• कार्बन मोनोऑक्साइड : CO	15-35	4.5	2.4
	• हाइड्रोकार्बन्स : HC	10-12	-	-
	• हाइड्रोकार्बन्स + नाइट्रोजन ऑक्साइड : HC + NOx	-	3.6	2.4
2.	तिपहिया वाहन–			
	• कार्बन मोनोऑक्साइड : CO	40	6.8	4.8
	• हाइड्रोकार्बन्स : HC	15	-	-
	• हाइड्रोकार्बन्स + नाइट्रोजन ऑक्साइड्स : HC + NOx	-	5.4	2.4

(ब) डीजल चलित वाहन–

क्र. सं.	वाहन का प्रकार और प्रदूषक	मात्रा (ग्राम/किलोवाट/घण्टा)		
		अप्रैल, 1991	अप्रैल, 1996	अप्रैल, 2000
3.	भारी वाहन			
	• कार्बन मोनोऑक्साइड : CO	14.0	11.2	4.5
	• हाइड्रोकार्बन्स : HC	3.5	2.4	1.1
	• नाइट्रोजन डाइऑक्साइड्स : NOx	18.0	14.4	8.0
	• सूक्ष्म कण : PM	–	–	0.36
	• सूक्ष्म कण : SPM	–	–	0.61

स्रोत : मनोरमा इयर बुक-2000, पृष्ठ 142।

• वाहनों में उत्सर्जकों का मापन
(Measurement of Vehicular Pollution)

केन्द्र स्तर पर मोटर वाहन एक्ट सर्वप्रथम 1939 में बना था और जिसे 1982 में और पुनः अभी कुछ वर्ष पूर्व संशोधित किया गया है, जिसके आधार पर राज्य सरकारों को वाहनों से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए उपयुक्त उपाय करने की स्वतन्त्रता दी है। विभिन्न राज्यों में नव संशोधित अधिनियम के आधार पर नियमों के तैयार करने की प्रक्रिया तीव्र गति पर है। किन्हीं राज्यों में उन्हें लागू भी किया गया है। मोटेतौर से यह प्रावधान है–

1. कोई भी वाहन तब तक सड़क पर नहीं चलेगा जब तक उसे निर्धारित मानकों के आधार पर परिवहन विभाग द्वारा प्रमाणित न कर दिया जाय।
2. एक निश्चित अवधि के बाद पुनः वह वाहन अधिकृत अधिकारी द्वारा चैकिंग कर दिये गये प्रमाण-पत्र के आधार पर ही चल सकेगा।
3. वाहनों से उत्सर्जित पदार्थों की न्यूनतम सीमा निर्धारित है, आदि-आदि।

जानकारी के अनुसार देश में सर्वप्रथम महाराष्ट्र सरकार ने नवम्बर 1985 में मोटर वाहन एक्ट लागू

किया था जिसके आधार पर वाहनों के लाइसेन्स के नवीनीकरण के समय एक प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करना आवश्यक है कि निर्वात पम्पों (साइलैन्सरों) से निकलने वाली प्रदूषक गैसें निम्न निर्धारित मानकों के अनुसार ही हैं—

(अ) पेट्रोल से चलने वाले वाहन

1. नये वाहन	3·5 प्रतिशत कार्बन मोनोक्साइड
2. 5 वर्ष पुराने वाहन अथवा जो 80,000 किमी चल चुके हैं।	4·5 प्रतिशत कार्बन मानोक्साइड

(ब) डीज़ल से चलने वाले वाहन

1. नये वाहन	65 HSU धूम्र घनत्व
2. 5 वर्ष पुराने वाहन अथवा जो 80,000 किमी चल चुके हैं।	75 HSU धूम्र घनत्व

(HSU = हाट्रिज स्मोक यूनिट)

वाहनों से निकलने वाले उत्सर्जकों के मापन के लिए अब बाजार में दो प्रकार के मापक उपकरण उपलब्ध हैं, जिन्हें 'ऐनेलायजर' या 'विश्लेषक' कहा जाता है। एक केवल कार्बन मोनोक्साइड के मापन के लिए है जिसे सभी प्रकार के (दो अथवा चार स्ट्रोक वाले) वाहनों के लिए उपयोग किया जा सकता है। दूसरे प्रकार के विश्लेषक में कार्बन मोनोऑक्साइड तथा हाइड्रोकार्बन एवं धुएँ की मात्रा मापी जा सकती है। यह केवल चार स्ट्रोक वाले वाहनों के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

• वाहन प्रदूषण रोकने के उपाय (Ways to Check Vehicular Pollution)

वाहनों द्वारा होने वाला प्रदूषण कई बातों पर निर्भर करता है जिनमें वाहन का प्रकार, ईंधन की गुणवत्ता, आवागमन हेतु प्रयुक्त किये जा रहे मार्ग, चालक की दक्षता, निर्धारित स्पीड हेतु परिवहन अधिकारियों द्वारा प्रस्तावित मानक तथा उसका नियन्त्रण आदि प्रमुख हैं। केवल अधिनियम व नियमों के आधार पर प्रदूषण रोका जा सके यह सम्भव नहीं है। दूसरे आदर्श स्थितियों के अभाव में प्रदूषण के कारणों को ध्यान में रख कर कुछ ऐसे नियमों का भी चलन हो जिसका जनसाधारण द्वारा पालन किया जा सके।

पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए कुछ ऐसे उपायों की ओर भी ध्यान दिया जाना उचित प्रतीत होता है जिससे राष्ट्रीय बचत भी हो और प्रदूषण को भी रोक लग सके। इस हेतु सार्वजनिक वाहन प्रणाली की प्रचुरता आवश्यक है। लोगों में यह मानस बनाना चाहिए कि वे अपने स्वतन्त्र वाहन का न्यूनतम उपयोग करें। इससे पेट्रोल व डीज़ल की बचत होगी, दुर्घटनाओं में कमी आयेगी और प्रदूषण भी कम होगा। साइकिलों के चलन को भी बढ़ावा देना चाहिए। राज्य सरकारें इस हेतु सब्सिडी (अनुदान) देने की बात पर भी विचार कर सकती हैं।

वाहन प्रदूषण को कम करने हेतु कुछ सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं, जिनके आधार पर हम इस संकट से जूझने में अपने स्तर पर भी कुछ योगदान कर सकेंगे—

1. वाहन में ईंधन प्रामाणिक पेट्रोल पम्प से ही सीधे भरवावें। खुले अथवा टिनों में रखे ईंधन से बचें।
2. वाहन की नियमित जाँच करायें; ट्यूनिंग सही रखें।
3. गाड़ी के पहियों में हवा निर्धारित मानदण्ड के अनुसार अवश्य रखें।
4. वाहन को अभिशंसित गति से ही चलावें।
5. निरर्थक क्लच तथा ब्रेक्स का उपयोग न करें।
6. उत्सर्जन मानदण्ड के गड़बड़ा जाने पर कुशल मैकेनिक से वाहन की जाँच करायें।
7. स्पार्क प्लग वर्ष के अन्त में बदल दें।
8. कभी-कभी साइलेन्सर में अधिक कार्बन आ जाने से गाड़ी को नियमित गति नहीं मिलती है, अथवा वह चलते-चलते रुक जाती है। इसकी सफाई का भी ध्यान रखें।

9. निर्धारित अथवा अभिशंषित भार से अधिक गाड़ी को लोड न करें।
10. गाड़ी के ईंधन में आवश्यकतानुसार मोबिल ऑयल मिलाना न भूलें; इससे इंजन सुरक्षित रहता है और टूट-फूट भी कम होती है।

हमें यह बात ध्यान में रखनी है कि वाहन हमें सहयोगी बन सुविधा तो अवश्य देवें लेकिन प्रदूषण का कारण न बनें। बढ़ती जनसंख्या और वैज्ञानिक प्रगति का तालमेल तभी उचित रूप से संभव है जब हम स्वयं उसके कार्य-कलापों में पूरा सहयोग देवें।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. स्वचलित वाहनों से निकलने वाले मुख्य प्रदूषक कौन-कौन से हैं ? किसी एक प्रदूषक के विषय में लिखिये।
2. नियमित प्रदूषक और अनियमित प्रदूषकों की व्याख्या करते हुये उनके उदाहरण दीजिये।
3. किन-किन प्रदूषकों से ईंधन की गुणवत्ता कम हो जाती है ? सल्फर की मौजूदगी से किस प्रकार की हानि संभव है ?
4. केटेलेटिक कनवर्टर की कार्य प्रणाली समझाइये।
5. यूरो-I और यूरो-II क्या हैं ? यह मानदण्ड स्वचलित कारों में कब से लागू माने जायेंगे ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. अधजले हाइड्रोकार्बन्स का मनुष्य के शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
7. लैड यौगिक का प्रयोग पेट्रोल चलित वाहनों में ही क्यों किया जाता है ?
8. वाहनों में उत्सर्जनों का मापन किस-किस उपकरण से किया जाता है ?
9. वाहन प्रदूषण को कम करने के लिये हमें स्वयं क्या करना उचित है ?
10. क्या ओजोन गैस भी वाहन उत्सर्जन प्रदूषण है ? इसका निर्माण कैसे होता है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. पेट्रोल चलित वाहन से उत्सर्जित सर्वाधिक जहरीली गैस कौन-सी है ?
    (अ) सल्फर डाइऑक्साइड (ब) कार्बन डाइऑक्साइड
    (स) कार्बन मोनोऑक्साइड (द) नाइट्रोजन डाइऑक्साइड
12. वाहन उत्सर्जन से निकला कौन-सा तत्त्व यौगिक शरीर में हीमोग्लोबिन की कमी करता है ?
    (अ) बैन्जीन (ब) सीसा (स) सल्फर (द) कार्बन
13. पेट्रोल में स्रोत पर ही 'टेट्रा इथाइल लैड' क्यों मिलाया जाता है ?
    (अ) वाहन की गति तेज करने के लिये
    (ब) पेट्रोल की खपत कम करने के लिये
    (स) ईंधन के स्वयं विस्फोट को रोकने के लिये
    (द) सम्पूर्ण ईंधन दहन के लिये
14. सन् 2005 तक पेट्रोल व डीजल में सल्फर की मात्रा (भार से) कितनी अभिशंसित है ?
    (अ) 0.05% (ब) 0.10% (स) 0.015% (द) 0.005%
15. वाहन उत्सर्जन के प्रदूषकों को कम करने के लिये उपयोग में लिया जाता है—
    (अ) कार्ब्यूरेटर (ब) कैटेलेटिक कनवर्टर
    (स) स्पीडोमीटर (द) साइलेन्सर

निम्न प्रश्नों का हाँ/नहीं में उत्तर दीजिये—

16. कार्बन डाइऑक्साइड गैस कार्बन मोनोऑक्साइड से अधिक विषैली है। (हाँ/नहीं)
17. वाहन उत्सर्जन में गैसों की मात्रा ग्राम/किमी में मापी जाती है। (हाँ/नहीं)
18. स्कूटर को 'दो स्ट्रोक श्रेणी' वाहनों में माना जाता है। (हाँ/नहीं)
19. लैड यौगिक उत्सर्जन से कैन्सर की संभावना बनी रहती है। (हाँ/नहीं)
20. कैटेलेटिक कनवर्टर को स्वचालित वाहनों में कार्ब्यूरेटर के साथ लगाया जाता है। (हाँ/नहीं)

20

औद्योगिक प्रदूषण
[INDUSTRIAL POLLUTION]

● प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी देश की खुशहाली, वहाँ के लोगों का रहन-सहन, खाना-पीना, शिक्षा, चिकित्सा सुविधा आदि इस बात पर निर्भर करती हैं कि वहाँ की आर्थिक स्थिति कैसी है ? देश की आर्थिक सम्पन्नता ही उस देश के लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं (भोजन, कपड़ा और आवास) की पूर्ति कर सकती है और उन्हें आज के युग की नवीनतम सुविधाओं (बिजली और ईंधन) को भी उपलब्ध करा सकती है। अपने ही देश में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हो और फिर धनोपार्जन के लिये अपने बनाये गये अतिरिक्त सामान को अन्य देशों तक पहुँचाने की व्यवस्था हो, तब देश प्रगति की ओर बढ़ने लगता है। स्वयं आत्मनिर्भर रह कर नये तथ्यों की सोचने लगता है।

औद्योगीकरण ऐसा ही एक चरण है जिससे देश को आत्मनिर्भरता मिलती है और व्यक्तियों में समृद्धि की भावना को जाग्रत करती है। भारत देश इसका अपवाद नहीं है। सैंकड़ों वर्षों की गुलामी ने हमें कुछ नहीं दिया। कुशल कारीगरों की मेहनत ने भी अपने देश को किसी उन्नति के चरण पर नहीं पहुँचाया। सन् 1947 में आजाद देश ने इस दिशा में सोचा और अपने देश की क्रमबद्ध प्रगति के लिये चरणबद्ध पंचवर्षीय योजनाएँ[1] बनाईं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) में देश में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ जो निरन्तर बढ़ता ही रहा (आर्थिक मन्दी के कारण इसमें शिथिलता भी आई)। **एक सर्वे के अनुसार 17 समूहों में विभाजित सैंकड़ों बड़े उद्योग (सही संख्या उपलब्ध नहीं) और लगभग 31 लाख लघु एवं मध्यम उद्योग वर्तमान में देश में कार्यरत हैं।**

औद्योगिक प्रगति के साथ ही इसका संबंधित परिणाम 'प्रदूषण' भी साथ ही नियत है। यद्यपि मोटे तौर से इस क्षेत्र के प्रदूषण को हम 'वायु प्रदूषण' के साथ ले आते हैं, पर यह वास्तव में सामान्य से अधिक भयावह है। इसका कारण भी स्पष्ट है। एक उद्योग से संबंधित कम-से-कम निम्न प्रक्रिया तो होती ही हैं—

1. विषैली गैसों का चिमनियों से उत्सर्जन; साथ ही बहुत सूक्ष्म पदार्थों के कण,
2. चिमनियों में एकत्रित हो जाने वाले पदार्थ : सूक्ष्म कण,
3. उद्योगों में काम में आये हुये जल का बहिस्राव, जो अनेक अशुद्धियाँ अथवा उद्योगों में प्रयोग किये गये कच्ची सामग्री के अंश साथ लाता है,

---

1. स्रोत : **Manorama Year Book-2000, pp. 532-33.**
   - प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) : कृषि, सिंचाई, ऊर्जा और परिवहन के लिये मूलभूत आधार
   - द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) : औद्योगीकरण पर बल
   - तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) : आर्थिक वृद्धि के प्रयास
   - चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74) : कृषि और आर्थिक वृद्धि के नये लक्ष्य
   - पंचम पंचवर्षीय योजना (1974-79) : गरीबी हटाओ
   - षष्टम पंचवर्षीय योजना (1981-85) : पिछले अधूरे लक्ष्यों की पूर्ति
   - सप्तम पंचवर्षीय योजना (1985-90) : GDP को 5.3% तक लाना
   - अष्टम पंचवर्षीय योजना (1992-97) : आर्थिक स्थिति का सुदृढ़ीकरण
   - नवम पंचवर्षीय योजना (1997-02) : कृषि तथा ग्रामीण विकास, गरीबी हटाओ, सबको शुद्ध पानी, भोजन और सुरक्षा, जनसंख्या सन्तुलन, SC एवं ST तथा स्त्रियाँ और कमजोर वर्गों की विशेष देखरेख आदि।

4. उद्योगों में कार्य में आने के बाद शेष (अपशेष; Residual),
5. चिमनियों में प्रयुक्त ईंधन के अवशेष।

ये सभी दृष्टिकोण औद्योगिक प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में महत्त्वपूर्ण हैं, जिन पर हम चर्चा करना चाहेंगे।

• औद्योगीकरण प्रदूषण के दुष्प्रभाव (Ill Effects of Industrial Pollution)

जैसा कि हमने अभी ऊपर उल्लेख किया है कि किसी भी उद्योग के क्रियाशील होने पर कुछ संक्रियाएँ तो आवश्यक हैं ही जिससे कच्चे माल से वांछित उत्पादन मिल सके, अतः हम उन्हें यहाँ उदाहरणों के साथ देना चाहेंगे जिससे उसे सहजता से समझा जा सके तथा साथ ही उत्पन्न होने वाले दुष्प्रभावों को भी जाना जा सके—

1. उद्योगों से वायु प्रदूषण (Air Pollution due to Industries)

किसी भी उद्योग की मशीनों को चलाने के लिये ऊर्जा उत्पादन तथा कच्चे माल की निर्धारित क्रियाविधि के फलस्वरूप जो भी उत्सर्जन होता है उसका गैसीय भाग चिमनियों से निकलता है। इन चिमनियों से हानिकारक पदार्थ जब वायुमण्डल में विसर्जित होते हैं तो प्रदूषण फैलाते हैं। **एक सीमेण्ट उद्योग का उदाहरण लें :**

• एक मैट्रिक टन सीमेण्ट उत्पादन के लिये आवश्यक कच्चा माल	2.6-2.8 मैट्रिक टन सीमेण्ट क्लिंकर (लाइमस्टोन, कैल्शियम सिलीकेट) तथा जिप्सम।
• ईंधन	प्रचलित कोयला।
• उत्पादन	सीमेण्ट।
• उत्सर्जन	
गैसें	नाइट्रोजन, कार्बन डाइऑक्साइड, ऑक्सीजन, जल वाष्प, सल्फर डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड।
सूक्ष्म कण	सीमेण्ट के कण।
जल प्रदूषण	लगभग नहीं क्योंकि कोई रासायनिक प्रक्रिया नहीं होती।

यहाँ पर प्रदूषण की समस्या मुख्यतः वायुन्मुखी है, जिनमें (1) क्लिंकर + जिप्सम का मिलाना, (2) सीमेण्ट का पीसना, (3) सीमेण्ट का पैकिंग व गोदामों में ले जाना, (4) कोयले की राख का निष्पादन मुख्य हैं। जिन गैसों के उत्सर्जन का अभी यहाँ उल्लेख किया है, उनसे होने वाली हानियाँ तो वही हैं, जो वायु प्रदूषण में इन गैसों के कारण बताई गई हैं; हाँ सूक्ष्म कणों की अधिकता के कारण ब्रोंकाइटिस और सिलिकोसिस से ग्रसित व्यक्ति अधिक हैं।

> **तुर्क में चमड़ा उद्योग से जन हानि (Casualities in Turkey due to Leather Industry)**
>
> तुर्क में चल रहे एक जूते बनाने के कारखाने में चिपकाने वाले गोंद की सप्लाई में उचित एवं निर्धारित मानदण्ड का प्रयोग नहीं हुआ। फलस्वरूप 50 कारीगरों की मृत्यु हो गई। इन मौतों का सर्वे करने पर पूरे देश में 28,000 कारीगर अनीमिया के रोगी पाये गये। यह दुर्घटना बैन्जीन के दुष्परिणाम स्वरूप हुई।
>
> **स्रोत : Our Planet, Our Health : Report of The WHO Commission on Health and Environment, 1992.**

2. उद्योगों से जल प्रदूषण (Water Pollution due to Industries)

जिन उद्योगों में जल का उपयोग होता है, वहाँ पर उपयोग के बाद बहिस्राव को बाहर निकाल दिया जाता है। निःसन्देह इसमें अनेक विषैले पदार्थ मिले होते हैं। यदि यह सीधे ही नदियों तथा झीलों में डाल द्रिया जाता है तो उन जलाशयों का पानी पीने योग्य नहीं रहता। अनेक पशु, जल-चर, मानव, पक्षी अकाल मौत मर जाते हैं अथवा अनेक कठिन रोगों से ग्रसित हो जाते हैं।

सन् 1981 में केन्द्रीय तथा 14 राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड ने एक सर्वे किया था। उसके अनुसार देश में चल रहे मध्यम और भारी उद्योग 27,000 में से 1700 उद्योग जल प्रदूषण वाले शिनाख्त किये गये। निष्कासित जल को ठीक करने के लिये केवल 460 उद्योगों में व्यवस्था थी। निश्चित ही शेष उद्योग अपने बहिस्राव को यूँही सीधे कहीं निकाल देते थे। अगर भूमि भाग इस जल का आधार बनता है तो वहाँ की मिट्टी विषैली हो जाती है, अथवा जल क्षेत्र में जहर घुलने लगता है। जिन उद्योगों में जल की खपत अधिक है, जैसे कागज उद्योग, वहाँ से तो जल निष्कासन की मात्रा भी अपेक्षाकृत अधिक है।

जापान में मिनामाटा रोग

(Minamata Disease in Japan)

यह रोग वस्तुतः मानसिक सम्बन्धी है जो मिथाइल मरकरी के जल में मिलकर लोगों द्वारा उपयोग करने से हुआ। दक्षिण-पश्चिम जापान में मिनामाटा खाड़ी में सन् 1968 में इसे वहाँ की सरकार ने शिनाख्त किया था। सीसो कम्पनी, जापान 'एसिटैल्डीहाइड के निर्माण में मरकरी ऑक्साइड का उपयोग करती थी। उस उद्योग का अपशिष्ट जल उत्सर्जन में मिलने से प्रदूषित हो गया। सन् 1990 तक 2,248 लोग ग्रसित हो गये और उनमें से 1,004 मौत के शिकार हुये।

इसी प्रकार की घटना पूर्व में भी सन् 1945 में हो चुकी थी।

स्रोत : Our Planet, Our Health : Report of The WHO Commission on Health and Environment, 1992.

3. उद्योगों से भूमिगत जल प्रदूषण (Ground Water Pollution from Industries)

सतही जल की कमी के कारण अब भूमिगत जल का दोहन इस गति से हो रहा है कि पानी का स्तर निरन्तर गिरता जा रहा है। वहाँ भी जल अनेक प्रकार के संकटमय और विषैले रसायनों से मिश्रित है, जिससे पीने के लिये भी उस पानी का उपयोग उपयुक्त नहीं लगता है। भारी उद्योगों को यूँही निस्तारण करने की प्रक्रिया इसके लिये दोषी है।

- गुजरात में स्वयंसेवी संस्था पर्यावरण सुरक्षा समिति, वड़ोदरा ने एक अध्ययन से पता लगाया है कि राज्य में भूमिगत जल भारी तत्त्व कैडमियम, कॉपर, लैड, मरकरी को समेटे हुये है, जो अत्यन्त विषैले भी हैं।

  (स्रोत : Times of India (Ahmedabad) : 20.2.2002; Quoted from Green File : Issue No. 173; CSE, New Delhi.)
- फरीदाबाद (हरियाणा) में सैंकडों इलैक्ट्रोप्लेटिंग इकाइयाँ अनेक हिदायतों के बावजूद निरन्तर कार्य कर रही हैं। इससे जिले के अनेक क्षेत्रों का भूमिगत जल पीने योग्य भी नहीं रह गया है। इस उद्योग के कारीगरों को अलग से स्थान आवंटित करने पर भी न ही यह लोग वहाँ जाने को तैयार हैं और न ही उपचार संयंत्र को ही इन्होंने अपनाया है।

  (स्रोत : Asian Age (New Delhi) : 18.2.2002; Quoted from Green File : Issue No. 170, CSE, New Delhi.)

4. उद्योगों के बहिस्राव से पेड़ और फसलों की बरवादी (Destruction of Trees and Crops by Industries Effluent)

कई प्रकार के उद्योग जिनमें जल की मात्रा का अधिक उपयोग होता है, वह अपने कारखाने के बहिस्राव को बिना उपचार के ही नदियों में, खाली जमीन पर तथा खेतों में निकाल देते हैं। जो बिना उपचार किया जल खेतों में पहुँचता है, वह वहाँ की फसल को नष्ट कर देता है और किसान असहाय होकर रह जाता है।

- मुरादनगर (गाजियाबाद : उत्तर प्रदेश) में हजारों पेड़ तथा वहाँ की फसलों की बरवादी का कारण पास में ही चल रही कागज मिल के कारण है। शीशम और जामुन के पेडों की मानों निशानदेह ही बची है। किसान कहते हैं कि 'धान' की फसल आठ दिन में इस जल से सूख जाती है; पानी में अधिक देर खड़े हों तो पैरों में जलन मचने लग जाती है; संभवतः पेपर मिल में खास रसायनों का प्रयोग किया जाता हो।

  (स्रोत : Times of India (New Delhi) : 15.1.99; Quoted from Green File : Issue No. 133, CSE, New Delhi.)

5. उद्योगों से जन हानि (Casualties from Industries)

भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में उद्योगों की संख्या लाखों में है। अतः इसमें कार्य करने वाले लोगों की संख्या निःसन्देह करोड़ों में होगी। अलग-अलग प्रकार के उद्योगों से निकलने वाले उत्सर्जन अलग-अलग प्रकार के रोग फैलाते हैं और उनसे न जाने कितने लोग अपनी जीवन लीला का अन्त कर लेते हैं। WHO कमीशन (Health and Environment) की रिपोर्ट[1], जो सन् 1992 में प्रसारित हुई है, में यह बताया गया है कि पूरे विश्व में एक वर्ष में लगभग 3.27 करोड़ औद्योगिक क्षेत्र की दुर्घटनाएँ होती हैं। इनमें 1,46,000 व्यक्ति मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। साथ ही यह भी अनुमान लगाया गया है कि जिन रोगों से यह औद्योगिक कारीगर ग्रस्त होते हैं, वह निम्न प्रकार हैं—

(1) सिलीकोसिस (Silicosis)	—	3.5 से 43.2%
(2) न्यूमोकोनिओसिस (Pneumoconiosis) (कोयले खदान संबंधी)	—	8.3 से 43.8%
(3) बाइसिनोसिस (Byssinosis)	—	5.0 से 30.0%
(4) लैड पॉइजनिंग (Lead Poisoning)	—	1.7 से 100.0%
(5) मरकरी पॉइजनिंग (Mercury Poisoning)	—	2.6 से 37.0%
(6) श्रवणशक्ति का ह्रास (Hearing Loss)	—	1.7 से 70.0%
(7) त्वचा रोग (Skin Diseases)	—	1.7 से 86.0%
(8) पीठ दर्द (Low Back Pain)	—	2.5%

यह सूची अपने आप में पूरी नहीं है, क्योंकि भारत जैसे देश में (1) अनीमिया, (2) आँखों के रोग, (3) हड्डियों के रोग, (4) वायुजनित रोग, (5) श्वसन संबंधी रोग आदि बहुतायत से होते हैं। अतः उद्योगों में कार्य करने वाले लोग सदैव अस्वस्थ ही रहते हैं।

• प्रदूषण वाले उद्योगों की पहचान (Recognition of Polluting Industries)

देश में अनेक उद्योग चलाये जाते हैं, पर उनमें से वह उद्योग जो अधिक प्रदूषण फैलाते हैं, उनकी पहचान कर भारत सरकार ने 19 नवम्बर, 1986 के गजट[2] में प्रकाशित की है, वह सूची यहाँ दी जा रही है—

1. कास्टिक सोडा (Caustic Soda)
2. हस्त निर्मित धागा (सिन्थेटिक) [Man Made Fibres (synthetic)]
3. तेल शोधक (Oil Refinery)
4. चीनी (Sugar)
5. तापीय ऊर्जा संयंत्र (Thermal Power Plants)
6. सूती उद्योग (Cotton Textile)
7. ऊनी कपड़ा (Woolen Mills)
8. रंगाई व छपाई (Dye and Dyes)
9. इलैक्ट्रोप्लेटिंग (Electroplating)
10. सीमेण्ट उद्योग (Cement Plants)

---

1. **Our Planet, Our Health, World Health Organisation, Geneva, 1992.**
2. **Published in Gazzette of India, Ext. ord, Part-II, vide Mot. Section No. S.O. (844) (E), dated 19 November, 1986. G.3 (ii), dated 18.11.86 pages 15-16. Quoted from the publication of Rajasthan Pollution Prevention & Centre Board, Environmental Preservation and Protection : An Integrated Scenerio, 1990.**

11. पत्थर तोड़ना (Stone Crushing)
12. कोयले की भट्टियाँ (Coke Ovens)
13. सिन्थेटिक रबड़ (Synthetic Rubber)
14. कागज एवं लुगदी (Pulp & Paper)
15. शराब भट्टियाँ (Distilleries)
16. चमड़ा उद्योग (Leather Tanneries)
17. खाद (Fertilizers)
18. एल्यूमीनियम (Aluminium)
19. कैल्शियम कार्बाइड (Calcium Carbide)
20. कार्बन ब्लैक (Carbon Black)
21. कॉपर, लैड और जिंक स्मैलटिंग (Copper, Lead and Zinc Smelting)
22. नाइट्रिक एसिड (Nitric Acid)
23. सल्फ्यूरिक एसिड (Sulphuric Acid)
24. आयरन एण्ड स्टील (Iron & Steel)

इनके मानक भी केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण मण्डल (Central Pollution Control Board) ने प्रसारित किये हैं। अधिक रुचि लेने वाले पाठक CPCB से सम्पर्क कर सकते हैं। साथ ही वह यह भी जान सकते हैं कि किस-किस उद्योग में कौन-कौन से प्रदूषक तत्त्व अधिकता में उत्सर्जित होते हैं।

विभिन्न उद्योगों से उत्सर्जित तत्त्व (Emissons from Different Industries)

क्र.सं.	उद्योग	प्रदूषक तत्त्व
1.	तेल शोषक	SO_2, NOx, HC, CO, NH_3, SPM, कई गन्धें
2.	पत्थर खदान	सूक्ष्म कण, रेत
3.	शराब भट्टियाँ	CO, HC, NOx तथा सूक्ष्म कण
4.	खाद (नाइट्रेट)	अमोनिया, नाइट्रिक ऑक्साइड्स
5.	खाद(फॉस्फेट)	CO, SOx, सिलिकॉन टेट्राफ्लोराइड्स
6.	कॉपर स्मेल्टिंग	SOx, सूक्ष्म कण, धूल
7.	लैड स्मेल्टिंग	सूक्ष्म कण, लैड ऑक्साइड्स, CO
8.	जिंक स्मेल्टिंग	रेत, SO_2 धुआँ
9.	सल्फ्यूरिक एसिड	तेजाबी धुन्ध
10.	नाइट्रिक एसिड	नाइट्रिक ऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड
11.	सिन्थेटिक धागा	कार्बन डाइऑक्साइड, HC, धुन्ध
12.	चीनी	CO, HC, NOx तथा सूक्ष्म कण
13.	सूती उद्योग	कास्टिक सोडा, सोडियम सिलीकेट
14.	सीमेण्ट उद्योग	सूक्ष्म कण
15.	चमड़ा उद्योग	NOx, SOx, एल्डीहाइड्स, धुआँ और रेत, हाइड्रोजन सल्फाइड
16.	एल्यूमीनियम	सूक्ष्म कण, फ्लोराइड्स, गैसीय क्लोराइड्स
17.	कार्बन ब्लैक	CO, HC, NOx
18.	आयरन एण्ड स्टील	मैंगनीज ऑक्साइड, NOx SO_2 क्लोरीन गैस, सूक्ष्म कण

● उद्योगों से प्रदूषण कम करने के लिये उपाय (Ways to lessen the Industrial Pollution)

विभिन्न उद्योगों से प्रदूषण कम हो सके, उस हेतु कुछ उपाय यहाँ समेकित किये जा रहे हैं—

1. उद्योगों के स्थान का चयन बहुत सोच समझ कर करना चाहिये :
   — वह न तो अधिकृत वन क्षेत्र हो और न ही कृषि भूमि,
   — क्षेत्र इतना बड़ा हो जहाँ पर काफी संख्या में वृक्षारोपण किया जा सके; अच्छे वातावरण निर्मित करने के लिये यथेष्ट फुलवारी, पार्क, फुब्बारा आदि भी लगाये जा सकें,
   — क्षेत्र में ठोस अपशिष्ट का भण्डारण हो सके,
   — अपशिष्ट निस्तारण संयंत्र लगाया जा सके,
   — आबादी से काफी दूर हो जिससे वहाँ के लोग प्रदूषण से बच सकें,
   — वायु के वेग के समान्तर हो, जिससे उत्सर्जित गैसें शीघ्र बह सकें,
   — पानी की प्रचुर मात्रा करीब में ही उपलब्ध हो,
   — कच्चे माल को लाने तथा तैयार माल के ले जाने में सुविधा के लिये राजमार्ग के करीब (500 मीटर लगभग) तथा रेलवे स्टेशन के नजदीक (लगभग 2 किमी) होना उचित रहता है।
2. एक अन्य उद्योग से काफी दूरी (लगभग 25 किमी) होनी वांछनीय है; यद्यपि यह संभव नहीं है।

3. उद्योगों में कार्य कर रहे ऊर्जा संयंत्र (बॉयलर्स) तथा गैसों व सूक्ष्म कणों को उत्सर्जित करने वाली चिमनियों से प्रदूषकों की मात्रा कम हो, इस हेतु प्रचलन में आ रहे, (1) स्क्रबर्स : अवशोषक (Scrubbers : Absorbers), (2) साइक्लोन्स (Cyclones), (3) इलैक्ट्रोस्ट्रेटिक प्रेसीपिटेटर्स (Electrostatic Precipitators) और (4) बैग फिल्टर्स (Bag Filters) संयंत्रों का भरपूर उपयोग किया जाय।
4. ठोस, द्रव तथा गैसीय अपशिष्टों की पुनः चंक्राकन प्रक्रिया से अपशिष्टों की मात्रा में भी कमी होती है तथा उद्योगों को भी इन अतिरिक्त उत्पादनों (By Products) से आर्थिक लाभ होता है।
5. जलीय अपशिष्ट तथा ठोस अपशिष्टों की जितनी भी उपचारात्मक संक्रिया संभव हो, उसी के बाद उन्हें अपने क्षेत्र से विसर्जित किया जाय।.
6. चिमनियों की ऊँचाई भी गैसीय उत्सर्जन द्वारा किये जा रहे प्रदूषण कम करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इनके मानदण्ड निर्धारित हैं जिनका उपयोग किया जाना चाहिये—

- **स्क्रबर्स** (Scrubbers): इन्हें अवशोषक (Absorbers) भी कहा जाता है। गैसीय रूप में ये चिमनी से निकलने वाले उत्सर्जन तत्त्वों को अवशोषित करके उन्हें अपने साथ समेट लेते हैं। इसी वजह से ये प्रदूषक विशिष्ट होते हैं। इनसे बाद में पुनः चक्रांकन कर काफी लाभ उठाया जा सकता है।
- **साइक्लोन्स** (Cyclones): यह एक विशेष उपकरण है जो गैसीय पदार्थों में मिले सूक्ष्म कणों को उससे अलग करके एक रिसीवर में एकत्रित कर लेता है। यह सेन्ट्रीफ्यूगल गति (केन्द्र से हट जाने वाली प्रवृत्ति वाली गति) के आधार पर काम करके सूक्ष्म कणों को चिमनी की दीवारों से लगा देता है, जहाँ से वह हटा दिये जाते हैं।
- **बैग फिल्टर्स** (Bag Filters): ऊनी अथवा मखमली कपड़े के बने यह थैलेनुमा उपकरण उत्सर्जित गैसों से सूक्ष्म कणों को अपने अन्दर ही रख लेते हैं तथा अन्य गैसों को चिमनियों से निकलने देते हैं।
- **इलैक्ट्रोस्टैटिक प्रेसीपिटेटर्स** (Electrostatic Precipitators) : इस उपकरण द्वारा सूक्ष्म कणों को विद्युतीय आवेशित करके फिर स्थिर विद्युतिकी (Electrostatic) बल से विशेष प्रकार की प्लेटों पर एकत्रित कर लिया जाता है।

विशेष : एक उद्योग में कई-कई उपकरणों का अलग-अलग उद्देश्य से उपयोग किया जा सकता है।

सारणी 20.1
बॉयलर से निकलने वाली भाप अथवा कोयला व्यय के आधार पर चिमनी की ऊँचाई[1]

क्रम संख्या	ईंधन व्यय (मैट्रिक टन प्रतिदिन)	भाप की मात्रा (मैट्रिक टन प्रति घण्टा)	चिमनी की ऊँचाई (मीटर में)
1.	2.6 तक	0.62	किसी पास की बिल्डिंग की ऊँचाई + 2.5 अथवा 9 मीटर (जो अधिक हो)
2.	2.6+ से 6.5 तक	0.62+ से 1.55 तक	12 मीटर
3.	6.5+ से 13.0 तक	1.55+ से 3.10 तक	15 मीटर
4.	13.0+ से 19.5 तक	3.10+ से 4.64 तक	18 मीटर
5.	19.5+ से 26.0 तक	4.64+ से 6.19 तक	21 मीटर
6.	26.0+ से 32.5 तक	6.19+ से 7.73 तक	24 मीटर
7.	32.5+ से 39.0 तक	7.73+ से 9.30 तक	27 मीटर
8.	39.0+	9.30+	30 मीटर

1. **Environment Preservation and Protection : An Integrated Scenerio, RPCB, ibid. page 5 : 13-14.**

सारणी 20.2
DG सैट की क्षमता के आधार पर चिमनी की ऊँचाई[1]

क्र.सं.	D.G. सैट की क्षमता	चिमनी की ऊँचाई (मीटर में)
1.	50 KVA तक	बिल्डिंग की ऊँचाई + 1·5 मीटर
2.	50 KVA से 100 KVA तक	बिल्डिंग की ऊँचाई + 2·0 मीटर
3.	100 KVA से 150 KVA तक	बिल्डिंग की ऊँचाई + 2·5 मीटर
4.	150 KVA से 200 KVA तक	बिल्डिंग की ऊँचाई + 3·00 मीटर
5.	200 KVA से 300 KVA तक	बिल्डिंग की ऊँचाई + 3·5 मीटर

यह ऊँचाई संयंत्र के स्तर, उत्पादन की मात्रा तथा उत्सर्जित पदार्थों की विविधता पर निर्भर करती है। अच्छी ऊँचाई वायुमण्डल के निचले स्तर को कम प्रदूषित करती है।

7. ऐसे वृक्षों को उद्योग परिसर में लगाया जाय जो विशेष विषैली गैसों का अवशोषण कर सकें। वृक्षों की सघन पट्टियाँ (Green Belts) ध्वनि अवशोषक भी होती हैं। इनकी मोटाई 8-10 मीटर तक हो सकती है।
8. उद्योग से संबंधित होने वाली घटनाओं/दुर्घटनाओं के बारे में जानकारी सभी श्रमिकों को दी जाय तथा उन्हें बताया जाय कि अमुक स्थिति में उसे क्या करना है ?
9. श्रमिकों की तथा उनके परिवारों के सदस्यों की नियमित मेडिकल जाँच की जाय तथा उनको यथा प्रकार उपचार उपलब्ध कराया जाय।
10. आपत्तिकाल की स्थिति में श्रमिकों का उत्तरदायित्व निश्चित किया जाना चाहिये।
11. एक पूर्णकालिक पर्यावरण इंजीनियर (Environment Engineer) की नियुक्ति का प्रावधान किया जाना वांछनीय है।

औद्योगिक प्रदूषण से बचने के लिये उद्योग मालिक की जागरुकता और उसकी श्रमिकों से सदाशयता जहाँ एक ओर श्रमिकों में उद्योग के प्रति अपनापन उत्पन्न करेगी, वहीं दूसरी ओर आर्थिक लाभ भी देगी। यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि आर्थिक लाभ के लिये लगाये गये उद्योग अपनी बेपरवाही के कारण श्रमिकों के जीवन के भक्षक न बनें। श्रमिक यदि सुखी, प्रसन्न व खुश होंगे तो उद्योग भी फलेंगे और फूलेंगे।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. प्रदूषण वाले उद्योगों से क्या तात्पर्य है ? किसी एक ऐसे उद्योग का विवरण दीजिये जो प्रदूषण फैलाते हैं।
2. उद्योग परिसर में हरित पट्टियों (Green Belts) का क्या महत्त्व है ? इनकी कितनी सघनता प्रस्तावित की गई है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. उद्योगों में श्रमिक सामान्यतया किस-किस रोग से पीड़ित होते हैं ? कोई तीन रोगों के नाम बताइये।
4. किसी भी उद्योग में 'पर्यावरण अभियन्ता' की क्या आवश्यकता है ?
5. उत्सर्जन में निकलने वाले सूक्ष्म कणों के लिये कौन-कौन से उपकरण उपयोग में लिये जाते हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Type Questions)

6. किसी भी उद्योग के बॉयलर के लिये न्यूनतम चिमनी की ऊँचाई कितनी प्रस्तावित है ?
   (अ) 9 मीटर (ब) 15 मीटर
   (स) 21 मीटर (द) 30 मीटर

---

1. **Environment Preservation and Protection : An Integrated Scenerio. RPCB, ibid, p. 5 : 14.**

7. उद्योगों में काम करने वाले श्रमिकों के आवास किस दिशा में बनाये जाने उचित रहते हैं ?
   (अ) वायु वेग की दिशा में (ब) वायु वेग की विपरीत दिशा में
   (स) उत्तर दिशा में (द) पूर्व दिशा में
8. उद्योग से जल प्रदूषण संबंधी 'मिनीमाटा दुर्घटना' किस देश में हुई थी ?
   (अ) अमेरिका में (ब) स्वीडन में
   (स) जापान में (द) फ्रांस में
9. सीमेण्ट उद्योग के श्रमिक अधिकतर किस रोग से ग्रसित पाये जाते हैं ?
   (अ) बाइसिनोसिस (ब) ब्रोन्काइटिस
   (स) टिटेनिस (द) फ्ल्यूरोसिस
10. भारत में औद्योगीकरण का प्रारम्भ किस पंचवर्षीय योजना में हुआ था ?
   (अ) प्रथम (ब) द्वितीय
   (स) पंचम (द) अष्टम

21

नैतिक प्रदूषण
[MORAL POLLUTION]

• प्रस्तावना
(Introduction)

पर्यावरण के क्षेत्र में प्रदूषण को हमने पिछले अध्यायों में सामान्य प्रदूषण तथा विशिष्ट क्षेत्रों के प्रदूषण के रूप में काफी विस्तार से अभिव्यक्त किया है। उनमें हमने यह प्रयास किया है कि ऐसे कौन-कौन से प्रदूषक तत्त्व हैं, जिनसे पर्यावरण विकृत होता है अथवा स्वच्छ पर्यावरण नष्ट होने लगता है। लेकिन इन सबसे एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह उभरा है कि किसी भी प्रकार के प्रदूषण के होने, उससे बचने तथा प्रदूषित होने पर कोई उपाय सुझाने की स्थिति तो तब आयेगी, जब मनुष्य की सोच में समस्या के प्रति लगाव (attachment) हो, उसे दूर करने के लिये उसका मानस तैयार हो। दूसरा इसी का एक पहलू यह भी है कि विचार की दिशा धनात्मक हो (Positive Thinking) हो। इन दोनों को यदि हम एक ही शब्द में समेटना चाहें तो हम यह कह सकते हैं कि मनुष्य में नैतिकता (Morality) होनी आवश्यक है। इसका लुप्त होना अथवा ऋणात्मक सोच (Negative Thinking) को "नैतिक प्रदूषण (Moral Pollution) के दायरे में ही रखेंगे, जिस पर अभी हम चर्चा कर रहे हैं।

• नैतिकता क्या है ?
(What is a Morality ?)

"नैतिकता किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों से सम्बन्धित वह सिद्धान्त और मूल्य हैं जिन्हें सामान्यतया किसी समाज द्वारा अथवा लोगों के समुदाय द्वारा स्वीकार किया जाता है।"

[A morality is a system of principles and values concerning people's behaviour, which is generally accepted by a society or by a particular group of people.]

नैतिकता को हम इस प्रकार भी व्यक्त कर सकते हैं–

"नैतिकता किसी व्यक्ति अथवा समाज पर आधारित उन सिद्धान्तों तथा मूल्यों का समुच्चय है जिन्हें वे सही, ठीक (उचित) तथा स्वीकार योग्य व्यवहारों की श्रेणी में लाते हैं।"

[A morality is a set of principles and values based on what a person or society believes are the right, proper or acceptable ways of behaving.]

अतः उपर्युक्त दी गई परिभाषाओं के आधार पर नैतिकता तत्काल यह निर्णय करने अथवा देने में सक्षम होती है कि व्यक्तियों अथवा समाज द्वारा किये जा रहे कार्य अच्छे हैं अथवा बुरे हैं। यही नहीं बल्कि उचित-अनुचित कार्य भी नैतिकता के दायरे में आ जाते हैं। अच्छे और उचित कार्यों को नैतिकता (Morality) और बुरे तथा अनुचित कार्यों को अनैतिकता (Immorality) कहने लगते हैं।

• देश में नैतिकता की स्थिति
(Status of Morality in the Country)

आज देश के सभी वर्ग, व्यवसाय और विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लोग यह महसूस करते हैं कि हमारे जीवन के नैतिक मानदण्ड गिर गये हैं और उनमें निरन्तर गिरावट आ रही है। किसी भी स्तर पर कोई क्षेत्र ऐसा नहीं बचा जान पड़ता है जो इस नैतिक पतन (moral degradation) का शिकार नहीं हुआ हो।

परिवार, समाज, प्रदेश और देश स्तर पर सभी व्यक्ति इससे पीड़ित हैं और विडम्बना यह है कि न तो किन्हीं में इसे रोकने में रुचि है और न ही कोई इस ओर अकेले अथवा मिलकर आवाज उठाते हैं। बहुत ही घनिष्ट समुदाय में केवल चर्चा होती है और कोसते हैं अन्य सभी को, लेकिन स्वयं अपने में परिवर्तन नहीं लाते। आइये कुछ प्रतिदिन के उन उदाहरणों का अवलोकन करें जो 'नैतिकता के विरुद्ध' के दायरे में आते हैं। लोग—

1. अपने कार्य स्थलों पर समय पर नहीं पहुँचते हैं।
   (do not reach in time at their working places.)
2. अपना प्रतिदिन का निर्धारित कार्य समय पर नहीं करते हैं।
   (do not do their daily assignments in time.)
3. खाने-पीने की वस्तुओं में मिलावट करते हैं।
   (adulterate in edibles.)
4. बस अथवा रेल में बिना टिकट यात्रा करते हैं।
   (travel without ticket in bus or train.)
5. सामान कम तौलते हैं।
   (weigh less commodities.)
6. सामान का अधिक मूल्य लेते हैं।
   (charge more money of necessaries.)
7. पानी अथवा बिजली के मीटरों में छेड़-छाड़ करते हैं।
   (do unfair with the electric and water meters.)
8. झूठ बोलते हैं।
   (tell a lie.)
9. धोखा और विश्वासघात करते हैं।
   (cheat and betray.)
10. नौकरी अथवा अन्य विविधि कार्यों हेतु गलत प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करते हैं।
    (produce wrong certificates for service and other works.)
11. आयकर रिटर्न गलत भरते हैं।
    (fill incorrect income-tax returns.)
12. बिक्री कर का चुकाया नहीं करते हैं।
    (do not pay the sales tax.)
13. रिश्वत लेते हैं।
    (take bribe.)
14. चोरी करने में हिचकिचाते नहीं हैं।
    (do not hesitate in stealing.)
15. कहीं भी गलत गवाही दे सकते हैं।
    (may give wrong witness anywhere.)
16. बिना बजह दूसरों को चोट पहुँचाते हैं।
    (hurt the others for no cause.)
17. चुनाव में अनुचित साधनों का प्रयोग करते हैं।
    (use unfair means in elections.)
18. अपने लाभ के लिए दूसरों का शोषण करते हैं।
    (exploit others for their own interests.)
19. कम धन राशि देकर अधिक पर हस्ताक्षर कराते हैं।
    (pay less amount and take signature on more.)
20. दूसरों की विवशता का लाभ उठाते हैं।
    (encash the helplessness of the others.), आदि।

और भी न जाने कितने उदाहरण हो सकते हैं जो किसी न किसी व्यक्ति के दैनिक जीवन में घटते हैं। यह सब अनैतिकता के कार्य हैं, जिससे वह व्यक्ति ही नहीं बल्कि समाज और देश किसी न किसी रूप से सम्बद्ध है और प्रभावित है।

• नैतिकता ह्रास के सम्भावित कारण (Possible Reasons of Moral Degradation)

नैतिकता बाजार में क्रय-विक्रय की वस्तु नहीं है और न ही इसे खोने में किसी को प्रसन्नता है। हर स्तर पर सब यही चाहते हैं कि उनमें नैतिकता रहे। लोग उन्हें चरित्रवान व्यक्ति कहें, लेकिन फिर भी इसे रोक पाने में सभी असमर्थ क्यों हैं ? इसके कुछ सम्भावित कारण यहाँ प्रस्तुत हैं—

1. व्यक्तिगत स्वार्थपरता (Individual Selfishness)

प्रत्येक व्यक्ति येन-केन प्रकारेण अपनी स्वार्थपूर्ति चाहता है। इस हेतु उसे इस ओर कोई ध्यान नहीं है कि उसका अपना आचरण अथवा कार्य व्यवहार कैसा है ? देश और समाज की बात तो दूर बल्कि अपने परिवार के व्यक्तियों की प्रसन्नता और अप्रसन्नता को भी वह अनदेखी कर देता है।

2. लालच (Greed)

अधिक पाने की लालसा व्यक्ति को अंधा कर देती है। अतः उसे कुछ ऐसी कार्य-प्रणाली अपनानी आवश्यक हो जाती है जिसे समाज व उसके सदस्य ठीक नहीं समझते। व्यक्ति के गलत कार्य उसे अनैतिकता की ओर ले जाते हैं।

3. आलस्य (Laziness)

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका कह गये, सबके दाता राम।।

यह दोहा बहुत चर्चित है और आलसी व्यक्तियों द्वारा अपनाया गया ब्रह्म वाक्य। समय पर काम न करने अथवा समय पाबंदी न अपनाने से ऐसे अनेक क्रियाकलाप जुड़े हैं जो नैतिकता को सहयोग नहीं करते। अतः कार्यस्थल पर देरी से पहुँचना, कार्य न करना, टालमटोल की प्रवृत्ति और इसी कारण सत्य न बोलना आदि अनेक अवगुण व्यक्ति में समावेश कर लेते हैं जो अनैतिकता को बढ़ावा देते हैं।

4. कठोर परिश्रम के प्रति उदासीनता (Apathy towards Hard work)

कठोर परिश्रम व्यक्ति को बनाता है, सजाता है और संवारता है। परिश्रम से ही व्यक्ति में आत्मविश्वास पैदा होता है, सहयोग की भावना में वृद्धि होती है और दूसरों की सेवा करने की लालसा जाग्रत होती है। यह सब मूल्य परिश्रम के प्रति उदासीनता से उभर ही नहीं पाते बल्कि इसके विपरीत वह व्यक्ति असहयोगी हो जाता है।

5. राष्ट्रीय भावना में कमी (Lack of National Feelings)

अपने देश के प्रति अपनी निष्ठा की कमी ने भी व्यक्तियों को अनैतिक कार्य करने की अप्रत्यक्ष रूप से अनुमति दी है। वह इस स्तर तक सोच ही नहीं पाता कि हमारे किसी कार्य व्यवहार से अन्ततः हमारे देश की वह हानि हो सकती है जिससे पूरे देश के निवासी प्रभावित होंगे और ऐसा भी सम्भव है कि देश की बदनामी से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक हमें नुकसान उठाना पड़े। देश के महत्त्वपूर्ण सरकारी, अर्द्ध-सरकारी, सैन्य सूचनाओं की जानकारी विदेशी लोगों तक कुछ आर्थिक लाभ के बदले पहुँचाना उसका एक उदाहरण हो सकता है।

6. दूसरों से तुलना करने की होड़ (Rivalry of Comparison with Others)

जो कुछ हमें प्राप्य है अथवा हमारे परिश्रम से जो कुछ भी हमें मिल सकता है उसके बजाय और लोगों के बराबर अथवा उससे भी अधिक प्राप्त करने की लालसा व्यक्ति को नैतिकता से दूर करती है। विभिन्न विभागों, संस्थानों में गबन, चोरी तथा रिश्वत आदि इसी के उदाहरण हैं। इस पतन का कोई अन्त भी नहीं है क्योंकि कम परिश्रम से अधिक प्राप्त होने की कल्पना से व्यक्ति इतना लिप्त हो जाता है कि उसे दिन-रात नई-नई बातें सूझती रहती हैं और वह निरन्तर दलदल में फँसता जाता है।

7. बुरी संगत (Bad Company)

संगति का बहुत प्रभाव पड़ता है। हमारे पिछले धार्मिक ग्रन्थों में कई जगह यह उल्लेख हुआ है कि अच्छे व्यक्ति बुरी संगत में पड़कर बुरे बन गये हैं और बुरों को अच्छी संगत ने बुराई से दूर कर दिया

है। व्यक्ति कितना ही प्रयास करे वह बुरी संगत के प्रभाव से बच नहीं सकता है। जुआ खेलना, शराब पीना, कत्ल, चोरी-डकैती और अनाचार इसी श्रेणी में आते हैं और व्यक्ति को अनैतिक राह पर ले जाते हैं।

8. भविष्य की अनदेखी (No Future Perception)

जो व्यक्ति केवल अपना जीवन जीते हैं और जिन्हें अपने परिवार, समाज और देश की कोई फिक्र नहीं होती अथवा जो अपना इनके प्रति कोई उत्तरदायित्व नहीं समझते वह किसी भी कार्य करने में हिचकिचाते नहीं हैं। न ही उन्हें अपने तथा अपने बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों के भविष्य की कोई परवाह होती है। वह यह भूल जाते हैं कि मानो किसी कारण यदि किसी व्यक्ति को जेल की सजा होती है तो उसका यह कार्य उसके बच्चों को पूरी जिन्दगी कष्ट और अपमान देगा। बहुत छोटे से आर्थिक प्रलोभन में यह व्यक्ति अपना भविष्य दाव पर लगा देते हैं और कत्ल, देशद्रोह अथवा अन्य कार्यों में अपना जीवन लगाकर समाप्त कर देते हैं।

9. अशिक्षा अथवा कम शिक्षा (Illiteracy or Less Education)

शिक्षा ही व्यक्ति में समझने की शक्ति, गुण-अवगुणों में अन्तर करने की योग्यता और परिवार-समाज-देश के प्रति कर्त्तव्य के विकास का आधार है। अशिक्षा और कम शिक्षा दोनों ही व्यक्ति में उन गुणों को विकसित नहीं होने देती जिससे उसका जीवन एक अच्छे नागरिक की तरह बन सके। इसी अभाव के कारण वह अनजाने ही उन कार्यों को करने लगता है जो समाज की दृष्टि से अनैतिक हैं। रास्ते चलते लड़कियों को छेड़ना, फबतियाँ कसना, चाहे जिससे बिना बात लड़ना-झगड़ना आदि को ऐसा व्यक्ति कोई विशेष बात नहीं समझता और यही उसके कार्य व्यवहार उसे और आगे अनैतिक कार्यों की ओर ले जाते हैं।

10. आत्मविश्वास और इच्छा शक्ति में कमी (Deficiency in Self-confidence and Will-power)

किसी भी कार्य की सफलता से मनुष्य में आत्मविश्वास पैदा होता है और कार्य सम्पादन में इच्छा शक्ति का बहुत महत्त्व है। या यों कहें कि आत्मविश्वास और इच्छा शक्ति दोनों एक-दूसरे से अत्यन्त निकट से जुड़े हैं। लेकिन व्यक्ति में जब इन दोनों गुणों की कमी होती है तो असफलता के फलस्वरूप वह कुण्ठा (frustration) से भर जाता है। कुण्ठित व्यक्ति फिर कुछ इस प्रकार के कार्य करता है जो सामान्यतः उचित व उपयुक्त नहीं होते। अनैतिक कार्यों का सम्पादन भी इन कुण्ठाओं का अन्तिम परिणाम हो सकता है।

● नैतिकता और पर्यावरण (Morality and Environment)

पर्यावरण के क्षेत्र में आज चिन्तन करने की दिशा मुख्यतया चार भागों में विभाजित हो गई है। वह हैं—(1) पर्यावरण संरक्षण (Environmental Conservation), (2) पर्यावरण सुरक्षा (Environmental Preservation), (3) पर्यावरण प्रदूषण (Environmental Pollution) और (4) पर्यावरण सुधार (Environmental Improvement)। इन चारों विभाजनों में जो अभिकरण (Agencies) अपनी भूमिकाओं का निर्वहन कर रही हैं, वह हैं—(1) अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ (International Organisations), (2) राष्ट्रीय संस्थाएँ और केन्द्र सरकार (National Organisations and Central Government), (3) राज्य स्तरीय संस्थाएँ और राज्य सरकारें (State Level Organisations and State Governments), (4) सामाजिक संस्थाएँ (Social Organisations) और (5) प्रमुख पर्यावरणविद् और सामाजिक नेतागण (Outstanding Environmentalists and Social Leaders)। सभी की कार्य-प्रणाली अत्यन्त नियोजित और अच्छी परिणामगामी है। सभी का प्रयास यही रहता है कि पर्यावरण की सभी प्रकार से उचित संरक्षा, सुरक्षा, सुधार और प्रबन्ध हो तथा इसे सभी प्रकार के प्रदूषण से बचाया जाये। उन्नति के नाम पर पृथ्वी पर बसने वाले प्राणी (मनुष्य और पशु) तथा वनस्पति को हानि न हो। लेकिन इन सभी में व्यावहारिक क्रियान्वयन केवल मनुष्य द्वारा किया जाता है, जो आज अनैतिकता के दायरे में अन्दर तक प्रवेश करता जा रहा है। अतः सभी योजनाओं, सोच और निर्णयों का अन्तिम परिणाम शुद्ध पर्यावरण (Clean Environment) नहीं है।

इस सन्दर्भ में सीधे पर्यावरण से जुड़े मनुष्य द्वारा किये गये हीन आचरणों के उदाहरण यहाँ समेकित किये गये हैं। जिनके अवलोकन से एकाएक यह सिहरन पैदा हो सकती है कि ऐसे कैसे सम्भव है ?

और क्या इस प्रकार से किये जा रहे मनुष्य के जघन्य कार्यों से कभी पर्यावरण में सुधार लाया जा सकता है ? प्रत्येक क्षेत्र में अनैतिक कार्यों की सूची देखें—

(अ) पर्यावरण संरक्षण क्षेत्र (Environmental Conservation Field)

1. जल (प्राकृतिक संसाधन) का अत्यधिक दुरुपयोग
   [Excessive misuse of water (natural resource)]
2. विविध कार्यकलापों से वायु की अनिरापदता
   (Unclean air due to different activities)
3. खिलौने व इमारती लकड़ी के लिए वृक्षों का उपयोग
   (Use of trees for toys and building timber)
4. उपजाऊ मिट्टी से ईंटों का बनाना
   (Preparing bricks form fertile soil)
5. उद्योगों से होने वाले विषैले बहिस्राव से जलीय जीवों का विनाश
   (Destruction of aquatic life by the poisonous effluent discharge from the industries)

(ब) पर्यावरण सुरक्षा क्षेत्र (Environmental Preservation Field)

1. खालें तथा अन्य अंगों की तस्करी के लिए वन्य जीवों की हत्याएँ
   (Assasination of wild beasts for smuggling of skins and other organs)
2. रासायनिक खादों के अधिक उपयोग से मिट्टी की गुणवत्ता में ह्रास
   (Degradation in the quality of soil by the excess use of chemical fertilizers)
3. क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स तथा ऐरेसोल के उपयोग से वायुमण्डल की ओजोन पर्त का क्रमिक विनाश
   (Gradual depletion of the ozone layer of the atmosphere due to the use of chlorofluro-carbons and aerosols)
4. पानी के गलत उपयोग से शुद्ध पीने के पानी की मात्रा में निरन्तर कमी
   (Continuous shortage of clean potable drinking water due to wrong use of water)
5. आवास और बाँधों के निर्माण हेतु वन क्षेत्रों की कटाई
   (Cutting of forest areas for the construction of dams and residential colonies)

(स) पर्यावरण प्रदूषण क्षेत्र (Environmental Pollution Field)

1. शादी, समारोह व कीर्तन स्थलों पर ध्वनि विस्तारक यन्त्रों का उपयोग
   (Use of loud speakers in marriages, functions and bhajan recitations)
2. जनसंख्या वृद्धि से आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि में कमी
   (Shortage in availability of prime necessary articles due to growing population)
3. घर की गन्दगी को कहीं भी फेंक देना
   (Throwing of household waste anywhere)
4. परिवहन साधनों से वायु की अशुद्धता
   (Impurity of air due to transport means)
5. परमाणु बम परीक्षण से नाभिकीय विकिरण प्रदूषण
   (Nuclear radiation pollution due to atomic bomb tests)

(द) पर्यावरण सुधार क्षेत्र (Environmental Improvement Field)

1. विभिन्न पर्यावरणीय कानूनों की अवहेलना
   (Neglect of different environmental laws)
2. सरकार अथवा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले सघन वृक्षारोपण जैसे कार्यक्रमों में रुचि न लेना
   (Uninterest in programmes like dense forestation organised by government or voluntary agencies)

3. पर्यावरण के बारे में जानने का प्रयास भी नहीं करना
(No efforts even in knowing about environment)
4. भोजन, जल, वायु और प्रकाश की उपलब्धता की ओर ध्यान न देना
(No attention towards the availability of food, water, air and light)
5. 'जीवन की गुणवत्ता' की प्राप्ति के लिए न इच्छा रखना और न परवाह करना
(Neither wishing nor caring for acquiring the 'quality of life')

• नैतिकता के विकास के लिए क्या करें ?
(What to do for the Development of Morality ?)

नैतिकता एक कठिन उपलब्धि है। यह संस्कार प्रेरित है, अच्छी संगत से मिलती है और त्याग से ही अधिक समय तक रह सकती है। बचपन से ही सत्य-असत्य, गलत-सही, अच्छा-बुरा जैसे प्रत्ययों के बारे में बालक को सिखाने-समझाने से उसमें उन गुणों का विकास हो सकता है जिन्हें हम नैतिकता के लिए वांछनीय समझते हैं, लेकिन उनमें क्या आवश्यक है ? इसका विवरण हम यहाँ संक्षिप्त में दे रहे हैं।

(अ) जीवन मूल्यों के प्रति आस्था (Belief in Life Values)

प्रत्येक व्यक्ति को कुछ जीवन मूल्यों को जानना चाहिए और उनमें आस्था रखनी चाहिए। यह जीवन मूल्य उसको जीवन में कुछ कार्य करने की प्रेरणा दे सकते हैं और एक सुखमय जीवन जीने का आश्वासन भी इनसे स्वतः मिल सकता है। यह हैं—

(1) सच्चाई (Truthfulness), (2) सहयोग (Co-operation),
(3) साहस (Courage), (4) दृढ़ निश्चय (Determination),
(5) आत्मविश्वास (Self Confidence), (6) परोपकार (Charity),
(7) देश-भक्ति (Patriotism), (8) कर्त्तव्य-परायणता (Dutiful),
(9) ईमानदारी (Honesty), (10) समाज सेवा (Social Service),
(11) श्रम में निष्ठा (Dignity for Labour), (12) त्याग (Sacrifice),
(13) विनम्रता (Modesty), (14) अहिंसा (Non-violence),
(15) प्रेम (Affection), (16) सहानुभूति (Sympathy),
(17) धैर्य (Patience), (18) दया (Kindness),
(19) क्षमा (Forgiveness), (20) मित्रता (Friendship),
(21) निर्भीकता (Fearlessness), (22) अनुशासन (Discipline),
(23) सादगी (Simplicity), (24) प्रशंसा करना (Praising),
(25) मितव्ययता (Frugality)।

[स्रोत—नैतिक शिक्षा उपागम : 1 से 8; सुबुद्ध शिक्षा प्रकाशन—16, निदेशालय प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान बीकानेर के पृष्ठ संख्या 8 से राष्ट्रहित में साभार।]

(ब) अच्छी आदतों का निर्माण (Formation of Good Habits)

कुछ आदतें इस प्रकार की होती हैं जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति के चरित्र को बनाती हैं तथा उसके नैतिक कार्यों में सहायक होती हैं। यह हैं—

1. नियमितता (Regularity),
2. समय पाबन्दी (Punctuality),
3. अपने से बड़ों का सम्मान करना (Respect for elders),
4. अपनी बारी की प्रतीक्षा करना (Wait for our turn),
5. अतिथि का सत्कार करना (Hospitality to the guests),
6. सामान्य स्तर से वार्तालाप करना (Conversation in low voice),
7. साथियों की प्रशंसा करना (Praise for the companians),
8. धन्यवाद का प्रयोग करना (Use of 'Thank you'),

9. दूसरों पर दोषारोपण न करना (Not tc blame others),
10. अपनी गलतियाँ स्वीकार करना (To accept our mistakes),
11. निर्भीक बनना (To be brave),
12. साफ-सुथरे और मौलिक बनना (To be neat and original),
13. अपने वायदे पूरे करना (Keeping of our promises),
14. हमेशा प्रसन्न चित्त रहना (Always to remain happy),
15. आवश्यकता के समय सदैव तैयार रहना (To keep always ready at the time of need.), आदि।

यह आदतें आपके या किसी भी व्यक्ति के जीवन में अप्रत्याशित परिवर्तन ला देंगी और व्यवहार में मौलिकता दृष्टिगत होने लगेगी।

(स) आदर्श पुरुषों की जीवनियाँ (Lives of Ideal Persons)

देश में और विश्व के अन्य देशों में ऐसे अनेक महापुरुष हुये हैं जिन्होंने अपने जीवन में ऐसे कार्य किये जिनसे देश और समाज को तो लाभ हुआ ही बल्कि आगे आने वाली पीढ़ी को भी सीखने का आधार मिला है। उनके आदर्श निश्चय ही अच्छे मार्गदर्शक सिद्धान्त बनें; अतः ऐसे पुरुषों के जीवन साहित्य को पढ़ने का अवसर प्राप्त करना चाहिए। कुछ अत्यन्त चर्चित नाम यहाँ दिये जा रहे हैं—

(1) स्वामी विवेकानन्द,
(2) स्वामी रामतीर्थ परमहंस,
(3) श्री अरविन्द,
(4) स्वामी दयानन्द सरस्वती,
(5) पं० मदन मोहन मालवीय,
(6) महात्मा गाँधी,
(7) रवीन्द्रनाथ टैगोर,
(8) मदर टैरेसा,
(9) पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
(10) श्री सुभाष चन्द्र बोस,
(11) वीर सावरकर,
(12) क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद,
(13) सरदार बल्लभ भाई पटेल,
(14) श्री राजेन्द्र प्रसाद,
(15) सर्वपल्ली राधाकृष्णन,
(16) आचार्य विनोबा भावे,
(17) लालबहादुर शास्त्री,
(18) रानी लक्ष्मीबाई,
(19) डॉ० भीमराव अम्बेडकर,
(20) दादा भाई नौरोजी, आदि।

(द) पठनीय साहित्य (Readable Literature)

अच्छे साहित्य से अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण होता है। अतः वह साहित्य पढ़ा जाना चाहिए जो व्यक्ति के जीवन में मौलिक परिवर्तन कर उसे नैतिक कार्यों के लिए प्रेरित करे और उत्साहित करे, जैसे—

(1) महापुरुषों की जीवनियाँ,
(2) साहस भरी गाथायें और कहानियाँ,
(3) प्रेरक संस्मरण,
(4) हितोपदेश,
(5) अनमोल वचन,
(6) गौरव गाथायें,
(7) देशभक्ति के नाटक,
(8) ऐतिहासिक उपन्यास,
(9) आजादी का इतिहास,
(10) भारतीय वीरांगनायें, आदि।

(इ) अन्य कार्य (Other Works)

1. घर में महापुरुष, देशभक्ति और जीवन मूल्यों को शक्ति प्रदान करने वाले व्यक्तित्व के चित्र लगायें।
2. कौमी गीत स्वयं गायें और जहाँ सम्भव हो वहाँ सामूहिक रूप से गाये जाने का प्रयास करें।
3. खेलों का आयोजन करें।
4. महत्त्वपूर्ण विषयों पर वांद-विवाद, सिम्पोजियम तथा भाषण-प्रतियोगिताएँ करायें।
5. स्काउट-गाइड जैसे कार्यक्रम में सक्रिय भूमिका निवाहें और बच्चों को भाग लेने हेतु प्रोत्साहित करें।
6. राष्ट्रीय उत्सवों का महत्त्व बतायें तथा उन्हें धूमधाम से मनायें।
7. श्रमदान के कार्यक्रम आयोजित करें।
8. चरित्र निर्माण हेतु जीवन मूल्यों की विषद व्याख्या कर उन्हें प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित करें।
9. नैतिक शिक्षा हेतु कहानियों का उपयोग करें।
10. आदर्श व्यक्तित्व का चित्रण प्रस्तुत करें।

• पर्यावरण के क्षेत्र में मनुष्य की नैतिक भूमिका (Man's Moral Role in the Field of Environment)

मनुष्य के अनैतिक आचरण से जहाँ पर्यावरण सहित लगभग सभी क्षेत्रों में पतन हुआ है वहीं अच्छे आचरण और सामाजिक स्वीकृति (social acceptance) से किये जाने वाले व्यावहारिक क्रिया-कलापों से आशातीत उत्थान की आशा भी बनी है। मनुष्य ने इस परिवर्तन से अपनी व्यक्तिगत छवि ही नहीं बनाई है बल्कि समाज को प्रेरित कर पूरे देश को ऊपर उठने का अवसर भी दिया है।

पर्यावरण के क्षेत्र में इस नैतिक उत्थान से प्रभावित होने वाले कार्यकलापों में मनुष्य की भूमिका को निम्न प्रकार समेकित करने का प्रयास किया गया है—

1. जीवाश्म ईंधन के अधिक प्रयोग से कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि हुई है तथा इसके फलस्वरूप वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा बढ़ी है। ग्रीन हाउस प्रभाव का मुख्य कारण इसी गैस की वृद्धि है। इसे मनुष्य रोकने हेतु वैकल्पिक ईंधन का उपयोग कर सकता है।

2. मनुष्य ने अपने शौक तथा धन प्राप्ति के लालच से वन्य जीवों का शिकार इस सीमा तक किया है कि अनेक प्रजातियाँ ही लुप्त प्रायः हो चली हैं। इस कुकृत्य पर मनुष्य को स्वप्रेरणा से रोक लगानी होगी।

3. मनुष्य अपने दैनिक जीवन में लकड़ी के उपयोग को कम कर प्लास्टिक अथवा अन्य इसी प्रकार के पदार्थ को काम में लें। इससे वन-क्षेत्रों की रक्षा होगी; जल चक्र, वायु चक्र में गतिरोध नहीं होगा तथा प्रकृति का सन्तुलन बना रहेगा।

4. यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक विकास किसी विनाश से ही सम्बन्धित हो। देश के पर्यावरण को सन्तुलित बनाये रखने के लिए मनुष्य को उन तकनीकों का उपयोग करना चाहिए जो विनाश रहित विकास (development without destruction) पर आधारित हों। ऐसी स्थिति में यदि उत्पादन (production) कम भी होता हो तो उसे स्वीकार करना चाहिए।

5. अधिक आबादी की अन्न और आवास की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु देश के घने जंगलों को भारी मात्रा में काट दिया गया है। इससे पर्यावरण ह्रास हुआ है। वन्य जीवों की संख्या में कमी, जलवायु में परिवर्तन, वर्षा की मात्रा में कमी और रेगिस्तानी क्षेत्र में वृद्धि इसके दुखद परिणाम हैं। मनुष्य को जनसंख्या वृद्धि को रोकने में सहयोग करना चाहिए।

6. पेट्रोल चलित वाहनों के उत्सर्जन से निकलने वाली सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड गैसें वायुमण्डल की आर्द्रता से क्रमशः सल्फ्यूरिक एसिड और नाइट्रिक एसिड बनाते हैं। यह तेजाबी वर्षा के रूप में वायुमण्डल से पृथ्वी पर गिरते हैं और मानव-जीवन, वनस्पति व सुन्दर भवन तथा प्रतिमाओं को हानि पहुँचाते हैं। इन वाहनों के उपयोग में कमी की नितान्त आवश्यकता है, जिसके लिए मनुष्य को अपने मानस में परिवर्तन करना होगा।

7. गाँवों में बिना रोशनदान वाले कमरों में खाना बनाने वाली ग्रहणियाँ ईंधन से निकलने वाले धुएँ से अनेक रोगों का शिकार होती हैं। उन्हें निर्धूम चूल्हे उपलब्ध कराने चाहिए तथा रसोईघर में खिड़की और रोशनदानों की व्यवस्था होनी चाहिए।

8. फ्रिज तथा अन्य अवशीतन करने वाले यन्त्र/उपकरणों के उपयोग के कारण क्लोरोफ्लोरो-कार्बन्स वायुमण्डल में ओजोन पर्त को हानि पहुँचा रहे हैं। अब नयी टैक्नोलॉजी पर आधारित ऐसे उपकरणों का उपयोग ही वांछनीय है जिनसे इस समस्या से न्यूनतम हानि हो। इससे त्वचा कैन्सर के भय से छुटकारा मिलेगा।

9. परमाणु बम विस्फोट से रेडियोएक्टिव प्रदूषण हुआ है। विश्वहित में इस पर रोक होनी चाहिए।

10. ध्वनि प्रदूषण से बचने के लिए मनुष्य को अपने घरों में मनोरंजन के साधनों का नीची आवाज में प्रयोग करना चाहिए। इससे बहरापन तथा अनेक मानसिक रोगों से बचाव सम्भव है।

11. वायु, जल, भोजन और आवास की शुद्धता और स्वच्छता जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) के लिए आवश्यक है। मनुष्य को इसे हर सम्भव तरीके से प्रदूषण से बचाना चाहिए। याद रखें प्रदूषण से बचाव पर होने वाला व्यय प्रदूषित को ठीक करने के लिए व्यय से कम होता है।

12. मनुष्य की शहरीकरण की प्रवृत्ति ने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है, जिनमें आवास समस्या, भोजन और पानी की कमी, अस्त-व्यस्त जीवन, बढ़ता प्रदूषण आदि प्रमुख हैं। इससे सरकारी व्यवस्थाएँ

भी चरमरा गई हैं। इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाया जाना आवश्यक है। इस हेतु गाँवों में ही वहाँ के लोगों को जीवनयापन हेतु सुविधाएँ उपलब्ध करानी होंगी।

13. प्राकृतिक संसाधन बहुत सीमित हैं। मनुष्य को उनका उपयोग बहुत बुद्धिमतापूर्ण करना चाहिए। संसाधनों का संरक्षण उनके कम उपयोग में ही निहित है।

14. जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि और प्रति व्यक्ति के अधिक उपयोग से ऊर्जा की माँग बढ़ रही है। कोयला, पेट्रोल आदि जैसे संसाधन समाप्त हो चले हैं। ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों में सौर-ऊर्जा (Solar Energy) को सम्मिलित करना चाहिए। जल ऊर्जा (Hydro Power), अणु ऊर्जा (Atomic Energy), वायु ऊर्जा (Wind Energy) तथा तापीय ऊर्जा (Thermal Energy) द्वारा उत्पादित ऊर्जा में और वृद्धि आवश्यक है। ऊर्जा का दुरुपयोग रोकें।

15. भारत में पानी की काफी कमी है और इस कारण देश के अनेक भाग इस कमी से अत्यधिक प्रभावित हैं। इसके बावजूद भूगर्भ जल के अधिक दोहन से भी जल भण्डार और कम होने लगे हैं तथा जल सतह (water level) काफी नीचे हो गई है। इस विषम परिस्थिति से बचने के लिए भूगर्भीय जल के स्वतन्त्र उपयोग पर प्रतिबन्ध लगना चाहिए।

16. भोज्य पदार्थ उत्पादन हेतु मिट्टी संरक्षण (Soil Conservation) अति आवश्यक है। लेकिन वनों की कटाई तथा मनुष्य द्वारा किये गये अनेक असंगत कार्यों से भूमिक्षरण द्वारा मिट्टी बह रही है; इसे तत्काल रोकने हेतु मनुष्य को सघन वृक्षारोपण तथा सिंचाई के उपयुक्त तरीकों का उपयोग करना चाहिए।

17. मनुष्य में सोचने, विचारने और कार्य करने की योग्यता और क्षमता है। वह पर्यावरण को अपने प्रकार से परिवर्तित कर सकता है; अतः उसे समाज और देशहित में कार्य योजना तैयार कर उसकी क्रियान्विति करनी चाहिए।

18. अन्य देशों में हो रहे पर्यावरणीय सुधार के कार्यों की जानकारी कर उसे भी अपनी कार्य योजना का आधार बनाना चाहिए। इससे आपको विश्व स्तर पर अपने कार्यों की कुशलता के मूल्यांकन का अवसर मिल सकेगा।

19. संयुक्त राष्ट्र के विश्व स्तरीय निर्देशों तथा इसी क्रम में विभिन्न स्तर पर आयोजित क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय सम्मेलन के प्रतिवेदनों से भी पर्यावरण के क्षेत्र में नई दिशा मिल सकती है। इसका उपयोग राष्ट्रहित में रहेगा।

20. सभी पर्यावरण कार्यों की महत्ता और आवश्यकता को प्रतिपादित करने हेतु पर्यावरण शिक्षा को ही समस्या समाधान के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसका व्यापक कार्यक्रम तैयार कर इसे प्रयोग में लेना चाहिए।

उपर्युक्त समेकित बिन्दुओं में पर्यावरण के क्षेत्र में मनुष्य की उस भूमिका को बताने का प्रयास किया गया है जिससे वह नैतिक रूप से सम्बद्ध है। दूसरे शब्दों में यह मनुष्य के, पर्यावरण के क्षेत्र में, नैतिक रुझान (moral attitude) को प्रदर्शित करता है। यह रुझान ही बहुत महत्त्वपूर्ण है और आज के अमानवीकरण (dehumanization) के युग में नितान्त आवश्यक भी है।

Leonard Carmichael द्वारा सम्पादित पुस्तक **Introduction to Psychology** के अध्याय 21 **(Social Behaviour)** में विद्वान लेखकों ने रुझान (Attitudes) को परिभाषित करते हुये लिखा है कि—

"The attitude is the mental state of readiness; and its basic components are thinking, feeling and reacting."

(रुझान किसी कार्य को करने की मानसिक तत्परता है; और इसके मुख्य घटक सोचना, महसूस करना और क्रिया करना है।)

इसमें उन्होंने कहा है कि यहाँ 'सोचना' (Thinking) 'धारणा' (Belief) है; 'महसूस करना' (Feeling) 'मूल्य' (Value) और 'क्रिया करना' (Reacting), 'व्यावहारिक प्रवणता' (Practical Efficiency) है। अर्थात् कोई रुझान धारणा, मूल्य और क्रिया के बिना सम्भव नहीं है। अतः पर्यावरण के क्षेत्र में भी नैतिकता के प्रति रुझान में भी यही तीनों बिन्दुओं का सम्मिलित किया जाना आवश्यक है। इससे पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण सुरक्षा, पर्यावरण प्रदूषण और पर्यावरण सुधार को निश्चित ही गति मिल सकेगी।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'नैतिक प्रदूषण' से क्या तात्पर्य है ? पर्यावरण के क्षेत्र में नैतिक प्रदूषण की क्या भूमिका हो सकती है, उदाहरण देकर समझाइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

2. 'नैतिकता' को परिभाषित कीजिये।
3. 'नैतिकता' व्यक्तित्व के निर्माण में किस प्रकार सहायक है ?
4. मनुष्य के जीवन मूल्य क्या हैं ? कोई 5 के नाम लिखिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

5. निम्न में से किसे अच्छी आदत नहीं कहेंगे ?
   (अ) नियमितता (ब) आलस्य
   (स) समय पाबन्दी (द) प्रसन्न चित्त रहना
6. 'जीवन की गुणवत्ता' की ओर ध्यान न देने की बात किस प्रदूषण से संबंधित है ?
   (अ) औद्योगिक प्रदूषण (ब) ध्वनि प्रदूषण
   (स) नैतिक प्रदूषण (द) वाहन प्रदूषण
7. 'नैतिक प्रदूषण' में निम्न को सम्मिलित किया जा सकता है—
   (अ) ज्यादा भोजन करना (ब) देरी से सोकर उठना
   (स) क्रोधित होना (द) जल का दुरुपयोग
8. नैतिकता ह्रास के संभावित कारणों में निम्न नहीं है—
   (अ) लालच (ब) स्वार्थपरता
   (स) बुरी संगत (द) अच्छा व्यवहार
9. 'नैतिक प्रदूषण' को रोकने हेतु मनुष्य को करना होगा—
   (अ) झूठ बोलना (ब) चोरी करना
   (स) राष्ट्रीय प्रेम (द) रिश्वत लेना

22

अपशिष्ट निस्तारण
[WASTE DISPOSAL]

● प्रस्तावना (Introduction)

बहुत पुरानी बात नहीं इसी पृथ्वी (सतही क्षेत्रफल 510 मिलियन वर्ग किमी) पर सन् 1650 की मनुष्य आबादी लगभग ½ अरब (54.50 करोड़) थी। इतनी ही आबादी यदि पशुओं की भी मान लें, तो 1 अरब मनुष्य और पशु इस पृथ्वी पर निवास करते थे। आवश्यकताएँ बहुत सीमित। नितान्त आवश्यक वस्तुओं में खाने में साधारण अन्न-माँस-मछली-फल, रहने को कुछ कच्चे-पक्के मकान-झौंपड़ियाँ और तन ढकने को जैसा भी उपलब्ध हो वैसा कपड़ा-वस्त्र-पोशाक। अतः रहना और जीना तथा जीने के लिये खाना-पीना और कपड़ा। कुछ ऐसा होता ही नहीं था कि मनुष्य अपने पास की वस्तुओं को बेकार समझ कर उसे अपने से अलग करना चाहे। अधिक-से-अधिक जानवरों की हड्डियाँ, मृत जीवों के शरीर, जो स्वयं सूर्य की गर्मी से नष्ट हो जाते थे और जो नहीं हो पाते थे, वह वहीं की जमीन में दब जाते थे।

समय बीतता गया। इधर जनसंख्या में वृद्धि हुई (वर्तमान में 6.1 अरब) और उधर मनुष्यों की आवश्यकताओं में वृद्धि हुई। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये औद्योगीकरण ने अपना विस्तार किया; सुख-सुविधा और मनोरंजन के साधन, विविध और विभिन्न प्रकार के भोजन और कपड़े तथा आवास में परिवर्तन हुआ। निश्चय ही अब आवश्यकता से अधिक अनुपयुक्त और काम में न आने वाली वस्तुएँ, काम में आने के बाद शेष रही वस्तुएँ और अनेक प्रकार की नष्ट करने योग्य वस्तुएँ एकत्रित होने लगीं। पहले तो खाली भूमि को इन बेकार वस्तुओं के डालने में उपयोग किया और फिर नदी, झीलें, समुद्र, सागर, पहाड़, चट्टानें, रेगिस्तान सभी स्थान काम में आने लगे। इन बेकार व अनचाही वस्तुओं की अधिकता ने और इनके पर्यावरणीय दुष्प्रभावों ने आबादी के लोगों को चिन्तित कर इस बात के लिये सोचने को बाध्य किया कि आखिर हम क्या करें ? इनसे कैसे बचें ? और इनसे कैसे छुटकारा पायें ? **यह बेकार वस्तुएँ अब अपशिष्ट के नाम से जानी जाने लगीं।**

यहीं से प्रारम्भ होता है कि अपशिष्टों का इतिहास और इनके निस्तारण की पूरी यात्रा जिसे बहुत ही वैज्ञानिक ढंग से सुलझाने में वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता और पर्यावरणविद् लगे हैं।

● अपशिष्ट (Waste)

अभी प्रस्तावना में ही संक्षिप्त में अपशिष्टों के बारे में जिक्र करते हुये यह बताने का प्रयास किया है कि 'अपशिष्ट' क्या होते हैं ? पर फिर भी डॉ. वार्ष्णेय[1] ने अपनी पुस्तक Rural Waste Management में अपशिष्ट की बहुत ही सुन्दर परिभाषा दी है—

"Waste may be defined as the damaged, defective or superfluous material produced by a manufacturing process, discarded material from agriculture and foresty refuse available from the places of human and animal habitation, which are allowed to escape without being utilized or are underutilized on the site."

(किसी निर्माण क्रिया से उत्पन्न नष्ट हुई, खराब अथवा अतिरिक्त सामग्री, कृषि तथा वानिकी से अलग की हुई वस्तुएँ, मनुष्य तथा पशुओं के आवासीय स्थानों से एकत्रित कूड़ा-करकट, जो स्थान

1. A.C. Varshney, Rural Waste Management (New Delhi, India: Associated Publishing Company, 1987) p. 1

विशेष से उपयोग होकर अथवा आंशिक उपयोग के बाद प्राप्त हाता है, अपशिष्ट की परिभाषा में आती हैं।)

इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि कोई भी वस्तु उस समय ही अपशिष्ट (Waste) कहलाने लगती है, जबकि उसकी आवश्यकता निश्चित प्रक्रिया में नहीं होती। यह बात अन्य है कि इस अपशिष्ट को वहीं अथवा अन्य जगह पर किसी लाभप्रद कार्य में उपयोग ले लिया जाये। ऐसे कई उदाहरण दिये जा सकते हैं, जैसे

1. पशुओं के गोबर (Animal Waste) का बायो-गैस बनाने में उपयोग।
2. जलकुम्भी और अन्य जलीय पौधों का खाद बनाने में उपयोग।
3. रसोई अपशिष्ट (Kitchen Waste) का जानवरों को खिलाने में उपयोग (उसे पूरी तरह साफ करके)। आदि

और अब धीरे-धीरे यह स्थिति भी आ रही है कि अपशिष्ट निस्तारण प्रबन्धन (Waste Disposal Management) में तीन पदों को प्राथमिकता दी जाने लगी है—

(अ) **Reuse** (पुनः प्रयोग में लाना)
(ब) **Recycle** (पुनः चक्रांकन कराना) और
(स) **Reduce** (मात्रा में कमी लाना)।

एक बहुत सादी और सीधी परिभाषा 'अपशिष्ट' के लिये Collins Dictionary[1] में निम्न प्रकार दी है—

"The material which has been used and is no longer wanted."

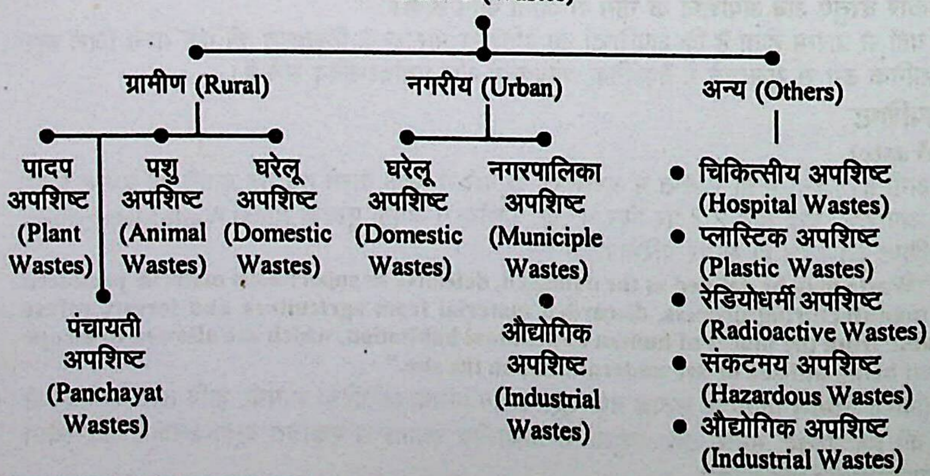
(वह वस्तु जिसका उपयोग हो चुका है और जिसकी अब आवश्यकता नहीं है।)

—Collins Cobuild English Language Dictionary, p-1642.

● अपशिष्टों का वर्गीकरण (Classification of Wastes)

वर्तमान में अपशिष्टों के विभिन्न प्रकार और विविधताएँ इतनी हो गई हैं, कि उन्हें किसी एक रूप में समेकित करके प्रस्तुत करना अत्यन्त कठिन हो गया है। वर्गीकरण में, (1) शहरी और ग्रामीण (Urban and Rural), (2) ठोस, द्रव और गैस (Solid, Liquid and Gas), (3) घरेलू और बाहरी (Domestic and Outer), (4) नशीली और संकटमय (Toxic and Hazardous), (5) खानीय और औद्योगिक (Mines and Industrial), (6) चिकित्सीय और नष्ट न हो सकने वाले (Hospital and Non-biodegradable) आदि-आदि कई प्रकार के विभाजन अथवा एकरूपता लिये कई प्रदूषणों को एक साथ रखा जा सकता है। इसके बाद भी सभी अपशिष्टों को हम कोई एक श्रेणी में रख सकें, यह संभव नहीं।

हमने यहाँ एक सरल वर्गीकरण करने का प्रयास किया है—



1. **Collins Cobuild English Language Dictionary, Collins Publishers London, ibid.**

• ग्रामीण अपशिष्ट (Rural Wastes)

1. पादप अपशिष्ट (Plant Wastes)

पादप अपशिष्ट सामान्यतया उन वृक्षों और पौधों से होता है जो खेतों में, सड़कों पर, चौपालों पर या अन्य स्थानों पर उगते हैं अथवा उगाये जाते हैं। यह विभिन्न प्रकार से, (1) जड़ें (Roots), तने (Stems), पत्तियाँ (Leaves), छालें (Shells) तथा टहनियाँ (Branches) आदि से हमें मिलते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के उन पौधों से भी, जो फल देकर समाप्त हो जाते हैं अथवा किसी कारण नष्टप्रायः हो जाते हैं, हमें अपशिष्ट मिलता है। पर यह सब प्राप्त सामग्री केवल नाम की ही अपशिष्ट होती है, क्योंकि इस पादक अपशिष्ट का लकड़ी वाला भाग जलाने में काम आ जाता है और शेष हिस्से का कुछ भाग पशुओं के चारे के रूप में तथा अन्य भाग खाद बनाने के लिये काम में ले लिया जाता है।

लेकिन पादप अपशिष्ट का वर्तमान युग में, निस्तारण उपर्युक्त वर्णित कार्यों के अतिरिक्त भी कई अधिक उपयोगी वस्तु के रूप में काम लिया जाता है। वह हैं—

1. विभिन्न प्रकार के कागज बनाने में; सादा कागज, ब्लौटिंग पेपर्स, फिल्टर पेपर्स, निमन्त्रण पत्र, पैकिंग डिब्बे, एल्बम पेपर, कवर पेपर्स, ड्राइंग बोर्ड्स आदि।
2. कच्चे मकानों के निर्माण में; चावल, कपास और गेहूँ के छिलके (Straws) के साथ पादप अपशिष्ट ऐसी सामग्री तैयार कर लेते हैं, जिनसे दीवारें उठाई जा सकती हैं। पिसे हुये चावल की पिट्ठी सीमेण्ट का काम करती है। छत डालने के लिये इनके साथ गन्ने की खोई का भी प्रयोग किया जाता है।
3. इस अपशिष्ट को सुखाकर घर में ईंधन के रूप में काम लिया जा सकता है।
4. पादप अपशिष्ट का उपयोग खाद बनाने तथा बायो गैस संयंत्रों में भी होने लगा है।

2. पशु अपशिष्ट (Animal Wastes)

पशु अपशिष्ट प्रायः उनके मल-मूत्र को ही मानते हैं, लेकिन इसके अतिरिक्त उनके मृत होने पर उसके शरीर से न जाने कितने गौण उत्पादन (byproducts) प्राप्त होते हैं, जिन्हें भी पशु अपशिष्टों में सम्मिलित किया जा सकता है। ये हैं—(1) खालें (Hides), (2) हड्डियाँ (Bones), (3) बाल (Hairs), (4) सींग (Horns), (5) चरबी (Tallow), (6) अंतड़ियाँ (Guts), (7) ग्रन्थियाँ (Glands), (8) रक्त तथा न खा सकने वाला माँस (Blood and Non-edible Meat) आदि।

पशु अपशिष्टों का निस्तारण वस्तुतः उनकी सभी वस्तुओं का ठीक से उपयोग ही है। एक छोटी सी सारणी आगे दी गई है—

सारणी 22.1

पशु अपशिष्टों का उपयोग

क्र. सं.	अपशिष्ट	उपयोग
1.	मल-मूत्र	खाद के रूप में; जलाने के उपयोग में; बायो गैस प्लाण्ट में।
2.	खालें अथवा चमड़ी	चमड़ा बनाने में।
3.	हड्डियाँ	चूरा करके खाद में उपयोग; बोन चारकोल बनाकर चीनी उद्योग में उपयोग; दवाइयों में उपयोग आदि।
4.	सींग	चाय और कॉफी उत्पादन में; खाद के रूप में प्रभावी; चाकू, कंघा, हैन्डिल्स, खिलौने निर्माण में।
5.	बाल	ब्रुश बनाने में।
6.	चरबी	साबुन और कपड़ा उद्योग में उपयोग; कॉस्मेटिक उपयोग में।
7.	अंतड़ियाँ	संगीत उपकरणों में; टेनिस रैकिटों में।
8.	ग्रन्थियाँ	दवाइयों में उपयोग।
9.	रक्त	हीमोग्लोबिन के लिये औषधि; अनेक उद्योग जैसे प्लाइवुड, रबड़, कपड़ा, कागज और चमड़ा में उपयोग।

3. घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)

ग्रामीण क्षेत्रों के घरेलू अपशिष्ट में सम्मिलित हैं—(1) कूड़ा-करकट (Rubbish), (2) धूल और राख (Dust and Ash), (3) रद्दी सामान (Garbage), (4) रसोई अपशिष्ट (Kitchen Waste), (5) गन्दा पानी (Sullage) और (6) मानव मल-मूत्र (Human Excreta)। इस मोटे वर्गीकरण में सबसे अधिक भाग कूड़ा-करकट तथा रद्दी और बेकार सामान का होता है, जो सामान्यता ठोस रूप में होता है। इसमें कागज, कपड़े, लकड़ी की वस्तुएँ, खिलौने, पैकिंग सामग्री, शीशे के सामान, प्लास्टिक तथा धातु की वस्तुएँ, क्राकरी, पॉलिथीन बैग्स व थैलियाँ, बगीचे के पौधों के पत्ते, चमड़े की चप्पलें-जूते और ऐसी ही वस्तुएँ आती हैं क्योंकि गाँव के लोग इस प्रकार के सभी अपशिष्टों को अपने-अपने घरों से झाड़कर घर के बाहर ही फेंक देते हैं, तो यह एकत्रित होकर गन्दगी का ढेर बन जाता है।

रसोई से निकले साग-सब्जी के अपशिष्ट, सारे घर के नहाने-धोने का गंदा पानी भी कम मात्रा में नहीं होता। मल-मूत्र अपशिष्ट इन सबसे अलग होता है जो सबसे अधिक स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाला होता है।

इन अपशिष्टों के निरस्तारण की विभिन्न प्रक्रियाओं को निम्न प्रकार समेकित किया जा सकता है—

1. घर के सारे ही ठोस अपशिष्ट को एक पात्र में घर के बाहर ही एकत्रित करें। वहाँ से इसे ग्राम पंचायत की व्यवस्था के अनुसार एक जगह मँगाया जा सकता है। इसको अलग-अलग प्रकार से विभाजित करना चाहिये—
    - शीशे के टुकड़े, प्लास्टिक का सामान, धातु की वस्तुएँ, पॉलिथीन बैग्स आदि को पुनः चक्रांकन करने हेतु एक तरफ निकाल दें। समीप का कोई नगरीय कबाड़ी इसे ले जायेगा।
    - कागज, कपड़े के टुकड़े, लकड़ी के सामान आदि को एक ढेर में रख दें। इसे जलाया जा सकता है।
    - पेड़-पत्तियाँ, पादप अपशिष्ट (विशेषकर पत्ते और पत्तियाँ) को खाद बनाने के काम में ले लें।
2. रसोई अपशिष्ट के खाने से संबंधित भाग को पशुओं के भोजन का अंग बनाया जा सकता है। निष्कासित जल से किचन गार्डन पनपायें।
3. धूल-राख व अन्य शेष अपशिष्ट को नीचे तल की भूमि में भरत (Land Filling) के काम में लेवें।
4. मल-मूत्र निस्तारण हेतु घर में ही सोक पिट प्रणाली (Soak Pit System) के शौचालय बनायें। इस हेतु आंशिक अनुदान की भी व्यवस्था पंचायत से मिल जाती है।
5. मृत जानवर, अन्य कीचड़, कूड़ा-करकट को भी दूरदराज में गड्ढा खोदकर निस्तारित किया जा सकता है।

4. पंचायती अपशिष्ट (Panchayat Wastes)

यह अपशिष्ट मुख्यतः ठोस रूप में होता है, जिसमें सड़कों और गलियों का कूड़ा-करकट, पशुओं का मल (गोबर), कागज-कपड़े के टुकड़े, अन्य विविध प्रकार की बेकार वस्तुएँ जहाँ-तहाँ गाँव तथा उसके आस-पास बिखरी पड़ी रहती हैं। ग्राम पंचायत को इस अपशिष्ट को एकत्रित कराने का दायित्व स्वीकार करना चाहिये। इसकी निस्तारण प्रक्रिया भी उसी प्रकार की होगी, जैसे कि घरेलू अपशिष्ट की पूर्व में बताई गई है।

● नगरीय अपशिष्ट (Urban Wastes)

1. घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)

यह अपशिष्ट ग्रामीण क्षेत्र के घरेलू अपशिष्ट से भिन्न नहीं है। लगभग वही वस्तुएँ नगरीय क्षेत्र के घरेलू अपशिष्ट में आती हैं, जिनका विवरण हमने ग्रामीण क्षेत्र के अपशिष्ट में किया है। शहरी क्षेत्र के कारण कुछ विविधता अवश्य हो सकती है, जैसे घरेलू अखबार, पोर्सीलिन के बर्तन, पेरिस ऑफ प्लास्टर की कास्टिंग्स, सजाने की वस्तुएँ, गमले, बोतलें, टीन और प्लास्टिक के डिब्बे आदि।

इन सभी की निस्तारण विधा भी वही होती है लेकिन यहाँ अखबार, बोतलें, प्लास्टिक के डिब्बे, टूटा फर्नीचर घर से ही कबाड़ी ले जाते हैं और शेष को व्यक्तिगत तौर पर कूड़े के लिये बनाये गये स्थानों पर फैंक कर या फिकवा कर लोग इस समस्या से बरी हो जाते हैं। बड़े-बड़े शहरों में तो नगर

निगम तथा नगरपालिकाओं ने यह व्यवस्था भी कर रखी है कि लोग नियमित आर्थिक अंश दान से यह कूड़ा-करकट घर से ही एकत्रित कर लेते हैं। इसके अतिरिक्त–

- मल-मूत्र निस्तारण के लिये घरों में ही फ्लश शौचालय बने होते हैं; जहाँ सीवरेज लाइनें नहीं हैं, वहाँ सोक पिट सिस्टम शौचालयों की व्यवस्था होती है।
- गन्दे पानी को ड्रेनेज सिस्टम से बाहर निकाल दिया जाता है।
- अन्य किसी प्रकार के कूड़े-करकट के लिये भी नगर निगम व्यवस्था करता है। निस्तारण प्रक्रिया वे ही अपने स्तर पर संचालित करते हैं।

2. नगरपालिका अपशिष्ट (Municiple Wastes)

यह एक भारी भरकम कार्य है, क्योंकि इसमें लोगों द्वारा अपने कार्यकलापों से उत्पन्न अपशिष्ट को नगरपालिका के जिम्मे डालकर बरी हो जाते हैं। शहरों में अपशिष्टों की विविधता रहती है, जैसे, (1) कूड़ा-करकट (Garbage), (2) राख और धूल (Ashes and Dust), (3) सड़कों तथा गलियों का कूड़ा (Roads and Streets Refuse), (4) मृत जानवर (Dead Animals), (5) खराब मशीनें और बेकार वाहन (Spoiled Machines and Unusable Automobiles), (6) मकान निर्माण अपशिष्ट (Building Construction Waste), (7) पशु तथा कृषि अपशिष्ट (Animal and Agricultural Waste), (8) तोड़-फोड़ अपशिष्ट (Demolishing Waste) आदि।

इनके निस्तारण में नगरपालिका को पाँच चरणों में काम करना होता है–(1) एकत्रीकरण (Collection), (2) भण्डारण (Storage), (3) छाँटना (Sorting), (4) ले जाना (Transportation) और (5) निस्तारण (disposal)। यह सभी नियमित प्रतिदिन की क्रियाविधि है। मिलियन्स टन्स कूड़ा प्रतिदिन निस्तारित किया जाता है।

विधाएँ चाहे कितनी भी प्रस्तावित हों, लेकिन व्यवहार में परम्परागत तरीकों का ही प्रयोग होता है, (1) पुनःचक्रांकन (Recycling), (2) जलाना (Incineration) और भूमि परत (Land Filling)। हाँ एक स्थान के भर जाने पर दूसरे स्थान की तलाश जारी रहती है।

3. औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes)

शहरों में तथा उसके आस-पास जहाँ उद्योग चलते हैं, वहाँ के अपशिष्टों के निस्तारण की व्यवस्था उद्योग स्तर पर ही की जाती है, जो केन्द्रीय अथवा राज्य प्रदूषण नियंत्रण मण्डल के निर्देशानुसार सम्पन्न किये जाते हैं।

● अन्य अपशिष्ट (Other Wastes)

1. चिकित्सीय अपशिष्ट (Hospital Waste)

पिछले दो दशकों से लोगों में, विशेषतः स्वास्थ्य सेवा अधिकारियों के मन में यह सोच शुरू हुआ है कि स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य रक्षा (Health & Hygiene) के दिनोंदिन बढ़ते चरणों के साथ उन अस्पताल, नर्सिंग होम्स की सफाई, स्वच्छता और निरापदता का भी ध्यान रखना आवश्यक है जिनमें विभिन्न रोगियों का इलाज होता है। विशेषकर ऐसे रोगी, जो अन्तरंग रोगी बनकर किसी विशेष प्रकार की शल्य क्रिया अथवा अन्य लम्बे उपचार के लिये भरती हुये हों, उनके प्रयोग में लाने वाले साज-सामान यथा पट्टियाँ, सिरेन्जेज, ग्लूकोज की बोतलें, रबड़ अथवा प्लास्टिक के दस्ताने, रबर टयूबिंग्स आदि का नष्ट करना नितान्त अनिवार्य है जिससे किन्हीं अन्य लोगों को अनजाने ही हो जा सकने वाले रोगों से बचाया जा सके। ऑपरेशन के बाद शरीर के कटे अंग, माँस के लोथड़े, रक्त रंजित चादरें व अन्य बिस्तर भी यदि सुरक्षापूर्वक निस्तारित हो सकें, तो उनका भी कोई उपाय होना चाहिये।

दैनिक चलन में उपर्युक्त प्रकार की सामग्री यूँही अस्पताल के किसी गलियारे अथवा विशेष चिन्हित स्थान पर डाल दी जाती है। यहाँ से कूड़ा बीनने वाले व्यक्ति उन्हें उठाकर ले जाते हैं और अनेक प्रकार की वस्तुओं का, विशेषकर सिरेन्ज, ग्लूकोज की बोतलों का पुनः उपयोग होने की आशंका बनी रहती है। इसे अब प्रतिबन्धित ही नहीं किया गया है वरन् उसे आधिकारिक रूप से रोका भी जाने लगा है।

भारत में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने प्रथम बार 1 अगस्त, 1998 को एक 'चिकित्सीय अपशिष्ट निस्तारण' (Hospital Waste Disposal) विज्ञप्ति प्रसारित की है, जिसमें इस अपशिष्ट निस्तारण के

विस्तृत निर्देश दिये हैं। इन दिशा-निर्देशों को बायो मेडिकल वेस्ट : मैनेजिंग एण्ड हैन्डलिंग रूल्स, 1998 (Bio-medical Waste : Managing & Handling Rules, 1998) के नाम की संज्ञा दी है। इनमें चिकित्सीय अपशिष्ट निस्तारण के साथ-साथ उपयोग में ली जाने वाली तकनीकियों का भी खुलासा किया है।

नये नियमों में निस्तारण तकनीकी का विवरण निम्न प्रकार है—

अस्पताल के पूरे अपशिष्टों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जायेगा और उन्हें अलग-अलग, (1) पीले (Yellow), (2) लाल (Red) तथा नीले (Blue) रंग के पात्रों (बैग्स अथवा कन्टेनर्स या ढेर) में रखा जायेगा। **प्रथम श्रेणी (पीले)** में संक्रामक अपशिष्ट जैसे मानव अंग और इनके भाग, कटे माँस के लोथड़े आदि होंगे। **द्वितीय श्रेणी (लाल)** में रक्त से सने पदार्थ, जैसे पट्टियाँ, कपड़े गॉज आदि रखे जायेंगे। **तीसरी श्रेणी (नीले)** में सिरेन्ज, शीशे व प्लास्टिक की बोतलें, काँच का अन्य सामान आदि होंगे।

इन तीनों श्रेणियों की वस्तुओं के निस्तारण हेतु भी यह स्पष्ट निर्देश हैं कि प्रथम श्रेणी की वस्तुएँ जलाकर (through incineration), अथवा गहरे गड्ढे में दबाकर, दूसरी श्रेणी की वस्तुएँ उच्च ताप की भाप से निःसंक्रामक कर नष्ट करके तथा तीसरी श्रेणी को साधारण निःसंक्रामित करके नष्ट किया जायेगा।

यह ध्यान निस्तारण अधिकारी का होगा कि

(1) यह वस्तुएँ पुनः काम में न आयें,

(2) प्लास्टिक को भस्मक उपकरण (Incineraters) में न डाला जाये क्योंकि इससे Dioxine गैस निकलती है, जो कैन्सर कारक है,

(3) जहाँ तक संभव हो इस अपशिष्ट को भूमि परत (Land Filling) के काम में नहीं लिया जाये।

इन नियमों को लागू करने के लिये एक समयबद्ध कार्यक्रम भी निश्चित किया है—

सारणी 22.2
चिकित्सीय अपशिष्ट प्रबन्धन की समय सूची

क्र. सं.	विवरण	अन्तिम तिथि
1.	30 लाख से अधिक आबादी वाले नगरों के अस्पताल और नर्सिंग होम्स	31 दिसम्बर, 1999
2.	30 लाख से कम आबादी वाले नगरों के अस्पताल और नर्सिंग होम्स	
	(अ) 500 तथा इससे अधिक शैय्या वाले	31 दिसम्बर, 1999
	(ब) 200 से अधिक लेकिन 500 से कम शैय्या वाले	31 दिसम्बर, 2000
	(स) 50 शैय्या से कम वाले	31 दिसम्बर, 2002
3.	उपर्युक्त विभाजन में नहीं आने वाले सभी चिकित्सीय संस्थाएँ	31 दिसम्बर, 2002

स्रोत : Down to Earth, CSE New Delhi, Issue No. 31 Aug, 2000, Article : Wasting Away से साभार।

इन नियमों के पालन हेतु कई नगरों में स्पष्ट रूपरेखा तैयार करके रोगियों से प्रति शैय्या कुछ धनराशि लेने की स्वीकृति अधिकारियों से तथा सरकार से माँगी है। अगर इस व्यवस्था का कुछ प्रतिशत भी प्रारम्भ में ही पूरा होने जैसा दिखने लगे, तो यह विश्वास किया जा सकता है कि एक महत्त्वपूर्ण चिन्ता का निदान आम जनता के हित में हुआ है।

2. प्लास्टिक अपशिष्ट (Plastic Wastes)

भारत में प्लास्टिक का प्रवेश लगभग 50 वर्ष से अधिक का नहीं है और इसकी उपयोगिता विकसित देशों की तरह से लकड़ी (Timber), लोहा (Iron), चमड़ा (Leather) आदि समाप्त हो जाने वाले पदार्थों के विकल्प के रूप में ही हुई है। हम याद करें कि इसका प्रारम्भिक प्रयोग स्लीपर्स, बाल्टियाँ, खिलौने और वस्तुओं को रखने के डिब्बों से हुआ। फिर चप्पल, जूते, दरवाजे, कार के ऊपरी ढाँचे, पानी

की टंकियाँ, ड्रेन पाइप्स बने। सीमेण्ट व अनाज के बोरे, इन्सूलेशन के विकल्प में तारों के आवरण, पर्दे, फर्नीचर, बोतलें, चादरें, मेजपोश, इन्जैक्शन की सिरेन्ज आदि न जाने कितनी वस्तुएँ फिर जन-साधारण को उपलब्ध होने लगीं। पॉलीथीन के कैरीबैग्स और थैलियाँ, पैकिंग सामग्री, डोरियाँ (रस्सियाँ), पायदान, बिजली के शेड्स भी प्लास्टिक की देन रहे। सभी लोग इस नये उत्पादन से बहुत सुविधा महसूस करते थे और कम वजन वाला उपयोगी सामान से अत्यधिक प्रसन्न थे।

पॉलीथीन की थैलियों के उपयोग ने जब पूरे देश में एक साथ अनेक समस्याएँ पैदा कर दीं तब ही इस प्लास्टिक उद्योग व इसमें निर्मित विविध प्रकार की वस्तुओं ने लोगों को चेताया। उन्होंने पाया कि बढ़ती आबादी के साथ-साथ पॉलीथीन थैलियों का उपयोग शहर से गाँव तक लगभग सभी प्रकार की सामग्री के लाने-ले जाने में किया जाता है। इसका लाभ उद्योग निर्माताओं ने उठाया तथा उन्होंने नई-नई तकनीकें अपना कर उतने ही प्लास्टिक निवेश में पतली से पतली थैलियाँ (5 माइक्रोन) बनाकर अधिक संख्या में बेचने से भारी मुनाफा अर्जित करने का काम किया। आम नागरिक को इस उत्पाद की चिन्ता सताने लगी। उनकी चिन्ता का विषय थैलियों की संख्या और मोटाई से नहीं बल्कि इससे उठने वाली समस्याओं पर आया। उनके अनुसार—

- यह थैलियाँ पाइपों में फँसकर पानी के सहज बहाव को रोक देती हैं। पूरा ड्रेनेज सिस्टम ही बन्द हो जाता है।
- कूड़े-करकट अथवा खाने की वस्तुओं के साथ पशु इन्हें खा जाते हैं, जो इनके पेट में पहुँचकर जमा हो जाती हैं। अनेक पशु मर जाते हैं!
- खेतों में बिखर कर वायु और जल के प्रवेश को मिट्टी में जाने से रोकती हैं। यथेष्ट वायु और जल के न मिल पाने से उत्पादन कम होता है। भूमिक्षरण का भी यह कारण बनती हैं।
- शीघ्र ज्वलनशील होने के कारण यह थैलियाँ जलाने पर जलने लगती हैं। डाइऑक्सीन (Dioxine), फॉस्जीन (Phosgene) जैसी घातक और विषैली गैसे निकलती हैं। कार्बन मोनोऑक्साइड, क्लोरीन, सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड गैसें भी उत्सर्जित होती हैं। फिर भी यह थैलियाँ पूरी तरह नष्ट नहीं होतीं।
- यह थैलियाँ अनेक वर्षों (100 वर्ष से भी अधिक) तक भी नष्ट नहीं होती और इनका घातक दुष्परिणाम पीढ़ी दर पीढ़ी भोगना पड़ सकता है।
- थैलियों को रंगीन बनाने के लिये जिन पदार्थों को इसके मूल माल (virgin raw material) में मिलाया जाता है, उससे कैडमियम (Cadmium) और सीसे (Lead) के प्रभाव का डर रहता है। अतः रंगीन थैलियाँ निश्चय ही विशेष घातक हैं।
- बहुत हल्की होने के कारण यह उड़ जाती हैं तथा घर, सड़क व अन्य सभी स्थानों पर छितरी रहती हैं। इनका एकत्रीकरण भी बहुत कठिन होता है।
- वर्तमान में जितना भी ठोस अपशिष्ट होता है उसका एक अच्छा प्रतिशत (4% से 9% तक) प्लास्टिक होता है, जिसमें इन थैलियों का भी काफी योगदान है।

प्लास्टिक (Plastics) की जानकारी आम व्यक्ति को नहीं है। वस्तुतः यह एक बहुल प्रकार की सामग्री का समुच्चय है जिनमें से किसी भी पदार्थ को बिना उसकी मूलभूत गुणवत्ता को नष्ट किये मन प्रकार की शक्लों और आकृतियों में ढाला जा सकता है। इनमें विशेषतः (1) पॉलीविनायल क्लोराइड (Polyvinyl Chloride, PVC), (2) पॉलिस्ट्रीन (Polystrene : PE), (3) पॉलिएमाइड्स (Polyamides : Nylon), (4) पॉलिथीलीन (Polyethylene : PE), (5) पॉलिएथिलीन टैरीप्थलेट (Polyethylene Tereph-thalate : PET) पदार्थों का उपयोग प्लास्टिक की वस्तुओं के निर्माण में किया जाता है। आमतौर पर प्लास्टिक उद्योग में पॉलिविनाइल क्लोराइड : PVC का उपयोग अधिक किया जाता है। पॉलिथीन की थैलियों का निर्माण पॉलिथिलीन (PE) से किया जाता है, जिसमें आवश्यक रसायन मिलाकर इन्हें उच्च घनत्व (High Density : HDPE), निम्न घनत्व (Low Density : LDPE) तथा रेखीय निम्न घनत्व (Linear Low Density : LLDPE) के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है।

प्लास्टिक का विश्व में कितना उपयोग हो रहा है इसका अनुमान भी लगाना कठिन कार्य है क्योंकि इसकी विश्व उत्पादन क्षमता प्रति वर्ष 100 मिलियन मैट्रिक टन है और विगत वर्षों का उत्पादन

किसी न किसी रूप में इसमें जुड़ जाता है, जिसके आंकड़े भी सामान्यतया उपलब्ध नहीं हो सकते। लेकिन भारत में प्लास्टिक की खपत का कुछ विवरण 'Down to Earth' March 31, 2002 के अंक (पृष्ठ 35) में दिया है। इसके अनुसार सन् 1996 में 0.061, सन् 2000 में 3.0, सन् 2001 में 4.0 मिलियन मैट्रिक टन प्लास्टिक की खपत हुई है। यह अनुमान है कि सन् 2003 में लगभग 5.0 मिलियन टन तथा 2006 तक 7.5 मिलियन टन हो जाएगी। इस हेतु प्लास्टिक निर्माण उद्योग निरन्तर इस प्रयास में लगा है कि इस पदार्थ की और उपयोगी वस्तुएँ बनाकर उन्हें जनसाधारण तक पहुँचाया जाय।

पॉलिथीन बैग्स की समस्या सन् 1990 से ही प्रारम्भ हुई है और इस द्वारा जनसाधारण में उत्पन्न समस्या ने भारत सरकार, राज्य सरकारें तथा स्वयंसेवी संस्थाओं को हिला दिया है। वे सभी मिलकर अथवा अलग-अलग भी कोई निदान नहीं सोच पा रही हैं, लेकिन वर्तमान स्थिति में असहाय होकर यह बात स्वीकार कर ली गई है कि

(1) अपशिष्ट प्लास्टिक (Waste Plastic), चाहे वह किसी वस्तु का हो अथवा पॉलिथीन बैग्स का, को पुनःचक्रांकित (recycle) करने दिया जाय जिससे प्लास्टिक इधर-उधर बिखरने के बजाय उसका उपयोग तो हो।

(2) पॉलिथीन बैग्स की मोटाई 20 माइक्रोन (20 microns) सें कम न हो, जिससे उसे एकत्रित किया जा सके।

(3) पुनःचक्रांकित पॉलिथीन बैग्स को रंगीन न बनाया जाय। रंगीन व काले रंग की थैलियों को खाने की वस्तुओं को रखने के उपयोग में नहीं लिया जाय।

भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने Recycled Plastics Manufactures and Usage Rules, 1999 को सितम्बर 1999 में प्रसारित किया है, पर इसकी अनुपालना व्यवहार में नहीं आई है, क्योंकि जनसाधारण इसे अव्यावहारिक मानता है। परेशानी और चिन्ता थैलियों की मोटाई को लेकर अधिक है। स्वयंसेवी संस्थाएँ निम्नतम मोटाई 100 माइक्रोन की सिफारिश करती है, जबकि उद्योग निर्माताओं को यह लाभप्रद न होने के कारण स्वीकार्य नहीं है। टास्क फोर्स निरन्तर इसके हल खोजने में लगी है।

दो उपयोगी सुझाव प्लास्टिक अपशिष्ट निस्तारण (Plastic Waste Disposal) के रखे गये हैं—

(1) नये पदार्थ Tapioca Plant, जिसका उत्पादन हमारे देश के केरल और तमिलनाडु प्रान्त में होता है, को प्लास्टिक PVC या अन्य इसी श्रेणी के प्लास्टिक पदार्थों के साथ मिलाकर इसे नष्ट होने वाले पदार्थों में ले लिया जाय। इस पौधे के स्टार्च में यह गुण है कि यह प्लास्टिक में नष्ट हो जाने के गुण उत्पन्न कर देता है।

(2) अपशिष्टों का उपयोग कार्पेट निर्माण, रस्सी निर्माण, सड़क निर्माण जैसे लाभकारी कार्यों में ले लिया जाय।

केवल विशेष ध्यान यही रखना है कि प्लास्टिक अपशिष्टों का निस्तारण का निदान (1) जलाने अथवा (2) गाढ़ने में नहीं है बल्कि वस्तुतः (1) उचित लाभकारी उपयोग, (2) पुनःचक्रांकन तथा (3) उसे नष्ट करने वाले पदार्थ में परिवर्तित करने में ही है।

3. रेडियोधर्मी अपशिष्ट (Radioactive Wastes)

'रेडियोधर्मी अपशिष्ट' जिसे 'आणविक अपशिष्ट' भी कहा जाता है आणविक क्षेत्र में वैज्ञानिकों द्वारा शक्ति (ऊर्जा) उत्पादन के क्षेत्र में किये गये शोधों का ही एक परिणाम है, जिसे वास्तव में अमेरिका ने मार्च 1934 से ही अपने वैज्ञानिकों के कार्यक्रमों में जोड़ने की अनुमति दी थी। शोध कार्य में सफलता मिलने पर तत्कालीन वैज्ञानिक आइन्स्टाइन (Einstein) ने प्रेसीडेन्ट रुजवेल्ट से अगस्त 1939 में इसे मूर्त रूप देने की अनुमति चाही। फलस्वरूप 2 दिसम्बर, 1942 को एक छोटे आकार के बम्ब के रूप में इसका परीक्षण शिकागो विश्वविद्यालय (अमेरिका) के स्क्वेश कोर्ट (Squash Court) में किया गया, जो सफल रहा। इस प्रोजेक्ट को मैनहैट्टन प्रोजेक्ट (Manhattan Project) नाम दिया गया था। इस सफलता पर विश्व में जहाँ अनेक प्रकार की टिप्पणियाँ हुईं, वहीं अमेरिका ने उसी समय तीन बम्बों का निर्माण किया (यह अणु बम्ब कहलाये)। पहला अणु बम्ब 16 जुलाई, 1945 को अमेरिका के अलमोगरोडो सेन्ड्स (Almogorodo Sands of USA), द्वितीय बम्ब जापान के हिरोशिमा (Hiroshima of Japan) पर 6

अगस्त, 1945 को तथा तृतीय बम्ब जापान के ही नागासाकी (Nagasaki of Japan) पर 9 अगस्त, 1945 को डालकर अमेरिका ने आणविक क्षेत्र में अपनी पैठ बना ली। पर इन आणविक बम्बों ने जो विनाशकारी लीला दिखाई उस पर विश्व भर की आलोचना के साथ-साथ इसे स्वयं विवेक से ही बन्द कर दिया गया।

आणविक ऊर्जा का उपयोग फिर मानव के लाभ के लिए किया जाने लगा; विशेषतः बिजली उत्पादन (Power Plants), शोध कार्य (Research Works) और ईंधन (Fuel) के रूप में। समय के साथ-साथ छोटे-बड़े अनेक देश इस ऊर्जा को अपने-अपने स्तर पर उत्पन्न करने लगे और उपयोग भी करने लगे। प्रमुख देशों में, (1) अमेरिका, (2) फ्रांस, (3) जापान, (4) जर्मनी, (5) रूस, (6) इंग्लैण्ड, (7) कनाडा, (8) स्वीडन, (9) बेल्जियम, (10) कोरिया, (11) स्विटजरलैण्ड, (12) चीन आते हैं। अभी कुछ वर्ष पहले ही भारत और पाकिस्तान के नाम भी इस सूची में जुड़े हैं।

दो प्रकार के आणविक अपशिष्टों से पूरा विश्व चिन्तित है, प्रथम—रेडियोधर्मी तत्त्व (Radioactive Elements) और दूसरा आणविक अपशिष्ट (Nuclear Wastes)।

(अ) रेडियोधर्मी तत्त्व (Radioactive Elements) : यह पदार्थ किसी भी आणविक केन्द्र अथवा आणविक ऊर्जा संयंत्र से निकलने से वायुमण्डल में फैल जाते हैं और मानव को उनकी दैनिक क्रिया के मध्य ही शरीर में पहुँचकर हानि पहुँचाते हैं। एक संक्षिप्त सूची इस प्रकार की यहाँ BOX में दी जा रही है।

रोडोन/थोरोन से (घर के अन्दर ही)	51%
खाने, पीने और सांस लेने में	12%
मिट्टी तथा धूल से	14%
किरणों के विकिरण से	10%
X-किरणों से	12%
वायु मात्रा से	0.4%
उद्योगों से	0.1%
आणविक हथियारों के अवशेषों से	0.4%
आणविक केन्द्रों से.	0.1%

स्रोत : Manorama Year Book 2000; Atomic Energy Problems p.70

यह पदार्थ न तो नष्ट किये जा सकते हैं और न ही इनसे सामान्यतया बचा जा सकता है। वैज्ञानिक प्रगति की सौगात के रूप में इन्हें स्वीकारना ही पड़ेगा। **हाँ, कुछ विशेष स्थानों पर भारत में इनका अधिक ध्यान रखना आवश्यक है।**

1. Tata Institute of Fundamental Research, Mumbai,
2. Bhabha Atomic Research Centre, Trombay,
3. Indira Gandhi Centre for Atomic Research, Kalpakkam,
4. Nuclear Fuel Complex, Hyderabad,
5. Heavy Water Plants, Udaipur, Baroda, Hazira, Tuticoron,
6. Uranium/ Thorium Mills Jadaguda, Chatrapur, Manawalakurichi and Alwaye ECIL, Hyderabad,
7. Nuclear Power Reactors, Tarapur, Kota, Narora, Kalpakkam, Kaiga, Kakrappara,
8. Atomic Blast Site, Pokran (Rajasthan), तथा
9. Possible Places of Dumping of Nuclear Wastes, Sanawada (Rajasthan), Jaduguda and Tarapur.

इन रेडियोधर्मी तत्त्वों से कई प्रकार के त्वचा रोग, श्वसन रोग, रक्त संचरण रोग तथा कैन्सर संभव हैं। आँखों से कम दिखना, कम सुनना, पक्षाघात जैसी बीमारियाँ भी हो सकती हैं।

(ब) आणविक अपशिष्ट (Nuclear Wastes) : आणविक अपशिष्ट के निस्तारण का अभी तक अनेक प्रयासों के बावजूद भी कोई निश्चित उपाय नहीं प्राप्त हो सका है, अतः इसे बहुत गहरे गड्डे में गाढ़ना ही इसकी वर्तमान निस्तारण क्रिया निश्चित की गई है। लेकिन यह संभव नहीं है कि जिन शर्तों के अनुसार इस अपशिष्ट्र को गाढ़ना है, वह हर स्थान पर उपलब्ध हो। गढ्डे की शर्तें अग्रलिखित हैं—

> विश्व के सभी देशों ने परस्पर विचार विमर्श से यह स्वयं निर्णय लिया है कि प्रत्येक देश अपना-अपना आणविक अपशिष्ट अपने पास ही रखेंगे। दूसरे देश का उपयोग वे नहीं करेंगे। इसी कारण जितना संभव हो रहा है वहाँ तक यह अपशिष्ट विभिन्न देशों में उनके संयंत्रों के निकट ही अत्यन्त सुरक्षा उपायों से रखा जा रहा है। ऐसा अनुमान है कि आज तक (सन् 2000 तक) भारत में ही कुल 16,000 मैट्रिक टन आणविक अपशिष्ट एकत्रित हो चुका है जिसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है।

1. जिन पात्रों में (Containers) में अपशिष्ट रखा जाय वह 100% रिसाव रोधक (leak proof) हों।
2. गहराई इतनी हो कि जहाँ पात्र अगले 100 वर्ष या इससे भी अधिक वर्षों तक किसी छेड़छाड़ का शिकार न बने।
3. उस गड्ढे में कहीं से भी पानी अथवा नमी न पहुँचे।
4. उस गड्ढे के चारों ओर की चट्टानें अत्यधिक ताप को सहन कर सकें।

भारत में कई वर्षों से इस पर कार्य हो रहा है कि ऐसा सुरक्षित क्षेत्र कहीं मिले ? भाभा एटोमिक रिसर्च सेन्टर (Bhabha Atomic Research Centre; BARC) ने कर्नाटक की कोलार सोने की खानों वाला क्षेत्र सन् 1990 में अनुशंषित किया था (यह विश्व की सबसे गहरी खान है), लेकिन वहाँ तक पानी पहुँच सकने की संभावना ने इस प्रस्ताव को रोक दिया। फिर गुजरात, मध्य प्रदेश और कर्नाटक में कई स्थानों को आणविक अपशिष्ट के अनुकूल न पाने के कारण छोड़ना पड़ा।

> आणविक अपशिष्ट प्रायः द्रव स्थिति में ही रहता है। इसमें से 3% मात्रा उच्च स्तरीय अपशिष्ट (High Level Waste) होता है, जिसे अधिक सुरक्षा से रखा जाना अपेक्षित है।
>
> द्रव रूप के आणविक अपशिष्ट को सुखाकर पहले ठोस रूप में लाया जाता है। फिर उसे अधिक गर्म करके काँच के रूप में (in the form of Vitrified Glass) परिवर्तित किया जाता है। इन्हें तद स्टेनलैस स्टील (Stainless Steel)/निकिल आधारित धातु (Nickel Based Alloys), टिटेनियम धातु (Titanium)/ ताँबे (Copper) के बर्तनों में रखकर सील कर दिया जाता है। इन पात्रों को गढ्डों में रखने की समस्या है।

मिनरल एक्सप्लोरेशन कोर्पेरेशन लिमिटेड (Mineral Exploration Corporation Limited : MECL) तथा BARC ने मिलकर राजस्थान के रेगिस्तानी गाँव 'सनावडा' (Sanawada), जो पोखरन के काफी समीप है, में वांछनीय स्थान खोजने के प्रयास किये। 2 वर्ष की कड़ी मेहनत से वह स्थान उपयुक्त तो पाया गया लेकिन जब वहाँ के ग्रामीणों और आस-पास के क्षेत्र के लोगों को इसकी जानकारी मिली, तो वे लोग एकजुट हो इसके विरोध में लग गये; अभी तक सफलता नहीं मिल पाई है। भारत सरकार के पास और क्या विकल्प है, यह भविष्य की बात है।

4. संकटमय अपशिष्ट (Hazardous Wastes)

'अपशिष्ट' तो कहते ही उसे हैं, कि वह सामग्री जो काम में लेने के बाद बेकार कर दी गई हो और अब वह किसी काम की नहीं हो। अतः ऐसे पदार्थों से छुटकारा पाना निस्तारण (disposal) की श्रेणी में आता है। इस परिभाषा के अन्तर्गत अनेक प्रकार की वस्तुएँ, पदार्थ, यौगिक सम्मिलित होते हैं, जिन्हें हम अपनी सुविधा के लिये श्रेणी बार विभाजित कर रहे हैं। संकटमय अपशिष्ट (Hazardous Wastes) वह पदार्थ हैं जो किसी उद्योग से निकलकर प्राणी जगत् को हानि पहुँचाते हैं और कभी-कभी तो जान लेवा साबित होते हैं। पूरे विश्व में 400 मिलियन टन 'संकटमय अपशिष्ट' प्रति वर्ष एकत्रित होता है जिसमें मुख्यतः सीसा (Lead), जिंक (Zinc), आर्सेनिक (Arsenic), साइनाइड (Cyanide), कैडमियम (Cadmium), क्रोमियम (Chromium), एस्बेस्टोस (Asbestos), कार्बन टेट्राक्लोराइड (Carbon Tetrachloride), क्लोरोफार्म (Chloroform), हाइड्रोकार्बन्स (Hydrocarbons), पॉलिविनायल क्लोराइड (Ployvinyle Chloride) तथा कुछ गैसें जैसे डाइऑक्सीन (Dioxine), कार्बन मोनोऑक्साइड (Carbon monoxide), नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides), सल्फर डाइऑक्साइड (Sulphur dioxide) आदि हैं।

बेसल कन्वेंशन (Basel Convention) जो 1992 में आयोजित हुआ उसमें संकटमय अपशिष्टों के निस्तारण की व्यवस्था को व्यावहारिक बनाने का लक्ष्य था। मुख्य आशय यह था कि जितने भी ऐसे संकटमय अपशिष्ट हैं, जिन्हें पुनः चंक्राकित किया जा सके, उन्हें पुनः चंक्राकित किया जाय और शेष अपशिष्टों को उपचारात्मक प्रणालियों से नष्ट कर दिया जाय। जो अपशिष्ट फिर भी रह जाते हैं, उन्हें भूमिगत कर दिया जाय। द्रव अपशिष्टों को सीधे ही जल स्रोतों में न डाला जाय, क्योंकि इससे मनुष्य और पशुओं के जीवन के अतिरिक्त खेतों की फसलों को भी हानि होती है। **सितम्बर 1995 में इसे बेसल बैन (Basel Ban) का नाम दिया गया जिसमें यह विशेष व्यवस्था रखी गई कि कोई भी औद्योगिक देश संकटमय अपशिष्टों को गैरऔद्योगिक अथवा विकासशील देश में न ही भेजेगा और न ही इन अपशिष्टों का व्यापार करेगा। भारत ने भी इस संधि पर हस्ताक्षर किये हैं।**

भारत की स्थिति इस क्षेत्र में संतोषप्रद नहीं कही जा सकती क्योंकि अब तक हम आधिकारिक रूप से 'संकटमय अपशिष्टों' की सूची को भी अन्तिम रूप नहीं दे पाये हैं। अतः बेसल बैन के संशोधन के क्रम में हमने,

(1) धातुओं के वह अपशिष्ट जिनमें सीसा हो (metal wastes consisting of alloys lead),
(2) वह अपशिष्ट जो सीसा या उसके यौगिकों से संदूषित हो (wastes containing or contaminated by lead and its compounds),
(3) जिंक अपशिष्ट (zinc waste),
(4) जिंक ऐश (zinc ash); जिंक की छीलन (zinc scraps),
(5) अनुपयुक्त लैड एसिड बैटरीज : पूरी या नष्ट की गई (waste lead-acid batteries, whole or crushed),
(6) खराब खनिज तेल (waste mineral oils),
(7) खराब हाइड्रोकार्बन्स (waste hydrocarbons) और
(8) ख़राब तेल (waste oils)।

को ही आज संकटमय अपशिष्ट मान लिया है और इस क्षेत्र के उद्यमी इस दिशा में दो मुख्य तत्त्व सीसा (Lead) और जिंक (Zinc) के पुनःचक्रांकन में लगे हैं और इसे ही संकटमय अपशिष्ट निस्तारण (hazardous waste disposal) मान रहे हैं। और तो और अपने देश के लोगों ने अन्य देशों से भी इस प्रकार के अपशिष्टों को मँगाकर उनके पुनःचक्रांकन (recycle) करने का विस्तृत व्यापार कर रखा है। ऐसा अनुमान है कि बाहर के देशों से आने वाले प्रति वर्ष लगभग 2 लाख मैट्रिक टन अपशिष्ट का चक्रांकन हमारे देश में होता है (1995 में 70,000 मैट्रिक टन 'जिंक अपशिष्ट' तथा 50,000 मैट्रिक टन सीसे के अपशिष्ट का पुनःचक्रांकन किया गया था)। अपने देश भारत की स्वतंत्र मात्रा अलग है जिसके सही आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

भारत सरकार ने Hazardous Waste Management and Handling Rules, 1989 तैयार किये थे जिनकी विज्ञप्ति 6 जनवरी, 2000 को प्रसारित की गई, लेकिन अभी तक उस पर कोई निर्णयात्मक स्थिति नहीं बनी है।

5. औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes)

हमने पिछले अध्याय औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution) में यह बताया था कि देश में अनगिनत छोटी, मध्यम और वृहद उद्योग हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का निर्माण होता है। निर्माण में कार्यरत संयंत्र तथा ऊर्जा उत्पादक बॉयलर्स अनेक प्रकार के उत्सर्जन करते हैं, जो द्रव (Liquid), ठोस (Solids) और गैस (Gas) किन्हीं अथवा सभी अवस्थाओं में हो सकते हैं। हर उद्योग में प्रयुक्त होने वाली सामग्री अलग-अलग है, अतः प्रदूषक (Pollutants) और अपशिष्ट (Wastes) भी अलग-अलग प्रकार के हैं। इन सब अपशिष्टों के निस्तारण की प्रक्रिया भी निःसन्देह भिन्न-भिन्न होगी। जो पाठक किसी विशेष उद्योग कें अपशिष्ट निस्तारण के बारे में जानना चाहें, वह अच्छे पुस्तकालय से लाभ उठा सकते हैं।

इस प्रकार पर्यावरण में प्रदूषण फैलाने को रोकने के लिये विभिन्न क्षेत्रों के अपशिष्टों का निस्तारण अब एक आवश्यकता बन गई है। गाँव-गाँव से लेकर शहर-शहर तक इस बात पर तो सभी एक मत हैं कि बिना गन्दगी के हटाये मनुष्य एक सुखप्रद जीवन नहीं जी सकता, पर उनके अपने किसी भी प्रकार के योगदान के लिये वह चुप्पी साध लेता है। आदर्श स्थिति तो तभी संभव है जब कि प्रशासन और निवासी दोनों ही कंधे से कंधा मिलाकर इस समस्या के निदान में परस्पर सहयोग करें।

It is you to remain in heaven; or otherwise
Wastes will take you in hell.
(यह आप पर निर्भर है कि आप स्वर्ग में रहें;
नहीं तो अपशिष्ट आपको नरक में पहुँचा देंगे।)

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'अपशिष्ट' किसे कहते हैं ? क्या सभी अपशिष्ट बेकार होते हैं ?
2. ठोस अपशिष्टों में प्रांयः किन-किन वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है ? इनकी निस्तारण प्रक्रिया बताइये।
3. 'पशु अपशिष्टों' में उसके 'गौण उत्पादन' (by products) किस-किस काम में आते हैं ?
4. 'बेसल कन्वेंशन' किस अपशिष्ट से संबंधित है ? इसके अधीन कौन-कौन से तत्त्वों तथा उनके उत्पादनों को सम्मिलित किया गया है।
5. 'प्लास्टिक अपशिष्ट' के निस्तारण में क्या-क्या क्रियाएँ अपनाई जा रही हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'चिकित्सीय अपशिष्ट' में वर्गीकरण किन-किन तीन रंगों में किया गया है ? किसी एक वर्गीकरण की सामग्री का उल्लेख करिये।
7. भारत में प्लास्टिक की वस्तुओं की खपत की वर्तमान स्थिति बताइये।
8. भारत सरकार ने संकटमय अपशिष्टों के निस्तारण की क्या योजना बनाई है ?
9. ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के घरेलू अपशिष्ट के निस्तारण में क्या मौलिक अन्तर है ? स्पष्ट करिये।
10. नगरपालिका अथवा नगर निगम अपशिष्ट निस्तारण की क्या प्रक्रिया अपनाता है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'आणविक अपशिष्ट' को किस रूप में संरक्षित किया जाना प्रस्तावित है ?
(अ) द्रव (ब) ठोस
(स) गैस (द) द्रव तथा ठोस का मिश्रण
12. भारत में किस स्थान को 'आणविक अपशिष्ट' को संरक्षित रखने के लिये उपयुक्त माना जा रहा है ?
(अ) जादागुड़ा (बिहार) (ब) छतरपुर (मध्य प्रदेश)
(स) सनावड़ा (राजस्थान) (द) कल्पकम (तमिलनाडु)
13. प्लास्टिक की थैलियों के निर्माण में किस पदार्थ का उपयोग किया जाता है ?
(अ) पॉलिविनायल क्लोराइड (PVC) (ब) पॉलिस्ट्रीन (PS)
(स) पॉलिएमाइड्स (Nylon) (द) पॉलीथीलीन (PE)
14. एटम बम्ब का पहला परीक्षण कहाँ हुआ था ?
(अ) शिकागो विश्वविद्यालय (अमेरिका) (ब) हीरोशिमा (जापान)
(स) नागासाकी (जापान) (द) अलमोगरोडो सेन्ड्स (अमेरिका)
15. रेडियोधर्मी तत्त्व मनुष्य के शरीर में किस प्रकार से नहीं पहुँच पाते हैं ?
(अ) खाने-पीने से (ब) साँस लेने से
(स) X-किरणों से (द) बातें करने से

निम्न प्रश्नों में रिक्त स्थानों की पूर्ति करिये—

16. ....एक संकटमय पदार्थ है।
17. सभी चिकित्सीय संस्थानों में अपशिष्टों की वर्गीकरण व्यवस्था....................तक हो जानी वांछनीय है।
18. पेड़ों की पत्तियाँ....................अपशिष्ट के अन्तर्गत आता है।
19. प्लास्टिक के जलाने से कैन्सर उत्पन्न करने वाली....................गैस उत्सर्जित होती है।
20. ठोस अपशिष्ट का अधिकांश भाग....................क्रिया से निस्तारित होता है।

23

पर्यावरणीय समस्याएँ
[ENVIRONMENTAL PROBLEMS]

• प्रस्तावना
(Introduction)

सुखी जीवन हर व्यक्ति के जीवन का अन्तिम ध्येय रहता है। वह चाहता है कि वह स्वस्थ हो, प्रसन्न हो और सुखी हो। अतः उसकी इच्छाएँ होती हैं, (1) उसे स्वच्छ वायु मिले, (2) शुद्ध जल उपलब्ध हो, (3) अमिश्रित भोजन हो, (4) साफ-सुथरा आवास हो, (5) मनोरंजन के अच्छे साधन साथ रहें, और न जाने क्या-क्या ? पर हमने स्वयं अपने पैरों कुल्हाड़ी मारी है। प्रकृति से विरासत में मिली वस्तुओं की अवहेलना कर स्वयं अपनी सुविधा के हिसाब से प्रकृति को तोड़-मरोड़ करने का प्रयास किया; अतः परेशानी के जाल में फँसते चले गये।

हमने वृक्ष काटे तो O_2 और CO_2 का चक्र ही बिगड़ गया। एक तरफ शुद्ध हवा का अभाव होने लगा तो दूसरी तरफ CO_2 ने विश्वतापन की समस्या खड़ी कर दी। वृक्ष नहीं तो वर्षा भी नहीं। वर्षा नहीं तो आगे वृक्षों की संभावना भी नहीं। कमजोर वृक्षों ने पकड़ ढीली कर दी तो उपजाऊ मिट्टी कटने लगी। उत्पादन घटने लगा। लोग भुखमरी का शिकार होने लगे। जमीन की हालत गैर-उपजाऊ और बंजर की श्रेणी में आने लगी। औद्योगिक क्रान्ति का सहारा लिया तो चारों ओर प्रदूषण बिखर गया। साथ ही अपशिष्ट निस्तारण की समस्या आ गई। सब मिलाकर मनुष्य का जीवन कष्टमय जीवन बन गया।

अब सुखी जीवन की कल्पना पर्यावरण की समस्याओं से छुटकारा पाने में लग गई। जनसंख्या वृद्धि ने तो, क्या व्यक्तिगत क्या सरकारी, सभी प्रयासों को झुठला दिया। कुल मिलाकर आज स्थिति यह है कि पर्यावरण की समस्याओं के आगे हम विवश और असहाय हो गये हैं। यह समस्याएँ क्या हैं ? इन्हीं पर हम यहाँ चर्चा करेंगे।

• पर्यावरणीय समस्याएँ
(Environmental Problems)

पर्यावरणीय समस्याएँ अनेक हैं। इनमें से कुछ समस्याओं को यहाँ समेकित करने का प्रयास किया जा रहा है—

1. हरितगृह प्रभाव (Greenhouse Effect)
2. अम्लीय वर्षा (Acid Rains)
3. ओजोन पर्त का विघटन (Ozone Layer Depletion)
4. औद्योगीकरण (Industrialization)
5. विभिन्न प्रकार के प्रदूषण : वायु, जल, भूमि, ध्वनि, वाहन आदि (Different Kinds of Pollution : Air, Water, Land, Noise, Vehicular etc.)
6. अपशिष्ट निस्तारण (Waste Disposal)
7. निर्वनीकरण (Deforestation)
8. स्मोग (Smog)
9. जनसंख्या वृद्धि (Growing Population) ☙

10. शहरीकरण (Urbanisation)
11. भीड़ (Crowds)
12. रेगिस्तानिता (Desertification)
13. नम भूमि (Wetlands)
14. बंजरभूमि (Wastelands)
15. जल और अन्न की कमी (Shortage of Water and Food)
16. कुपोषण (Malnutrition)
17. स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव (Inadequate Health Facilities)
18. पारिस्थितिकी असन्तुलन (Eco Imbalance)
19. वन्य जीव संरक्षण में कमियाँ (Shortcomings in Wildlife Conservation)
20. पर्यावरणीय अज्ञानता (Environmental Unawareness)

इन समस्याओं में से अधिकांश की हम पिछले अध्यायों में विस्तार से चर्चा कर चुके हैं। कुछ समस्याओं का सीधे इस पुस्तक से संबंध नहीं है; अतः चिन्हित समस्याओं को ही यहाँ हम प्रस्तुत कर रहे हैं।

1. जनसंख्या वृद्धि (Population Growth)

(अ) प्रस्तावना (Introduction)

पृथ्वी पर निरन्तर बढ़ती जनसंख्या आज विश्व में चिन्ता का प्रमुख कारण बन रही है क्योंकि इस वृद्धि ने लगभग सभी देशों को किसी न किसी प्रकार प्रभावित किया है और उनकी प्रगति में बाधाएँ उत्पन्न की हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं कि जहाँ विख्यात जनसंख्या विशेषज्ञों (डेमोग्राफर्स) के द्वारा निकाले गये निष्कर्षों के आधार पर बनाई गई योजनाएँ या तो प्रारम्भ ही नहीं हो सकीं अथवा उनसे उतनी उपलब्धि प्राप्त नहीं हो सकी जितनी लक्ष्यों में निर्धारित थी। इसी सन्दर्भ में विख्यात शिक्षाविद् और दार्शनिक **'बर्ट्रन्ड रसेल'** ने एक जगह लिखा है—

"विश्व में कोई सरकार तब तक टिकाऊ नहीं हो सकती जब तक उस देश में स्थिर आबादी नहीं रहती।"

स्पष्ट है कि बढ़ती जनसंख्या किसी देश में उपलब्ध साधन और उपभोक्ताओं के अनुपात को गड़बड़ा देती है, अतः अनेक देशों में (विशेषतः अविकसित तथा विकासशील देशों में) विविध प्रकार की समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। इनमें (1) भोजन, कपड़ा और मकान की कमी, (2) रहने का निम्न स्तर, (3) चिकित्सा सुविधा के अभाव या कमी के कारण अनेक रोग, (4) बेराजगारी, (5) कम शिक्षा सुविधाएँ, (6) बुरी आदतों के व्यसन (चोरी, जुआ, ड्रग्स सेवन) आदि कुछ को सूचीबद्ध किया जा सकता है। **निःसन्देह जनसंख्या वृद्धि 'जीवन की गुणवत्ता' को कम करती है।**

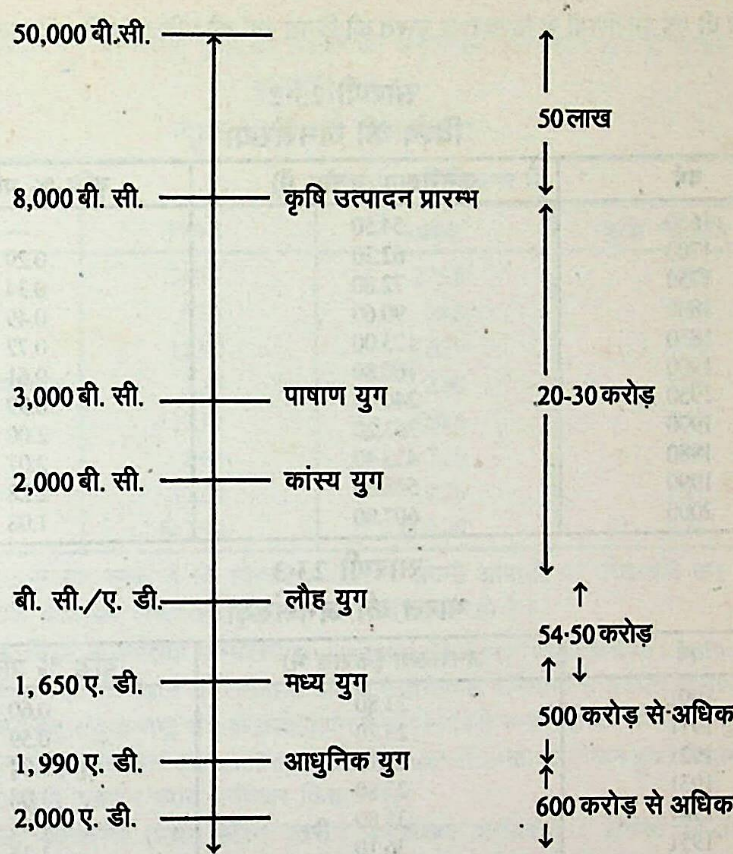
पर्यावरण विकृति पर भी बढ़ती जनसंख्या का बहुत प्रभाव पड़ता है। सन् 1972 में स्टाकहोम (स्वीडन) में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित 'मानव पर्यावरण' पर अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में भारत की भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने पर्यावरण के सम्बन्ध में बोलते हुए कहा था—

"अधिक जनसंख्या गरीबी को बुलावा देती है और गरीबी प्रदूषण को जन्म देती है।"

अतः यदि हम यह कहें कि विश्व में जनसंख्या विस्फोट ने प्रकृति से विरासत में मिले बहुमूल्य पदार्थ वायु, वनस्पति और जल को कम के साथ-साथ प्रदूषित ही नहीं किया है, बल्कि पूरी प्रकृति के चक्र को ही विविध प्रकार से डगमगा दिया है तो यह कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

(ब) विश्व जनसंख्या की वर्तमान स्थिति (Present Situation of the World Population)

पृथ्वी की उत्पत्ति लगभग 5 अरब वर्ष पूर्व हुई लेकिन मानव जीवन का इतिहास 50,000 वर्ष से अधिक का उपलब्ध नहीं है। इस अवधि में पृथ्वी पर मनुष्य आबादी किस प्रकार बढ़ी ? इसका एक स्थूल चित्रण आगे दिये गये टाइम स्केल पर अंकित है—



चित्र 23·1—टाइम स्केल पर विश्व जनसंख्या

इस टाइम स्केल चित्रण से यह स्पष्ट है कि 8000 बी. सी. की 50 लाख की आबादी को 54·50 करोड़ (लगभग 100 गुना) होने वाले 1650 ए. डी. तक लगभग 10 हजार वर्ष लगे, जबकि अगले 350 वर्ष में ही यह 6 अरब से ऊपर (12 गुनी) हो गई है। इस वृद्धि को निम्नांकित सारणी में देखें तो आपको पता चलेगा कि बढ़ते समय के साथ-साथ वृद्धि की गति कितनी तीव्रता से हुई है ?

सारणी 23·1
विभिन्न वर्षों में विश्व जनसंख्या

वर्ष	आबादी	विवरण
00 ए. डी.	20-30 करोड़	-
1650 ए. डी.	54·50 करोड़	पिछले 1650 वर्षों में दोगुनी
1850 ए. डी.	1·00 अरब	पिछले 200 वर्षों में दोगुनी
1930 ए. डी.	2·00 अरब	80 वर्ष में 1 अरब की वृद्धि
1960 ए. डी.	3·00 अरब	30 वर्ष में 1 अरब की वृद्धि
1975 ए. डी.	4·00 अरब	15 वर्ष में 1 अरब की वृद्धि
1988 ए. डी.	5·00 अरब	13 वर्ष में 1 अरब की वृद्धि
2000 ए. डी.	6·00 अरब	12 वर्ष में 1 अरब की वृद्धि

इस गति से यह निष्कर्ष अब निकाला जा सकता है कि प्रत्येक 12 वर्ष में लगभग 1 अरब आबादी की बढ़ोत्तरी पृथ्वी की जनसंख्या में होती रहेगी। भविष्य की भयावहता का अनुमान निःसन्देह सिहराने वाला है।

नीचे दी गई सारणियों से विश्व तथा भारत की विगत वर्षों की प्रति वर्ष वृद्धि प्रतिशत का अवलोकन करें—

सारणी 23·2
विश्व की जनसंख्या

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	वृद्धि % प्रति वर्ष
1650	54.50	—
1700	62.30	0.29
1750	72.80	0.34
1800	90.60	0.49
1850	123.00	0.72
1900	160.80	0.61
1950	240.00	0.99
1970	363.20	2.00
1980	438.40	2.07
1990	548.00	2.28
2000	607.00	1.08

सारणी 23·3
भारत की जनसंख्या

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	वृद्धि % प्रति वर्ष
1901	23.80	0.60
1911	25.20	0.59
1921	25.10	(–)0.04
1931	27.80	1.08
1941	31.80	1.44
1951	36.10	1.35
1961	43.90	2.16
1971	54.80	2.48
1981	68.30	2.46
1991	84.39	2.36
2001	100·48	1·90
2002	102.46	1.97

इनसे यह अवश्य अनुमान लगाया जा सकता है कि पिछले दशक में भारत में जनसंख्या वृद्धि में कुछ कमी अवश्य आई है, लेकिन अभी भी पुराने ढर्रे पर लगभग 2% वार्षिक वृद्धि में कोई खास कमी नहीं आ पायी है, जो चिन्ताजनक है और विश्व की जनसंख्या के अनुपात में वह आज भी 16.61% बनाये हुये है। सारणी 23.4 को देखें—

सारणी 23.4
विश्व जनसंख्या के अनुपात में भारत की जनसंख्या

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)		प्रतिशत
	विश्व	भारत	
1900	160.80	23.60	14.68
1950	240.00	35.67	14.86
1970	363.20	53.87	14.83
1980	438.40	66.95	15.27
1990	548.00	82.78	15.32
2000	607.00	100.00	16.61

कुछ अन्य देशों की जनसंख्या वृद्धि की स्थिति का अवलोकन हम निम्न सारणी में करें—

सारणी 23.5
कुछ देशों की जनसंख्या

देश	जनसंख्या (मिलियन्स में)		
	1992	2000	वृद्धि % प्रति वर्ष
अमेरिका	249.1	275.6	1.33
इंग्लैण्ड	57.3	59.8	0.55
जापान	123.8	126.9	0.32
संयुक्त अरब गणराज्य	2.25	2.80	3.06
पाकिस्तान	113.17	150.6	4.13
स्विटजरलैण्ड	6.63	7.10	0.89
आस्ट्रेलिया	17.50	19.20	1.21
भारत	843.90	1,000.00	2.31

सारणी 23.5 से यह स्पष्ट है कि विकसित देशों ने अपनी आबादी पर नियन्त्रण कर रखा है, जबकि विकासशील देशों की जनसंख्या वृद्धि की गति वही चल रही है।

(स) अन्तर्राष्ट्रीय विश्व जनसंख्या सम्मेलन (International World Population Conference)

विश्व व विभिन्न देशों की बढ़ती जनसंख्या से भविष्य में होने वाले परिणामों से अवगत हो इस समस्या का समाधान खोजने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में सन् 1974 में रुमानिया की राजधानी 'बुखारेस्ट' में प्रथम 'विश्व जनसंख्या सम्मेलन' (World Population Conference) का आयोजन हुआ जिसमें बहुमत के आधार पर 20 सूत्री 'एक्शन प्लान' स्वीकार किया गया।

1. बुखारेस्ट कान्फ्रेन्स (प्रथम विश्व स्तरीय जनसंख्या सम्मेलन) : अगस्त 16-31, 1974 (Bucharest Conference) : यह विश्व स्तरीय सम्मेलन 2 सप्ताह की अवधि का था जो 16 अगस्त से 31 अगस्त, 1974 तक चला। इसमें भाग लेने वाले संभागियों की लगभग संख्या 4,000 थी, जिसमें डेमोग्राफर्स (जनसंख्या विशेषज्ञ), विभिन्न देशों के प्रतिनिधि, पत्रकार, देशों के नीति निर्धारक तथा राष्ट्र संघ के अधिकारी और अराजकीय स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। बहुमत के आधार पर स्वीकृत हुए 'एक्शन प्लान' में निम्नलिखित बिन्दु थे—

1. राष्ट्रीय नीति और कार्ययोजनाओं का परिवर्द्धन।
2. कम जन्म दर और मृत्यु दर में सन्तुलन।
3. सन् 1985 तक 62 वर्ष और सन् 2000 तक 74 वर्ष की जीवन आयु की प्रत्याशा।
4. माँ-बापों को उचित शिक्षा कार्यक्रम।
5. परिवार सीमित रखने के उपाय।
6. जीवन स्तर में बढ़ोत्तरी।
7. जिन देशों में आबादी में वृद्धि आवश्यक है, उसकी अवधि सन् 1985 तक।
8. विकसित देशों द्वारा अन्य देशों को सभी प्रकार सहयोग।
9. कानून द्वारा परिवार का सीमांकन।
10. पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियों की समान भागीदारी।
11. जन्म-दर में वृद्धि के बजाय मृत्यु-दर में कमी के आधार पर जनसंख्या में वृद्धि।
12. जनसंख्या वृद्धि में कमी का समयबद्ध लक्ष्य निर्धारण।
13. स्त्रियों के लिए शिक्षा।
14. जनसंख्या झुकाव का नियमित वार्षिक सर्वे।
15. देश में ग्रामीण अंचलों को उत्साहित करना।

16. परदेश गमन को उत्साहित करना।
17. शोध योजनाएँ।
18. विभिन्न अभिकरणों द्वारा जनसंख्या सम्बन्धी सहायता कार्यों में सहयोग।
19. परस्पर राष्ट्रों में सहयोग।
20. एक्शन प्लान का उचित समन्वयन।

इन कार्यक्रमों के संचालन में अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने स्वेच्छा से भारी आर्थिक अनुदान देने की घोषणा की, जिनमें विश्व बैंक, फोर्ड फाउण्डेशन, रोकफैलर फाउन्डेशन, संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अनेक देश जैसे स्वीडन, नार्वे, कनाडा, जापान, यू. के., डेनमार्क, जर्मनी के नाम उल्लेखनीय हैं।

2. मैक्सिको कान्फ्रेन्स (द्वितीय विश्वस्तरीय जनसंख्या सम्मेलन) : 6-14 अगस्त, 1984 (Mexico Conference) : यह भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित विश्वस्तरीय सम्मेलन था, जिसमें पूरे विश्व की निरन्तर बढ़ती जनसंख्या पर चिन्ता व्यक्त की गई। पिछले दशक में आयोजित सम्मेलन में लिए गये निर्णयों के आधार पर **'जनसंख्या शिक्षा'** की व्यावहारिकता पर भी चर्चा हुई और विस्तृत विचार-विमर्श हुआ जन्म दर कम करने के लिए विभिन्न देशों द्वारा अपनाई गई नीतियों और कार्यक्रमों की। ऐसे देश जिनमें जनसंख्या वृद्धिं तुलनात्मक रूप से अधिक थी, उसका मुख्य कारण वहाँ की गरीबी थी, जिसने दो समस्याएँ एक साथ पैदा कीं—(1) बेरोजगारी, अशिक्षा और आमोद-प्रमोद के सीमितं साधनों के कारण अधिक बच्चों का जन्म तथा (2) चिकित्सा सुविधाओं और उपयुक्त भोजन के अभाव में अस्वस्थता तथा परिणामतः चहुँ ओर भारी प्रदूषण। एक प्राथमिकता के आधार पर दूसरी समस्या का विकृत रूप में उठ आना स्वाभाविक प्रवृत्ति थी। पिछले सभी कार्यक्रमों को निरन्तर चालू रखते हुए **अनेक देशों ने 'गर्भपात को वैधानिक स्वीकृति' (Legal Recognition to Abortion) को जनसंख्या नियंत्रण हेतु व्यावहारिक बताया, जिसे स्वीकार नहीं किया गया।** विश्व जनसंख्या का 1971-80 का दशक (2·07% वृद्धि) अनेक प्रयासों के बावजूद वृद्धि रोक नहीं सका और 1981-90 के दशक में (2·28% वृद्धि) और एक नई चेतावनी दे गया।

3. काहिरा कान्फ्रेन्स (तृतीय विश्वस्तरीय जनसंख्या सम्मेलन) : सितम्बर 5-13, 1994 (Cairo Conference) : इस सम्मेलन में विश्व के लगभग 180 देशों के 10,000 लोगों ने भाग लिया, जिसमें विभिन्न देशों के प्रतिनिधि, जनसंख्या विशेषज्ञ, विभिन्न स्तरीय अधिकारी, चिकित्सक, महिलाएँ-प्रतिनिधि, स्वयंसेवी संस्थाएँ, पत्रकार तथा अन्य वह लोग सम्मिलित थे जिन्हें इस क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनुभव था। विचारणीय मुद्दों में विशेषतः, **1. लिंग समानता तथा निष्पक्षता (Gender Equality and Equity), 2. स्त्रियों को अधिक अधिकार तथा गरीबी कम करने हेतु स्त्रियों की जिम्मेदारी (Women's Empowerment and Women's Rights to Poverty Alleviation), 3. पर्यावरणीय सुरक्षा (Environmental Protection), 4. सन्तान उत्पन्न कर सकने वाला स्वास्थ्य (Reproductive Health) तथा 5. राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय देशागमन (National and International Migration) प्रमुख रहे। इन सभी मुद्दों में महिलाओं की भूमिका को ही अधिक प्रभावी रूप में रखा गया, जो अनेक देशों की अरुचि का कारण बना। 'स्त्रियों को गर्भपात की स्वतन्त्रता' (Freedom of Abortion for Women) पुनः चर्चा का प्रमुख बिन्दु रहा, जिसे आज की आवश्यकता तो सब ने माना लेकिन कुछ देशों ने धर्म का हवाला देकर इसे सर्वसम्मत स्वीकृति नहीं होने दी। हाँ अप्रत्यक्ष रूप से 'सुरक्षित मातृत्व (Safe Motherhood)' का नाम देकर यह बिन्दु देशों के लिए अपने स्वतन्त्र निर्णय पर छोड़ दिया। जनसंख्या वृद्धि कम करने का मुख्य मुद्दा उतनी गति नहीं पा सका जितनी अपेक्षा थी और अन्त में यह सम्मेलन व्यावहारिक कम तथा औपचारिक अधिक रहा।**

(द) जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख कारण (Main Causes of Growing Population)

यद्यपि जनसंख्या वृद्धि के लिए अलग-अलग देशों तथा अलग-अलग स्थितियों में भिन्न-भिन्न कारण होते हैं, पर तब भी व्यापक रूप से कुछ कारणों को सूचीबद्ध किया जा सकता है—

(1) अधिक जन्म दर, (2) विभिन्न देशों के स्वीकृत मानदण्ड, (3) अन्धविश्वास, (4) बाल-विवाह; (5) अशिक्षा, (6) परिवार नियोजन सुविधाओं का अभाव, (7) बहु-विवाह, (8) बेरोजगारी, (9) प्रचार साधनों की कमी, (10) महिलाओं की अनभिज्ञता, आदि।

(इ) जनसंख्या वृद्धि को रोकने के उपाय (Ways to Check the Population Growth)

सारे विश्व में जनसंख्या में वृद्धि को रोकने के लिए अनेक सुझाये गये उपायों के बावजूद 'फेमिली प्लानिंग' को ही अत्यन्त व्यावहारिक तथा उपलब्धि परख बताया गया है। भारत ने इस कार्यक्रम को अपने देश में चलाने की पहल की और सन् 1952 से ही व्यवस्थित रूप से कार्य योजना प्रारम्भ की। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में लक्ष्य निर्धारित किये गये। सन् 1981 में जन्म दर का लक्ष्य 25 प्रति हजार प्रतिवर्ष रखा जो प्राप्त नहीं हो सका, लेकिन उसके बाद भी कई प्रकार के प्रोत्साहन, संचार माध्यमों के योगदान और जनसंख्या शिक्षा के सहयोग से परिवार कल्याण कार्यक्रम (परिवार नियोजन का नया नाम) चलाये जा रहे हैं और इनसे हमें सफलता भी मिल रही है। लेकिन 20 प्रति हजार प्रति वर्ष की कुल अन्तिम वृद्धि (जन्म दर-मृत्यु दर) का लक्ष्य पाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य लग रहा है। नियंत्रित जनसंख्या से ही देश की भलाई है।

(फ) जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरणीय प्रभाव (Environmental Effects of Growing Population)

इस अध्याय के प्रारम्भ में ही जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों का विस्तृत विवरण दिया है, लेकिन फिर भी इससे पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव भी यहाँ विशेष रूप से समेकित किये जा रहे हैं—

1. भोजन-कपड़ा-मकान जैसी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति में कमी।
2. प्राकृतिक संसाधन जैसे वायु, जल, वनस्पति की सीमित उपलब्धता।
3. वनों का विनाश; प्राण वायु (ऑक्सीजन) की कमी तथा कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता।
4. प्रदूषण में वृद्धि।
5. मानव के जीवन स्तर में कमी।
6. अत्यधिक कोलाहल, ध्वनि प्रदूषण की अधिकता।
7. अनियंत्रित भीड़ आदि।

इस प्रकार बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण विकृति को बढ़ाता है और पर्यावरण संरक्षण में व्यवधान पैदा करता है। यह पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखने में भी रुकावट डालता है । निःसन्देह जनसंख्या वृद्धि को रोकने एवं उसे नियंत्रित करने के लिए बहुत ही व्यापक योजना बनाना बहुत आवश्यक है तब ही राष्ट्र स्तर की इस चुनौती से मुकाबला किया जा सकता है।

2. शहरीकरण
(Urbanisation)

पूरे विश्व में, विशेषतः जहाँ-जहाँ औद्योगिक प्रगति हुई है वहीं-वहीं अनेक देशों के लोग ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन कर शहरों की ओर आ रहे हैं। एक मोटी विचारधारा वहाँ के निवासियों में बनी है कि शहरों में जीवनयापन हेतु यथेष्ट कार्य मिलता है, रहने और खाने-पीने की अत्यधिक सुविधा है, मनोरंजन के भरपूर साधन हैं तथा इसके साथ ही परिवार के लोगों के लिये चिकित्सा सुविधाएँ तथा बच्चों को उचित शिक्षा उपलब्ध है। निःसन्देह गाँवों में दिन प्रतिदिन बढ़ रहे अभाव, जीवन की असुरक्षा और संचार और यातायात के अति सीमित साधनों ने भी वहाँ के लोगों को शहर की ओर मोड़ा है, लेकिन इस परिवर्तन ने कई पर्यावरणीय समस्याएँ खड़ी कर दी हैं। उनके बारे में जानें।

दो निश्चित तथा ठीक विभाजन हैं, **प्रथम शहरी (Urban)** जो कस्बे अथवा शहर में रहते हैं (जिन्हें सामान्य भाषा में Towns के नाम से पुकारते हैं) और **दूसरे ग्रामीण (Rural)** जो गाँवों (Villages or Countryside) में रहते हैं। शहरों की परिभाषा अलग-अलग देशों में अलग-अलग है। कहीं केवल संख्या के आधार पर शहर कहलाते हैं, जैसे ग्रीनलैण्ड में 300 से अधिक आबादी वाला क्षेत्र शहर (Town) है और कोरिया गणतन्त्र में एक कस्बे या शहर की जनसंख्या न्यूनतम 40,000 होनी चाहिये। कुछ अलग देश ऐसे भी हैं जहाँ आबादी के साथ-साथ कुछ अन्य आवश्यक शर्तों की पूर्ति भी अपेक्षित है।

भारत में यह परम्परागत चला आ रहा था कि शहरों की जनसंख्या के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जाय। इस प्रकार यहाँ 6 श्रेणियाँ अग्र प्रकार प्रचलित थीं—

प्रथम श्रेणी–I	1,00,000 और उससे अधिक
द्वितीय श्रेणी–II	50,000 से 99,999 तक
तृतीय श्रेणी–III	20,000 से 49,999 तक
चतुर्थ श्रेणी–IV	10,000 से 19,000 तक
पंचम श्रेणी–V	5,000 से 9,000 तक
षष्ठम श्रेणी–VI	5,000 से कम

इस आधार पर सन् 1961 में भारत में कुल 2700 शहर अथवा कस्बे थे जिनका प्रदेश वार विवरण निम्न सारणी में दिया गया है–

सारणी 23·6

वर्ष 1961 में भारत के विभिन्न प्रदेशों में श्रेणीवार शहरों की संख्या[1]

प्रदेश/राज्य	शहरी श्रेणी						कुल
	I	II	III	IV	V	VI	
1. आन्ध्र प्रदेश	11	9	51	73	72	7	223
2. असम	1	2	10	12	24	11	60
3. बिहार	7	7	33	52	46	8	153
4. गुजरात	6	9	43	54	60	9	181
5. जम्मू एण्ड कश्मीर	2	—	1	4	6	30	43
6. केरल	4	5	31	33	18	1	92
7. मध्य प्रदेश	6	6	35	57	58	17	219
8. मद्रास (तमिलनाडु)	9	19	61	119	95	36	339
9. महाराष्ट्र	12	15	47	89	88	15	266
10. मैसूर (कर्नाटक)	6	9	34	81	64	37	231
11. उड़ीसा	1	3	8	22	25	3	62
12. पंजाब (पंजाब तथा हरियाणा)	5	12	35	40	54	43	189
13. राजस्थान	6	4	23	52	51	9	145
14. उत्तर प्रदेश	17	18	56	81	79	16	267
15. प. बंगाल	12	19	46	45	50	12	184
16. केन्द्र प्रशासित प्रदेश	2	2	4	6	18	14	46
कुल	107	139	518	820	848	268	2,700

इन शहरों में कुल 7·89 करोड़ व्यक्ति रहते थे जो 1961 की जनगणना 43·90 करोड़ की 17·98 प्रतिशत थी। ऐसा अनुमान था कि सन् 2001 में शहरी आबादी 27·80 करोड़ हो जायेगी जो उस समय की सम्भावित आबादी 94·50 करोड़ की 29·4% होगी।

1961 की जनगणना के बाद शहरों की परिभाषा को एक नया मोड़ दिया गया और शहरों को वस्तुनिष्ठता से कहने के लिए कुछ शर्तें लगा दी गईं। इसके आधार पर एक शहर के लिए अब निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं–

(1) 5,000 से अधिक आबादी हो।

(2) 1,000 व्यक्ति प्रति वर्ग मील (अब वर्तमान में 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी) से कम जनसंख्या घनत्व न हो।

---

1. Ashish Bose, India's Urbanisation 1901-2001 (Second Edition) (Tata Mc Graw Hill Publishing Company Limited, New Delhi, 1978), pp. 567.

(3) काम करने वाले (Working Population) का तीन-चौथाई व्यवसाय कृषि कार्य के अतिरिक्त हो। और

(4) वहाँ किसी भी स्तर की नगरपालिका कार्यरत हो।

इन प्रतिबन्धों के अनुसार कुल 1165 शहर ही आगे वास्तविक शहरों की गिनती में आये। इनकी श्रेणी वार संख्या प्रथम–98, द्वितीय–129, तृतीय–362, चतुर्थ–333 और पंचम–243 रही।

ऐसा अनुमान था कि सन् 2001 तक प्रथम श्रेणी (1,00,000 से अधिक) के 327, द्वितीय श्रेणी (50,000-99,999) के 399 तथा तृतीय श्रेणी (20,000-49,999) के 236 मिलाकर कुल उच्च श्रेणी के शहरों की संख्या 962 होगी। 10 लाख से बड़ी आबादी वाले शहरों (महानगरों) की संख्या भी 25-30 के मध्य होगी। लेकिन यह सभी अनुमान अब बेतहाशा ग्रामीण पलायन से गड़बड़ा गये हैं।

इन शहरों की पर्यावरणीय समस्याएँ मूल रूप से कुछ तो ऐसी हैं, जो लगभग सभी जगह सामान्यतया होती हैं, जिनमें—(1) जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि (Explosive Increase in Population), (2) मूलभूत आवश्यकताओं और सुविधाओं की भारी अपर्याप्तता (Gross Inadequacy of Basic Necessities and Facilities), (3) अत्यधिक भीड़ (Excessive Crowd), (4) यातायात अवरोध (Traffic Hurdles), (5) झुग्गी झोंपड़ी का विस्तार (Expansion of Slums), (6) सुविधा केन्द्रों की अस्वच्छता (Insanitation of Public Lavatories), (7) शहरी झगड़े (Urban Quarrels), (8) अस्त-व्यस्त जीवन पद्धति (Haphazard Life Style) आदि विशेष रूप से गिनी जा सकती हैं। लेकिन बिल्कुल सीधे-सीधे जिन समस्याओं से एक शहरी का अपने व्यस्त जीवन में सामना करना पड़ता है, उन्हें निम्न प्रकार समेकित किया जा सकता है—

1. उचित एवं उपयुक्त आवास का उपलब्ध न हो पाना।
2. पीने के स्वच्छ पानी की कमी; अन्य कार्यों हेतु भी पानी की समुचित मात्रा का अभाव।
3. आवागमन हेतु सरकारी बस अथवा अन्य यातायात सुविधाओं की अनुपलब्धता।
4. व्यस्त जीवन, अस्त-व्यस्तता; परिवार के लिए समय नहीं।
5. महँगी जिन्दगी, महँगी शिक्षा, महँगी चिकित्सा और महँगा मनोरंजन।
6. जल, वायु, वाहन और ध्वनि प्रदूषण से अनेक व्याधियाँ।
7. असुरक्षित जीवन, चोरी लूट का भय।
8. अनजाना अनभिज्ञ पड़ोसी, पड़ोस अथवा कॉलोनियों में परस्पर मैत्री व सद्भाव का अभाव।
9. कम मजदूरी पर कार्य करने की मजबूरी।
10. शहरी दुर्व्यसनों की सम्भावना, शराब व ड्रग्स आदि।
11. आय स्तर से लोगों में समूहों का बनना; एक मानव मस्तिष्क कृत दूरी का निर्माण।
12. निपट स्वार्थी और अवसरवादी जीवन।

और भी अनेक समस्याएँ हो सकती हैं जो शहरीकरण के अभिशाप हैं। बाहर से चमक-दमक में दिखने वाले जीवन की वास्तविकता वही महसूस कर सकता है जो भुक्त भोगी है। सभी समस्याएँ मनुष्य को चिंतित करती हैं और उसके सामान्य जीवन जीने में अवरोध बनती हैं।

3. भीड़
(Crowds)

'मानव पारिस्थितिकी' तथा 'पर्यावरण' सदैव एक-दूसरे से सम्बन्धित तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं से प्रभावित रहे हैं। व्यक्ति ने अपने जीवन को सुरक्षित रखने तथा उसके स्तर को उन्नत करने हेतु अपने आस-पास के वातावरण को ही नहीं बल्कि पूरे 'पारिस्थितिकी तन्त्र' को भी बदलने का प्रयास किया है, लेकिन हर स्थिति में मनुष्य को विशेष परिस्थितियों में उनसे होने वाले परिणाम, चाहे वह सुखद हों अथवा कष्टमय, सभी से गुजरना होता है।

शहरीकरण का एक आवश्यक दुष्परिणाम है, भीड़ (Crowd)। चाहे अच्छा कार्य हो अथवा बुरा, लोग उपलब्ध रहते हैं और अवसर खोजते हैं इस स्थिति में अपने आपको सम्मिलित करने को। कुछ अपवादों को छोड़ कर इसका अन्तिम परिणाम कष्टप्रद होता है, लेकिन पर्यावरण की दृष्टि से सामाजिक सन्तुलन बना रहे इस सन्दर्भ में इस पर थोड़ी चर्चा करेंगे।

शब्द 'भीड़' (Crowd) को परिभाषित करना बहुत आसान नहीं है। मोटेतौर पर अधिक लोगों के एक जगह एक साथ इकट्ठे होने से भीड़ होती है। इससे एक बल, दबाव अथवा मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया का अहसास होता है। चार्ल्स एस. साउथविक[1] ने इसे परिभाषित किया है

"जब अत्यधिक संख्या में कुछ व्यक्ति किसी कार्य अथवा पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में किसी घटना के क्रम में एकत्रित होते हैं तो वह भीड़ कहलाती है।"

भीड़ को 'साउथविक' के अनुसार परिभाषित करने के बजाय समझना सहज है और उसी से इस अभिशप्त समस्या से बचा भी जा सकता है और पर्यावरण को नष्ट होने से भी बचाया जा सकता है।

सामान्यजन साधारण भीड़ को निम्न प्रकार से व्यक्त करते हैं—

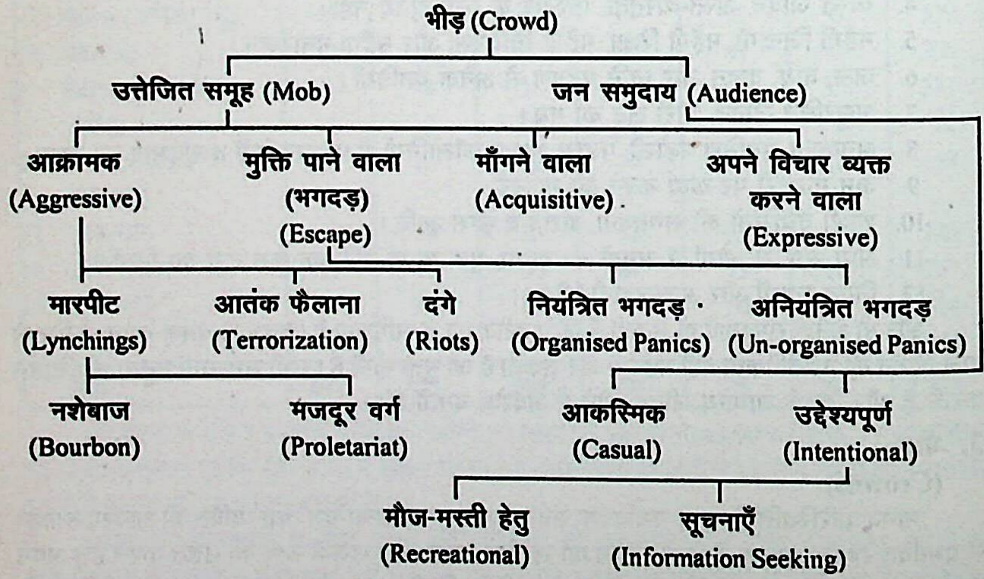
"अधिक लोगों के एक जगह एकत्रित होना ही भीड़ है।"

(A crowd is a large number of persons gathered closely together.) यह दो प्रकार की हो सकती है—

(1) स्थान के घनत्व के अनुसार भीड़ (Crowd as per Spatial Density) : इसमें समूह का आकार वही रहता है, केवल स्थान परिवर्तन होता है।

(2) समूह के घनत्व के अनुसार भीड़ (Crowd as per Social Group Density) : इसमें विभिन्न समूह परिवर्तित होते रहते हैं।

(अ) भीड़ का वर्गीकरण (Classification of Crowd) : भीड़ का अपना स्वयं का कोई महत्त्व नहीं है। भीड़ में किस प्रकार का समूह है ? और उस समय की क्या स्थिति है ? इससे भीड़ से होने वाले अथवा हो सकने वाले प्रभाव अथवा परिणाम को जाना जा सकता है। हानि की सम्भावना पर तत्काल कोई उचित निर्णय अथवा कार्यवाही कर एक भयावह पर्यावरणीय संकट से मुक्त हुआ जा सकता है। ब्राउन (Brown) ने भीड़ का निम्नांकित चार्ट द्वारा वर्गीकरण किया है—



चित्र 23.2—भीड़ का वर्गीकरण

1. "Crowded populations are those in which there seem to be excessive numbers of individuals per unit of space in relation to the activity of the individuals and the quality of the environment."
Charles S. Southwick : Ecology and the quality of our environment, D. Van Nostrand Company, New York, 1972, p. 46.

उपर्युक्त वर्गीकरण स्वयं इतना स्पष्ट है कि भीड़ किस-किस उद्देश्य हेतु हो सकती है ? यह इस चित्रण से जाना जा सकता है।

(ब) भीड़ का प्रभाव (Effects of Crowd) : भीड़ का मुख्यतः प्रभाव, (1) व्यवहार परिवर्तन (Behavioural Change), (2) आमने-सामने उत्तर-प्रत्युत्तर (Coping Responses) अथवा (3) मारपीट और दंगा (Aggression and Riots) होते हैं। ऐसा केवल अपवादस्वरूप ही होता है जब भीड़ नियंत्रित होकर कोई सद्भावना पूर्ण निर्णय ले और शांति का वातावरण बना रहे। **उपर्युक्त वर्गीकरण के अनुसार जहाँ भीड़ केवल मनोरंजन अथवा शांतिपूर्ण कार्यों हेतु ही इकट्ठी हुई हो तक की बात सर्वथा अलग है।**

भीड़ में लोगों के व्यवहार आश्चर्यजनक रूप से भावुक, अनसमझपूर्ण, मूर्खतापूर्ण तथा बेवकूफों जैसे हो जाते हैं, जिससे असामान्य स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। सारा सामाजिक वातावरण आवेशपूर्ण और विवेक शून्य होने लगता है। आपस में वैमनस्यता बढ़ जाती है; बड़े समूह छोटे-छोटे समूहों में बँटकर सदैव के लिए एक-दूसरे के दुश्मन बन जाते हैं। **गोरडन ऑलपोर्ट** (Gordan Allport) ने कहा है—

"एक भीड़ अत्यन्त गुस्से के माहौल में उत्तेजित समूह में परिवर्तित हो जाती है तथा यदि कोई सामूहिक भय हो तो आतंक का वातावरण बन जाता है।"

(A crowd turns into a 'mob' when common emotion is 'intense anger'; it turns out into a 'panic' when common emotion is 'intense fear'.)

4. रेगिस्तानिता
(Desertification)

इस समस्या के उत्पन्न होने के कई कारण हैं। इनमें से, (1) पानी की नितान्त कमी, (2) वन क्षेत्रों का विनाश, (3) संरक्षण करने वाली पहाड़ियों की निर्जनता, (4) जनसंख्या वृद्धि, (5) पर्यावरणीय अथवा पारिस्थितिकी असन्तुलन आदि प्रमुख हैं। यहाँ पर मानव जीवन तथा पशु धन और कृषि उत्पादन सभी मुश्किल हैं। जहाँ-जहाँ पर प्रयास कर कुछ रहने की स्थितियाँ पैदा की भी गई हैं, वहाँ अब निरन्तर बढते पर्यावरणीय असन्तुलन ने उस पर रोक लगाई है और अन्ततः निरन्तर मरुस्थल क्षेत्र बढ़ता जा रहा है। यहाँ का उच्च तापमान 58° सेल्सियस तक तथा निम्न तापमान–88° सेल्सियस तक होता है। औसत वार्षिक वर्षा 250 मिमी है।

विश्व में बड़े-बड़े मरुस्थल[1] 11·29% पृथ्वी पर हैं जिनका क्षेत्रफल मोटेतौर पर निम्न प्रकार है—

सारणी 23·7
विश्व के मुख्य मरुस्थलों का क्षेत्रफल

क्र. सं.	नाम	सम्बन्धित देश	क्षेत्रफल वर्ग किमी में	पृथ्वी के क्षेत्रफल का प्रतिशत	अपने देश के क्षेत्रफल का प्रतिशत
1.	सहारा	उत्तरी अफ्रीका	84,00,000	6·85 (1–3)	34·26 (1–3)
2.	लिबयान	उत्तरी अफ्रीका	15,50,500		
3.	नूबियन	उत्तरी अफ्रीका	2,60,000		
4.	आस्ट्रेलियान	आस्ट्रेलिया	15,50,000	1·75 (4–6)	33·91 (4–6)
5.	ग्रेट विक्टोरिया	आस्ट्रेलिया	3,25,000		
6.	ग्रेट सैंडी	आस्ट्रेलिया	4,20,400		
7.	अरुनता	आस्ट्रेलिया	3,10,000		
8.	सीरियन	अरब	3,25,000	0·74 (8–10)	47·25 (8–10)
9.	अरेबियन	अरब	1,30,000		
10.	रबअलखाली	अरब	6,47,500		

1. के. एम. मेथ्यू, सम्पादक, **मनोरमा ईयर बुक** (मलयाला मनोरमा लिंमिटेड, कोट्टयम, केरल-भारत, 2001), पृष्ठ 178।

11.	गोबी	मंगोलिया	10,40,000	0·70	66·45
12.	कालाहारी	बोत्सवाना	5,20,000	0·35	86·29
13.	ताकंला माकन	चीन	3,20,000	0·21	3·35
14.	काराकुम	टर्की	2,72,000	0·19	34·89
15.	सोनोरन	मेक्सिको	3,10,000	0·21	15·72
16.	थार	भारत	2,60,000	0·17	7·91
17.	अटाकामा	चिली	1,80,000	0·12	23·79
		कुल	**1,68,20,400**	**11·29**	—

उपर्युक्त सारणी का अवलोकन करें कि विश्व में ऐसे देश हैं जहाँ अधिक अथवा आधे से अधिक भू-क्षेत्र पर रेगिस्तान है अर्थात् ऐसा स्थान है जहाँ की पारिस्थितिकी आवास अनुकूल नहीं है।

भारत में भी 'थार' लगभग 8% भू-भाग में एक बड़ा मरुस्थल है। 2,60,000 वर्ग किमी में यह गुजरात, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में फैला हुआ है। प्रति वर्ष 100 मिमी से 150 मिमी तक अधिकतम वर्षा होती है। तापमान गर्मियों में 48° सेल्सियस को छू लेता है तथा न्यूनतम जाड़ों में शून्य ° सेल्सियस तक पहुँच जाता है। रेत के तूफान आम बात हैं जिनका वेग 100 किमी प्रति घंटा तक होता है। आबादी बहुत कम और प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाने के कारण निरन्तर कम हो रही है। पशु धन भी काफी कम है। अरावली की पहाड़ियों की निर्जनता ने कई स्थानों पर ऐसे रास्ते बना लिए हैं, जिसमें से रेतीली बालू अन्दर वहाँ भी प्रवेश कर रही है जहाँ अभी तक मरुस्थल नहीं है। भारत इससे बहुत चिन्तित है। स्वीडन तथा विश्व बैंक की सहायता से कई ऐसी प्रयोजनाएँ चलाई हैं, जिससे वृक्षों का प्रतिशत बढ़े और मरुभूमि को बढ़ने से रोका जा सके।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. जनसंख्या वृद्धि से मनुष्य को क्या-क्या हानियाँ हैं ? विस्तार से बताइये।
2. वर्तमान में 'शहरीकरण' क्यों पनपा ? इससे पर्यावरण पर क्या असर पड़ा है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. 'बंजर भूमि' और 'रेगिस्तान' में क्या अन्तर है ? समझाइये।
4. जनसंख्या वृद्धि प्रतिशत प्रति वर्ष प्रायः किन देशों में अधिक है ? और क्यों ?
5. 'भीड़' को भी पर्यावरण समस्या से किस आधार पर जोड़ा गया है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

निम्न प्रश्नों के उत्तर एक शब्द में दीजिये—

6. भारत के रेगिस्तान का नाम क्या है ? ( )
7. सबसे अधिक रेगिस्तान किस देश में हैं ? ( )
8. अन्तर्राष्ट्रीय प्रथम विश्व जनसंख्या सम्मेलन कहाँ हुआ था ? ( )
9. विश्व की वर्तमान जनसंख्या लगभग कितनी है ? ( )
10. वर्तमान में कितनी आबादी से अधिक लोगों से बसने वाले क्षेत्र को शहरी क्षेत्र माना गया है ? ( )

24

पर्यावरणीय संरक्षण
[ENVIRONMENTAL CONSERVATION]

• प्रस्तावना
(Introduction)

अभी तक पिछले अध्यायों में हमने पर्यावरण के विविध पक्षों पर विस्तार से चर्चा की है और यहीं तक नहीं बल्कि पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से उस चर्चा को बालक से लेकर बड़ी आयु तक के व्यक्ति तक पहुँचाने की विधाओं का विवरण भी इसी पुस्तक में ही आगे दिया है। लेकिन, (1) पर्यावरण संरक्षण के लिये हम क्या करें ? (2) पर्यावरण संरक्षण में विभिन्न स्तर के व्यक्तियों अथवा अभिकरणों की क्या अपेक्षित भूमिकाएँ हैं ? (3) पर्यावरण संरक्षण किस-किस स्तर पर किन-किन से प्रभावित है ? और (4) पर्यावरण संरक्षण में एक सामान्य परिवार की क्या भूमिका हो ? के सन्दर्भ में कहीं भी विशिष्ट उल्लेख नहीं है। अतः हम यहाँ पर्यावरण के विभिन्न घटकों के बारे में नहीं बल्कि समस्त पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में चर्चा कर रहे हैं।

इस चर्चा के पीछे एक दृष्टिकोण यह भी है कि जब हम पर्यावरण संरक्षण की बात करते हैं तो हमें मुख्यतः प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता और उनके उचित उपयोग की ही बात दिखाई पड़ती है और इस कारण हम कुछ इने-गिने घटकों की व्याख्या कर सन्तुष्ट हो जाते हैं। हमारा मानस यह बनता है कि जो संसाधन असीमित हैं, उन्हें ढंग से उपयोग करें और प्रदूषण से बचावें तथा जो संसाधन सीमित हैं, उनका उपयोग बहुत सावधानीं से और कम मात्रा में करें। सम्भवतः यही पर्यावरण संरक्षण के प्रति हमारा अन्तिम सोच होता है। लेकिन यहाँ हम यह भूल जाते हैं कि प्रत्येक घटक का दूसरे घटक से इतना करीब का सम्बन्ध है कि वास्तव में वह एक-दूसरे पर निर्भर है। एक का विनाश दूसरे घटक के ह्रास अथवा विनाश का कारण बन सकता है। अतः हमें इन सबको एक सम्पूर्ण घटक समुदाय के रूप में लेकर सोचना होगा।

इसके अतिरिक्त मानवकृत पर्यावरण, जिसे मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिये विज्ञान और टैक्नोलॉजी के आधार पर तैयार किया है, का भी संरक्षण के क्रम में ध्यान रखना होगा। जल के भण्डारण हेतु बाँध, आवागमन हेतु परिवहन, उत्पादन हेतु औद्योगिक संस्थान, कृषि क्षेत्र, आवास, मनोरंजन स्थल आदि ऐसे अनेक क्षेत्र इस सन्दर्भ में हो सकते हैं।

इन उपर्युक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुये इस अध्याय की सामग्री को बहुत ही सन्तुलित तथा एकदम नवीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है।

• पर्यावरण संरक्षण से सम्बद्ध विभिन्न दृष्टिकोण
(Different Aspects Related to Environmental Conservation)

मानव स्वयं भी पर्यावरण का एक अंग है, अतः मानव के समस्त क्रियाकलाप, विभिन्न स्थितियों में उसकी भूमिका तथा पर्यावरण संरक्षण के लिये उस द्वारा किये गये प्रयास, सभी का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होता है। हम यहाँ इस क्रम में **(अ) धर्म और पर्यावरण** (Religions and Environment), **(ब) अर्थव्यवस्था और पर्यावरण** (Economics and Environment), **(स) राजनीति और पर्यावरण** (Politics and Environment) और **(द) संस्कृति और पर्यावरण** (Culture and Environment) के बारे में संक्षिप्त विवेचन करना चाहेंगे—

(अ) धर्म और पर्यावरण (Religions and Environment)

विश्व के सभी मुख्य धर्म (भारत सहित) पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षा हेतु अति संवेदनशील रहे हैं और उनके लम्बे इतिहास में वनस्पति, वन्य जीव, वायु, जल, आकाश, प्रकाश (अग्नि) का ही उल्लेख नहीं मिलता बल्कि इनका उचित प्रयोग और उनसे होने वाले अप्रत्यक्ष लाभों का भी विवरण इस विशेषता से मिलता है कि मानो पूरे विश्व के लोगों का यही मानस हो कि पर्यावरणीय घटक ही हमारे जीवन को सही रूप से संचालित करते हों। प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों की इस महत्ता का अवलोकन हम निम्न संक्षिप्त विवरण में दे रहे हैं—

1. हिन्दू धर्म (Hindu Religion) : विश्व की कुल आबादी के लगभग 13% व्यक्ति हिन्दू धर्म के अनुयायी हैं। उनके सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद और उपनिषद हैं। इनमें जगह-जगह प्रकृति और प्रकृति से विरासत में मिली सभी वस्तुओं का जीवन से गहरा जुड़ाव मिलता है और इन सभी को अत्यन्त पवित्र मानकर लोग इनकी पूजा अर्चना करते हैं। इनके अनुसार आकाश (Space), वायु (Air), तेज (Energy), जल (Water) और पृथ्वी (Earth) पंच तत्त्व हैं, जिनसे ही प्राणीमात्र को जीवन मिलता है और मृत्यु के बाद वह जीवन इन्हीं में विलीन हो जाता है; अतः यह तत्त्व उनके जीवन के आधार हैं।

जल की महत्ता को हिन्दू धर्म में इस सीमा तक स्वीकार किया गया है कि व्यक्ति किसी नदी में स्नान करने से पूर्व उसके जल को नमन करता है, स्नान करते समय मंत्रोच्चारण से उसकी पूजा अर्चना करता है और अत्यन्त श्रद्धा से आचमन कर अपना जीवन धन्य समझता है; और उसकी यह भी मान्यता है कि जल के स्पर्श मात्र से दैविक शक्ति उसकी रक्षा करेगी। ऋग्वेद में इसका उल्लेख कुछ इस प्रकार दिया है—

"आकाश के पानी, नदी और कुओं के पानी, जिनका स्रोत सागर है, यह सब पवित्र पानी मेरी रक्षा करें।" **(ऋग्वेद, 7·4, 9·2)**

(The water in the sky, the water of rivers and water in wells, whose source is ocean, may all these sacred waters protect me.)

स्रोत : World Religions and the Environment : Ed. O.P. Dwivedi

वनस्पति और पेड़-पौधों के महत्त्व को हिन्दू धर्म में बहुत मान्यता दी है और किसी न किसी प्रकार हर पेड़ को किसी देवी-देवता अथवा मान्यता से जोड़कर उसकी रक्षा करने का उपाय कालान्तर से बनाये रखा है। वैज्ञानिक दृष्टि से जो महत्त्व आज वृक्षों का बताया जाता है और जिस वस्तुनिष्ठ आधार पर उनकी रक्षा करने पर बल दिया जाता है, वह पूर्व काल में अप्रत्यक्ष रूप से ही प्रचलन में था। इस सन्दर्भ में निम्न सारणी का अवलोकन करें—

सारणी 24·1

देवी-देवताओं से सम्बद्ध विभिन्न वृक्ष

क्र० सं०	वृक्ष	सम्बन्धित देवी-देवता
1.	वट	ब्रह्मा, विष्णु और कुबेर
2.	तुलसी	लक्ष्मी, विष्णु
3.	सोम	चन्द्रमा (चन्द्र)
4.	बेल	शिव
5.	अशोक	इन्द्र
6.	आम	लक्ष्मी
7.	कदम्ब	कृष्ण
8.	नीम	शीतला, मंसा
9.	पलाश	ब्रह्मा, गन्धर्व
10.	पीपल	विष्णु, कृष्णा
11.	महुवा	पूजा पाठ हेतु
12.	सेमल	पूजा पाठ हेतु
13.	गूलर	विष्णु, रुद्र
14.	तमाल	कृष्णा

हिन्दुओं के मान्य ग्रन्थ 'वराह पुराण' में वृक्षों के महत्त्व को निम्न प्रकार बताया है—

"एक व्यक्ति जो एक पीपल, एक नीम, एक बड़, दस फूल वाले पौधे अथवा लताएँ, दो अनार, दो नारंगी और पाँच आम के वृक्ष लगाता है, वह नरक में नहीं जायेगा।" (वराह पुराण, 172·39)

(One who plants one Pipal, one Neem, one Bar, ten Flowering Plants or Creepers, two Promogranates, two Oranges and five Mango trees will not go to hell.)

पशुओं और पक्षियों की रक्षा हेतु उन्हें पालना, भोजन खिलाना और उन पर किसी अत्याचार की आशंका को जड़ से हटाने के उद्देश्य से प्राचीन काल से ही हिन्दू धर्म में बड़ी सुन्दर व्यवस्था की गई है। अनेक देवी-देवताओं से इनको जोड़ना भी इसी क्रम में आंका जा सकता है कि पुराने लोगों को सभी पशु और पक्षियों के प्रति अत्यन्त लगाव रहा है और जिससे निःसन्देह प्रकृति का सन्तुलन व्यवस्थित हुआ है। निम्न सारणी को देखें—

सारणी 24·2
देवी-देवताओं से सम्बद्ध पशु एवं वन्य जीव

क्र० सं०	पशु एवं पक्षी	सम्बन्धित देवी-देवता
1.	शेर	दुर्गा
2.	कलहंस	ब्रह्मा
3.	हाथी	इन्द्र, गणेश
4.	नादिया	शिव
5.	चूहा	गणेश
6.	हंस	सरस्वती
7.	गरुण	विष्णु
8.	बन्दर	राम
9.	घोड़ा	सूर्य
10.	मोर	कार्तिकेय
11.	उलूक	लक्ष्मी
12.	गिद्ध	शनि
13.	चीता	कात्यायवी
14.	कुत्ता	भैरव
15.	हिरण	वायु
16.	गधा	शीतला

यही नहीं बल्कि पुराने ग्रन्थों में प्राकृतिक प्रदूषण फैलाने को रोकने तथा दोषी को दण्ड देने की व्यवस्था का विवरण भी कई स्थानों पर मिलता है। अवलोकन करें—

"किसी भी व्यक्ति को पानी में पेशाब, मल अथवा थूकना नहीं चाहिये। किसी भी वस्तु को, जो इन अपवित्र वस्तुओं, रक्त और विष से मिश्रित हो, जल में फेंकना नहीं चाहिये।" (मनुस्मृति, 4·56)

(One should not cause urine, stool, cough in the water. Anything which is mixed with these unpious objects, blood and poison, should not be thrown in water.)

"व्यक्ति जिसने शहर के अन्दर बिल्ली, कुत्ता, नेवला और साँप जैसे जीव के लोथ अथवा कंकाल को फेंका तो उसे तीन पाना का दण्ड दिया गया था; गधा, ऊँट, खच्चर और नर कंकाल फेंकने वाले को पचास पाना का जुर्माना किया गया था।" (कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 2·145)

(The person who threw inside the city the carcass of animals, such as cat, dog, mongoose and a snake was punished with three panas; of animals such as an ass, a camel, a mule and a corpse, he was punished with a fine of fifty panas.)

स्रोत : World Religions and the Environment : O. P. Dwivedi, Ed.

इससे यह स्पष्ट है कि हिन्दू धर्म पर्यावरण के संरक्षण हेतु और उसे विकृति से बचाने हेतु कितना जागरुक था ? और उसमें कितनी रुचि रखता था ?

2. **बौद्ध धर्म** (Buddh Religion) : बुद्ध धर्म का फैलाव भारत, दक्षिण और दक्षिणी एशिया के अनेक देशों में रहा है और सन् 2001 की जनसंख्या के अनुसार विश्व में लगभग 6% प्रतिशत व्यक्ति इस धर्म के अनुयायी हैं। भारत के संस्कारों का भी इस धर्म पर प्रभाव रहा है और इसी कारण पर्यावरणीय प्रबन्ध और मनुष्य की आवश्यकता के अनुकूल ही प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस धर्म के अनुयायियों ने करने को महत्त्व दिया है। सादगी (simplicity) और अहिंसा (non-violence) को मानने वाले बौद्ध धर्मी लोगों ने **'बुरे काम करना बन्द करो; अच्छे काम करने का प्रयास करो'** (Cease to do evil; try to do good) के अन्तर्गत सभी प्रकृति अनुकूल कार्य करने को स्वीकार किया है। वृक्ष लगाना और उसकी रक्षा करना तथा किसी पर अत्याचार न करना इस धर्म की विशिष्टताएँ रही हैं।

3. **जैन धर्म** (Jain Religion) : मुख्यतः हिन्दू धर्म में से ही उपजे जैन धर्म ने अपने कुछ विशिष्ट नियमों को बनाकर उनको कठोरता से पालन करने की प्रस्तुति की है। बौद्ध धर्म के समकालेक होने के कारण इस धर्म का भी प्रभाव जैन धर्म के अनुयायियों पर पड़ा है। जिन बिन्दुओं पर जैन धर्म में अधिक महत्त्व है, वह हैं—

(i) मनुष्य और प्रकृति के मध्य समन्वय (Harmony between man and nature)।

(ii) मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जैविक अथवा अजैविक संसाधनों का न्यूनतम विनाश (Minimum destruction of resources—living and non-living for man's satisfaction of material needs)।

(iii) अहिंसा (Ahinsa or non-violence)।

(iv) सभी प्रकार की इच्छाओं से मुक्ति (Rejection of all type of desires)।

यह सभी बातें पर्यावरण को किसी भी विनाश से बचाने और उसे पूर्ण व्यवस्थित रखे रहने की दिशा की प्रभावी सूचक हैं।

4. **सिख धर्म** (Sikh Religion) : सिख धर्म और उसका दर्शन गहराई से प्रकृति से जुड़ा है और इसी कारण इस धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक ने प्रकृति को दैविक मान्यता दी है। सिखों के पवित्र ग्रन्थ 'गुरु ग्रन्थ साहिब' में लिखा है—

"सिख धर्म, दुनियाँ की सभी वस्तुओं से ऊपर प्राकृतिक नियम, पशु और पक्षी, मौसम, वन-वनस्पति और वन्य जीव को महत्त्व देता है; इन सबके ऊपर सृष्टि रचियता प्रमुख है।"

(Sikhism deals with natural phenomena, animals and birds, seasons, flora and fauna and above all the creation of the world.)

उनके अनुसार **"ईश्वर स्वयं पर्यावरण में ही निहित है।"**

(Part of God's divine plan is to have Himself represented in the environment.)

सिख धर्म पाँच वस्तुओं (1) वायु (Air), (2) जल (Water), (3) पृथ्वी (Earth), (4) दिन (Day), (5) रात (Night) को अधिक महत्त्व देकर अपने पर्यावरणीय दृष्टिकोण की प्रभावी भूमिका को प्रस्तुत करता है। इनके अनुसार—

"यह तत्त्व मनुष्य जाति की शान्ति, प्रसन्नता, निश्चलता और विकास के लिये आवश्यक हैं। ऐसा कोई क्षण नहीं होता जबकि मनुष्य और प्रकृति के मध्य कोई अलगाव सम्भव हो। प्रकृति और मनुष्य जाति के मध्य सन्तुलन सृष्टि का अविभाज्य अंग है।"

(These elements are essential for peace, happiness, tranquility and development of humanity. There is no moment when seperation between man and nature is possible. Balance between nature and human beings is an integral part of the universe.)

स्रोत : O. P. Dwivedi, Ed., Ibid

प्रकृति असन्तुलन के लिये इस धर्म की चेतावनी देखें—

"अतः चेतावनी स्पष्ट है : सन्तुलन को बिगाड़िये और व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जायेगी। ईश्वर के सम्पूर्ण पारिस्थितिकीय सन्तुलन के बिना समस्त पारिस्थितिकीय उथल-पुथल हो जायेगी।"

(Thus the warning is clear : Upset the balance and out of order will come chaos. Out of God's perfect ecological balance will come ecological upheaval.)

स्रोत : O. P. Dwivedi, Ed., Ibid

इसके अतिरिक्त भी परम पवित्र ग्रन्थ 'गुरु ग्रन्थ साहब' में अनेक जगह 'पौधे और वनस्पति' (Plants and Vegetation), 'पशु और पक्षी' (Animals and Birds) तथा 'वर्षा और ऋतुओं' (Rains and Seasons) का वर्णन मिलता है, जो निश्चित ही पर्यावरण की महत्ता और सुरक्षा के लिये है।

5. इस्लाम धर्म (Islam Religion) : **इस्लाम धर्म एक एकेश्वरवादी धर्म** (Mono-theistic Religion) है जिसके विश्व में लगभग 19 प्रतिशत अनुयायी हैं। उनकी एक सार्वभौम शक्ति प्रणेता 'खुदा' (Khuda) है जिसके अनुसार ही पूरे जगत् की सभी गतिविधियाँ चलती हैं। कुरान (Quran) उनकी एकमात्र धर्म पुस्तक है जिसमें इस धर्म के लोगों को करने अथवा न करने के सभी कार्यों के लिये निर्देशन है। इस्लाम में तीन बिन्दुओं पर अधिक महत्त्व दिया गया है–

(i) ब्रह्माण्ड में प्रत्येक वस्तु का निर्माण अल्लाह ने किया है और उसी ने नियम बनाये हैं।
(Allah has created everything in the universe and has also given the regulations.)

(ii) उसने ही सभी वस्तुओं को एक निश्चित मात्रा में बनाया है।
(He has only created everything by measure.)

(iii) प्रत्येक व्यक्ति को अनुपात के हिसाब से सन्तुलन को चलाना है।
(Everyone has to observe the balance with proportion.)

यह तीनों बिन्दु अपने आप में इतने सम्पूर्ण हैं कि इसमें प्रकृति दत्त वस्तुओं के प्रति सहज दृष्टिकोण और उनके साथ व्यक्तियों का व्यवहार स्पष्ट निर्देशित है।

A. Hussain द्वारा लिखित पुस्तक 'Spirit of Islam' में पवित्र कुरान के आधार पर व्यक्त किया है कि–

"इस्लाम की शिक्षा हमें पर्यावरण के साथ सफल समन्वय करने योग्य बनाती है और दैविक नियमों, सही ढंग, सन्तुलन करने हेतु निर्देशित करती है तथा सीमा के उल्लंघन हेतु मना करती है।"

(The teachings of Islam enable us to successfully interact with the environment and guide us to follow divine regulation, right order, observe the balance and not to transgress the measure.)

इसी सन्दर्भ में 'कुरान' में लिखा है–

"अल्लाह ने जो कुछ भी हमारे लिये बनाया है उसके अपव्यय की सख्त मनाही है और इस्लाम में यह निषेध है।"

(Extravagence in the use of what Allah was provided for us is strictly prohibited and banned in Islam.)

स्रोत : कुरान 32, 17 : 27-28

प्राप्य : O. P. Dwivedi, Ed., Ibid, p. 126

वनस्पति, वन्य जीव और जंगलों की रक्षा हेतु कई जगह इस्लाम की पुस्तकों में बहुत स्पष्ट उल्लेख मिलता है। प्राकृतिक संसाधनों में वायु और जल को प्रधानता और सम्भावित प्रदूषण की भी सम्भावना व्यक्त की गई है। इस्लाम में जल को व्यक्ति के पवित्र करने का एकमात्र साधन माना है और खुदा की इवादत के साथ यह कहा जाता है कि–

"अल्लाह की प्रशंसा करनी चाहिये कि उन्होंने इस्लाम और उसकी इवादतें हमें दीं। अल्लाह की प्रशंसा करनी चाहिये जिसने हमें पवित्र करने के लिये जल बनाया और प्रकाश देने हेतु इस्लाम।"

(Praise be to Allah for Islam and for his grace. Praise be to Allah who has made water a purifying agent and Islam a light.)

पर्यावरण के प्रति इनका व्यापक दृष्टिकोण इस बात से भी प्रतीत होता है कि इस्लाम धर्म में भूमि का एकमात्र मालिक खुदा है और उस पर रहने वाले निवासी केवल न्यासी (Trustees) हैं। प्रकृति उत्पादन की महत्ता के फलस्वरूप यूनानी औषधि पद्धति इस धर्म की ही देन है जिसे ईश्वर ने लोगों की रक्षा करने हेतु ईज़ाद किया है।

6. ईसाई धर्म (Christian Religion) : विश्व में सबसे अधिक अनुयायी रखने वाले (32 प्रतिशत) ईसाई धर्म का पूर्व इतिहास 'यहूदी-ईसाई आचार संहिता' (Judeo-Christian Ethic) के नाम से जाना जाता है जिसमें प्रकृति को मान्यता तो प्रदान की गई है, पर उसे व्यक्ति के अधीन रखा है। सम्भवतः यह उनकी पूर्वग्रसित विचारधारा रही हो, लेकिन इसके पीछे उनका सोच यह था कि—

(i) व्यक्ति मूलतः पृथ्वी के अन्य सभी जीवों से भिन्न हैं, जिन पर उनका प्रभुत्त्व रहता है।
(People are fundamentally different from all other creatures on earth, over which they have domination.)

(ii) व्यक्ति स्वयं अपनी नियति के मालिक हैं; वे अपने लक्ष्य चुन सकते हैं और उनको प्राप्त करने के लिये, जो भी आवश्यक है, उसे सीख सकते हैं।
(People are masters of their own destiny; they can choose their goals and learn to do whatever is necessary to achieve them.)

(iii) दुनिया विशाल है, अतः मनुष्य को असीमित अवसर मिलते हैं।
(The world is vast, and thus provides unlimited opportunities for humans.)

(iv) मानव जाति का इतिहास प्रगति का रहा है; हर समस्या के लिये कोई समाधान है, अतः प्रगति अथवा उन्नति की आवश्यकता कभी समाप्त नहीं होती है।
(The history of humanity is one of progress; for every problem there is a solution and thus progress need never ceases.)

और इसी कारण उनका मत था कि पृथ्वी और आकाश (Earth and Space) के मध्य प्राकृतिक संसाधन और ऊर्जा मनुष्य के उपयोग के लिये बने हैं। कुछ वस्तुएँ अनन्त हैं, उनका खुलकर उपयोग करें; और जो सीमित हैं, उनके समाप्त होने पर उनके विकल्प विज्ञान और तकनीकी सहायता से तैयार किये जा सकते हैं। उनका विचार रहा है—

"मानव का प्रकृति पर प्रभुत्व बना रहेगा क्योंकि मनुष्य जाति हर प्रकार से प्रकृति से श्रेष्ठ है। प्रकृति की दुनिया वस्तुतः मनुष्य जाति के कल्याण और प्रसन्नता के लिये ही बनी है।"

(Humans will continue to dominate nature because human beings are superior to outside of and above the rest of nature. The world of nature primarily exists for the happiness and the welfare of human beings.)

लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब से पश्चिमी देशों में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ और प्राकृतिक तौर-तरीकों की बेपरवाही से लोगों का जीवन संकट ग्रस्त होने लगा, तब से इस धर्म के सोच में शनैः-शनैः परिवर्तन होने लगा और तब निम्न प्रकार के विचार सामने आये—

(i) पर्यावरण का ह्रास जीवन की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है।
(Environmental degradation affects also the quality of life.)

(ii) चाहे हम विश्वास करें या न करें, पर्यावरणीय संकट हमारे जीवन के सभी क्षेत्र, हमारे सामाजिक सम्बन्ध, हमारा स्वास्थ्य, हमारे आचरण, अर्थव्यवस्था, राजनीति, हमारी संस्कृति और हमारे भविष्य को प्रभावित करता है।
(Whether we believe or not, ecological crisis affects every area of our life—our social relations, our health, our morals, economy, politics, our culture and our future.)

(iii) मानव नियति पर्यावरण से बहुत निकट से जुड़ी है और उससे प्रभावित है। हम अब मनुष्य के प्रकृति से ऊपर होने की बात कहने में समर्थ नहीं हैं।
(Human destiny is intimately tied up with the environment and conditioned by it. We can no longer now afford to speak of man being above nature.)

(iv) प्रकृति की समाप्ति प्राणी प्रजाति की समाप्ति है। इस सन्दर्भ में मनुष्य और प्रकृति दोनों की नियति एक-दूसरे के समापक है।

(The death of nature means the death of the human species. In this sense the destiny of both man and nature is coterminating.)

और वर्तमान स्थिति यह है कि ईसाई धर्म जिसके अनुयायी पूरे विश्व में फैले हैं, उपरोक्त पश्चिमी देशों की संस्कृति की नवीनतम विचारधारा से प्रभावित हैं। प्रदूषण को रोकने हेतु हरित क्रान्ति (Green Movement) जैसे अभियान चला रहे हैं और मनुष्य के भविष्य के कल्याण के लिये पर्यावरण संरक्षण के समर्थक बने हैं। यही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देशों को पर्यावरण संरक्षण हेतु तकनीकी और आर्थिक सहायता देने में भी सम्बद्ध हैं।

पोप पौल षष्टम (Pope Paul VI) का 'मानव पर्यावरण सम्मेलन', 1972 (स्टॉक होम : स्वीडन) में भेजे गये सन्देश से यह बात और अधिक प्रमाणित होती है—

"पर्यावरण और संसाधन सभी के लिये हैं; यह सभी के लिये अहस्तान्तरणीय सम्पत्ति हैं; और ऐसी कोई सार्वभौमिक सम्पत्ति तथा विवेकशील प्रभुसत्ता नहीं है जो आज और कल मानव जाति को उत्तरदायित्व से मुक्त कर सके।"

(The environment and resources are for everyone; they are the inalienable property of everyone; and there does not exist over this universal property and discretionary sovereignty exempting from responsibility towards the humanity of today and tomorrow.)

Source : India's Environment, Crisis and Responses, Chapter 10, Environment in India's Religions and Cultural Heritage by B.V. Krishnamurti and Urs Schoettli, Ibid. p. 163

7. पारसी धर्म (Zoroastrain Religion) : पारसी धर्म का प्रारम्भ ईसा से 660 वर्ष पूर्व (660 B.C.) से माना जाता है और यह मीडिया (Medea), जो अब ईरान में समाहित है, से चलकर 8वीं शताब्दी में भारत में आकर स्थापित हो गया था। इनकी धार्मिक भावना विशेषतः दो बातों में, अच्छा (good) और बुरा (evil) निहित रही है। **इनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को 'अच्छा' पाने के लिये संघर्ष करना चाहिये; इसी से उसको स्वर्ग मिल सकता है।**

पर्यावरण के सन्दर्भ में विश्व स्तर पर यह माना गया है कि पारसी धर्म ने अपने प्रारम्भ से ही लोगों को पर्यावरण के प्रति आस्था की शिक्षा दी है। उनके धार्मिक ग्रन्थों में छः वस्तुओं, पशु (Animals), अग्नि (Fire), खनिज (Minerals), पृथ्वी (Earth), जल (Water) और वनस्पति (Vegetation) का उल्लेख मिलता है जिनकी यह किसी न किसी रूप में मान्यता देते हैं और उनकी पूजा करते हैं। इन सब तत्त्वों में 'अग्नि' को प्रमुख रूप से प्रधानता दी गई है।

प्रकृति के बारे में इस धर्म की मान्यता है—

"प्रकृति संवेदनशील और विनाशकारी दोनों है; साथ ही असामान्य तौर से शक्तिशाली और लचीली भी। हमारे ग्रह के लिये हमारी भूमिका इसे किसी भी प्रकार के और प्रदूषण से बचाना है।"

(Nature is both delicate and destructive as well as powerful and resilent in a very unusual way. Our role for the sake of our planet is to defend it from further pollution.)

पवित्रता (purity) को अपने धर्म का मूल मन्त्र मानते हुये पारसी धर्म के लोग प्रकृति के किसी भी संसाधन की अपवित्रता को किसी भी स्तर पर सहन नहीं करते। जल में लाश डालने अथवा उसे किसी भी प्रकार अपवित्र करने को यह लोग जघन्य कार्य मानते हैं।

(ब) अर्थव्यवस्था और पर्यावरण (Economics and Environment)

पर्यावरण संरक्षण में आर्थिक पक्ष की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

1. हम यह जानते अवश्य हैं कि हमें वह सभी सुविधायें मिलनी चाहिये जो एक अच्छे पर्यावरण के दृष्टिकोण से अपेक्षित हैं पर व्यय के नाम पर हम उसे दूसरे अथवा कम आवश्यक स्थान पर रखते हैं। इस सन्दर्भ में कुछ उदाहरण देखें—

(i) हम अपने लिये अच्छी रकम देकर एक कार खरीदना चाहते हैं, लेकिन उसे चलाने के लिये अच्छी सड़कों की व्यवस्था हेतु 'सड़क कर' (Road Tax) नहीं देना चाहते।

(ii) हम अपना नया मकान बनाना चाहते हैं, पर उसे अच्छे पर्यावरण में रखने हेतु कोई व्यय नहीं करना चाहते।

(iii) यही नहीं सरकारी स्तर पर भी अच्छी सड़कों का निर्माण तो करना चाहते हैं, पर उस सड़क को सुन्दर बनाने हेतु वृक्षों अथवा अन्य किसी व्यवस्था को टालना चाहते हैं।

ऐसे और भी अनेक उदाहरण हैं जब पर्यावरण संरक्षण हेतु आर्थिक पक्ष सामने आकर 'मूल्य और लाभ' (Cost & Benifit) की बात प्रस्तुत करने लगता है।

2. दूसरी स्थिति पर्यावरण संरक्षण में आर्थिक पक्ष की यह है कि प्रत्येक देश के पास अपने कुछ साधन हैं, जिनका उपयोग वह अपने देश के लोगों के लिये करता है; लेकिन अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वह दूसरे देशों पर निर्भर है। सक्षम देश इस स्थिति का लाभ उठाकर अपनी सामग्री की उपलब्धता अन्य देशों को कुछ विशेष शर्तों और अनुबन्धों पर करता है। आर्थिक रूप से कमजोर देश अपने पर्यावरण की कीमत पर आवश्यक वस्तुएँ जुटाता है। उदाहरण—कई अफ्रीकी देशों ने अनाज खरीदने हेतु अपने जंगल बेच दिये और फिर यह देश वनों के अभाव में स्थाई अकाल की चपेट में आ गये। यह तरीका पर्यावरण संरक्षण को कैसे पनपने देगा ?

3. लोगों के रहन-सहन के तरीके और संसाधनों के उपयोग का स्तर उस देश की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है जहाँ वह रहते हैं और अपने धन के बल पर ही वह देश सभी सुविधाओं का भरपूर उपयोग करता है चाहे इस कारण अनेक अन्य देश उनके लिये तरसते ही क्यों न रहें। अमेरिका देश इसका एक स्पष्ट उदाहरण है, जहाँ प्राकृतिक संसाधन और ऊर्जा का उपयोग प्रति व्यक्ति सर्वाधिक है और वह यह सब अपनी मजबूत आर्थिक स्थिति के बलबूते पर करता है। अन्य देशों को वह 'जीवन की गुणवत्ता' (Quality of Life) की बात सोचने का अवसर ही नहीं देता है।

4. जो देश किसी भी संसाधन को प्रचुर मात्रा में रखते हैं और जिसकी पूरे विश्व में अच्छी माँग है, उसका लाभ वह उचित-अनुचित रूप से उठाते हैं। इरान, इराक और तेल के भण्डार वाले देश इसके उदाहरण हैं कि जिन्होंने अपनी शर्तों पर सदैव विश्व के अनेक छोटे देशों को या तो इस संसाधन से महरूम कर दिया है अथवा उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय बना दी है, जिससे उनके पर्यावरण पर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है।

5. स्थानीय स्थितियों की ओर ही देखें कि पर्यावरण विकृति का सबसे अधिक प्रभाव गरीब अथवा कम आय वाले परिवारों पर जो अप्रत्याशित रूप से कच्ची बस्ती जैसे स्थानों पर रहते हैं, पड़ता है। जल सम्बन्धित अनेक बीमारियाँ सर्वाधिक इन्हें होती हैं। किसी फैक्टरी से वायु-प्रदूषण से प्रभावित होने वाले अधिकतर वह श्रमिक ही होते हैं जो वहीं फैक्टरी के पास के मकानों में रहते हैं। ऊर्जा संकट, जल संकट और विभिन्न पारिस्थितिकी विषमताओं का शिकार भी छोटे स्तर के लोग ही होते हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि पर्यावरण संरक्षण में अर्थव्यवस्था एक बहुत प्रभावी भूमिका निभाती है।

(स) राजनीति और पर्यावरण (Politics and Environment)

पर्यावरण की समस्याएँ चाहे वह—

(1) **स्थानीय** हों, जैसे वह गाँव जहाँ पानी का अभाव हो, बंजर भूमि हो अथवा जलमग्नता के कारण सारी भूमि ही दलदल हो,

(2) **राष्ट्रीय स्तर** की हों, जैसे तापीय विद्युत गृह, सीमेन्ट के कारखाने अथवा खाद और कीटनाशी फैक्टरियों के निकट वाले क्षेत्रों के लोगों की परेशानियाँ अथवा

(3) **अन्तर्राष्ट्रीय स्तर** की हों, जैसे हरितगृह गैसों का वायुमण्डल में मिलना, आणविक विस्फोट अथवा महासागर की धाराओं में विविध प्रकार के प्रदूषकों का एक देश से दूसरे देशों तक पहुँचना आदि।

यह सभी अन्ततः पूरे विश्व के पर्यावरण को प्रभावित करती हैं। 'स्मोग घटना' (London Episode) और 'मिनीमाटा घटना' (Minimata Episode) जैसी घटनाओं ने पूरे विश्व को चिन्तित कर संयुक्त राष्ट्र को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आहूत करने को विवश कर दिया था; क्योंकि सभी देश इस बात से सिद्धान्ततः सहमत हैं कि एक देश की पर्यावरणीय घटना का दूसरे देशों पर प्रभाव अवश्य पड़ता है। इसीलिये विश्व स्तर पर यह सोच प्रारम्भ हुआ था कि 'विश्व स्तर पर सोचो और स्थानीय स्तर पर कार्य करो' (Think globally; Act locally)।

किसी भी देश की इन स्थितियों को सोचने और उस पर अधिकारिक रूप से कार्य किये जाने अथवा करवाये जाने का उत्तरदायित्व स्पष्टतः आज उन जन नेताओं पर है जो नीति निर्धारक हैं और जो

निवासियों के कल्याण के लिये चुनकर सरकार की विधान सभा तथा संसद में भेजे जाते हैं। यह सशक्त अभिकरण पर्यावरण संरक्षण हेतु ऐसी व्यवस्थायें बना सकती हैं, जिससे समस्याओं को कम किया जा सके। ऐसी व्यवस्थायें पूर्व में भी सोची गई थीं और भारत के संविधान में ऐसे कई उल्लेख हैं जिनसे लोगों को पर्यावरणीय समस्याओं से बचाकर उन्हें अच्छे जीवन जीने के लिये सरकार का उत्तरदायित्व बताया गया है। संसद ने भी अनेक कानून बनाये हैं जिससे पर्यावरणीय प्रदूषण को रोका जा सके; लेकिन आवश्यकता है इन सभी व्यवस्थाओं को मजबूती से लागू करने की।

विश्व के अनेक देशों ने अपने-अपने स्तर पर पर्यावरण कानून और सामाजिक व्यवस्थाएँ ऐसी बनाई हैं जिससे वह अपने देश को गर्व से प्रदूषण रहित कह सकते हैं। प्रदूषण रहित पेट्रोल, बैटरी से संचालित वाहन, सौर ऊर्जा से भवनों को गर्म रखना, बिना क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स के शीत उपकरण, औद्योगिक संस्थानों से शून्य स्तर (zero level) का धुआँ उत्सर्जन और जलस्राव आदि उन देशों की उपलब्धियाँ हैं जो पर्यावरण संरक्षण में लगे हैं। **लेकिन यह तभी सम्भव हो सका है जब राजनीति इस सबके पीछे सम्बल और अधिकार बने हैं।**

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसी सोच की आज आवश्यकता है जिससे एक देश की गलत भूमिका अन्य देश अथवा देशों को प्रभावित न कर सके। लेकिन इसकी क्रियान्विति राजनैतिक स्तर पर ही समझ की वृद्धि से सम्भव है, क्योंकि सभी देश शुद्ध पर्यावरण हेतु पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देना चाहते हैं।

(द) संस्कृति और पर्यावरण (Culture and Environment)

पृथ्वी का जन्म लगभग 4 अरब वर्ष पूर्व हुआ था, लेकिन मानव सभ्यता का इतिहास 50,000 वर्ष पूर्व से ही आँका जाता है। आज यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि तब लोग कहाँ और कैसे रहते थे ? क्या खाते थे और कहाँ सोते थे ? खाने के लिये सामग्री क्या थी ? लेकिन आज जब पृथ्वी के निवासियों की ओर दृष्टिपात करते हैं, तब लगता है कि पूरे विश्व के लोग पृथ्वी की बनावट के अनुरूप अलग-अलग टुकड़ों में बंट गये हैं और प्रकृति द्वारा उपलब्ध सुविधायें और संसाधनों का अपने-अपने स्तर पर उपभोग करते हैं।

प्रत्येक देश के रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेश-भूषा, त्यौहार, ऐतिहासिक इमारतें, स्मारक, कला और उद्योग आदि मिलकर उस देश की संस्कृति का निर्माण करती हैं। निश्चिय ही इस संस्कृति की वहाँ के निवासियों पर गहरी छाप रहती है और इसी से उनके पर्यावरण पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। यह संस्कृति ही उन्हें प्रकृति के साथ प्रेम और सहयोग, पशु-पक्षियों के साथ सद्व्यवहार, प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा के साथ-साथ सुखी जीवन, मैत्री भाव और जीवन की गुणवत्ता की ओर प्रेरित करती है।

भारत देश के परिप्रेक्ष्य में देखें कि यह देश ऋषि मुनियों का देश रहा है, जहाँ प्रकृति के ऊपर ही लोग पूर्णतया आश्रित थे। कन्द-मूल फल का भोजन, झरनों का विशुद्ध जल, पेड़ अथवा पहाड़ों की कन्दराओं में आश्रय और योग तथा तपस्या में मग्न लोग प्रकृतिमय थे। समय के साथ परिवर्तन तो हुआ लेकिन मूल संस्कृति—पर्यावरण और प्रकृति की संस्कृति की छाप बनी रही। पेड़ों की पूजा, जल का सूर्य के समक्ष अर्घ्य, जीवों की सुरक्षा और धार्मिक स्थल के रूप में पवित्रता का वातावरण निरन्तर चलता रहा। जितने भी कार्य यहाँ सम्पन्न हुये उनके पीछे यहाँ की मूल भावना अरण्य संस्कृति ही रही। जितने भी पुराने शिक्षा के क्षेत्र विश्व प्रसिद्ध संस्थान (नालन्दा विश्वविद्यालय, शांति निकेतन आदि) स्थापित किये गये उन्हें सघन जंगलों की छाया में ही बसाया गया; बड़े तीर्थ (रामेश्वर, गया, द्वारका और प्रयाग आदि) नदियों अथवा सागर के किनारे रहे; महान विचारकों (विवेकानन्द, स्वामी परमहंस, योगी अरविन्द, महर्षि दयानन्द और रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि) की कर्मभूमि प्रकृति प्रधान ही रही और यही नहीं बल्कि अनेक नदियाँ (गंगा, यमुना, कृष्णा, गोदावरी, नर्मदा-ताप्ती, रावी-सतलज-चिनाव, व्यास और झेलम आदि) राष्ट्रीय सांस्कृतिक धरोहर के रूप में स्वीकार की गईं। इनकी अपनी महत्ता ने इन्हें भारतीय संस्कृति का रूप ही प्रदान नहीं किया है बल्कि देश के पर्यावरण संरक्षण के परिप्रेक्ष्य में एक अनोखी और अलौकिक पहचान भी दी है।

● पर्यावरण संरक्षण में विभिन्न अभिकरणों का योगदान एवं भूमिका (Contribution & Role of Different Agencies in Environmental Conservation)

वर्तमान में हमने पर्यावरण के विविध पहलुओं पर विषद चर्चा की है और हर प्रकार से यह बताने का प्रयास किया है कि पर्यावरण की समस्याओं की जानकारी एवं उनका समाधान केवल आज और अभी

के लिये नहीं है बल्कि अब यह भविष्य के आगे कई सौ वर्षों तक सोचने और समझने की समस्या है। अतः समाज में बच्चों से लेकर बड़ी आयु तक के लोगों के लिये पर्यावरण संरक्षण की नियमित जानकारी मिलती रहना और उसके आधार पर व्यक्तिगत लोगों की भागीदारी और उनके कर्त्तव्य का बोध कराना बहुत सामयिक हो गया है। इस सन्दर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण अभिकरणों की महती भूमिका और उनके सम्भावित योगदान की चर्चा अत्यन्त आवश्यक है, जिसे हम यहाँ कर रहे हैं—

1. स्कूली/महाविद्यालयी विद्यार्थियों के लिये (For School/College going Students)

(i) घरों की भूमिका (Role of Homes) : बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा हर प्रकार से घर से ही शुरू होती है, जहाँ माँ शिक्षक होती है; पिता, बड़े भाई-बहन व परिवार के अन्य बड़ी आयु के सदस्य के कार्यकलाप पाठ्यक्रम के रूप में उदाहरण बनते हैं और परिवार की दैनिक चर्या उनकी आदर्श व्यवहार संहिता बनती है। अतः उसे छोटी आयु में ही क्या देखने को, करने को और समझने को मिलता है, यह बहुत महत्त्वपूर्ण है ? जल, भोजन और ऊर्जा जैसे महत्त्वपूर्ण संसाधनों का बुद्धिमतापूर्ण उपयोग क्यों आवश्यक है ? यह बात यहीं निश्चित रूप से सीखने को मिलती है। ऐसा न करने से सम्भावित भविष्य की विभीषिकाएँ भी किसी न किसी प्रकार उनके ज्ञान भण्डार में जुडती हैं तथा पड़ौस के दो परिवारों में प्राकृतिक संसाधनों का असमान वितरण के कारण हो रहे क्लेशों का विवरण भी विद्यार्थी समय के साथ जान जाता है। अतः पर्यावरण के संरक्षण की आवश्यकता और उस हेतु किये जा रहे विभिन्न लोगों के योगदान की जानकारी अनजाने ही बच्चों को घर पर ही मिलती है जो महत्त्वपूर्ण है।

(ii) विद्यालय/महाविद्यालयों की भूमिका (Role of Schools/Colleges) : विद्यार्थियों को पर्यावरण के बारे में ज्ञान (Knowledge), कौशल (Skills), मूल्य (Values) एवं अभिवृत्तियों (Attitudes) के लिये घर के तत्काल बाद विद्यालय तथा महाविद्यालय ही ऐसी जगह हैं जहाँ शिक्षक विद्यार्थियों को हर सम्भव जानकारी देकर उनमें पर्यावरण के प्रति उनकी रुचि उत्पन्न करते हैं और उन्हें पर्यावरण क्षेत्र से निकटता से जोड़ते हैं। लेकिन इस हेतु शिक्षक समूह तथा शिक्षण से जुड़े अन्य लोगों की स्वयं का पर्यावरण के बारे में यथेष्ट जानकारी रखना भी आवश्यक है। शिक्षण के समय उन सभी स्थितियों का लाभ शिक्षक को उठाना चाहिये जहाँ पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण को जोड़ा जा सकता हो। शिक्षक की स्वयं की योग्यता, पर्यावरण जैसे आवश्यक क्षेत्र की जानकारी को विद्यार्थियों में समाहित कर देने की क्षमता और विद्यार्थियों में रुचि उत्पन्न कर सकने की कुशलता और निपुणता ही विद्यालय/महाविद्यालय की प्रभावी भूमिका प्रतिपादित कर सकती है।

(iii) सामाजिक संस्थाओं की भूमिका (Role of Social Institutions) : हर स्तर का व्यक्ति घर और विद्यालय के अतिरिक्त, चाहे वह विद्यार्थी हो अथवा नहीं, अपना कुछ समय अन्य पारस्परिक सम्बन्धों पर देता है। यह खेलने के स्थान हो सकते हैं, मनोरंजन स्थल हो सकते हैं और अन्यथा चर्चा अथवा सत्संग स्थल (मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा और चर्च आदि) हो सकते हैं। इनमें सक्रिय भाग लेते समय अनेक क्रियाकलापों में पर्यावरण सम्बन्धी वह स्थिति सम्मुख आती अवश्य है, जिनमें व्यक्ति को उचित निर्णय लेना होता है। वस्तुओं का उचित एवं केवल आवश्यक उपयोग, अन्य व्यक्तियों की रुचि व अरुचि के साथ ताल-मेल और समन्वय (जैसे—लाउडस्पीकरों का कम आवाज में बजाना) एवं अब तक सीखे और जाने गये ज्ञान की व्यावहारिकता की उपयोगिता का इन वास्तविक स्थितियों में ही पता चलता है। यहीं से व्यक्ति को क्या करना है ? और क्या नहीं करना है ? (Do's & Don'ts) का मानस बनता है। पर्यावरण के क्षेत्र में इतनी स्थिति का आभास होना कोई कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

2. अन्य लोगों के लिये (For Other People)

(i) संचार माध्यमों की भूमिका (Role of Communication Media) : संचार माध्यमों में से किसी न किसी प्रकार का कार्यक्रम अन्य उन व्यक्तियों के लिये उपयोगी हो सकता है जो (1) अनपढ़ हैं, (2) जो पढ़े हैं और विद्यालय/महाविद्यालयों की परिधि से बाहर आ गये हैं और (3) जो उच्च शिक्षा प्राप्त हैं और अनेक सरकारी और गैर सरकारी संस्थानों/कार्य स्थलों पर विभिन्न पद/स्तर पर कार्यरत हैं। इनमें समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, दूरदर्शन, वार्ताओं के ऑडियो/वीडियो कैसेट्स, विभिन्न फिल्में

आदि सम्मिलित हैं। शिक्षकों के सेवारत प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी इन माध्यमों का बहुत प्रभावी उपयोग हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि इनकी सामग्री सरल, सहजता से ग्राह्य योग्य, सही और अधिकृत हो। भारत जैसे विशाल देश में अधिक लोगों तक बात पहुँचाने के आकर्षण से कई बार ऐसी जानकारी प्रसारित हो जाती है जिससे अनर्थ हो सकता है। अतः पर्यावरण जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में सभी जानकारी का समेकीकरण बहुत ही योग्य और विषद विशेषज्ञों के अधीन होना चाहिये।

(ii) शोध संस्थाओं की भूमिका (Role of Research Institutions) : जितनी भी सामग्री पर्यावरण के क्षेत्र में उपलब्ध है अथवा विभिन्न स्रोतों से एकत्रित की गई है, केवल उसको विविध प्रकार से विभिन्न स्तर तक के लोगों तक पहुँचाना ही इस क्षेत्र की इतिश्री नहीं है, बल्कि हमें अपने देश की स्थिति के अनुसार पर्यावरण की विशिष्ट जानकारी देश के सभी लोगों तक पहुँचाने की ओर अधिक ध्यान देना है। देश में ऐसे संस्थानों की आवश्यकता है जो शोध कार्य हेतु समर्पित हों और प्रत्येक ज्ञान को जाँच परख कर सही जानकारी देश के निवासियों के आगे प्रस्तुत कर सकें। यह आवश्यक नहीं है कि अमेरिका की कोई पर्यावरणीय समस्या का इस देश में भी वही विकराल रूप हो जो वहाँ है और हम अनावश्यक ही उस समस्या पर बेहद ध्यान दे रहे हैं। बहुत अच्छी स्थिति तो यह होगी कि स्थानीय स्थितियों पर (On Local Specifics) शोधकर्त्ताओं को विचार-विमर्श करने और उन्हीं समस्याओं के हल खोजने का उन्हें प्रचुर अवसर मिल सके। शोध संस्थान एक प्रकाश स्तम्भ (Light House) की तरह हमें मार्गदर्शन दे सकते हैं।

(iii) विभिन्न विशिष्ट संस्थानों की भूमिका (Role of Different Specific Institutions) : शिक्षा और पर्यावरण शिक्षा एक प्राण और दो शरीर हैं। अतः अनेक शिक्षण संस्थान और अनेक विशिष्ट पर्यावरण शिक्षा संस्थान पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी रखने, नवीन सूचनाओं के आधार पर प्रसारित योग्य ज्ञान को सत्यापित करने और उसे प्रभावी रूप से प्रस्तुत करके आम लोगों तक पहुँचाने का कार्य करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और प्रदेश स्तर पर इनकी संख्या आज इतनी अधिक है कि इसकी समस्त सूची बनाना अत्यन्त कठिन है, लेकिन सन्दर्भ हेतु कुछ संस्थानों की जानकारी यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं—

(क) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर (At International Level) :

1. यूनाइटेड नेशन्स एनवायरनमेन्ट प्रोग्राम, नैरोबी : केन्या (UNEP : United Nations Environment Programme, Nairobi : Kenya)
2. यूनाइटेड नेशन्स एजूकेशनल, साइन्टिफिक एण्ड कल्चरल आर्गेनाइजेशन, पेरिस : फ्रांस (UNESCO : United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation, Paris : France)
3. इन्टरनेशनल यूनियन फॉर कन्जरवेशन ऑफ नेचर एण्ड नेचुरल रिसोर्सेज, मोर्गेज : स्विटजरलैण्ड (IUCN : International Union for Conservation of Nature and Natural Resources, Morges : Switzerland)
4. यूनाइटेड नेशन्स डवलपमेन्ट प्रोग्राम (UNDP : United Nations Development Programme).

(ख) अन्य देश अथवा क्षेत्रीय स्तर पर (At Other Countries or Regional Level) :

1. एनवायरनमेन्टल प्रोटेक्शन एजेन्सी : संयुक्त राष्ट्र (EPA : Environmental Protection Agency : US)
2. नेचुरल कन्जरवेशन काउन्सिल : यू० के० (NCC : Natural Conservation Council : UK)
3. दी पीपुल्स कमीशन ऑफ एनवायरनमेन्ट एण्ड डवलपमेन्ट : भारत (PCED : The People's Commission on Environment and Development : India)

(ग) राष्ट्र स्तर पर (At National Level) :

1. राष्ट्रीय शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली (NCERT : National Council of Educational Research and Training, New Delhi)
2. राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली (NIEPA : National Institute of Education Planning and Administration, New Delhi)
3. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद (Centre for Environment Education, Ahmedabad)

4. सी० पी० आर० पर्यावरणीय शिक्षा केन्द्र, मद्रास (C.P.R. Environmental Education Centre, Madras)
5. खनन पर्यावरणीय केन्द्र, धनबाद (Centre for Mining Environment, Dhanbad)
6. पारिस्थितिकीय अनुसंधान और प्रशिक्षण केन्द्र, बंगलौर (Ecological Research and Training Centre, Banglore)
7. सालीम अली पक्षी विज्ञान तथा प्राकृतिक विज्ञान केन्द्र, बम्बई (Salim Ali Centre for Ornithology and Natural History, Bombay)
8. केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल, नई दिल्ली (Central Pollution Control Board, New Delhi)
9. गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, अल्मोड़ा (G. B. Pant Himalaya Paryavaran Evam Vikas Sansthan, Almora)
10. भारतीय प्लाइवुड उद्योग अनुसंधान संस्थान, बंगलौर (Indian Plywood Research & Training Institute, Banglore)
11. राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, नई दिल्ली (National Museum of Natural History, New Delhi)
12. बोटेनीकल सर्वे ऑफ इण्डिया, कलकत्ता (Botanical Survey of India, Calcutta)
13. जूलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया, कलकत्ता (Zoological Survey of India, Calcutta)
14. भारतीय वन प्रबन्ध संस्थान, भोपाल (Indian Institute of Forest Management, Bhopal)
15. भारतीय वन्य जीव संस्थान, देहरादून (Indian Wildlife Institute, Dehradun)
16. पर्यावरणीय सूचना प्रणाली, पर्यावरण विभाग, नई दिल्ली (ENVIS : Environmental Information System, Deptt. of Environment, New Delhi)
17. भारतीय पशु कल्याण बोर्ड, मद्रास (Animal Welfare Board of India, Madras)
18. पद्मजा नायडू हिमालय जूलोजीकल पार्क, दार्जिलिंग (Padmja Naidu Himalayan Zoological Park, Darjeeling)
19. काष्ठ विज्ञान और प्रौद्योगिकी संस्थान, बंगलौर (Institute of Wood Science & Technology, Banglore)
20. शुष्क क्षेत्र वानिकी अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (Institute of Arid Zone Forestry Research, Jodhpur)
21. टाटा इनर्जी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, नई दिल्ली (Tata Energy Research Institute, New Delhi)
22. विश्व वन्य जीव कोष-प्रकृति, नई दिल्ली (World Wildlife Fund for Nature, New Delhi)
23. नेशनल एनवायरमेन्टल इंजीनियरिंग इन्स्टीट्यूट, नागपुर (National Environmental Engineering Institute, Nagpur)
24. फोरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून (Forest Research Institute, Dehradun)
25. बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी, मुम्बई (Bombay Natural History Society, Mumbai)

● वायु, जल और मिट्टी को संरक्षित करने की सामान्य प्रविधियाँ (Simple Techniques to Conserve Air, Water and Soil)

मनुष्य के सुखी जीवन जीने के लिये प्रकृति ने अनेक वस्तुएँ उसे विरासत में दी हैं। उनमें कुछ को सीधे ही और अन्य को उनके आवश्यकतानुसार परिवर्तित रूप में मनुष्य ने अपने काम में लिया है। यह सभी प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources) कहलाते हैं। वायु, जल, मृदा (मिट्टी), वन, वनस्पति, वन्य जीव, खनिज पदार्थ (कोयला, तेल, गैस आदि) सभी इसके अन्तर्गत आते हैं। सभी संसाधनों की अलग-अलग महत्ता है और कमोवेश एक संसाधन दूसरे पर आधारित हैं, लेकिन प्रमुखता के क्रम में वायु, जल और मिट्टी (भोजन उत्पादन हेतु आवश्यक आधार) सबसे ऊपर हैं। इनका संरक्षण कैसे हो ? इस हेतु कुछ सरल प्रकार और प्रविधियाँ यहाँ दी जा रही हैं।

यहाँ संरक्षण (Conservation) के परिवेश में हमारे उद्देश्य (1) वस्तु की सहज उपलब्धता (Easy Availability of the Commodity), (2) स्वच्छता और उपादेयता (Cleanliness and Usefulness) और (3) प्रदूषण रहित (Non-polluted) प्रमुख है। अतः हम अपनी चर्चा इन तीन बिन्दुओं के आधार पर ही करेंगे।

1. वायु संरक्षण (Conservation of Air)

शुद्ध वायु में विभिन्न गैसों का अनुपात, नाइट्रोज़न (78·00 प्रतिशत), ऑक्सीजन (20·95 प्रतिशत), आर्गन (0·93 प्रतिशत), कार्बन डाइऑक्साइड (अब लगभग 0·04 प्रतिशत) तथा अन्य गैसें, धूल के कण और पानी की भाप (0·08 प्रतिशत) आयतन के अनुसार होता है। वायुमण्डल में इसकी मात्रा अथाह है (लगभग 6,250 ट्रिलियन मैट्रिक टन) और इसकी कमी होने की आशंका तो है ही नहीं। केवल यह संसाधन शुद्ध रूप से उपलब्ध हो यही बात प्रमुख है। अतः इसकी अशुद्धता के कारणों का विवेचन करते हुये इसके संरक्षण हेतु सुझाव यहाँ दे रहे हैं।

(अ) रसोईघर के धुएँ से (From the Kitchen Smoke) अपना देश गाँवों का देश है और लगभग इसकी 80% आबादी गाँवों में ही रहती है। अतः देश की आबादी का एक प्रमुख भाग उन परिवारों का है जो परम्परागत तरीके से पुराने, बिना रोशनदान और खिड़कियों के कमरे में खाना बनाते हैं। चूल्हे में आग जलाने हेतु लकड़ी और उपलों का उपयोग करते हैं। इन परिवारों की गृहणियाँ प्रतिदिन जाने कितनी विषैली कार्बन मोनोऑक्साइड गैस और कार्बन के कणों को अपने शरीर में अप्रत्यक्ष रूप से ग्रहण कर अनेक रोगों का शिकार बनती हैं, उसका अनुमान लगाना सहज नहीं है। गुजरात में हुये एक अध्ययन के अनुसार एक गृहणी रसोईघर में लकड़ी से खाना बनाने में प्रतिदिन विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation) द्वारा स्वीकृत न्यूनतम सूक्ष्म कण (SPM : Suspended Particulate Matter) के 40 गुना ग्रहण कर लेती हैं, अथवा तीन घण्टे की अवधि में इतनी विषैली गैस ग्रहण कर लेती हैं जितना बीस सिगरेट पीने से होता है। निश्चित ही इस प्रकार देश की लगभग 20 प्रतिशत आबादी शुद्ध वायु का ठीक से उपयोग ही नहीं कर पाती। इस हेतु यह सुझाव हैं—

(क) रसोईघर बड़े, हवादार, खिड़कियों वाले और रोशनदान सहित होने चाहिये, जिससे धुआँ का अधिकांश भाग इनसे बाहर चला जाये।

(ख) उन्नत किस्म के चूल्हों (निर्धूम चूल्हे) का प्रयोग करने से धुंये के अधिक प्रभाव को कम किया जा सकता है।

(ग) ईंधन के रूप में कोयले को लकड़ी के विकल्प के रूप में उपयोग में लेने से वातावरण कम विषैला होगा।

(घ) बायो गैस का उपयोग करने से प्रदूषण न्यूनतम होगा।

(ब) स्वचलित वाहनों के उत्सर्जन से (From Exhaust of the Automobiles) : वायु प्रदूषण का दूसरा मुख्य कारण स्वचलित वाहनों के साइलैन्सरों से निकलने वाले उत्सर्जक हैं जिनकी दिन-प्रतिदिन देश में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। नगरों में तो लगभग 60 प्रतिशत वायु प्रदूषण तो इन स्वचलित वाहनों से ही आंका गया है। पेट्रोल व डीज़ल से चलने वाले इन वाहनों (कार, जीप, स्कूटर, मोपेड, मोटर साइकिल, बस, ट्रक, टैम्पो आदि) से निकलने वाले प्रदूषक कई हैं जिनमें कार्बन मोनोक्साइड (CO), सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (NO_x), अधजले हाइड्रोकार्बन्स (HC) और सूक्ष्म कण (SPM) प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त पेट्रोल से चलने वाले वाहनों से निकलने वाले लैड यौगिक (Lead Compounds) भी बहुत विषैला प्रदूषक है। वायु में मिलकर यह प्रदूषक सारे वायुमण्डल को ही विषैला बना देते हैं। शरीर में श्वसन क्रिया को प्रभावित करते हैं, स्मरण शक्ति को नष्ट करते हैं, कैन्सर जैसी भयानक बीमारी का कारण बनते हैं। वायुमण्डल की आर्द्रता से SO_2 तथा NO_2 तेजाबी वर्षा कर भवन, वनस्पति और जल स्रोतों को नष्ट करते हैं। इनसे बचने हेतु कुछ सुझाव प्रस्तावित हैं—

(क) गाड़ियों के इंजनों की नियमित देखभाल की जाये अथवा कराई जाये। ठीक से ट्यूनिंग होने पर प्रदूषकों की मात्रा में कमी हो जाती है।

(ख) सीसा रहित पेट्रोल (Unleaded Petrol) का वाहनों में प्रयोग किया जाये।

(ग) निजी वाहनों के संचालन को निरुत्साहित कर अधिक से अधिक सार्वजनिक वाहनों का उपयोग किया जाये।

(घ) बाइसिकिल के उपयोग को बढ़ावा दिया जाये।

(स) औद्योगिक संस्थानों के उत्सर्जन से (Exhaust from Industrial Works) : अनेक प्रकार की इण्डस्ट्रीज, फैक्टरियाँ और संस्थान अपनी चिमनियों से जो उत्सर्जन करती हैं, उनमें उन उद्योगों के कार्य में आने वाले पदार्थों के सूक्ष्म कण, गैसें आदि निकलती हैं। वह सूक्ष्म कण आस-पास के वायुमण्डल को प्रदूषित करते हैं और वनस्पति और कृषि क्षेत्र को हानि पहुँचाते हैं। सीमेण्ट के कारखाने, खाद बनाने के कारखाने और तापीय विद्युत संयत्र आदि उनमें से कुछ उदाहरण हो सकते हैं। कीटनाशी दवाइयों की फैक्टरियाँ, टैक्सटाइल उद्योग भी उनमें गिने जा सकते हैं जो वायु को निरन्तर प्रदूषित करते हैं। इन हेतु यह उचित है कि,

(क) उद्योगों के स्थापित करते समय ही उनके साथ प्रदूषण नियन्त्रण यन्त्र लगाये जाने चाहिये।

(ख) विषैले उद्योगों को रिहाइश से बहुत दूर स्थापित करना चाहिये।

(ग) चिमनियों की ऊँचाई में वृद्धि करनी उचित है जिससे नीचे के वायुमण्डल के प्रदूषण को कम किया जा सके।

(द) कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता से (Due to Excess of Carbon dioxide) : वायुमण्डल में एक निश्चित अनुपात में कार्बन डाइऑक्साइड के रहने से प्रकृति का सन्तुलन (ऑक्सीजन का कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तन और पुनः कार्बन डाइऑक्साइड का ऑक्सीजन में परिवर्तन) बना रहता है। इसका माध्यम बनते हैं वनस्पति, पेड़ और हरियाली। लेकिन निरन्तर जनसंख्या में वृद्धि, विभिन्न उद्योगों के माध्यम से निकलने वाली गैसें और परम्परागत ईंधन के दहन से निरन्तर कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा वायुमण्डल में बढ़ती जाती है। इससे भू-तापन (Global Warming) बढ़ने लगा है। वैज्ञानिकों को यह आशंका है कि CO_2 की अधिक मात्रा से वायुमण्डल के अधिक गर्म होने से ध्रुवों की बर्फ पिघल कर महासागरों की ऊँचाई में वृद्धि न कर दे जो विश्व के अनेक भू-भागों को जल मग्न कर सकता है। अतः इस हेतु—

(क) बढ़ती आबादी को रोका जाये।

(ख) खूब वृक्ष लगाये जायें जिससे बढ़ती CO_2 के दुष्परिणामों को रोका जा सके।

(ग) जीवाश्म ईंधन (Fossils Fuel) के उपयोग को कम किया जाये। इससे CO_2 का निर्माण कम होगा।

2. जल संरक्षण (Conservation of Water)

प्राणीमात्र के जीवन के लिये वायु के बाद जल ही वह महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है जिसके बिना उसका रहना सम्भव नहीं है। जहाँ तक इसकी भू-मण्डल में मात्रा की बात है वह इतनी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है कि उसकी कभी कोई कमी की आशंका का प्रश्न ही नहीं है। भूगोल वेत्ताओं के अनुसार पृथ्वी पर कुल जल 1460 मिलियन घन किमी है, लेकिन यह सभी जल न पीने योग्य है और न ही अन्य कार्य हेतु इसका उपयोग हो सकता है। 93 प्रतिशत जल सागर/महासागरों में खारा है; 2 प्रतिशत बर्फ के रूप में ध्रुवों पर है। भूगर्भ में 4·1 प्रतिशत तथा शेष 0·9% सतही जल मिट्टी की आर्द्रता और वायु में जलवाष्प के रूप में है। केवल पीने के योग्य पानी की मात्रा, जो वाष्पीकरण (Evaporation) तथा निर्जलन (Precipitation) प्रक्रिया से पृथ्वी पर उपलब्ध होती है, 37,000 घन किमी वार्षिक है।

यद्यपि यह उपर्युक्त जल की मात्रा कम नहीं है और वर्तमान में हम इसकी आधी मात्रा भी उपयोग नहीं कर रहे हैं, लेकिन समस्या यह है कि इस जल का वितरण पूरे विश्व में समान नहीं है। कुछ देश पर्याप्त जल प्राप्त कर पाते हैं, वहीं अनेक देश जल के अभाव से अत्यन्त ग्रस्त और त्रस्त हैं। खाद्यान्न और वनस्पति उत्पादन के ही लिये नहीं बल्कि कुछ देशों में तो पीने के पानी तक की इतनी कमी हो जाती है कि उसकी व्यवस्था उन्हें अन्य देशों से उपलब्ध कराकर अथवा विशेष विधियों से अनुपयुक्त पानी को पीने के योग्य बनाकर की जाती है।

भारत विश्व का सबसे अधिक वर्षा वाले देशों में द्वितीय स्थान रखता है (ब्राजील विश्व का सर्वाधिक वार्षिक वर्षा वाला देश है), जहाँ 1150 मिमी वार्षिक वर्षा होती है और जिससे लगभग 400

मिलियन हेक्टेयर मीटर (400 mham) पानी इस देश की सतह पर पड़ता है, लेकिन हमारा दुर्भाग्य यह है कि इसका केवल ¼ भाग पानी का ही हम मुश्किल से उपयोग कर पाते हैं। शेष पानी समुद्र और महासागरों में जा मिलता है। इसके अतिरिक्त पानी के असमान वितरण से भी देश में पानी की अनेक स्थानों पर भारी कमी है। अतः पानी का भण्डारण और उसका उचित संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। इसी के साथ पानी के दुरुपयोग अथवा किसी भी प्रकार से नष्ट होने को भी रोका जाना बहुत जरूरी और महत्त्वपूर्ण है। इन सभी के सन्दर्भ में निम्न बिन्दुओं का अवलोकन करें–

(अ) जल को नष्ट होने से बचाने के लिये–

- अपने घर के नलों को टपकने से रोकें। उपयोग के बाद उन्हें कसकर बन्द करें।
- पानी की टंकियों के भरने पर पानी न बिखरे, इसका ध्यान रखा जाये।
- जल को प्रदूषित न होने दें। इससे शारीरिक व्याधियाँ भी होती हैं और जल भी नष्ट होता है।
- शौचालयों, वाटर हीटर्स आदि के रिसाव को रोकने हेतु तत्काल कार्यवाही करें।
- केवल मनोरंजन के लिये लॉन अथवा टेरेस में फुब्बारे आदि न लगावें। एक बाल्टी पानी प्रति मिनट कम से कम 20 व्यक्तियों की प्यास बुझा सकता है।
- यदि कोई सार्वजनिक नल बह रहा हो अथवा पाइप लाइन टूट कर पानी बिखेरती हो तो तत्काल सम्बन्धित अधिकारी को सूचित करें।

(ब) जल के दुरुपयोग को रोकने तथा कम करने के लिये–

- ऐसे शौचालयों का उपयोग करें जिनमें कम पानी की आवश्यकता हो।
- मंजन करते अथवा शेव करते समय चलते नल का उपयोग न करें; यह कार्य एक गिलास अथवा एक लोटे जल से सम्पन्न हो सकता है।
- स्नान के लिये फोहारे का उपयोग न करें; सामान्यतया एक बाल्टी से नहाना सम्भव है।
- रसोई के पानी का उपयोग किचन गार्डन में करें।
- जहाँ सामान्य पोंछने से काम चल सकता हो, वहाँ धोने की आदत हटायें; कमरे, गलियारे, मोटर वाहन आदि इस दुरुपयोग के उदाहरण हैं।
- लॉन के मेन्टीनेन्स हेतु आवश्यकतानुसार ही पानी का उपयोग करें; प्रातःकाल के समय में कम पानी से काम चल सकता है।
- घरों में ऐसे पौधे अधिक लगावें जिन्हें कम पानी की आवश्यकता हो।
- डिटरजेन्ट की बजाय कपड़े धोने के लिये सामान्य साबुन का उपयोग करें।
- बाढ़ लगाकर खेती करने से बहुत से पानी को रोककर उसका उपयुक्त उपयोग कर सकते हैं। फुब्बारे पद्धति से भी पानी की बचत होती है।

(स) जल को संरक्षित रखने के लिये–

- वर्षा के पानी को एकत्र कर टांके में रखकर उसका वर्षपर्यन्त उपयोग किया जा सकता है। यह हमारे देश की सदियों से प्रचलित प्राचीन प्रथा रही है।
- गाँव की निचली सतहों के क्षेत्र में वर्षा के पानी को रोककर उसे पशुओं के पीने के उपयोग में लिया जा सकता है। इसका रख-रखाव अच्छी तरह करना चाहिये।
- छोटे-छोटे एनीकट बनाकर पानी का खेती में उपयोग करें। एनीकट बनने से पीने के पानी के कुओं में जल स्तर बढ़ जाता है।
- घरों में पानी रखने के लिये ऐसी प्लास्टिक की टंकियों का उपयोग करें जो बजन में हल्की हों और जिनमें धूप और हवा न जा सकती हो। इनमें रखा पानी कई दिनों तक स्वच्छ व पीने योग्य रह जाता है।
- पेड़ों को अधिक से अधिक लगाना व उनकी रक्षा करनी चाहिये। यह पानी में बहती मिट्टी को रोकते हैं, मिट्टी में जल संरक्षण हेतु सहायक होते हैं और स्वच्छ पानी को आश्वस्त करते हैं।
- पानी की भू-जल मात्रा, भूमण्डल में उपलब्ध जल का लगभग 4·1 प्रतिशत है। इसका न अधिक दोहन करें और न इसे प्रदूषित करें। यह प्रकृति द्वारा संरक्षित जल प्राणी मात्र को विरासत में मिला है। इसे भविष्य के लिये सुरक्षित रखें।

- पीने के जल स्रोतों के आस-पास स्वच्छता रहनी चाहिये तथा इसे सभी प्रकार की गन्दगी से बचाना चाहिये।
- कुओं और तालाबों की नियमित सफाई करनी चाहिये। मिट्टी को नियमित रूप से निकालते रहना चाहिये।

3. मृदा संरक्षण (Conservation of Soil)

पृथ्वी के भूपटल की ऊपरी पतली पर्त, जो पौधे अथवा वनस्पति के उगने का प्राकृतिक माध्यम बनती है, मृदा (Soil) कहलाती है (Soil may be defined as a thin layer of earth's crust which serves as a natural medium for the growth of plants and vegetation)। स्पष्ट है कि यह सीमित भी है और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भी, क्योंकि पृथ्वी पर बसने वाले प्राणी (मनुष्य, पशु एवं अन्य जीव-जन्तु) अपने जीने के लिये आहार इसी पर उत्पन्न करते हैं अथवा इससे पाते हैं। इसकी रचना का आधार ठोस चट्टानें (Solid Rocks) हैं जिन पर भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं से मृदा का निर्माण होता है। **भौतिक क्रियाओं** में तापक्रम (Temperature), जल (Water : Torrential Rains and Flowing Water), वायु (Wind) और पौधों और पशुओं के अवशेष (Remains of Plants and Animals) होते हैं तथा **रासायनिक क्रियाओं** में निर्जलन एवं जलयोजन (Dehydration & Hydration), जल अपघटन (Hydrolysis), कार्बनीकरण (Carbonation), ऑक्सीकरण (Oxidation) और अपचयन (Reduction) मुख्य पद होते हैं।

1. मिट्टी अथवा मृदा जिसके विषय में हम यहाँ चर्चा कर रहे हैं, वह जमीन की सतह से लगभग 15 सेमी (6 इंच) नीचे तक का वह भूमि भाग है जो विशेष प्रकार की व्यवस्था तथा पदार्थों से निर्मित होता है। इसके मुख्य चार भाग होते हैं, (1) खनिज : 45% (Minerals : 45%), (2) कार्बनिक पदार्थ : 5% (Organic Matter : 5%), (3) जल : 20-30% (Water : 20-30%) और (4) वायु : 20-30% (Air : 20-30%), जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न है–

(अ) खनिज (Minerals) : मृदा में इनकी संख्या और मात्रा का अनुमान प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक **'मैल्हर्बी'** (Malherbe)[1] ने निम्न प्रकार दिया है–(1) ऑक्सीजन : 49·20% (Oxygen : 49·20%), (2) सिलिकोन : 25·67% (Silicon : 25·67%), (3) अल्युमिनियम : 7·50% (Aluminium : 7·50%), (4) लोहा : 4·71% (Iron : 4·71%), (5) कैल्सियम : 3·39% (Calcium : 3·39%), (6) मैग्नीशियम : 1·93% (Magnesium : 1·93%), (7) सोडियम : 0·11% (Sodium : 0·11%), (8) पोटैशियम : 0·06% (Potassium : 0·06%), (9) फास्फोरस : 0·11% (Phosphorous : 0·11%), (10) गन्धक : 0·06% (Sulphur : 0·06%), तथा (11) अन्य : 7·26% (Others : 7·26%)। इन खनिजों में उत्पादन शक्ति होती है जो आवश्यकतानुसार स्वतः ही उपयोग में आती हैं। जिस मिट्टी में इनकी मात्रा कम होती है उसकी पूर्ति फिर अतिरिक्त प्रकार से की जाती है।

(ब) कार्बनिक पदार्थ (Organic Matter) : मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ पौधे और पशुओं के नष्ट हुये अवशेष से बने होते हैं और यह खनिजों के साथ मिलकर मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि करते हैं। इसके अतिरिक्त भी यह मृदा के कणों को बाँधने, जल व पोषक तत्त्वों को अपने आप में रोकने और उत्पादन क्रिया में आवश्यकतानुसार कार्बनिक तत्त्वों को देते रहने का महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं।

(स) मृदा जल (Soil Water) : मृदा की संरचना में जो सूक्ष्म मिट्टी के कण होते हैं उनके मध्य स्थान रहता है। उसमें विद्यमान जल, मृदा जल (Soil Water) के नाम से जाना जाता है जिसकी मात्रा 20 से 25 प्रतिशत तक होती है। इस जल के दो मुख्य कार्य होते हैं–(1) पौधों के पोषक तत्त्वों के लिये यह वाहक का कार्य करता है, क्योंकि मृदा के महत्त्वपूर्ण खनिज और कार्बनिक पदार्थों का यह घोलक (Solvent) है और (2) यह तापक्रम को उत्पादन के अनुकूल बनाये रखता है।

(द) मृदा वायु (Soil Air) : मृदा के सूक्ष्म कणों के मध्य जो भाग पानी (जल) से मुक्त रहता है वहाँ वायु रहती है। इसकी मात्रा का अनुपात भी 20 से 30 प्रतिशत तक होता है। मृदा वायु में ऑक्सीजन का उपयोग और कार्बन डाइऑक्साइड का निष्कासन की क्रियाएँ निरन्तर गतिशील रहती हैं और जल के साथ यह पौधों की वृद्धि को संचालित करती हैं।

---

1. **I. De. V. Malherbe, Soil Fertility, London, Oxford University Press : Quoted by V. T. Subbiah Mudalior in Principles of Agronomy, chapter I, The formation of Soil : page 5 (Banglore : India, The Banglore Printing & Publishing Co., Ltd., 1984), pp. 566.**

2. मृदा का वह भाग, जिसे हम भूपटल की ऊपर पतली पर्त (thin top layer) कह रहे हैं, में मिट्टी के सूक्ष्म कणों की स्थिति की जानकारी निम्न सारणी से प्राप्त की जा सकती है–

सारणी 24·3
मृदा वर्ग कण का वर्गीकरण

क्र० सं०	मृदा वर्ग कण	व्यास मिमी में
1.	मोटी रेत (Coarse Sand)	0·2 से 2·0 मिमी तक
2.	बारीक रेत (Fine Sand)	0·02 से 0·2 मिमी तक
3.	सिल्ट (Silt)	0·002 से 0·02 मिमी तक
4.	मृतिका (Clay)	0·002 से कम

इस वर्गीकरण से सबसे सूक्ष्म कणों वाला भाग सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी होता है जो क्रम से गिरता जाता है। मृतिका (Clay) के ऊपरी एक इंच (2·5 सेमी) पर्त के निर्माण में सैकड़ों वर्ष का समय लगता है, जो हमारी त्रुटियों अथवा नासमझी से मिनटों में नष्ट हो जाता है। प्रकृति प्रकोप (तेज हवा, तेज वर्षा व पानी का बहाव) से भी इस महत्त्वपूर्ण मिट्टी (मृदा) का नाश होता है जो हमारे बस के बाहर है।

विश्व के कुल धरातलीय क्षेत्रफल का लगभग एक-चौथाई भाग ही भूमि है। इसमें भी आधे से अधिक भाग ध्रुवीय क्षेत्र, मरुस्थल, पर्वतीय भाग एवं दलदल अथवा बंजर भूमि है। वन क्षेत्र के अतिरिक्त लगभग पृथ्वी के क्षेत्रफल का केवल 2 प्रतिशत भाग ही ऐसा है जो कृषि योग्य है और जिस पर विश्व की तीन-चौथाई आबादी खाद्य पदार्थों हेतु निर्भर है। अतः कृषि योग्य भूमि की महत्ता का अनुमान ऊपर की भूमि उपलब्धंता से सहज ही लगाया जा सकता है और उस भाग की मिट्टी, जो उत्पादन का आधार है, की सुरक्षा और संरक्षा हेतु जिम्मेदारी का अहसास किया जा सकता है।

भारत का सतही क्षेत्रफल 329 मिलियन हेक्टेअर है, जिसमें से 266 मिलियन हेक्टेअर भूमि का उत्पादन हेतु उचित उपयोग किया जा सकता है (शेष भूमि या तो बंजर है अथवा अन्य कार्यों हेतु उसका उपयोग हो रहा है)। लेकिन हमारे देश का दुर्भाग्य यह है कि इस 266 मिलियन हेक्टेअर भूमि में से 91 मिलियन हेक्टेअर भूमि को अधिकारिक रूप से वन क्षेत्र में ले लिया गया है और शेष 175 मिलियन हेक्टेअर भूमि किसी न किसी प्रकार के मृदा ह्रास से ग्रसित है–

जल और वायु क्षरण (Water and Wind Erosion) से ग्रसित भूमि	–	150 मिलियन हेक्टेअर
जल मग्नता (Water Logging) से ग्रसित भूमि	–	6 मिलियन हेक्टेअर
लवणीय तथा क्षारीय (Salinity & Alkalinity) दोष से ग्रसित भूमि	–	7 मिलियन हेक्टेअर
परवर्तित कृषि (Shifting Cultivation) से ग्रसित भूमि	–	3 मिलियन हेक्टेअर
अन्य प्रकार (Other Factors) से प्रभावित भूमि	–	9 मिलियन हेक्टेअर

3. इस भूमि के संरक्षण एवं इसे इस योग्य बनाने कि जिससे अधिक से अधिक उत्पादन हो सके, कुछ सुझाव दिये जा रहे हैं–

1. अधिक से अधिक वृक्ष लगाये जाने चाहिये; वृक्ष मिट्टी को बाँधते हैं, वर्षा जल के प्रवाह को नियमित करते हैं जिससे मिट्टी में पानी को रोकने की क्षमता बढ़ जाती है।
2. पर्वतीय ढलानों पर मिट्टी को बहने से रोकने के लिये कन्टूर पद्धति (Contour Practice) का उपयोग किया जाना चाहिये।
3. परिवर्तित कृषि (Shifting Agriculture) को स्थाई कृषि (Settled Agriculture) रूप में बदला जाये।
4. रासायनिक खादों तथा कीटनाशी दवाइयों का केवल आवश्यकतानुसार ही उपयोग करें। अधिक पैदावार का लालच छोड़ें।

5. कृषि उत्पादन क्षमता को बनाये रखने हेतु सभी उपाय काम में लेवें। कार्बनिक खादों का अधिक उपयोग करें।
6. कृषि भूमि को प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों से दूर रखें।
7. भूमि अपरदन (Soil Erosion) के रोकने हेतु सभी सम्भावित उपाय अपनाने चाहिये।

(i) शस्य विज्ञानीय उपाय (Agronomic Measures)—

- वायु क्षरण रोकने हेतु खेत के चारों ओर रक्षक पंक्ति के रूप में वृक्ष लगाना; खरपतवार आदि अन्य वनस्पतियों की सहायता से सुरक्षा पंक्तियाँ (Shelter Belts) बनाना।
- खेत के चारों ओर मेड़ लगाना।
- ढलान के प्रतिकूल जुताई करना।
- वर्षा के अधिक पानी को इस प्रकार निकालना जिससे मृदा न बह पाये।
- पशुओं द्वारा नियन्त्रित चराई पद्धति अपनायें।
- दाल वाली फसलों को उगाना; इससे मृदा की उर्वरता में वृद्धि होती है।
- मिश्रित खेती (Mixed Cropping) करना; पट्टीदार खेती (Strip Cropping) करना।

(ii) अभियान्त्रिकी उपाय (Mechanical or Engineering Methods)—

- भूमि को समतल बनाकर पानी के वेग को कम करना।
- लम्बे ढलान वाली भूमि को छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित कर कम ढलान की स्थिति बनाना।
- छोटे बाँध (Anicuts) बनाकर पानी और मिट्टी को रोकना।

(iii) वानिकी सम्बन्धी उपाय (Forestry Measures)—

- मृदा की उर्वरता बनाये रखने हेतु फसलों को बदल कर बोना।
- मिट्टी में जल की मात्रा को आवश्यकतानुकूल बनाये रखना।
- सम्भावित कटाव क्षेत्र के आस-पास सघन झाड़ियाँ व घास की रोपाई करना।
- मृदा के pH की जानकारी कर भूमि की विशेषतानुसार फसलों की बुवाई करना।

● पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में एक सामान्य व्यक्ति (परिवार) की भूमिका क्या हो? (What should be the Role of a Common Man (Family) with reference to Environmental Conservation?)

पर्यावरण के सन्दर्भ में जितनी भी बातें कही गई हैं उन सबसे कुछ पिछले मानव इतिहास की जानकारी मिलती है; वर्तमान स्थिति का भान होता है और भविष्य की भयावह स्थिति का चित्रण हमारे सामने उतरता है। इन सभी का समेकित लेखा-जोखा कुछ इस प्रकार का दिखता है—

1. इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में 6 अरब से अधिक व्यक्ति इस पृथ्वी पर होंगे; उनको रहने, काम करने, खेती उगाने, उद्योग धन्धे चलाने को भूमि चाहिये और उपयोग में लाने हेतु विभिन्न प्राकृतिक संसाधन जो अब सीमित ही नहीं बल्कि निरन्तर कम होते जा रहे हैं।
2. बढ़ती आबादी ने पृथ्वी पर के संसाधनों को समाप्त प्रायः ही नहीं कर दिया है बल्कि उन्हें प्रदूषित भी किया है जिससे प्राणीमात्र के अस्तित्व को खतरा हो गया है।
3. अधिक अन्न उपजाने की विवशता ने रासायनिक खादों और कीटनाशी दवाइयों का प्रयोग इस स्तर तक बढ़ा दिया है कि उत्पाद विषैले हो गये हैं। किसानों के गलत तरीकों से भोजन श्रृंखला का क्रम बिखरने लगा है जिसका पूरे पर्यावरण पर असर पड़ा है।
4. मनोरंजन और व्यावसायिक लालच ने वन्य जीवों का जीवन खतरे में डाल दिया है। चीता, हाथी, गेंडा, मगरमच्छ, साँप और न जाने कितने वन्य जीव लुप्त प्रायः हो चले हैं।
5. वनों की अधिक कटाई ने जल चक्र को प्रभावित किया है। वर्षा कम होने लगी है; पेड़ों के कम होने से भूमि-क्षरण बढ़ गया है और पीने के पानी की कमी हो रही है।
6. क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स और एरोसोल के छिड़काव से ओजोन पर्त का ह्रास हो रहा है; जिसके फलस्वरूप सूर्य से अल्ट्रावायलेट किरणें पृथ्वी पर आकर त्वचा कैन्सर का कारण बन रही हैं।
7. जीवाश्म ईंधन के प्रयोग ने वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि की है। चूँकि वनों की कमी से उपयुक्त CO_2 की मात्रा का अवशोषण नहीं हो पाता, अतः इससे 'ग्रीन हाउस

प्रभाव' (Greenhouse Effect) के कारण पृथ्वी का तापमान निरन्तर बढ़ रहा है। आशंका है इससे ध्रुवों की बर्फ पिघलकर महासागरों के जल स्तर में वृद्धि करेगी और पृथ्वी के अनेक भाग जलमग्न हो जायेंगे।

8. स्वचलित वाहनों के साइलैन्सरों से निकलने वाले विषैले उत्सर्जन पदार्थ से वायुमण्डल प्रदूषित हो गया है। लोगों को अनेक श्वांस सम्बन्धी बीमारियों का शिकार होना पड़ रहा है। तेजाबी वर्षा से भवन, जल स्रोत और वनस्पति नष्ट हो रहे हैं।
9. औद्योगिक संस्थान जल और वायु दोनों को बेरहमी से प्रदूषित कर रहे हैं।
10. विभिन्न प्रकार के अवशिष्टों (Wastes) की निस्तारण प्रक्रिया पर्याप्त नहीं है। रेडियोधर्मी अवशिष्ट सदियों तक मानव जाति को प्रभावित करते रहेंगे। प्लास्टिक के उपयोग ने प्रदूषण के क्षेत्र में हड़कम्प मचा रखा है, क्योंकि सामान्यतया यह नष्ट नहीं हो सकते।
11. विविध प्रकार के पर्यावरण जन-चेतना के कार्यक्रम पर्याप्त नहीं हैं और किसी भी स्तर पर प्रशासन आम जनता को पर्यावरण की सुरक्षा के कार्य में रुचि लेने में सफल नहीं हो सका है।
12. प्रकृति के कार्यकलापों से भी सामान्य लोग भली-भाँति परिचित नहीं हैं, अतः वह अनजाने ही उससे छेड़-छाड़ कर प्राकृतिक असन्तुलन को बढ़ावा दे रहे हैं। अतः अप्रत्यक्ष रूप से जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) में कमी आ रही है।
13. ऊर्जा की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्र में है। सीमित मात्रा के बावजूद ऊर्जा का दुरुपयोग हो रहा है; इसे विलासिता, मनोरंजन और प्रदर्शन के लिये उपयोग करना अनैतिक आचरण है।
14. महासागर हमें अप्रत्यक्ष रूप से अधिक संसाधन उपलब्ध कराते हैं, जिनमें ऑक्सीजन, वनस्पति और जन्तु प्रमुख हैं। इनको प्रदूषण से बचाना बहुत आवश्यक है।

• हरित परिवार की अवधारणा (The Green Family Concept)

इन समस्त बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुये एक सामान्य परिवार के लिये **'हरित परिवार की अवधारणा'** (The Green Family Concept) प्रस्तावित की गई है। ऐसा विश्वास है कि इससे बहुत अधिक प्रतिशत पर्यावरण की समस्याओं से छुटकारा मिलेगा और पर्यावरण संरक्षण को गति मिलेगी। वह प्रस्तावित बिन्दु निम्न हैं—

1. अपने परिवार को नियोजित करें और इस प्रकार राष्ट्रीय योजना में सहयोग करें।
2. जल का बुद्धिमता से प्रयोग करें। नष्ट होने या दुरुपयोग होने के सभी कारणों को समाप्त करें; घर के रिसते नलों की मरम्मत करायें। जल स्रोतों को प्रदूषण से बचायें।
3. प्रतिवर्ष अपने घर अथवा अपने आस-पास में दो वृक्ष लगायें, उनकी समुचित देखभाल करें; किसी उगते वृक्ष को कटने अथवा नष्ट होने से बचायें। इससे अनेक दिशाओं में पर्यावरणीय लाभ होगा।
4. पशु-पक्षियों पर अत्याचार न करें।
5. अनचाही बत्तियाँ और पंखे/कूलर आदि न चलायें। गर्म पानी और रसोई हेतु सौर ऊर्जा का उपयोग करने की बात सोचें।
6. घर के कूड़े-करकट को व्यवस्थित कर उसका उपयोगिता की दृष्टि से निस्तारण करें। कार्बनिक खाद का बगीचे में उपयोग हो सकता है।
7. छोटी दूरी के लिये साइकिल का उपयोग करें।
8. प्राकृतिक पर्यावरण से छेड़-छाड़ न करें। मानवकृत पर्यावरण आपकी सुविधा के लिये है, उसके दास भी न बनें और न ही उसे पर्यावरण विकृति का कारण बनायें।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'पर्यावरण संरक्षण' से क्या अभिप्राय है ? किन-किन वस्तुओं को आप संरक्षण हेतु प्राथमिकता देंगे ? बताइये।

2. 'धर्म' का 'पर्यावरण संरक्षण' से सम्बन्ध बताते हुये किसी एक धर्म का उदाहरण दीजिये।
3. 'पर्यावरण संरक्षण' में घर की भूमिका का उल्लेख कीजिये।
4. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कौन-कौन सी संस्थाएँ 'पर्यावरण संरक्षण' में अपना सक्रिय योगदान दे रही हैं ? सामान्यता यह संस्थाएँ क्या करती हैं ?
5. एक सामान्य व्यक्ति 'पर्यावरण संरक्षण' के लिये न्यूनतम क्या कर सकता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. जैन धर्म के अनुयायी पर्यावरण संरक्षण के लिये क्या करते हैं ?
7. राजनीति कैसे पर्यावरण संरक्षण को हतोत्साहित कर देती है ?
8. गाँवों में रसोई के विषैले धुएँ से कैसे बचा जा सकता है ?
9. 'पर्यावरण संरक्षण' में मिट्टी की उपयोगिता बताइये।
10. जल के बुद्धिमतापूर्ण उपयोग के कुछ उदाहरण देवें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'ग्रीन हाउस प्रभाव' के लिये उत्तरदायी मुख्य गैस है—
    (अ) ऑक्सीजन (ब) ओजोन
    (स) नाइट्रोजन (द) कार्बन डाइऑक्साइड
12. भगवान शिव से संबंधित वृक्ष का नाम क्या है ?
    (अ) वट (ब) पीपल
    (स) बेल (द) गूलर
13. हिन्दू धर्म में 'शेर' को वाहन के रूप में किस देवी/देवता ने स्वीकार किया है ?
    (अ) सरस्वती (ब) लक्ष्मी
    (स) शीतला माता (द) दुर्गा
14. ओजोन पर्त के विनाश से प्राणी मात्र को किस रोग का भय है ?
    (अ) ब्रोन्काइटिस (ब) त्वचा कैन्सर
    (स) अस्थमा (द) मेनिन्जाइटिस
15. राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं की संख्या कितनी है ?
    (अ) 10 (ब) 15
    (स) 20 (द) 20 से अधिक

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

16. वायु, जल और..................प्राणी मात्र को प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं।
17. विश्व वन्य कोष (WWF) का केन्द्रीय कार्यालय..................में है।
18. पृथ्वी पर वायु की कुल मात्रा..................ट्रिलियन मैट्रिक टन आँकी गई है।
19. भारत में वर्षा का निरन्तर कम होने का मुख्य कारण..................है।
20. मिट्टी की उर्वरक शक्ति की वृद्धि के लिये..................खाद का उपयोग अधिक श्रेष्ठ रहता है।

25

पर्यावरणीय सुरक्षा एवं सुधार (अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर)

[ENVIRONMENTAL PRESERVATION AND IMPROVEMENT (AT INTERNATIONAL LEVEL)]

• प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी देश के जनसंख्या विशेषज्ञ, जिन्हें सामान्यतया अंग्रेजी के प्रचलित नाम डेमोग्राफर्स के नाम से जाना जाता है, उस देश की घटती-बढ़ती जनसंख्या तथा देश में उपलब्ध विभिन्न संसाधन, भौगोलिक स्थिति, लोगों का रहन-सहन और रीति-रिवाज के आधार पर यह आधिकारिक रूप से बताने में सक्षम होते हैं कि अगले वर्षों में इस देश की क्या स्थिति होगी ? कौन-सी विपदायें या घटनायें आने वाली या घटित होने वाली हैं और उनका देशवासियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? उनका यह सामाजिक दायित्व होता है कि वे देश के शासन को सभी वस्तुस्थितियों से अवगत करा दें। निःसन्देह इस प्रकार के निर्णय में जनसंख्या की बहुत अधिक भूमिका होती है।

कई अमेरिकन डेमोग्राफर्स ने विश्व की पिछले 10 हजार वर्षों में पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों की संख्या में निरन्तर हो रही वृद्धि के आधार पर यह निश्चित रूप से आगाह किया था कि बीसवीं सदी की जनसंख्या वृद्धि अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म देगी। कल्पना करें विश्व की एक अरब जनसंख्या होने में 10,000 वर्षों से भी अधिक लगे, जबकि अब लगभग 12-13 वर्षों में एक अरब मानव पुत्र इस पृथ्वी पर आ उतरते हैं। चूँकि वर्तमान में पर्यावरण के विभिन्न घटकों की जानकारी अब सभी स्तर पर हो चुकी है, अतः इस वृद्धि से पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा इसे बताने में अब कोई मानसिक योग्यता की आवश्यकता नहीं।

असामान्य जन-वृद्धि के कारण प्रकृति से विशुद्ध रूप से मिल रहे विरासत के संसाधनों में कमी आने लगी और फिर मूर्खता से उपयोग करने पर प्रदूषण होने लगा। आवास हेतु घने जंगल कटे, वन-क्षेत्र कम हो गये, प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ने लगा। अमीर व विकसित देश अपने पैसे के बल पर अधिक सामग्री/सुविधा का उपयोग करने लगे तो विकासशील व अविकसित देश इस कदर पिछड़ गये कि वहाँ के लोगों को मूलभूत आवश्यकताएँ—जल, वायु और भोजन की पूर्ति भी नहीं हो सकी। पूरे विश्व में पर्यावरणीय संकट गहरा गया।

अधिक साधन जुटाने हेतु औद्योगीकरण में वृद्धि आवश्यक हो गई तो अनेक प्रकार की ऐसी भयावह घटनायें घटने लगीं कि जिनसे सामान्यतया बच पाना कठिन था। पिछले 50 वर्षों में घटित हुई कुछ घटनाओं का अवलोकन करें—

1. सन् 1940 में लौस-ऐंजिल्स (अमेरिका) शहर की एक शाम और सारा शहर धुएँ के बादलों से ढँक गया। पहले थोड़ी बेचैनी, फिर घबराहट और बाद में साँस लेने की कठिनाई। अनुमान है कि इस अप्रत्याशित धुएँ के आवरण ने उस रात कई हज़ार लोगों की जानें लीं।

2. सन् 1952 में लंदन (इंग्लैण्ड) में हुए इसी प्रकार के घटनाक्रम में लगभग 5000 व्यक्तियों की जानें गई। इसे London Episode of SMOG अथवा' स्मोग घटना' के नाम से जाना जाता है। एक शाम उद्योगों और कारखानों से निकलते धुएँ तथा वायुमण्डल के पानी की आर्द्रता से कुहरे की पर्त पूरे लंदन शहर पर छा गई और वही घबराहट और बेचैनी तथा श्वाँस अवरोध ने अनेक जीवन लीलाएँ समाप्त कीं।
3. जापान में एक मिनीमाटा नाम की खाड़ी है। इसके कई ओर बड़े-बड़े कारखाने लगे हैं। उनमें से एक कारखाने से निकलने वाले जल उच्छिष्ट में 'एल्काइल मरकरी कम्पाउण्ड' की भारी मात्रा खाड़ी के पानी में मिल गई। इस जहरीले पदार्थ से खाड़ी का पानी प्रदूषित हुआ और पानी में रहने वाले अनेक जीव मर गये। यही नहीं बल्कि इस खाड़ी से निकलने वाली मछलियों और जानवरों के भोजन से वहाँ के लोगों को एक खास प्रकार का चकत्ते वाला रोग हुआ, जिसे 'मिनीमाटा रोग' कहा गया। प्रभावित लोग लकवा, हाथ-पैर की जकड़न, मस्तिष्क विकृति, बहरापन, दृष्टिदोष आदि अनेक प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हुए और अनेक लोग मौत के शिकार हुए।

और भी अनेक घटनाएँ हुई होंगी जिनका स्थानीय उल्लेख रहा होगा (भारत की भोपाल गैस दुर्घटना जिसमें लाखों लोग प्रभावित हुए, हजारों मरे, कोई कम खतरनाक उदाहरण नहीं है) लेकिन इन कुछ या अनेक घटनाओं ने संयुक्त राष्ट्र संघ को इस बात के लिए विवश कर दिया कि इस समस्या को सामूहिक रूप से विश्व हित में सुलझाया जाये। **परिणति में सन् 1972 में 'मानव पर्यावरण' पर अन्तर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेन्स का आयोजन स्टाकहोम (स्वीडन) में हुआ। 5 जून से 16 जून, 1972 की अवधि में आयोजित इस कॉन्फ्रेन्स में 100 से अधिक देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया** जिसमें भारत का प्रतिनिधित्व तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्रीमती इन्दिरा गांधी ने किया था। यहीं 26 सूत्री 'महाधिकार-पत्र' (मेग्नाकार्टा) घोषित किया गया जो ऐतिहासिक दस्तावेज बना। इसका संक्षिप्त उल्लेख करना असामयिक न होगा जो सारांश रूप में इस प्रकार है—

● संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की घोषणाएँ : 5-16 जून, 1972
(Declarations Made in the International Conference on 'Human Environment' organised by U. N. : 5-16 June, 1972)

1. मनुष्य अपने पर्यावरण का रचयिता तथा उसे ढालने वाला दोनों ही है जिससे उसे भौतिक स्थिरता तथा बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक और आत्मिक वृद्धि के अवसर मिलते हैं। मानव जाति की लम्बी और टेढ़ी-मेढ़ी विकास यात्रा में अब इस ग्रह (पृथ्वी) पर ऐसी स्थिति आ गई है जब मनुष्य ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की तेज गति के साथ अपने पर्यावरण को अनेक प्रकार से और अपूर्व ढंग से बदलने की शक्ति अर्जित कर ली है। प्रकृतिदत्त तथा मानवकृत दोनों ही प्रकार के पर्यावरण मनुष्य के स्वयं के रख-रखाव, मानव-अधिकार और स्वयं के जीवन अधिकार के उपभोग के लिए आवश्यक हैं।
2. मानव पर्यावरण की सुरक्षा तथा सुधार ऐसे प्रमुख विषय हैं जिनसे पूरे विश्व के लोगों के हित तथा उनके आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। यही पूरे विश्व के लोगों की आवश्यक आकांक्षा और सभी सरकारों का कर्त्तव्य भी है।
3. मनुष्य को अपने अनुभवों को लगातार संगृहीत करते रहना है और साथ ही उन्हें खोज, आविष्कार और नये-नये विचारों से समृद्ध भी करते रहना है। अपने समय में यदि मनुष्य, जिसमें अपने पर्यावरण में परिवर्तन करने की योग्यता है, अपनी बुद्धिमत्ता से उसका उपयोग करता है तो इससे लोगों को विकास के लाभ तथा जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि के अवसर मिल सकते हैं। इसके विपरीत गलत और अविवेक रूप से उपयोग करने पर वही शक्ति मानव तथा मानव पर्यावरण को अपार क्षति पहुँचा सकती है। हमारे सामने पृथ्वी के कई भागों में मानवकृत हानि के ऐसे कई उदाहरण हैं, जैसे—वायु, जल, भूमि और प्राणियों (जीव-जन्तुओं तथा पौधों) में भयानक स्तर पर प्रदूषण, जीव-मण्डल पर पारिस्थितिकी सन्तुलन में भारी तथा अनचाही बाधायें, पुनः उत्पन्न

न हो सकने वाले अनेक संसाधनों की कमी तथा उनका विनाश, मानवकृत पर्यावरण, विशेषकर जैविक और क्रियाशील पर्यावरण में मनुष्य के भौतिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य की भारी गिरावट।

4. विकासशील देशों में बहुत-सी पर्यावरणीय समस्याएँ उनके विकसित नहीं होने के कारण हैं। लाखों लोग अच्छे जीवन के लिए अपेक्षित न्यूनतम स्तर से नीचे स्तर पर रहते हैं, जिनमें पर्याप्त भोजन और कपड़े, आवास और शिक्षा, स्वास्थ्य और सफाई की कमी सम्मिलित हैं। इसलिए विकासशील देशों को अपने विकास के प्रयासों को लोगों की आवश्यकता की प्राथमिकताओं और पर्यावरण सुधार को दृष्टिगत रखते हुए नियंत्रित करना चाहिए। इसी उद्देश्य से उद्योग प्रमुख देशों को विकासशील देशों के मध्य आ रहे ऐसे अन्तर को कम करना चाहिए। उद्योग प्रमुख देशों में पर्यावरणीय समस्याएँ विशेषतः औद्योगिक तथा तकनीकी विकास सम्बन्धी होती हैं।

5. सामान्य जनसंख्या वृद्धि ने पर्यावरण की सुरक्षा के लिए कई समस्याएँ उत्पन्न की हैं, इन समस्याओं को दूर करने के लिए उचित योजनाएँ और उपाय लागू किये जाने चाहिए। विश्व की कुल वस्तुओं में मनुष्य सबसे अधिक मूल्यवान है। वह मनुष्य ही है, जो सामाजिक प्रगति को आगे बढ़ाता है, सामाजिक परम्पराओं की संरचना करता है, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में वृद्धि करता है और अपने कठिन परिश्रम से लगातार मानव पर्यावरण को परिवर्तित करता रहता है। सामाजिक प्रगति और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा उत्पादकता की वृद्धि से मनुष्य दिन-प्रतिदिन पर्यावरण सुधारने में कार्यरत है।

6. अब वह ऐतिहासिक क्षण आ गया है जब हम विश्व स्तर पर पर्यावरणीय परिणामों की दृष्टि से अपने क्रियाकलापों में विवेकपूर्ण परिवर्तन लावें। अपनी अज्ञानता और उपेक्षा से हम पृथ्वी के पर्यावरण को, जिस पर प्राणी मात्र और उनके हित अवलम्बित हैं, बहुत भारी और अपरिवर्तनीय हानि पहुँचा सकते हैं। इसके विपरीत पूरी जानकारी और बुद्धिमत्तापूर्ण कार्यों से हम अपने तथा अपनी सन्ततियों के लिए मानव आवश्यकताओं के अनुरूप तथा आशानुकूल एक अच्छे जीवन के लिए एक अच्छा पर्यावरण भी बना सकते हैं। अच्छा जीवन जीने और पर्यावरणीय गुणवत्ता में वृद्धि के कुछ मोटे सिद्धान्त हैं। आवश्यकता है शांतिपूर्ण मन से सोचने और गम्भीरतापूर्ण तरीके से कार्य करने की। प्रकृति के संसार में स्वतन्त्रतापूर्वक रहने के लिए मनुष्य को प्रकृति के साथ मिलकर एक अच्छा वातावरण बनाने की योग्यता को उपयोग में लाना चाहिए। वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों के लिए मानव पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार ही अब मनुष्य मात्र का आवश्यक लक्ष्य बन गया है; ऐसा लक्ष्य जो विश्वव्यापी आर्थिक और सामाजिक विकास तथा मौलिक और स्थिर शांति के लक्ष्य के साथ समन्वय बिठा सके।

7. इस पर्यावरणीय लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हर स्तर पर नागरिकों और समुदायों तथा सभी संस्थानों और संस्थाओं द्वारा सार्वजनिक प्रयासों में न्यायसंगत भागीदारी के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना होगा। प्रत्येक क्षेत्र और प्रत्येक संस्थान में कार्यरत लोगों को अपनी मान्यताओं और कार्यों से विश्व के भावी पर्यावरण को बदलना होगा। स्थानीय, राज्य स्तरीय सरकारों तथा राष्ट्रीय स्तर सरकार के शासन मण्डलों को व्यापक पर्यावरणीय नीति और अपने अधिकार क्षेत्र में कार्य योजना तैयार करने का भारी भार वहन करना होगा। विकासशील देशों को इस क्षेत्र में अपने उत्तरदायित्व वहन करने को आवश्यक संसाधन जुटाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की भी आवश्यकता रहेगी। बहुत-सी पर्यावरणीय समस्याओं को, क्योंकि वे क्षेत्रीय अथवा सार्वभौमिक विस्तार की हैं या वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक प्रभावशील हैं, परस्पर विभिन्न राष्ट्रों के विस्तीर्ण सहयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की क्रिया विधाओं की आवश्यकता रहेगी। यह कॉन्फ्रेन्स राज्यों और लोगों से सभी लोगों तथा उनकी सन्ततियों की भलाई के लिए मानव पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार हेतु व्यापक प्रयास करने का आग्रह करती है।

इन उपर्युक्त घोषणाओं पर कॉन्फ्रेन्स ने निम्नलिखित 26 सूत्र बहुमत से जारी किये—

1. मानव को ऐसे पर्यावरण में, जिसमें वह सुखी और मर्यादापूर्ण जीवन जी सके तथा जहाँ स्वतन्त्रता, समानता और रहन-सहन की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध हो, जीने का मूलभूत अधिकार है और साथ

ही उसका वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित और सुधारे हुए पर्यावरण को उपलब्ध कराने का महत्त्वपूर्ण दायित्व है। इस सन्दर्भ में रंग-भेद, जातीय पृथक्कीकरण, भेद-भाव, उपनिवेशवादी अथवा अन्य प्रकार की प्रभुसत्ता के प्रकार के रंग-ढंग की किसी भी नीति की निन्दा करनी चाहिए तथा उसे दूर कर देना चाहिए।

2. सतर्कतापूर्ण उचित योजना अथवा व्यवस्था से पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों, वायु, जल, भूमि, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु तथा विशेष रूप से प्राकृतिक पारिस्थितिकी तन्त्र को वर्तमान तथा भावी पीढ़ी की भलाई के लिए सुरक्षित रखना चाहिए।
3. पृथ्वी के संसाधनों को पुनर्निर्मित किये जा सकने वाली उत्पादन क्षमता को बनाये रखना चाहिए और जहाँ तक व्यावहारिक हो, वहाँ उसे पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए।
4. मनुष्य पर वन्य प्राणियों एवं उनके आश्रय-स्थलों की सुरक्षा और विवेकपूर्ण व्यवस्था का उत्तरदायित्व है, जिन्हें अनेक कारणों से भारी खतरा हो गया है। अतः आर्थिक विकास की योजना बनाते समय प्राकृतिक संरक्षण (वन्य जीव सहित) को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए।
5. पुनर्नवीनीकरण न हो सकने वाले पृथ्वी के संसाधनों का इस प्रकार उपयोग किया जाना चाहिए जिससे वह बिल्कुल समाप्त न हो जायें; साथ ही इस बात से भी आश्वस्त होना चाहिए कि उनका लाभ समस्त मानव जाति को मिले।
6. विषैले तथा अन्य ऐसे ही पदार्थों तथा ऊष्मा का उत्सर्जन, जो पर्यावरण को न हानि पहुँचाने की सीमा से अधिक हो, को रोका जाना चाहिए, ताकि पारिस्थितिकी तन्त्र पर कोई गम्भीर आघात न हो। प्रदूषण को रोकने के लिए सभी देशों के लोगों के न्यायोचित संघर्ष को समर्थन मिलना चाहिए।
7. राज्यों को समुद्रों के प्रदूषण को रोकने के लिए, ऐसे सभी पदार्थों पर जिनसे मानव स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है, जो प्राणी तथा समुद्री जीव-जन्तुओं को हानिकारक हों और जिनसे समुद्री उपयोग तथा उसकी रम्यता में बाधा आये, सभी आवश्यक कदम उठाने चाहिए।
8. मनुष्य के अच्छे जीवन स्तर और कार्य करने के पर्यावरण की आश्वस्तता हेतु तथा पृथ्वी पर ऐसी स्थिति बनाने के लिए जिससे जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो, आर्थिक तथा सामाजिक प्रगति आवश्यक है।
9. कम विकास तथा प्राकृतिक प्रकोपों से होने वाली पर्यावरणीय क्षति को दूर करने के लिए विकासशील देशों को, उनके अपने प्रयासों के अतिरिक्त, समुचित वित्तीय तथा तकनीकी सहायता यथासमय तथा आवश्यकतानुसार उपलब्ध होनी चाहिए।
10. पर्यावरणीय व्यवस्था हेतु विकासशील देशों के लिए मूल्यों में स्थिरता तथा प्राथमिकता वाली वस्तुओं और कच्चे माल का सही मूल्य मिलना बहुत आवश्यक है क्योंकि पर्यावरणीय गतिविधियाँ और आर्थिक पक्ष दोनों ही इससे सम्बन्धित हैं।
11. सभी राज्यों की पर्यावरण नीति उन्नतशील होनी चाहिए। न तो उनसे विकासशील देशों के वर्तमान अथवा भविष्य की विकास सम्भावनाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ना चाहिए और न ही उनसे सभी लोगों के अच्छे रहन-सहन को कोई आघात पहुँचना चाहिए। राज्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को कुछ ऐसे कदम उठाये जाने चाहिए, जिनसे पर्यावरणीय गतिविधियों के कार्यों के संचालन से होने वाले राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिणामों की पूर्ति हेतु आपसी समझौता हो सके।
12. विकासशील देशों को उनकी स्थिति तथा विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप पर्यावरणीय सुरक्षा और सुधार के कार्यों के लिए साधन-सुविधायें उपलब्ध करानी चाहिए तथा उनकी प्रार्थना पर ही उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय तकनीकी और वित्तीय सहायता भी उपलब्ध होनी चाहिए, जिससे वे अपनी विकास योजना बनाते समय पर्यावरणीय सुरक्षा को उचित स्थान दे सकें।
13. पर्यावरणीय सुधार के अन्तर्गत संसाधनों का विवेकपूर्ण प्रबन्ध हो सके, इस हेतु राज्यों को अपनी विकास योजनाओं के निर्माण करते समय ऐसी समग्र और व्यापक दिशा रखनी चाहिए, जिससे लोगों के लाभ के लिए बनाये जाने वाले मानव पर्यावरण के सुरक्षा और सुधार कार्यक्रमों तथा विकास के बीच समुचित तालमेल रह सके।

14. विकास और पर्यावरणीय सुरक्षा और सुधार की आवश्यकताओं के मध्य होने वाले किसी भी विवाद को विवेकपूर्ण तरीके से सुलझाया जा सकता है।
15. मानव आबादी और शहरीकरण के लिए इस प्रकार की योजना तैयार की जानी चाहिए जिससे पर्यावरण को हानि पहुँचाये बिना सभी को अधिकतम सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय लाभ मिल सके। इस सन्दर्भ में उपनिवेशवादी और जातिवादी श्रेणी के लिए तैयार किये गये कार्यक्रमों को छोड़ देना चाहिए।
16. उन स्थानों (क्षेत्रों) में जहाँ अधिक आबादी पर्यावरण अथवा विकास पर विपरीत प्रभाव डालती हो अथवा जहाँ कम आबादी विकास और पर्यावरणीय सुधार को रोकती हो, वहाँ पर मूल मानव अधिकारों के लिए बिना पक्षपात वाली डैमोग्राफर्स द्वारा सुझाई गई नीति राज्यों द्वारा अपनाई जानी चाहिए।
17. पर्यावरणीय गुणवत्ता में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए पर्यावरणीय संसाधनों की योजना, व्यवस्था और नियन्त्रण कार्य का उत्तरदायित्व राज्यों को किसी राष्ट्र स्तरीय संस्था को सौंप देना चाहिए।
18. आर्थिक और सामाजिक विकास में योगदान देने वाली विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को पर्यावरणीय संकटों के निदान, बचाव और नियन्त्रण तथा पर्यावरणीय समस्याओं के हल जानने और लोगों की भलाई के लिए उपयोग में लाना चाहिए।
19. मानव हित में पर्यावरणीय सुरक्षा और सुधार के लिए विभिन्न व्यक्तियों तथा संस्थाओं में विस्तृत दृष्टिकोण बनाने के लिए बच्चे, बड़े और उन सभी को जिन्हें सुविधाओं का अभाव है, पर्यावरणीय शिक्षा बहुत आवश्यक है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि संचार माध्यमों द्वारा बिगड़ते पर्यावरण की पुष्टि करने का कार्य रोका जाये और इसके विपरीत इस प्रकार से पर्यावरणीय सुरक्षा तथा सुधार की आवश्यकता पर शैक्षिक जानकारी फैलाई जाये जिससे मनुष्य को हर तरह से उन्नत होने का अवसर मिल सके।
20. सभी देशों में, विशेषतः विकासशील देशों में, राष्ट्रीय तथा बहुराष्ट्रीय पर्यावरणीय समस्याओं के सन्दर्भ में वैज्ञानिक शोध और अनुसंधान किये जाने चाहिए। इस सन्दर्भ में पर्यावरणीय समस्याओं के समाधानों की सुविधा के लिए नवीनतम वैज्ञानिक जानकारी और अनुभवों की उपलब्धता बनी रहनी चाहिए। विकासशील देशों को बिना किसी वित्तीय भार के पर्यावरणीय तकनीकी जानकारी इस आधार पर उपलब्ध करानी चाहिए कि वे और अधिक उत्साह से उसका अन्य क्षेत्रों में प्रसार कर सकें।
21. संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र (चार्टर) तथा अन्तर्राष्ट्रीय कानून के आधार पर किसी भी राज्य को अपने अधीन क्षेत्र के संसाधनों को, अपनी पर्यावरण नीति के अन्तर्गत बिना किसी अन्य देश को हानि पहुँचाए, उपभोग (दोहन) करने का पूरा अधिकार है।
22. राज्यों से यह अपेक्षा है कि वे अपने क्षेत्र में हो रही गतिविधियों के कारण दूसरे बाहरी क्षेत्र में हो रहे प्रदूषण के शिकार लोगों के दायित्व तथा मुआवजा तय करने के लिए बनाये जाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय कानून के निर्माण में सहयोग करें।
23. अन्तर्राष्ट्रीय समुदायों द्वारा स्वीकार किये गये अथवा राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित मानकों को लागू करने से पूर्व विभिन्न देशों की प्रचलित सामाजिक व्यवस्थाओं और उनकी उपयुक्तता सीमा को ध्यान में रखना होगा, क्योंकि जो मानक विकसित देशों के लिए वैध हों, वही विकासशील देशों के लिए अनुपयुक्त तथा सामाजिक मूल्यों के विपरीत भी हो सकते हैं।
24. छोटे व बड़े देशों के पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के सभी प्रकरण समान रूप से सहयोग के आधार पर निपटाने चाहिए। साथ ही बहुपक्षीय अथवा द्विपक्षीय व्यवस्थाओं के सहयोग से या अन्य किसी भी प्रकार चहुँ ओर हो रहे विविध कार्यों के फलस्वरूप बिगड़ते पर्यावरण के नियन्त्रण, रोकथाम, कम करने अथवा दूर करने के लिए उचित व्यवस्थायें किया जाना भी आवश्यक है। यह सब इस प्रकार होना चाहिए जिससे अन्य राज्यों की सार्वभौमिकता और हितों की सुरक्षा रहे।

25. राज्य यह सुनिश्चित करेंगे कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठन पर्यावरण की सुरक्षा तथा सुधार के लिए एक समन्वित, श्रेष्ठ (कुशल) और गतिशील भूमिका का निर्वाह करते हैं।
26. मानव तथा उसके पर्यावरण को परमाणु हथियारों तथा जन-संहार के अन्य साधनों से बचाया जाना चाहिये। राज्यों को ऐसे नाश अथवा सम्पूर्ण विनाश करने वाले हथियारों के सम्बन्ध में सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ शीघ्र समझौते के प्रयास किये जाने चाहिए।

इस महाधिकार-पत्र (मैग्नाकार्टा) की अभिशंसाओं के आधार पर यूनेस्को के अन्तर्गत 'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP)' कमेटी का निर्माण हुआ जिसमें 50 सदस्य थे। इसी अभिकरण द्वारा सन् 1975 में 'अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय शिक्षा कार्यक्रम (IEEP)' के अन्तर्गत 'बेलग्रेड कान्फ्रेन्स' का आयोजन किया। इस कान्फ्रेन्स की देन 'बेलग्रेड घोषणा-पत्र' रही जिसमें यह निर्देशित किया गया कि विश्व के बिगड़ते पर्यावरण को रोकने तथा उसे सुधारने हेतु शिक्षा (पर्यावरण शिक्षा) का व्यापक कार्यक्रम हर स्तर पर चलाया जाना आवश्यक है। इसी सम्मेलन में प्रत्येक देश ने अपनी-अपनी पर्यावरण नीति बनाने का भी निर्णय लिया। बिगड़ते पर्यावरण को सन्तुलित करने के लिए देश में उपलब्ध भूमि भाग में 33 प्रतिशत वन क्षेत्र की अनिवार्यता भी यहीं प्रस्तावित की गई।

● 'मानव पर्यावरण' पर नैरोबी (केन्या) सम्मेलन : 10-18 जून, 1982
[Nairobi (Kenya) Conference on 'Human Environment' : 10-18 June, 1982]

दस वर्ष बाद सन् 1982 में विश्व के राष्ट्राध्यक्ष पुनः नैरोबी (अफ्रीका) में **'मानव पर्यावरण कॉन्फ्रेन्स की दसवीं वर्षगाँठ'** मनाने एकत्रित हुए। 10 जून से 18 जून, 1982 तक चलने वाले इस सम्मेलन में 105 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा वहाँ **एक विशेष चार्टर (Special Charter)** जारी किया गया, जिसे **'नैरोबी घोषणा-पत्र'** के नाम से जाना गया। इस चार्टर में यह विशेष जोर दिया गया कि जो घोषणा-पत्र स्टाकहोम कॉन्फ्रेन्स में सन् 1972 में जारी किया गया था, वही स्थिति आज भी है; अतः पूर्व की योजनानुसार ही कार्य करके पर्यावरण सुरक्षा और सुधार के कार्यक्रमों को और प्रभावी बनाया जाये।

● 'पर्यावरण एवं विकास' पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन : रियो सम्मेलन : 3-14 जून, 1992
(U. N. Conference on 'Environment and Development' : Rio Conference : 3-14 June, 1992)

ब्राजील के रियो डी जैनीरो शहर में 3 जून से 14 जून 1992 के मध्य संयुक्त राष्ट्र द्वारा **'पर्यावरण एवं विकास सम्मेलन'** का आयोजन किया गया। **इसकी महत्ता के कारण इसे 'पृथ्वी सम्मेलन' (Earth's Summit) के नाम से भी पुकारने लगे हैं।** इस ऐतिहासिक सम्मेलन में विश्व के 170 राष्ट्राध्यक्षों व शासनाध्यक्षों ने भाग लिया।

इस सम्मेलन में जहाँ एक ओर परम्परागत समस्याओं—(1) वन क्षेत्र की निरन्तर कमी, (2) ग्रीन हाउस का बढ़ता प्रभाव, (3) ओजोन पर्त का विघटन, (4) शीत उपकरणों में क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स के स्थान पर नई टैक्नोलोजी, (5) बढ़ती जनसंख्या, (6) ईंधन की कमी, (7) प्रदूषण की रोकथाम आदि पर चर्चायें हुईं, वहीं जैव-विविधता तथा स्वच्छ टैक्नोलोजी के हस्तान्तरण पर भी विशेष बल दिया गया।

एजेन्डा-21, जो 40 अध्यायों तथा 900 पृष्ठों में एक प्रमुख दस्तावेज था—21वीं सदी की मुख्य कार्य-योजना थी। सबसे महत्त्वपूर्ण मुद्दा इसमें यह था कि विकसित देश अपनी देश की आय का 0·7% **'पर्यावरण कोष'** में जमा करायें जिससे अन्य देश अपने देश को विविध पर्यावरणीय समस्याओं से बचा सकें और ऐसा करने पर होने वाले व्यय की पूर्ति वह कोष से कर सकें।

● अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत विभिन्न अभिकरण
(Different Working Agencies at International Level)

पर्यावरण के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो विभिन्न अभिकरण कार्यरत हैं, उनमें से कुछ प्रमुख निम्न हैं—

1. Earth Scan : अर्थ स्कैन

संयुक्त राष्ट्र द्वारा सन् 1976 में UNEP के मार्गदर्शन में यह संस्था बनाई गई है, जिसका मुख्य उद्देश्य

पर्यावरण संबंधी साहित्य तैयार कर उसे विश्व के हर कोने तक पहुँचाना है। इसका मुख्यालय लन्दन (यू. के.) में है।

2. FAO : फूड एण्ड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन

विश्व में खाद्यान्न की समस्या सुलझाने तथा जरूरत वाले देशों को खाद्यान्न की पूर्ति हेतु इस संस्था का गठन 16 अक्टूबर, 1945 को हुआ। इसका मुख्यालय रोम (इटली) में है।

3. IAEA : इन्टरनेशनल एटोमिक इनर्जी एजेन्सी

संयुक्त राष्ट्र की अणुशक्ति के सभी पक्षों/पहलुओं से संबंधित एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। इसका जन्म 29 जुलाई, 1957 को हुआ था। 150 देश इस संस्था के सदस्य हैं तथा इसका मुख्यालय वियाना (आस्ट्रिया) में है।

4. IEEP : इन्टरनेशनल एनवायरमेन्टल एजूकेशन प्रोग्राम

वस्तुतः यह एक कार्यक्रम है जो स्टाकहोम में 1972 में आयोजित 'मानव पर्यावरण' सम्मेलन की अभिशंसाओं के आधार पर 'यूनेस्को' तथा 'यूएनईपी' (UNESCO-UNEP) ने मिलकर तैयार किया है। इसका प्रारम्भ 1975 से हुआ है तथा केन्द्रीय मुख्यालय यूनेस्को सैकोट्रियेट-पेरिस में है। विश्व के सभी देशों को 5 क्षेत्रों (1) अफ्रीका, (2) अरब राज्य, (3) एशिया एवं पेस्फिक, (4) यूरोप और उत्तरी अमेरिका और (5) लेटिन अमेरिका तथा कैरिबियन में विभाजित कर उनमें पर्यावरण शिक्षा का कार्य संचालन की योजना बनाकर उन्हें मार्गदर्शन देता है।

5. IUCN : इन्टरनेशनल यूनियन फॉर कन्जरवेशन ऑफ नेचर एण्ड नेचुरल रिसोर्सेज

एक स्वतन्त्र अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की संस्था, जिसका मुख्यालय मोर्गेस (स्विटजरलैण्ड) में है, की स्थापना सन् 1948 में हुई। प्रकृति संतुलन तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु बनाई गई संस्था ने पिछले कुछ समय से 'विश्व वन्य कोष' संस्था से सहयोग कर वन्य जीव संरक्षण की दिशा में भी अपना कार्य-क्षेत्र बढ़ाया है। वन्य जीवों की खालों व अन्य सामान/सामग्री की तस्करी रोकने में भी इन दिनों यह संस्था अत्यन्त सक्रिय योगदान देकर राष्ट्रहित में कार्य कर रही है।

6. UNDP : यूनाइटेड नेशन्स डवलपमेन्ट प्रोग्राम

यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र की सबसे बड़ी एजेन्सी है जो विश्व के उन देशों को, जिन्हें अपने आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय अथवा राष्ट्रीय महत्त्व के कार्यक्रमों को चलाने में आर्थिक कठिनाई आती है, आवश्यकतानुसार धनराशि उपलब्ध कराती है। इससे विश्व के लगभग 150 देश जुड़े हैं और अपनी प्राथमिकता के आधार पर सहयोग पाते हैं।

7. UNEP : यूनाइटेड नेशन्स एनवायरनमेन्ट प्रोग्राम

संयुक्त राष्ट्र द्वारा सन् 1972 में विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण के क्षेत्र में विविध योजनाएँ बनाने तथा देशों द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में किये जा रहे कार्यों को मार्गदर्शन देने हेतु यह संस्था स्थापित की गई। पर्यावरण के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समस्त कार्य UNEP द्वारा किया जाता है और इसका मुख्यालय नैरोबी (केन्या) में है। EARTHWATCH प्रोग्राम द्वारा पूरे विश्व के देशों की पर्यावरण स्थिति का आकलन तथा EARTHSCAN द्वारा सभी देशों को साहित्य सामग्री की उपलब्धि का कार्य यहीं से होता है। IEEP द्वारा पर्यावरण शिक्षा का कार्य संचालन यद्यपि पेरिस (फ्रान्स) से होता है पर उसका अन्तिम लेखा-जोखा UNEP द्वारा ही रखा जाता है। पर्यावरण के क्षेत्र में अन्य कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य, योजना अथवा प्रायोजना भी इसी संस्था से संचालित होती है। विश्व स्तर के सम्मेलन के मूल आयोजन में भी इसी संस्था का ही मार्गदर्शन, सहयोग तथा वित्तीय सहयोग मिलता है।

8. UNESCO : यूनाइटेड नेशन्स एजूकेशनल, साइन्टिफिक एण्ड कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन

संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस एजेन्सी को सन् 1945 में स्थापित किया गया था। इस एजेन्सी का मुख्य कार्य विभिन्न देशों में शैक्षिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में सहयोग करना है तथा उन द्वारा राष्ट्रहित में बनाई गई योजनाओं में आर्थिक व तकनीकी पक्ष में सहायता देना है। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्रान्स) में है। इस सन्दर्भ में यह एजेन्सी सम्मेलनों का आयोजन, ज्ञानोपयोगी साहित्य का प्रकाशन व उसका वितरण तथा तकनीकी रायों का आदान-प्रदान जैसे महत्त्वपूर्ण कार्यों का निष्पादन करती है।

9. UNFPA : यूनाइटेड नेशन्स फन्ड फॉर पोपूलेशन एक्टीविटीज

इस एजेन्सी द्वारा विकासशील एवं अविकसित देशों की परिवार कल्याण की समस्याओं के निवारण हेतु धनराशि उपलब्ध कराई जाती है। जनसंख्या वृद्धि को रोकने हेतु देशों में किये जा रहे अनेक प्रयोग, जिनमें **'जनसंख्या शिक्षा'** भी सम्मिलित है, भी इससे सहायता प्राप्त करते हैं। लगभग 130 देशों को इससे वर्तमान में सहयोग मिल रहा है और विश्व की 25% तक की माँग को यह एजेन्सी पूरा कर रही है।

10. UNICEF : यूनाइटेड नेशन्स इन्टरनेशनल चिल्ड्रन्स इमरजैन्सी फन्ड

संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस एजेन्सी का निर्माण सन् 1946 में बच्चों को किसी भी आपत्ति काल में वित्तीय सहायता की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया गया था। वर्तमान में यह बच्चों के विकास, शिक्षा तथा उनके जीवन की गुणवत्ता को सुधारने में सहयोग करता है। विकासशील देश इस एजेन्सी की प्राथमिकता हैं।

11. UNIDO : यूनाइटेड नेशन्स इन्डस्ट्रियल डवलपमेन्ट ऑर्गेनाइजेशन

विश्व के अविकसित एवं विकासशील देशों को औद्योगिक क्षेत्र में सभी प्रकार की समस्याओं के निदान सुझाने तथा उन्हें विकसित करने हेतु सभी प्रकार की सहायता देने हेतु यह संयुक्त राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की संस्था है। इसका मुख्यालय वियाना (आस्ट्रिया) में है और सन् 1985 से इस संस्था ने कई विशेष सेवाएँ प्रारम्भ की हैं।

12. WHO : वर्ल्ड हैल्थ ऑर्गेनाइजेशन

विश्व स्तर पर बनी यह अन्तर्राष्ट्रीय संस्था विश्वभर में लोगों के स्वास्थ्य संबंधी कार्यों के लिए है। रोगों से बचाव, खाद्यात्र तथा आवश्यक पोषणाहार की पूर्ति हेतु भी इस संस्था का उत्तरदायित्व है। 22 जुलाई, 1946 को स्थापित हुई इस संस्था का मुख्यालय जेनेवा (स्विटजरलैण्ड) में है।

13. WWF : वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फन्ड

विश्व स्तर की संस्था का प्रारम्भ सन् 1961 से हुआ। प्रारम्भ में इसका मुख्य कार्य केवल वन्य जीवों की सुरक्षा व उनके विकास के लिए सीमित था। 'प्रोजेक्ट टाइगर' प्रायोजना इसी संस्था की विश्व को देन है। पिछले कुछ वर्षों से वन की महत्ता को स्वीकार करते हुये उसे भी अपने कार्यों में सम्मिलित किया है। इसके फलस्वरूप इस संस्था के नाम में **'विश्व वन्य कोष-प्रकृति'** परिवर्तन हुआ है। संस्था का मुख्यालय ग्लैण्ड (स्विटजरलैण्ड) में है। सिसली : इटली के धार्मिक कस्बे असीसी में सन् 1986 में इसकी रजत जयन्ती मनाई गई थी। एडिनबर्ग के ड्यूक प्रिंस फिलिप (यू० के०) इस संस्था के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं। भारत में इस संस्था के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन तथा महामंत्री डॉ. समर सिंह हैं।

14. Earthwatch Programme : अर्थवाच प्रोग्राम

स्टाकहोम कान्फ्रेन्स में घोषित कार्यक्रमों के क्रम में पूरे विश्व के पर्यावरणीय कार्यों की देश स्तर पर समीक्षा करने, मार्गदर्शन देने तथा लेखा-जोखा रखने हेतु यह कार्यक्रम संयुक्त-राष्ट्र द्वारा संस्थापित किया गया है। यह UNEP द्वारा ही संचालित होता है जिससे इस कार्य हेतु अनेक क्षेत्रीय स्टेशन बनाये गये हैं।

● पर्यावरण के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग (International Co-operation in the Field of Environment)

भारत के पर्यावरणीय सुधार के लिये विश्व के अनेक देशों ने विविध प्रकार से अपना सहयोग दिया है। पिछले 10 वर्षों का संक्षिप्त विवरण यहाँ पाठकों की जानकारी हेतु दिया जा रहा है—

सारणी 25.1

पर्यावरण के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

क्र. सं.	सत्र	सहयोग देश/संस्था	सहयोग विवरण
1.	1990-91	आस्ट्रेलिया	1. रिसाइक्लिंग प्रौद्योगिकी, 2. क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स के विकल्पों की खोज, 3. औद्योगिक बहिस्राव शोधन।

		कनाडा	सामाजिक वानिकी परियोजना में आर्थिक सहयोग।
		जर्मनी	राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की प्रयोगशालाओं हेतु सहायता।
		जापान	इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र में 'वनरोपण' हेतु सहायता।
		नीदरलैण्ड	गंगा कार्य योजना में सहयोग।
		स्वीडन	बिहार, तमिलनाडु और उड़ीसा राज्य में सामाजिक वानिकी।
		इंग्लैण्ड	पश्चिमी घाट पर वानिकी परियोजना।
		विश्व बैंक	सामाजिक वानिकी परियोजना में सहयोग।
2.	1991-92	आस्ट्रेलिया	हुसैन सागर झील (हैदराबाद) की सफाई।
		कनाडा	चिल्का झील (उड़ीसा)-का पारिस्थितिकी विकास।
		स्वीडन	वानिकी क्षेत्र में सात सेमीनारों का आयोजन।
		विश्व बैंक	गंगा एक्शन प्लान में सहयोग (सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट्स : उत्तर प्रदेश; 12 पम्पिंग स्टेशन्स : पश्चिमी बंगाल)।
3.	1992-93	जर्मनी	ग्रामीण विकास और पर्यावरण क्षेत्र के उत्थान हेतु आर्थिक सहायता (85 DM)।
		जापान	इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र (राजस्थान) में वनरोपण और चरागाह विकास के लिये 107 करोड़ रुपये का सहयोग; अरावली पहाड़ी क्षेत्र (राजस्थान) में वनारोपण हेतु 167 करोड़ रुपये की सहायता; यमुना एक्शन प्लान हेतु 402 करोड़ रुपये का सहयोग।
4.	1993-94	स्वीडन	पर्यावरण सुरक्षा हेतु (15 मिलियन SEK = 9 करोड़ रु) आर्थिक अनुदान।
		नार्वे	4.2 मिलियन NOK का आर्थिक सहयोग [1. Training of Indian Scientist & Selected Pollution Control Boards 2. Orissa Environmental, Programmes]।
		डेनमार्क	कर्नाटक के दक्षिणी क्षेत्र में पर्यावरणीय अध्ययन के लिये 12 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता।
5.	1994-95	विश्व बैंक, स्वीडन, जापान, इंग्लैण्ड, जर्मनी आदि का सामूहिक सहयोग	सहयोग : 1246.89 करोड़ रुपये; वानिकी प्रोजेक्ट्स : महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, बिहार, हरियाणा, जम्मू एण्ड कश्मीर, पश्चिमी बंगाल, केरल, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा और गुजरात (13 राज्य)।
6.	1995-96	UNDP (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम)	पर्यावरण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु 7 मिलियन डॉलर (35 करोड़ रु.) राशि की पेशकश।
7.	1996-97	अनेक देश व संस्थाएँ	पिछले कार्यों में निरन्तर सहयोग; नई योजनाओं पर कार्य।
8.	1997-98	विश्व बैंक, UNDP, UNEP द्वारा GEF (Global Environment Facility) से अनुदान अनुदान और ऋण की अनुशंसा	जलवायु परिवर्तन, जैविक विविधता तथा अन्तर्राष्ट्रीय जल प्रदूषण की रोकथाम के लिये सात प्रोजेक्ट्स की अभिशंसा, अन्य नियमित कार्यों का सफल संचालन।

9.	1998-99	बहुउद्देशीय कोष (Multi-lateral fund), जो अनेक विकसित देशों द्वारा एकत्रित किया गया है	'ओजोन पर्त विघटन' की सुरक्षा हेतु 27 प्रोजेक्ट्स के लिये 6 मिलियन डॉलर (30 करोड़ रु.) की स्वीकृति।
		जर्मनी	पर्यावरण सुरक्षा हेतु आर्थिक एवं अन्य सहयोग हेतु सहमति।
		विश्व बैंक	संकटमय अपशिष्ट निस्तारण योजना हेतु आर्थिक अनुदान का प्रस्ताव, पर्यावरण के क्षेत्र में कार्यरत अधिकारियों को विदेश में नवीनतम जानकारी हेतु प्रतिनियुक्ति।
10.	1999-2000	विश्व बैंक	पर्यावरण प्रबन्ध क्षमता निर्माण परियोजना हेतु 6.5 मिलियन डॉलर (33 करोड़ रु.) की सहमति प्रदान की है; विषय हैं—Monitoring of Ambient Air Quality; मानकों के विकास (Development of Standards for Toxic Pollutants and Effluents) के लिये 1 मिलियन डॉलर (5 करोड़ रु.) का प्रावधान स्वीकृत।
11.	2000-2001	विश्व बैंक, UNDP, UNEP व अन्य देश	उपर्युक्त तथा पिछले कार्यों के संचालन में सहयोग।

स्रोत : Annual Reports, Ministry of Environment and Forests, Govt. of India, New Delhi (India).

नोट : यहाँ वही सहयोग लिखे गये हैं, जो विभिन्न देशों द्वारा दे दिये गये हैं। अनेक Projects जो बन रहे हैं, या स्वीकृति हेतु भेजे गये हैं, उन्हें इस विवरण में सम्मिलित नहीं किया गया है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन किस आधार पर आयोजित हुआ। भारत से इसमें किसने प्रतिनिधित्व किया ?
2. 'मानव पर्यावरण' पर नैरोबी (केन्या) सम्मेलन कहाँ और कब आयोजित हुआ ? इसके आयोजन के पीछे मुख्य लक्ष्य क्या थे ?
3. 'पृथ्वी सम्मलेन' किसे कहते हैं ? पर्यावरण के क्षेत्र में इसकी मुख्य घोषणाएँ क्या थीं ?
4. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण से संबंधित किन्हीं पाँच एजेन्सियों के बारे में बताइये।
5. पर्यावरण के क्षेत्र में 'अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम' (International Environmental Education Programme : IEEP) संस्था की क्या भूमिका है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. प्रायः कौन-कौन से देश भारत की पर्यावरणीय गतिविधियों में सहयोग करते हैं।
7. संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन से प्रसारित किसी एक सूत्र को लिखिये।
8. 'विश्व वन्य कोष' (WWF) संस्था के मुख्य कार्य क्या हैं ?
9. पर्यावरण के क्षेत्र में विश्व बैंक किस-किस प्रकार की प्रवृत्तियों में सहयोग करता है ?
10. जापान द्वारा भारत को पर्यावरणीय क्षेत्र में दिये गये सहयोग पर टिप्पणी करिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'मानव पर्यावरण' पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन कब आयोजित हुआ ?

(अ) 5-16 जून, 2002 (ब) 5-16 जून, 1982
(स) 5-16 जून, 1972 (द) 5-16 जून, 1992

12. प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय 'मानव पर्यावरण' सम्मेलन में स्वीकृत महाधिकार पत्र (मैग्नाकार्टा) में सूत्रों की संख्या कितनी थी ?
(अ) 7 (ब) 14
(स) 21 (द) 26

13. प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय 'मानव पर्यावरण' सम्मेलन की 10वीं वर्षगाँठ कहाँ मनाई गई ?
(अ) न्यूयार्क में (ब) पेरिस में
(स) रिओ डी जैनीरो में (द) नैरोबी में

14. 'अर्थ स्कैन' संस्था का मुख्यालय कहाँ है ?
(अ) स्टॉकहोम (Sweeden) में (ब) लंदन (U.K) में
(स) जकार्ता (Indonesia) में (द) रोम (Italy) में

15. 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' की स्थापना किस वर्ष हुई थी ?
(अ) सन् 1946 में (ब) सन् 1961 में
(स) सन् 1985 में (द) सन् 1957 में

26

पर्यावरणीय सुरक्षा एवं सुधार (अन्य देशों में)

[ENVIRONMENTAL PRESERVATION AND IMPROVMENT (IN OTHER COUNTRIES)]

● प्रस्तावना
(Introduction)

अन्तर्राष्ट्रीय 'मानव पर्यावरण' सम्मेलन स्टॉकहोम (1972) में पर्यावरण की पूरे विश्व की समस्याओं पर गहन अध्ययन किया गंया। लगभग 100 देशों के शासनाध्यक्ष अथवा उनके प्रतिनिधि ही नहीं बल्कि इस क्षेत्र से जुड़े अनेक विशेषज्ञ, मीडिया के लोग, डैमोग्राफर्स, उद्योगों के मालिक, नीति निर्माता, हजारों जन-प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में भाग लेकर अपना मत प्रस्तुत किया। उसी आधार पर कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गये। 26 सूत्री महाधिकार पत्र (Magna Carta) वहीं जारी किया गया और सभी देशों से यह अपेक्षा की गई कि अपने-अपने देश की पर्यावरणीय स्थितियों का वह अध्ययन करें और प्राथमिकता के आधार पर अपने देश की कार्य योजना तैयार कर उसकी क्रियान्वित करावें।

निःसन्देह विकसित, विकासशील तथा अविकसित देशों की अपनी-अपनी समस्याएँ थीं। कुछ देश अभावग्रस्त थे, तो कुछ देश पर्यावरण प्रदूषण से त्रस्त थे। कुछ ऐसे देश भी थे जिनकी अपनी कोई समस्यायें नहीं थीं बल्कि दूसरे देश की गलतियों का शिकार हो रहे थे। उदाहरण के लिए किसी देश के उद्योगों से निकली प्रदूषित निष्कासित गैस उनके देश की रिहायशी स्थान पर हानि पहुँचा रही थी। इस कारण उनकी अपनी कोई समस्या न होने पर भी उनकी प्राथमिकता में दूसरों की लादी हुई समस्या आ गई थी।

कुछ समस्याएँ व्यापक रूप से सभी देशों की बन गईं। ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन पर्त का विघटन, तेजाबी वर्षा, रेगिस्तानी क्षेत्र में वृद्धि, बढ़ती जनसंख्या के दुष्प्रभाव, ध्वनि प्रदूषण आदि को उनमें रखा जा सकता है। अतः जो देश सक्षम थे उन्होंने इन समस्याओं के निदान व उनको दूर करने का कार्य अपनी योजना में सम्मिलित किया। कार्य का विषय एक होते हुये भी उनकी कार्य-शैली अलग-अलग रही।

यहाँ पर कुछ देशों का विवरण इस विचार से समेकित करने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न देशों की पर्यावरण सुधार एवं सुरक्षा के क्षेत्र में क्या-क्या प्राथमिकताएँ रही हैं। कलेवर को संक्षिप्त रखने की दृष्टि से केवल बिन्दुबार ही विवरण दिया जा रहा है। प्रबुद्ध पाठक अधिक जानकारी हेतु अपने पुस्तकालय का लाभ उठावें।

● विभिन्न देशों की पर्यावरण सुरक्षा एवं सुधार के क्षेत्र में प्राथमिकताएँ
(Priorities of Different Countries in the Field of Environment Preservation and Improvement)

1. आस्ट्रेलिया (Australia)

(1) रेगिस्तान की वृद्धि को रोकना, (2) भूमि प्रबन्ध, (3) पानी की उचित प्रबन्ध व्यवस्था, (4) जानवरों की देखभाल और (5) ऊर्जा की बचत के उपाय।

2. आस्ट्रिया (Austria)

(1) विभिन्न पर्यावरण कानूनों की अनुपालना, (2) वनों को विनाश से बचाना, (3) विश्वतापन पर रोक, (4) पानी की गुणवत्ता में सुधार, (5) स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना, (6) पर्यावरणीय जन जाग्रति, (7) वस्तुओं

का पुनः चक्रण, (8) अवशिष्टों का पुनः उपयोग, (9) नम भूमि संरक्षण, (10) कृषि का औद्योगीकरण, (11) लुप्तप्राय प्रजातियों का संरक्षण, (12) भूमिक्षरण की रोक, (13) भूगर्भ जल के प्रदूषण पर रोक, (14) ओजोन पर्त की सुरक्षा, (15) कीटनाशी दवाइयों का न्यूनतम उपयोग, (16) जमीन की सतह पर ओजोन से बचाव, (17) ध्वनि प्रदूषण पर रोक तथा (18) खतरनाक रसायनों से बचाव।

3. ब्रिटेन (Britain)

(1) वन एवं वन्य जीव संरक्षण, (2) भूमि का पुनः चक्रण, (3) जल प्रदूषण, (4) समुद्री प्रदूषण, (5) शुद्ध वायु, (6) ध्वनि प्रदूषण, (7) विकिरण से बचाव, (8) अवशिष्ट निस्तारण, (9) राष्ट्रीय उद्यानों का रख-रखाव, (10) हरित पट्टियों का रखाव, (11) समुद्र तट की व्यवस्था, (12) ऐतिहासिक इमारतों का संरक्षण, एवं (13) पुराने आवासों की मरम्मत तथा उनका रख-रखाव।

4. कनाडा (Canada)

(1) सन् 2000 तक CFC से मुक्ति, (2) पर्यावरण सुरक्षा अधिनियमों को कठोरता से लागू करना, (3) तेजाबी वर्षा की रोक के लिए SO_2 का नियन्त्रण, (4) ग्रीन हाउस प्रभाव की रोकथाम, (5) ओजोन पर्त की सुरक्षा व हो रहे विनाश से बचाव, (6) शुद्ध पीने का पानी, (7) नम भूमि का उचित उपयोग, (8) समुद्री तटों पर प्रदूषण नहीं, (9) उचित भूमि उपयोग, (10) राष्ट्रीय उद्यानों की व्यवस्था, (11) वन एवं वन्य जीवों की देखरेख, (12) खतरनाक अवशिष्टों से बचाव, (13) पर्यावरण अनुकूल उत्पाद, (14) ऊर्जा के विकल्पों की खोज तथा (15) शहरी समस्याओं का निवारण।

5. चीन (China)

(1) प्रकृति संरक्षण, (2) पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम, (3) कानून व्यवस्था, (4) पर्यावरण शिक्षा और प्रचार, (5) अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग में वृद्धि, (6) औद्योगिक प्रदूषण पर नियन्त्रण, (7) ग्रामीण क्षेत्र के पर्यावरण की सुरक्षा, (8) जैविक विविधता की सुरक्षा।

6. डेनमार्क (Denmark)

(1) शुद्ध पानी की उपलब्धता, (2) समुद्र में तेल प्रदूषण से बचाव, (3) वायु प्रदूषण की रोकथाम, (4) पर्यावरणीय कानूनों की अनुपालना, (5) वाहन प्रदूषण पर नियन्त्रण, (6) कूड़ा-करकट निस्तारण समस्या, (7) ध्वनि प्रदूषण, (8) रासायनिक अवशिष्ट, (9) पर्यावरणीय जन जाग्रति की आवश्यकता आदि।

7. फिनलैण्ड (Finland)

(1) राष्ट्रीय उद्यानों का रख-रखाव, (2) पर्यावरणीय कानूनों की कठोरता से अनुपालना, (3) वनों का संरक्षण, (4) ऊर्जा की वैकल्पिक व्यवस्था, (5) वाहनों से प्रदूषण, (6) अवशिष्ट निस्तारण प्रबन्ध, (7) वन्य जीव संरक्षण आदि।

8. फ्रांस (France)

(1) पृथ्वी का भूकम्पों से बचाव, (2) सघन वनीकरण, (3) समुद्र की स्वच्छता, (4) स्वच्छ एवं शुद्ध पानी, (5) ओजोन पर्त की रक्षा, (6) ग्रीन हाउस प्रभाव की रोकथाम तथा (7) शारीरिक स्वास्थ्य।

9. जर्मनी (Germany)

(1) भूमि का उचित उपयोग, (2) वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत, (3) वायु प्रदूषण में कमी, (4) ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु उपाय, (5) वायु गुणवत्ता नियन्त्रण, (6) ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करना, (7) ओजोन पर्त की सुरक्षा, (8) पानी का उचित उपयोग, (9) अपशिष्ट पानी का पुनः उपयोग, (10) समुद्रों की सुरक्षा, (11) अवशिष्टों का निस्तारण, (12) वन्य जीव संरक्षण, (13) राष्ट्रीय पार्कों का रख-रखाव, (14) अणु शक्ति के दुष्प्रभावों से सुरक्षा और (15) प्रकृति संरक्षण कार्य।

10. हंगरी (Hungary)

(1) शुद्ध पानी, (2) नदियों और बाँधों की सुरक्षा एवं रख-रखाव, (3) भूगर्भ जल का संरक्षण, (4) विद्युत उत्पादन और (5) उपजाऊ जमीन।

11. इण्डोनेशिया (Indonesia)

(1) वनों का संरक्षण, (2) भूमि की यथेष्ट उपलब्धता, (3) जल की शुद्धता एवं नदियों के जल का नियन्त्रण, (4) प्रदूषण नियन्त्रण, (5) समुद्री तट क्षेत्रों का विकास, (6) वन्य जीव संरक्षण आदि।

12. आयरलैण्ड (Ireland)

(1) ग्रीन हाउस प्रभाव की कमी करना, (2) लुप्तप्राय पक्षी Bogs की सुरक्षा, (3) ऊर्जा की बचत, (4) वस्तुओं का पुनःचक्रण (Recycling), (5) कूड़ा-करकट फेंकने की सुव्यवस्था, (6) उद्यानों का रख-रखाव, (7) यात्रियों का सड़क पर व्यवस्थित आवागमन, (8) ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम, (9) पालतू जानवरों की रखवाली और (10) अवशिष्टों का पुनः उपयोग।

13. इजरायल (Israel)

(1) प्रदूषण रोकने हेतु सख्त कानून, (2) अपशिष्ट जल का उपचार, (3) जल की शुद्धता, (4) वायु स्वच्छता नियन्त्रण, (5) सीसा रहित पेट्रोल तथा कैटेलेटिक कनवर्टर्स की अनिवार्यता, (6) ठोस अपशिष्ट निस्तारण।

14. जेरुसेलम (Jeurusalem)

(1) वन संवर्द्धन, (2) वन अग्नि नियन्त्रण, (3) पार्क्स और मनोरंजन स्थलों का विकास, (4) रेगिस्तानिता को रोकना, (5) जलाशयों और बाँधों का निर्माण, (6) विकृत पर्यावरण को ठीक करना।

15. कुवैत (Kuwait)

(1) तेल संरक्षण, (2) समुद्र जल से पीने के पानी की पूर्ति, (3) भूमिगत जल का संरक्षण, (4) पशुओं की सुरक्षा, (5) स्वास्थ्य सेवा, (6) आणविक औषधियाँ।

16. मलेशिया (Malaysia)

(1) वन एवं वन्य क्षेत्रों का रख-रखाव, (2) शुद्ध वायु, (3) जल प्रदूषण नियन्त्रण, (4) पर्यावरण गुणवत्ता अधिनियम की अनुपालना, (5) स्वस्थ शरीर, (6) राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव संरक्षण तथा (7) देश का भूकम्पों से बचाव।

17. नार्वे (Norway)

(1) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का निर्धारण, (2) प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा एवं संरक्षण, (3) प्रदूषण की रोकथाम; विशेषतः तेल प्रदूषण, (4) पर्यावरण कानूनों का कठोरता से पालन, (5) शिकार एवं मछली पकड़ने की सुन्दर व्यवस्था, (6) ध्वनि प्रदूषण की रोक, (7) सांस्कृतिक धरोहरों की सुरक्षा और (8) व्यवस्थित रहन-सहन।

18. स्वीडन (Sweeden)

(1) ग्रीन हाउस प्रभाव में कमी, (2) ओजोन पर्त की सुरक्षा, (3) तेजाबी वर्षा की रोकथाम, (4) वायु एवं ध्वनि प्रदूषण पर रोक व कमी, (5) समुद्र, झील व अन्य जल भण्डारों को जलकुम्भी से बचाना, (6) धातु प्रदूषण में कमी करना, (7) भूमि और पानी का उचित उपयोग, (8) वनीकरण, (9) अवशिष्ट तथा खरतनाक अवशेषों का बुद्धिमतापूर्ण निस्तारण, (10) स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग तथा (11) पर्यावरणीय कानूनों की कठोरता से अनुपालना।

19. स्विटजरलैण्ड (Switzerland)

(1) वन संरक्षंण, (2) लकड़ी का उचित उपयोग, (3) कठोर कानून, (4) अपशिष्टों का उपचार एवं निस्तारण, (5) भूमिगत जल की स्वच्छता, (6) वायु प्रदूषण नियन्त्रण, (7) शोर नियन्त्रण, (8) सौर ऊर्जा का उपयोग, (9) बायो गैस उपयोग, (10) उपचार, संयंत्रों का निर्माण।

20. वैनीज्वेला (Venezuela)

(1) अपशिष्ट जल का उपचार, (2) वन अग्नि रोक, (3) वन संरक्षण, (4) स्वच्छ वायु की उपलब्धता, (5) ग्रीन हाउस गैसों का नियन्त्रण, (6) समुद्रीय पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखना, (7) पर्यावरणीय कानून, (8) पर्यावरण शिक्षा का प्रावधान।

उपर्युक्त कुछ प्रमुख देशों के विवरण से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि आमतौर पर समस्याओं में समानता है, अतः पूरे विश्व के लोगों में पर्यावरण के प्रति लगभग एक-सा ही दृष्टिकोण है। आवश्यकता इस बात की है कि जनता में कुछ ऐसी जाग्रति उत्पन्न की जाय जिससे वे अपने व्यवहारों में ऐसा परिवर्तन ला सकें जिससे पर्यावरण समस्याएँ कम हों और यदि हों भी तो कम भयानक हों।

हमें इस हेतु लोगों के सोचने के दृष्टिकोण बदलने होंगे। पानी के महत्त्व के बारे में एक पर्यावरणविद् ने अपने विचार[1] निम्न प्रकार व्यक्त किये हैं—

'Water', you have neither taste
Nor colour, nor smell,
One cannot define you, one
Tastes you without knowing you,
You are not necessary to life,
YOU ARE LIFE.

'पानी' न तो तुममें कोई स्वाद है,
न ही रंग और न ही गंध;
कोई तुम्हें पारिभाषित नहीं कर सकता,
कोई भी तुम्हें बिना जाने ही चखता है;
तुम जीवन के लिए आवश्यक नहीं हो;
तुम तो जीवन हो।

इस प्रकार के दृष्टिकोण वाला व्यक्ति फिर जल को प्रदूषित नहीं कर सकता, उसका अपव्यय नहीं कर सकता। आशा करते हैं विश्व के जनमानस में अपनी पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों के प्रति लगाव उत्पन्न हो। वे अपने जीवन के जीने के प्रति आशावान हों और आगे आने वाली पीढ़ी के प्रति उत्तरदायी हों।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. सभी देशों में प्रायः किन-किन क्षेत्रों को पर्यावरणीय प्राथमिकता दी जाती है ?
2. किसी एक देश की पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में बताइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

3. 'शून्य प्रदूषण' वाला देश है—
   (अ) इंग्लैण्ड (ब) कनाडा
   (स) स्विटजरलैण्ड (द) स्वीडन
4. रेगिस्तान की वृद्धि रोकने में किस देश में सर्वाधिक कार्य हो रहा है ?
   (अ) आस्ट्रिया (ब) आस्ट्रेलिया
   (स) डेन्मार्क (द) जापान
5. समुद्री जल को पीने योग्य बनाने में कौन-सा देश सर्वाधिक प्रयत्नशील है ?
   (अ) कुवैत (ब) फिनलैण्ड
   (स) आयरलैण्ड (द) हंगरी

1. **Extract taken from France Information Journal No. 136, year 1990, namely 'fighting disasters'.**

27

पर्यावरणीय सुरक्षा एवं सुधार (राष्ट्रीय स्तर पर)
[ENVIRONMENTAL PRESERVATION AND IMPROVEMENT (AT NATIONAL LEVEL)]

• प्रस्तावना
(Introduction)

विश्व स्तर पर चल रहीं चर्चाओं के अनुरूप यद्यपि भारत में भी पर्यावरण के विकृत होने से होने वाली किसी अनहोनी संभावनाओं पर सभी स्तर पर विचार तथा वाद-विवाद होना सत्तर के दशक से प्रारम्भ हो गया था, पर व्यावहारिक रूप से पर्यावरण का जन आन्दोलन सन् 1972 से ही शुरू हुआ जिस वर्ष स्टॉकहोम (स्वीडन) में **'मानव पर्यावरण'** पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित हुआ। भारत ने सम्मेलन से लौटते ही सबसे पहले **'नेशनल कमेटी फॉर एनवायरनमेन्ट प्लानिंग एण्ड कोऑर्डीनेशन'** (National Committee for Environment Planning and Co-ordination : NCEPC) की स्थापना की। इस कमेटी का मुख्य उद्देश्य अपने स्तर पर पर्यावरणीय अध्ययन करके देश के लिए उन सुझावों को प्राप्त करना था जिससे देश में पर्यावरण संरक्षण, सुरक्षा तथा सुधार के लिए कोई ठोस योजना तैयार की जा सके और साथ ही देश के लिए भावी **'पर्यावरणीय राष्ट्रीय नीति'** बनाने का आधार तैयार हो सके। इस समिति ने अपना कार्य बहुत दिलचस्पी और रुचि से सम्पन्न किया और इस विषय को इतनी सबलता से जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया कि आगामी 1980 के चुनावों में लगभग सभी राजनीतिज्ञ पार्टियों ने **'पर्यावरणीय सुरक्षा'** को अपने चुनावी मुद्दों में सम्मिलित किया था। वर्ष 1972 में ही केन्द्रीय तथा राज्य स्तरीय **'प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल' (Pollution Control Boards)** बनाये गये जिनका प्रारंभिक कार्य अपने-अपने क्षेत्र में वायु एवं जल प्रदूषण को रोकना था। इसी कमेटी की सिफारिश पर तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने 1980 में **'तिवारी कमेटी'** बनाई जिसके आधार पर राष्ट्र स्तर पर अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गये। केन्द्रीय स्तर पर पृथक से पर्यावरण विभाग की स्थापना तथा राज्य स्तरों पर भी इसी प्रकार के स्वतन्त्र विभागों का बनाना इसी कमेटी के सुझावों का क्रियान्वयन था।

तिवारी कमेटी (1980) की अभिशंसा के अनुरूप केन्द्रीय सरकार के प्रशासनिक ढांचे में पर्यावरणीय कार्यक्रम के नियोजन, प्रोत्साहन तथा समन्वयन के सम्बन्ध में केन्द्र बिन्दु के रूप में कार्य करने के लिए पहली नवम्बर, 1980 से पहली बार केन्द्र स्तर पर एक पर्यावरण विभाग की स्थापना की गई थी। बाद में इस विभाग को एक नये पर्यावरण तथा वन मन्त्रालय का हिस्सा बनाया गया जिसका गठन राष्ट्रपति द्वारा जारी की गई विज्ञप्ति सं 74/2/85—कैब. दिनांक 4/1/1985 द्वारा हुआ। इस मन्त्रालय के अधीन दो विभाग रखे गये थे—(1) पर्यावरण विभाग तथा (2) वन तथा वन्य जीव विभाग।

पर्यावरण तथा वन मन्त्रालय के अधीन 'पर्यावरण, वन तथा वन्य-जीव विभाग (The Department of Environment, Forests and Wildlife)' के नाम से एक एकीकृत विभाग ने 25 सितम्बर, 1985 से कार्य प्रारम्भ किया। बाद में इसमें पर्यावरण विभाग और वन तथा वन्य जीव विभाग अनुभागों के कार्यों के अतिरिक्त, (1) राष्ट्रीय भूमि उपयोग तथा परती भूमि विकास परिषद (National Land Use and Wasteland Development Council), (2) राष्ट्रीय परती भूमि विकास बोर्ड (National Wastelands Development Board) और (3) केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण (Central Ganga Authority) कार्य भी जोड़ दिये गये। बाद में उपर्युक्त दो विभाग क्रमांक (1) व (2) को पर्यावरण विभाग से स्थानान्तरित कर दिया गया।

सन् 1980 से 1996 तक की एक संक्षिप्त लेकिन लम्बी कार्य यात्रा में इसके कार्यों में शनैः-शनैः और वृद्धि हुई और पूरे विभाग के वर्तमान में इतने कार्य और उत्तरदायित्व हो गये हैं, कि उनकी समेकित सूची बनाना भी कठिन है। यहाँ भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा प्रसारित अधिकृत सूचना के अनुसार सूची दी जा रही है।

• भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा किये जा रहे कार्य (Allocation of Business to the Ministry of Environment and Forests of Government of India)

1. गहरे समुद्र में समुद्री पर्यावरण को छोड़कर तटीय जल, कच्छ वनस्पति तथा मूंगे की समुद्री चट्टानों के पर्यावरणीय पहलुओं सहित पर्यावरण और पारिस्थितिकी (Environment and Ecology, including Environment in Coastal Waters, in Mangroves and Coral Reefs but excluding Marine Environment on the High Seas).
2. भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण और वनस्पति उद्यान (Botanical Survey of India and Botanical Gardens).
3. भारतीय प्राणी सर्वेक्षण (Zoological Survey of India).
4. राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय (National Museum of National History).
5. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974].
6. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) उपकर अधिनियम, 1977 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Cess Act, 1977].
7. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 [The Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981].
8. भारतीय वन अधिनियम, 1927 (The Indian Forest Act, 1927).
9. जीव जन्तुओं के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960 (The Prevention of Cruelty to Animals Act, 1960).
10. वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 [The Wildlife (Protection) Act, 1972].
11. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 [The Forest (Conservation) Act, 1980].
12. पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम, 1986 [The Environment (Protection) Act, 1986].
13. सार्वजनिक लोकदायित्व बीमा अधिनियम, 1991 (The Public Liability Insurance Act, 1991).
14. जीवमण्डल रिजर्व कार्यक्रम (The Biosphere Reserve Programme).
15. सामाजिक वानिकी सहित देश में राष्ट्रीय वन नीति तथा वानिकी विकास (National Forest Policy and Forestry Development in the Country, including Social Forestry).
16. अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह के लिए वन नीति तथा वन प्रशासन से संबंधित मामले (The Forests Policy and all matters relating to Forests and Forest Administration in so far as the Andaman and Nicobar Islands are concerned).
17. भारतीय वन सेवा (The Indian Forest Services).
18. वन्य जीव परिरक्षण तथा वन्य पक्षियों तथा पशुओं की सुरक्षा (The Wildlife Preservation and Protection of Wild Birds and Animals).
19. पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण (Prevention of Cruelty to Animals).
20. केन्द्रीय चिड़ियाघर (प्राणी) प्राधिकरण (Central Zoo Authority).
21. वानिकी में बुनियादी अनुसंधान और इसका समन्वय तथा उच्च शिक्षा (Fundamental Research, including co-ordination thereof and Higher Education in Forestry).
22. पद्मजा नायडू हिमालयन प्राणी उद्यान (Padmaja Naidu Himalayan Zoological Park).
23. वानिकी विकास योजना के लिए राष्ट्रीय सहायता (National Assistance to Forestry Development).

24. राष्ट्रीय वनीकरण एवं पर्यावरणीय विकास बोर्ड (National Afforestation and Eco-development Board).
25. केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण (The Central Ganga Authority).
26. भारतीय प्लाईवुड उद्योग अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान बंगलौर (The Indian Plywood Industries Research and Training Institute, Bangalore).
27. मरुस्थल और मरुस्थलीकरण (Desert and Desertification).
28. राष्ट्रीय वनीकरण एवं पारिस्थितिकीय विकास बोर्ड (National Afforestation and Eco-development Board).
29. राष्ट्रीय वन सर्वेक्षण, देहरादून (Forest Survey of India, Dehradun).
30. राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण अधिनियम, 1995 (The National Environment Tribunal Act, 1995).
31. राष्ट्रीय पर्यावरण अपिलीय प्राधिकरण अधिनियम, 1997 (The National Environment Appellate Authority Act, 1997).

इस सूची से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि इस नवीन एकीकृत वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के अधीन कितना कार्य है ? इस पुस्तक में बहुत से विभागों से सम्बन्धित वर्णन विभिन्न अध्यायों में कहीं न कहीं उपलब्ध होगा लेकिन **'पर्यावरणीय जन चेतना और आस्था'** के कार्य तथा **'अच्छे कार्यों हेतु उत्प्रेरण (पुरस्कार)'** आदि के कार्यों का संक्षिप्त विवरण यहाँ इस भावना से दिया जा रहा है जिससे पर्यावरण क्षेत्र की नवीनतम तथा प्रभावी गतिविधियों से पाठकों की जानकारी बनी रहे।

• भारत सरकार के पर्यावरण विभाग द्वारा किये जा रहे विशेष कार्य (Special Works taken by the Ministry of Environment and Forests of Government of India)

1. प्रमुख दिवस (Important Days)

पर्यावरण से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सम्बन्धित विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त प्रमुख दिवसों की सूची यहाँ दी जा रही है। पाठकों को चाहिये कि इन दिनों के महत्त्व के बारे में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करें और यह देखें कि इन्हें व्यक्तिगत अथवा समूह में अथवा किसी छोटे-बड़े सामाजिक दायरे में किस प्रकार मनाया जा सकता है ? दिवसों को रुचिपूर्ण मनाने का अपना औचित्य है, इससे उस दिन समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं तथा विद्वानों से ऐसी विविध सामग्री पढ़ने को, सुनने को तथा जानने को मिल सकती है, जिसका आपको कतई पूर्वाभास ही न हो। महत्त्व जानने से उस सन्दर्भ में स्वयं ही कुछ करने की, संकल्प लेने की इच्छा हो सकती है और यह आपकी एक स्वयं की बूंद पूरे सागर में भावनाएँ जाग्रत कर सकती है।

सारणी 27·1

महत्त्वपूर्ण पर्यावरण सम्बन्धी दिवस[1]

क्र.सं.	दिवस	तिथियाँ
1.	विश्व कुष्ठ निवारण दिवस (World Leprosy Eradication Day)	30 जनवरी
2.	राष्ट्रीय विज्ञान दिवस (National Science Day)	28 फरवरी
3.	अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस (International Women's Day)	8 मार्च
4.	विश्व विकलांग दिवस (World Disabled Day)	15 मार्च
5.	विश्व वन्य दिवस (World Forestry Day)	21 मार्च
6.	विश्व जल दिवस (World Waters Day)	22 मार्च
7.	विश्व वायुमण्डलीय दिवस (World Meteorological Day)	23 मार्च
8.	विश्व क्षय दिवस (World TB Day)	24 मार्च

1. **मनोरमा ईयर बुक, 2001 से साभार। मनोरमा ईयर बुक : 2001 : सम्पादक के. एम. मैथ्यू; कोट्टायम—686001, केरल (भारत) पृष्ठ 493-94.**

9.	विश्व स्वास्थ्य दिवस (World Health Day)	7 अप्रैल
10.	विश्व विरासत दिवस (World Heritage Day)	18 अप्रैल
11.	पृथ्वी दिवस (Earth Day)	22 अप्रैल
12.	विश्व रेड-क्रास दिवस (World Red-cross Day)	8 मई
13.	विश्व थैलेसोमिया दिवस (World Thalassaemia Day)	9 मई
14.	अन्तर्राष्ट्रीय परिवार दिवस (International Family Day)	15 मई
15.	धूम्रपान व तम्बाकू रहित दिवस (Anti-tobacco Day)	31 मई
16.	विश्व पर्यावरण दिवस (World Environment Day)	5 जून
17.	अन्तर्राष्ट्रीय मादक द्रव्य विरोध दिवस (International Day for Drugs)	26 जून
18.	विश्व जनसंख्या दिवस (World Population Day)	11 जुलाई
19.	हिरोशिमा दिवस (Hiroshima Day)	6 अगस्त
20.	नागासाकी दिवस (Nagasaki Day)	9 अगस्त
21.	विश्व साक्षरता दिवस (World Literacy Day)	8 सितम्बर
22.	विश्व ओजोन दिवस (World Ozone Day)	16 सितम्बर
23.	कैन्सर रोगी कल्याण दिवस (Cancer Patient's Welfare Day)	22 सितम्बर
24.	विश्व पर्यटन दिवस (World Tourism Day)	27 सितम्बर
25.	विश्व आवास दिवस (World Habitat Day)	3 अक्टूबर
26.	विश्व पशु कल्याण दिवस (World Animal Welfare Day)	4 अक्टूबर
27.	विश्व वयोवृद्ध दिवस (World Elder's Day)	8 अक्टूबर
28.	प्राकृतिक विनाश को कम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय दिवस (U.N. International Day for Natural Disaster Reduction)	13 अक्टूबर
29.	विश्व खाद्य दिवस (World Food Day)	16 अक्टूबर
30.	संयुक्त राष्ट्र दिवस (United Nations Day)	24 अक्टूबर
31.	बाल दिवस (Children Day)	14 नवम्बर
32.	विश्व एड्स दिवस (World Aid Day)	1 दिसम्बर
33.	मानव अधिकार दिवस (Human Rights Day)	10 दिसम्बर
34.	किसान दिवस (Farmers' Day)	23 दिसम्बर

पर्यावरण विभाग द्वारा जिन दिवसों को महत्त्वपूर्ण ढंग से मनाया जाता है तथा पूरे देश में मनाये जाने के लिए निर्देश प्रसारित करता है, उसका विवरण यहाँ दिया जा रहा है :

(1) पृथ्वी दिवस : 22 अप्रैल (Earth Day : 22 April)

आज केवल हमारे देश में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में 22 अप्रैल का दिन प्रति वर्ष पृथ्वी दिवस (Earth Day) के रूप में मनाया जाता है। लोग एकत्रित होते हैं, सामूहिक रूप से चर्चायें करते हैं, रैलियाँ निकालते हैं और जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं, उसकी नवीनतम भौगोलिक स्थिति, प्राकृतिक संसाधनों के शेष रहे कोष, आकाश-वायुमण्डल का स्वरूप तथा उन सभी स्थितियों का जायजा लेते हैं, जिनसे इस पृथ्वी पर निवास करने वालों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध है। आगे के लिए कुछ निर्णय लेकर उन पर चलने या राज्य अथवा देश की सरकारों को उन पर नीतियाँ बनाने का सुझाव देते हैं।

इस दिन का कोई बहुत पुराना इतिहास नहीं है। पिछले कई वर्षों से बिगड़ते पर्यावरण से अमेरिका के निवासी बहुत चिन्तित थे। लॉस ऐंजिल्स की 1940 की वायुमण्डल की प्रदूषित गैसों से बने आवरण से हजारों मौतों की घटना उनको याद थी। 1952 की लंदन की घटना जिसमें 'स्मोग' के कारण 4000 मौतें हुईं तथा 1950 की जापान की 'मिनीमाटा एपीसोड' जिसमें एक उद्योग से निकले जहरीले एल्काइल मरकरी कम्पाउन्ड से लाखों लोग व समुद्री जीव प्रभावित हुए का स्मरण था। अतः वह यह चाहते थे कि अमेरिका में तत्काल **'वायु अधिनियम'** बनाया जाय तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु **'एनवायरनमेन्ट प्रोटैक्शन एजेन्सी कमेटी'** का गठन किया जाय।

इन दोनों प्रमुख मुद्दों को सामने रख कर सिनेटर गेलार्ड नेल्सन ने 2 करोड़ अमेरिका के निवासियों की एक विशाल रैली 22 अप्रैल, 1970 को (32 वर्ष पूर्व) निकाली। इसका लाभ उस समय चाहे केवल अमेरिका निवासियों को ही हुआ हो, पर इस दिन को लोगों ने **'पृथ्वी दिवस'** (Earth Day) अथवा **'पृथ्वी बचाओ'** (Save the Earth) के रूप में याद रखा।

इसके बीस वर्ष पश्चात् 22 अप्रैल, 1990 को इसकी पहली वर्षगाँठ मनाई गई। लगभग 80 देशों के 10 करोड़ व्यक्तियों ने इसके विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लिया।

भारत में भी इस दिन का आयोजन अधिक महत्त्व देकर हुआ। केन्द्रीय तथा राज्य के पर्यावरण विभागों ने अपनी विविध एजेन्सियों द्वारा लोगों को बताया कि आज पृथ्वी और भूमण्डल की पर्यावरण समस्याएँ इतना विकराल रूप धारण किये हैं कि आम आदमी का जीना भी दूभर हो गया है। पानी, हवा और भोजन शुद्ध रूप से प्राप्त नहीं हो रहे हैं। ईंधन की अधिक माँग से पेड़ों की अधिक कटाई से वन क्षेत्रों का प्रतिशत कम हो गया है। पेट्रोल व डीज़ल से चलने वाले वाहनों ने वायु को इतना जहरीला बना दिया है कि साँस लेना कठिन हो रहा है। कार्बन डाइऑक्साइड की निरन्तर वृद्धि ने **'ग्रीन हाउस इफैक्ट'** को जन्म दिया है। ओजोन की नष्ट होती पर्त से **'स्किन कैन्सर'** की समस्या उठ खड़ी हुई है और न जाने क्या हो गया है और क्या-क्या हो रहा है।

अतः **'पृथ्वी दिवस'** के आयोजन ने लोगों को पुनः प्रति वर्ष यह सोचने का अवसर दिया है कि वह वस्तुस्थिति की जानकारी करें और अपने जीने तथा आगे आने वाली पीढ़ी को विरासत में कुछ देने के लिए ऐसे कार्य करें जिससे इस पृथ्वी को विनाश से बचाया जा सके।

वस्तुतः 'पृथ्वी दिवस' का आयोजन अपने आप को पर्यावरणीय समस्याओं से बचाने तथा प्राणी मात्र के सुखमय जीने देने का एक क्रियाकलाप है।

(2) विश्व पर्यावरण दिवस : 5 जून (World Environment Day : 5 June)

जब विज्ञान की प्रगति के साथ विश्व में अनेक विकसित देशों ने सुख-सुविधाओं के उपकरण लोगों को उपलब्ध कराने प्रारम्भ किये तथा साथ ही जब लोगों की बढ़ती माँग के अनुरूप औद्योगिक क्षेत्र में क्रान्ति आई तो पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उठ खड़ी हुई। लॉस ऐन्जिल्स तथा लंदन की स्मोग दुर्घटनाएँ विश्व आश्चर्य थीं और स्थानीय तौर पर स्वच्छता के मानदण्डों की गिरावट ने सभी देशों को चिन्तित कर दिया था। अविकसित तथा विकासशील देशों की समस्या कुछ इससे भी अधिक भयावह और चौंकाने वाली थीं।

अतः बड़े राष्ट्रों की पहल पर राष्ट्र संघ द्वारा जून 1972 में स्टॉकहोम (स्वीडन) में **'मानव पर्यावरण'** पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की कान्फ्रेन्स आयोजित हुई। इसमें 113 देशों ने भागीदारी की। भारत की ओर से तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने अपने देश का प्रतिनिधित्व किया था।

5 जून से 16 जून 1972 तक की अवधि मे पर्यावरण के विविध क्षेत्रों पर विस्तृत चर्चा हुई। कुछ देशों की बढ़ती जनसंख्या, ठीक से उपयोग न होने के कारण अनेक प्राकृतिक संसाधनों के भण्डारों की होती कमी, जल तथा वायु-प्रदूषण, अम्लीय वर्षा, औद्योगीकरण के फलस्वरूप संस्थानों (उद्योगों) से निकलने वाले अपशिष्टों के निपटाने की समस्या, कार्बन डाइऑक्साइड की निरन्तर वृद्धि से भूमण्डल पर बढ़ता ताप, ओजोन पर्त के नष्ट होने की सम्भावना से त्वचा कैन्सर का भय आदि अनेक चिन्तनीय प्रकरण रहे।

यहाँ पर सर्वसम्मति से 26 सूत्री कार्यक्रम भी अनुमोदित हुआ जिसे इस कान्फ्रेन्स में महा-अधिकार पत्र (Magna Carta) का नाम दिया गया। इसी के आधार पर आगे देशों से अपेक्षायें, अलग-अलग विषयों पर क्षेत्रीय स्तर के सम्मेलन तथा **पर्यावरणीय शिक्षा एवं जागरूकता की पहली आवश्यकता** पर सम्भावित कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार की गई।

यह एक ऐतिहासिक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का सम्मेलन था जिसमें सभी स्तर के देशों की चिन्ताओं के प्रति चिन्तन था, अतः इसे सभी क्षेत्रों से प्रशंसाएँ और मान्यताएँ मिलीं। स्वयं आयोजक तथा भाग लेने वाले देश इस कान्फ्रेन्स में विचारे गये प्रकरण और उन पर आगे की अपेक्षित कार्यवाही से अत्यन्त सन्तुष्ट थे।

यहीं पर सर्वसम्मति से यह घोषणा की गई कि 5 जून को प्रति वर्ष पूरे विश्व में **'विश्व पर्यावरण दिवस'** (World Environment Day) के नाम से मनाया जाय। तभी से इस दिवस को नियमित रूप से प्रति वर्ष गरिमा और भावना से मनाते हैं। **इस आयोजन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि जन-साधारण**

में मानसिक और व्यावहारिक परिवर्तन आता है और वे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में किसी न किसी प्रकार विश्व चिन्ता में भागीदार बनते हैं और उनके स्तर पर की गई अपेक्षाओं के प्रति अपने आप को उत्तरदायी समझते हैं।

(3) ओजोन दिवस : 16 सितम्बर (Ozone Day : 16 September)

ओजोन (Ozone : O_3) परत जमीन की सतह से करीब 20 किलोमीटर ऊपर वायुमण्डल में एक प्रकार से ऑक्सीजन का ही रूप है जो सूर्य की लगभग सभी हानिकारक अल्ट्रावॉयलेट किरणों को कुशलतापूर्वक ढक लेती है। सूर्य की इन किरणों से त्वचा का कैन्सर, आँखों में खराबी तथा शरीर के इम्यून सिस्टम में खराबी आ सकती है। फसल की पैदावार में कमी, वनों की हानि और समुद्री जीवों को नुकसान पहुँच सकता है।

ओजोन की पर्त की सुरक्षा के लिये अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास सत्तर के दशक से शुरू हुये, जिनके परिणामस्वरूप सन् 1985 में वियना कन्वेंशन (Vienna Convention : 1985) तथा सन् 1987 में मोन्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol : 1987) स्वीकार किये गये। इनका अन्तिम संशोधन लंदन (London) में हुआ और उस संशोधन के बाद भारत ने भी इसे अपने देश में 17.5.1992 से लागू कर दिया।

ओजोन की परत को नुकसान पहुँचना अभी भी चिन्ता का विषय बना हुआ है क्योंकि ओजोन को नुकसान पहुँचाने वाले तत्त्वों का विकासशील देशों द्वारा रेफ्रीजरेशन और एअरकन्डीशनिंग, फोम तथा स्प्रे उत्पाद तैयार करने में, अग्नि बुझाने में तथा इलैक्ट्रोनिक्स और अन्य उद्योगों में सोलवेन्ट्स के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

इन तत्त्वों का, जिनमें विशेषतः क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स (Chlorofluorocarbons : CFC's), कार्बन टेट्राक्लोराइड (Carbon Tetrachloride) तथा मिथाइल क्लोरोफार्म (Methyl Chloroform) हैं तथा इनका विभिन्न उपकरणों में उपयोग का एक तिथिवार लक्ष्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित किया गया है। सभी देशों से अपेक्षा है कि इस भयानक चिन्ता के निवारण में वे पूरी आस्था से सहयोग करें।

ओजोन दिवस को भारत में भी 16 सितम्बर को प्रति वर्ष मनाया जाता है और यह प्रयास किया जा रहा है कि साधारण जन समाज इस समस्या से परिचित हों और उनके अपने स्तर पर दे सकने वाले सहयोग के लिये सदैव तैयार और तत्पर रहें।

(4) विश्व जल दिवस : 22 मार्च (World Water Day : 22 March)

"जल की गुणवत्ता और उसकी उपलब्धि निरन्तर चिन्ता का विषय बनी हुई है। अगर वर्तमान स्थिति भी यथावत बनी रही तब भी यह अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व के अधिकांश लोग जल संकट से जूझते रहेंगे। यह स्थिति इसलिये भी अधिक चिन्ता की है कि जहाँ पानी की कमी है, उन क्षेत्रों की आबादी भी तेजी से बढ़ रही है।"

—Wim Kok, Prime Minister of Netherlands, in the inaugration of 2nd world water forum held in Netherlands during 17-22 March, 2000.

Source : Source Bulletin, Netherlands, No. 9. March 2000, p.1.

आज पूरा विश्व पीने के पानी के लिये, उद्योगों को चलाने के लिये, अनाज उत्पादन के लिये और आवास निर्माण के लिये चिन्तित है। कुछ देश तो पीने के पानी के लिये भी तरस रहे हैं। भारत में भी पानी की किल्लत, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बंगाल, बिहार और महाराष्ट्र, गुजरात ही नहीं बल्कि बड़े-बड़े नगरों तक पहुँच गई है।

विश्व और भारत की जल समस्या को यदि समान रूप से आँकें, तो निम्न प्रश्न हमारे सामने खड़े हो जाते हैं—

1. क्या सबके लिये पानी है ? (Is water available for all ?)
2. एक बाल्टी पानी का मूल्य क्या है ? (What is the cost of a bucket of water ?)
3. क्या पानी का दुरुपयोग रोका जा सकता है ? (Can improper use of water be checked ?)
4. पानी का संरक्षण कैसे करें ? (How to conserve water ?)
5. भविष्य में जल की क्या स्थिति होगी ? (What will be the status of water in future ?)

और ऐसे ही अनेक प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिये विश्व स्तर पर जल दिवस (Waters Day) सन् 1994 से मनाया जाने लगा है। इसे मनाने के पीछे भावना यही है कि (1) जल के दुरुपयोग को रोकें, (2) जल को दूषित होने से बचायें, (3) वर्षा जल को एकत्रित करें, (4) जल का संरक्षण करें आदि।

पिछले 9 वर्षों के जल दिवस के विषय, जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निश्चित किये गये हैं, यहाँ दिये जा रहे हैं—

सारणी 27.2
विश्व जल दिवस के विषय

क्र. सं.	सत्र	विषय
1.	1993-94	उपलब्ध नहीं (Not Available)
2.	1994-95	उपलब्ध नहीं (Not Available)
3.	1995-96	त्रसित शहरों के लिये जल (Water for Thirsty Cities)
4.	1996-97	विश्व जल : क्या यथेष्ठ है ? (The World Waters : Is There Enough ?)
5.	1997-98	जल और सतत् विकास (Water and Sustainable Development)
6.	1998-99	प्रत्येक अभावग्रस्त है (Everyone Lives Sown Stream)
7.	1999-2000	21वीं सदी के लिये जल (Water for the 21st Century)
8.	2000-2001	जल और स्वास्थ्य (Water and Health)
9.	2001-2002	विकास के लिये जल (Water for Development)

स्रोत : Source Bulletine, Netherlands, ibid.

"जल ही जीवन है। तब भी इस मूल्यवान संसाधान का भारी दुरुपयोग हो रहा है। जब तक हम जल के सही प्रबन्धन में अपने तरीके नहीं बदलेंगे तब तक हमें आगे भविष्य में जल संकट से जूझना पड़ेगा।"

[Water is life. Yet the precious resource is widely mismanaged. Unless we change our ways of managing water we will face serious crisis in the near future.]

—Ismail serageldin, Chairman of the World Water Commission, Vice President of the World Bank and Chairman of the Global Water Partnership (GWP).

Source : Source Bulletin, ibid, issue no. 9, March 2000.

2. कृष्टता केन्द्र (Centres of Excellence)

भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के अन्तर्गत कार्य कर रहे पर्यावरण विभाग ने पर्यावरणीय विज्ञान और प्रबन्ध (Environmental Science and Management) के प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में अनुसन्धान और प्रशिक्षण की दृष्टि से सात उत्कृष्टता केन्द्र (Centres of Excellence) स्थापित किये हैं, जो निम्नांकित हैं—

सारणी 27·3
उत्कृष्टता केन्द्रों की सूची

क्र. सं.	संबद्ध संस्थान	संस्थान का नाम	क्षेत्र	प्रारम्भ वर्ष
1.	नेहरू फाउन्डेशन फॉर डवलपमेन्ट (Nehru Foundation for Development).	पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद (Centre for Environment Education, Ahmedabad).	पर्यावरणीय शिक्षा (Environmental Education)	1984
2.	सी. पी. आर. ऐयर फाउन्डेशन, चेन्नई (C.P.R. Aiyar Foundation, Chennai).	सी. पी. आर. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, चेन्नई (C. P. R. Environmental Education Centre, Chennai).	पर्यावरणीय शिक्षा तथा संसाधन सामग्री (Environmental Education and Resource Material)	1988

3.	इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइन्स, बंगलौर (Indian Institute of Sciences, Bangalore).	पारिस्थितिकीय विज्ञान केन्द्र, बंगलौर (Centre for Ecological Sciences, Bangalore).	पश्चिमी घाटों की पारिस्थितिकीय समस्याएँ (Ecology & Environment of Western Ghats)	1983
4.	इंडियन स्कूल ऑफ माइन्स, धनबाद (Indian School of Mines, Dhanbad).	खनन पर्यावरण केन्द्र, धनबाद (Centre for Mining Environment, Dhanbad).	सतत खनन के लिए वैज्ञानिक आँकड़े तैयार करना (To Generate Scientific Data for Sustainable Mining)	1987
5.	बाम्बे नेशनल हिस्ट्री सोसायटी, बम्बई (Bombay National History Society, Bombay).	सालिम अली पक्षी विज्ञान केन्द्र, कोयम्बटूर (Salim Ali Centre for Orthinology and Natural History, Coimbatore).	पक्षी विज्ञान तथा प्राकृतिक विज्ञान (Orthinology & Natural History)	1990
6.	दिल्ली विश्वविद्यालय, साउथ कैम्पस, दिल्ली (Delhi University, South Campus, Delhi).	सेन्टर फॉर एनवॉयरनमेन्टल मैनेजमेन्ट ऑफ डिग्रेडेड इकोसिस्टम (Centre for Environment Management of Degraded Ecosystem).	अवक्रमित पारिप्रणाली का पर्यावरणीय प्रबन्ध (Environmental Management of Degraded Ecosystem)	1997
7.	बोटेनिकल गार्डन्स तिरुवनन्तपुरम, केरल (Botanical Garden Thiruvannathapuram, Kerala).	ट्रोपिकल बोटेनिकल गार्डन एण्ड रिसर्च इन्स्टीट्यूट तिरुवनन्तपुरम (केरल) [Tropical Botanical Garden and Research Institute, Thiruvannathapuram (Kerala)].	उष्ण कटिबन्धीय वनस्पति विविधता (Tropical Plant Diversity)	1997

स्रोत : Annual Reports, Ministry of Environment and Forests, ibid.

उपर्युक्त विवरण से यह प्रारम्भिक जानकारी पाठकों को मिल रही है कि इन केन्द्रों पर किन-किन क्षेत्रों में कार्य करने का पर्यावरण विभाग का प्रयोजन है। एक निश्चित उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए भी प्रत्येक केन्द्र की वार्षिक रूपरेखा निश्चित लक्ष्यों की वर्ष के पूर्व में ही बन जाती है और उस पर पूरे परिश्रम से कार्य सम्पन्न होता है। उदाहरण के लिए सन् 1986 में **पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद** ने **पूरे देश में पर्यावरणीय जागरूकता अभियान (Environmental Awareness Campaign) चलाया।** एक ही वर्ष की अवधि में सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में 45 केन्द्रों (मुख्यालय) पर लगभग 6,000 शिक्षकों को एक दिवसीय प्रशिक्षण देकर विभिन्न प्रदेशों की सरकारों के सहयोग से उप जिले, तहसील स्तर और फिर निचले स्तर तक के अध्यापकों को पर्यावरणीय प्रशिक्षण दिया गया। निःसन्देह पर्यावरण चेतना का यह कार्यक्रम पूरे देश को जाग्रति देने वाला प्रथम अपने प्रकार का एक ही अनूठा कार्यक्रम था।

इसी प्रकार अन्य उत्कृष्टता केन्द्रों में विशेषतः, (1) मद्रास केन्द्र पर पर्यावरण शिक्षा सामग्री के पैकेज, (2) धनबाद केन्द्र पर पर्यावरणीय विज्ञान एवं खनन में M. Tech की व्यवस्था, (3) बंगलौर केन्द्र पर जैविक विविधता (Biological Diversity) और (4) कोयम्बटूर केन्द्र पर भारतीय पक्षी विज्ञान एवं प्राकृतिक विज्ञान पर Data Bank प्रमुख हैं। कुल मिलाकर गह केन्द्र पर्यावरण के क्षेत्र में प्रकाश स्तम्भ हैं, जिनसे बहुत अपेक्षाएँ हैं।

3. विद्यालयों में पर्यावरणीय अनुस्थापना कार्यक्रम (Environmental Orientation Programmes in Schools)

मानव के पिछले पचास हजार वर्षों के इतिहास में ऐसा कहीं उल्लेख नहीं है कि पृथ्वी पर निवास करने वाले प्राणी को (मनुष्य और पशु) कोई ऐसी समस्या हो, जिससे उनका जीवन ही दूभर हो जाय। अथाह जल, विस्तृत भूमि, अपार वनस्पति सभी कुछ उपलब्ध था। पृथ्वी पर रहने वाले व्यक्तियों की संख्या भी इतनी न्यून थी कि वह आज की तुलना में नगण्य ही कही जा सकती है। अब से 10,000 वर्ष पूर्व का लिखित विवरण भी केवल 50 लाख ही बताता है।

पर ज्यों-ज्यों जनसंख्या में वृद्धि हुई तैसे-तैसे कई समस्याएँ, खाने, पीने और रहने की आने लगीं। माँग की पूर्ति के लिए वन कटे, बाँध बनाये गये, उपजाऊ जमीनों पर आवासीय मकानों का निर्माण हुआ, उद्योग-धंधों को बढ़ावा मिला, आवागमन के साधन बढ़े और इन सबके साथ पुरानी समस्याओं के साथ कई अन्य समस्याएँ और जुड़ गईं। वायु और जल जैसे नैसर्गिक पदार्थों की शुद्धता भी नहीं रह सकी। भोजन का भी अकाल होने लगा। कुल मिलाकर सामान्य प्राणी का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया।

1972 में स्वीडन (स्टॉकहोम) में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा **'मानव पर्यावरण'** पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में विश्व के अनेक राष्ट्रों के बीच पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर विषद चर्चा हुई। पर्यावरणीय असन्तुलन और पर्यावरण विकृति से विश्व को बचाने हेतु कई सुझाव प्रस्तुत हुए और स्वीकार भी किये गये। इसके बाद विविध आयामों पर अनेक क्षेत्रीय स्तर की कान्फ्रेन्स आयोजित हुई। इस बात पर सदैव बल दिया गया कि पर्यावरणीय संकट से बचाने के लिए **'पर्यावरण शिक्षा'** का स्तर हर स्तर पर चलाया जाय। साथ ही पर्यावरण विकृति के कारणों से सभी को परिचित कराया जाय।

विद्यालयों में पर्यावरण अनुस्थापना कार्यक्रम (Environmental Orientation Programmes in Schools) इसी क्रम में भारत सरकार द्वारा स्कूली बच्चों के लिए चलाये जाने वाला एक प्रोग्राम है जिसके अन्तर्गत विद्यालयों में एक ऐसा वातावरण तैयार करना है जिससे बच्चे अपने दायित्वों को समझें और पर्यावरणीय समस्याओं से भी अवगत हो जावें। निःसन्देह बच्चों पर ही तो देशों का भविष्य निर्भर है।

इस योजना में कुल मिलाकर ग्यारह (11) कार्यक्रम हैं—

(1) विद्यालयों में नर्सरी कार्य (वाटिकाओं का निर्माण)।
(2) पाठ्य पुस्तकों का पर्यावरणीय सामग्री के समावेश के साथ रिवीजन।
(3) अध्यापकों का प्रशिक्षण (प्रत्येक विद्यालय से एक अध्यापक)।
(4) ऐतिहासिक एवं पुरातत्व महत्त्व के स्मारकों को गोद लेना।
(5) विद्यार्थियों का प्रकृति भ्रमण।
(6) गाँवों का पर्यावरणीय अध्ययन।
(7) शहरों का पर्यावरणीय अध्ययन।
(8) विभिन्न पर्यावरणीय विकृतियों का अध्ययन।
(9) सेमीनारों का आयोजन।
(10) पाठ्यक्रम निर्माण हेतु कार्यगोष्ठियाँ एवं
(11) पर्यावरणीय सामग्री का निर्माण।

इस योजना के एक प्रोजेक्ट में सामान्यतया दो जिले सम्मिलित किये जाते हैं, और उन दोनों जिलों के समस्त प्राइमरी एवं उच्च प्राइमरी विद्यालयों के विद्यार्थियों को इस योजना के कार्यक्रमों में रखा जाता है। पूरी योजना व्यावहारिक पक्ष पर आधारित है।

भारत सरकार द्वारा ऐसे प्रोजेक्ट्स राज्य सरकार के शिक्षा विभाग को दिये जाते हैं और इन पर होने वाला समस्त व्यय भारत सरकार द्वारा ही किया जाता है।

निःसन्देह इस प्रकार की योजना से छोटी आयु से ही पर्यावरण के प्रति विद्यार्थियों में विचार दृढ़ होते हैं, जिससे भविष्य में वे और ऊँचे स्तर के कार्य सम्पन्न कर सकें। निश्चय ही यह एक अच्छा प्रयास है।

पिछले सात वर्षों से चली आ रही योजना का जब 1992 में मूल्यांकन किया गया तो मूल्यांकन समिति ने अपने प्रतिवेदन में इस कार्यक्रम की उपलब्धि के बारे में बहुत उत्साहवर्द्धक रिपोर्ट नहीं दी। विशेषतः व्यावहारिक रूप से विद्यालयों में किये जाने वाले नर्सरी कार्य को वह गति नहीं मिल पाई जितनी विभाग को अपेक्षा थी। अतः उन्होंने कई कठोर कदम उठाये—

(1) कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रस्तावित अधिकारी व अन्य कर्मचारियों के स्टाफ के वेतन आदि का भुगतान राज्य सरकार के जिम्मे ही कर दिया। तथा

(2) विभिन्न स्वीकृत कार्यों को जिनमें पाठ्यक्रम का निर्माण, सेमीनारों का आयोजन, वर्कशाप्स तथा अध्यापकों के प्रशिक्षण आदि सम्मिलित हैं, शिक्षा विभाग के जिले स्तर पर के कार्यरत अधिकारियों को सौंप दिया।

वस्तुतः इस प्रकार केन्द्रीय पर्यावरण विभाग द्वारा निर्देशित तथा केन्द्रीय शिक्षा विभाग भारत सरकार द्वारा संचालित इस कार्यक्रम को अब राज्यों के शिक्षा विभाग का एक नियमित कार्यक्रम बना दिया गया है। वैसे इस कार्यक्रम से पूरे देश की भावी पीढ़ी में, जो प्राथमिक स्तर के विद्यालयों में पढ़ रही है, देश की पर्यावरण सुरक्षा के प्रति भावना उपजेगी और बलवती होगी।

4. राष्ट्रीय पर्यावरणीय चेतना अभियान (National Environmental Awareness Compaign : NEAC)

पर्यावरण का मानव जीवन से गहरा और अटूट सम्बन्ध है और इसीलिए एक अच्छे जीवन के लिए जो मुख्य आवश्यकताएँ अपेक्षित हैं, वहीं पर्यावरण के मुख्य घटक भी हैं। प्रकृति ने वायु, जल, भूमि, प्रकाश, आकाश, पेड़-पौधे और वनस्पति सभी विशुद्ध रूप से हमें उपलब्ध कराये हैं और उनका वितरण भी सभी को समान रूप से बिना भेदभाव के किया है। पर जब-जब भी मानव ने इस प्राकृतिक सन्तुलन को छेड़ा है तब-तब ही पर्यावरण बिगड़ा है और वही चिन्ता का विषय बन गया है।

पर्यावरण विकृति से अनेक समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, पेड़-पौधे और वनस्पति की कमी, खनिजों का प्रायः समाप्त होना, ईंधन का अभाव, भोजन और भूसा की कमी, बाढ़ और सूखा आदि इनमें मुख्य हैं।

यदि हम पर्यावरण असन्तुलन के मुख्य कारणों को खोजें तो मूल में हमें चार बातें अत्यन्त प्रभावी रूप से दिखती हैं—

1. निरन्तर बढ़ती जनसंख्या से प्राकृतिक संसाधनों का अधिक दोहन।
2. औद्योगिक क्रान्ति के कारण उद्योगों से निकलने वाले धुएँ और अपशिष्टों का अनियंत्रित निकास।
3. प्राकृतिक नियमों की अवहेलना और उपेक्षा तथा
4. पर्यावरण असन्तुलन के कारणों से जानकारी रखते हुए भी जनमानस का उनसे अलगाव।

बढ़ती जनसंख्या को नियन्त्रित करने हेतु राज्य सरकार ने **'परिवार कल्याण कार्यक्रम'** चला रखे हैं। विभिन्न उद्योगों से जन-साधारण को कम से कम हानि पहुँचे इस हेतु राज्य ने **'राज्य प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल'** का गठन किया हुआ है, जिसके विशेषज्ञ चिमनियों से निकलने वाले धुएँ और कारखानों से निकलने वाले पानी का नियमित मानीटरिंग करके उद्योग मालिकों को निर्देशित करते रहते हैं। पर इनसे भी महत्त्वपूर्ण बात आम आदमी की पर्यावरण के प्रति उदासीनता है जिससे न तो वह प्रकृति के अनुरूप चलता है और न ही अन्य कारणों को समाप्त अथवा कम करने की बात सोचता है।

अतः केन्द्रीय पर्यावरण विभाग ने **'राष्ट्रीय पर्यावरणीय चेतना अभियान'** के अन्तर्गत एक बहुत ही ठोस और देशव्यापी कार्यक्रम बनाया और जिसे सर्वप्रथम 1986 में **'पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद'** के द्वारा सम्पन्न कराया गया। **भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गाँधी के जन्म दिवस 19 नवम्बर से**

18 दिसम्बर तक चलाये गये इस पहले कार्यक्रम की अवधि एक माह थी, जिसे पर्यावरण माह (Environment Month) नाम दिया गया। अब निरन्तर यह चेतना का कार्यक्रम 'पर्यावरण माह' इसी अवधि में अब प्रति वर्ष पूरे देश में चलाया जाता है।

सन् 1986 से अब तक चलाये गये कार्यक्रमों की प्रति वर्ष एक निश्चित विषय वस्तु (Theme) रही है, जिसमें आज पूरे देश के हजारों बच्चे, वयस्क और बड़ी आयु के लोग बहुत ही दिलचस्पी से भाग लेते हैं। इसमें, (1) पद यात्राएँ, (2) रैलियाँ, (3) जनसभाएँ, (4) प्रदर्शनियाँ, (5) लोक-नृत्य, (6) नुक्कड़-नाटक, (7) स्कूली बच्चों के लिये निबन्ध/वाद विवाद/चित्रकला/पोस्टर प्रतियोगिताएँ, (8) सेमीनार, (9) कार्यशालाएँ, (10) प्रशिक्षण कार्यक्रम, (11) पर्यावरणीय सामग्री निर्माण आदि कार्य आयोजित किये जाते हैं। पिछले वर्षों की समेकित जानकारियाँ निम्न सारणी में प्रस्तुत की गई हैं।

सारणी 27·4

राष्ट्रीय पर्यावरण जन चेतना अभियान (NEAC)

क्र.सं.	सत्र	जन चेतना का विषय
1.	1986-87	पर्यावरण के सामान्य पक्ष (General Aspects of Environment)
2.	1987-88	बाढ़ और सूखा (Floods & Droughts)
3.	1988-89	अपने जल संसाधनों का संरक्षण करें (Conserving Our Water Resources)
4.	1989-90	उपरोक्त प्रकार ही (Same as above)
5.	1990-91	पर्यावरण बचाओ : स्वयं को बचाओ (Save Environment : Save Yourself)
6.	1991-92	विश्व पर्यावरण समस्याओं में जनता की भागीदारी (People's Participation in Global Environmental Concerns)
7.	1992-93	जैविक विविधता (Biodiversity)
8.	1993-94	पशु कल्याण और अपशिष्ट प्रबन्ध (Animal Welfare and Waste Management)
9.	1994-95	संयुक्त वन प्रबन्धन, पारिस्थितिकी विकास और मोन्ट्रियल प्रोटोकॉल (Joint Forest Management, Eco Development and Montreal Protocol)
10.	1995-96	महिलाएँ और पर्यावरण (Women and Environment)
11.	1996-97	औषधीय पौधे (Medicinal Plants)
12.	1997-98	प्रदूषण बचाव व नियंत्रण तथा वृक्षारोपण संरक्षण (Pollution Prevention & Control and Conservation of Plantation)
13.	1998-99	अपने जल स्त्रोतों को साफ रखें (Keep Our Water Resources Clean)
14.	1999-2000	अपने पर्यावरण को साफ और हरा रखें (Keep your Environment Clean and Green)
15.	2000-2001	उपर्युक्त प्रकार ही (Same as above)
16.	2001-02	सतत् विकास (Sustainable Development)
17.	2002-03	जल : जीवन का अमृत (Water : Elixir of Life)

स्त्रोत : Annual Reports, Ministry of Environment and Forests, Govt. of India, New Delhi.

यह कार्यक्रम पर्यावरण शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत 28 निर्धारित क्षेत्रीयं संसाधन एजेन्सियों (Regional Resource Agencies : RRA) के मार्फत चलाये जाते हैं। प्रदेशों को निश्चित एजेन्सी के साथ पूर्व में ही सम्बद्ध कर दिया जाता है।

5. पर्यावरण वाहिनी (Paryavaran Vahini/Environment Brigrades)

केन्द्रीय पर्यावरण विभाग द्वारा यह नया कार्यक्रम सत्र 1992-93 से ही प्रारम्भ किया गया है जिसके प्रमुख उद्देश्य अग्रलिखित हैं—

(1) सक्रिय भागीदारी से जनता में पर्यावरण के प्रति चेतना (जाग्रति) तथा उनकी संबद्धता उत्पन्न करना।

(2) वन, वन्य जीव, प्रदूषण तथा पर्यावरणीय ह्रास के सन्दर्भ में गैरकानूनी किए जा रहे कार्यों की सूचना देना।

(3) वनीकरण तथा पौधों के जीवित रहने के सन्दर्भ में पूरी जानकारी उपलब्ध कराना। तथा

(4) शुद्ध वायु और जल की गुणवत्ता तथा वाहन प्रदूषण का विश्लेषण और मानीटरिंग करना।

इन उद्देश्यों से ही यह स्पष्ट है कि पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण सुधार तथा पर्यावरण प्रदूषण अथवा विकृति के कारणों से आम जनता को संबद्ध करने का यह एक अद्भुत शक्तिशाली प्रयास है। आगे भी इन समस्याओं का जन्म न हो इस हेतु भी लोगों की भागीदारी में वृद्धि करना है।

प्रथम चरण के अन्तर्गत सत्र 1992-93 में देश के 25 राज्य तथा 4 केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में 100 जिलों में 'पर्यावरण वाहिनियों' का गठन किया गया जो सीधे जिला कलेक्टर के अधीन थे। प्रत्येक वाहिनी में 20 सदस्य होते हैं जिन्हें विद्यार्थी, युवक, व्यक्ति तथा अराजकीय स्वयंसेवी संस्थाओं से लिया जाता है। **इन्हें पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं की जानकारी छोटी-छोटी सेमीनारों तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों में देकर इस योग्य बनाया जाता है कि वे अपने जिले (क्षेत्र) की पर्यावरण की समस्याओं के बारे में समझ सकें तथा उनकी तथ्यात्मक रिपोर्टिंग वाहिनी के मनोनीत अध्यक्ष (जिला कलेक्टर पदेन) को कर उस पर सम्बन्धित विभागों से समुचित कार्यवाही करा सकें। अब तक सभी राज्यों में और संघ राज्य क्षेत्रों में 144 जिलों में ऐसी वाहिनियाँ कार्य प्रारम्भ कर चुकी हैं (194 जिलों का चयन किया जा चुका है)।**

इन वाहिनियों का समस्त व्यय केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा किया जाता है। प्रत्येक राज्य के पर्यावरण विभागों से यह अपेक्षा की गई है कि वे इस वाहिनी के सदस्यों को सामान्य तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराने में सम्बन्धित जिला कलेक्टरों को सहयोग करेंगे।

6. पारिस्थितिकी क्लब (Eco-Clubs)

वर्ष 1994-95 से यह कार्यक्रम केन्द्रीय पर्यावरण विभाग ने प्रारम्भ किया है। प्रत्येक राज्य तथा केन्द्र शासित प्रदेशों के मान्यता प्राप्त सेकण्डरी/सीनियर सेकण्डरी विद्यालयों के कक्षा VI से X तक के विद्यार्थी विद्यालय स्तर पर बनाये गये क्लब में सदस्य बन सकते हैं। एक क्लब में 20 से 50 तक सदस्य हो सकते हैं।

इन क्लबों के बनाने के पीछे पर्यावरण के क्षेत्र में बालकों की रुचि को बनाये रखने का मुख्य लक्ष्य है। इनकी देखरेख कोई मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्था, स्वयंसेवी संस्था अथवा केन्द्रीय पर्यावरण विभाग द्वारा अधिकृत संस्था के अधीन हो सकती है। अब तक इस क्षेत्र में 3000 से अधिक क्लब खोले जा चुके हैं। इन क्लबों का सभी वित्तीय भार केन्द्रीय पर्यावरण विभाग वहन करता है।

नवीनतम जानकारी के अनुसार अब यह योजना 'राष्ट्रीय हरित दल' (National Green Corps) के नाम से कार्य करेगी। इस कार्यक्रम में प्रत्येक जिले के न्यूनतम 100 स्कूलों में पारि-क्लब (Eco-clubs) स्थापित करना है ताकि देश के लगभग 55,000 स्कूलों में यह कार्यक्रम चल सके। शनैः-शनैः यह कार्यक्रम देश के सभी उच्च प्राथमिक से उच्च माध्यमिक विद्यालयों में नियमित रूप से चलेगा।

इस कार्यक्रम के निम्न उद्देश्य हैं—

1. स्कूली बच्चों को पर्यावरण एवं पर्यावरणीय समस्याओं से अवगत कराना,
2. स्कूल में ही बच्चों में 'पर्यावरण शिक्षा' उपलब्ध कराना,
3. बच्चों को समाज के हित में तैयार करना,
4. बच्चों को पर्यावरण और विकास से जोड़ना तथा
5. बच्चों को पर्यावरणीय समस्याओं को सुलझाने हेतु तैयार करना।

7. स्वच्छ गंगा : गंगा परियोजना (Clean Ganga : Ganga Project)

श्रीमती इन्दिरा गाँधी की मृत्यु (31 अक्टूबर 1983) के बाद जब राजीव गाँधी 1984 में प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने अपने पहले राष्ट्रीय प्रसारण में पर्यावरण संरक्षण की महत्ता बताते हुए सर्वप्रथम पूरी निम्न

से देश की पावन नदी गंगा की स्वच्छता पुनः वापस लाने का संकल्प लिया। गंगा नदी पूरे देश की एकमात्र ऐसी नदी है जिससे सभी औपचारिकताओं के अतिरिक्त यहाँ की संस्कृति और भावनायें सदियों से जुड़ी हैं। निरन्तर बढ़ते औद्योगीकरण के फलस्वरूप उनसे निकलते प्रदूषित बहिस्राव से तथा किनारे पर बसे शहरों के मल-मूत्र विसर्जन और कूड़े-करकट के मिलने से नदी का पानी इतना दूषित हुआ है कि वह पीने के योग्य नहीं रहा। अतः उसे हरसम्भव प्रयास से स्वच्छ करने की बात निश्चित की गई थी।

इस कार्य की पूरी योजना तैयार करने तथा उचित मानीटरिंग कर क्रियान्विति करने के लिए फरवरी 1985 में **'केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण'** (Central Ganga Authority) का गठन किया गया, जिसके अध्यक्ष स्वयं प्रधानमंत्री थे। 13 सदस्यीय प्राधिकरण के गठन का प्रकार निम्न है—

1. प्रधानमंत्री —अध्यक्ष
2. केन्द्रीय वित्त मंत्री —सदस्य
3. केन्द्रीय जल संसाधन मंत्री —सदस्य
4. मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश —सदस्य
5. मुख्यमंत्री, पश्चिमी बंगाल —सदस्य
6. मुख्यमंत्री, बिहार —सदस्य
7. उपाध्यक्ष, योजना आयोग —सदस्य
8. केन्द्रीय योजना राज्य मंत्री —सदस्य
9. केन्द्रीय पर्यावरण एवं वन राज्य मंत्री —सदस्य
10. केन्द्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी राज्य मंत्री —सदस्य
11. सदस्य (विज्ञान), योजना आयोग —सदस्य
12. सचिव, गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत विभाग —स्थायी आमंत्रित
13. सचिव, पर्यावरण, वन और वन्य जीव विभाग —स्थायी आमंत्रित।

इस प्राधिकरण का मुख्य कार्य गंगा नदी के गुणों को पुनर्जीवित करने के लिए एक दीर्घकालीन कार्यक्रम तैयार कर इसकी क्रियान्विति करना था।

गंगा नदी 8 राज्यों (हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल) में तथा केन्द्र प्रशासित राज्य दिल्ली में होती हुई बहती है। प्रदूषण का मुख्य स्रोत शहरी एवं औद्योगिक संस्थानों का कूड़ा-करकट है जो एक लाख से ऊपर आबादी वाले 29 शहरों, पचास हजार से एक लाख तक की आबादी वाले 23 शहरों तथा पचास हजार से कम की आबादी वाले 48 कस्बों द्वारा फेंका जाता है।

ये आबादियाँ गंगोत्री से गंगासागर तक के 2525 किलोमीटर लम्बे जल मार्ग पर बसी हुई हैं। अनुमान है कि गंगा नदी का 75 प्रतिशत प्रदूषण स्थानीय निकायों द्वारा डाले गये कूड़े-करकट से होता है, जिसमें असंसाधित मल जल शामिल है।

गंगा के प्रदूषण से सबसे अधिक प्रभावित एवं त्रस्त मुख्यतः केवल तीन प्रदेश (उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल) हैं। अतः सभी कार्य योजनाएँ इन्हीं प्रदेशों के लिए बनाई गई थीं तथा आंशिक व्यय भार भी इन्हीं प्रदेशों के हिस्से में आया था। केन्द्र सरकार द्वारा विशेष बजट इस हेतु अलग से आवंटित था। इसके साथ ही विदेशी सरकारों ने भी इस योजना में अपनी भागीदारी की पेशकश की थी जिनमें ब्रिटेन, फ्रान्स, नीदरलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका सम्मिलित रहे हैं। विश्व बैंक ने भी सहायता प्रदान की थी जिसमें उसका योगदान विशेषतः परियोजना की व्यवस्था, वर्तमान उपचार संयन्त्रों का पुनर्वास, संयन्त्रों की क्षमता में वृद्धि और उपकरणों के उपलब्ध कराने सम्बन्धी कार्य प्रस्तावित था।

इस परियोजना में 6 प्रकार की कुल 261 योजनाएँ (स्कीमें) स्वीकृत की गई थीं जिनमें मार्च 2002 तक की रिपोर्ट के अनुसार 258 पूरी हो चुकी थीं। शेष समाप्ति की ओर हैं। इसका एक समेकित विवरण अग्रांकित सारणी में देखें—

सारणी 27·5
गंगा परियोजना की कार्य प्रगति

क्र.सं.	स्कीम का नाम	स्वीकृत स्कीमें				पूरी हुई स्कीमें			
		उ.प्र.	बिहार	प.बंगाल	कुल	उ.प्र.	बिहार	पं.बंगाल	कुल
1.	अवरोधन तथा दिशा परिवर्तन (Interception and Diversion schemes)	40	17	31	88	40	17	31	88
2.	मल जल शोधन संयंत्र (Sewage Treatment Plants)	13	7	15	35	13	5	14	32
3.	अल्प लागत स्वच्छता (Low Cost Sanitation)	14	7	22	43	14	7	22	43
4.	विद्युत शवदाह गृह (Electric Crematoria)	3	8	17	28	3	8	17	28
5.	नदी तटाग्र सुविधाएँ (River Front Facilities)	8	3	24	35	8	3	24	35
6.	अन्य स्कीमें (Other Schemes)	28	3	1	32	28	3	1	32
	योग	106	45	110	261	106	43	109	258

यह स्थिति 31 मार्च, 2002 तक की है; शेष तीन कार्य भी 30 सितम्बर, 2002 तक सम्पन्न हुये होंगे, ऐसी सम्भावना थी।

इस योजना की क्रियान्विति से जनता को लाभ इस मूल्यांकन से आँका जा रहा है कि इस क्षेत्र में जल से सम्बन्धित बीमारियों जैसे पेचिस, त्वचा रोग, श्वांस सम्बन्धी रोग, कृमि रोग आदि की संख्या में कमी आई है। लोगों में स्वच्छता का आभास होने लगा है और उनमें इसे स्वच्छ रखने तथा जहाँ तक सम्भव हो इसमें गंदगी न मिल पाने के प्रति जागरूकता आई है।

विशेष ध्यान देने की बात यह है कि 1.4.2000 से 'केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण' (Central Ganga Authority) को बन्द कर दिया गया है। अब यह नई योजना के अन्तर्गत 'गंगा कार्य योजना' (Ganga Action Plan) के नाम से कार्य करेगी, जिसे विभिन्न चरणों में विभाजित किया गया है। उपरोक्त कार्य इस योजना के तहत 'गंगा परियोजना' का प्रथम चरण (Ganga Action Plan—Phase I) कहा जायेगा।

गंगा परियोजना का दूसरा चरण **'स्वच्छ यमुना और गोमती'** (Clean Yamuna & Gomati) है, जिसमें 421 करोड़ रुपये के प्रस्तावित व्यय से यमुना के किनारे के 15 शहरों तथा गोमती नदी के किनारे के 3 शहरों से प्रदूषण रोकना है। यह केन्द्रीय परिवर्तित योजना (Centrally Sponsored Scheme) के तहत होगा जिसमें आधा व्यय केन्द्र तथा आधा व्यय राज्य सरकार करेगी। **नवीनतम् जानकारी के अनुसार 'यमुना परियोजना' हेतु व्यय प्रस्तावित राशि 357 करोड़ रुपये के लिए जापान सरकार से सहायता उपलब्ध होने की आशा है; तथा इसी प्रकार 'गोमती परियोजना' के प्रस्तावित व्यय 64 करोड़ रुपये का भार यू० के० का ओवरसीज डवलपमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन उठाने को सहमत हो गया है।**

इस क्रम में अब आगे 'दामोदर नदी स्वच्छता कार्यक्रम' को लिये जाने हेतु सर्वेक्षण और अध्ययन किया जा रहा है।

***विशेष*—1. जुलाई 1995 में राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना के अनुमोदन से 'केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण' का 'राष्ट्रीय नदी संरक्षण प्राधिकरण' के रूप में पुनर्गठन किया गया है तथा 'गंगा परियोजना निदेशालय' का नाम बदल कर पुनः 'राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय' कर दिया गया है।**

2. कालान्तर में राष्ट्रीय नदी कार्य योजना (National River Action Plan–NRAP) के तहत देश की प्रमुख सभी नदियों की स्वच्छता का काम होगा। राज्य स्तर पर इसकी योजनाएँ, क्रियान्विति चरण और अनुमानतः व्यय का विवरण तैयार किया जा रहा है।

8. पर्यावरण के अनुकूल उत्पाद (Environment Friendly Products)

देश की जनता को पर्यावरण के अनुकूल उत्पाद उपलब्ध कराने की दिशा में पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) ने एक योजना तैयार की है जिनमें उन सभी वस्तुओं, जिनसे पर्यावरण की दृष्टि से उपभोक्ताओं को न तो कोई स्वयं को हानि हो और न ही पर्यावरण को, पर 'लेबिल' अथवा 'मार्का' लगा होगा। यह मार्का जैसे ऊन पर 'वूलमार्क' होता है, के प्रकार का होगा। 'ECOMARK' नाम से जाना जाने वाले मार्क के साथ उसका लोगो (प्रतीक चिन्ह), निश्चित किया हुआ **एक मिट्टी का घड़ा** (Earthen Pot) भी होगा। इसकी विज्ञप्ति समाचार पत्रों में दी जा चुकी है (फरवरी 21,1991) तथा आगे कार्यवाही निरन्तर लेकिन धीमी प्रगति पर है।

अब तक की जानकारी के अनुसार प्रारम्भ में 16 वस्तुओं को इस परिधि में लाने हेतु चुना गया है। 4 वस्तुओं, साबुन, डिटरजेन्ट्स, कागज और पेन्ट्स के समाचार पत्रों में नोटीफिकेशन दिये जा चुके हैं शेष के ड्राफ्ट्स तैयार हैं।

एक राष्ट्रीय स्तर की संचालन समिति का गठन इस योजना को लागू करने के लिए कर दिया गया है। दूसरी तकनीकी कमेटी इस संचालन समिति की सहायता करेगी और इस प्रकार के उत्पादों का चयन तथा ECOMARK अंकित करने का माप दण्ड तैयार कर उससे अंकन करायेगी।

निश्चय ही यह एक अपने प्रकार की विभाग की प्रथम पहल है जिससे प्रशासन और जनता दोनों को पर्यावरण के क्षेत्र में अपने-अपने सहयोग की भावना की पूर्ति दिखाई देगी। ऐसा अनुमान है कि **जैसे-जैसे अनुकूल उत्पादों की संख्या बढ़ेगी, तैसे-वैसे उत्पादों की शुद्धता, सही माप अथवा तोल और सही उपलब्धता की प्रमाणिकता बढ़ेगी, जो भारत जैसे देश के लिए वरदान साबित होगी। पर्यावरण की दृष्टि से मिलावट पर रोक, उपयोग से कोई हानि होने की संभावना आदि से छुटकारा तो मिलेगा ही, साथ ही उपभोक्ताओं की भी कई व्यावहारिक समस्याएँ कम हो जायेंगी।**

9. राष्ट्रीय स्तर के प्रमुख पुरस्कार (Important National Level Awards)

भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय के अन्तर्गत स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहे पर्यावरण विभाग ने पर्यावरण क्षेत्र में कार्य कर रहे व्यक्ति अथवा संस्थाओं को कई पुरस्कारों का प्रावधान किया है। इसमें सीधे विभाग का मुख्य लक्ष्य पर्यावरण के प्रति व्यक्ति, समूहों तथा संस्थाओं में रुचि जाग्रत कर पूरे देश में स्पर्धा का वातावरण तैयार करना है। यह हैं—

(1) **इन्दिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार** (Indira Gandhi Paryavaran Puraskar-IGPP) : यह पुरस्कार किसी व्यक्ति अथवा किसी संस्था (संगठन) को प्रतिवर्ष उनके द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये जाने के फलस्वरूप प्रदान किया जाता है। 1987 से प्रारम्भ हुआ यह पुरस्कार पहले केवल व्यक्तियों तक ही सीमित था, जिसे 1991 से संस्थाओं व संगठनों के लिए भी दिया जाने लगा है। **इस पुरस्कार में एक चाँदी की ट्राफी, एक लाख रुपये नगद, एक स्क्रोल तथा एक प्रशस्ति पत्र दिया जाता है।**

(2) **इन्दिरा प्रियदर्शिनी वृक्ष मित्र पुरस्कार** (Indira Priyadarshini Vriksha Mitra Awards—IPVM) : वनरोपण (Afforestation) और परती भूमि विकास (Wastelands Development) के क्षेत्र में व्यक्तियों और संगठनों के महत्त्वपूर्ण योगदान को मान्यता देने के लिए वार्षिक पुरस्कार सन् 1986 से प्रारम्भ किये गये। **प्रति वर्ष निम्न आठ श्रेणियों में कुल सोलह पुरस्कार दिये जाते हैं—**

(1) **व्यक्तियों (Individuals)**

(2) **पंचायत/ग्राम सभा/ग्रामीण संस्थाएँ (Panchayat/Gram Sabha/Village Level Institutions)**

(3) **शैक्षिक संस्थाएँ (Educational Institutions)**

(4) स्वैच्छिक एजेन्सियाँ महिला मण्डल, युवक मण्डल सहित (Voluntary Agencies including Mahila Mandals & Yuvak Mandals)
(5) सरकारी एजेन्सियाँ : जिनका स्तर जिला स्तर से ऊपर न हो (Government Agencies : Status not higher that of a District)
(6) निगम क्षेत्र (Corporate Sector)
(7) सरकारी कर्मचारी : व्यक्ति (Government Servants : Individuals)
(8) नगरपालिकाएँ, नगर निगम (Municipalities and Municipal Corporations)

प्रत्येक पुरस्कार के लिए एक पदक, प्रशस्ति पत्र, एक स्क्रोल तथा 50,000 रुपये नगद पुरस्कार का प्रावधान है।

(3) **प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण हेतु राष्ट्रीय पुरस्कार** (National Awards for Prevention and Control of Pollution) : यह राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार सन् 1991 से प्रारम्भ किये गये। यह प्रति वर्ष उन उद्योगों को दिये जाते हैं जो पर्यावरणीय प्रदूषण के निवारण एवं नियन्त्रण के क्षेत्र में अपनी महती भूमिका निभाते हैं। **इस पुरस्कार में एक 'कप' अथवा शील्ड** (Cup or Shield) **तथा प्रशस्ति पत्र दिया जाता है।**

इस श्रेणी में प्रतिवर्ष निम्न 18 भारी प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों में अनुकरणीय कार्य करने वाली इकाइयों को यह पुरस्कार दिये जाने का प्रावधान है—

1. चीनी (Sugar), 2. उर्वरक (Fertilizer), 3. सीमेण्ट (Cement), 4. फर्मेन्टेशन और डिस्टलरी (Fermentation and Distillery), 5. एल्यूमिनियम (Aluminium), 6. पेट्रो रसायन (Petro-chemicals), 7. ताप विद्युत (Thermal Power), 8. कास्टिक सोडा (Caustic-soda), 9. तेल शोधन (Oil Refinery), 10. सल्फ्यूरिक अम्ल (Sulphuric Acid), 11. चर्म शोधन (Tanneries), 12. ताँबा प्रगालक (Copper Smelting), 13. जस्ता प्रगालक (Zinc Smelting), 14. लौह और इस्पात (Iron and Steel), 15. लुगदी और कागज (Pulp and Paper), 16. रंग और रंग अवयव (Dye and Dye-intermediates), 17. कीटनाशक (Pesticides) और 18. फार्मास्यूटीकल्स (Pharmaceuticals)।

इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष निम्न पाँच लघु उद्योगों की इकाइयों हेतु भी पुरस्कार हैं—

1. चर्म शोधक (Tanneries), 2. लुग्दी और कागज (Pulp and Paper), 3. रंग और रंग अवयव (Dye and Dye-intermediates), 4. कीटनाशक (Pesticides) और फार्मास्यूटीकल्स (Pharma-ceuticals)।

जो उद्योग पुरस्कार प्राप्त करता है उनके कर्मचारी अपनी टाई, कमीज अथवा कहीं कोट के कालर आदि पर ENV का चिन्ह लेपिल पिन (Lapel Pin) **लगा सकते हैं, जो उनकी इस उपलब्धि का सूचक है।**

(4) **पीताम्बर पंत राष्ट्रीय पर्यावरण फैलोशिप पुरस्कार** (Pitamber Pant National Environment Fellowship Award) : पर्यावरण विज्ञान की किसी भी शाखा में उल्लेखनीय शोध को बढ़ावा तथा मान्यता देने के लिए यह फैलोशिप पुरस्कार प्रति वर्ष शोधकर्त्ताओं को प्रदान किये जाते हैं। **1978 से प्रारम्भ हुए इस पुरस्कार (फैलोशिप) में जिस व्यक्ति का चयन होता है उसे दो वर्ष तक पूर्णकालिक शोध कार्य करना होगा तथा इस अवधि में किये गये कार्य की नियमित रिपोर्ट देनी होगी।**

फैलोशिप प्राप्त करने वाले व्यक्ति को दो वर्ष तक की अवधि के लिये 4000 रुपये प्रतिमाह (इनकम टैक्स की छूट के साथ) मिलेगा। अन्य स्टेशनरी आदि कन्टिन्जैन्सी व्यय हेतु 18,000 रुपये प्रति वर्ष तथा किसी एक सहयोगी स्टाफ रखने हेतु व्यय प्रति माह अलग से मिलेगा। यह सारा व्यय पर्यावरण विभाग भारत सरकार द्वारा उठाया जायेगा।

(5) **मरु पारिस्थितिकी फैलोशिप** (Desert Ecology Fellowship) : मरु पारिस्थितिकी के सन्दर्भ में अध्ययन व शोध को बढ़ावा देने तथा प्रकृति संरक्षण के विश्नोई समाज के योगदान को मान्यता देने के उद्देश्य से यह फैलोशिप केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय ने जोधपुर विश्वविद्यालय के लिए उपलब्ध कराई है। **विश्वविद्यालय स्तर पर प्रति वर्ष इस फैलोशिप को उपयुक्त**

प्रार्थी/प्रत्याशी को प्रदान करने हेतु एक निर्धारित कमेटी द्वारा चयन किया जाता है। फैलोशिप में मिलने वाली धनराशि 3,500 रु० प्रतिमाह तथा 12,000 रु० प्रतिवर्ष का कन्टिन्जैन्सी अनुदान दिया जाता है।

(6) **मेदिनी पुरस्कार (Medini Puraskar) :** पर्यावरण से सम्बन्धित विषयों पर हिन्दी में सृजनात्मक तथा मौलिक लेखन को बढ़ावा देने के लिए यह योजना सन् 1987 से प्रारम्भ की गई। **इसमें प्रति वर्ष लगभग पाँच पुरस्कार, प्रथम 25,000 रुपये, द्वितीय 20,000 रुपये, तृतीय 15,000 रुपये तथा सांत्वना (दो) 10,000 रुपये प्रत्येक प्रदान किये जाते हैं। यह प्रोत्साहन केवल अच्छे साहित्य की प्रविष्टियों पर निर्भर करता है और इस क्रम में अनेक नये लेखकों को प्रोत्साहन मिला है।**

(7) **पर्यावरण सुरक्षा हेतु सुल्तान काबू पुरस्कार (The Sultan Quabos's Prize for Environmental Preservation) :** पर्यावरण सुरक्षा के क्षेत्र में यह एक नया पुरस्कार है जिसकी वृहद् जानकारी वर्ष 1991-92 में यूनेस्को की पेरिस कान्फ्रेन्स में दी गई। **यह पुरस्कार ओमान के सुल्तान के सौजन्य से बनाये गये एक संचित कोष जिसका मूल्य 2,50,000 अमेरिकी डालर है, से आने वाले ब्याज से दो वर्ष में एक बार प्राप्त होगी।**

यह पुरस्कार पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधन, शोध कार्य, पर्यावरणीय शिक्षा और प्रशिक्षण, पर्यावरणीय चेतना तथा जाग्रति के लिए किये गये प्रयास, किसी बायोस्फीयर रिजर्व अथवा किसी विश्व स्तर के पर्यावरणीय क्षेत्र के विकास के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्ति, व्यक्ति समूह, संगठन अथवा संस्थानों को मिल सकेगी।

इस पुरस्कार की कुल संख्या तथा इसमें मिलने वाली राशि निश्चित नहीं है क्योंकि किसी खास सूत्र (Formula) के अनुसार प्रतिवर्ष यह निश्चित की जाया करेगी। यह उल्लेखनीय है कि प्रथम बार प्रथम पुरस्कार पाने वाले प्रत्याशी को यह राशि 20,000 अमेरिकी डालर की घोषणा हुई थी।

आवेदन पत्र पर्यावरण विभाग, भारत सरकार से प्राप्त कर उन्हें ही भेजे जाते हैं, जहाँ से वह गन्तव्य स्थान पर भिजवाये जा सकेंगे।

(8) **महावृक्ष पुरस्कार (Maha Vriksha Puraskar) :** यह एक नया पुरस्कार सत्र 1993-94 से ही प्रारम्भ किया है जो वस्तुत : **'राष्ट्रीय वनीकरण एवं पारिस्थितिकी विकास बोर्ड'** (National Afforestation and Eco-development Board) द्वारा प्रतिवर्ष प्रत्येक उस व्यक्ति संस्था को दिया जाता है जिसके वृक्षों की मोटाई, ऊँचाई तथा स्वस्थता सबसे अच्छी हो। विभाग द्वारा वृक्षारोपण की किस्म की विज्ञप्ति की जाती है, जो 5 वर्ष तक रहती है। **पुरस्कार में 25,000 रु. नगद, एक स्मृति चिन्ह (Plaque) तथा एक प्रशस्ति पत्र दिया जाता है।**

(9) **पर्यावरण एवम् वन मन्त्रालय विशिष्ट वैज्ञानिक पुरस्कार (Paryavaran Evam Van Mantralaya Vishistha Vaigyanik Puraskar) :** यह पुरस्कार सत्र 1992-93 से प्रारम्भ किया गया है। वन मन्त्रालय तथा उसके सहयोगी कार्यालय और स्वयं स्वायत्त संस्थाओं के 'ए' श्रेणी के वैज्ञानिकों को शोध कार्य के लिए यह पुरस्कार दिया जाता है। **प्रति वर्ष 20,000 रु. प्रत्येक के दो पुरस्कार दिये जाने का प्रावधान है।**

(10) **स्वच्छ टैक्नोलॉजी के लिए राजीव गाँधी पर्यावरण पुरस्कार (Rajiv Gandhi Environment Award for Clean Technology) :** यह पुरस्कार वर्ष 1993 से प्रारम्भ किया गया है। उन औद्योगिक इकाइयों को, जो स्वच्छ टेक्नोलोजी का विकास करें तथा उद्योगों की पर्यावरणीय समस्याओं को अच्छे तरीके से सुलझा सकती हों, यह पुरस्कार देय होगा। इसमें देय धनराशि अथवा/तथा प्रमाण-पत्र का विवरण प्राप्त किया जा रहा है।

(11) **राजीव गाँधी राष्ट्रीय वन्य जीव पुरस्कार (Rajiv Gandhi National Wildlife Award) :** प्रति वर्ष उन अधिकारियों तथा वन्य क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों को दिया जाता है, जिन्होंने वन्य जीव संरक्षण और शोध के क्षेत्र में अनुकरणीय कार्य किया हो। **इसमें प्रति वर्ष 2 पुरस्कार दिये जाते हैं। प्रत्येक पुरस्कृत व्यक्ति को 1 लाख रु० नगद, एक प्रशस्ति पत्र तथा एक पदक दिया जाता है।**

(12) **बी० पी० पाल राष्ट्रीय जैव विविधता पर्यावरण फैलोशिप पुरस्कार** (B. P. Pal National Environment Fellowship Award for Biodiversity) : जैव विविधता की महत्ता को स्वीकार करते हुये और देश में उपलब्ध सुविधाओं और विकास तथा सुदृढ़ीकरण के ध्येय से भारत सरकार ने 1995 में जैव-विविधता के क्षेत्र में राष्ट्रीय फैलोशिप प्रारम्भ की है। इस पुरस्कार में दो वर्ष के लिये 4,000 रुपये की मासिक फैलोशिप, 18,000 रुपये प्रतिवर्ष का कन्टिन्जैन्सी अनुदान और अन्य सुविधाओं का प्रावधान है।

(13) **जिले की सबसे हरी पंचायत** (Zile ki Sabse Hari Panchayat) : यह पुरस्कार 1995-96 से वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा शुरू किया गया है। 4 वर्ष के निरन्तर मूल्यांकन से चयनित सबसे अधिक वृक्ष लगाने वाली ग्राम पंचायत को 1 लाख रु. का नगद पुरस्कार दिया जाता है।

(14) **डॉ. सलीम अली और डॉ. कैलाश सांखला फैलोशिप** (Dr. Salim Ali and Dr. Kailash Sankhla Fellowship) : यह फैलोशिप वन्य जीव क्षेत्र में अनुसंधान व संरक्षण कार्य के लिये दो फैलोशिप 2000 रुपए प्रति माह की प्रति वर्ष दी जाती है। यह फैलोशिप सन् 1999 से प्रारम्भ किये गये हैं।

(15) **अमृता देवी वन्य जीव सुरक्षा पुरस्कार** (Amrita Devi Wildlife Protection Award) : वन्य एवं पर्यावरण मन्त्रालय ने वन्य जीव संरक्षण के लिये पराक्रम एवं साहस दिखाने के लिये लोगों/समुदायों को अमृता देवी विश्नोई के नाम से 'अमृता देवी वन्य जीव सुरक्षा पुरस्कार' की स्थापना की है। इसमें ग्रामीण समुदाय से जुड़े व्यक्ति/संस्थान को 1 लाख रूप में नगद देने का प्रावधान है।

• राज्य सरकारों द्वारा अपने स्तर पर किये जा रहे पर्यावरणीय कार्यक्रम (Environmental Programmes taken by State Governments at their own level)

यह ऊपर बताया जा चुका है कि तिवारी कमेटी (1980) की अभिशंसा के अनुरूप जहाँ केन्द्रीय स्तर पर स्वतन्त्र पर्यावरण विभाग की स्थापना की गई वहीं राज्य सरकारों को भी भारत सरकार द्वारा यह निर्देश दिये गये कि वे भी अपने-अपने राज्यों में पर्यावरणीय कार्यों का संचालन करें। इस हेतु योजना मद (Plan Head) में धनराशि भी उन्हें उपलब्ध कराई गई तथा मार्गदर्शन भी दिये गये। स्वतंत्र संचालन हेतु प्रयुक्त किये गये अधिकारी व अन्य स्टाफ का वेतन एवं अन्य व्यय की पूर्ति का प्रावधान किया गया।

राज्य सरकारों ने अपने-अपने स्तर पर 'गवर्निंग काउन्सिल्स' का निर्माण कर उनकी अभिशंसा के आधार पर कार्य प्रारम्भ किया। कुछ राज्यों में स्वतन्त्र 'पर्यावरण विभाग' बने, कुछ ने 'प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल' के साथ कार्य प्रारम्भ किया तथा शेष कई राज्यों ने इस कार्यक्रम को 'विज्ञान एवं टैक्नोलोजी' विभाग के साथ मिला दिया। पर यह इस क्षेत्र का दुर्भाग्य ही रहा कि किसी भी राज्य में पर्यावरण विभाग का न तो स्वतन्त्र मंत्री रहा औरं न ही स्वतन्त्र सचिव स्तर का अधिकारी। अतः 'पर्यावरण विभाग' जिस वृहद विभाग के भी अधीन रहा, वहीं के अधिकारी से खानापूर्ति का ही लाभ मिल सका।

राज्य स्तर पर पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य निम्न सीमित क्षेत्रों में ही प्रारम्भ हुआ—

(1) प्रकृति संरक्षण कार्य (Nature Conservation Programme)

इन कार्यों में ऐसे स्थलों के पर्यावरण संरक्षण कार्य सम्मिलित किये जाते हैं, जहाँ—

(अ) जिन क्षेत्रों की वनस्पति सम्पदा नष्ट हो गई हो, जैसे खनन क्षेत्र, भूमि क्षरण अथवा कृत्रिम बंजर भूमि क्षेत्र आदि।

अथवा/और

(ब) जो स्थान ऐतिहासिक, धार्मिक अथवा पर्यटन के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण हों और वह क्षतिग्रस्त हो गये हों, जैसे—मन्दिर, किले, दरगाह आदि। तीर्थ स्थल भी इसमें लिए जा सकते हैं।

(2) पर्यावरण चेतना (जागरण) व शिक्षा (Environment Awareness and Education)

इस क्षेत्र में विभिन्न आयु वर्ग के विद्यार्थी, कार्यरत विभागीय अधिकारी/कर्मचारी तथा जन-समुदाय के लोगों के लिए कार्यक्रमों को लिया गया है—

(अ) **विद्यार्थियों के लिए :** (1) पारिस्थितिकी विकास शिविर, (2) विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय प्रतियोगिताएँ, (3) भ्रमण आदि।

(ब) **विभिन्न स्तर के शिक्षित लोगों के लिए :** (1) सेमीनारें, (2) कार्यगोष्ठियाँ, (3) अनुसंधान कार्य, (4) प्रशिक्षण कार्यक्रम, (5) व्याख्यान श्रृंखलाएँ, (6) सिम्पोजियम आदि।

(स) **अन्य लोगों के लिए :** (1) फिल्म शोज, (2) नुक्कड़ नाटक, (3) कठपुतली प्रदर्शन, (4) पोस्टर्स-स्टिकर्स-सिनेमा स्लाईड्स आदि।

इसके अतिरिक्त साहित्य प्रकाशन, उत्सव दिवसों का आयोजन, प्रदर्शनियाँ आदि सम्मिलित किये गये हैं।

(3) प्रदूषण नियन्त्रण गतिविधियाँ (Pollution Control Activities)

राज्य के प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल के समन्वय से राज्य में प्रदूषण फैलाने वाली औद्योगिक इकाइयों का नियन्त्रण करना, प्रदूषण नियन्त्रण उपचार संयन्त्रों की आवश्यक रूप से अनिवार्यता को देखने तथा दोषी उद्योगों के चालान की व्यवस्था का कार्य मुख्य रहा।

(4) जिला पर्यावरण समितियों का परिवीक्षण (Supervision of District Environment Committees)

भारत सरकार के निर्देशों के अनुरूप सभी जिलों में जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में जिला पर्यावरण समितियों का गठन किया गया है, जिसकी प्रति तीन माह में एक बैठक का आयोजन अपेक्षित है। इन समितियों का कार्य स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं की जानकारी कर उनका यथासंभव हल खोजना है। यह समितियाँ नियमित रूप से कार्य करती रहें, यह परिवीक्षण 'पर्यावरण विभाग' के स्तर पर किया जाता है।

(5) केन्द्र सरकार के निर्देशों के अनुरूप विभिन्न कार्यक्रम (Different Programmes according to Central Government Directives)

ऐसे कार्यक्रम जैसे, (1) पर्यावरण वाहिनियाँ, (2) विद्यार्थियों के 'इको क्लब्स', (3) जागरुकता अभियान कार्यक्रम आदि जिनका निर्देशन तो केन्द्रीय स्तर से होता है लेकिन उनका कार्य राज्य क्षेत्र में आता है, उनकी अप्रत्यक्ष रूप से संचालन व्यवस्था को देखा जाता है।

(6) स्वयंसेवी संस्थाओं से तालमेल व समन्वय (Co-ordination and co-operation with Voluntary Organisations)

राज्य स्तर पर अनेक स्वयंसेवी संस्थाएँ पर्यावरण के क्षेत्र में भी कार्यरत हैं और पूर्णतया समर्पित हैं। इन संस्थाओं से तालमेल मिलाकर इनकी सेवाओं का अधिकतम लाभ उठाया गया है। विभाग द्वारा संचालित विविध कार्यों में उनको उत्तरदायित्व सौंपकर एक ओर अपने कार्य भार में कमी लाने का प्रयास किया गया है, वहीं उनमें भी कर्त्तव्य बोध को सशक्त किया गया है।

● देश की विशिष्ट संस्थाओं द्वारा पर्यावरणीय कार्य (Environmental work by Specific Institutions of the Country)

देश में अनेक ऐसी विशिष्ट संस्थाएँ हैं, जो पर्यावरण के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य कर रही हैं। **राजस्थान में**—(1) सेवामन्दिर (उदयपुर), (2) तरुण भारत संघ (अलवर), (3) इंडियन एनवायरनमेन्टल सोसायटी (उदयपुर), (4) विज्ञान परिषद (कोटा)| **मध्य प्रदेश में**—एप्को—पर्यावरण नियोजन एवं समन्वय संगठन (भोपाल)। **गुजरात में**—सेन्टर फॉर एनवायरनमेन्ट एजूकेशन (अहमदाबाद)| **केरल में**—केरल शास्त्र साहित्य परिषद (त्रिवेन्द्रम)| **उत्तर प्रदेश में**—ग्राम स्वराज्य मण्डल (दशौली) आदि का उल्लेख इस क्रम में किया जा सकता है। विशिष्ट मुद्दों ऱ्ग स्थानीय स्वयंसेवी संस्थाएँ अत्यन्त समर्पित हो सभी स्तर पर जुटी हैं, जो राष्ट्र के हित में शुभ संकेत हैं।

● पर्यावरण की गतिविधियों पर व्यय अनुमान (Expenditure Estimate on Environmental Activities)

यहाँ हम यह बताना चाहेंगे कि पर्यावरण के क्षेत्र में व्यय का आकलन तीन स्तर पर है, **प्रथम** विदेशी सहायता, **द्वितीय** केन्द्र सरकार द्वारा बजट आवंटन तथा **तृतीय** राज्य सरकारों द्वारा अपने-अपने राज्यों में बजट आवंटन। विदेशी सहायता अनेक प्रकार से प्राप्त हो जाती है, जिनमें विकसित देशों की उदार नीति के फलस्वरूप विभिन्न देशों द्वारा उपलब्ध है। विश्व बैंक भी एक ऐसा स्रोत है जिससे वित्तीय सहायता

प्राप्त है और इसके अतिरिक्त कई संगठन विशेष योजना के लिए धनराशि उपलब्ध कराते हैं। कुल मिलाकर यथेष्ट धनराशि उपलब्ध होती है, जो परिवर्तित है।

राज्य सरकारें अपने स्तर पर विशेष प्रकार से धनराशि आवंटित करती हैं। योजना व्यय का लगभग 2% वे वर्तमान में पर्यावरण एवं वन विकास हेतु उपलब्ध करा रही हैं, जो उनकी अधिकतम सीमा में आता है।

भारत की केन्द्रीय सरकार का बजट आवंटन अपने कुल प्लान का लगभग 0·5 से 0·6% तक है जिनमें की राशि किसी निश्चित आधार पर चार मदों, (1) पर्यावरण, (2) राष्ट्रीय नदी संरक्षण प्लान, (3) वन एवं वन्य जीव तथा (4) अन्य योजनाओं में वितरित होता है। इस क्रम में पिछले 12 वर्षों का केन्द्रीय बजट आवंटन का अवलोकन निम्न सारणी में करें—

सारणी 27·6
वन एवं पर्यावरण क्षेत्र को केन्द्रीय वजट आवंटन

(राशि करोड़ रुपयों में)

क्र. सं.	वित्तीय वर्ष	मदवार बजट आवंटन					प्रतिवर्ष बजट में वृद्धि %	पर्यावरण एवं वन तथा वन्य जीव पर बजट %	राष्ट्रीय नदी संरक्षण पर बजट %
		पर्या-वरण	राष्ट्रीय नदी संरक्षण	वन एवं वन्य जीव	अन्य योजनाएँ	कुल			
1.	1990-91	41	71	40	85	237	—	34.2	29.96
2.	1991-92	47	70	53	130	300	26.6	33.4	23.33
3.	1992-93	48	55	62	115	280	−6.7	39.3	19.64
4.	1993-94	70	65	85	98	318	13.6	48.7	20.44
5.	1994-95	79	78	100	103	360	13.2	49.7	21.66
6.	1995-96	80	79	108	104	371	3.1	50.6	21.29
7.	1996-97	125	106	149	90	470	26.7	58.3	22.55
8.	1997-98	115	99	123	69	406	−13.6	58.6	24.38
9.	1998-99	144	107	174	72	497	22.4	64.0	21.52
10.	1999-00	125	158	179	89	551	10.9	55.2	28.67
11.	2000-01	162	122	171	93	548	00.0	00.0	00.00
12.	2001-02*	215	291	257	137	900	64.2	50.3	138.00

* अनुमानतः व्यय (Anticipated Expenditure) : वर्ष 2001-02 में Plan Budget की शेष राशि 900·00 करोड़ रुपये का व्यय प्रस्तावित है। वास्तविक व्यय का मार्च 2003 के बाद ही पता चलेगा।

उपर्युक्त सारणी से यह निष्कर्ष निकालने को पाठकों पर छोड़ते हैं कि,

1. क्या बढ़ती जनसंख्या और विकृत होते पर्यावरण पर केन्द्र सरकार द्वारा आवंटित बजट यथेष्ट है ?

2. नदी संरक्षण प्लान पर लगभग बजट का 20% आवंटन का पर्यावरण के क्षेत्र में होने वाले कार्यों की उपलब्धि पर कोई प्रभाव डालता है ?

3. अन्य कोई प्रश्न जो सारणी से आप उठाकर स्वयं ही उत्तर दे सकते हों।

पर राष्ट्र स्तर पर का एक मोटा सा चित्रण इस बात को प्रमाणित करता अवश्य है कि पर्यावरण के क्षेत्र में पूरे देश का शासन अपने सीमित साधनों से जुटा है और विभिन्न समस्याओं से जूझने को दृढ़ संकल्पित है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'ओजोन दिवस' कब मनाया जाता है ? और क्यों ?

2. 'राष्ट्रीय पर्यावरण जन चेतना अभियान' (NEAC) में किस-किस प्रकार की गतिविधियाँ सम्पन्न की जाती हैं ? पूरे देश में इसे कौन-सी संस्था आयोजित करती है ?
3. गंगा एक्शन प्लान—Phase II में किन-किन नदियों की सफाई का अभियान शुरू किया है ? इनमें कौन-कौन से कार्य सम्मिलित किये गये हैं ?
4. पर्यावरण के क्षेत्र में पुरस्कारों की परम्परा क्यों शुरू की गई ? इन्दिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार के बारे में विस्तार से बताइये।
5. राज्य स्तर पर पर्यावरण के क्षेत्र में कौन-कौन से कार्य किये जाते हैं ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद की गतिविधियों के बारे में बताइये।
7. 'पारिस्थितिकी क्लब्स' क्या होते हैं ? संक्षिप्त में इनके कार्यकलाप बताइये।
8. 'विश्व जल दिवस' मनाने का आयोजन कब से प्रारम्भ हुआ ? उसका मुख्य उद्देश्य क्या है ?
9. 'महावृक्ष पुरस्कार' किसको प्रदान किया जाता है ?
10. 'पर्यावरण जन चेतना' के लिये कौन-कौन से कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. विश्व जल दिवस किस दिन मनाया जाता है ?
    (अ) 18 सितम्बर (ब) 5 जून
    (स) 22 मार्च (द) 22 अप्रैल
12. ओजोन की पर्त के विनाश से निम्न रोग संभव हैं ?
    (अ) मलेरिया (ब) कैन्सर
    (स) टायफाइड (द) एड्स
13. वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा स्थापित उत्कृष्टता केन्द्रों की संख्या कितनी है ?
    (अ) 5 (ब) 6
    (स) 7 (द) 8
14. जिला पर्यावरण वाहिनी समिति का पदेन अध्यक्ष कौन होता है ?
    (अ) मुख्यमंत्री (ब) चीफ सेक्रेटरी
    (स) जिला प्रमुख (द) जिला कलेक्टर
15. पर्यावरण के अनुकूल उत्पाद पर किस प्रकार का 'लेबिल' निर्धारित किया गया है ?
    (अ) स्वास्तिक चिन्ह (ब) मिट्टी का घड़ा
    (स) दौड़ता बालक (द) उड़ता वायुयान

रिक्त स्थानों की पूर्ति करिये—

16. पृथ्वी दिवस प्रति वर्ष........ ....को मनाया जाता है।
17. सत्र 2001-2002 में विश्व जल दिवस का विषय..........................था।
18. जल और स्वास्थ्य के लिये अन्तर्राष्ट्रीय मैगजीन Source Bulletin का प्रकाशन..........................से होता है।
19. राष्ट्रीय नदी संरक्षण प्लान के पदेन अध्यक्ष..........................होते हैं।
20. गंगा एक्शन प्लान का नाम..........................से बदल दिया गया है।

28

पर्यावरण और कानून
[ENVIRONMENT AND LAWS]

● प्रस्तावना
(Introduction)

बहुत अधिक पुरानी बात नहीं बल्कि आज से कोई पाँच-सात सौ वर्ष पुराने मानव इतिहास का अवलोकन करें तो ज्ञात होगा कि मनुष्य प्रकृति के इतने समीप था कि वह अपने आपको प्रकृति में ही पाता था। न जीने की बहुत चाह थी और न मरने की आशंका। प्रकृति से मिले भोजन पर सामान्यतया आश्रित था और वहीं था उसका सुखमय आश्रय स्थल। जल और वायु की निरापदता में कोई संशय नहीं था। उसे न कोई कष्ट था और न कोई तनाव; लेकिन धीरे-धीरे समय के साथ परिवर्तन हुआ और मनुष्य में सुखमय जीने के साथ अनेक प्रकार की सुख-सुविधाओं को पा लेने की अभिलाषा बढ़ने लगी। विज्ञान की प्रगति ने इसे और दिशा दी और आखिर हुआ यह कि मनुष्य स्वयं अपने ही जाल में फँसकर कष्ट पाने लगा।

औद्योगिक क्रान्ति ने प्रदूषण को जन्म दिया। बढ़ती जनसंख्या ने प्राकृतिक एवं अन्य संसाधनों का इस सीमा तक शोषण किया कि व्यक्तिगत कुछ पा लेने की होड़ से आम आदमी का जीवन दूभर हो गया। वनों के विनाश ने ऋतु चक्र को गड़बड़ा दिया, वर्षा कम होने लगी, अकाल प्रायः प्रतिवर्ष पड़ने लगे। चारे की कमी ने पशुधन को हानि पहुँचाई। प्रकृति के असन्तुलन से पर्यावरण विकृत हो गया। जल, वायु, भूमि सभी प्रदूषित होने लगे। तेजाबी वर्षा, ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन पर्त का विघटन, स्मोग दुर्घटनाएँ, विषैला वायुमण्डल सभी ने मनुष्य को हर पल अनेक बीमारियों से ग्रसित कर उसे अस्वस्थ कर दिया। उसे इन सबसे छुटकारा पाने का कोई उपाय भी नहीं दिखा और वह नितान्त असहाय महसूस करने लगा।

भारत ही नहीं पूरा विश्व ही पर्यावरण के इस बिगड़ते स्वरूप से प्रभावित हुआ। विकासशील व अविकसित देश इस समस्या से अधिक प्रभावित हुये, क्योंकि एक तो उनकी अपेक्षाकृत भारी जनसंख्या, दूसरे आर्थिक अभाव और तीसरे अशिक्षा अथवा कम शिक्षा उन्हें इस संकट से सहज छुटकारा नहीं दिला सकती थीं। आम जनता ने पहले प्रशासन से और फिर कानून से संरक्षण चाहा। प्रगति के नाम पर प्रशासन स्वयं भी कहीं इस समस्या के उत्पन्न करने के कारणों से जुड़ा था, अतः वह कुछ कर न सका। हाँ कानून ने राहत दी। विद्वान न्यायाधीशों और विधिवेत्ताओं ने, आम नागरिकों के लाभ के लिए जहाँ भी कानून में कुछ मिला, उसी से जनता को लाभ पहुँचाया। यहाँ तक कि भारत के संविधान की धाराओं में भी उनके हित में बहुत खोज कर उनका उपयोग किया।

पर्यावरण में कानून की आवश्यकता वस्तुतः आम नागरिक को दैनिक जीवन के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति, उनकी शुद्धता, प्रदूषण को रोकने तथा आगे न होने देने और विकृत पर्यावरण को सुधारने के लिए ही महसूस हुई। अतः पर्यावरण संरक्षण तथा प्रदूषण रोकने हेतु अनेक कानून पिछले वर्षों में बने।

● कुछ कानूनों का विवरण
(Details of Some Laws)

पिछले लगभग सौ डेढ़ सौ वर्षों में आजादी से पूर्व अनेक कानून आवश्यकतानुसार बने जिन्हें तत्कालीन प्रशासन (ब्रिटिश सरकार) द्वारा अधिनियमों के रूप में जारी किया गया। यह पूरे देश के लिए थे, और

क्षेत्रीय स्तर पर भी। विगत वर्षों में दण्ड संहिताएँ जो सम्भवतः इंग्लैण्ड की कार्य प्रणाली पर आधारित थीं, उनका भी पर्यावरण के क्षेत्र में काफी उपयोग हुआ। एक मिला-जुला विवरण निम्न प्रकार है—

सामान्य कानून में भारतीय दंड संहिता, 1860 (Indian Penal Code, 1860) की धारा 268, 290, 291, 426, 430, 431, 432 **के तहत सामान्य पर्यावरण समस्याएँ** धारा 277 से **जल प्रदूषण** तथा धारा 278 से **वायु प्रदूषण** के प्रकरण निपटाये गये। दंडविधि संहिता, 1898 (Criminal Procedure Code, 1898), जिसे अब 1973 में पुनः नवीन रूप दिया गया है, के 'उपद्रव के अध्याय' (Chapter on Nuisance) से **ध्वनि प्रदूषण** पर प्रतिबन्ध लगा है।

इसके अतिरिक्त—**(अ) जल प्रदूषण के लिए,** (1) दी नार्थ केनाल एण्ड ड्रेनेज एक्ट, 1873, [The North Canal & Drainage Act, 1873], (2) दी ऑब्स्ट्रक्शन ऑफ फेअरवेज एक्ट, 1881 (The Obstruction of Fairways Act, 1881) और (3) इंडियन फिशरीज एक्ट, 1897 (Indian Fisheries Act, 1897); **(ब) वायु प्रदूषण के लिए,** (1) दी ओरियन्टल गैस कम्पनी एक्ट, 1857 (The Oriental Gas Company Act, 1857), (2) दी एक्सप्लोसिव एक्ट, 1908 (The Explosive Act, 1908), (3) दी इंडियन बॉयलर्स एक्ट, 1923 (The Indian Boilers Act, 1923) और (4) दी मोटर व्हीकिल एक्ट, 1938 (The Motor Vehicle Act, 1938); **(स) कीटाणुनाशक के लिए,** दी पोइजन एक्ट, 1919 (The Poison Act, 1919), **(द) वन्य जीव संरक्षण हेतु,** (1) दी इंडियन फोरेस्ट एक्ट, 1927 (The Indian Forest Act, 1927), (2) दी आन्ध्र प्रदेश एग्रीकल्चर पेस्ट एण्ड डिसीज एक्ट, 1919 (The A. P. Agriculture Pest and Disease Act, 1919), (3) दी मैसूर डेस्ट्रक्टिव इन्सेक्ट्स एण्ड पेस्ट्स एक्ट, 1917 (The Mysore Destructive Insects and Pests Act, 1917) और (4) दी केरल एग्रीकल्चर पेस्ट एण्ड डिसीज एक्ट, 1917 (The Kerala Agriculture Pest and Disease Act, 1917) आदि मुख्य रूप से उपयोग में लाये गये।

आजादी (1947) के बाद देश में पर्यावरण के क्षेत्र में अनेक और कानून बने। कुछ एक-दूसरे के पूरक थे और कुछ सम्पूरक। राष्ट्र संघ द्वारा जून 1972 में स्टॉकहोम (स्वीडन) में आयोजित 'मानव पर्यावरण' अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में विचारे गये चर्चित बिन्दुओं के आधार पर भी कुछ अधिनियम बनाये गये जो मुख्यतः पर्यावरण प्रदूषण को रोकने से ही सम्बन्धित थे, जिनकी एक सूची यहाँ दी गयी है—

(अ) वायु प्रदूषण के क्षेत्र में—

1. दी फैक्टरीज एक्ट, 1948 (The Factories Act, 1948)
2. दी इण्डस्ट्रीज (डवलपमेन्ट एण्ड रेगुलेशन) एक्ट, 1951 [The Industries (Development and Regulation) Act, 1951]
3. दी माइन्स एण्ड मिनरल्स (रेगूलेशन एण्ड डवलपमेन्ट) एक्ट, 1947 [The Mines and Minerals (Regulation and Development) Act, 1947]
4. दी गुजरात स्मोक न्यूसेन्स एक्ट, 1963 (The Gujrat Smoke Nuisance Act, 1963)
5. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 [The Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981]

(ब) जल प्रदूषण के क्षेत्र में—

1. उड़ीसा रिवर पोल्यूशन प्रीवेन्शन एक्ट, 1953 (The Orissa River Pollution Prevention Act, 1953)
2. दी रिवर बोर्ड एक्ट, 1956 (The River Board Act, 1956)
3. महाराष्ट्र प्रीवेन्शन ऑफ वाटर पोल्यूशन एक्ट, 1969 (The Maharashtra Prevention of Water Pollution Act, 1969)
4. दी मर्चेन्ट शिपिंग एमेन्डमेन्ट एक्ट, 1970 (The Merchant Shipping Amendment Act, 1970)
5. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 तथा उसका संशोधित अधिनियम, 1978 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974; and its Amendment Act, 1978]
6. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) उपकर अधिनियम, 1978 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Cess Act, 1978]

(स) ध्वनि प्रदूषण के क्षेत्र में—

1. दी बिहार कन्ट्रोल ऑफ दी यूज एण्ड प्ले ऑफ लाउडस्पीकर्स एक्ट, 1955 (The Bihar Control of the Use and Play of Loud Speakers Act, 1955)
2. ग्रान्ट ऑफ परमीशन अण्डर दी हिमाचल प्रदेश इन्स्ट्रूमेन्ट्स (कन्ट्रोल ऑफ नायज) एक्ट, 1969 [Grant of Permission Under the Himachal Pradesh Instruments (Control of Noise) Act, 1969]

(द) अन्य विविध क्षेत्रों में—

1. दी प्रीवेन्शन ऑफ फूड एडल्टरेशन एक्ट, 1954 (The Prevention of Food Adulteration Act, 1954)
2. दी एनशियेन्ट मोनूमेन्ट्स एण्ड आर्केलोजीकल साइट्स एण्ड रिमेन्स एक्ट, 1958 (The Ancient Monuments and Archaeological Sites and Remains Act, 1958)
3. अणुशक्ति अधिनियम, 1962 (The Atomic Energy Act, 1962)
4. वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 [The Wildlife (Protection) Act, 1972]
5. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 [The Forest (Conservation) Act, 1980]
6. दी इंडियन फिशरीज एक्ट, 1987 (The Indian Fisheries Act, 1987)
7. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 [The Environment (Protection) Act, 1986]
8. लोक दायित्व बीमा अधिनियम, 1991 (The Public Liability Insurance Act, 1991)
9. राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल अधिनियम, 1992 (The National Environment Tribunal Act, 1992)
10. राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलैट अथोरिटी अधिनियम, 1997 (The National Environment Appellate Authority Act, 1997)

इसके अलावा भूमि के उचित उपयोग के सन्दर्भ में भी कई अधिनियम बने हैं।

उपर्युक्त सभी अधिनियमों का विस्तृत विवरण इस अध्याय की सीमित सीमा में सम्भव नहीं है लेकिन पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम की दृष्टि से कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नियमों पर संक्षिप्त चर्चा हम यहाँ करेंगे।

• पर्यावरण के क्षेत्र में देश के संविधान में संशोधन (Ammendments in the Constitution of the Country in the Field of Environment)

यहाँ यह उल्लेख करना बहुत ही उचित और उपयुक्त होगा कि 'मानव पर्यावरण कान्फ्रेन्स' के बाद सबसे पहला कदम, जो भारत सरकार ने पर्यावरण संरक्षण के हित में किया, वह संविधान में दो संशोधन थे, जिन्हें अनुच्छेद 48 A तथा 51A(g) नाम दिये गये, वे निम्न प्रकार हैं—

भारत का संविधान : अनुच्छेद 48A[1]

पर्यावरण का संरक्षण और सुधार तथा वन एवं वन्य जीवों की सुरक्षा—सरकार पर्यावरण के संरक्षण और सुधार तथा देश के वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण का प्रयास करेगी।

भारत का संविधान : अनुच्छेद 51 A(g)[2]

"यह भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण और सुधार करे, जिसमें वन, झीलें, नदी और वन्य जीव सम्मिलित हैं तथा प्रत्येक जीवधारी के प्रति सहानुभूति (संवेदनशीलता) रखे।"

---

1. **Constitution of Indian Republic : Article 48A : "Protection and improvement of environment and safeguarding of forest and wild life—The State shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wild life of the country."**
2. **Constitution of Indian Republic : Article 51A (g) : "It shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wild life, and to have compassion for living creatures."**

उल्लेखनीय है कि इन दोनों अनुच्छेदों तथा **भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21, जिसमें कहा है कि "संविधान यह आश्वस्त करता है कि प्रत्येक व्यक्ति को उस गतिविधि से बचाया जाना चाहिए जिससे उसके जीवन, स्वास्थ्य और शरीर को हानि पहुँचती हो" (It ensures that every individual may be saved from any activity which injures his life, health and physique)** से विद्वान न्यायाधीशों ने अनेक पर्यावरण सम्बन्धी मुकदमों के ऐतिहासिक निर्णय दिये हैं और इस प्रकार भारतीय संविधान की महत्ता को बढ़ाया है। साथ ही यह भी कहें कि भारत के संविधान ने पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में देश को संकट से बचाने की अहम् भूमिका निभाई है तो भी यह अतिशयोक्ति नहीं होगी।

पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम और नियन्त्रण की दृष्टि से छः अति महत्त्वपूर्ण अधिनियमों का यहाँ विवरण दे रहे हैं—

1. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974]

(अ) संसद में विधेयक प्रस्तुत करने के पीछे उद्देश्य व कारण[1] : इस विधेयक को संसद में प्रस्तुत करने के पीछे जो उद्देश्य व कारण रहा है उसे भारत सरकार के राजपत्र में प्रकाशित किया गया है (दिनांक 5/12/1969 पृष्ठ 1153 से 1185 तक), जो निम्न प्रकार है—"उद्योगों की वृद्धि तथा शहरीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति के फलस्वरूप इन हाल के वर्षों में नदी तथा दरियाओं के प्रदूषण की समस्या काफी आवश्यक और महत्त्वपूर्ण बन गई है। अतः यह आश्वस्त किया जाना आवश्यक हो गया है कि घरेलू तथा औद्योगिक बहिस्राव उस जल में नहीं मिलने दिया जाय जो पीने के पानी के स्रोत, कृषि उपयोग तथा मत्स्य जीवन के पोषण के योग्य न हो। नदी और दारियाओं का प्रदूषण भी देश की अर्थव्यवस्था को निरन्तर हानि पहुँचाने का कारण बनती है।"

(ब) अधिनियम का विवरण : उपर्युक्त विधेयक पूरी प्रक्रिया से होकर 30 नवम्बर, 1972 को संसद में प्रस्तुत हुआ। दोनों सदनों से पारित होकर इस विधेयक को 23 मार्च, 1974 को राष्ट्रपति से स्वीकृति मिली, जो अब **जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, Act No. 6 of 1974 कहलाया। यह अधिनियम भारत के राजपत्र में Extra, Part 2, Section 2 दिनांक 25/3/1974 (pp. 295-325) को प्रकाशित हुआ तथा इसे 26/3/1974 से पूरे देश में लागू माना गया।**

इस अधिनियम में 8 अध्यायों के अन्तर्गत 64 धाराएँ हैं, जिनका विवरण निम्न सारणी में दिया है—

सारणी 28.1
जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 का विवरण

क्र. सं.	अध्याय क्रमांक	अध्याय का शीर्षक	धाराओं की संख्या : कुल
1.	1	प्रारम्भिक (Preliminary)	1 से 2 तक = 2
2.	2	जल प्रदूषण नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय तथा राज्य स्तरीय बोर्डों का गठन (The Central and State Boards for Prevention and Control of Water Pollution)	3 से 12 तक = 10
3.	3	संयुक्त बोर्डों का गठन (Joint Boards)	13 से 15 तक = 3

1. **Statement of Object and Reasons of Bill for Water Act, 1974 is published in Gazette of India : Extra, part II, Section 25, dated 5/12/69, Pages 1153 to 1185.**
"The problems of pollution of rivers and streams has assumed considerable importance and urging of in recent years as a result of the growth of industries and the increasing tendency to urbanisation. It is, therefore, essential to ensure that the domestic and industrial effluents are not allowed to be discharged into the water suitable as sources of drinking water as well as for suppoting fish life and for use in irrigation. Pollution of rivers and streams also causes increasing damage to the country's economy."

4.	4	बोर्ड की शक्तियाँ तथा कार्य (Powers and Functions of Boards)	16 से 18 तक = 3
5.	5	जल प्रदूषण से बचाव व नियन्त्रण (Prevention and Control of Water Pollution)	19 से 33 तक = 15
6.	6	वित्त सम्बन्धी प्रक्रियाएँ (Funds, Accounts and Audit)	34 से 40 तक = 7
7.	7	सजाएँ तथा कार्यविधियाँ (Penalties and Procedure)	41 से 50 तक = 10
8.	8	विविध (Miscellaneous)	51 से 64 तक = 14

अध्याय-7 की धारा 41 से 46 तक में सजाओं का प्रावधान है जो निम्नलिखित हैं—

(1) **धारा 41 :** अधिनियम की धारा 20 की उपधारा 2[1] व 3[2] अथवा धारा 32 की उपधारा 1(c)[3] में वर्णित निर्देशों (जल स्रोत से अधिक पानी लेने अथवा मल-मूत्र और उद्योग से निकले बहिस्राव के मिलने को रोकने) की अनुपालना न होने पर 3 माह तक का कारावास अथवा 5,000 रु. का जुर्माना अथवा दोनों की सजा है। यदि यह अनुपालना लगातार चलती है तो आर्थिक दण्ड 1000 रु. प्रतिदिन तक अतिरिक्त हो सकता है।

यही सजा का प्रावधान कोर्ट द्वारा निर्देशन देने के उपरान्त भी अनुपालना न करने पर धारा 33 की उपधारा (2)[4] के तहत है।

---

1. **जल प्रदूषण अधिनियम, 1974**
   धारा 20 की उपधारा (2)
   "A State Board may give directions requiring any person who in its opinion is abstracting water from any such stream or well in the area in quantities which are substantial in relations to the flow or volume of that stream or well or in discharging sewage or trade effluent into any such stream or well to give such information as to the abstraction or the discharge at such times and in such from as may be specified in the directions."

2. **धारा 20 की उपधारा (3)**
   "Without prejudice to the provision of subsection (2) a State Board may, with a view to preventing or controlling pollution of water, give directios requiring any person in charge of any establishment where any industry or trade is carried on, to furnish to it information regarding the construction, installation or operation of such establishment or of any disposal system or of any extension, addition thereto in which establishment and such other particulars as may be prescribed."

3. **धारा 32 की उपधारा 1 (c)**
   (i) Where it appears to the State Board that any poisonous, noxious of polluting water is present in any stream or well or has entered into that stream or well due to an accident or other unforeseen act or event and if The board is of opinion that it is necessary or expedient to take immediate action, it may for the reasons to be recorded in writing, carry out such operations as it may consider necessary for all or any of the following purposes, that is to say,–
   (ii) "Issuing orders immediately restraining of prohibiting the person concerned from discharging any poisonous, noxious of polluting matter into the stream or well or from making insanitary use of the stream or well."

4. **धारा 33 की उपधारा (1) व (2)**
   (1) Where it is apprehended by a board that the water in any steam or well is likely to be polluted by reason of the disposal of any matter therein or of any likely disposal of any matter therein, or otherwise, the Board may make an application to a court, not inferior to that of a Presidency Magistrate or a Magistrate of the First Class, for restraining the person who is likely to cause such pollution from so causing.
   (2) On receipt of and application sub-section (1) the court may make such order as it deems fit.

(2) **धारा 42[1] :** वर्ण (a) से (g) तक में वर्णित कार्यों के करने पर 3 माह तक का कारावास तथा/अथवा 1000 रु. तक का जुर्माना अथवा दोनों की सजा का प्रावधान है।

(3) **धारा 43 :** धारा 24 के तहत नदी अथवा कुएँ में प्रदूषित सामग्री के निस्तारण पर लगाई गई रोक (Prohibition on use of stream or well for disposal of polluting matter, etc.) के दोषी पाये जाने पर 6 माह से 6 वर्ष तक का कारावास व आर्थिक दण्ड दिया जायेगा।

(4) **धारा 44 :** जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 की धारा 25-नये विकास अथवा बहिस्राव पर रोक (Restrictions on new outlets and new discharges) तथा 26—वर्तमान में चल रहे मल-मूत्र अथवा उद्योग बहिस्राव सम्बन्धी प्रावधान (Provision regarding existing discharge of sewage of trade effluent) के सन्दर्भ में दोषी को 6 माह से 6 वर्ष तक की कैद तथा जुर्माना की सजा दी जायेगी।

(5) **धारा 45 :** यदि धारा 24, 25 व 26 के तहत कोई दोषी व्यक्ति को अधिनियम के अन्तर्गत सजा मिलती है और फिर भी वह निरन्तर उन्हीं प्रावधानों का पुनः दोषी होता है, तो उसे 1 वर्ष से 7 वर्ष तक का कारावास तथा आर्थिक दण्ड दिया जा सकेगा।

(6) **धारा 46[2] :** यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम के तहत दोषी ठहराया जाता है और पुनः इसी तरह का अपराध करता है तो न्यायालय को यह अधिकार होगा कि पिछले प्रकार के अपराध को फिर पुनः न करने से पहले उसका नाम, घर का पता तथा दी गई सजा को किसी समाचार पत्र अथवा जैसे कोई (न्यायालय) चाहे उस प्रकार प्रकाशित कर सकता है और इसका व्यय दोषी व्यक्ति से उसी प्रकार से वसूल किया जायेगा जैसे आर्थिक दण्ड लिया जाता है।

(7) **धारा 47 व 48** में यदि अपराध किसी कम्पनी अथवा राजकीय विभाग द्वारा किया जाता है, तो दण्ड का भागी वह व्यक्ति होगा जो उसका अधिकृत मालिक/संचालक अथवा प्रभारी है।

(स) अधिनियम पर टिप्पणी–

1. यद्यपि यह अधिनियम विधिवेत्ताओं तथा विधिविशेषज्ञों द्वारा कड़ी मेहनत से सभी पक्षों का ध्यान रखकर बनाया गया था, पर फिर भी यह अधिक प्रदूषण नियन्त्रण सिद्ध नहीं हो सका। अधिनियम की धारा 58 में उद्योगों पर लगाई गई शर्त को उद्योगपतियों ने अपने प्रकार से परिभाषित कर उच्च न्यायालय से यह निर्णय प्राप्त कर लिया कि कोई भी सिविल कोर्ट उद्योगकर्त्ता को आवेदन करने पर निषेधाज्ञा (Injunction) स्वीकार कर सकती है। अतः जहाँ भी उद्योगपतियों को इस अधिनियम के तहत भय था, उस पर उन्होंने सिविल कोर्ट्स से पहले ही निषेधाज्ञा लेकर इस अधिनियम को अशक्त अथवा गतिहीन कर दिया।

---

1. **धारा 42 उपधारा (1) Whoever–**
(a) destroys, pulls down. injures or defaces any pillar, post or stake fixed in the ground or any notice or other matter put up, inscribed or placed by or under the authority of the Board, or
(b) Obstructs any person acting under the orders or directions of Board from exercising his powers and performing his functions under this Act, or
(c) damages any works or property belonging to the Board, or
(d) fails to furnish to any office or other employee of the Board any information required by them for the purpose of this Act, or
(e) fails to intimate the occurence of any accident or other unforeseen act or event under section 31 (furnishing of information of State Board and other agencies in certain cases) to the Board and other authorities or agencies as required by that section, or
(f) in giving any information which he is required to give under this Act, knowingly or wilfully makes a statement which is false in any material particular, or
(g) for the purpose of obtaining any consent under section 25 or section 26 knowingly or wilfully makes a statement which is false in any material particular.

2. **धारा 46**
"Publication of names of offenders. If any person convicted of an offence under this Act commits a like offence afterwards it shall be lawful for the court before which the second or subsequent conviction takes place to cause the offender's name and place of residence, the offence and the penalty imposed to be published at the offender's expense in such newspapers or in such other manner as the court may direct and the expenses of such publication shall be deemed to be the part of the cost attending the conviction and shall be recoverable in the same manner as a fine."

2. इस अधिनियम के प्रकाशन के बाद इसके अनुच्छेद व इसकी विभिन्न धाराओं के सन्दर्भ में इतने आक्षेप आये अथवा स्पष्टीकरण अथवा उपयोग में लाने पर कमी महसूस की गई कि **एक पूरा संशोधित अधिनियम—जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) संशोधन अधिनियम, 1978 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Amendment Act, 1978] ही पास करना पड़ा। यह 14 दिसम्बर, 1978 से लागू हुआ।** इस संशोधन अधिनियम (Act No. 44 of 1978) को दिनांक 12 दिसम्बर, 1978 को राष्ट्रपति की सहमति मिली तथा इसका प्रकाशन भारत के राजपत्र (Extra II, Part II, Section 1, दिनांक 13 दिसम्बर, 1978 को पृष्ठ 561-567 पर हुआ। इसमें कुल 19 संशोधन (धारा 2, 3, 4, 5, 10, 12, 14, 21, 23, 25, 26, 27, 28, 36, 37, 39, 49, 63, 64) तथा एक प्रविष्टि [धारा 11 (A)] की गई।

1. (A) जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) उपकर अधिनियम, 1977 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Cess Act, 1977]

इस अधिनियम (Act No. 36 of 1977) के तहत जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण हेतु केन्द्र तथा राज्य सरकारों को आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराने के लिए जल उपयोग करने वाले उद्योगों से उपकर प्राप्त करने का प्रावधान है। **इसे 1/4/1978 से पूरे भारत में लागू किया गया** (संसद के दोनों सदनों से पारित होकर इस अधिनियम को दिसम्बर, 1977 में राष्ट्रपति का अनुमोदन प्राप्त हुआ)। यह भारत के राजपत्र Extra Part II, Section : 1 दिनांक 27/3/1978 के पृष्ठ 427-34 पर प्रकाशित हुआ)।

इसका केवल आर्थिक रूप ही सबल है अथवा यों कह सकते हैं कि पर्यावरण की दृष्टि से इसका सीधा कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः इसे हम यहीं छोड़ रहे हैं।

2. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 [The Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981][1]

(अ) पृष्ठभूमि व अधिनियम का मुख्य उद्देश्य[2]—इस अधिनियम (Act No. 14 of 1981) के निर्माण की पृष्ठभूमि जून 1972 में राष्ट्र संघ द्वारा स्टॉकहोम (स्वीडन) में 'मानव पर्यावरण' सम्बन्धी वही अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स रही है जिसमें मानव जीवन के लिए उसे प्रदूषण से मुक्त रखने की बात स्वीकार की गई थी। बढ़ते औद्योगीकरण के कारण पर्यावरण में निरन्तर हो रहे वायु प्रदूषण के नियन्त्रण और इसके रोकथाम के लिए यह अधिनियम बनाया गया जो देश में संसद के दोनों संसदों से पारित होकर तथा राष्ट्रपति से सहमति प्राप्त कर **16 मई, 1981 से लागू किया गया।**

(ब) अधिनियम का विवरण—वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 कमोवेश लगभग उसी प्रकार का और उन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित है जिन पर जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 बना था। अतः पुस्तक के अध्याय की सीमा को ध्यान में रखते हुये इसका विस्तृत विवरण नहीं दे रहे हैं। केवल निम्नांकित सारणी विवरण से इसकी प्रारम्भिक एवं संक्षिप्त जानकारी आपको मिल जायेगी—

सारणी संख्या 28·2
वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 का विवरण

क्र. सं.	अध्याय क्रमांक	अध्याय का शीर्षक	धाराओं की संख्या कहाँ से कहाँ तक=कुल
1.	1	प्रारम्भिक (Preliminary)	1 से 2 तक = 2
2.	2	वायु प्रदूषण एवं नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय तथा राज्य स्तरीय बोर्डों का गठन (Construction of Central and State Boards	3 से 15 तक = 13

1. यह अधिनियम भारत के राजपत्र Extra Part II Section 3 Sub-section (1) दिनांक 15/5/81 पृष्ठ 943 में प्रकाशित हुआ।
2. "The presence in air, beyond certain limits of various pollutants discharged through industrial emitions and from certain human activities connected with traffic, heating, use of domestic fuel, refuse, incinerations etc., has a detrimental effect on the health of the people as also on animal life, vegetation and property."

		for the Prevention and Control of Air Pollution)	
3.	3	बोर्ड्स की शक्तियाँ तथा कार्य (Powers and Functions of the Boards)	16 से 18 तक = 3
4.	4	वायु प्रदूषण से बचाव व नियन्त्रण (Prevention and Control of Air Pollution)	19 से 31 तक = 13
5.	5	वित्त सम्बन्धी प्रक्रियाएँ (Fund, Accounts and Audit)	32 से 36 तक = 5
6.	6	सजाएँ तथा कार्यविधियाँ (Penalties and Procedures)	37 से 46 तक = 10
7.	7	विविध (Miscellaneous)	47 से 54 तक = 8

सजाओं का प्रावधान : अधिनियम में 37 से 46 तक की धाराओं में सजाओं का प्रावधान है।

(i) धारा 37(1)[1] में : अधिनियम की धारा 21 व 22 की अनुपालना न होने पर 1 वर्ष 3 माह से लेकर 6 वर्ष तक की कैद और 5000 रु. तक का आर्थिक दण्ड। लगातार वही त्रुटियाँ जारी रहती हैं तो दण्ड की राशि 5000 रु. प्रतिदिन तक हो सकती है।

(ii) धारा 37(2)[2] : धारा 37(1) के तहत आगे अपराध जारी रहने पर कैद की सजा 2 वर्ष से 7 वर्ष तक।

(iii) धारा 38(a to g)[3] : a से g तक वर्णित अपराधों पर 3 माह की कैद और 10,000 रु. तक का आर्थिक दण्ड।

Section 37. Failure to comply with the provisions of section 21 or section 22 or with the direction issued under section 31A.

1. Whoever fails to comply with the provisions of section 21 or section 22 or directions issued under section 31A, shall in respect of each such failure be punishable with imprisonment for a term which shall not be less than one year and six months but which may extend to six years and with fine, and in case the failure continues, with and additional fine which may extend to five thousand rupees for every day during which such failure continues after the conviction for the first such failure.
2. If the failure referred to in sub-section (1) continues beyond a period of one year after the date of conviction, the offender shall be punishable with imprisonment for a term which shall not be less than two years but which may extend to seven years and with fine.

Section 38.

3. **Penalties for Certain Acts**

Whoever—

(a) destroys, pulls down, removes, injures or defaces any pillar, post or stake fixed in the ground or any notice or other matter put up, inscribed or placed, by or under the authority of the Board, or
(b) obstructs any person acting under the orders or directions of the Board from exercising his powers and performing his functions under this Act, or
(c) damages any works or property belonging to the Board, or
(d) fails to furnish to the Board or any officer or otner employees of the Board any information required by the Board or such officer or other employee for the purpose of this Act, or
(e) fails to intimate the occurrence of the emission of air pollutants into the atmosphere in excess of the standards laid down by the State Board or the apprehension of such occurrence, to the State Board and other prescribed authorities or agencies as required under sub-section (1) of Section 23, or
(f) in giving any information which he is required to give under this Act, makes statement which is false in any material particular, or
(g) for the purpose of obtaining any consent under Section 21, makes a statement which is false in any material particular.

shall be punishable with imprisonment for a term which may extend to three months or with fine which may extend to (ten thousand rupees) or with both.

(iv) धारा 39[1] **:** जिन अपराधों का अधिनियम में उल्लेख नहीं है, उन पर भी दोषी पाये जाने पर 3 माह की कैद अथवा 10,000 रु. तक आर्थिक दण्ड या दोनों। अधिक दिनों तक वही दोष पाये जाने पर आर्थिक दण्ड की राशि 5,000 रु. तक प्रति दिन।

(v) धारा 40[2] **व 41**[3] **:** अन्य लोगों को दोष करने पर दण्ड का प्रावधान।

(स) अधिनियम पर टिप्पणी : जिस प्रकार और जिन कमियों के कारण जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 बहुत कारगर तथा उपयोगी नहीं हो सका वही बातें इस अधिनियम के साथ भी लागू हुईं। केवल सैद्धान्तिक रूप से ही यह पर्यावरण विभाग तथा केन्द्रीय और राज्य प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण बोर्डों का एक उपकरण बनकर रह गया।

इस अधिनियम के क्रम में भी एक नया स्वतन्त्र **वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) संशोधन अधिनियम, 1987 [The Air (Prevention and Control of Pollution) Amendment Act, 1987]**[4] **Act No. 47 of 1987 बनाया गया जिसे 1 अप्रैल 1988 से लागू किया गया।**

---

1. **Section 39. Penalty for Contravention of Certain Provisions of the Act**
   Whoever, contravenes any of the provisions of this Act or any other or direction issued thereunder, for which no penalty has been elsewhere provided in this Act, shall be punishable with imprisonment for a term which may extend to three months or with fine which may extend to ten thousand rupees or with both, and in the case of continusing contravention, with an additional fine which may extend to five thousand rupees for every day during which such contravention continues after conviction for the first such contravention.
2. **Section 40. Offences by Companies**
   (1) Where an offence under this Act has been committed by a company, every person who, at the time the offence was committed, was directly in charge of, and was responsible to, the company for the conduct of the business of the company, as well as the company, shall be deemed to be guilty of the offence and shall be liable to be proceeded against and punished accordingly :
   Provided that nothing continued in this sub-section shall render any such person liable to any punishment provided in this Act, if he proves that the offence was committed without his knowledge or that he exercised all due diligence to prevent the commission of such offence.
   (2) Notwithstanding anything contained in sub-section (1), where an offence under this Act has been committed by a company and it is proved that the offence has been committed with the consent or connivance of, or is attributable to any neglect on the part of any director, manager, secretary or other officer of the company, such director, manager, secretary or other officer shall also be deemed to be guilty of that offence and shall be liable to be proceeded against and punished accordingly.
   Explanation : For the purposes of this section—
   (a) 'company' means any body corporate, and includes a firm or other association of individuals; and
   (b) 'director' in relation to a firm, means a partner in the firm.
3. **Section 41. Offences by Government Departments**
   (1) Where an offence under this Act has been committed by any Department of Government, the Head of the Department shall be deemed to be guilty of the offence and shall be liable to be proceeded against and punished accordingly :
   Provided that nothing contained in this section render such Head of the Department liable to any punishment if he proves that the offence was committed without his knowledge or that he exercised all due diligence to prevent the commission of such offence.
   (2) Not with standing anything contained in sub-section (1), where an offence under this act has been committed by a Department of Government and it is proved that the offence has been committed with the consent or connivance of, or is attributable to any neglect on the part of, any officer, other than the Head of the Department, such officer shall also be deemed to be guilty of that offence and shall be liable to be proceeded against and punished accordingly.
4. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) संशोधन अधिनियम, 1987 भारत के राजपत्र Extra Part II, Section-3, Sub-section (i) में दिनांक 28/3/1988 को प्रकाशित हुआ।

3. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 [The Environment (Protection) Act, 1986]

(अ) पृष्ठभूमि[1] : यह अधिनियम पर्यावरण संरक्षण तथा उसके सुधार तथा इससे सम्बन्धित अनेक बिन्दुओं के लिए बनाया गया। इसका मुख्य उद्देश्य, राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर 1972 में स्टॉकहोम में आयोजित कान्फ्रेन्स, जिसमें भारत ने भी भाग लिया था, में मानव पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के निर्णयों के क्रम में, कोई उचित योजना तैयार करना था; तथा इसके आधार पर ही प्राणीमात्र को पर्यावरण विकृतियों से बचाना और अनेक पर्यावरणीय समस्याओं को दूर करने का एक प्रभावी उपकरण उपलब्ध कराना था।

इसे संसद के दोनों सदनों ने पास किया और भारत के राष्ट्रपति ने इसे 23 मई, 1986 को सहमति प्रदान की।

केन्द्रीय सरकार ने, पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा (सेक्शन) 6 व 25 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुये नियम बनाये जिन्हें पूर्व प्रधानमन्त्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गाँधी के जन्म दिवस (19 नवम्बर, 1986) के दिन से सम्पूर्ण भारत में लागू किया गया।

(ब) अधिनियम विवरण : इस अधिनियम में 4 अध्यायों के अन्तर्गत 26 धाराएँ हैं, जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

सारणी 28·3
पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 का विवरण

क्र. सं.	अध्याय क्रमांक	अध्याय का शीर्षक	धाराओं की संख्या कुल
1.	1	प्रारम्भिक (Preliminary)	1 से 2 तक = 2
2.	2	केन्द्र सरकार की सामान्य शक्तियाँ (General Powers of the Central Government)	3 से 6 तक = 4
3.	3	पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और रोकथाम (Prevention Control and Abatement of Environmental Pollution)	7 से 17 तक = 11
4.	4	विविध (Miscellaneous)	18 से 26 तक = 9

धारा 2[2] में पर्यावरण संबंधी अनेक शब्दों को विशेष रूप से परिभाषित किया है, जो निश्चय ही

1. भारत के राजपत्र के असाधारण अंक (भाग II, खण्ड 1) सं. 34, नई दिल्ली, दिनांक 26 मई, 1986 (सोमवार) को प्रकाशित पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 (1986 का 29वाँ) से उद्धरत है :
An Act to provide for the protection and improvement of environment and for matters connected therewith :
WHEREAS decisions were taken at the United Nations Conference on the Human Environment held at Stockholm in June 1972, in which India participated, to take appropriate steps for the protection and improvement of human environment.
AND WHEREAS it is considered necessary further to implement the decisions aforesaid in so far as they relate to the protection and improvement of environment and the prevention of hazards to human beings, other living creatures, plants and property.
2. **EPA Section 2.**
In this Act, Unless the context otherwise requires,
Definitions

(a) **'environment'** includes water, air and land and the interrelationship which exists among and between water, air and land, and human beings, other living creatures, plants, micro-organism and property;
(b) **'environmental pollutant'** means any solid, liquid or gaseous substance present in such concentration as may be, or tend to be, injurious to environment;
(c) **'environmental pollution'** means the presence in the environment of any environmental pollutant;
(d) **'handling'**, in relation to any substance, means the manufacture, processing, treatment, package, storage, transportation, use, collection, destruction, conversion, offiering for sale, transfer of the like of such substance;
(e) **'hazardous substance'** means any substance or preparation which, by reason of its chemical or physico-chemical properties or handling, is liable to cause harm to human beings, other living creatures, plants, micro-organism, property or the environment;
(f) **'occupier'**, in relation to any factory or promises, means a person who has control over the affairs of the factory or the premises and includes, in relation to any substance, the person in possession of the substance;
(g) **'prescribed'** means prescribed by rules made under this Act;

प्रशंसनीय है। संभवतः इस प्रकार पर्यावरण क्षेत्र की कई परस्पर विरोधी व्याख्याओं को बहुत स्पष्ट कर दिया गया है। इसके अनुसार—

(क) पर्यावरण (Environment) : इसमें जल, वायु और भूमि सम्मिलित हैं तथा इनसे मानव, अन्य जीवित प्राणी, पेड़-पौधे सूक्ष्म जीव व सम्पत्ति के मध्य परस्पर सम्बन्ध आते हैं।

(ख) पर्यावरणीय प्रदूषक (Environmental Pollutant) : इनका आशय ऐसे ठोस, द्रव तथा गैसीय पदार्थों के इतनी मात्रा में संकेन्द्रित (concentration) होने से है, जिससे पर्यावरण को हानि पहुँचती है अथवा पहुँच सकती है।

(ग) पर्यावरणीय प्रदूषण (Environmental Pollution) : इसका अर्थ पर्यावरण में पर्यावरण प्रदूषकों का रहना है।

(घ) संचालन (Handling) : किसी भी वस्तु के सन्दर्भ में, इसका आशय, निर्माण, प्रक्रिया, प्रबन्ध, पैकेज, भण्डारण, ढुलाई, प्रयोग, एकत्रीकरण (संचयन), विनाश, परिवर्तन, विक्रय, दूसरी जगह ले जाना सभी क्रियाकलापों से है।

(ङ) खतरनाक वस्तुएँ (Hazardous Substances) : इनसे आशय ऐसी वस्तुओं अथवा बनाये गये पदार्थों से है जिनके रासायनिक अथवा भौतिक रासायनिक गुणों अथवा उनके कतिपय संचालन (handling) से पर्यावरण अथवा उसमें रहने वाले मानव, अन्य जीवित प्राणी, पेड़-पौधे, सूक्ष्म जीव तथा सम्पत्ति को हानि पहुँचती हो।

(च) पदाधिकारी (Occupier) : किसी उद्योग के सन्दर्भ में यह वह व्यक्ति है जो किसी वस्तु का मालिक भी है और उस उद्योग के ऊपर उसका नियन्त्रण है।

(छ) निर्देशित (Prescribed) : इस अधिनियम के अन्तर्गत बनाये गये नियमों के अनुसार निर्देशित होना।

अध्याय 2 (धारा 3 से 6 तक) में केन्द्रीय सरकार की सामान्य शक्तियों का वर्णन है। धारा 3 के अधीन केन्द्र सरकार की उन शक्तियों का विवरण है जिसके द्वारा पर्यावरण की गुणवत्ता की सुरक्षा एवं सुधार तथा पर्यावरणीय प्रदूषण के रोकने, नियन्त्रित करने अथवा कम करने के आवश्यक उपाय किये जा सकते हों। धारा 4 में उपर्युक्त सुझाये गये उपायों के कारगर रूप से लागू करने के लिए केन्द्र सरकार किसी भी अधिकारी को नियुक्त कर सकती है तथा उसको शक्तियाँ प्रदान कर उन्हें निश्चित कार्य का उत्तरदायित्व दे सकती है। धारा 5[1] के तहत केन्द्र सरकार किसी भी व्यक्ति, अधिकारी अथवा विशेषज्ञ को इस अधिनियम के अनुपालन में निर्धारित किसी भी प्रकार के निर्देश प्रदान कर सकती है और वे इन निर्देशों के पालन के लिए बाध्य होंगे। यहाँ यह भी स्पष्ट किया है कि इन निर्देशों में—(1) किसी भी उद्योग के संचालन को रोकना, बन्द करना अथवा उसके कार्यकलापों को प्रतिबन्धित करना, अथवा (2) उसके जल, विद्युत या अन्य किसी सेवा को रोकना अथवा निर्धारित करना शामिल है। धारा 6[2] के अन्तर्गत पर्यावरणीय

Powers to give Directions

1. **EPA : Section 5**
Not withstanding anything contained in any other law but subject to the provisions of this Act, the Central Government may, in the exercise of its powers and performance of its functions under this Act, issue directions in writing to any person, officer or any authority and such person, officer or authority shall be bound to comply with such directions.
Explanation–For the avoidance of doubts, it is hereby declared that the power to issue directions under this section includes the power to direct–
(a) the closure, prohibition or regulation of any industry, operation or process; or
(b) stoppage of regulation of the supply of electricity or water or any other service.

Rules to Regulate Environmental Pollution.

2. **EPA : Section 6.**
(1) The Central Government may by notification in the Official Gazette, make rules in respect of all or any of the matters referred to in section 3.
(2) In particular and without prejudice to the generality of the foregoing power, such rules may provide for all or any of the following matters, namely–
(a) the standards of quality of air, water or soil for various areas and purposes;
(b) the maximum allowable limits of concentration of various environmental pollutants (including noise) for different areas;
(c) the procedures and safeguards for the handling of hazardous substances;
(d) the prohibition and restrictions on the handling of hazardous substances in different areas;
(e) the prohibition and restrictions of the location of industries and the carrying on of processes and operations in different areas;
(f) the procedures and safeguards for the prevention of accidents which may cause environmental pollution and for providing for remedial measures for such accidents.

प्रदूषण को नियन्त्रण करने हेतु विभिन्न नियमों के बनाने का प्रावधान है, जिसमें (अ) वायु, जल और भूमि की गुणवत्ता के मानक, (ब) विविध क्षेत्रों में विविध पर्यावरण प्रदूषकों की अधिकतम स्वीकार्य सीमा, (स) खतरनाक वस्तुओं के संचालन हेतु तरीके व सुरक्षा उपाय, (द) खतरनाक वस्तुओं के संचालन में रोक तथा प्रतिबन्ध, (इ) विभिन्न क्षेत्रों में उद्योगों के स्थान के लिए रोक तथा प्रतिबन्ध और (फ) पर्यावरणीय प्रदूषण के कारण बनने वाले विभिन्न दुर्घटनाओं को रोकने व प्रतिबन्धित करने के उपाय सम्मिलित हैं।

अध्याय 3 (धारा 7 से 17 तक) : पर्यावरण प्रदूषण के रोकने, नियन्त्रण तथा उसके निवारण से सम्बन्धित हैं। धारा 7[1] के अन्तर्गत यह निर्देश दिये गये हैं कि कोई भी व्यक्ति जो उद्योग संचालित करता है वह निर्धारित मानकों से अधिक पर्यावरण प्रदूषकों को उत्सर्जित या विमुक्त न तो करेगा और न ही किये जाने की अनुमति देगा। धारा 8[2] में खतरनाक वस्तुओं का संचालन पूर्व निर्देशित सुरक्षा के तौर तरीकों के विपरीत नहीं करेगा। धारा 9[3] के तहत यह निर्देशित है कि यदि कहीं निर्धारित मानकों से अधिक पर्यावरणीय प्रदूषकों का उत्सर्जन हो अथवा उत्सर्जन की आशंका हो तो सम्बन्धित व्यक्ति उसे कम करने अथवा रोकने हेतु बाध्य होगा। साथ ही यह भी उल्लेखित है कि ऐसी घटना होने की आशंका की सम्बन्धित अधिकारी को सूचना देगा और बताये अनुसार सभी प्रकार के सहयोग देने को बाध्य होगा। धारा 10 में केन्द्र सरकार द्वारा अधिकृत व्यक्ति का किसी भी उद्योग संस्थान में प्रवेश तथा उस द्वारा निरीक्षण करने का अधिकार होगा। धारा 11 में अधिकृत व्यक्ति द्वारा ही विश्लेषण के उद्देश्य से उद्योग में बनने वाली वस्तु तथा वहाँ के जल, वायु और भूमि के नमूने लेकर आगे विधिवत कार्यवाही करने का अधिकार होगा। धारा 12, 13 व 14 में विश्लेषण हेतु प्रयोगशाला संस्थापित करने, किसी विशेषज्ञ को विश्लेषण हेतु अधिकृत करने तथा विशेषज्ञ द्वारा दी गई रिपोर्ट को अधिकृत दस्तावेज मानने सम्बन्धी विवरण है। **धारा 15[4] में अधिनियम, नियम, आदेश तथा निर्देशों के उल्लंघन पर दण्ड देने का प्रावधान है। इसके अनुसार उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को–(1) पाँच वर्ष तक की कैद अथवा एक लाख रुपये तक का आर्थिक दण्ड अथवा दोनों का प्रावधान है, (2) यदि उल्लंघन पुनः होता है अथवा जारी रहता है तो प्रतिदिन पाँच हजार रुपये तक के आर्थिक दण्ड का अतिरिक्त प्रावधान है। यदि यह उल्लंघन एक वर्ष से**

Prevention Control and Abatement of Environmental Pollution

1. **EPA : Section 7.**
   No person carrying on any industry, operation or process shall discharge or emit or permit to be discharged or emitted any environmental pollutant in excess of such standards as may be prescribed.
2. **EPA : Section 8.**
   No persons shall handle or cause to be handled any hazardous substance except in accordance with such procedure and after complying with such safeguards as may be prescribed.
3. **EPA : Section 9.**
   (1) Where the discharge of any environmental pollutant in excess of the prescribed standards occurs or is apprehended to occur due to any accident or other unforeseen act or event, the person responsible for such discharge and the person in charge of the place at which such discharge occurs or is apprehended to occur shall be bound to prevent or mitigate the environmental pollution caused as a result of such discharge and shall also forthwith–
   (a) intimate the fact of such occurence or apprehension of such occurrence; and
   (b) be bound, if called upon, to render all assistance, to such authorities or agencies as may be prescribed.

Penalty for Contravention of the Provisions of the Act and the Rules, Orders and Directions.

4. **EPA : Section 15.**
   (1) Whoever fails to comply with or contravenes any of the provisions of this Act, or the rules made or orders of directions issued thereunder shall, in respect of each such failure or contravention, be punishable with imprisonment for a term which may extend to five years or with fine which may extend to one lakh rupees, or with both, and in case the failure or contravention continues, with additional fine which may extend to five thousand rupees for every day during which such failure or contravention continues after the conviction for the first such failure or contravention.
   (2) If the failure contravention referred to in sub-section (1) continues beyond a period of one year after the date of conviction, the offender shall be punishable with imprisonment for a term which may extend to seven years.

अधिक अवधि तक भी जारी रहता है तो कैद की सजा सात वर्ष तक की बढ़ाई जा सकती है। धारा 16 में कम्पनी द्वारा उल्लंघन करने पर उसके प्रभारी प्रबन्धक को तथा धारा 17 में राजकीय विभागों में विभागाध्यक्ष को यही सजायें प्रस्तावित हैं।

अध्याय 4 (धारा 18 से 26 तक) में विविध विवरण है जिनमें कुछ महत्त्वपूर्ण हैं। धारा 18[1] के अनुसार इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति द्वारा कार्यरत सरकार, अधिकारी एवं अन्य किसी भी कर्मचारी के विरुद्ध इस अधिनियम के सन्दर्भ में कोई अभियोग नहीं चलाया जा सकेगा। धारा 19[2] के तहत किसी भी व्यक्ति द्वारा पर्यावरण प्रदूषण के मामले में वाद दायर करने का अधिकार है। धारा 20 में केन्द्र सरकार को किसी भी व्यक्ति, अधिकारी अथवा सरकार से इस अधिनियम के अन्तर्गत कोई रिपोर्ट अथवा सूचना लेने का अधिकार है। धारा 21 में इस अधिनियम के अन्तर्गत कार्य करने वाले सभी स्तर के व्यक्ति भारतीय दण्ड संहिता के सेक्शन 21 में वर्णित सरकारी कर्मचारी समझे जायेंगे। धारा 22[3] किसी भी कोर्ट को इस अधिनियम के अन्तर्गत किये गये निर्णय को सुनने से रोका गया है। धारा 23 में शक्तियों का हस्तान्तरण तथा धारा 24[4] में इसके कानूनों से पड़ने वाले प्रभावों पर टिप्पणी दी गई है। धारा 25[5] के तहत केन्द्र सरकार राजपत्र में नोटीफिकेशन देकर नियम बनाने को अधिकृत है। धारा 26[6] में यह बताया गया है कि इस अधिनियमों के अन्तर्गत बनाये गये नियमों को संसद से पारित कराना आवश्यक होगा।

Protection of Action taken in Good Faith

1. **EPA : Section 18.**
No suit, prosecution or other legal proceeding shall lie against the Protection Government or any Officer or other employee of the Government of any authority constituted under this Act or any member, officer or other exployee of such authority in respect of anything which is done or intended to be done in good faith in pursuance of this Act or the rules made or orders or directions issued thereunder.

2. **EPA : Section 19.**
No court shall take congnizance of any offence under this Act except on a complaint made by :
(a) the Central Government of any authority or officer authorised in this behalf by that Govt. or;
(b) any person who has given notice of not less than sixty days, in the manner prescribed, of the alleged offence and of his intention to make a complaint, to the Central Government or the authority or officer authorised as aforesaid.

3. **EPA : Section 22.**
No civil court shall have jurisdiction to entertain any suit proceeding in respect of anything done, action taken or order or direction issued by the Central Government or any other authority of officer in pursuance of any power conferred by or in relation to its or his functions under this Act.

4. **EPA : Section 24.**
(1) Subject to the provision of sub-section (2), the provision to this Act and the rules or orders made therein shall have effect notwithstanding anything inconsistent therewith contained in any enactment other than this Act.
(2) Where any act or omission constitutes an offence punishable under this Act and also under any other Act then the offender found guilty of such offence shall be liable to be punished under the other Act and not under this Act.

5. **EPA : Section 25.**
(1) The Central Government may, by notification in the Official Gazette, make rules for carrying out the purposes of this Act.

Rules made under this Act to be laid before Parliament

6. **EPA : Section 26.**
Every rule made under this Act shall be laid, as soon as may be after it is made, before each House of Parliament, while it is in session, for a total period of thirty days which may be comprised in one session or in two or more successive sessions, and if, before the expiry of the session immediately following the session or the successive sessions aforesaid, both Houses agree in making any modification in the rule or both Houses agree that the rule should not be made the rule shall there after have effect only in such modified form or be of no effect, as the case may be; so, however, that any such modification or annulment shall be without prejudice to the validity of anything previously done under that rule.

पर्यावरण के क्षेत्र में बढ़ते प्रदूषण को रोकने तथा और प्रदूषण न होने के लिए भारत सरकार का निश्चय ही यह एक समयानुकूल महत्त्वपूर्ण प्रयास है। साथ ही इस अधिनियम से जल स्रोतों की तथा वायुमण्डल और भूमि की शुद्धता और निरापदता की रक्षा भी सम्भव है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कठिन कानून तथा इसके नियमों के उल्लंघन के फलस्वरूप लगाये गये भारी आर्थिक दण्ड व कारावास की सजा से भी लोगों को एकाएक ऐसा कार्य करने का साहस न होगा, जिससे सामान्य नागरिकों को कोई नुकसान हो अथवा नुकसान की सम्भावना हो। दण्ड प्रक्रिया में उद्योग चलाने (संचालन) वाले व्यवस्थापक को अथवा राज्य या केन्द्र सरकार के विभागों के विभागाध्यक्ष तक को 'दोषी' के कटघरे में लाने का साहसिक कदम भी अत्यन्त सराहनीय एवं प्रशंसनीय है। इससे यह डर पैदा हुआ है कि प्रदूषण फैलाने वाले को दण्ड प्रक्रिया में कहीं फँसना सम्भव हो सकता है।

केन्द्र सरकार ने इस अधिनियम के तहत नियम बनाकर संसद से पारित कराके 19 नवम्बर, 1986 से पूरे देश में लागू कर दिये हैं और केन्द्र के तथा राज्य के पर्यावरण विभाग कहीं-कहीं पर स्वतन्त्र रूप से और कहीं 'प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल' के सहयोग से अब उद्योगों के प्रदूषणों को नियन्त्रित कर रहे हैं।

(स) अधिनियम पर टिप्पणी—विशेषज्ञों की राय में इस अधिनियम में भी काफी कमियाँ हैं, जिनके कारण भारत सरकार की पूरी मंशा पूरी नहीं हो सकती है। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

1. किसी भी उद्योग को प्रारम्भ करने से पूर्व इसका 'पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन' (Environmental Impact Assessement) की व्यवस्था इस अधिनियम में नहीं है। यह बहुत आवश्यक है, क्योंकि सामान्य नागरिक को किसी उद्योग के लगने के बाद किन-किन पर्यावरणीय समस्याओं तथा अन्य कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा यह जानकारी उसको नहीं है? इसके अभाव में भविष्य में कई आशंकाएँ सम्भव हैं।
2. **पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अध्याय 3 की धारा 15 में प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग संचालक पर 5 वर्ष तक का कारावास तथा एक लाख रुपये तक के आर्थिक दण्ड अथवा दोनों का प्रावधान है। यह सजा व आर्थिक दण्ड लगातार प्रदूषण फैलाने पर और बढ़ाया जा सकता है जो सात वर्ष तक के कारावास तथा 5 हजार रुपये प्रतिदिन तक सम्भव है, लेकिन अध्याय 4 की धारा 24(2) में यह प्रावधान दिया है कि जब कोई जुर्म (अपराध) इस अधिनियम के साथ-साथ किसी अन्य अधिनियम के भी अन्तर्गत समान रूप से आता हो, तो दोषी को दूसरे अधिनियम के अनुसार ही सजा दी जा सकती है। इससे भारी आर्थिक दण्ड अथवा कारागार की सजा की प्रबलता स्वयं ही नष्ट हो गई है।** उदाहरणार्थ एक उद्योगकर्त्ता अपने औद्योगिक संस्थान के दूषित जलस्राव से किसी शुद्ध जल स्रोत को प्रदूषित करता है, ऐसी स्थिति में उसका यह जुर्म वस्तुतः पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 तथा भारतीय दण्ड संहिता, 1860 के सेक्शन 277[1] दोनों में ही आता है। इस धारा 24(2) के अनुसार IPC सेक्शन 277 में इस जुर्म की सजा केवल सामान्य आर्थिक दण्ड पाँच सौ रुपये तक तथा अधिकतम 3 माह के कारावास की सजा अथवा दोनों ही हैं।
3. देश में बढ़ते औद्योगीकरण के फलस्वरूप पर्यावरणीय प्रदूषण के मुकदमों की संख्या अनगिनत होगी यह पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। और इन्हें सामान्य कोर्ट में, जहाँ हजारों मुकदमे पहले से ही अनिर्णीत हैं, सुलझाया जाना सम्भव नहीं है, यह भी निश्चित रूप से सोचा जा सकता है। अतः वर्तमान परिस्थिति में प्रदेश वार अथवा औद्योगिक क्षेत्र समूह वार विशेष न्यायालयों का प्रावधान समीचीन एवं आवश्यक है। पर इस अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है, जो निश्चित ही एक भारी कमी है।

---

1. **IPC : Section 277.**
Whoever voluntarily corrupts or fouls the water of any public spring or reservoir so as to render it less fit for the purpose for which it is ordinarily used, shall be punished with imprisonment or either description for a term which may extend to three months, or with fine which may extend to five hundred rupees, or with both.

4. इस अधिनियम की धारा 19 के तहत किसी भी भारत के नागरिक को किसी उद्योग द्वारा किये जा रहे जुर्म के सम्बन्ध में वाद दायर करने का अधिकार तो दिया है, लेकिन उसके साथ इतने प्रतिबन्ध हैं कि स्पष्टतः वह अपने को असहाय पाता है। कोई भी व्यक्ति पहले सरकार को शिकायत के साथ 60 दिन को नोटिस देगा। इसी बीच में सरकार यदि इस शिकायत को स्वयं कोर्ट में दायर कर देती है, तो उस व्यक्ति की वह शिकायत खारिज कर दी जाती है; अर्थात् वह स्वतन्त्र रूप से समान रूप में किसी उद्योग के विरुद्ध बाद दायर करने में असमर्थ है।
5. धारा 16 के तहत सामान्य नागरिक इस प्रावधान से बहुत प्रसन्न थे कि बड़े-बड़े उद्योगों के व्यवस्थापक/संचालक अथवा सरकारी विभागों/उपक्रमों के विभागाध्यक्ष/उच्च अधिकारी पर्यावरणीय प्रदूषण फैलाने के दोषी पाये जाने पर भारी दण्ड के भागीदार होंगे, लेकिन वहीं धारा 17[1] में स्पष्ट बचाव का प्रावधान भी इस आधार पर रखा है कि यदि सम्बन्धित व्यक्ति ऐसा प्रमाण देता है कि उसका इस कृत्य से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, तो उसका दोष किसी अन्य पर हस्तान्तरित हो सकता है और इस प्रक्रिया में किसी को भी दोषी नहीं पाया जाना सम्भव हो सकता है।
6. प्रदूषण के अन्य प्रकारों, जिसमें अम्लीय वर्षा, ओजोन पर्त का विनाश, ग्रीन हाउस प्रभाव, विश्व युद्ध के परिणाम, समुद्रीय प्रदूषण आदि आते हैं, का इस अधिनियम में कहीं कोई स्थान नहीं है। वस्तुतः यह केवल उद्योगों से ही सम्बन्धित है।

4. लोक दायित्व बीमा अधिनियम, 1991 (The Public Liability Insurance Act, 1991)

(अ) विधेयक को संसद में प्रस्तुत करने का उद्देश्य : परिसंकटमय रसायन उद्योगों (hazardous chemical industries) की वृद्धि, उनके कार्यकलाप और परिचालन (processes and operations) ने देश में दुर्घटनाओं में भी वृद्धि की है, जो वहाँ के श्रमिक व अन्य कर्मचारी/अधिकारियों तक ही सीमित नहीं है बल्कि उद्योग स्थल के आस-पास के लोगों को भी हानि पहुँचाते है। यहीं तक नहीं बल्कि उनकी चल-अचल सम्पत्ति का भी नुकसान होता है। इन दुर्घटनाओं में मनुष्य से मवेशी तक जख्मी और मृत्यु तक के शिकार हो जाते हैं। प्रायः ऐसा भी देखने में आया है कि प्रभावी व्यक्ति अधिकतर उन छोटे और निर्धन वर्ग के होते हैं, जो इस हानि को बर्दाश्त नहीं कर पाते और किसी भी प्रकार के मुआवजा और राहत से भी वंचित रह जाते हैं। ऐसे हादसे वाले उद्योगों के कर्मचारी और श्रमिक तो उद्योग कानूनों के अन्तर्गत सभी प्रकार के लाभ ले लेते हैं पर आम जनता के लिये कोई कानूनी मदद उपलब्ध नहीं थी।

यह अधिनियम परिसंकटमय उद्योगों के कारण दुर्घटनाओं के शिकार होने वाले लोगों (श्रमिकों के अतिरिक्त) को तत्काल राहत प्रदान करने के लिये विशेष रूप से बनाया गया है जिससे अचानक कोई दुर्घटना हो जाने पर पड़ौसी आम जनता को उसका लाभ मिल सके। इस अधिनियम में यह भी प्रावधान है कि section 3 (1)[2] और (2)[3] दुर्घटना हो जाने पर आहत व्यक्ति को उस घटना के साथ होने वाले हादसे (incident) का कोई प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है। एक प्रकार से यह 'बिना त्रुटि दायित्व' (no fault liability) अधिनियम है।

(ब) अधिनियम का विवरण : यह अधिनियम (No. 6 of 1991) 22 जनवरी, 1991 को संसद में प्रस्तुत किया गया तथा गजट नोटीफिकेशन GSR 253 के साथ ही 1 अप्रैल, 1991 से लागू माना गया।

---

1. **EPA : Section 17 (1)**
II para : Provided that nothing contained in this section shall render such Head of Department liable to any punishment if he proves that the offence was committed without his knowledge or that he exercised all due diligence to prevent the commission of such offence.
2. **Section 3(1) :** Where death or injury to any person (other than a workman) or damage to any property has resulted from an accident the owner shall be liable to give such relief as is specified in the schedule for such death, injury or damage.
3. (2) In any claim for relief under sub section (1), (hereinafter referred to in this act as claim for relief), The claimant shall not be required to plead and establish that the death, injury or damage in respect of which the claim has been made was due to any wrongful act, neglect or default of any person.

इस अधिनियम का विवरण निम्न प्रकार है–

- इसमें एक ही अध्याय है।
- इसमें कुल 23 धाराएँ (Sections) हैं तथा साथ में राहत के लिये एक सूची (Schedule) जुड़ी है, जिसमें राहत विवरण स्पष्ट है।
- Section 6(1) (2) और (3) में मुआवजा लेने का प्रावधान है।
- Section 15 में मालिक द्वारा समय पर नहीं दिये जाने पर सजा का प्रावधान है (3 माह की कैद + 10,000 रु. का आर्थिक दण्ड या दोनों)।

मुआवजा (Claim) कौन ले सकता है ?
1. दुर्घटना में ग्रस्त स्वयं व्यक्ति।
2. उस सम्पत्ति का मालिक जिसका नुकसान हुआ है।
3. मृत्यु हो जाने की स्थिति में व्यक्ति का कानूनी वारिस।
4. कोई व्यक्ति जिसे दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति ने हकदार बना दिया हो।

राहत राशि कितनी ?	
1. चिकित्सा राशि पुनर्भरण	12,500 रु. तक
2. घातक क्षति (fatal injury)	25,000 रु. तक
3. स्थाई अपंगता	12,500 रु. से 25,000 रु. तक
4. काम पर न जाने पर 1000 रुपए प्रति माह	3,000 रु. तक
5. सम्पत्ति की हानि	6,000 रु. तक

5. राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल अधिनियम, 1992 (The National Environmental Tribunal Act, 1992)

(अ) विधेयक प्रस्तुत करने का उद्देश्य : परिसंकटमय रसायन उद्योगों में कार्य करते रहने पर दुर्घटनाओं की आशंका बनी ही रहती है। उससे ग्रस्त और त्रस्त लोगों को तत्काल राहत और मुआवजा (Relief and Compensation) समय पर मिल सके, उस हेतु इस अधिनियम को बनाया गया है। यह वास्तव में रियो डी जैनीरो में जून 1972 में आयोजित संयुक्त राष्ट्र की पर्यावरण कान्फ्रेंस के संदर्भ में उठाया गया कदम है, जिसमें सभी देशों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे अधिक दुर्घटना होने वाले उद्योगों के श्रमिक और कर्मचारियों के लिये सामयिक और शीघ्र राहत देने की व्यवस्था उपलब्ध करावें। अपने देश में भी अब संसद ने यह अधिनियम पारित कर दिया है। इस ट्रिब्यूनल की सबसे पहले चार शाखाएँ, (1) दिल्ली, (2) मुम्बई, (3) कोलकाता और (4) चेन्नई में होगी और फिर अन्य बड़े राज्यों में खोली जावेंगी।

(ब) अधिनियम का विवरण : राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल अधिनियम (Bill No. 133 of 1992) का विधेयक 1992 में संसद में प्रस्तुत किया गया। संसद के दोनों सदनों से स्वीकृत होकर 17 जून, 1995 को महामहिम राष्ट्रपति से भी स्वीकृत हो गया। इस अधिनियम का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है–

सारणी 28·4
राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल अधिनियम का विवरण

क्र.सं.	अध्याय क्रमांक	अध्याय का शीर्षक	धाराओं की संख्या : कुल
1.	1	प्रारम्भिक (Preliminary)	1 से 2 तक = 2
2.	2	किसी व्यक्ति की मृत्यु या चोट तथा सम्पत्ति और पर्यावरण की क्षति पर मुआवजा (Compensation for death of, or injury to a person and damage to property and environment)	3 से 8 तक = 6
3.	3	राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल और उनकी शाखाओं की स्थापना (Establishment of national environment tribunal and benches there of)	9 से 19 तक = 11
4.	4	ट्रिब्यूनल का कार्यक्षेत्र और कार्यवाही (Jurisdiction and proceedings of the tribunal)	20 से 25 तक = 6
5.	5	विविध (Miscellaneous)	26 से 32 तक = 7

6. राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलैट ऑथोरिटी अधिनियम, 1997 (The National Environment Appellate Authority Act, 1997)

यह अधिनियम महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने 26 मार्च, 1997 को जारी किया तथा 9 अप्रैल, 1997 से चालू माना गया। इस अधिनियम का उद्देश्य एक ऐसी राष्ट्रीय स्तर की पर्यावरण अपीलैट ऑथोरिटी का निर्माण करना है जो उन क्षेत्रों की अपीलों पर सुनवाई करे जहाँ पर उद्योग अथवा उद्योग संबंधी कार्यकलाप न होते हों। यदि होते हों तो जो पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अन्तर्गत विशेष रूप से चलाये जा रहे हों। वस्तुतः यह ट्रिब्यूनल विकास संबंधी योजनाओं और परियोजनाओं के ठीक से चलाये जाने में पारिदर्शिता लाने के लिये निर्मित है।

वर्तमान में इस ट्रिब्यूनल में एक चेअरमैन, एक वाइस-चेअरमैन तथा दो सदस्य (कुल चार) व्यक्ति हैं। इनकी योग्यताएँ पूर्व निर्धारित हैं, जिनमें आयु सीमा भी वर्णित है।

- **जनहित वाद**
  (Public Interest Litigation)

पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने की दिशा में एक नया विचार **'जनहित वाद'** आज बहुत लोकप्रिय हुआ है, जिसका भारतीय इतिहास केवल पिछले दो दशकों का है। यह निश्चय ही एक भारत जैसे क़ल्याणकारी योजनाओं वाले लोकतन्त्रीय देश में **भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39-A[1] के अनुरूप, 'यह आश्वस्त होना कि आर्थिक अथवा अन्य अयोग्यता के कारण किसी भी नागरिक को न्याय पाने के अवसर से वंचित न होना पड़े', है।** यह न्यायालय की विविध जटिलताओं से नियम/उपनियमों से परे है और किसी भी पीड़ित व्यक्ति अथवा समूह को यातना से छुटकारा दिलाने का एक सरल यन्त्र है। **यह संविधान के अनुच्छेद 21 की वचनवद्धता (Commitment) को 'भारत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के जीवन और उसकी व्यक्तिगत आजादी के मूल अधिकारों को आश्वस्त करती है (Guarantees the fundamental rights to life and personal liberty to all the persons living in India).**

'जनहित वाद' का प्रथम उल्लेख अमेरिका की न्यायपालिका की कार्य-प्रणाली में 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में मिलता है, जबकि 1876 में न्यूयार्क (अमेरिका) में प्रथम 'न्याय सहायक कार्यालय' (Legal Aid Office) प्रारम्भ हुआ था जिसमें उन लोगों को भी अपने मुकदमे अथवा प्रकरण प्रस्तुत करने का अवसर था जो या तो अनपढ़ और कम पढ़े लिखे थे अथवा न्यायालय का व्यय भार उठाने में सक्षम नहीं थे।

भारत में इस क्रम में शुरूआत उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों ने ही की और कई महत्त्वपूर्ण प्रकरण इस प्रणाली द्वारा माननीय न्यायालयों द्वारा निपटाये गये जो इतिहास बने। फिर स्वयंसेवी संस्थाएँ और व्यक्तिगत व्यक्तियों ने साहस बटोरा और उन्होंने उद्योगों के मालिकों के विरुद्ध ही नहीं बल्कि राजकीय संस्थाओं, नगर परिषद/पालिकाओं, राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध भी अपने वाद जनहित में दायर किये। यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बिना किसी भेदभाव के उच्च अथवा उच्चतम न्यायालयों ने बिना किसी दबाव अथवा परिवाद के जनहित में उचित निर्णय दिये। कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय यहाँ प्रस्तुत हैं—

1. म्यूनिसिपल कौन्सिल, रतलाम विरुद्ध श्री बरधीचन्द एवं अन्य[2] (जुलाई 29, 1980) : उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) : प्रकरण : एक एल्कोहॉल संयन्त्र से निकले जलस्राव का रिहायशी सड़क व गलियों में फैलना।

—रतलाम म्यूनिसिपैल्टी के अन्तर्गत एक रिहायशी जगह के नागरिकों ने रतलाम के सबडिवीजनल मजिस्ट्रेट के न्यायालय में Cr. P. C. 1973 के सैक्शन 133 के तहत, यह शिकायत दर्ज की कि,

(अ) एल्कोहॉल संयन्त्र से निकलने वाले गन्दे स्राव को सार्वजनिक सड़कों पर बहने को रोकने,

---

1. **भारतीय संविधान का अनुच्छेद 39-A :**
   "To ensure that opportunities of securing Justice is not denied to any citizen by reasons of economic or other disability."
2. **V. R. Krishna Iyer, Environmental Pollution and the Law (Indore : India : Vedpal Law House, 1984), pages 67-84.**

(ब) सड़कों की साफ-स्वच्छता न होने देने तथा
(स) उन व्यक्तियों को, जो सड़क को ही शौचालय आदि के रूप में प्रयोग करते हैं, शौचालय सुविधाएँ प्रदान करने में,

—रतलाम म्यूनिसिपैल्टी असफल रही है।

—म्यूनिसिपल कौन्सिल रतलाम ने अपना यह तर्क प्रस्तुत किया कि ऐसे स्थान पर जहाँ की गन्दगी का यह निवासी जिक्र करते हैं, निवासी खुद अपनी इच्छा से बसे हैं और रहते हैं। अतः इन्हें म्यूनिसिपैल्टी के विरुद्ध इस प्रकार की शिकायत का कोई हक नहीं है।

—मजिस्ट्रेट ने जाँच कर इस तथ्य को सही पाया और तत्काल ही सभी सफाई करने तथा आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराये जाने का आदेश दिया साथ ही यह भी जिक्र किया कि निर्णय की अनुपालना न होने पर IPC सेक्शन 188 के तहत कार्यवाही की जावेगी।

—म्यूनिसिपैल्टी द्वारा सैशन कोर्ट में अपील करने पर मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये निर्णय को असंगत बताया, लेकिन उच्च न्यायालय ने मजिस्ट्रेट रतलाम द्वारा दिये गये निर्णय की पुष्टि कर एक नये इतिहास को जन्म दिया जिसकी अपील सुप्रीम कोर्ट ने जनहित में खारिज कर दी।

2. कृष्ण गोपाल विरुद्ध मध्य प्रदेश सरकार (1986) : इन्दौर की श्रीमती सरला त्रिपाठी, जिसका पति हृदय रोग से पीड़ित था, ने सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट को यह शिकायत दर्ज की कि एक ग्लूकोज सेलाइन (Glucose Saline) उद्योग से दिन-रात अत्यधिक शोर होता है तथा इससे धुआँ व राख उत्सर्जित होती है। मेरे पति के साथ यहाँ के अन्य निवासी भी इससे बहुत परेशान हैं।

—माननीय न्यायाधीश ने जाँच कर श्रीमती त्रिपाठी की शिकायत को उचित ठहराते हुये CrPC के सेक्शन 133 के तहत उस फैक्ट्री को बंद कराने के ही नहीं, बल्कि अन्यत्र ले जाने के ही आदेश दे दिये।

3. एम. सी. मेहता विरुद्ध भारत सरकार (1987) : उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) : यह प्रकरण श्रीराम फूड एण्ड फर्टीलाइजर इण्डस्ट्रीज के दिल्ली इकाई से 4 दिसम्बर, 1985 को 'ओलियम गैस' (Oleum Gas) के रिसाव से सम्बन्धित था, जिसकी याचिका (Writ Petition) सुप्रीम कोर्ट के एक एडवोकेट श्री एम. सी. मेहता ने भारत सरकार के विरुद्ध दायर की थी। इस दुर्घटना में तीस हजारी कोर्ट (दिल्ली) के एक एडवोकेट की मृत्यु हो गई तथा अनेक अन्य व्यक्ति पीड़ित हुये।

—सुप्रीम कोर्ट ने इस याचिका को प्राथमिकता के आधार पर सुना और परिणामस्वरूप इस इण्डस्ट्री को बन्द ही किये जाने के आदेश दे दिये।

—उल्लेखनीय है कि इस प्रकरण में वादी स्वयं पीड़ित नहीं था, बल्कि जनहित में उसने यह प्रकरण कोर्ट में उठाया। कोर्ट द्वारा इस प्रकरण में वादी को श्रीराम इण्डस्ट्रीज से 10,000 रुपए की राशि भी बतौर खर्च व हर्जाने की दिलाई।

4. रूरल लिटीगेशन एण्ड एनटाइटलमेन्ट केन्द्र, देहरादून विरुद्ध उत्तर प्रदेश सरकार : दून वैली प्रकरण (1987), उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) : यह प्रकरण मंसूरी की पहाड़ियों में राज्य तथा भारत सरकार के निर्देशों के तहत 'लाइमस्टोन' के खनन से सम्बन्धित था, जिससे वहाँ के निवासियों को प्रतिदिन के जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुएँ भविष्य में न मिल पाने की आशंका के साथ-साथ वहाँ का पर्यावरण व प्राकृतिक सौन्दर्य भी नष्ट हो रहा था। एक स्वयंसेवी संस्था RLE (रूरल लिटीगेशन एण्ड एनटाइटलमेन्ट केन्द्र) ने एक सादे कागज पर हलफनामा पेश किया जिसे सुप्रीम कोर्ट ने याचिका के रूप में स्वीकार कर लिया।

—इस प्रकरण में भी सुप्रीम कोर्ट ने स्वयंसेवी संस्था RLE देहरादून के पक्ष में निर्णय दिया और उत्तर प्रदेश के जिला कलेक्टर और पुलिस अधीक्षक को मंसूरी की पहाड़ियों में खनन कार्य तत्काल रोकने के निर्देश दिये।

इस प्रकरण में भी सुप्रीम कोर्ट द्वारा स्वयंसेवी संस्था को 10,000 रुपये की राशि खर्च के भुगतान के लिए दिलवाई।

5. साइलेन्ट वैली सुरक्षा समिति (Society for Protection of Silent Valley) विरुद्ध भारत सरकार तथा केरल राज्य सरकार (1979) : केरल उच्च न्यायालय (Kerala High Court) (Unreported Judgement) : यह एक देश का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम रहा। केरल सरकार प्रदेश की सघन जंगलों

व वन्यजीवों से भरी 'साइलेन्ट वैली' में 'जल विद्युत प्रोजेक्ट' (Hydro Electric Project) चलाना चाहती थी। यद्यपि यह प्रदेश के लोगों को अधिक विद्युत उपलब्ध कराये जाने की एक जनहित में राजकीय योजना थी, पर उसे भविष्य के लिए कंटक मानते हुये एक स्वयंसेवी संस्था ने केरल राज्य सरकार के विरुद्ध मुकदमा दायर किया।

—वादी और प्रतिवादी दोनों पक्षों की बातों के आधार पर न्यायाधीश महोदय ने राज्य सरकार के पक्ष में ही निर्णय दिया जिससे पर्यावरण में रुचि रखने वालों को बहुत खेद हुआ।

—लेकिन पूरे देश की जनता की भावनाओं का सम्मान करते हुये तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गाँधी के व्यक्तिगत हस्तक्षेप से यह प्रकरण ही राज्य सरकार ने निरस्त कर दिया।

6. श्री सच्चिदानन्द पाण्डेय विरुद्ध पश्चिमी बंगाल राज्य सरकार (1987): उच्चतम न्यायालय (Supreme Court): यह प्रकरण जूलोजीकल गार्डन कलकत्ता (Zoological Garden, Calcutta) के किसी एक भाग को बेचने सम्बन्धी था। यहाँ एक सामान्य नागरिक श्री पाण्डेय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 48 (A)[1] के तहत राज्य सरकार के विरुद्ध मुकदमा दायर किया।

—जनहित को किसी अन्य व्यवसाय की तुलना में अधिक महत्त्व देते हुए विद्वान न्यायाधीश ने उस भू-भाग को होटल के उपयोग में दिये जाने के लिए उचित नहीं माना और निर्णय श्री पाण्डे के पक्ष में रहा।

यद्यपि जो इस प्रकार के मुकदमे जनहित में दायर हुये हैं, उनकी सूची बहुत लम्बी नहीं है पर फिर भी पाठकों की दिलचस्पी के लिए कुछ प्रकरण यहाँ दिये जा रहे हैं, जिससे रुचि रखने वाले इनके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सकें—

1. एस. पी. गुप्ता विरुद्ध भारत के राष्ट्रपति (1982—सुप्रीम कोर्ट)
2. पीपुल्स यूनियन फॉर डेमाक्रेटिक राइट्स विरुद्ध भारत सरकार (1982—सुप्रीम कोर्ट)
3. टी. दामोदरराव विरुद्ध सेनीटरी ऑफीसर म्यूनिसिपल कार्पोरेशन, हैदराबाद (1987—आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय)
4. जानकी विरुद्ध सरदारनगर म्यूनिसिपैल्टी, अहमदाबाद (1988—गुजरात उच्च न्यायालय)
5. किंकरी देवी विरुद्ध हिमाचल प्रदेश राज्य सरकार (1988—हिमाचल प्रदेश)
6. सम्पतराज जैन विरुद्ध राजस्थान राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड (सिविल रिट—जयपुर 1980)
7. उम्मेदराय शर्मा विरुद्ध हिमाचल प्रदेश राज्य सरकार (1986—हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय)
8. एम. सी. मेहता विरुद्ध भारत सरकार (1988 सुप्रीम कोर्ट)
9. सुभाष कुमार विरुद्ध बिहार राज्य सरकार (1991 सुप्रीम कोर्ट)
10. अरुण कुमार विरुद्ध नगर महापालिका इलाहाबाद (1987 इलाहाबाद उच्च न्यायालय) आदि।

उपर्युक्त विस्तृत विवरण से कई बातें स्पष्टतया दृष्टिगोचर होती हैं—

प्रथम तो यह है कि पर्यावरण के क्षेत्र में वर्तमान में हो रहे प्रदूषण तथा असन्तुलन के लिए नागरिक स्वयं न तो अपनी जिम्मेदारियाँ तथा उत्तरदायित्वों को समझने का प्रयास करते हैं और न ही उस सन्दर्भ में अपने क्रियाकलापों में उसका समावेश करते हैं। अपने समाज और देश तथा उसकी आम जनता के हित में सोचने का उनका मानस इस परिवर्तन के साथ बदल जाता है कि वह स्वयं किसी प्रदूषण को फैलाने वाले उद्योग के मालिक हैं अथवा उसकी यातना भोगने वाले सामान्य नागरिक। **हमें संविधान के प्रति निष्ठा रखते हुये अन्य नागरिकों के हित की बात भी आवश्यक रूप से सोचनी होगी।**

द्वितीय प्रदूषण को रोकने तथा उस पर नियन्त्रण रखने के लिए न तो हमारा प्रशासन बहुत अधिक सक्षम है और न ही कानून उनकी इतनी सहायता कर पाते हैं, जितनी उन पर यह व्यवस्था निर्भर है। पर्यावरण के क्षेत्र में पानी के, वायु के, वाहन के, ध्वनि प्रदूषण के तथा अन्य न जाने कितने कानून बने हैं और वह सभी पूर्णता की ओर जाने को प्रयासरत भी हैं, पर पूर्ण नहीं है। अतः इसी कारण कानून

---

1. **भारत संविधान : अनुच्छेद 48 (A) :**
"The state shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wild life of the country."

प्रभावी नहीं हो रहे हैं और प्रदूषणकर्त्ता का साहस निरन्तर बढ़ता जाता है। **बहुत सख्त कानून तथा उनका उसी कड़ाई से पालन किया जाना आवश्यक है। आज जितने भी पर्यावरण के क्षेत्र में प्रशंसनीय निर्णय हो रहे हैं, उनमें कानून अथवा दंड संहिता अथवा संविधान के कथ्य इतने प्रभावी नहीं हैं जितने कि गरिमापूर्ण ढंग से विद्वान न्यायाधीशों ने इन व्यवस्थाओं की समाज के हित में विवेचना कर देशहित में तथा आम नागरिक के हित में निर्णय दिये हैं।**

तृतीय बहुत महत्त्वपूर्ण एक पक्ष यह भी है कि **राष्ट्रीय नीति में यह तय करना होगा कि हमें मानव जीवन की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए क्षणिक व्यावसायिक लाभों को त्यागना है।** आज देश में वोटों की राजनीति ने भी जो दुर्दशा की है वह भी किसी से छिपी नहीं है। यह लोभ भी राजनेता त्यागें और अधिक हित के लिए छोटे लाभों को छोड़ने का मानस बनावें तो देश को निश्चित ही कुछ दिशा मिल सकती है।

यहाँ यह बताना भी उचित एवं उपयुक्त होगा कि जनहित वाद के जरिये आम नागरिक माननीय न्यायालयों से ऐसी-ऐसी कठिन समस्याओं का निस्तारण करा रहा है जिनकी भारत जैसे देश में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। (1) दिल्ली से बड़े उद्योगों का स्थानान्तरण, (2) ताजमहल के कई किमी दूरी तक धुएँ वाले कारखानों का निषेध, (3) दिल्ली में CNG ईंधन से ही बसों का आवश्यक रूप से आवागमन, (4) बिना ट्रीटमेन्ट प्लान्ट्स के किसी भी फैक्ट्री को NOC न देना आदि।

आम नागरिक अब बहुत जागरूक और सावधान है। नये-नये कानूनों की जानकारी से उन्हें शिक्षित करना बहुत सामयिक और आवश्यक है। निश्चय ही भविष्य अब अन्धकार से हटकर प्रकाश की ओर आ रहा है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974' के पीछे क्या विशिष्ट उद्देश्य था ? वह देश में कब से लागू हुआ ?
2. 'वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981' में दोषी व्यक्ति के लिये किन-किन सजाओं का प्रावधान है ? बताइये।
3. 'पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम' में क्या विशेष बातें हैं ? वह कब से लागू हुआ ?
4. 'जनहित वाद' किसे कहते हैं ? कोई एक उदाहरण दीजिये।
5. 'जल तथा वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम' किन कारणों से प्रभावी नहीं हो पाये ? मुख्य कारण बताइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 में क्या कहा गया है ?
7. आजादी के बाद संविधान में दो पर्यावरण संबंधी संशोधन किये गये। वह क्या हैं ?
8. 'पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम' केवल उद्योगों के लिये है। कथन को स्पष्ट करिये।
9. अधिनियमों में संशोधन क्यों करने पड़ जाते हैं ?
10. किसी उद्योग की दुर्घटना में पड़ोस के निवासी को क्या-क्या राहत मिल सकती है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'लोक दायित्व बीमा अधिनियम' किन के लिये बनाया गया ?
    (अ) श्रमिकों के लिये (ब) उद्योगों में कर्मचारियों के लिये
    (स) पड़ोस की जनता के लिये (द) उद्योगों के मालिकों के लिये
12. 'पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम' कब से प्रारम्भ हुआ ?
    (अ) 26 जनवरी, 1950 (ब) 19 नवम्बर, 1976
    (स) 15 अगस्त, 1980 (द) 14 नवम्बर, 1962

13. एक अधिनियम के साथ उपकर अधिनियम भी जोड़ा गया। उस अधिनियम का संबंध था—
(अ) जल प्रदूषण अधिनियम (ब) वायु प्रदूषण अधिनियम
(स) पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम (द) लोक दायित्व बीमा अधिनियम
14. अधिनियम जारी करने से पूर्व अन्तिम स्वीकृति किसकी होती है ?
(अ) लोक सभा (ब) राज्य सभा
(स) प्रधानमंत्री (द) राष्ट्रपति
15. 'जनहित वाद' के मुकदमे कहाँ दायर किये जा सकते हैं ?
(अ) अधीनस्थ न्यायालय (ब) नगर परिषद
(स) जिला परिषद (द) उच्च न्यायालय

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य चिन्हित कीजिये—

16. परिसंकटमय रसायन उद्योगों के लिये ही 'लोक दायित्व बीमा अधिनियम' निर्मित हुआ है। (सत्य/असत्य)
17. राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल का कार्य दुर्घटना से ग्रस्त श्रमिकों को राहत और मुआवजा शीघ्र दिलाना है। (सत्य/असत्य)
18. राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलैट ऑथोरिटी सभी प्रकार के अपराधों के निर्णयों की अपीलें सुन सकती है। (सत्य/असत्य)
19. सभी अधिनियमों में दोषी व्यक्ति के लिये सजाओं का प्रावधान समान है। (सत्य/असत्य)
20. कोई भी 'जनहित वाद' का मुकदमा दायर कर सकता है ? (सत्य/असत्य)

●

29

पर्यावरण और स्वयंसेवी संस्थाएँ
[ENVIRONMENT AND VOLUNTARY ORGANISATIONS]

● प्रस्तावना
(Introduction)

प्रत्येक विकासशील देश की तरह हमारा देश भी आजादी के बाद (1947) से ही उन सभी समस्याओं और परिस्थितियों से गुजर रहा है जिनसे अन्य देश चिन्तित अथवा पीड़ित रहते हैं। भाँति-भाँति की क्षेत्रीय विभिन्नताएँ (आर्थिक एवं सामाजिक तथा सांस्कृतिक), भाषायी समस्याएँ, भोजन, पानी, कपड़ा और आवास जैसी प्राथमिक आवश्यकताओं में निरन्तर होती कमी, रहने का गिरता स्तर और सबसे भयावह तथा संकटपूर्ण जनसंख्या वृद्धि आदि कुछ ऐसे बिन्दु हैं जिन्हें इस सन्दर्भ में गिना जा सकता है। इसके अलावा भी बहुत सी बातें होंगी जिससे जीवन की गुणवत्ता प्रभावित होती हो, पर सामान्य जीवन की तुलना में अधिक महत्त्व न देते हुए हम उसे यहीं छोड़ देते हैं।

राज्य सरकारें सामान्य जन नागरिकों के लाभ और कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ बनाती हैं और अपनी साधन सीमा में उनका क्रियान्वयन करती हैं लेकिन प्रायः यह देखा जाता है कि उनके अथक प्रयासों के बावजूद न तो वह सारी योजनाएँ और कार्यक्रम सभी तक पहुँच पाते हैं और न ही व्यापक रूप से उनका लोगों को लाभ मिल पाता है। एक तरफ इधर लोगों में भी असंतोष और राज्य सरकारों के प्रति उपेक्षा उत्पन्न होती है तो दूसरी तरफ उधर सरकारें भी अपनी विफलता के कारण क्षुब्ध रहती हैं। चाहे इसके कितने भी कारण, जिसमें अपर्याप्त अथवा दोषपूर्ण योजना निर्माण, घटिया क्रियान्विति अथवा संप्रेषण, अयोग्य निष्पादनकर्त्ता वर्ग आदि शामिल हैं, रहते हों पर इस सबका एक मूल परिणाम यह है कि राज्य सरकारों की भावनानुकूल उसके प्रयास और कार्यक्रम लोगों तक नहीं पहुँच पाते। सम्भवतः इस स्थिति ने ही अराजकीय संस्थाओं (Non-governmental Organisations) अथवा निजी स्वयंसेवी संस्थाओं (Private Voluntary Organisations) को जन्म दिया है अथवा यदि यह कहें कि उपर्युक्त समस्याओं के कारण ही NGO's अथवा PVO's की उत्पत्ति हुई है, जिनका मुख्य ध्येय ऐसी संकटमय स्थितियों से लोगों को छुटकारा दिलाना है, तो कोई त्रुटिपूर्ण नहीं है।

● स्वयंसेवी संस्थाओं का गठन
(Organisation of Non-govt. Organisations)

स्वयंसेवी संस्थाएँ मूल रूप से सामान्य जनता के लोगों में से ही बनी हुई एक समिति होती हैं जिनका द्विपक्षी कार्य ढंग होता है—(1) ये सरकारों से तालमेल बिठाकर उनकी योजनाओं को आम जनता तक पहुँचाती हैं और, (2) जनता की प्रतिक्रियाएँ, आकांक्षाएँ और उपेक्षाओं को सरकार के पास तक ले जाती हैं। इस तरह से यह इन दोनों के बीच बहुत महत्त्वपूर्ण कड़ी होती हैं। निश्चय ही इन संस्थाओं में समाज के ऐसे लोग होते हैं, जो त्यागी, सेवाभावी और निष्ठावान होते हैं और उनका अन्तिम लक्ष्य समाज अथवा देश की सेवा करना होता है। सदस्यों का स्तर NGO के प्रकार पर अथवा उसके नेता पर निर्भर करता है और इस बात पर भी निर्भर करता है कि उसका कार्यक्षेत्र क्या है ? इस कारण बहुत ही सामान्य शिक्षा स्तर के लोगों के समूह से लेकर यह अत्यन्त शिक्षित, दक्ष और तकनीकी (डाक्टर, इंजीनियर, विधिवेत्ता, आर्कीटेक्ट आदि) लोग तक इन संस्थाओं से जुड़े रहते हैं। ये संस्थाएँ केन्द्र तथा राज्य सरकारों से मान्यता प्राप्त भी होती हैं (कुछ नहीं भी) और उनके नियमों से प्रतिबन्धित भी होती हैं।

यहाँ यह उल्लेख करना बहुत समयानुकूल है कि जब हम यहाँ अराजकीय संस्थाओं (Non-governmental Organisations) की बात करते हैं तब हमारा आशय उन संस्थाओं से नहीं है जो निजी तौर पर बनती हैं अथवा बनी होती हैं और जिनको कोई धन लाभ कमाने का लालच है। हमारा स्पष्ट आशय ऐसी संस्थाओं से है जो निजी (अराजकीय) तो हैं, पर स्वयंसेवी भी हैं (Private & Voluntary Organisations) और जिनका ध्येय जनता के कष्ट दूर करना तथा देश के विकास में सहायक होना होता है।

इसी प्रकार सभी स्वयंसेवी संस्थाओं का कार्यक्षेत्र भी समान नहीं होता है। कुछ संस्थाएँ निश्चय ही किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी उठाने में सक्षम होती हैं और उनकी विविधताओं में रुचि होती है, वहीं अनेक संस्थाएँ किसी खास प्रकार के कार्यों को ही अपना कार्यक्षेत्र बना लेती हैं और उसी/उन्हीं क्षेत्रों की विशेषज्ञ कहलाती हैं। उदाहरण के तौर पर गुजरात का पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद (Centre for Environment Education, Ahmedabad) एक ऐसी अराजकीय स्वयंसेवी संस्था है जिसका कार्यक्षेत्र केवल पर्यावरण शिक्षा, चेतना अथवा जनजाग्रति है। यह भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के अधीन केन्द्रीय पर्यावरण विभाग से संबद्ध है और देश के उत्तरी क्षेत्र में समस्त पर्यावरण शिक्षा सम्बन्धी उत्तरदायित्व वहन करती है। इसके साथ ही राजस्थान में सेवा केन्द्र उदयपुर (Sewa Kendra, Udaipur) भी ऐसी ही एक और अराजकीय स्वयंसेवी संस्था है जो महिला विकास, समाज कल्याण, विकलांग सेवा, पुनर्वास, पर्यावरण, साक्षरता और न जाने कितने क्षेत्रों में एक साथ और समान रूप से कार्य करती है। यह भी राज्य सरकार तथा केन्द्र दोनों से सम्बद्ध है।

● स्वयंसेवी संस्थाओं की कार्यप्रणाली (Working of Non-govt. Organisations)

विश्वभर में सभी स्वयंसेवी संस्थाओं की कार्यप्रणाली लगभग एकसी होती है जो पारम्परिक रूप से चल रही होती है। केवल अन्तर इतना ही होता है कि जिन सरकारों अथवा समाज के क्षेत्र के साथ उन्हें काम करना होता है उनकी सहमति सीमाओं के साथ भी जुड़ना और चलना होता है। एक केन्द्रीय व्यक्ति नेता या सरदार (Chief) होता है, उसके साथ अन्य लोग जुड़े होते हैं जो निश्चित किये गये संस्था के नाम पर पूर्व निर्धारित संस्था नियमों के अनुसार उसी केन्द्रीय व्यक्ति के निर्देशानुसार चलते हैं। सभी कुछ निश्चित तथा गरिमापूर्ण होता है, क्योंकि यह साख ही उनको समाज में स्थान दिलाती है और सरकारें भी इसी साख को अपने यहाँ के उत्तरदायित्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपने को ध्यान में रखती हैं।

सभी स्वयंसेवी संस्थाएँ छोटा या बड़ा अपना सचिवालय (Secreteriat) रखती हैं और इसी की सहायता से अपना पत्र व्यवहार तथा अन्य कार्य सम्पन्न करती हैं। धनराशि एकत्रित करने का उनका आधार कुछ समाज के दानी लोग (Philanthropist) होते हैं जो उन्हें सहयोग करते हैं। सरकारों से मिले उत्तरदायित्व के साथ सचिवालय मद में मिलने वाली रकम भी इस कार्य के काम में आती है, पर फिर भी आवश्यकता पड़ने पर ये संस्थाएँ येन केन-प्रकारेण धन एकत्रित कर लेती हैं। कारण कि समाज में इनका प्रतिबिम्ब एक ऐसी संस्था के रूप में होता है जिनका अन्तिम लक्ष्य समाज की भलाई और सेवा है।

● विदेशों में स्वयंसेवी संस्थाएँ (Non-govt. Organisations in Abroad)

विश्व के विकसित देशों में जहाँ राजकीय मशीनरी में अपेक्षाकृत कम लोग होते हैं और उनके कार्यक्रमों का व्यापक और वृहद् विस्तार भी होता है, वहाँ वे निश्चय ही अच्छे स्तर पर कार्य करने वाली स्वयंसेवी संस्थाओं की तलाश में रहते हैं। हर ऐसे प्रशासनिक कार्यालय में स्वयंसेवी संस्थाओं की सूची होती है और वे इन संस्थाओं से निरन्तर सम्पर्क साधे रहते हैं। अपनी कार्ययोजना का, मय विस्तृत विवरण तथा उस पर प्रशासन द्वारा दिये जाने वाले धन के साथ, प्रस्ताव वह कई NGO's को देते हैं। यदि बहुत ही व्यापकता से कार्य करने की बात हो तो समाचार-पत्रों आदि में विज्ञप्ति भी प्रकाशित कराते हैं। कोई भी इच्छुक NGO's उस कार्य को स्वीकार कर सकता है। NGO's में आपसी वैमनस्य अथवा कोई नुकताचीनी की भी बात नहीं होती है, क्योंकि सभी NGO's पर उनकी साधन क्षमता से अधिक कार्य सदैव रहता है। एक अन्य प्रकार से विदेशों में NGO's द्वारा किसी कार्यक्रम की सहमति देना उनकी उपलब्धि मानी जाती है।

आर्थिक सहयोग एवं विकास संस्था OECD (Organisation for Economic Co-operation and Development) के सर्वे के अनुसार सन् 1984 में उत्तर क्षेत्र के देशों में 1602 प्रथम श्रेणी की स्वयंसेवी संस्थाएँ कार्यरत थीं। जो केवल समाज कल्याण के कार्यों से ही अनुबन्धित थीं। मिले-जुले कार्यों के लिए कनाडा, फ्रांस, इंग्लैण्ड, जर्मनी में प्रत्येक में ऐसी संस्थाओं की संख्या 1000 से अधिक है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में 175 ऐसी संस्थाएँ हैं, जिनके सचिवालय का वार्षिक बजट 2 लाख अमेरिकी डालर से लेकर 35 करोड़ अमेरिकी डालर तक का है (जो संयुक्त राष्ट्र संघ की किसी एक विशेष एजेन्सी के बजट से भी अधिक है।) निःसन्देह यह संख्या समय के साथ बढ़ रही है।

1987 में लंदन में आयोजित हुए 'Development Alternatives : The Challenge for NGO' पर आयोजित सिम्पोजियम के अवसर पर यह बात ध्यान में लाई गई कि लेटिन अमेरिका में NGO's की संख्या कई हजार, मैक्सिको में 250, पेरू में 300 तथा ब्राजील में 1,041 हैं। दक्षिणी एशिया (भारत सहित) तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया (बर्मा सहित) में भी NGO's की संख्या कई हजार है। यही स्थिति अन्य देशों में भी है। इनकी इतनी बड़ी संख्याओं का कोई बहुत पुराना इतिहास भी नहीं है। केवल पिछले 50 वर्षों में इनकी संख्या में वृद्धि का कारण लोगों की इस अवधि में, भीषण और भयानक घटनाओं तथा दुर्घटनाओं के घटने से व्यथित जन समुदाय को राहत देने की भावना ही मुख्य रही है। इसके साथ ही आर्थिक विपन्नता तथा अशिक्षा अथवा कम शिक्षा के कारण कई देशों के लोगों पर होने वाले अनुचित व्यवहार ने भी कई स्वयंसेवी संस्थाओं को जन्म दिया है। कई स्वयंसेवी संस्थाओं के बनने के पीछे उनके समाज के प्रति इस भावना का पनपना भी है कि लोगों को प्रशासन से तत्काल और उचित न्याय नहीं मिल पाता है जिसे वे उचित, न्यायसंगत और तर्कपूर्ण समझते हैं।

• स्वयंसेवी संस्थाओं की व्यापकता
(Comprehensiveness of Non-govt. Organisations)

स्वयंसेवी संस्थाएँ केवल अपने देश तक की परिधि में ही काम नहीं करतीं बल्कि ऐसी भी कुछ संस्थाएँ हैं जो एक देश से दूसरे देश तक में कार्य सम्पन्न करती हैं। यही नहीं पूरे विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक की स्वयंसेवी संस्थाएँ भी आज उपलब्ध हैं और फिर ऐसी संस्थाओं का उपयोग राष्ट्र संघ तथा विश्व स्तर की एजेन्सियाँ बड़े विश्वास के साथ करती हैं। अकाल, सूखा अथवा बाढ़, महामारी प्रकोप, प्राकृतिक दुर्घटनाओं के समय भोजन, बच्चों को दूध, दवाइयाँ, कपड़े और अन्य प्रकार की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जिम्मेदारी यह संस्थाएँ उठा लेती हैं। ऐसे समय सामान का क्रय, उनका ले जाना तथा उचित स्थानों पर निर्देशानुसार वितरण का कठिन कार्य कर लेना सहज नहीं होता है, जो यह सब करती हैं।

ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के संस्थान, जिन्हें ऐसे NGO's की आवश्यकता होती है जो एक या कुछ देशों अथवा पूरे विश्व में उनकी योजनाओं की क्रियान्विति कर सकें, की एक सूची यहाँ दी जा रही है—

(1) यूनीसेफ—UNICEF (United Nations International Childrens' Fund),
(2) विश्व खाद्य कार्यक्रम—WFP (The World Food Programme),
(3) आई. एफ. ए. डी.—IFAD (International Fund for Agriculture Development),
(4) राष्ट्र संघ पर्यावरण कार्यक्रम—UNEP (United Nations Environment Programme),
(5) राष्ट्र संघ विकास कार्यक्रम—UNDP (United Nations Development Programme),
(6) जनसंख्या कार्यक्रम हेतु राष्ट्र संघीय कोष—UNFPA (United Nations Fund for Population Activities),
(7) खाद्य एवं कृषि संगठन—FAO (Food and Agriculture Organisation),
(8) विश्व बैंक (World Bank),
(9) विश्व स्वास्थ्य संगठन—WHO (World Health Organisation),
(10) राष्ट्र संघ विपदा कल्याण समन्वय कार्यालय—UNDRO (Office of the UN Disaster Reliefs Co-ordinator),

(11) संयुक्त राष्ट्र का शरणार्थियों के लिए हाईकमिश्नर का कार्यालय—UNHCR (Office of the UN High Commissioner for Refugees),

(12) फिलीस्तीनी शरणार्थियों के लिए राष्ट्र संघ की सहायता एजेन्सी—URRWA (UN Relief and Work Agencies for Palestine Refugees) आदि।

• भारत में स्वयंसेवी संस्थाएँ (NGO's in India)

भारत यद्यपि ऐसा देश है जिसकी सांस्कृतिक विरासत लोगों की सहायता करना है, तथापि यहाँ स्वयंसेवी संस्थाओं की संख्या और देशों की तुलना में बहुत कम है। इसका एक कारण यह भी है कि यहाँ की केन्द्र अथवा राज्य सरकारें और उनके अधिकारी अभी तक यह मानस नहीं बना पाये हैं कि स्वयंसेवी संस्थाएँ बहुत ही ईमानदारी और विश्वास के साथ प्रभावी रूप में कार्य कर सकेंगी। अतः अधिकतर कार्य सरकारी विभागों के कर्मचारियों द्वारा ही सम्पन्न कराया जाता है। इसने एक पारस्परिक कम विश्वास की भावना को जन्म दिया है जो देश के हित में नहीं है। इसके साथ ही देश की बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप शिक्षित बेरोजगारी ने NGO's निर्माण और उसके कार्य को विवशता के कारण व्यवसाय के रूप में स्वीकार करने को बाध्य किया है। इससे अपवाद स्वरूप वह गरिमा नहीं बन पाई है जितनी कि सिद्धान्तः अपेक्षा थी पर फिर भी अधिकांश NGO's अच्छे स्तर से समाज कल्याण कार्यों में लगी हैं, जिसमें शिक्षा का क्षेत्र सर्वाधिक चर्चित है।

पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाएँ काफी सीमित हैं। केन्द्रीय पर्यावरण विभाग ने पूरे देश में पर्यावरण के क्षेत्र में पंजीकृत संस्थाओं के सर्वे के अनुसार, सन् 1984 में 187 संस्थाओं का उल्लेख किया है, जिसका पूर्ण विवरण उन्होंने अपने एक प्रकाशन में किया है। उसके बाद पूरे देश में पर्यावरण के प्रति रुझान, केन्द्र के साथ-साथ सभी राज्यों में स्वतन्त्र अथवा अन्य विभागों के साथ मिलकर पर्यावरण विभागों की स्थापना से अब NGO's की संख्या बढ़ी है। मोटेतौर से वर्तमान में देश में लगभग 600 अच्छी स्वयंसेवी संस्थाएँ पर्यावरण के विविध आयामों से जुड़ी हुई हैं। ऐसी ही एक व्यापक सूची का प्रकाशन हाल ही में डॉ० वंदना शिवा ने किया है, जिसका अवलोकन आप अपनी रुचि के लिये कर सकते हैं।

• पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं से अपेक्षाएँ (Expectations from NGO's in the Field of Environment)

हम चाहे प्रशासन स्तर की बात करें चाहे सामाजिक उत्तरदायित्व की; स्वयंसेवी संस्थाओं की कार्य सीमाएँ कहाँ तक सम्भव हैं, यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है ? जहाँ केवल प्रशासन अपने सभी कार्यों को अपने स्तर पर कर पाने में समर्थ नहीं है, वहीं स्वयंसेवी संस्थाएँ चाहे उन्हें कितनी भी सुविधा उपलब्ध करायी जाये अथवा कितनी ही धनराशि उपलब्ध करायी जाये, फिर भी सभी कार्य अपने स्तर पर कर पाने में सक्षम नहीं हैं। इसके अतिरिक्त स्वयंसेवी संस्थाओं को एक और विकट समस्या से जूझना पड़ता है और वह यह है कि चाहे वह देश और समाज के हित में काम कर रहे हों अथवा सरकार द्वारा आवंटित और स्वीकृत काम को अंजाम दे रहे हों, उन्हें अन्य विभागों से सम्बन्धित कार्य करवाने में वही कष्ट झेलना पड़ता है जो एक आम आदमी अपने व्यक्तिगत कार्य के लिए सहन करता है। इससे स्वयंसेवी संस्थाओं में कार्य के प्रति रुचि कम ही नहीं होती बल्कि उन्हें विरक्ति होने लगती है और भविष्य में ऐसा कोई कार्य का उत्तरदायित्व नहीं लेने का मानस बनाने लगती हैं। सरकारें भी अपना मानस कुछ इस प्रकार का रखती हैं कि जैसे कोई कार्यक्रम स्वीकृत कर तथा उससे सम्बन्धित धनराशि देकर उन्होंने किसी व्यक्ति अथवा किन्हीं स्वयंसेवी संस्थाओं पर कोई अहसान किया है। इसी कारण कार्यक्रम स्वीकृत करने के बाद न तो वे उनसे कोई विशेष सम्पर्क रखती हैं और न ही क्रियान्विति के दौरान कोई मानीटरिंग करती हैं; कार्य पूरा हो जाने के बाद प्रशंसा और सराहने की बात तो काफी दूर है। इसका भी विपरीत असर कार्य सम्पन्नता में देखने को मिलता है। कभी-कभी तो कार्य समाप्ति के बाद इस बात का पता चलता है कि उस प्रकार कार्य हुआ ही नहीं जिस प्रकार का कार्य किया जाना था और अपने आदेशों और निर्देशों में कमी का दोष उसी संस्था के ऊपर थोप दिया जाता है। ऐसी स्थिति में उसे कार्य समाप्ति के बाद धन का भी भुगतान नहीं हो पाता और संस्थाएँ विभाग का चक्कर लगाती रहती हैं।

पर्यावरण के क्षेत्र में चाहे संरक्षण की बात हो चाहे सुधार की, चाहे प्रदूषण कम करने की बात हो अथवा रोकने और नियन्त्रण करने की, यह बात अनुभव के आधार पर सराहनीय कही जा सकती है कि ये स्वयंसेवी संस्थाएँ निम्न क्षेत्र में अधिक सफल हुई हैं—

(1) समाज और सरकार के मध्य तालमेल बिठाना।

(2) पर्यावरण शिक्षा, चेतना तथा जन जागृति के कार्य।

(3) समाज की समस्याओं को सरकारों तक पहुँचाना और उनको सही कार्य करने को बाध्य करना। और

(4) समाज हित में कानून की सहायता लेना।

अतः यही कार्य करने की अपेक्षा भी समाज और प्रशासन दोनों को स्वयंसेवी संस्थाओं से करनी चाहिए।

• पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किये जा रहे कार्य (Activities taken by NGO's in the Field of Environment)

अभी हमने यह अनुभव के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किस-किस प्रकार के कार्य अधिक सरलता से किये जा सकते हैं ? अब उसी परिप्रेक्ष्य में कुछ उदाहरण देकर यह पुष्टि करना चाहेंगे कि स्वयंसेवी संस्थाएँ इन विविध आयामों पर किस सीमा तक कार्य कर रही हैं। आओ जानें—

(1) समाज और सरकार के बीच तालमेल बिठाना (To Develop relations between Society and Government) : यह कार्य लगता बहुत सहज और प्रारम्भिक है, पर पूरी प्रक्रिया में यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें, (1) स्वयंसेवी संस्था का गठन, जिसमें उपयुक्त प्रकार के व्यक्ति हों और जिन्हें सामाजिक हित के कार्यों के करने में आस्था हो, (2) उसका विधिवत पंजीयन (राज्य सरकार के पंजीयन कार्यालय से पूर्व निर्मित विधान और प्रक्रियाओं के अनुरूप), (3) समाज में संस्था की पहचान तथा आस्था बिठाना और (4) राज्य सरकार के पर्यावरण विभाग में नियमानुसार आवेदन कर अपनी प्रविष्टि कराना कार्य प्रमुख रूप से आते हैं। इनमें समय लगता है, धन व्यय होता है और कई स्तर पर अपना अथवा अपने किसी परिचित का सहारा लेकर कार्य कराना होता है। इस हेतु यह भी उचित और उपयुक्त होता है कि संस्था में किसी अच्छे पदों पर ऐसे व्यक्तियों को रखा जावे जिनका प्रभाव समाज तथा सरकार दोनों में ही हो। इससे आगे विभागों से कार्यों की स्वीकृति भी आसानी से मिलती है और कार्य करते समय अथवा कार्य समाप्ति पर कोई अनजाना अंदेशा भी नहीं रहता है। विभाग से पंजीयन करवा कर अपना निरन्तर उससे सम्पर्क बनाये रखने से ही अच्छा तालमेल संभव है जिसके आधार पर स्वयंसेवी संस्था का भविष्य निर्भर करता है।

(2) पर्यावरण शिक्षा, चेतना तथा जन जागृति के कार्य (Activities relating Environmental Education, Awareness and Public Consciousness) : पर्यावरण शिक्षा, चेतना एवं जन जागृति के कार्यों की संख्या अनगिनत है लेकिन उनमें से भी कुछ उन कार्यों को ही चलाना होता है, (1) जो अधिक प्रभावी हों, (2) कम शक्ति से अधिक लोगों तक कम समय में पहुँचाये जा सकते हों तथा (3) चुने हुए आयु वर्ग की रुचि अनुकूल हों। इनमें उन लोगों का भी ध्यान रखना आवश्यक होता है जो कम पढ़े-लिखे हों अथवा बिल्कुल ही शिक्षित (साक्षर) न हों। इन कार्यक्रमों की मिली-जुली सूची यहाँ समेकित कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इनमें और कितने ही कार्यक्रम जोड़े जा सकते हैं। यहाँ यह वर्णन करना आवश्यक है कि स्वयंसेवी संस्थाओं का कार्यक्षेत्र औपचारिक शिक्षा (कक्षा/शिक्षण) का बिल्कुल नहीं है बल्कि निपट अनौपचारिक है। अतः कार्यक्रम भी इसी प्रकार के होते हैं जो या तो सहगामी प्रवृत्तियों की तरह आयोजित किये जा सकते हों अथवा देखने-सुनने (Visual-audio) के प्रकार के हों।

(अ) विद्यार्थियों के लिए कार्यक्रम (सभी स्तर के लिए)—

पारिस्थितिकी विकास शिविर, प्रशिक्षण शिविर, रैलियाँ, प्रदर्शनियाँ, विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएँ (चित्रकला, वाद-विवाद, निबन्ध लेखन, फोटोग्राफी, नुक्कड़ नाटक, कठपुतली शो, विद्यालय संस्थाओं की सौन्दर्य प्रतियोगिताएँ, पत्रवाचन आदि) तथा वृक्षारोपण, फिल्म शोज़।

(ब) अन्य शिक्षित लोगों के लिए—
रैलियाँ, पदयात्राएँ, संगोष्ठियाँ, सिम्पोजियम, कार्यशालाएँ, प्रशिक्षण कार्यक्रम, नाटक, लोकनृत्य आदि।

(स) कम पढ़े-लिखे अथवा निरक्षर लोगों के लिए—
सभी प्रकार के श्रव्य-दृश्य सम्बन्धी कार्यक्रम जिनमें दूरदर्शन—आकाशवाणी से प्रसारण सम्मिलित हैं, लोक-नृत्य, लोकगीत, नाटक, कठपुतली प्रदर्शन फिल्म शोज़ आदि।

यह उपर्युक्त वर्गीकरण भी बहुत स्पष्ट और सटीक नहीं है क्योंकि आयु वर्ग के अलावा कई और विभाजन श्रेणियों का भी कार्यक्रम आयोजन में कहीं ध्यान रखना पड़ता है जैसे—(1) सरकारी संगठन, (2) गैर सरकारी संगठन, (3) स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, (4) अनुसंधान संगठन, (5) व्यावसायिक निकाय, (6) महिला और युवा संगठन आदि तथा (7) विद्यार्थियों/युवाओं, शिक्षकों, अन्य विभागों के व्यक्ति, महिलाएँ, प्रशासकों, जन प्रतिनिधियों, व्यावसायिकों, औद्योगिक कर्मियों आदि। सभी के लिए अलग-अलग प्रकार के कार्य ही आयोजित करने होते हैं।

(3) समाज की समस्याओं को सरकार तक पहुँचाना तथा उनको सही कार्य करने को बाध्य करना (To Carry the Society Problems to the Govt. and to Force it to do Right Work) : यह बहुत कठिन कार्य है लेकिन स्वयंसेवी संस्थाओं की गरिमा में वृद्धि वाला है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो पिछले 20 वर्षों में सरकार की प्रतिष्ठा के प्रश्न बन गये लेकिन समाज के आन्दोलन और आक्रोश के आगे टिक नहीं सके और सरकार को वह प्रस्ताव वापस लेने पड़े। **स्पष्ट है कि इन आन्दोलनों को स्वयंसेवी संस्थाओं ने ही आगे बढ़ाया था। कुछ प्रकरण यहाँ प्रस्तुत हैं—**

(i) उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में सरकार-ठेकेदारों की मिलीभगत से भारी संख्या में कटते वन उत्पाद को रोकने हेतु जनता द्वारा उठाया गया **'चिपको आन्दोलन'** अब सर्वविदित है। ठेकेदारी प्रथा को रोकने और वन उत्पादों का लाभ स्थानीय लोगों को मिलने के हक में 1970 के दशक में **(1) गंगोत्री ग्राम स्वराज्य संघ, उत्तरकाशी** तथा **(2) दशोली ग्राम स्वराज्य संघ, गोपेश्वर** की भूमिका इस हद तक प्रभावी रही कि आखिर सरकार को ठेकेदारी प्रथा को रोकना पड़ा। वन उत्पादों के सही आकलन हेतु 'उत्तर प्रदेश वन विकास निगम' (UP Forest Development Corporation) का गठन किया गया तथा स्थानीय लोगों के हितों की रक्षा का आश्वासन दिया गया। निश्चय ही यह स्वयंसेवी संस्थाओं का उदाहरणीय योगदान था।

(ii) **टेहरी बाँध** (उत्तर प्रदेश) तथा **नर्मदा सागर और सरदार सरोवर (नर्मदा घाटी बेसिन) बाँध** जो क्रमशः भागीरथी नदी पर 260·5 मीटर ऊँचा तथा नर्मदा नदी पर 137·6 मीटर और 91·4 मीटर ऊँचा बनना प्रस्तावित है, के सन्दर्भ में बहुत जन आन्दोलन हुआ। जहाँ सरकारें वहाँ बाँध बनाकर जल विद्युत की विपुल सम्भावनाओं से जनता को लाभ पहुँचाने की बात को समर्थन देती थी, वहीं वहाँ के लोग इसे जनता के साथ खिलवाड़ तथा सरकार का अदूरदर्शितापूर्ण प्रस्ताव मानते थे। कई-कई हजारों लोगों को विस्थापितों (Refugees) की श्रेणी में लाना तथा वहाँ के स्थानीय उद्योगों को समाप्त करने का प्रयास जैसे दोषारोपण के साथ भारी जन आन्दोलन हुए। स्थानीय NGO's ने अपनी महती भूमिकाएँ निभाईं और अन्त में आन्दोलन इस शर्त के साथ स्थगित हुआ कि बाँध निर्माण के पूर्व अधिकृत एवं सक्षम पर्यावरण विशेषज्ञ समिति की तकनीकी राय लेनी आवश्यक होगी जिसमें लोगों को अन्य पर्यावरणीय विकृतियों का सामना न करना पड़े।

(iii) इसी प्रकार के अन्य बाँधों, जो देश की अन्य नदियों पर प्रस्तावित हैं, पर भी जनता की कड़ी-विरोधी प्रतिक्रियाएँ हुई हैं। **बिहार में कोयल कारो बाँध** (Koel Karo Dam in Bihar) तथा **बस्तर (मध्य प्रदेश)** में गोदावरी और इन्द्रावती नदियों पर **ईचमपल्ली** (Ichampalli) और **भोपाल पटनम** (Bhopal Patnam) बाँध ऐसे ही अन्य उदाहरण हैं। **महाराष्ट्र की गंधचिरोली** (Gandhchiroli) **परियोजना**, जिसमें 2 लाख एकड़ भूमि जलमग्न हो जायेगी तथा 40 हजार लोग निराश्रय हो जायेंगे, महान पर्यावरणविद् बाबा साहब आम्टे समर्थित स्वयंसेवी संस्था का कार्यक्षेत्र बना है।

(iv) **बम्बई बचाओ आन्दोलन** (Save Bombay Movement) जिसमें बम्बई की बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप शहर के लोगों को होने वाली समस्याओं के विरोध में **बम्बई बचाओ समिति** (Save Bombay

Committee) ने महाराष्ट्र सरकार पर यह दबाव डाला है कि शहर की अधिकतम जनसंख्या 80 लाख तक ही रखी जाय। उन्होंने निकट कस्बे (Satellite Towns) बनाने का प्रस्ताव भी सरकार के समक्ष रखा जिस पर अत्यन्त संजीदगी से विचार चल रहा है।

और भी ऐसे कई उदाहरण स्थानीय रूप में अवश्य होंगे जिनकी जानकारी पाठकों को अपने स्तर पर होगी। पर यहाँ कुछ उदाहरण देने से हमारा अभिप्राय यही है कि स्वयंसेवी संस्थाओं का कार्य बहुत आसान नहीं है बल्कि विपरीत बहुत दुर्गम और कठिन है।

(4) समाज हित में कानून की सहायता लेना : जनहित वाद (To Help Assist Society with Law : Puplic Interest Litigation) : यहाँ हमारा आशय यह है कि जब भी सामाजिक हित की बात सामान्य जन-आन्दोलन द्वारा सरकार अथवा प्रशासन ने स्वीकार नहीं की, वहीं स्वयंसेवी संस्थाओ के माध्यम से जनता ने न्यायालयों की शरण ली और अधिकांश मामलों में निर्णय जनता के पक्ष में ही रहा। ऐसे अनेक उदाहरण इसी पुस्तक के पिछले अध्याय 'पर्यावरण और कानून' में 'जनहित वाद' शीर्षक में दिये हैं, उनकी यहाँ पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते। केवल एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रकरण का उल्लेख यहाँ जरूर करेंगे।

सरिस्का (राजस्थान) अलवर जिले में राष्ट्रीय उद्यान है तथा बाघ बाहुल्य क्षेत्र के कारण इसे 'टाइगर रिजर्व' के रूप में मान्यता मिली है। कई वर्षों से पर्यावरण और प्रकृति अनुरूप न होने के कारण यहाँ वन्य पशुओं की संख्या में निरन्तर कमी हुई है। वन उत्पादों का अवैध रूप से ले जाना और प्रभावी व्यक्तियों तथा चोरी छिपे अनजाने लोगों द्वारा वन्य जीवों के शिकार ने भी इस रिजर्व को अर्थहीन सा बना रखा है। उस पर भी विगत कुछ दिन पूर्व यहाँ के क्षेत्र में राज्य सरकार द्वारा जारी किये गये खनन कार्य के पट्टों से पूरा 'टाइगर रिजर्व' और वहाँ की प्राकृतिक गतिविधियों पर बहुत खराब असर हुआ है। एक सामाजिक संस्था, 'तरुण भारत संघ' ने, जिसे पूरे स्थानीय तथा अब बड़े अधिक क्षेत्र के लोगों का समर्थन प्राप्त है, इसका भारी प्रतिवाद किया। राज्य प्रशासन के न मानने पर न्यायालय की शरण ली और अपने औचित्य के लिए उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) से स्थगन (Stay Order) आदेश प्राप्त कर लिया। जनता की आवाज को एक स्थानीय स्वयंसेवी संस्था (NGO) ने इतने प्रभावी ढंग से उठा कर प्रस्तुत किया कि पूरे देश में यह प्रकरण जाना जाने लगा है।

पिछले पृष्ठों में पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं की अहम् भूमिका की चर्चा हमने की है और उनकी शक्ति बोध का दिग्दर्शन भी संक्षिप्त में कराया है। पर इस सन्दर्भ में कुछ बातें और सोचने तथा ध्यान देने योग्य हैं–

1. स्वयंसेवी संस्थाओं का गठन कहीं भी और किसी भी प्रकार का हो, लेकिन इनके पंजीयन से पूर्व इनकी राज्य प्रशासन द्वारा कोई अल्प प्रशिक्षण की व्यवस्था अवश्य की जाय जिनसे इनका कार्य कम दोषपूर्ण हो और इनकी कार्यक्षमता में विकास हो।
2. यह बात प्रत्येक NGO के मानस में बिठानी अत्यन्त आवश्यक है कि ये संस्थाएँ व्यावसायिक रूप न लें। वस्तुतः यह संस्थाएँ समाज और राष्ट्रहित में हैं।
3. प्रत्येक NGO प्रत्येक क्षेत्र में कार्य नहीं कर सकती है अतः जो क्षेत्र उनकी रुचि के हों, उनका साहित्य उन्हें भरपूर उपलब्ध कराया जाय जिससे वे उस क्षेत्र की गहनता को समझ सकें।
4. NGO's का राज्य सरकार द्वारा पंजीयन होने के बाद उनका उन विभागों में भी पंजीयन होना चाहिए जिनमें वह कार्य करने में रुचि रखती हैं। इससे विभागीय निकटता में वृद्धि होगी।
5. एक महान परिवर्तन सरकार/प्रशासन से अपेक्षित इस प्रकार का है कि प्रशासन यह इन्तजार न करे कि उनके कार्यक्रमों के लिए NGO's आवेदन करेंगी। जनहित में प्रशासन को पहल कर संबंधित NGO's को आमन्त्रित कर लेना चाहिए। और
6. एक राष्ट्र स्तरीय NGO's का Net Work बनना चाहिए जिससे वे सामूहिक रूप से कभी-कभार पारस्परिक रूप से मिल सकें और अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकें। इससे NGO's का सोचने और समझने का दायरा बढ़ेगा और कूपमण्डूकता के स्थान पर वृहद् दृष्टिकोण पनपेगा।

निश्चय ही पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं (NGO's) की प्रभावी भूमिका से पर्यावरण की अनेक समस्याओं का निदान और समाधान अत्यन्त सरलता और सहजता से सम्भव है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. स्वयंसेवी संस्थाओं के बनने के पीछे क्या विशेष बातें रहती हैं ? बताइये।
2. पर्यावरण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं से क्या अपेक्षाएँ की जाती हैं ? स्पष्ट करिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. अराजकीय संस्थाएँ (Non Governmental Organisations) और स्वयंसेवी संस्थाओं (Private Voluntary Organisations) में क्या अन्तर है ?
4. पर्यावरण के प्रति जन जाग्रति हेतु किस तरह के कार्यक्रम आयोजित हो सकते हैं ?
5. किसी स्वयंसेवी संस्था द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में किये गये कार्यों का उल्लेख करिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

निम्न प्रश्नों में सत्य/असत्य अंकित करिये–

6. स्वयंसेवी संस्थाएँ राज्य सरकार अथवा विभागों की नीतियों को आम जनता तक पहुँचाने का कार्य करती हैं। (सत्य/असत्य)
7. स्वयंसेवी संस्थाओं को विधिवत् पंजीयन करवाना आवश्यक होता है। (सत्य/असत्य)
8. स्वयंसेवी संस्थाएँ केवल अपने-अपने देश में ही कार्य कर सकती हैं। (सत्य/असत्य)
9. स्वयंसेवी संस्थाएँ जनहित वाद (Public Interest Litigation) के मुकदमे दायर नहीं कर सकती हैं। (सत्य/असत्य)
10. स्वयंसेवी संस्थाओं का अन्तिम लक्ष्य केवल धन कमाना होता है। (सत्य/असत्य)

●

30

पर्यावरण प्रबन्ध एवं राष्ट्रीय पर्यावरण नीति
[MANAGEMENT OF ENVIRONMENT AND NATIONAL ENVIRONMENT POLICY]

● प्रस्तावना
(Introduction)

आदिकाल से ही मानव की यह इच्छा रही है कि उसको वह सब चीजें तो मिलती ही रहें जो उसकी प्राथमिक आवश्यकता के अन्तर्गत आती हैं (भोजन, कपड़ा और मकान), लेकिन उसके जीवन को और सुख-सुविधा देने हेतु **कुछ अधिक** भी मिले। इस कुछ अधिक की लालसा ने वैज्ञानिक प्रगति का सहारा लेकर मनुष्य ने वह सब करना प्रारम्भ कर दिया जिसकी वह स्वयं भी कामना नहीं कर सकता था। उसने मकान बनाये, बाँध बनाये, सड़कें बनाईं, बस स्टैण्ड, रेलवे स्टेशन, एअरपोर्ट बनाये, सिंचाई के नये साधन शुरू किये, सीवरेज सिस्टम, विद्युत उत्पादन, उद्योग-कल कारखाने आदि इतना कुछ बनाया कि एक अलग से ही **'मानवकृत पर्यावरण'** मुखरित हो उठा। प्राकृतिक पर्यावरण, शाश्वत तथा मूल रूप से आवश्यक, की महत्ता कम दिखने लगी। इधर जनसंख्या वृद्धि ने स्थिति को और ही मोड़ दे दिया। हर चीज की कमी दिखाई देने लगी और प्राथमिक आवश्यकताओं में 'वायु' और 'जल' जैसे पर्यावरणीय घटक जुड़ गये जो पृथ्वी पर रहने वाले प्रत्येक निवासी के लिए वह दैविक विरासत थी। प्राकृतिक संसाधनों की कमी, हर स्तर पर निरापदता के स्थान पर असह्य प्रदूषण, नगरीकरण की समस्या, अपर्याप्त भोजन, अनेक प्रकार के असाध्य रोग और मशीनी दिनचर्या सभी ने मनुष्य को इस सीमा तक प्रभावित किया कि वह स्वयं 'पर्यावरण का दास' बन गया। **आज भाग्य भरोसे भविष्य की और भी विकृत स्थिति की सम्भावना को साथ ले वह वर्तमान व्यतीत कर रहा है। सुखमय जीवन अब उसकी एक स्वप्निल कामना ही है।**

जब हम पर्यावरण प्रबन्ध की बात करते हैं, तो निश्चय ही हमारी एक विशुद्ध कल्पना 'पर्यावरण की गुणवत्ता' (Quality of Environment) से है जिसका अन्तिम परिणाम 'जीवन की गुणवत्ता' (Quality of Life) सुनिश्चित है। लेकिन उपर्युक्त वर्णित अनुसार यदि हम गुणं-अवगुण के आधार पर वर्तमान की स्थिति का सूक्ष्मान्वेषण करें तो हम जानेंगे कि हमारी स्वयं की गलतियों ने ही हमें इस युग के ऐसे भयानक मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है जिसे बहुत आसानी से सुधारा नहीं जा सकता। विकास और प्रगति के नाम पर हमने प्रकृति और उसके निरन्तर चलते रहने वाले चक्र को गड़बड़ा दिया है और मानवकृत सुविधाओं के अहम् के आधार पर हम उसकी उपेक्षा कर रहे हैं। सत्य यह है कि बिना अच्छे प्राकृतिक पर्यावरण के हम न तो सुखमय वर्तमान जी सकते हैं और न ही भविष्य की शांतिप्रद आश्वस्तता सोच सकते हैं। यह ठीक है कि आज की वैज्ञानिक प्रगति और विकसित तथा विकासशील देशों की परस्पर आगे बढ़ने की होड़ में हर देश को विकास के पथ पर बढ़ना है, पर विकास को 'पर्यावरण के विनाश' के नाम पर तोलना भी उचित नहीं है। विनाश रहित विकास (Development without Destruction) हमारा ध्येय और नारा (Aim and Slogan) होना चाहिए।

तो यह स्पष्ट है कि जब हम पर्यावरण प्रबन्ध की बात करते हैं तो हमें उसे पारिस्थितिकी के परिप्रेक्ष्य में ही सोचना चाहिए। फाहीमुद्दीन अहमद[1] ने अपने लेख Environmental Management में लिखा है—

1. Fahimuddin Ahmed, 'Environmental Management' Chapter Nil in Environmental Education for Conservation and Development, Desh Bandhu and G. Berberet, ed. (New Delhi : India, Indian Environmental Society, First edition, 1987). p. 336.

"Technological change is a national necessity in a developing world and thus must not be frozen. What is needed in the concept of environmental planning and management coupled with an understanding of the ecological concepts, methods and skills."

(विश्व के विकास के लिए तकनीकी प्रगति एक राष्ट्रीय आवश्यकता है, अतः उसे रोका नहीं जाना चाहिए; आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण का प्रबन्ध और उसकी योजनाएँ पारिस्थितिकी अवधारणाओं, तरीके और कार्यप्रणालियों की समझ पर आधारित हों।)

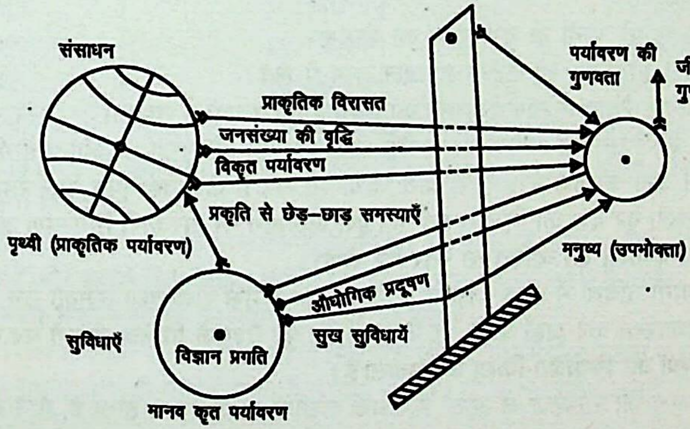
इस प्रकरण पर आगे चर्चा करने से पूर्व हमें यह बात स्पष्ट रूप से जाननी है कि आज मनुष्य को किन-किन स्थितियों में अपने आपको समायोजित करना पड़ रहा है।

(1) पृथ्वी और उसका सम्पूर्ण पर्यावरण उसके सामने है जिसे क्षणिक और अधिक लाभ अथवा स्वार्थ के लिए मनुष्य ने छेड़ा है,

(2) मानवकृत पर्यावरण जिसे सुख-सुविधा की आपूर्ति और बढ़ती जनसंख्या की वृद्धि ने जन्म दिया है, तथा

(3) इन दोनों के बीच अनचाही-अनजानी अनेक समस्याएँ और विकृतियाँ, जो विकराल रूप धारण कर सामने खड़ी हैं।

इन परिस्थितियों के मध्य एक सुखी सामाजिक जीवन की कामना का अनुमान लगावें कि वह कितनी कठिन है ? निम्नांकित चित्र को देखें—



चित्र 30·1—पर्यावरण और मनुष्य

इस चित्र से यह समझते देर नहीं लगेगी कि बहुत थोड़ीसी सुख-सुविधाओं के नाम पर विरासत में मिल रहे प्राकृतिक पर्यावरण की बात तो दूर उल्टे हमें बढ़ती जनसंख्या के दुष्परिणाम, विकृत पर्यावरण, बढ़ता प्रदूषण और अनेक उत्पन्न समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

• आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु समस्याएँ (Problems in Fullfilling the Needs)

अधिक सैद्धान्तिक बारीकियों में न जाकर हम सीधे-सीधे पर्यावरण विकृति के कारण, उनसे पड़ने वाले प्रभाव तथा उनसे बचने अथवा बचाव के प्रबन्ध के बारे में चर्चा करेंगे और यह इंगित करने का प्रयास करेंगे कि मनुष्य की प्रमुख भूमिका के रूप में उनका उत्तरदायित्व क्या है ? भारत के परिप्रेक्ष्य में उनको हम यहाँ क्रमवार दे रहे हैं—

(1) बढ़ती जनसंख्या (Growing Population) : **अपने देश भारत की जनसंख्या का पिछला 100 वर्षों का वृद्धि विवरण अध्याय 23 की सारणी संख्या 23·3 में दिया है। पिछले 40 वर्षों में (1961 में 43·90 करोड़ : 2·16% वृद्धि; 1971 में 54·80 करोड़ : 2·48% वृद्धि; 1981 में 68·30 करोड़ : 2·46% वृद्धि तथा 1991 में 84·39 करोड़ : 2·36% वृद्धि) औसतन जनसंख्या वृद्धि प्रतिशत 2·37 रहा है। 1991 वर्ष की भारत की जनसंख्या के आधार पर वर्तमान वृद्धि प्रतिशत से लगभग 2 करोड़ आबादी की वृद्धि प्रतिवर्ष हो रही है।**

विश्व के परिप्रेक्ष्य में भारत में हम प्रतिवर्ष कम-से-कम एक आस्ट्रेलिया (1991 की आबादी 1·75 करोड़) अथवा एक ब्राजील या इंडोनेशिया (ब्राजील—1991 : 1·54 करोड़; इंडोनेशिया—1991 : 1·91 करोड़) जितनी आबादी की वृद्धि देख रहे हैं। भारत के राज्यों से यदि वृद्धि की तुलना करें तो एक पंजाब राज्य (1991 की आबादी 2·02 करोड़) प्रतिवर्ष हम अपने देश में जोड रहे हैं। **इससे प्रत्यक्ष रूप से जल पूर्ति का अभाव, खाद्यान्न की कमी, आवास की समस्या सीधे-सीधे प्रभावित हैं; और समस्याएँ अनगिनत अलग हैं।**

(2) पीने के जल की उपलब्धता (Potable Water Availability) : किसी एक देश में पीने के पानी की दैनिक उपलब्धता को ज्ञात करना असंभव नहीं तो कठिन तो अवश्य है, क्योंकि इससे जाने कितने घटक सम्बन्धित होते हैं ! पर यदि आदर्श स्थिति की कल्पना करें और चार्ल्स एच. साउथविक[1] के अनुसार विश्व में वाष्पीकरण एवं निर्जलीकरण के बाद कुल प्राप्त पानी की मात्रा 37,000 घन किलोमीटर प्रतिवर्ष स्वीकार भी कर लें तो भारत भूमि पर समान वितरण के आधार पर प्रतिवर्ष 2500 घन किमी पानी उपलब्ध है। यदि इसे पूरा समाप्त कर दिया जाय तो यहाँ की 2003 की आबादी (लगभग 103 करोड़) और पीने के पानी की बंटत (केवल 2 प्रतिशत) के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 140 लीटर पानी हिस्से में आता है। **अमेरिकन रिपोर्ट के अनुसार इसका केवल चौथाई भाग ही लोगों तक पहुँच रहा है। निश्चय ही वह 35 लीटर मात्रा से अधिक नहीं है। अतः पानी की मात्रा की न्यूनता देखें और निरन्तर जनसंख्या वृद्धि के अनुसार उसकी घटती स्थिति की मात्रा जानें। निश्चित ही हमें यह जानना है—**

1. हर स्तर पर पानी के दुरुपयोग को रोकें।
2. जितना आवश्यक हो उतना ही जल काम में लेवें।
3. पर्यावरण सुधार के नाम पर पानी का उपयोग **(जैसे घरों में उद्यान)** को निरुत्साहित करें। इतने जल से अपेक्षाकृत अधिक वृक्ष लगेंगे और प्राणवायु की मात्रा भी ज्यादा होगी।
4. भूगर्भ जल को इस बेरहमी से व्यय किया जा रहा है जैसे वह मुफ्त मिल रहा हो। इस गलती की सजा पूरे देश को मिल सकती है। **इस जलभाग पर सरकारी नियन्त्रण आवश्यक है (हैण्ड पाइप प्रणाली को व्यक्तिगत स्तर पर रोकें)।**
5. जो पानी नदियों में बहकर समुद्र में मिल जाता है उसे रोकें तथा उसको उन स्थानों पर भेजने की व्यवस्था करें जहाँ पानी की किल्लत है। **पूरे देश के विभिन्न स्थानों पर जल के असमान वितरण को नियंत्रित किया जा सकता है।**
6. वह जल जो सीवरेज से आता है अथवा उद्योगों से जलस्राव होता है, पीने के पानी स्रोतों में न मिले, यह बहुत ध्यान देने की बात है। **पानी तो दूषित होता ही है, साथ ही पीने के पानी में भी कमी होती है।**

(3) खाद्यान्न की उपलब्धता (Availability of Food Grains) : विश्वस्त जानकारी के आधार पर हम यह जान सकते हैं कि पिछले लगभग 20 वर्षों से (1980-81 से 2001-2002 तक) प्रति व्यक्ति प्रति दिन 500 ग्राम से अधिक खाद्यान्न उपलब्ध है, **जो यथेष्ट है** (सन्तुलित भोजन विवरण में 325 ग्राम अनाज + 100 ग्राम दालें = 425 ग्राम खाद्यान्न प्रस्तावित है)। प्रश्न यह है कि क्या इसका वितरण प्रत्येक व्यक्ति के अनुसार पूरे देश में हो पाता है ? कितना अनाज चूहे, कीड़े-मकोड़े या वर्षा अथवा अन्य कारणों से नष्ट हो जाता है ? कितना अनाज केवल व्यापारी के गोदामों में सील हो जाता है ? **अतः खाद्यान्न की देश में कोई कमी नहीं है। फिर भी यदि किन्हीं कारणों से आवश्यकता आ ही पड़े तो दूध उत्पाद, फल-सब्जियाँ अथवा माँसाहारी भोजन की आदत डालें।** विदेश के जिन देशों में अपने देश की आवश्यकता से अधिक अन्न होता है वे दूसरे देशों को अनाज भेजकर अपनी मर्जी से सौदा करते हैं, जिससे अनाज मँगाने वाले देश कभी उऋण नहीं हो पाते। **अनाज का दुरुपयोग भी किसी स्थिति में नहीं हो, इससे भी काफी समस्या हल हो सकती है।** राज्यों को अपने प्रान्तों में आवश्यकतानुसार अपने स्तर पर व्यवस्था करनी चाहिये।

---

1 **Charles S. Southwick, Ecology and the Quality of Our Environment, Ibid. p. 276.**

(4) आवास (Shelter or Homes) : भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश (2003 में 103 करोड़) में सभी को मकान (आवासीय सुविधा) उपलब्ध हो यह सम्भवतः अत्यन्त दुरूह कार्य है। जिस देश में गरीबी की रेखा से नीचे लोगों का प्रतिशत 25% से भी अधिक हो और जहाँ सामान्य आवासीय व्यवस्था भी कुल 50% से अधिक न हो वहाँ पूरी तरह समस्या का समाधान तभी सम्भव है जब राष्ट्र स्तर पर अथक प्रयास किये जायें। नेशनल बिल्डिंग आर्गेनाइजेशन (National Building Organisation—NBO) के अनुसार देश में 1987 तक 25 मिलियन (2·50 करोड़) मकानों की कमी थी, जिसकी संख्या 1995 में 33 मिलियन (3·30 करोड़) तथा सन् 2002 तक 40 मिलियन (4·0 करोड़) हो गई। अन्य कई अधिकृत संस्थाओं के अनुमान इससे कहीं अधिक है, पर एक मोटे अनुमान से अगले वर्षों में देश में कुल रह सकने वाले मकानों की आवश्यकता काफी होगी।

सारणी 30·1
भारत में आवासीय मकानों की स्थिति

वर्ष	कुल मकानों की आवश्यकता	उपलब्ध मकानों की संख्या
1985	135 मिलियन	110 मिलियन
1990	151 मिलियन	122 मिलियन
1995	167 मिलियन	134 मिलियन
2000	187 मिलियन	148 मिलियन
(सम्भावित) 2005	205 मिलियन	160 मिलियन

यद्यपि उपर्युक्त आँकड़े निराशाजनक नहीं हैं पर फिर भी इन्हीं अनुमानों के अनुसार लगभग 45 मिलियन (4·5 करोड़) मकानों की कमी देश में सन् 2005 में रहेगी। इनमें सबसे अधिक प्रभावित गरीब व आर्थिक पिछड़े लोग ही होंगे।

भारत के बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत बिन्दु संख्या 14 में सबके लिए मकान को एक देश की आवश्यकता माना है और इसके लिए पिछले वर्षों में केन्द्र द्वारा सभी राज्यों को ऐसे निर्देश प्रसारित किये गये हैं जिससे **सबको मकान** मिलने का सपना साकार हो सके।

मकान बनने अथवा बनाने से देश के लोगों के लिए एक जीवन प्राथमिकता सुलभ कराने की प्रक्रिया में जो पर्यावरणीय संकट साथ ही पैदा हो गया है उसका उल्लेख भी करना यहाँ उचित ही रहेगा। उनमें से मुख्य हैं—

1. आवासीय कॉलोनियों के विकास के लिए सघन जंगल कट गये तथा कृषि भूमि क्षेत्र से भी हाथ धोना पड़ा। इससे एक ओर पर्यावरण पर प्रभाव पड़ा और दूसरी ओर कृषि उत्पादन में कमी हो गई।
2. मकान बन जाने से घरों का अधिक जल कॉलोनियों से बाहर आ गया जिससे प्रदूषण फैला। वर्षा का अधिक जल भूमि के अभाव में जमीन में न समा पाने के कारण बाढ़ का कारण भी बना। दोनों ओर से पर्यावरण को हानि ही हुई।
3. जो परिवार संयुक्त रूप से एक ही मकान में रहते थे उन्होंने विघटन कर अनेक मकान अलग-अलग बनाये। पैसे का दुरुपयोग हुआ और मकानों की कमी बनी ही रही।
4. मकान निर्माण की प्रक्रिया में करीबी पहाड़ अथवा पहाड़ियों को पत्थर उपयोग के नाम पर काट डाला। भवनों में लकड़ी के उपयोग ने सघन जंगलों को बर्बाद कर दिया।

अतः पर्यावरण की दृष्टि से जहाँ आवास उपलब्ध कराने आवश्यक हैं, वहीं पर्यावरण संरक्षण भी बहुत महत्त्वपूर्ण है, यह ध्यान में रखना जरूरी है। अतः एक तालमेल इन दोनों पहलुओं में आवश्यक है।

(5) वनों का विनाश (Destruction of Forests) : वनों की महत्ता, उनकी वर्तमान स्थिति तथा वन क्षेत्रों की कमी से हो सकने वाले अनेक पर्यावरणीय दुष्परिणाम सहित पूरा विवरण इसी पुस्तक के एक

स्वतन्त्र अध्याय में दिया है। अतः इस आधार पर यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि वन हमारे पोषक हैं, जीवनदाता हैं। या अति संक्षिप्त में हम यह कहें कि वन हमारा जीवन है तो भी यह बहुत उचित व उपयुक्त कथन होगा।

आजादी के बाद 1951-52 में देश में 329 mh भूमि भाग पर 75 mh वन थे जो उस समय लगभग 23% (22·79 प्रतिशत) थे। लेकिन जलाऊ लकड़ी, इमारती प्रयोग, खेलकूद का सामान और अनाप-शनाप फर्नीचर ने इन वनों को कम कर दिया और स्थिति यहाँ तक पहुँची कि वनों का प्रतिशत इतना कम हो गया कि जिस पर किसी देश का पारिस्थितिकी सन्तुलन ही असम्भव होता है। एक सर्वे के अनुसार लगभग 1·5 mh वन क्षेत्र प्रतिवर्ष कटे। अतः 1972-73 में वन क्षेत्र 54 मिलियन हैक्टेयर (16·41%), 1981-82 में 46 मिलियन हैक्टेयर (13·98%) रह गये। 1992-93 की वनों की स्थिति का अनुमान 36 mh से अधिक नहीं है जो लगभग 11·0% होता है।

आश्चर्य की बात तो यह है कि फारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट ने सर्वे कर सन् 1999 में वनों की स्थिति 19.39% बताई है, पर यह वह भी मानते हैं कि वास्तविक वन 11% से अधिक नहीं हैं। अर्थात् 6 वर्ष के अथक प्रयास के बावजूद वनों की स्थिति अपरिवर्तनीय है।

राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार उपलब्ध भूमि भाग के 33% क्षेत्र में अर्थात् लगभग 110 mh क्षेत्र में वन होने चाहिए जबकि वर्तमान स्थिति 36 mh से अधिक नहीं है।

सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत वन लगाने की नई दिशा मिली। जनता की सक्रिय साझेदारी का उपयोग हुआ। 1980-81 से प्रारम्भ हुए इस कार्यक्रम से लगभग 1·7 mh वन क्षेत्र प्रतिवर्ष बढ़े, लेकिन लगातार लकड़ी के उपयोग ने इस योजना से देश को उतना लाभ नहीं दिया जितनी की आशा और अपेक्षा थी। सन् 1986-87 से एक वन आन्दोलन चला और प्रतिवर्ष 5 mh भूमि को वन क्षेत्र में शामिल करने का अभियान शुरू हुआ। राज्य सरकारों ने स्वयंसेवी संस्थाओं के सहयोग से वृक्षारोपण के लिए जन जागरण किया। उससे कुछ सफलता भी मिली, पर पारम्परिक तरीके के इस देश में लकड़ी का विशेष और अधिक उपयोग, (1) जलाऊ ईंधन तथा (2) शवदाह ने सब लक्ष्य अपूर्ण कर दिये। आखिर वन कैसे सुरक्षित रहें ? यह कठिन और सामयिक प्रश्न है। अतः इस हेतु यह सुझाव हैं—

1. राष्ट्रीय वन नीति के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक वानिंकी जैसे कार्यक्रमों को पूर्ण निष्ठा से चलाया जाय जिससे वन क्षेत्र में वृद्धि हो।
2. जितने भी वृक्ष लगे हैं, उन्हें बचावें। काटने से रोकना बहुत आवश्यक है।
3. विविध ऐसे लकड़ी के उपयोग, जहाँ वैकल्पिक व्यवस्था हो सकती है, तुरन्त रोके जायें। इमारती सामान, फर्नीचर आदि में प्लास्टिक का उपयोग किया जा सकता है।
4. एक बहुत बड़ा लकड़ी का भाग देश में जलाऊ लकड़ी के रूप में प्रयोग होता है। वैकल्पिक स्रोत के रूप में बायो गैस तथा सौर-कुकर को अपनाया जाय।
5. शव दाह में सुधारे गये उपकरणों (Improved Crematorian) का उपयोग किया जाय। इसमें कम से कम 20 प्रतिशत लकड़ी कम व्यय होती है।
6. स्कूल, घर, पंचायत घर, चिकित्सालय, बस स्टैन्ड, एअरपोर्ट आदि अनेक स्थानों पर सघन वृक्षारोपण हो और उन पौधों की ठीक से देखभाल हो जिससे वह पनप सकें।
7. स्कूलों में नर्सरीज बनाई जायें और फिर उन पौधों का उचित उपयोग कर अधिक-से-अधिक हरियाली के क्षेत्र विकसित किये जायें।
8. वृक्षों का महत्त्व विद्यार्थियों तथा जनसाधारण को समझाया जाय।

(6) भयानक प्रदूषण (Dreadful Pollution) : पिछले 20-25 वर्षों में देश में चहुँ ओर प्रगति हुई। नये-नये उद्योग खुले, आवागमन के साधन बढ़े, मनोरंजन के रूप बदले; जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप अधिक अन्न उपजाने के प्रयास में उत्पादन बढ़ा और भी न जाने कितनी रहने-सहने की सुविधाओं में वृद्धि हुई, लेकिन इन सबका एक अत्यन्त भयानक परिणाम 'प्रदूषण' हुआ। वायु, जल, भूमि, भोजन सभी में प्रदूषण होने लगा। स्थिति दिन-प्रतिदिन इतनी बिगड़ने लगी कि निरापदता (स्वच्छता) की बात अब आश्चर्य सी लगने लगी है। इस सन्दर्भ में कुछ उपाय और सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं—

सारणी संख्या 30·2
प्रदूषण नियन्त्रण हेतु कुछ उपाय और सुझाव

क्र. सं.	प्रदूषण के प्रकार	कारण	नियन्त्रण हेतु उपाय एवं सुझाव
1.	वायु प्रदूषण	1. परम्परागत जलाऊ ईंधन	1. बायो गैस व सौर ऊर्जा को लोकप्रिय बनाया जाये।
		2. सीवरेज व घरेलू पानी तथा अपशिष्ट	2. (अ) **सीवरेज जल तथा सीवरेज हेतु उपचार उपकरण** (Treatment Plants) लगाये जाये। इस पानी को पीने के पानी के स्रोतों से दूर रखें। गंदगी बस्ती से बहुत बाहर रहे। (ब) **घरेलू जल** को किचन गार्डन में प्रयोग करें। अपशिष्ट का उपयोग खाद बनाने में कर सकते हैं।
		3. औद्योगिक प्रदूषण	3. (अ) प्रदूषण नियन्त्रण उपकरण आवश्यक हों। (ब) विभिन्न प्रकार की फैक्टरी अलावा उद्योगों से निकलने वाले उत्सर्जित पदार्थों के मानक भारत सरकार द्वारा प्रसारित हैं, उनका कठोरता से पालन किया जाये। (स) सुरक्षा व्यवस्था आश्वस्त की जाय; लोगों को शिक्षित किया जाये।
		4. वाहन प्रदूषण	4. (अ) इंजन की सही ट्यूनिंग हो। (ब) प्रस्तावित भार से अधिक भार न लादा जाये। (स) पेट्रोल व डीजल में मिलावट को रोका जाय।
2.	जल प्रदूषण	1. नगरीय गंदगी, औद्योगिक अवशिष्ट, डिटरजेन्ट का उपयोग, पानी के साथ बहकर आने वाले कीट रसायन, शव-प्रवाह, उद्योगों का गर्म जल आदि।	1. पीने के पानी के स्रोतों की रक्षा व बचाव हेतु उपाय किये जायें; जल उपचार संयन्त्रों का उपयोग किया जाये; स्वीकार्य मानक से अधिक तत्त्वों की मौजूदगी पर सरकार द्वारा उपचार व्यवस्था हेतु प्रयास हों; स्वयं पानी स्रोतों को दूषित न करें।
3.	भूमि प्रदूषण	1. कीटनाशी दवाइयों तथा रासायनिक खादों का प्रयोग।	1. इनका आवश्यकतानुसार एवं नियंत्रित उपयोग ही किया जाय।
4.	ध्वनि प्रदूषण	1. आवागमन के नवीनतम साधन, मनोरंजन के नये-नये उपकरण, बढ़ती भीड़-भाड़ में तेजी से और जोर से बोलने की आदत।	1. (अ) धीमे बोलने की आदत डालें। स्कूल और घर में T.V., रेडियो तथा अन्य मनोरंजन के साधनों को धीमी आवाज से बजावें। (ब) बहुत तीव्र ध्वनि से दूर रहने का प्रयास करें।
5.	जनसंख्या वृद्धि से प्रदूषण	1. शहरीकरण, अधिक जनसंख्या तथा उपभोग में लाने वाली वस्तुओं का अभाव। स्वच्छता की आदतों का न होना।	1. कृत्रिम अभाव के दुष्परिणाम से बचें; अपनी आदतों में स्वच्छता लावें तथा स्वयं प्रदूषण न फैलायें और न कारण बनें। कोई अन्य भी गंदगी करता हो तो उसे रोकें। परिवार कल्याण कार्यक्रम अपनावें।

(7) विविध अन्य मुख्य समस्याएँ (Different Other Important Problems) : पर्यावरण से सम्बन्धित इतनी विविध समस्याएँ हैं कि जिनको एक दृष्टि में समेकित करना भी कठिन है, क्योंकि हर बिन्दु को एक समस्या के रूप में केन्द्रित कर उस पर चर्चा कर सकते हैं। केवल बहुत महत्त्वपूर्ण समस्याओं को ही यहाँ दिया जा रहा है—

सारणी 30·3
पर्यावरणीय विविध प्रमुख समस्याएँ

क्र. सं.	समस्याएँ	कारण	दूर करने हेतु सम्भावित उपाय
1.	नगरीकरण	1. गाँवों में सुख-सुविधाओं तथा रोजगार का अभाव; शिक्षा एवं चिकित्सा जैसी मुख्य आवश्यकताओं की अनुपलब्धता।	1. गाँवों में उद्योग खोलकर रोजगार के अवसर बढ़ाये जायें। आवश्यक सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जाएँ।
2.	ग्रीन हाउस प्रभाव	1. वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड(CO_2) की अधिकता।	1. सघन वृक्ष लगाये जाएँ जिससे अधिक (CO_2) का अवशोषण हो सके।
3.	ओजोन की पर्त का विनाश	1. परफ्यूम्स, ऐरोसोल्स तथा शीतकरण उपकरण में क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स का प्रयोग।	1. क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का विकल्प खोजना आवश्यक है। ऐरोसोल्स तथा परफ्यूम्स का देश हित में नियंत्रित ही उपयोग हो।
4.	बाढ़ अथवा सूखा	1. वन क्षेत्र की अत्यधिक कमी।	1. अधिक-से-अधिक वृक्षारोपण किया जाये।
5.	ईंधन की कमी	1. जलाऊ लकड़ी का अभाव। 2. शवदाह की समस्या। 3. अन्य विविध उपयोग।	1. वैकल्पिक स्रोत खोजें। सौर ऊर्जा तथा बायो गैस को लोकप्रिय बनाया जाये। 2. विद्युत शवदाह गृह तथा सुधारा हुआ शवदाह उपकरण का उपयोग हो। 3. जहाँ लकड़ी का वैकल्पिक साधन मिले, उसे उपयोग करें।

(8) पर्यावरणीय कानूनों का उपयोग (Use of Environmental Laws) : प्रदूषण को रोकने हेतु अब अनेक कानून उपलब्ध हैं, उनका सामयिक एवं उचित उपयोग वांछनीय है।

• पारिस्थितिकी तथा मनुष्य का भविष्य
(Ecology and the Future of Man)

पर्यावरण तथा उसके विभिन्न घटकों और उससे सम्बन्धित अनेक प्रकरणों की पिछले 20 वर्षों में इतनी व्याख्या हुई है कि उसने मनुष्य को भयभीत कर दिया है और हर स्तर पर वह अपने जीने के लिए प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति तथा साथ ही समस्याओं के निदान हेतु चिन्तित हो उठा है। यहाँ मैं पुनः बहुत विस्तृत विवरण न देकर पाठकों को पुनरावृत्ति के कष्ट से बचाना चाहता हूँ, पर फिर भी उनमें से डर और आशंका को निकालने हेतु कुछ बातों का जानना बहुत आवश्यक है। आप जानें—

1. **ऑक्सीजन** की 30% मात्रा ही पृथ्वी की वनस्पति से प्राप्त होती है, शेष 70% का उत्पादन महासमुद्र और समुद्रों में उगी वनस्पति से होता है। अतः हमें ऑक्सीजन सप्लाई के भण्डार के रूप में समुद्र, वन तथा अन्य जमीनी वनस्पति को देखना होगा। **अभी हम जो ऑक्सीजन का उपयोग कर रहे हैं, उसका जाने कितना गुना ऑक्सीजन को हमने छुआ ही नहीं है। अतः अनेक सदियों तक प्राण वायु की कमी की कोई समस्या नहीं है।**

2. **जल,** चार्ल्स एच. साउथविक के अनुसार, हमें वाष्पीकरण तथा निर्जलीकरण से 37,000 घन किमी प्रतिवर्ष प्राप्त हो रहा है। इसमें से वर्तमान में केवल 20,000 घन किमी पानी का उपयोग हम कर पा रहे हैं। **निकट भविष्य में पानी की कोई कमी होगी ऐसी कोई सम्भावना नहीं है। इसके बाद भी हमारे पास न जाने कितना पीने योग्य पानी ध्रुवों पर बर्फ के रूप में तथा भूगर्भ जल के रूप में और उपलब्ध है। वर्तमान में समस्या अभावग्रस्त स्थानों पर जल उपलब्धि कराने की व्यवस्था की ही है।**
3. **भोजन सामग्री,** पूरे विश्व में जितने खाद्यान्न की उपज प्रतिवर्ष होती है वह (1 किग्रा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन) यथेष्ट है। **जनसंख्या वृद्धि के साथ अधिक अन्न उपजाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, दूध उत्पाद, फल व सब्जियों तथा माँसाहारी भोजन प्रचुर मात्रा में सदैव उपलब्ध रहेगा।**
4. **आवास भूमि** की कोई कमी नहीं है। आज समस्या तो यह है कि कहीं आबादी बहुत अधिक है और कहीं निर्जन है। **आवश्यकता पड़ने पर निर्जन स्थानों का उपयोग होगा।**
5. **ऊर्जा** के पारस्परिक स्रोतों में निरन्तर कमी आ रही है। तेल, कोयला, पेट्रोल लगभग समाप्त हो चले हैं। लकड़ी का उपयोग नियंत्रित करना पड़ेगा। अतः नये वैकल्पिक स्रोत खोजने होंगे। **बायो गैस और सौर ऊर्जा को घरेलू उपयोग तथा विभिन्न अन्य प्रकार से उत्पादित विद्युत को उद्यांगों आदि में लेना अपेक्षितं रहेगा। अणु शक्ति का उपयोग हेतु प्रयास जारी है।**
6. **प्रदूषण हेतु सभी सजग हैं, हर स्तर पर नियन्त्रण उपकरण लगेंगे, अतः यह कोई समस्या नहीं रहेगी।**

निश्चित ही कोई डरने की आवश्यकता नहीं। भविष्य हेतु आपको साधन और सुविधाएँ उपलब्ध होंगी। प्रत्येक मनुष्य से यही अपेक्षा है कि वह साधन और संसाधनों का उचित एवं बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करें। भावी पीढ़ी का सुख उनके कार्यकलापों पर निर्भर है।

• व्यापक राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की आवश्यकता (Need for a Comprehensive National Environmental Policy)

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर आयोजित स्टॉकहोम—1972 अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स के निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में सभी देशों को अपने-अपने स्तर पर 'राष्ट्रीय पर्यावरण नीति' बनानी थी। इसी क्रम में भारत में कान्फ्रेन्स के तत्काल बाद 'नेशनल कमेटी ऑन एनवायरनमेन्टल प्लानिंग एण्ड कोर्डीनेशन' (National Committee on Environmental Planning & Co-ordination—NCEPC) का गठन केन्द्रीय सरकार द्वारा किया गया। इसकी अभिशंसा पर ही केन्द्र तथा राज्यों में 'प्रदूषण निवारण और नियन्त्रण मण्डल' (Pollution Prevention and Control Boards) बने। सन् 1980 में **तिवारी कमेटी** का गठन हुआ। जिसकी अभिशंसाओं पर स्वतन्त्र रूप से केन्द्र तथा प्रदेशों में 'पर्यावरण विभागों' की स्थापना हुई तथा 'पर्यावरण की गुणवत्ता' तथा उसके संरक्षण हेतु कुछ मौलिक अभिशंसाएँ हुईं लेकिन अन्तिम रूप से 'पर्यावरण नीति' (Environmental Policy) को अभी तक भी कोई निश्चित रूप नहीं दिया जा सका।

पिछले वर्षों में राष्ट्रीय नीति निर्धारण समिति तथा पर्यावरण विशेषज्ञों ने राष्ट्रीय पर्यावरणीय नीति पर कुछ ड्राफ्ट्स तैयार किये हैं। ऐसा ही एक अधिकृत ड्राफ्ट सन् 1981 में पर्यावरण विभाग भारत सरकार के मार्फत डा. बी. पी. पाल[1] द्वारा प्रस्तुत किया गया था जिसमें उन्होंने उन बिन्दुओं को समेकित किया था जिन पर राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में महती आवश्यकता है। उनके अनुसार—

1. वायु निरापदता; जल तथा जल स्रोतों का प्रदूषण।
2. समुद्री पर्यावरण तथा समुद्री प्रदूषण।
3. खेतों की ऊपरी सतह की उपजाऊ मिट्टी का बह जाना।
4. कृषि उत्पादन के परिप्रेक्ष्य में भूमि उपयोग समस्या।
5. वनों का निरन्तर विनाश।
6. विद्युत उत्पादन, सिंचाई, औद्योगीकरण, परिवहन आदि से सम्बन्धित विकासात्मक प्रायोजनाएँ।
7. जल विद्युत की सम्भावनाएँ।

---

1. **B. P. Pal, A National Policy on Environment** (New Delhi; India : Department of Environment, Govt. of India, 1981), pp. 1-15.

8. जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण।
9. वन्य जीव संरक्षण।
10. ग्रामीण तथा शहरी आवास समस्याएँ, आर्थिक विपन्नता के कारण कतिपय समस्याएँ।
11. कानून निर्माण तथा उनकी क्रियान्विति।

बिन्दुओं को सम्मिलित करना आवश्यक है, लेकिन अभी तक भी कोई अधिकृत दस्तावेज तैयार नहीं हो सका। भारत सरकार द्वारा यदा-कदा आवश्यकतानुसार कुछ विशेष बिन्दुओं पर मार्गदर्शन दे दिया जाता है और उसी के आधार पर पर्यावरण की उस समस्या का समाधान समझ लिया जाता है। उदाहरण के तौर पर आपत्तिजनक वस्तुएँ (Hazardous Substances) की सूची पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) द्वारा प्रसारित की गई तथा उसके सन्दर्भ में निर्देश भी प्रसारित कर दिये गये।

पर्यावरण के क्षेत्र में प्रदूषण नियन्त्रण के सन्दर्भ में आज वस्तुस्थिति यह है कि पर्यावरण संरक्षण तथा पर्यावरण प्रदूषण के रोकने हेतु निम्नलिखित कानूनों का सहारा लिया जा रहा है—

1. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974] तथा उसका संशोधन अधिनियम, 1978 (Amendment Act, 1978)]।
2. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 [The Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981] तथा उसका संशोधन अधिनियम, 1987 (Amendment Act, 1987)।
3. वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 [The Wild Life (Protection) Act, 1972)।
4. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 [The Forest (Conservation) Act, 1980]।
5. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 [The Environment (Protection) Act, 1986] आदि।

तथा विद्वान न्यायाधीश भारतीय संविधान के कुछ अनुच्छेद (21, 48A तथा 51A(g) आदि) का सहारा लेकर पर्यावरण की विकृति तथा प्रदूषण को रोकने का प्रयास कर रहे हैं।

पर्यावरण विभाग भारत सरकार पर्यावरण क्षेत्र के लिए देश की शीर्षस्थ संस्था है, लेकिन विडम्बना यह है कि यह एक ऐसी प्रशासनिक इकाई के रूप में काम करती है जिसका कार्य परामर्शदात्री संस्था के रूप में ही है। न तो यह सीधे किसी दोषी व्यक्ति को दण्डित कर सकती है और न ही अपनी नीति को कानूनी रूप से लागू करा सकती है। इस संस्था की सफलता केवल 'प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल' (Pollution Control Boards) के ऊपर अवलम्बित है जो भी दोषी को दोषी तो ठहरा सकती है, लेकिन दण्ड विधान इतने लचीले हैं कि दोषी व्यक्ति को कोई सजा मिल नहीं पाती। यदि किसी प्रकरण में अधिक दिलचस्पी भी ली जाये तो इसमें इतना अधिक समय लग जाता है कि समस्या की उतनी औचित्यता ही नहीं रह पाती है जितनी कि अपेक्षित है। दोषी व्यक्ति तथा संस्थान के मालिक का इससे किसी डर के बजाय हौसला ही बुलन्द होता है।

'भारत की राष्ट्रीय पर्यावरण नीति' आखिर किसी दिन आनी ही है, अतः उस हेतु दो प्रकार के सुझाव प्रस्तुत हैं—

(1) विषय-वस्तु के सन्दर्भ (Relating Content) : समय के साथ-साथ अनेक मुद्दे पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में जुड़े हैं, जैसे—(1) ध्वनि प्रदूषण, (2) वाहन प्रदूषण, (3) कीटनाशी दवाइयों का उपयोग, (4) आपत्तिजनक वस्तुएँ, (5) ऊर्जा का दुरुपयोग, (6) घरेलू तथा औद्योगिक ठोस अपशिष्ट, (7) जल का दुरुपयोग, (8) वन्य जीवों का अवैध व्यापार, (9) क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग आदि। इनको भी पर्यावरण नीति में सम्मिलित करना चाहिए।

(2) पर्यावरण नीति के सन्दर्भ में (Relating to Environmental Policy) : इस सन्दर्भ में कुछ बिन्दु यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. यह लम्बी अवधि तक की योजनाओं के अनुरूप होनी चाहिए।
2. यह विगत सांस्कृतिक परम्पराएँ, वर्तमान स्थिति तथा भविष्य की सम्भावनाओं को समेकित करे।
3. नीति इस प्रकार की हो जो लोगों को राष्ट्रहित में जोड़े तथा वह व्यावहारिक होनी चाहिए जिससे उसकी क्रियान्विति हो सके।
4. पर्यावरण का अर्थ केवल प्रदूषण नियन्त्रण नहीं है। अतः पर्यावरण के सभी अंग (संरक्षण, सुरक्षा और सुधार) उसमें सम्मिलित हों।

5. यह इतनी लचीली होनी चाहिए जिससे आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन करने पर कोई अधिक कठिनाई न हो।
6. इसमें देश की गरिमा को बनाये रखने जैसी बात परिलक्षित होनी चाहिए, जिससे यहाँ के देशवासियों को उसे पालन करने में गौरव हो।

• सारांश
(Conclusion)

अच्छा पर्यावरण प्रबन्ध आम आदमी को पर्यावरणीय समस्याओं से छुटकारा दिला के उसे सुखी जीवन जीने की एक व्यवस्था है। उसकी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे; प्रदूषण का भय न हो; समस्याओं में जूझना न पड़े; भविष्य के प्रति कोई आशंका न हो; भावी पीढ़ी के प्रति आश्वस्त हो, तो उसे फिर किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होगी। इस हेतु चाहे—(1) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का निर्माण हो, (2) पर्यावरणीय कानूनों का सख्ती से पालन हो अथवा (3) लोगों में पर्यावरण के प्रति उचित जानकारी देकर, निष्ठा जाग्रत की जाय। विश्वास है निकट भविष्य में देश और उसके निवासियों को पर्यावरण सम्बन्धित सभी समस्याओं से छुटकारा मिलेगा और वे चैन की जिन्दगी जीयेंगे।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ क्या हैं ? वर्तमान में क्या वह सभी को उपलब्ध हैं ?
2. 'प्रदूषण' मानव के अपने कार्यकलापों का ही परिणाम है। व्याख्या कीजिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. 'पर्यावरण की गुणवत्ता' से 'जीवन की गुणवत्ता' संबंधित है। कैसे ?
4. जल की समस्या आखिर क्यों उत्पन्न हुई ? बताइये।
5. वृक्षों के कम विनाश के लिये कुछ उपाय सुझाइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

6. भारत में पृथ्वी के सतही क्षेत्रफल के कितने भाग में आज वन हैं ?
   (अ) 33% (ब) 23%
   (स) 19% (द) 11%
7. भारत की सन् 2002 की अनुमानतः आबादी कितनी है ?
   (अ) 96 करोड़ (ब) 99 करोड़
   (स) 100 करोड़ (द) 100 करोड़ से अधिक
8. सबसे अधिक वनों का उपयोग हुआ—
   (अ) फर्नीचर निर्माण में (ब) ईंधन के रूप में
   (स) खेलकूद के सामान में (द) इमारती लकड़ी के रूप में
9. अदृश्य प्रदूषण निम्न में से कौन-सा है ?
   (अ) वायु प्रदूषण (ब) जल प्रदूषण
   (स) ध्वनि प्रदूषण (द) वाहन प्रदूषण
10. ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने के लिये क्या करना अपेक्षित है ?
   (अ) वायु की शुद्धता को बनाये रखें (ब) ओजोन पर्त की सुरक्षा करें
   (स) स्मोग न बनने दें (द) अधिकाधिक वृक्ष लगावें

31

पर्यावरण शिक्षा की अवधारणा, अर्थ, स्वरूप, आवश्यकता एवं महत्त्व

[CONCEPT, MEANING, NATURE, NEED AND IMPORTANCE OF ENVIRONMENT EDUCATION]

• प्रस्तावना
(Introduction)

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता और इसका महत्त्व आज सभी देशों के लिए समान रूप से है, क्योंकि विश्व के सभी देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरणीय संकट से ग्रस्त हैं। विकासशील देश और विकसित देश अपनी भिन्न-भिन्न समस्याओं के बावजूद इस बात पर एकमत हैं कि जितनी तेजी से आज पर्यावरण की समस्याएँ उठी हैं, चाहे वह जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभावों के कारण हों अथवा औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप हों या कोई अन्य कारण हों उसको सरकार अथवा जनता अथवा दोनों ही सुधार कर पिछले रूप में नहीं ला सकतीं। प्राकृतिक संसाधनों का जिस दुर्दान्त रूप में शोषण हुआ है और उससे जो प्रकृति के संचित कोष रिक्त हो रहे हैं, उसे वापस पूरा नहीं किया जा सकता और यहाँ तक कि लोगों के अदूरदर्शितापूर्ण कार्य-व्यवहार से जो जल, वायु, भूमि या अन्य प्रदूषण हुआ है उसे निरापदता में नहीं बदला जा सकता।

हाँ यह सम्भव है कि यदि पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्य (निवासी) यह समझने लगें कि उनके कृत्यों से ही स्वर्ग नरक बन रहा है; विशाल प्राकृतिक निधियों (जल, वायु, भूमि, पेड़-पौधे-वनस्पति) के भण्डार वाली धरती रीती हो चली है; भविष्य की बात छोड़ें, वर्तमान पीढ़ी का जीवन जीना भी दूभर हो गया है, तो सम्भव है कि यह एकतरफा नष्ट हो रही स्थिति पर कुछ काबू पाया जा सके। आगे उसे और विनाश से बचाया जा सकता है तथा इस बात की भी कोई बहुत असम्भावना नहीं कि पृथ्वी के स्वरूप में कुछ सुधार लाया जा सके, लेकिन उस हेतु जैसा कि ऊपर ही संकेत दिया है, यहाँ के लोगों को समझना होगा कि पर्यावरण को सन्तुलित रखना आज की महती आवश्यकता है और उसे उन्हें ही पूरा करना है। पर्यावरण के शिक्षा के सन्दर्भ में संभवतः यही सोच का प्रारम्भ माना जा सकता है।

• पर्यावरणीय शिक्षा की अवधारणा
(Concept of Environmental Education)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'पर्यावरण की गुणवत्ता' (Quality of Environment) के बारे में चिन्तन सर्वप्रथम वैज्ञानिकों ने किया और धीरे-धीरे समाज के सभी वर्गों में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के देशों में इसने स्थान पाया और व्यापक रूप से सोचने और विचार-विमर्श का विषय बन गया। पिछले कुछ वर्षों से आम जनता ने भी इसमें भागीदारी निभाई और पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं के हल खोजने में रुचि व्यक्त की। यद्यपि यह रुचि एक आवश्यकता तो थी लेकिन पर्यावरण गुणवत्ता को प्राप्त करने के लिए काफी नहीं थी। अतः कुछ प्रबुद्ध लोगों ने पर्यावरण संकटों को दूर करने के लिए इनमें अपने आप को वास्तव में शामिल करने का सुझाव दिया।

लेकिन निकल्सन (Nicholson)[1] ने, जिन्होंने 'पर्यावरणीय भविष्य के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन–फिनलैण्ड–29 जून 1971 (International Conference on Environmental Future—Finland—29 June 1971) में अपना पत्र प्रस्तुत किया था, बताया था कि पर्यावरण की गुणवत्ता के लिए दो बातें आवश्यक हैं–

1. तथ्यों की जानकारी (Knowledge of the Facts) और
2. अभिवृत्तियों में परिवर्तन (Change in Attitudes)।

अतः बातों को सही रूप से जानने और जानकारी के आधार पर अपनी विचारधारा में परिवर्तन कर सकने की क्षमता उत्पन्न करने, जिससे समस्याओं का हल खोजा जा सके, पर्यावरण शिक्षा का आधार बनता है।

कुछ उदाहरण इस सन्दर्भ में देखें[2]–

(1) भीड़ (Crowd)

किसी एक शहर के मोहल्ले में, जिसकी आबादी का घनत्व काफी सघन है, काफी सारे लोग एक साथ एकत्रित हो गये हैं। अब–

(अ) क्या यह सामान्य लोगों का समूह है या ये किसी विशेष प्रयोजन से इकट्ठे हुये हैं ?
(ब) इनकी वास्तविक मंशा क्या है ?
(स) क्या कोई उपद्रव की संभावना है ?
(द) इसे किस प्रकार सन्तुलित किया जा सकता है ? और
(य) आप वहाँ उपस्थित रह कर क्या कर सकते हैं ?

(2) प्राकृतिक संसाधनों की कमी (Diminishing of Natural Sources)

यह पूरे विश्व में महसूस किया जा रहा है कि निरन्तर प्रतिदिन प्राकृतिक संसाधनों की कमी होती जा रही है। देशों में अनियंत्रित और अनियोजित योजनाओं के कारण यह समस्या और बढ़ती ही जाती है। तब–

(अ) किन-किन प्राकृतिक संसाधनों की बात इसमें सम्मिलित है ?
(ब) प्राकृतिक संसाधनों की आज की स्थिति क्या है ?
(स) विश्व के विभिन्न देश इनका किस प्रकार उपभोग कर रहे हैं ?
(द) समस्या का कारण कहाँ से शुरू हुआ दिखता है ?
(य) इस समस्या के निवारण का तरीका या सुझाव क्या है ?
(र) क्या आपकी इसमें कोई सक्रिय भूमिका हो सकती है ?
(ल) शासन से आप क्या अपेक्षा करते हैं ?

इन दो उदाहरणों से यह बात स्पष्ट है कि पर्यावरण की समस्या के पीछे वास्तविक तथ्य (Facts) क्या हैं ? आपका इस समस्या को सोचने का तरीका क्या है ? और उसका हल कैसे संभव है ? पर्यावरण शिक्षा से ही इन समस्याओं का सही समाधान संभव है। यही पर्यावरण शिक्षा की संकल्पना/अवधारणा (Concept) है ?

• पर्यावरणीय शिक्षा का अर्थ (Meaning of Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा की अवधारणा के आधार पर 'पर्यावरण शिक्षा' की परिभाषा को यद्यपि एक स्पष्ट दिशा मिली है और इसकी सीमाओं को भी काफी सीमित कर दिया गया है, लेकिन जैसे पर्यावरण के क्षेत्र का विस्तार विचारकों की निगाह में आ रहा है और वह जीवन और जीवन पद्धति के हर पहलू को मानव

---

1. An intervention paper circulated at the International Conference on Environmental Future, 29 June 1971. Excerpt from the 'The Environmental Future : proceedings of the First International Conference on Environmental Future, held in Finland from 27 June to 3 July 1971 (London : The Macmillan Press Ltd., 1972), pp. 660.
2. Environmental and Behaviour : Challenges and Possibilities : Report of Seminar Proceedings, Department of Psychology, Centre of Excellence in Social Sciences, Barkatullah University, Bhopal (March 23-25, 1991), pp. 24.

से करीब से जोड़ने लगे हैं उसी प्रकार 'पर्यावरण शिक्षा' को नई-नई और अलग-अलग परिभाषाएँ मिल रही हैं।

तथ्य (Facts) और अभिवृत्ति (Attitudes) के आधार पर जो परिभाषा IUCN की सेमीनार में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दी गई और जिसे व्यापक तौर पर पूरे विश्व में स्वीकार किया गया वह निम्न प्रकार है[1]—

"'पर्यावरण शिक्षा' दायित्वों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव-भौतिक परिवेश के मध्य अपने आपकी सम्बद्धता को पहचानने और समझने के लिए आवश्यक कौशल तथा अभिवृत्ति का विकास कर सके। पर्यावरण शिक्षा, पर्यावरण की गुणवत्ता से सम्बन्धित प्रकरणों के लिए व्यावहारिक संहिता निर्माण करने तथा निर्णय लेने की आदत को भी व्यवस्थित करती है। (IUCN-1970)

इसी प्रकार की परिभाषा को अत्यन्त सहजता से अग्र प्रकार प्रस्तुत किया है जिसमें समुदाय को यह उत्तरदायित्व देने का प्रयास किया गया है कि वह समस्याओं को समझ कर उनका व्यक्तिगत अथवा सामाजिक हल खोज सकें। साथ ही यह भी अपेक्षा की गई है कि भविष्य में इन समस्याओं की पुनरावृत्ति नहीं होने पावे।

"पर्यावरण शिक्षा' वस्तुतः विश्व समुदाय को पर्यावरण सम्बन्धी दी जाने वाली वह शिक्षा है जिससे वे समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सकें और साथ ही भविष्य में आ सकने वाली समस्याओं को रोक सकें।"[2]

'यूनेस्को' के लिए 'फिनिश नेशनल कमीशन'[3] ने अपनी पर्यावरण शिक्षा की सेमीनार रिपोर्ट में निम्न परिभाषा दी है—

"'पर्यावरण शिक्षा' पर्यावरण सुरक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने का साधन है। पर्यावरण शिक्षा किसी विज्ञान अथवा विषय के अध्ययन की अलग शाखा नहीं है। इसे जीवनपर्यन्त सम्पूर्ण शिक्षा के अन्तर्गत चलाया जाना चाहिए।"

—Finish National Commission for Unesco, Report of the Seminar on Environmental Education, Jamnee, Finland, 1974.

जर्मनी के रेनहाल्ड ई. लौव[4] ने पर्यावरण शिक्षा को अपने औद्योगिक क्रान्ति वाले देश के सन्दर्भ में अग्र प्रकार परिभाषित करने का प्रयास किया है—

---

1. **'Environmental Education'**, is the process of recognising values and clarifying concepts in order to develop skills and attitudes necessary to understand and appreciate the interrelatedness of man, his culture and his biophysical surroundings. **Environmental Education** also entails practice in decision making and self formulation of a code of behaviour, about issues concerning environmental quality.
   —Anon, **Final Report-International working Meeting on Environmental Education, The school curriculum** (International Union for Conservation Nature and Natural Resources, 1970); as cited by K. C. Agarwal, **Environmental Biology** (Bikaner 'India') : Agro Botanical Publishers, 1987. p. 306.
2. **'Environmental Education'** is a process aimed at developing a world population that is aware of and concerned about the total environment and its associated problems, and which has the knowledge, attitudes, motivation, commitments and skills to work individually and collectively towards the solution of current problems as well as the prevention of new ones.
   —Essential learnings in Environmental Education, Centre for Environment Education, Nehru Foundation for Development, Ahmedabad (India), 1980, p. 123.
3. **'Environmental Education'** is a way of implementing the goals of environmental protection. Environmental education is not a seperate branch of science or subject of study. It should be carried out according to the principle of lifelong integral education.
   —Finish National Commission for Unesco, Report of the Seminar on Environmental Education, Jamni, Finland, 1974; as cited in Environmental Education at the School level, National Council of Educational Research and Training (Delhi : NCERT, Sri Aurobindo Marg, New Delhi, 1981), p. 12-13.
4. In our Country **'Environmental Education'** is regarded as an education in the face of the survival crisis of the industrial society and it is aiming at a fundamental and lifelong change of the people's awareness and behaviour towards the protection of environment.
   —Environmental Education in Fedral Republic of Germany : Reinhold E. Lob, Centre of Environmental Education, University Assen, Germany; taken from the book, 'Environmental Education for Conservation and Development, edited by Deshbandu and G. Berberet, Ibid.

"हमारे देश में पर्यावरण शिक्षा औद्योगिक संस्थानों से जीवन बचाने के संकट से बचने की शिक्षा है और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए लोगों के ज्ञान और व्यवहार में जीवनपर्यन्त परिवर्तन लाने की ओर उद्देशित है।

–Reinhold E. Lob, Centre of Environment Education, University of Essen, Germany.

भारत के एक पर्यावरणविद् ने तो पर्यावरण शिक्षा को केवल निम्न प्रकार पारिभाषित कर शब्दों की जटिलता ही दूर हटा दी है–

"शिक्षा और पर्यावरण के बीच संक्रिया पर्यावरण शिक्षा को जन्म देती है"।

(The interaction between Education and Environment leads to Environment Education.)

–S. V. Chittibabu, Vice-Chauncellor, Annamali University, Annamali Nagar, India.

इसी प्रकार पर्यावरण शिक्षा को पारिभाषित करते हुये अनेक पर्यावरण विशेषज्ञों ने लक्ष्यों (Aims) को परिभाषा का आधार बनाया है–

"पर्यावरण शिक्षा का मुख्य प्रयोजन नागरिकों के अपने उत्तरदायित्वों में पर्यावरण की सुरक्षा और प्रबन्ध के बारे में जाग्रति पैदा करना है और उसे बढ़ाना है।"

(The main purpose of environmental education is to create and enhance the awareness of the citizens to their own responsibility for protecting and managing the environment.)

–H. T. Hewawasam, Secretary, Environmental Council, Central Environmental Authority, Colombo, Sri Lanka.

इसी प्रकार की अनेक परिभाषाएँ 'पर्यावरण शिक्षा' के लिए अनेक लोगों ने दी हैं, लेकिन बहुत ही संक्षिप्त में हम कह सकते हैं–

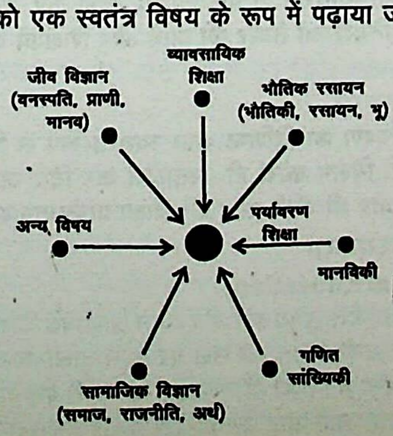
'पर्यावरण शिक्षा' पर्यावरण के बारे में जानकारी कर अपने कौशल से उसकी समस्याओं को समझने, हल निकालने और मिटाने अथवा दूर करने की शिक्षा है और वह सभी कार्य निष्पादन इस प्रकार किया जाना है कि उसकी पुनरावृत्ति न हो।

● पर्यावरण शिक्षा का स्वरूप
(Nature of Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा का स्वरूप क्या हो ? इस ओर विशेषज्ञों ने अपने अनुभव के आधार पर अपना-अपना मत व्यक्त किया है और उन मतों पर जो अपने विचार दिये हैं, उनमें आधिकारिक तथ्यपूर्ण दलीलें हैं, जो एक दृष्टि में स्वीकार करने योग्य हैं। लेकिन गुणधर्म के आधार पर उनमें से सर्वाधिक लाभकारी व्यवस्था को चुन लेने का ही हमारा यहाँ लक्ष्य है।

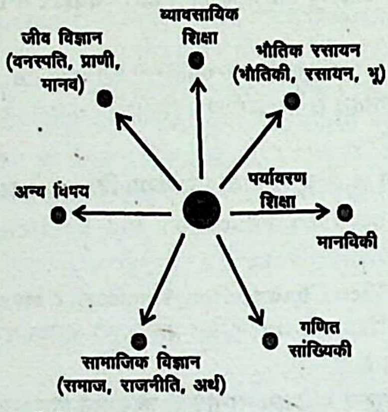
मोटेतौर पर दो प्रकार की व्यवस्थायें हैं–

(i) पर्यावरण शिक्षा को एक स्वतंत्र विषय के रूप में पढ़ाया जाये।



चित्र 31·1–पृथक विषय का प्रकार (Seperate Discipline Way)

(ii) विभिन्न विषयों को पर्यावरण शिक्षा के सामंजस्य (Input) से पढ़ाया जाये।



चित्र 31·2—पर्यावरण विवेषक का प्रकार (Environment Infusion Way)

प्रथम प्रकार के तरीके से जाहिर है कि विद्यार्थियों का एक विषय का भार और बढ़ जायेगा और उसमें भी सभी उन विषयों के विषय वस्तु की पुनरावृत्ति होगी जिसे विद्यार्थी पहले से ही अलग-अलग विषयों में पढ़ चुके हैं।

दूसरे प्रकार के तरीके से पर्यावरण शिक्षा का कितना प्रभाव अन्य विषयों के साथ- साथ विद्यार्थियों पर पड़ा ? इसकी कोई जानकारी सम्भव नहीं है। तब पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधायें, सहायक सामग्री और मूल्यांकन आदि का भी कोई महत्त्व ही नहीं है।

इसके अतिरिक्त पर्यावरण शिक्षा के स्वरूप को निश्चित करते समय हमें विद्यार्थियों के स्तर को भी सोचना होगा। क्या (अ) प्राथमिक स्तर (ब) उच्च प्राथमिक स्तर (स) सैकण्डरी स्तर और (द) विश्वविद्यालय स्तर सभी में एक ही प्रकार का स्वरूप निश्चित किया जा सकता है ? जबकि विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थी में (1) ज्ञान (Knowledge), (2) अवबोध (Understanding), (3) उपयोग (Application) और (4) कौशल (Skill) को सीखने का प्रतिशत निश्चित ही भिन्न-भिन्न होता है।

इस पर विचार-विमर्श के बाद अधिकांश शिक्षाविदों का मत है—

(1) प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण के माध्यम से ही विषयों को पढ़ाया जाये।

(2) उच्च प्राथमिक स्तर पर विषयों में विशिष्ट पाठ जोड़ दिये जायें जो पर्यावरण से सम्बन्धित हों।

(3) सैकण्डरी स्तर पर हर पाठ में पर्यावरण की प्रविष्टि इस प्रकार कर दी जाये कि विद्यार्थी सामान्य ज्ञान प्राप्त करते समय पर्यावरण के पक्ष को भी ग्रहण कर सके।

इस हेतु विषयवार शिक्षक निर्देशिका तैयार की जायें और शिक्षकों को उनका उपयोग आवश्यक कार्य कर दिया जाये।

और (4) विश्वविद्यालय स्तर पर—

(अ) हर स्तर पर पर्यावरण का विशिष्ट ज्ञान स्वतन्त्र रूप से दिया जाये।

(ब) पर्यावरण सम्बन्धी विशेष कोर्स ही प्रस्तावित कर दिये जायें जिनमें विद्यार्थी स्नातक, अधिस्नातक या और भी ऊँची स्तर की शिक्षा प्राप्त कर सकें।

● पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता (Need of Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा की परिभाषाएँ देते समय इस ओर ध्यान आकर्षित किया गया था कि पर्यावरण शिक्षा अन्ततः इस पृथ्वी पर रहने वाले प्राणी जगत् को उस पर आने वाली संभावित विपदाओं से तथा उन्हें सुखमय जीवन देने का प्रयास करना है। साथ ही उन्हें इस योग्य भी बनाना है कि वे आगे और हो सकने वाली समस्याओं को पूर्व में ही जान सकें और उनका इस प्रकार हल खोजें जिससे समस्या भी दूर हो जाय और नियमित जीवन प्रक्रिया में कोई बाधा भी नहीं पड़े। इस सन्दर्भ में पर्यावरण शिक्षा देने की

आवश्यकता के लिए बहुत लम्बी सूची तैयार हो सकती है, लेकिन संक्षिप्त में हम उसे निम्न प्रकार समेकित कर सकते हैं—

1. सौरमण्डल में केवल मात्र 'पृथ्वी' ही एक ऐसा गृह है जिस पर जीवन सम्भव है। इसे नष्ट होने से बचाना है तथा उस पर बसने वाले प्राणी मात्र को सुखप्रद जीवन उपलब्ध कराना है।
2. जनसंख्या में जिस गति से वृद्धि प्रतिवर्ष हो रही है उससे सारा प्रकृति-चक्र गड़बड़ा गया है। प्रकृति को पुनः सन्तुलित करने तथा भावी पीढ़ियों को विरासत में सुन्दर और व्यवस्थित भविष्य छोड़ने हेतु जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना है।
3. प्रकृति में संसाधनों के विशाल भण्डार भी अन्ततः सीमित ही हैं। उनका उचित और बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग हो यह लोगों को सिखाना है और प्रत्येक पृथ्वी निवासी मनुष्य के मानस में बिठाना है।
4. पेड़ और वनस्पति ही केवल कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) को प्राणवायु ऑक्सीजन (O_2) में परिवर्तित कर सकते हैं। अतः वायुमण्डल में ऑक्सीजन की आवश्यक मात्रा बनाये रखने तथा CO_2 की वृद्धि से होने वाली पर्यावरणीय विकृतियों से अवगत कराने हेतु व्यक्तियों को 'करने' अथवा 'न करने' (do's and do not's) की बातें बतानी हैं।
5. औद्योगिक क्रान्ति तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप सुख-सुविधाओं के उपकरणों ने चहुँ ओर विविध प्रकार का प्रदूषण फैलाया है। उसे नियंत्रित करने तथा बचाव के उपाय सुझाने हेतु कार्यक्रम चलाना है।

   (ये बिन्दु केवल दिशा निर्देशक हैं। पाठक अपने ज्ञान और विवेक से और बिन्दु जोड़ सकते हैं।)

यह सभी 'पर्यावरण शिक्षा' से ही सम्भव है, अतः पर्यावरण शिक्षा इस समय का एक महती 'आवश्यकता' है।

● पर्यावरणीय शिक्षा का महत्त्व
(Importance of Environmental Education)

पर्यावरण के बारे में सोच जब से प्रारम्भ हुआ और उस सोच के आधार पर पर्यावरण के संरक्षण, सुरक्षा और सुधार की बात जब बुद्धिजीवियों ने बताईं/रखीं तभी से इस हेतु कोई नैदानिक तथा उपचारात्मक तरीके अपनाने पर बल दिया गया। यह बात 'मानव पर्यावरण' पर स्टॉकहोम (1972) में आयोजित हुये अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भी रखी गई और वहाँ ही इस बात का प्रस्ताव पारित किया गया कि पर्यावरणीय समस्याओं को सुलझाने और उन्हें दूर करने के लिए 'पर्यावरण शिक्षा' कार्यक्रम की संभावना को मूर्त रूप दिया जाय।

निश्चय ही जिन आधार पर या आधार बिन्दुओं पर (बेलग्रेड चार्टर—1975) तिवलिसी अन्तर्देशीय सम्मेलन (1977) ने पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम को प्रस्तुति दी और पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम की उपादेयता स्पष्ट की, वह सभी पर्यावरण शिक्षा के महत्त्व के अन्तर्गत आते हैं। उनका विवरण और समेकित हो सकने वाले बिन्दु काफी विस्तृत हो सकते हैं, अतः मोटे रूप में हम निम्न प्रकार पर्यावरण शिक्षा के महत्त्व रख सकते हैं—

(1) लोगों को पर्यावरण की सत्य और तथ्यात्मक जानकारी देना।
(2) जानकारी के आधार पर संभावित कारणों का पता लगाना।
(3) उन समस्याओं की जानकारी देना जो निकट भविष्य में घट सकती हों और जनजीवन की विपदाओं का कारण बन सकती हों।
(4) समस्याओं के हल खोजना, बताना/जानना।
(5) समस्याओं को समझने और उनसे निपटने अथवा हल खोजने हेतु मनुष्य को तैयार करना।
(6) पर्यावरण संरक्षण, सुरक्षा और सुधार के कार्यों में लग जाने हेतु प्रेरित करना।
(7) भावी पीढ़ी के भविष्य को समझ कर ही कार्यों को करने की समझ देना।
(8) स्वयं सुखी जीयें और दूसरे प्राणी भी सुख से जीयें, वाली भावना को आत्मसात करने को तैयार करना।

इनमें वह सभी बातें समाहित हो गई हैं जिनका वास्तविक ध्यान करना पर्यावरण शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। हम प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग करें और बुद्धिमतापूर्ण करें; ऊर्जा की बचत करें; वनों की सुरक्षा करें और उन्हें नष्ट होने से बचायें; प्रदूषण को रोकें; स्वच्छ पानी, स्वच्छ भोजन, हवादार आवास और स्वच्छ वातावरण उपलब्ध करें आदि।

उपर्युक्त सभी बिन्दुओं से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच रहे हैं कि पर्यावरण शिक्षा आज की आवश्यकता है। हमें इसकी उपादेयता को स्वीकार करना चाहिए और इसके कार्यक्रमों की सफलता में अपना सक्रिय योगदान देना चाहिए। पर्यावरण शिक्षा अन्ततः हमें 'पर्यावरण की गुणवत्ता' और 'जीवन की गुणवत्ता' देने वाली है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'पर्यावरण शिक्षा' की अवधारणा क्या है ? कोई उदाहरण देकर स्पष्ट करिये।
2. 'पर्यावरण शिक्षा' क्या है ? कोई परिभाषा दीजिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

3. 'पर्यावरण शिक्षा' प्राथमिक स्तर पर किस प्रकार दी जा सकती है ?
4. 'पर्यावरण शिक्षा' की आवश्यकता बताइये।
5. 'पर्यावरण शिक्षा' का क्या महत्त्व है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

6. पर्यावरण के सन्दर्भ में विश्व स्तर पर सोच कहाँ से प्रारम्भ हुआ था ?
   (अ) फिनलैण्ड (ब) डेनमार्क
   (स) हंगरी (द) भारत
7. 'पर्यावरण शिक्षा' निम्न कारण से महत्त्वपूर्ण है ?
   (अ) इसकी स्टॉकहोम सम्मेलन में अभिशंसा
   (ब) यह समस्याओं का हल खोजती है।
   (स) इससे मनुष्यों में परस्पर सहयोग पनपता है।
   (द) यह वाक्‌पटुता में वृद्धि करती है।
8. 'पर्यावरण शिक्षा' की प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस कहाँ आयोजित हुई थी ?
   (अ) बेलग्रेड (यूगोस्लाविया) (ब) बूडापेस्ट (हंगरी)
   (स) तिवलिसी (रूस) (द) पेरिस (फ्रांस)

निम्न प्रश्नों के उत्तर हाँ/नहीं में दीजिये–

9. फिल्म प्रदर्शन से 'पर्यावरण शिक्षा' दी जा सकती है। (हाँ/नहीं)
10. क्या जनसाधारण को भी 'पर्यावरण शिक्षा' दी जानी चाहिये ? (हाँ/नहीं)

32

पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य
[AIMS & OBJECTIVES OF ENVIRONMENTAL EDUCATION]

● प्रस्तावना (Introduction)

'मानव पर्यावरण' अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन स्टॉकहोम (1972) में जिस प्रकार पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व को प्रस्तुत किया गया और जिस रूप में संकल्पना को परिभाषित किया गया उस प्रकार से पूरे विश्व में पर्यावरण शिक्षा का कोई कार्यक्रम एक साथ चलाया जाना आसान न था। स्पष्ट है कि इस कार्यक्रम को, कोई लक्ष्य, उद्देश्य, कार्य की रूपरेखा, पाठ्यक्रम अथवा विषय-वस्तु और अनेक अन्य घटकों को व्यापक रूप से तैयार कर उसे पूरे विश्व के लोगों द्वारा स्वीकार करने पर ही चलाया जा सकता था जिसमें समय भी चाहिए था और योजनाबद्ध कार्य प्रारम्भ करने की ऐसी रूपरेखा भी जिससे सहजता से लक्ष्य तक पहुँचा जा सके। संयुक्त राष्ट्र द्वारा संस्थापित UNEP[1] (United Nations Environment Programme) संस्था को ही इस कार्य का इस प्रकार निष्पादन करना था, जिससे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसे ठीक प्रकार से चलाया जा सके।

● IEEP संस्था का निर्माण (Formation of IEEP Institution)

इस कार्य हेतु UNEP ने UNESCO[2] के सहयोग से एक नई कार्य संस्था IEEP[3] (International Environmental Education Programme) का निर्माण किया और इस संस्था ने जिस प्रकार एक वैज्ञानिक योजना बनाकर कार्यक्रम को गति दी, उसकी संक्षिप्त जानकारी यहाँ प्रस्तुत है—

1. कार्यक्रम हेतु विश्व के देशों का वर्गीकरण (Classification of the Countries of the World for the Programme)

कार्यक्रम को सहज गति देने और उसमें विश्व स्तर पर समानता लाने हेतु पूरे विश्व के देशों को निम्न 5 वर्ग समूहों में वर्गीकृत कर दिया है—

1. अफ्रीका क्षेत्र (Africa Region)
2. अरब राज्य क्षेत्र (Arab States Region)
3. एशिया और पैस्फिक क्षेत्र (Asia and Pacific Region)
4. यूरोप और उत्तरी अमेरिका क्षेत्र (Europe and North America Region)
5. लेटिन अमेरिका और कैरीबियन क्षेत्र (Latin America and the Caribbean Region)

---

1. UNEP : United Nations Environmental Programmes; संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम।
2. यूनेस्को (UNESCO) : United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation; संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक विज्ञान और सांस्कृतिक परिषद।
3. The International Environmental Education Programme : Published by UNESCO 7, Place de Fontenoy, 75700 Paris, France, 1985.

2. अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर की बैठकों का आयोजन[1] (Organisation of the Meetings at International and Regional level)

इस क्षेत्र में सन् 1975 से 1988 तक 6 अन्तर्राष्ट्रीय, 1 अन्तर्देशीय और 7 क्षेत्रीय कार्यगोष्ठियों, सेमीनारें, सिम्पोजियम और सम्मेलनों का आयोजन हुआ। इनमें से दो कार्यगोष्ठियाँ अत्यन्त चर्चित रहीं तथा पर्यावरण शिक्षा को दिशा देने में उनकी बहुत भागीदारी रही—

1. पर्यावरण शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय कार्यगोष्ठी, बेलग्रेड, यूगोस्लाविया, 13-22 अक्टूबर 1975 [International Workshop on Environmental Education, Belgrade, Yugoslavia, 13-22 October, 1975]
2. पर्यावरण शिक्षा पर अन्तर्देशीय सम्मेलन, तिबलिसी, रूस, 14-26 अक्टूबर 1977 [Intergovernmental Conference on Environmental Education, Tbilisi, USSR, 14-26 October, 1977]

3. अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय बैठकों में सहयोग[2] (Support in International and Regional Meetings)

कुल 8 बैठकों में से निम्न दो सम्मेलन विश्व स्तर के आयोजित हुये और उनकी अभिशंसाओं को पर्यावरण शिक्षा में महत्त्वपूर्ण स्थान मिला—

1. पर्यावरण शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, नई दिल्ली, भारत, दिसम्बर 1981 [International Conference on Environmental Education, New Delhi, India, December 1981]
2. विकासशील देशों में पर्यावरण शिक्षा पर विश्व सम्मेलन, काहिरा, मिश्र, अप्रैल 1983 [World Conference on Environmental Education in Developing Countries, Cairo, Egypt, April 1983]

4. अध्ययन, सर्वेक्षण और शोध कार्य[3] (Studies, Surveys and Research Activities)

पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम, शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षण विधियाँ और मूल्यांकन हेतु अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर अनेक अध्ययन, सर्वेक्षण और शोध कार्य किये गये। सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य 59 मार्गदर्शी प्रायोजनायें (Pilot Projects) सम्पन्न हुईं, जिनका विवरण निम्न है—

(1) अफ्रीका क्षेत्र : 11 प्रोजेक्ट्स—

1. घना (1977-80), 2. केन्या (1978-81), 3. सेनेगल (1977-82), 4. बुरकीना- फासो (1980-82), 5. केन्या (1980), 6. माली (1985-87), 7. गेबोन (1987-89), 8. केन्या (1988-89), 9. गिनी (1988-89), 10. कांगो (1989) और 11. केन्या (1989)।

(2) अरब राज्य क्षेत्र : 3 प्रोजेक्ट्स—

1. जोर्डन (1978-80), 2. मिश्र (1978-81) और 3. मोरक्को (1986-90)।

(3) एशिया और पैस्फिक क्षेत्र : 9 प्रोजेक्टस—

1. मंगोलिया (1978-79), 2. अफगानिस्तान (1977-80), 3. इंडोनेशिया (1977-80), 4. भारत (1979-80), 5. भारत (1981-83), 6. भारत (1986), 7. भारत (1985-87), 8. चीन (1987-88) और 9. चीन (1987-89)।

(4) यूरोप और उत्तरी अमेरिका क्षेत्र : 26 प्रोजेक्ट्स—

1. फ्रांस (1977-78), 2. उक्रेनियन (1976-79), 3. संयुक्त राज्य अमेरिका (1977-78), 4. इंग्लैण्ड (1977-78), 5. चैकोस्लोवाकिया (1977-83), 6. पोलैण्ड (1984), 7. फ्रांस (1985), 8. पुर्तगाल (1986),

---

1. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO–UNEP International Environmental Education Programme : 1975-1990**, Environmental Education Section, Division of Education for Quality of Life, Unesco, 7 place, de Fontenoy, 75700 Paris, France, Sept. 1990, pp. 99.
2. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO-UNEP International Environment Education Programme : 1975-1990**, Environmental Education Section, Division of Education for Quality of Life, Unesco, 7 place, de Fontenoy, 75700 paris, France, Sept. 1990, pp. 90.
3. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO-UNEP-IEEP, 1975-1990**, Ibid.

9. स्पेन (1985-86), 10. चेकोस्लोवाकिया (1986-89), 11. स्पेन (1986), 12. कनाडा (1988-89), 13. बाइलोरसियन (1988-89), 14. कनाडा (1987-89), 15. ऑस्ट्रिया (1987), 16. उक्रेनियन (1987-89), 17. फ्रांस (1987-88), 18. बाइलोरसियन (1988-90). 19. कनाडा (1986-88), 20. आयरलैण्ड (1986-88), 21. उक्रेनियन (1988-90), 22. उक्रेनियन (1988-90), 23. उक्रेनियन (1988-90), 24. फ्रांस (1989-90), 25. जर्मनी (1989) और 26. आयरलैण्ड (1989).

(5) लेटिन अमेरिका और केरेबियन : 10 प्रोजेक्ट्स—

1. कोलम्बिया (1977-79), 2. ग्वाटेमाला (1977-80), 3. पेरू (1977-79), 4. पेरू (1979-81), 5. कोस्टारीका (1979-81), 6. डोमीनीकन (1979-82), 7. क्यूबा (1981-83), 8. मेक्सिको (1986-88), 9. अर्जेन्टाइना (1987-89) और 10. बारबाडोस (1989)|

इन सभी प्रायोजनाओं का कार्यक्षेत्र इतना विविधतापूर्ण है कि इनका विवरण प्रस्तुत करना सहज नहीं है, लेकिन इस सूची से यह अनुमान तो लगाया ही जा सकता है कि विश्व के पूरे संभागों से विशेषज्ञों के अध्ययन के आधार पर वस्तुनिष्ठ निर्णय निकाले जा सके होंगे जिससे पर्यावरण शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य को सही दिशा मिले।

6. पर्यावरण क्षेत्र में साहित्य प्रकाशन[1] (Publishing of Literature in the Field of Environment)

IEEP द्वारा जितने भी कार्य सम्पन्न किये गये, लगभग इन सभी के दस्तावेज, रिपोर्टें और ब्रोशर्स निकाले गये जिससे लोगों को उनके अध्ययन से आगे सोचने का अवसर मिल सके। यह हैं—

(i) अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाएँ (International Journals)—

1. पर्यावरण शिक्षा शृंखला (Environmental Education Series)	:	30 ब्रोशर्स
2. आधारभूत दस्तावेज (Basic Documents)	:	10 दस्तावेज
3. विभिन्न बैठकों के प्रतिवेदन (Report of Different Meetings)	:	40 प्रतिवेदन

और निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं। इनका प्रकाशन भी अनेक भाषाओं में हुआ है जिससे जो प्रतिवेदन/ब्रोशर/दस्तावेज जिस क्षेत्र से सीधा सम्बन्धित हो वहाँ के व्यक्ति उसे सहजता से पढ़ें और समझें।

(ii) भारत की पत्रिकाएँ (Journals in India)—

1. Down to Earth : Fortnightly
2. Green Files : Monthly
3. Annual Reports of Ministry of Forests and Environment, Govt. of India : Yearly

(iii) नियमित अन्य पत्रिकाएँ (Regular other Journals)—

1. Connect
2. Source Bulletin आदि।

7. शिक्षण प्रशिक्षण हेतु विशेष कार्यक्रम[2] (Special Programmes for Teachers' Trainings)

IEEP ने इस क्षेत्र को विशेष रूप से छुआ है। अन्तर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, राष्ट्र स्तरीय तथा उप क्षेत्रीय शिक्षक प्रशिक्षण, संगोष्ठियाँ, कार्यगोष्ठियाँ सभी स्तर के शिक्षकों के लिए आयोजित की गईं। सन् 1975 से 1990 तक की संख्या निम्न है—

1. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर	:	1	2. क्षेत्रीय स्तर	:	6
3. अन्तर्क्षेत्रीय स्तर	:	3	4. राष्ट्रीय स्तर	:	10 और
5. उपक्षेत्रीय स्तर	:	54			

विस्तृत विवरण हेतु मूल पुस्तक का अध्ययन करें; क्षेत्रीय स्तर के प्रशिक्षण निरन्तर चल रहे हैं।

8. IEEP द्वारा भारत में आयोजित पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम[3] (Environmental Education Programmes in India Organised by IEEP)

भारत में विभिन्न स्तरीय कान्फ्रेन्सेज, कार्यगोष्ठियाँ जो पर्यावरण शिक्षा के क्षेत्र में IEEP के सहयोग

---

1. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO-UNEP-IEEP, Ibid.**
2. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO-UNEP-IEEP, Ibid.**
3. **Environmental Education : Selected Activities of UNESCO-UNEP-IEEP, Ibid.**

अथवा उनके सौजन्य से आयोजित हुईं, उनकी सूची जानकारी हेतु यहाँ दी जा रही है। इनका विस्तृत विवरण जानने वाले पाठक मूल आलेखों को देखें।

सारणी 32·1
भारत में IEEP द्वारा आयोजित कान्फ्रेन्स/कार्यगोष्ठियाँ

कार्यक्रम प्रकार	विषय	स्थान	तिथियाँ
1. पर्यावरण शिक्षा में **शिक्षक प्रशिक्षण** हेतु **उपक्षेत्रीय कार्यगोष्ठी** : IEEP तथा NCERT (New Delhi) के संयुक्त सहयोग से आयोजित[1]	शिक्षक प्रशिक्षण	नई-दिल्ली	3-16 मार्च, 1983
2. पर्यावरण शिक्षा की **परामर्शी बैठक** : IEEP तथा NIEPA (National Institute of Educational Planning and Administration) के संयुक्त सहयोग से आयोजित[2]	पाठ्यक्रम निर्माण, शिक्षक-प्रशिक्षक तथा शिक्षा निर्धारकों के लिए प्रशिक्षण	नई-दिल्ली	11-15 फरवरी, 1985
3. एशिया क्षेत्र के लिए **उपक्षेत्रीय सेमीनार** : IEEP तथा NCERT के संयुक्त सहयोग से आयोजित।[3]	औद्योगिक शिक्षा में पर्यावरण शिक्षा को अन्तर्निहित करने हेतु प्रशिक्षण	नई-दिल्ली	20-27 अप्रैल, 1987
4. पर्यावरण शिक्षा के लिए **अन्तर्क्षेत्रीय प्रशिक्षण कार्यक्रम** : IEEPA तथा NIEPA के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित[4]	शिक्षा योजना निर्माताओं तथा प्रशासकों हेतु प्रशिक्षण	नई-दिल्ली	फरवरी 1989

'पर्यावरण शिक्षा' पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दो सम्मेलन भारत में सम्पन्न हुये जिन्हें IEEP का सक्रिय वित्तीय एवं मार्गदर्शन का सहयोग मिला।

---

1. **Subregional workshop on Teacher Training in Environmental Education.** इस कार्यगोष्ठी के आधार पर यूनेस्को ने दो दस्तावेज (documents)-1. Strategies for Developing an Environmental Education Curriculum और 2. Strategies for Training of Teachers in Environmental Education तैयार किये, जिन्हें आगे की कार्यगोष्ठियों में मार्गदर्शन-पुस्तिका के रूप में काम में लिया गया। इसमें अफगानिस्तान् बांग्लादेश, श्रीलंका तथा भारत के संभागियों ने भाग लिया। **इस कार्यगोष्ठी की विशेषता यह थी कि अधिकांश सन्दर्भ्य व्यक्ति NCERT (New Delhi) से ही थे।**
2. **Consultative Meeting on the Training of Curriculum Developers, Teacher Educators and Educational Planners in Environmental Education.** इस बैठक में—1. मलेशिया, 2. पाकिस्तान, 3. अफगानिस्तान, 4. श्रीलंका, 5. भूटान, 6. बांग्लादेश, 7. नेपाल और 8. भारत के पर्यावरण शिक्षा विशेषज्ञों ने भाग लिया। **दिल्ली के विभिन्न संस्थानों से पर्यावरण शिक्षा में रुचि लेने वाले व्यक्तियों को स्थानीय रूप से OBSERVERS के रूप में आमंत्रित किया गया।**
3. **Subregional Training Seminar on the Incorporation of Environmental Education into Industrial Education for Asia.** इस सेमीनार में भाग लेने वाले संभागी—1. अफगानिस्तान, 2. बांग्लादेश, 3. भूटान, 4. इरान, 5. नेपाल, 6. पाकिस्तान, 7. श्रीलंका, 8. थाइलैण्ड तथा 9. भारत देश के थे।
4. **Interregional Training Course in Environmental Education for Educational Planners and Administrators.** यह प्रशिक्षण कार्यक्रम एक सप्ताह की अवधि का था और NIEPA द्वारा चलाये जाने वाले International Diploma Course in Educational Planning and Administration के सन्दर्भ में आयोजित किया गया। 15 देशों के 'पर्यावरण शिक्षा' के प्रतिवेदनों को प्रस्तुत कर उस पर चर्चा आयोजित हुई। इसी के आधार पर अन्तिम प्रतिवेदन तैयार किया गया।

1. प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन (International Conference on Environmental Education, New Delhi, India, December 1981)

सन् 1981 में देहली में आयोजित हुआ था (पूरा विवरण प्राप्त नहीं)।

2. द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन (International Conference on Environmental Education, New Delhi, 4-9 March, 1985)

इसका उल्लेख देशबन्धु[1] ने किया है। यह कान्फ्रेन्स इंडियन एनवायरनमेन्टल सोसायटी (भारत), भारत सरकार के पर्यावरण विभाग तथा अन्य कई राजकीय/अराजकीय संस्थाओं के संयुक्त सहयोग और सौजन्य से आयोजित हुई। 35 देशों में प्रतिनिधियों ने भाग लिया और अब तक 'पर्यावरण तथा पर्यावरण शिक्षा' के क्षेत्र में आयोजित हुई अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की कान्फ्रेन्सों के आधार पर कुछ मूल बिन्दुओं को समेकित कर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। **इस प्रतिवेदन को 'पर्यावरण शिक्षा पर दिल्ली घोषणा-पत्र'** (Delhi Declaration on Environmental Education) **नाम दिया गया।**

● पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims & Objectives of Environmental Education)

'पर्यावरण शिक्षा' के लक्ष्य और उद्देश्यों के निर्धारण का प्रारम्भ वस्तुतः IEEP द्वारा आयोजित उस प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यगोष्ठी (International Workshop on Environmental Education) से हुआ जिसका आयोजन 13 से 22 अक्टूबर 1975 के मध्य बेलग्रेड (यूगोस्लाविया) में हुई थी। इस कार्यगोष्ठी[2] की मुख्य उपलब्धि **'बेलग्रेड घोषणा-पत्र'** (Belgrade Charter) था जिसमें भारी बहुमत से संभागियों ने पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया और पर्यावरणीय शिक्षा के कार्यक्रम की दिशा और मार्गदर्शन बिन्दुओं को अन्तिम रूप दिया गया। पर्यावरण शिक्षा के इतिहास में यह पहली इस प्रकार की प्रारम्भिक कार्यगोष्ठी थी जिसमें विश्व के 60 राष्ट्रों के 96 प्रतिनिधियों ने अपना मत पहले से तैयार किये गये शोध पत्रों और दस्तावेजों के आधार पर प्रस्तुत किया था। इसी कार्यगोष्ठी में—(1) पर्यावरण के लिए लक्ष्य (Environmental Goals), (2) पर्यावरणीय शिक्षा के लिए लक्ष्य (Environmental Education Goals) तथा (3) पर्यावरणीय शिक्षा के उद्देश्य (Environmental Education Objectives) निर्धारित किये गये। विश्व के पाँचों क्षेत्र अफ्रीका, अरब राज्य, एशिया, यूरोप तथा उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका के प्रतिनिधियों ने सभी स्तर के विद्यार्थी व युवकों के लिए पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम पर विचार-विमर्श किया।

इस अन्तर्राष्ट्रीय कार्यगोष्ठी के आधार पर पाँच क्षेत्रीय बैठकें[3] निम्न प्रकार आयोजित हुईं। यह सभी बैठकें पर्यावरण शिक्षा के विशेषज्ञों के लिए थीं और इनका लक्ष्य निकट भविष्य में एक अन्य होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए अपनी-अपनी अभिशंसाएँ देना था।

सारणी 32·2
पर्यावरण शिक्षा पर विशेषज्ञों की क्षेत्रीय बैठकें

क्षेत्र	बैठक का स्थान	तिथियाँ
1. अफ्रीका	ब्रेजेविल्ली (कांगो गणराज्य)	11 से 16 सितम्बर, 1976
2. लेटिन अमेरिका और केरीबियन	बोगोटा (कोलम्बिया)	24 से 30 नवम्बर, 1976
3. एशिया	बैंगकाक (थाईलैण्ड)	15 से 20 नवम्बर, 1976
4. अरब प्रदेश	कुवैत (सउदी अरब)	21 से 25 नवम्बर, 1976
5. यूरोप	हेलेसिन्की (फिनलैण्ड)	27 से 31 जनवरी, 1977

1. Desh Bandhu & G. Berberet, ed. Environmental Education for Conservation and Development, Ibid. p. xii.
2. A. B. Saxena, Environmental Education (Agra, India: National Psychological Corporation. 1986); p. 7-10; विस्तृत विवरण उपलब्ध है।
3. Environmental Education: Selected Activities of UNESCO–UNEP International Environmental Education Programme: 1975-1990, Environmental Education Section, Division of Education for Quality of Life; Unesco, 7 place. de Fontenoy, 75700 Paris, France, Sept. 1990, pp. 99.

इस बेलग्रेड वर्कशाप में कम से कम पन्द्रह (15) दस्तावेजों को अन्तिम रूप दिया गया, जो बाद में तिविलिसी (14-26 अक्टूबर 1977) अन्तर्राज्यीय कान्फ्रेन्स का आधार बने। यहाँ ही यह निर्णय लिया गया कि विश्व के सभी लोगों के लिए समान तथा व्यापक रूप से पर्यावरण शिक्षा के ऐसे वस्तुनिष्ठ उद्देश्य स्वीकार किये जाने चाहिये जो अत्यन्त व्यावहारिक हों और समूची पर्यावरणीय समस्याओं को आत्मसात कर सकते हों।

इन सभी प्रक्रियाओं के फ... तथा 1. बेलग्रेड वर्कशाप, 2. पर्यावरण शिक्षा पर विशेषज्ञों की क्षेत्रीय बैठकें और तिबलिसी सम्मेलन की अभिशसाओं के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य (Aims), उद्देश्य (Objectives) निर्धारित किये गये जो यहाँ प्रस्तुत हैं—

1. पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य[1] (Aims of Environmental Education)

1. शहरी और ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और पारिस्थितिकी की परस्पर अवलम्बिता के बारे में स्पष्ट जानकारी का विकास करना और इसमें रुचि बनाये रखना।
2. प्रत्येक व्यक्ति को पर्यावरण संरक्षा और सुधार के लिए वांछनीय ज्ञान, मूल्य, मनोवृत्ति, वचनबद्धता और कौशल प्राप्त करने के अवसर प्रदान करना।
3. पर्यावरण के प्रति व्यक्तिशः समूह और समाज सभी में नये व्यावहारिक दृष्टिकोण का निर्माण करना।

2. पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य[2] (Objectives of Environmental Education)

'पर्यावरण शिक्षा' सभी व्यक्ति तथा समाज समुदाय को—

1. **जागरूकता** (Awareness) : सम्पूर्ण पर्यावरण और उससे सम्बन्धित समस्याओं के प्रति जागरूकता और संवेदनशीलता देने में सहायक हो।
2. **ज्ञान** (Knowledge) : सम्पूर्ण पर्यावरण और उससे सम्बन्धित समस्याओं की आधारभूत समझ प्राप्त करने तथा उसमें मनुष्य की जिम्मेदारी की भूमिका निभाने में सहायक हो।
3. **अभिवृत्ति** (Attitude) : पर्यावरण के लिए गहरी चिन्ता करने, सामाजिक दायित्व निभाने तथा उसकी सुरक्षा और सुधार लाने के लिए किये जा रहे कार्यों में प्रेरित करने में सहायक हो।
4. **कौशल** (Skills) : पर्यावरण समस्याओं क़े हल खोजने के कौशल प्राप्त करने में सहायक हो।

---

1. **Recommended in Intergovernmental Conference on Environmental Education, Tbilisi, USSR. October 1977 : Taken from IEEP Brochure, Ibid.**
   Accordingly the goals of environmental education are:
   1. to foster clear awareness of and concern about, economic, social, political and ecological interdependence in urban and rural areas;
   2. to provide every person with opportunities to acquire the knowledge, values, attitudes, commitment and skills needed to protect and improve the environment;
   3. to create new patterns of behaviour of individuals, groups and society as a whole towards the environment.
2. **Agreed objectives of Environmental Education at the Balgrade workshop (1975) :**
   1. **Awareness : To help individuals and social groups acquire an awareness of, and sensitivity to, the total environmental and its allied problems.**
   2. **Knowledge : To help individuals and social groups acquire basic understanding of the total environment, its associated problems and humanity's critically responsible presence and role in it.**
   3. **Attitude : To help individuals and social groups acquire social values, strong feelings of concern for the environment and the motivation for activity participating in its protection and improvement.**
   4. **Skills : To help individuals and social groups acquire the skills for solving environmental problems.**
   5. **Evaluation Ability : To help individuals and social groups evaluate environmental measures and education programmes in terms of ecological, political, economic, social, aesthetic and educational factors.**
   6. **Participation : To help individuals and social group develop a sense of responsibility and urgency regarding environmental problems so as to ensure appropriate action to solve those problems.**

5. **मूल्यांकन कुशलता (Evaluation Ability) :** पर्यावरणीय उपाय तथा शैक्षिक कार्यक्रमों को पारिस्थितिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सौन्दर्यपरक और शैक्षिक घटकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करने में सहायक हो। और
6. **संभागिता (Participation,** पर्यावरणीय समस्याओं तथा समस्याओं के उचित ढंग से हल निकालने की आश्वस्तता के प्रति महत्ता और जिम्मेदारी की भावना विकसित करने में सहायक हो।

इन्हीं उद्देश्यों के आधार पर विश्व के अलग-अलग देशों में स्थानीय परिवेश में पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य प्रसारित हुए हैं। मूल में सभी उद्देश्यों में बेलग्रेड चार्टर के शब्दों में—

"पर्यावरण को सम्पूर्ण रूप से देखो—चाहे वह प्राकृतिक हो अथवा मानवकृत और चाहे वह पारिस्थितिक, राजनीतिक, आर्थिक, औद्योगिकीय, सामाजिक, वैधानिक, सांस्कृतिक और सौन्दर्यपरक हो।"

(Consider the environment in its totality–natural or manmade, ecological, political, economic, technological, social, legislative, cultural and aesthetic.)

—From Trends in Environmental Education.

3. पर्यावरण शिक्षा के निर्देशक सिद्धान्त[1] (Guiding Principles of Environmental Education)

निर्देशक सिद्धान्तों के लिए पर्यावरण शिक्षा—

1. में 'पर्यावरण को उसकी सम्पूर्णता में देखा जाना चाहिए चाहे वह प्राकृतिक हो अथवा कृत्रिम, चाहे वह प्रायोगिक हो या सामाजिक;
2. एक अनवरत जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया होनी चाहिए जो विद्यालय स्तर से पूर्व से प्रारम्भ होकर सभी औपचारिक और अनौपचारिक अवस्थाओं से चलती रहे;
3. का प्रकार अन्तर्विषयक होना चाहिए जिससे प्रत्येक विषय में से कुछ विशिष्ट सामग्री लेकर एक सम्पूर्ण और सन्तुलित परिदृश्य प्रस्तुत किया जा सके;
4. को सभी प्रमुख पर्यावरणीय बिन्दुओं का स्थानीय, राष्ट्र स्तरीय, क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से परीक्षण करना चाहिए जिससे विद्यार्थी अन्य भौगोलिक क्षेत्र की पर्यावरण स्थितियों के बारे में भी अपनी सूक्ष्मदृष्टि का उपयोग कर सकें;
5. को पुरानी स्थिति के अवलोकन करते समय वर्तमान और संभावित पर्यावरणीय स्थिति पर ध्यान देना चाहिए;
6. को पर्यावरण समस्याओं के निवारण अथवा हल खोजते समय स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की भावना और आवश्यकता को प्रोत्साहन देना चाहिए;
7. को किसी विकास और वृद्धि की योजना बनाते समय पर्यावरणीय पहलुओं पर विचार करना चाहिए;
8. को किसी नवीन व्यक्ति को अपने अनुभव के आधार पर योजना बनाने की भूमिका के निर्वहन के योग्य बनाना चाहिए और निर्णय करने तथा उसके परिणामों को स्वीकार करने के अवसर प्रदान करने चाहिए;
9. को पर्यावरणीय संवेदनशीलता, ज्ञान, समस्या हल करने के कौशल और मूल्य स्पष्टीकरण को हर आयु स्तर से जोड़ना चाहिए लेकिन छोटे आयु वर्ग के लोगों को प्रारम्भ में केवल पर्यावरणीय संवेदनशीलता पर ही अधिक बल देना चाहिए;
10. को विद्यार्थी को पर्यावरणीय समस्याओं के लक्षण खोजने और वास्तविक कारणों को जानने में सहायता करनी चाहिए;
11. को पर्यावरणीय समस्याओं की जटिलताओं पर बल देना चाहिए और इस प्रकार समस्या निवारण योग्यता और विवेचनात्मक सोच के विकास की आवश्यकता का अहसास करना चाहिए;
12. को व्यावहारिक क्रियाकलाप और प्रथम अनुभव के आधार पर पर्यावरण को सीखने/सिखाने के लिए वृहद पर्यावरणीय ज्ञान और उसके शैक्षिक हलों को उपयोग में लाना चाहिए।

---

1. Taken from IEEP Brochure, Ibid; Suggested in Intergovernmental Conference on Environmental Education Tbilisi, USSR, October, 1977.

- **पर्यावरणीय शिक्षा पर अन्तर्राज्यीय कान्फ्रेन्स (तिबलिसी) कान्फ्रेन्स : 14-26 अक्टूबर, 1977)**
[Intergovernmental Conference on Environmental Education (Tblisi Conference : 14-26 October, 1977]

'पर्यावरण शिक्षा' के स्वरूप को दिशा देने, मार्ग दर्शन करने और उसकी भूमिका को सशक्त रूप से व्यक्त करने का अन्तिम श्रेय इसी कान्फ्रेन्स को है। तेरह दिवसीय इस कान्फ्रेन्स में (1) विभिन्न 63 देशों के 272, (2) विभिन्न अन्तर्देशीय संस्थाओं के 4, (3) विशिष्ट अतिथि 4, (4) संयुक्त राष्ट्र संस्था के 16, (5) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की स्वयंसेवी संस्थाओं के 42, (6) कान्फ्रेन्स आयोजन से सम्बन्धित 97; कुल 435 सदस्यों ने भाग लिया था। इस कान्फ्रेन्स में मुख्यतया दो बातें पारित हुईं–

(1) तिबलिसी घोषणा-पत्र (Tblisi Declaration),
(2) 41 अभिशंसाएँ (41 Recommendations)।

इस कान्फ्रेन्स में भारत का प्रतिनिधित्व निम्न व्यक्तियों ने किया–

1. Mr. I. K. Gujral, Ambassador, Indian Embassy in Moscow. (Head of Delegation)
2. Prof. Srinivasan Krishnaswamy, Head, Department of Biological Sciences, Madurai University. (Member)
3. Dr. Madhuri R. Shah (Mrs.), Vice-chancellor, SNDT Women's University, Bombay. (Member)
4. Dr. Desh Bandhu, President, Indian Environmental Society, Delhi. (NGO Representative)
5. Surajmal Jain, Udaipur Environmental Group, Udaipur. (NGO Representative)

[विस्तृत विवरण हेतु कृपया मूल दस्तावेज पढ़ें]

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'पर्यावरण शिक्षा' के लक्ष्य बताइये।
2. 'पर्यावरण शिक्षा' में उद्देश्यों में 'ज्ञान' की क्या भूमिका है ?
3. 'बेलग्रेड चार्टर' के मुख्य निष्कर्ष बताइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

4. IEEP द्वारा भारत में आयोजित पर्यावरण शिक्षा के किसी एक कार्यक्रम का नाम बताइये।
5. 'पर्यावरण शिक्षा' का अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष्य क्या है ? कुछ बिन्दु बताइये।
6. 'पर्यावरण शिक्षा' के निर्देशक सिद्धान्त कितने हैं ? कोई एक लिखिये।
7. जन साधारण को 'पर्यावरण शिक्षा' से क्या लाभ हैं ?
8. 'पर्यावरण शिक्षा' के कार्यक्रमों के लिये विश्व के देशों का वर्गीकरण किस प्रकार किया है ? बताइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

9. 'पर्यावरण शिक्षा' के लिये अन्तर्राष्ट्रीय संस्था निम्न में से कौन-सी है ?
(अ) UNEP (ब) UNDP (स) IEEP (द) UNESCO
10. विकासशील देशों में पर्यावरण शिक्षा पर विश्व सम्मेलन कहाँ आयोजित हुआ था ?
(अ) नई दिल्ली (भारत) (ब) काहिरा (मिश्र)
(स) स्टॉकहोम (स्वीडन) (द) रियो डी जैनीरो (ब्राजील)

निम्न में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये–

11. 'पर्यावरण शिक्षा' के लिये वर्गीकरण में भारत को.................क्षेत्र में रखा गया है। ( )
12. 'पर्यावरण शिक्षा' देने के लिये........................को भी प्रशिक्षित होना आवश्यक है। ( )
13. 'पर्यावरण शिक्षा' की उपादेयता को जानने के लिये IEEP द्वारा किये गये सर्वे हेतु..................प्रोजेक्ट्स बनाये थे। ( )
14. ....जर्नल अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की पर्यावरण शिक्षा की सूचनाएँ देता है। ( )
15. तिबलिसी कान्फ्रेंस, 1977 में......................ने भारत का प्रतिनिधित्व किया था। ( )

33

पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम
[CURRICULUM OF ENVIRONMENTAL EDUCATION]

● प्रस्तावना
(Introduction)

'पर्यावरण शिक्षा' को पारिभाषित करते हुये आज के सन्दर्भ में उसकी आवश्यकता और महत्त्व को हमने पिछले अध्याय में बताया है। साथ में यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य क्या होने चाहिए ? इन सब की समेकित सूची कोई तदर्थ (Tentative) अथवा स्वेच्छा (Arbitrary) नहीं है। विश्व के लगभग 130 राष्ट्रसंघ के सदस्य देशों के विशेषज्ञों द्वारा बेलग्रेड कान्फ्रेन्स (1975) और तिबलिसी कान्फ्रेन्स (1977) में कठिन परिश्रम और विचार-विमर्श के आधार पर निकाले गये निष्कर्षों का ही यह एक अन्तिम परिणाम था, जिसे आधिकारिक रूप से प्रसारित किया गया है।

लेकिन शिक्षा चाहे परम्परागत हो चाहे विशिष्ट (विशिष्ट से आशय उस शिक्षा से है जो किसी विशेष उद्देश्य को सम्मुख रख कर ही दी जाती है, जैसे—नैतिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, धार्मिक शिक्षा, सामाजिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा और पर्यावरण शिक्षा आदि) उसको लक्षित जन-समुदाय तक पहुँचाने के लिए केवल उपर्युक्त बातें काफी नहीं है। शिक्षा में क्या हो ? (What should be in an education programme ?) शायद इसका उत्तर केवल एक है कि वह है **पाठ्यक्रम (Curriculum)**। हम इसी पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे—

● पाठ्यक्रम क्या है ?
(What is Curriculum)

1. **"जो कुछ भी पढ़ा और सीखा जाता है उसकी क्रमबद्ध व्यवस्था को पाठ्यक्रम कहते हैं।"**
   [Curriculum is the orderly arrangement of what is thus to be studied and learned.]
   —Cunningham

2. **"पाठ्यक्रम उस सभी ज्ञान और अनुभवों का एकीकृत संग्रह है जो विद्यार्थियों के स्वयं तथा समाज के विकास के लिए आवश्यक है।"**
   [Curriculum is sum toto of all the knowledge and experiences needed for the students for the development of self and the society.] **—An Educationist**

यह दोनों ही बहुत ही सादा और स्थूल परिभाषाएँ हैं जो सीधे-साधे पाठ्यक्रम के बारे में एक चित्रण प्रस्तुत करती हैं। वस्तुतः पाठ्यक्रम का स्थान शिक्षा की पूरी प्रक्रिया में क्या महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है ? इसे हमने आगे बहुत ही वस्तुनिष्ठ तरीके से बताने का प्रयास किया है।

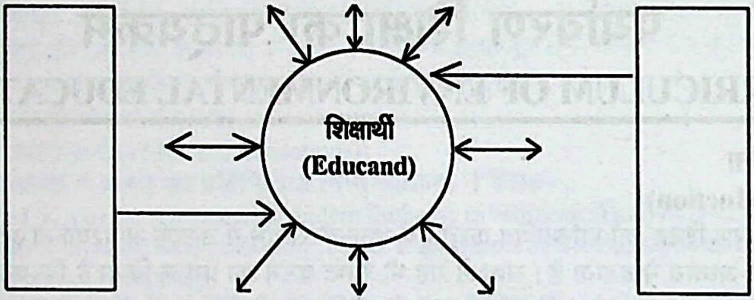
● पाठ्यक्रम का महत्त्व
(Importance of Curriculum)

पाठ्यक्रम के महत्त्व को बताने के लिए हम एक प्रश्न और उसका विवेचन रख रहे हैं। प्रश्न है कि शिक्षा कैसे दी जाती है ? (How Education is imparted ?) उसका निम्न विवरण देखें।

शिक्षा का केन्द्र बिन्दु अन्तिम एवं आवश्यक रूप से केवल शिक्षार्थी है, जिसके लिए ही सभी विचार, मत और परिभाषाएँ विशिष्ट शिक्षाशास्त्री और दार्शनिकों द्वारा व्यक्त की जाती हैं। लेकिन आदिकाल से वर्तमान तक इसमें क्या-क्या और कैसे-कैसे परिवर्तन हुये हैं, इसका अवलोकन करें—

1. पहला नमूना (First Design)

यह नमूना उस आदिकाल के समय की स्थिति को व्यक्त करता है, जब शिक्षा से सम्बन्धित अनेक घटकों की चर्चा का कोई सिलसिला ही नहीं था। न शिक्षक की कल्पना थी और न विषय-वस्तु की; और न ही कोई उद्देश्य जैसी कोई बात थी। शिक्षार्थी केवल वातावरण से देखकर, सुनकर और अपने सहयोगियों से चर्चा के आधार पर स्वयं कुछ जानकारी करता था। उसे कितना आता था ? क्या आता था ? इसकी न कोई मूल्यांकन विधा थी और न ही कोई इसकी आवश्यकता थी।



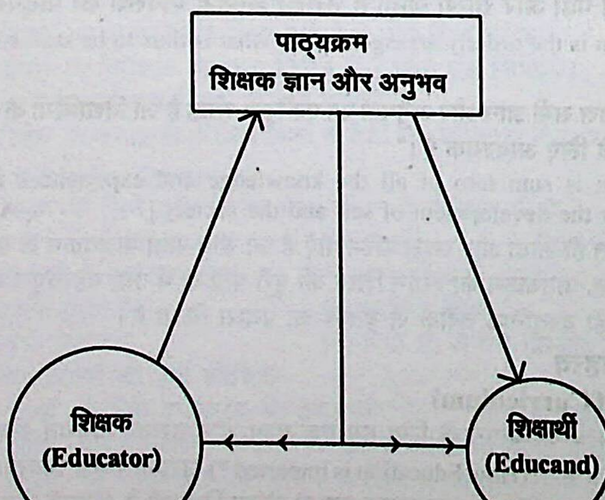
चित्र 33·1—शिक्षण प्रक्रिया में केवल शिक्षार्थी

यह कोई आश्चर्यजनक बात भी नहीं थी। महाभारत काल में एकलव्य का उदाहरण सर्वविदित है जिसने बिना शिक्षक के केवल धनुर्धारी अर्जुन को बाण चलाते देखकर ही अपने ज्ञान में महारथ हासिल की थी। बड़े-बड़े महापुरुष और योगी स्वयं अपने आत्मज्ञान से इतने ज्ञानमग्न हुये कि उन्होंने देश ही नहीं बल्कि पूरे विश्व को ज्ञान प्रदान किया था।

2. दूसरा नमूना (Second Design)

यह नमूना उस स्थिति का है जब शिक्षार्थी को ज्ञान प्राप्त करने में शिक्षक की भूमिका में अधिक ज्ञानवान व्यक्ति मिला। शिक्षार्थी ने जहाँ स्वयं अपने आप प्रकृति और वातावरण से सीखा वहीं शिक्षक द्वारा उसे निम्न प्रकार निर्देशन मिला—

1. स्वयं सीखे ज्ञान में हो सकने वाली किन्हीं त्रुटियों का शुद्धीकरण,
2. नये ज्ञान का काल और स्थिति के अनुसार परिमार्जन और
3. अन्तःमन की छिपी शक्तियों को उद्घाटित कर और अधिक प्रेरणा।

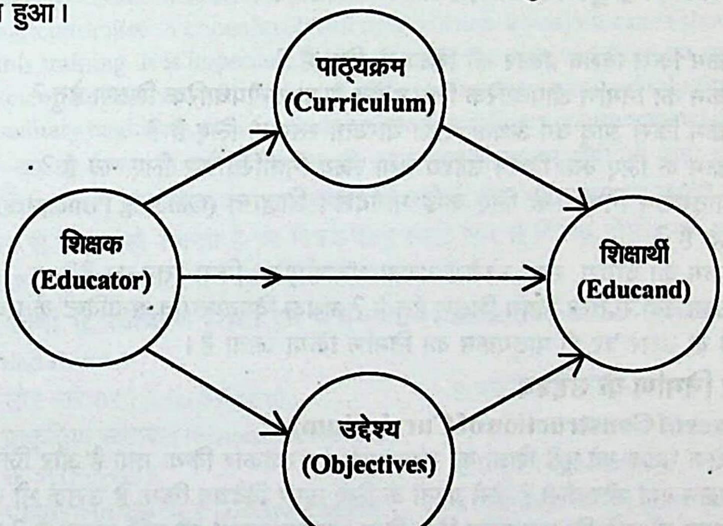


चित्र 33·2—शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक एवं शिक्षार्थी

इससे निःसन्देह शिक्षार्थी को अपने ज्ञानार्जन में बहुत सफलता मिली, लेकिन इस नमूने में किन्हीं उद्देश्य, विषय-वस्तु, शिक्षण प्रणाली को स्थान नहीं था। एक पारम्परिक व्यवस्था में बालकों को शिक्षक के पास आश्रमों में भेजा जाता था और शिक्षक शिक्षार्थी की क्षमता के अनुकूल अपने सीखे हुये ज्ञान के आधार पर शिक्षा देता था। कालान्तर में गुरुकुल व्यवस्था भी इसी प्रतिमान के आधार पर प्रारम्भ हुई थी, यद्यपि उसमें फिर कई घटकों का समावेश हुआ। इस प्रतिमान में शिक्षक और शिक्षार्थी के परस्पर सहयोग के फलस्वरूप शिक्षा प्राप्त हुई।

3. तीसरा नमूना (Third Design)

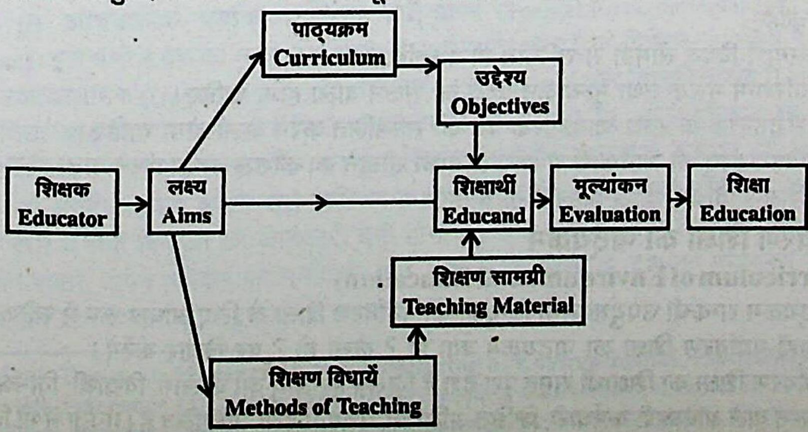
इस नमूने में शिक्षक और शिक्षार्थी के साथ-साथ पाठ्यक्रम को भी स्थान मिला। इससे शिक्षार्थी के सीखने की दिशा को व्यवस्था मिली और फिर उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण का प्रारम्भ हुआ। जिस शिक्षार्थी को जिस तरह का ज्ञान दिया जाना था, उसका पाठ्यक्रम भी उसी प्रकार का हुआ तथा स्पष्ट उद्देश्यपूर्ति की ओर ध्यान केन्द्रित हुआ।



चित्र 33·3—शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक, शिक्षार्थी, पाठ्यक्रम और उद्देश्य

4. चतुर्थ नमूना (Fourth Design)

शिक्षाशास्त्री शिक्षण प्रक्रिया में जुड़े कुछ घटकों (उद्देश्य और पाठ्यक्रम) से सन्तुष्ट नहीं थे। उनके विचार से अभी शिक्षण विधाएँ, शिक्षण सिद्धान्त, शिक्षण सहायक सामग्री, मूल्यांकन और शिक्षण के स्वरूप व क्षेत्र को और इस प्रक्रिया में जोड़ा जाना चाहिये था। अतः एक बहुत ही व्यापक और तुलनात्मक विशाल प्रतिमान प्रतिबिम्बित हुआ, जो यद्यपि अभी भी सम्पूर्ण तो नहीं है पर उसका यथासंभव रूप यहाँ प्रस्तुत है—



चित्र 33·4—शिक्षण प्रक्रिया का वर्तमान स्वरूप

उपर्युक्त चित्र में शिक्षण प्रक्रिया को जिस प्रकार प्रस्तुत किया है वह पाठकों को स्वयं स्पष्ट है, कारण कि शिक्षा सिद्धान्त के अन्तर्गत उन्होंने इन सभी बिन्दुओं पर विस्तृत विवरण पढ़ा है और इसी कारण यहाँ बहुत विस्तृत विवेचन कर हम पाठकों का समय खराब नहीं करना चाहते।

इन सभी नमूनों में यह स्पष्ट है कि किसी भी ज्ञान को देने (शिक्षा देने) में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तीन घटक हैं—

(i) शिक्षक, (ii) शिक्षार्थी तथा (iii) पाठ्यक्रम।

• अच्छे पाठ्यक्रम की विशेषताएँ (Characteristics of a Good Curriculum)

पाठ्यक्रम की अपनी कुछ विशेषताएँ होनी अपेक्षित हैं। इसके निर्माण के पीछे भी कुछ आवश्यक प्रश्न हैं—

1. पाठ्यक्रम किस विशेष प्रकार की शिक्षा के लिए है ?
2. पाठ्यक्रम का निर्माण औपचारिक शिक्षण हेतु है या अनौपचारिक शिक्षण हेतु ?
3. पाठ्यक्रम किस आयु वर्ग अथवा/तथा योग्यता स्तर के लिए है ?
4. पाठ्यक्रम के लिए क्या विशेष उद्देश्य तथा लक्ष्य निर्धारित कर लिए गये हैं ?
5. क्या पाठ्यक्रम निर्माण के लिए कोई मार्गदर्शन सिद्धान्त (Guiding Principles) पूर्व में ही निश्चित हैं ?
6. पाठ्यक्रम का दायरा, राष्ट्र-स्तरीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय, किस स्तर का है?
7. पाठ्यक्रम क्या स्वतन्त्र विषय शिक्षण हेतु है ? अथवा विषयान्तर्गत समाविष्ट के प्रकार का है ?

इन प्रश्नों के उत्तर पर ही पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है।

• पाठ्यक्रम निर्माण के उद्देश्य (Objectives of Construction of Curriculum)

जिस शैक्षिक घटक को पूरी शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अंग स्वीकार किया गया है और जिसके निर्माण के पीछे—पाठ्यक्रम क्यों और कैसे ? जैसे प्रश्नों के लिए ऊपर विवेचन किया है उसके भी स्पष्ट उद्देश्य आवश्यक हैं अथवा यों कहें कि पाठ्यक्रम किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है ? यह अपेक्षित है। इस सन्दर्भ में कुछ बिन्दु यहाँ समेकित हैं, पाठ्यक्रम—

1. विषय अथवा क्षेत्र केन्द्रित, स्पष्ट और व्यावहारिक होना चाहिए।
2. शिक्षार्थियों की आवश्यकता, रुचि और उनकी योग्यता क्रम के अनुसार होना चाहिए।
3. सामाजिक समस्याओं को दूर करने में सक्षम होना चाहिए।
4. शिक्षार्थियों को स्वतः ही और ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा देने वाला होना चाहिए।
5. अनुशासन परक, उत्तरदायित्व निर्वहक, मूल्य सम्यक् और व्यक्तित्व निर्माण में सहायक होना चाहिए।
6. सम्पूर्ण विषय सामग्री से सज्जित होना चाहिए।
7. परिणाम मूलक तथा मूल्यांकन किये जा सकने वाला होना चाहिए।
8. सैद्धान्तिक के साथ व्यावहारिक पक्ष को सम्मिलित करने वाला होना चाहिए।
9. विषय-वस्तु की जानकारी से अन्य ज्ञान को सीखने का कौशल उत्पन्न करने वाला होना चाहिए।
10. शिक्षण विधियों के अनुकूल होना चाहिए।

• पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Environmental Education)

पाठ्यक्रम सम्बन्धी उपर्युक्त सभी बिन्दुओं को पर्यावरण शिक्षा के लिए आधार रूप में स्वीकार करते हुए हम यहाँ पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम क्या हो ? कैसा हो ? पर विचार करेंगे।

पर्यावरण शिक्षा का शिक्षार्थी समूह पूरा देश है जिसमें हर आयु वर्ग के लोग, विद्यार्थी, विभिन्न विभागों में कार्य करने वाले अधिकारी-कर्मचारी, शिक्षित-अशिक्षित, पुरुष-महिला सम्मिलित हैं। IEEP ने भी तिबलिसी कान्फ्रेन्स के हवाले से पर्यावरण शिक्षा के लिए सामग्रियों का विवरण अग्र प्रकार दिया है—

TARGET POPULATIONS FOR ENVIRONMENTAL EDUCATION

As recommended by the Tbilisi Conference; environmental education should be directed to :

1. the **General Public** at every age and at all levels of formal education for pupils, students and teachers and in the various nonformal education activities for young people and adults;
2. **Specific Occupational or Social Groups** with a focus on those whose activity and influence have an important bearing on the environment; for instance, engineers, architects, administrators & planners, industrialists, trade unionists, policy-makers and agriculturalists. Various levels in formal and non-formal education should contribute to this training. It is important, moreover, that the training of certain professionals and scientists involved with problems of the environment, such as biologists, hydrologists, sanitary engineers, et al., include an interdisciplinary environmental component.

अतः यह तो सम्भव ही नहीं है कि एक ही प्रकार का पाठ्यक्रम सभी को ग्राह्य हो सके। दूसरे हर प्रकार की विषय-वस्तु की प्रत्येक को आवश्यकता भी नहीं है, अतः पाठ्यक्रम का यद्यपि सैद्धान्तिक झुकाव व्यापक रूप से समान हो सकता है पर विषय-वस्तु स्पष्ट रूप से विभिन्न होगी। हम इसी वर्गीकरण को ध्यान में रखते हुये संभावित पाठ्यक्रम प्रस्तावित कर रहे हैं—

1. वृहद शीर्षों में पर्यावरण शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Environmental Education in Broad Heads)

1. सौर परिवार (Solar System),
2. पारिस्थितिकी (Ecology),
3. प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources),
4. व्यक्तिगत स्वास्थ्य (Personal Hygiene),
5. ऊर्जा (Energy),
6. प्रदूषण (Pollution),
7. पर्यावरणीय समस्याएँ (Environmental Problems),
8. पर्यावरण कानून (Environmental Laws),
9. पर्यावरणीय प्रबन्ध (Environmental Management),
10. पर्यावरण के विभिन्न पक्ष (Different Aspects of Environment) आदि।

2. विभिन्न श्रेणी के लोगों के लिए पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम का विस्तार[1] (Development of Environmental Education Curriculum for Different Categories of People)

मोटेतौर से इस रूप में पाठ्यक्रम निर्माण को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) औपचारिक पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम (Formal Environmental Education Curriculum) : इस श्रेणी में देश का सबसे बड़ा समूह विद्यार्थी जगत् आता है जो विभिन्न—(1) प्राथमिक (Primary), (2) उच्च प्राथमिक (Upper Primary), (3) सैकण्डरी (Secondary) और विश्वविद्यालय (University) स्तर पर विद्या अध्ययन करता है और जिसे कालान्तर में अपने आप का, अपने परिवार का तथा देश का उत्तरदायित्व संभालना होगा और जिन पर वृहद् जिम्मेदारी होंगी। यह देश के कर्णधार और विश्व के क्षितिज पर कहीं अपनी पहचान बनाने वाले व्यक्तित्व के रूप में उभरेंगे, अतः इनको पर्यावरण के अन्दर निहित होने वाले वे सभी बिन्दुओं की जानकारी देनी होगी जो उन्हें इन क्षेत्र में पारंगत कर सके। स्वयं अपना जीवन संवारें, अपने परिवार का मार्गदर्शन करें, समाज को दिशा दें; देश को पर्यावरण की समस्याओं से बचायें और अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों में सहयोग करें।

---

1. B. C. Das et. al., **'Evaluation and Monitoring of Environmental Education Programmes with reference to Energy Issue in Developing Countries', Chapter in Environmental Education for Conservation and Development, Desh Bandhu and G. Berberet, ed. (Indian Environmental Society, Indraprashtha Estate, New Delhi, India, 1987), p. 518-27.**

विस्तृत पाठ्यक्रम को निम्न प्रकार बिन्दुओं में रखा जा सकता है—

(क) पर्यावरण, पृथ्वी एवं पारिस्थितिकी (Environment, Earth and Ecology)

(1) अपना पर्यावरण (Our Environment), (2) सौर मण्डल (Solar System), (3) पृथ्वी (Earth) और (4) पारिस्थितिकी (Ecology)।

(ख) प्राकृतिक संसाधन वन एवं वन्य जीव और ऊर्जा (Natural Resources, Forests & Wildlife and Energy)

(1) प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources), (2) जैविक विविधता (Biodiversity), (3) वायु (Air), (4) जल (Water), (5) भूमि (Land), (6) वन (Forests), (7) सामाजिक वानिकी (Social Forestry), (8) वन्य जीव (Wild Life), (9) राष्ट्रीय उद्यान और वन अभ्यारण्य (National Parks and Wildlife Sanctuaries), और (10) ऊर्जा (Energy)।

(ग) पर्यावरण प्रदूषण, समस्यायें और कानून (Environmental Pollution, Problems and Law)

(1) पर्यावरणीय प्रदूषण (Environmental Pollution), (2) पर्यावरणीय समस्यायें (Environmental Problems), (3) बढ़ती जनसंख्या (Growing Population), (4) वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution), (5) ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution), (6) नैतिक प्रदूषण (Moral Pollution), (7) अपशिष्ट निस्तारण (Waste Disposal) और (8) पर्यावरण कानून (Environmental Law)।

(घ) अन्य (Others)

(1) स्वयंसेवी संस्थाएँ (Non-governmental Organisations), (2) पर्यावरण संरक्षण (Environment Conservation), (3) पर्यावरण प्रबन्ध (Environmental Management), (4) विभिन्न देशों और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम (Environmental Education Programme in other Countries and also at International Level)।

विभिन्न शिक्षण स्तरों पर विषय वस्तु का समावेश किस प्रकार उचित है, उसकी एक रूपरेखा यहाँ प्रस्तावित है—

(1) प्राथमिक स्तर पर (At Primary Level) : पर्यावरण शिक्षा की विषय वस्तु को अनौपचारिक शिक्षण से देना चाहिए। इस आयु के बच्चे पढ़ने के बजाय देखने, भ्रमण पर जाने और सामूहिक कार्यक्रमों में भाग लेकर सीखने में रुचि रखते हैं। अतः पानी, वायु, जल, भोजन, स्वास्थ्य और वन आदि की जानकारी उन्हें इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से दी जा सकती है। विषय पुस्तकों में भी पर्यावरण को शिक्षण का आधार बनाया जा सकता है।

(2) उच्च प्राथमिक स्तर पर (At Upper Primary Level) : इस स्तर पर विद्यार्थी प्रकृति, प्राकृतिक संसाधनों के बारे में समझने लगते हैं। उन्हें उपर्युक्त के अलावा प्रदर्शनी, वीडियो फिल्में, छोटे-छोटे नाटकों, कवितायें, पर्यावरण गीत और पहेलियाँ तथा पर्यावरण खेल आदि से पर्यावरण शिक्षा दी जा सकती है। अतः इन विधाओं का उपयोग किया जाना चाहिए।

(3) सेकण्डरी स्तर पर (At Secondary Level) : इस स्तर पर विद्यार्थी में समझ का स्तर बढ़ जाता है और वह अपने स्वयं के हानि-लाभ के अतिरिक्त, सामाजिक सम्बन्धी, मूल्यपरक और मानव कल्याण तथा देश हित के कार्यों में रुचि लेने लगते हैं। अतः विषय वस्तु से सम्बन्धित कुछ जटिलताओं से उनको परिचित कराया जा सकता है, जैसे बढ़ती जनसंख्या के दुष्परिणाम, खाद्यान्न की कमी, विभिन्न प्रकार के प्रदूषण, भूमि क्षरण, वन्य जीव संरक्षण आदि। विभिन्न विषयों में विशिष्ट प्रकरणों के साथ पर्यावरण दृष्टिकोण को अप्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित करने की बात पहले भी इसी पुस्तक में कही गयी है।

(4) महाविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर (At College and University Level) : यहाँ स्नातक तथा अधिस्नातक स्तर पर पर्यावरण की विषय वस्तु, उसका तथ्यात्मक विश्लेषण, देश की वास्तविक स्थिति, लोगों द्वारा पर्यावरण के प्रति उपेक्षापूर्ण रवैया, विभिन्न प्रकार के प्रदूषण और उनसे होने वाली सम्भावित हानियाँ, वन एवं वन्य जीवों का संरक्षण और उसका पर्यावरण संरक्षण में योगदान, पर्यावरणीय प्रबन्ध, विभिन्न स्तर पर व्यक्तियों के उत्तरदायित्त्व के बारे में विद्यार्थियों को विश्वांस से ज्ञान प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से दिया जा सकता है। पर्यावरण की कोई अच्छी पुस्तक, जिसमें अच्छी सामग्री का संग्रह हो, इस

स्तर के विद्यार्थियों को विशेष प्रश्न-पत्र के सन्दर्भ में अभिशंसित की जा सकती है। पर्यावरण का डिप्लोमा कोर्स भी प्रारम्भ किया जा सकता है। सिम्पोजियम, वाद-विवाद और अनेक चर्चाओं के मंच इन्हें उपलब्ध कराये जा सकते हैं।

अधिस्नातक स्तर के साथ व्यावसायिक कोर्सेज में पर्यावरण को सन्दर्भ सामग्री के रूप में जोड़ देना चाहिए क्योंकि सभी पाठ्यक्रमों के समाप्त हो जाने के वाद जब विद्यार्थियों को अपने जीवन में व्यावहारिक पक्ष से जुड़ना होगा तब इस ज्ञान की आवश्यकता होगी। इंजीनियर्स (सभी सिविल, मेकेनिकल, इलैक्ट्रीकल, कैमीकल और मेटैलर्जीकल आदि) के लिए हवादार मकानों का निर्माण, प्रदूषण को रोकने हेतु यन्त्र, ड्रेनेज सिस्टम, उद्योग संस्थानों में पर्यावरण स्तर को बनाये रखने हेतु मालिकों, कर्मचारियों और उनके परिवार के लोगों को सम्पूर्ण जानकारी व आकस्मिक संकटीय घटनाओं से बचाव के तौर तरीकों को उपयोग में लाना होगा। इसी प्रकार डॉक्टर, वकील, प्रशासन अधिकारी, न्यायाधीश सभी को इस ज्ञान की आवश्यकता रहेगी। सर्विस में काम करने वाले लोगों को भी सेवारत प्रशिक्षण कार्यक्रमों में पर्यावरण शिक्षा को स्थान देना चाहिए।

(ii) अर्द्ध-औपचारिक पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम (Semi-formal Environmental Education Curriculum) : यह सर्वविदित है कि राष्ट्रीय योजनाओं और इसी स्तर के अनेक कार्यक्रमों को बनाने, क्रियान्वयन करने और आवश्यकता पड़ने पर उनके परिणामों से जूझने-सुलझने और हल निकालने में प्रशासक, उच्च अधिकारी तथा नीति निर्माताओं की प्रमुख भूमिका रहती है। अतः इन सभी लोगों को पर्यावरण से सम्बन्धित जानकारी देनी चाहिए। इसी क्रम में यह उचित प्रतीत होता है कि सभी संस्थानों (राजकीय/अराजकीय) के अधिकारी व कर्मचारियों को भी पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रमों में भाग लेने हेतु अनिवार्यता कर दी जाय। यही नहीं बल्कि फैक्टरीज, हास्पिटल्स, इंजीनियरिंग संस्थान आदि के लोगों को भी इसमें सम्मिलित करना चाहिए। विभिन्न ऐसे विभाग जिनका पर्यावरण विकृति से सीधा सम्बन्ध है, जैसे परिवहन विभाग, इनके चालक-परिचालकों तथा आगार के मिस्त्रियों को भी इस सूची में रखना चाहिए।

क्योंकि इस तरह के लोगों को काफी समय तक किसी प्रशिक्षण में रखा जाना संभव नहीं है, अतः इनके विशिष्ट कोर्स केप्सूल बनाये जाने चाहिए और एक दिन से लेकर दस-पन्द्रह दिन तक कोर्सेज रखे जा सकते हैं। योग्यतानुसार पाठ्य सामग्री की उपलब्धता भी कुछ सहायक हो सकती है।

(iii) अनौपचारिक पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम (Non-formal Environmental Education Curriculum) : अशिक्षित व ऐसे लोग जो गाँवों में रहते हैं और जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है उनके लिए उनकी आवश्यकता के अनुसार ज्ञान और जानकारी उपलब्ध करानी चाहिए। उदाहरण के लिए वह ऊर्जा की आवश्यकता के लिए वैकल्पिक स्रोतों (बायो गैस, सौर ऊर्जा, जल ऊर्जा आदि) के ज्ञान को बहुत पसन्द करेंगे। पशु सुरक्षा, भूमि रख-रखाव, फसलों को कीड़ों से रक्षा, स्वच्छ आवास, स्वास्थ्य शिक्षा, रोग और उनसे बचने के उपाय, सिगरेट-तम्बाकू के सेवन से हानियाँ, मद्यपान निषेध आदि अनेक प्रकरण उनके ज्ञान के हो सकते हैं जो पर्यावरण के ही घटक हैं।

इस हेतु मीडिया का उपयोग (दूरदर्शन) बहुत उपयोगी हो सकता है। लघुनाटक, कठपुतली नाटक, गीत, लोकगीत, गाँवों के मेलों में प्रदर्शनियाँ आदि का आयोजन करना चाहिए।

पाठ्यक्रम को इस प्रकार प्रस्तुत करते हुये निम्न बिन्दुओं को भी देखा जाना बहुत प्रभावी होगा, क्योंकि केवल पाठ्यक्रम का निर्माण ही काफी नहीं है, उसकी प्राप्तकर्त्ताओं द्वारा स्वीकारोक्ति भी बहुत आवश्यक है। बी. सी. दास[1] एवं अन्य ने इस सन्दर्भ में जो बातें सुझाई हैं, वह बेहद ध्यान देने योग्य हैं—

1. पाठ्यक्रम स्थानीय स्थितियों के अनुकूल होना चाहिए (Appropriateness)।
2. पाठ्यक्रम शिक्षार्थी को आकर्षित करने वाला होना चाहिए (Attractiveness)।
3. पाठ्यक्रम लोगों के लिए उपलब्ध हो सकने लायक होना चहिए। (Affordability) और
4. पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में पूरी जानकारी और साहित्य की उपलब्धता भी विश्वसनीय होनी चाहिए (Availability)।

---

1. B. C. Das, et. al., Ibid, p. 527.

एक अच्छा सूचना संग्रहीत, संतुलित, सबकी रुचि का और पर्यावरणीय आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकने वाला पाठ्यक्रम निश्चय ही पर्यावरण शिक्षा को एक सफल कार्यक्रम के रूप में संचालित कर सकता है। निःसन्देह पाठ्यक्रम को इस शिक्षण प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शिक्षण में 'पाठ्यक्रम' की क्या भूमिका है ? क्या इससे शिक्षार्थी को कोई दिशा बोध होता है ?
2. 'पाठ्यक्रम' निर्माण के उद्देश्य बताइये।
3. 'पर्यावरण शिक्षा' के 'पाठ्यक्रम' में किन-किन बिन्दुओं को सम्मिलित किया जाना अपेक्षित है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

4. 'पाठ्यक्रम' क्या है ?
5. अच्छे 'पाठ्यक्रम' की विशेषताएँ बताइये।
6. 'पर्यावरण शिक्षा' के 'पाठ्यक्रम' को कैसे वर्गीकृत कर सकते हैं ?
7. प्राथमिक स्तर पर 'पर्यावरण शिक्षा' का 'पाठ्यक्रम' किस प्रकार का होना चाहिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

निम्न प्रश्नों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

8. 'पाठ्यक्रम' स्थानीग स्थितियों के........................होना चाहिये। ( )
9. 'पाठ्यक्रम' शिक्षार्थी को........................करने वाला होना चाहिये। ( )
10. बिना पढ़े लिखे व्यक्तियों के लिये निर्मित 'पाठ्यक्रम' में.. का उपयोग सफल रह सकता है। ( )
11. 'पाठ्यक्रम' की वैधता........................से परीक्षा की जा सकती है। ( )

निम्न प्रश्नों का हाँ/नहीं में उत्तर दीजिये—

12. सभी लोगों के लिये 'पर्यावरण शिक्षा' का 'पाठ्यक्रम' समान होना चाहिये। (हाँ/नहीं)
13. 'पाठ्यक्रम' के शिक्षण में मीडिया उपयोग संभव नहीं है। (हाँ/नहीं)
14. 'पर्यावरण शिक्षा' का 'पाठ्यक्रम' केवल औपचारिक शिक्षण हेतु ही बनाया जा सकता है। (हाँ/नहीं)
15. 'पर्यावरण शिक्षा' के 'पाठ्यक्रम' में किसी भी प्रकार की विषय-वस्तु सम्मिलित की जा सकती है। (हाँ/नहीं)

●

34

पर्यावरण शिक्षा की शिक्षण पद्धति, शिक्षण-सहायक सामग्री एवं पाठ योजना

[TEACHING METHODOLOGY OF ENVIRONMENTAL EDUCATION, TEACHING AIDS AND LESSON PLANNING]

• शिक्षण क्या है ?
(What is Teaching ?)

शिक्षण प्रणालियों तथा शिक्षण के अन्य अवयवों की चर्चा से पूर्व हमें यह जानना आवश्यक है कि वास्तव में शिक्षण क्या है ? जो कुछ भी पूर्व अध्यायों में हमने शिक्षा प्रक्रिया के घटक, (1) लक्ष्य एवं उद्देश्य तथा (2) पाठ्यक्रम की विषद चर्चा की है, उसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु तथा अपेक्षित सिद्धान्तों और आवश्यकताओं पर आधारित विषय-वस्तु (पाठ्यक्रम) को विद्यार्थी तक पहुँचाना ही वस्तुतः शिक्षण है। चूँकि यह कार्य अत्यन्त जटिल है तथा इसमें शिक्षक की भूमिका और शिक्षण के विभिन्न क्रियाकलापों का अत्यन्त निकटता से सम्बन्ध है, अतः हम इस प्रकरण को अत्यन्त वस्तुनिष्ठता से प्रस्तुत करना चाहेंगे।

शिक्षण की परिभाषा परम्परागत रूप से निम्न प्रकार दी गई है—

"शिक्षण वह कार्य है जिसे एक शिक्षक विद्यार्थियों को सीखने की सहायता के लिए करता है।"

(Teaching is the work that a teacher does in helping students to learn.)

—**Collins Cobuild : English Language Dictionary. p. 1499.**

यहाँ आप देखेंगे कि शिक्षक का केवल सूचना देना ही शिक्षण के अन्तर्गत नहीं आता बल्कि विद्यार्थी को सीखने के लिए जानकारी उपलब्ध कराना और उसके ज्ञान तथा कौशल की वृद्धि के लिए कार्य करना भी शिक्षण में सम्मिलित है (Teacher is not only a SOURCE but also a RESOURCE : अध्यापक स्रोत ही नहीं है बल्कि साधन भी है) और इसी कारण कुछ शिक्षाविद् निम्न परिभाषा को शिक्षण के लिए स्वीकार करते हैं—

"शिक्षण विद्यार्थी को ज्ञान और कौशल देने की वह प्रक्रिया है जिससे वह प्रस्तावित विषयों में पारंगत हो सके।"

(Teaching is the process of imparting to the learner the knowledge and skills required to master prescribed subjects.)

—**William C. Morse and G. Max. Wingo**[1]

समय के साथ-साथ अब उपर्युक्त परिभाषा में केवल ज्ञान (Knowledge) और कौशल (Skill) को ही नहीं बल्कि शिक्षण में अवबोध (Understanding) और ज्ञानोपयोग (Application) को भी जोड़ दिया है। शिक्षाविदों का मानना है कि बिना समझ और उपयोग के केवल ज्ञान प्राप्त करने का कोई महत्त्व नहीं। अतः अच्छे शिक्षण में उपर्युक्त चारों बिन्दुओं का समावेश अत्यन्त आवश्यक है।

---

1. **William C. Morse and G. Max Wingo, Psychology and Teaching (D. B. Taraporewala Sons & Co. Private Limited, Bombay, 1970), p. 7.**

Willam C. Morse[1] के अनुसार–

"आज शिक्षण का अर्थ बालकों को व्यक्तिगत और समूह में समझना और उन्हें दिशा निर्देशन देना है। इससे आशय है कि इस प्रकार के सीखने के अनुभव उपलब्ध कराये जायें जिससे हर शिक्षार्थी समाज में अपनी स्थिति बनाने के लिए लगातार और क्रमानुसार योग्यता प्राप्त कर सके।"

(Today teaching means the understanding and guiding of children as individuals and as groups. It means the providing of learning experiences that will enable each learner to grow continuously and segmentially toward his own adult role in society.)

शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले अनेक विद्वान इन परिभाषाओं को संकुचित एवं सीमित बताते हैं। उनके अनुसार एक बालक से एक अभिभावक की अपेक्षायें निम्नलिखित हैं–

उदाहरण–

1. वह ज्ञान प्राप्त करे (Knowledge)।
2. वह समझ प्राप्त करे और ज्ञान को उपयोग में लेने की क्षमता भी प्राप्त करे (Understanding and Application)।
3. विविध प्रकार के कौशल जान सके (Skills)।
4. अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाये (Change of Attitudes)।
5. मूल्य निर्धारण की योग्यता हो (Develop a Set of Values)।
6. स्वतन्त्र रूप से सोचने और कार्य कर सकने की क्षमता हो (To Think and Act Independently)।
7. सहयोगी भावना वाला बने (Co-operative)।
8. अच्छा नागरिक बने (Good Citizen) आदि।

तब शिक्षण की परिभाषा क्या होगी ? वे इस सन्दर्भ में बताते हैं कि वास्तव में शिक्षण की परिभाषा कुछ इस प्रकार की होनी चाहिए–

"शिक्षण कुछ उद्देश्यों (लक्ष्यों) को प्राप्त करने की प्रक्रिया है।"

(Teaching is a process of aquiring a set of goals.)

● अच्छे शिक्षण के मानदण्ड (Criteria of Good Teaching)

अच्छे शिक्षण के लिए तीन मानदण्ड अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं–

(अ) शिक्षण कैसा होना चाहिए ? अर्थात् **शिक्षण का प्रकार** (Type of Teaching),

(ब) शिक्षण में शिक्षक को किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ? अर्थात् **अध्यापकीय दृष्टिकोण** (Teacher's Viewpoint) और

(स) शिक्षण स्थितियाँ कैसी हों ? अर्थात् **शिक्षण स्थितियाँ** (Teaching Conditions)।

इन तीनों बिन्दुओं पर हम क्रमवार चर्चा करेंगे। पाठकों को यहाँ हम यह भी बताना चाहेंगे कि समय और श्रम बचाने के उद्देश्य से हम इन्हें संक्षिप्त ही दे रहे हैं; पाठक स्वयं इन्हें अपने स्तर पर विस्तृत कर सकते हैं।

(अ) शिक्षण का प्रकार (Type of Teaching)

1. अच्छा शिक्षण **निर्देशात्मक** तथा **सुझावात्मक** होता है (Directive and Suggestive)। इसे आदेशात्मक होने से बचाना चाहिए (Avoid Dictation)।
2. अच्छा शिक्षण **क्रिया आधारित** होता है (Based on Activity)।
3. अच्छा शिक्षण **प्रेरणादायक** होता है (Stimulating)।
4. अच्छा शिक्षण **प्रगति पर आधारित** रहता है (Progress based)।
5. अच्छा शिक्षण **व्यावहारिक** होता है (Practical)।
6. अच्छा शिक्षण **उद्देश्यपूर्ण व सुव्यवस्थित** होता है (Planned & with Definite Aim)।
7. अच्छा शिक्षण **पूर्व ज्ञान पर आधारित** होता है (Based on Previous Knowledge)।

---

1. William C. Morse and G. Max Wingo. Ibid., p. 7.

8. अच्छा शिक्षण **रुचिनुकूल** होता है (According to Interest)।
9. अच्छा शिक्षण **प्रजातन्त्रात्मक** होता है (Democratic)।
10. अच्छा शिक्षण **मूल्य आधारित** होता है (Value Based)।
11. अच्छा शिक्षण **उपचारात्मक** होता है (Remedial)।
12. अच्छा शिक्षण **आत्मविश्वास** उत्पन्न करता है (Creates Self Confidence)।
13. अच्छा शिक्षण **छात्र स्तर अनुसार** होता है (Individual Differences)।

(ब) अध्यापकीय दृष्टिकोण (Teacher's Viewpoint)

इस बिन्दु को बहुत स्पष्ट करने हेतु हम इसे दो भागों में विभाजित करना चाहेंगे, (1) अध्यापक के आवश्यक गुण (Necessary Qualities of a Teacher) और (2) अध्यापकीय दृष्टि (Teacher's Vision)। इनके विवेचन से एक अच्छे अध्यापक से उत्तम शिक्षण की सम्भावना बनती है। इन्हें देखें—

(1) अध्यापक के आवश्यक गुण (Necessary Qualities of a Teacher)

शिक्षाविदों का मत है कि एक अच्छे अथवा कुशल अध्यापक में बहुमुखी व्यक्तित्व (Versatile Personality) का होना आवश्यक है। उसके विविध आयामों में विभिन्न गुणों को निम्न प्रकार समेकित किया जा सकता है—

(क) शारीरिक विशेषताएँ (Physical Attributes) : इसमें शारीरिक बनावट, स्वास्थ्य, उत्साह, कपड़ों का चुनाव व पहनने का ढंग, बोलना, वर्णन शैली, भावभंगिमा एवं मुद्रा तथा उठने-बैठने और चलने-फिरने का तौर-तरीका आदि सभी सम्मिलित किया जा सकता है।

(ख) मानसिक विशेषताएँ (Mental Attributes) : इसमें विषय ज्ञान, शिक्षण कला, बाल मनोविज्ञान की जानकारी, अध्ययन-अध्यापन में रुचि और कार्य के प्रति निष्ठा प्रमुख रूप से रखी जा सकती हैं।

(ग) नैतिक विशेषताएँ (Moral Attributes) : न्यायप्रियता, आत्मविश्वास, व्यवहार कुशलता, चारित्रिक दृढ़ता, समाज के प्रति उत्तरदायित्व, सत्यवादी, कर्त्तव्य परायणता, उदारता और सहानुभूति, आत्मसंयम, अनुशासन, ईमानदारी और लोभ विग्रह जैसे गुण इसमें समेकित किये जा सकते हैं।

(घ) व्यक्तिगत विशेषताएँ (Personal Attributes) : इन विशेषताओं में शिक्षक में हँसमुख रहना, आशावादी, नेतृत्व, परिश्रम व लगन, सादा जीवन, शिष्ट व्यवहार और मिलनसारिता आदि आते हैं।

(2) अध्यापकीय दृष्टि (Teacher's Vision)

इस विभाजन में हम उन बिन्दुओं को रखने का प्रयास कर रहे हैं जिनसे एक अनुकरणीय व्यक्तित्व वाला अध्यापक दृष्टिगत हो सके। इसके अनुसार एक शिक्षक को—

1. अपने विषय का पूर्ण ज्ञान रखना चाहिए (Complete knowledge of the subject)।
2. सभी प्रकार की शिक्षण विधियों से परिचित होना चाहिए (Well versed with teaching methods)।
3. बालकों के मानसिक स्तर के अनुकूल अपने अध्यापन के ढंग में उचित परिवर्तन कर लेने की क्षमता होनी चाहिए (Competence of changing the teaching method according to the mental status of the children)।
4. बच्चों को स्वयं कार्य करने का अवसर देना चाहिए (To give opportunity to children for doing activity themselves)।
5. अपने शिक्षण को बालकों के भविष्य से जोड़ देना चाहिए (To link his teaching with the future of the children)।
6. बालकों की रुचि का ध्यान रखना चाहिए (Must bear in mind of childrens' interests)।
7. यदि सम्भावना हो तो शिक्षण में व्यावहारिक पक्ष को जोड़ना चाहिए (Seeking possibility of practical work)।
8. अपने व्यक्तित्व को बालकों में उतारना चाहिए (Shaping of his personality in the children)।
9. वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखना चाहिए (Keeping in view of the individual differences)।
10. शिक्षक सामग्री का भरपूर उपयोग करना चाहिए (Maximum use of teaching aids)।

11. विद्यार्थियों को और अधिक पढ़ने की प्रेरणा देनी चाहिए (To motivate the children for further reading)।

12. विद्यार्थियों का नैतिक उत्थान करते रहना चाहिए (To make efforts of boosting the morale of children)।

(3) शिक्षण स्थितियाँ (Teaching Conditions)

यहाँ यह बात पाठकों को बतानी बहुत आवश्यक है कि शिक्षण के सन्दर्भ में वर्तमान में एक निश्चित परिवर्तित दृष्टिकोण है और इसी क्रम में शिक्षण स्थितियों से तात्पर्य आज यह कदापि नहीं है कि (1) विद्यालय कहाँ है ? (2) विद्यालय भवन कैसा है ? (3) कक्षा-कक्ष कैसे हैं ? (4) क्या-क्या शिक्षण सुविधायें (शिक्षण सामग्री के सन्दर्भ में) विद्यालय में उपलब्ध हैं ? (5) पुस्तकालय में क्या विशेष अध्ययन की व्यवस्था है ? (6) प्रशासनिक तन्त्र क्या शिक्षक और शिक्षण के अनुकूल है ? आदि। बल्कि अब शिक्षण स्थितियों के अवलोकन का मापदण्ड विद्यालय में विद्यार्थियों के सीखने के अवसर (Opportunities of Learning of Students in Schools) हो गया है। तभी तो **William C. Morse** लिखते हैं कि—

"प्रत्येक विद्यालय अनोखा होता है और इनमें जो विचार और मान्यताओं की विविधिता दृष्टिगोचर होती है वह उनके कारण है जो वहाँ शिक्षण प्रक्रियाओं (अनुभवों) को व्यवस्थित और मार्गदर्शन करते हैं।"

(Each institution is unique and that the differences you see reflect the diversity of beliefs and values held by those responsible for organising and guiding the learning experiences there.)[1]

—Chapter II : What goes on in schools ? in the book 'Psychology and Teaching.'

अतः किसी विद्यालय की शिक्षण स्थितियाँ कैसी हैं ? यह निम्न बिन्दुओं से जाना जा सकता है—

1. शिक्षार्थी (The Learners) : विद्यार्थियों को देखें—

(i) क्या आप इस प्रकार का व्यवहार देखते हो जैसा कि उस आयु वर्ग के विद्यार्थियों से आशा की जाती है ?

(ii) आप देखना चाहोगे कि शिक्षार्थियों की मनोवृत्ति विद्यालय तथा उन शिक्षण प्रक्रियाओं, जिनमें वह लगे हुये हैं, के प्रति कैसी है?

(iii) क्या आप बता सकोगे कि वे निष्क्रिय प्राप्तकर्त्ता हैं अथवा क्रियाशील संभागी ?

2. शिक्षण क्रियाकलाप (The Learning Activities) :

(i) किन कार्यकलापों में विद्यार्थी लगे हुये हैं और वह क्या सीखना चाह रहे हैं ?

(ii) क्या यह क्रियाकलाप आपको महत्त्वपूर्ण लगते हैं ?

(iii) क्या यह विद्यार्थियों को महत्त्वपूर्ण लगते हैं ?

(iv) क्या कक्षा-कक्ष के बाहर यह प्रयोग में आने योग्य हैं ?

(v) इनकी योजना कौन बनाता है ?

(vi) शिक्षण कार्यकलापों के प्रति शिक्षार्थी किस प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं ?

(vii) आप क्या सोचते हैं कि क्या वे वास्तव में सीख रहे हैं ?

(viii) अन्य विद्यालयों की विविध क्रियाकलापों की तुलना में आप क्या समानता और असमानता पाते हो ?

3. शिक्षण प्रक्रियाएँ (The Learning Process) : शिक्षण के विभिन्न तरीकों को देखो, जैसे—अभ्यास (Drill), व्याख्यान (Lectures), प्रश्न-उत्तर (Question-Answer), समस्या समाधान (Problem Solving), योजना पद्धति (Project Method), विचार-विमर्श (Discussion) आदि—

(i) क्या यह सभी कार्यक्रम विद्यार्थी- रुचि, पाठ्य-पुस्तक तथा राज्य द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रम पर बने हैं ?

(ii) क्या शिक्षण प्रक्रिया में कोई क्रमबद्धता (Sequence) है ?

(iii) क्या तुम्हें अध्यापक के निर्धारित लक्ष्य और प्रयोग में लायी गयी पद्धति में कोई सम्बन्ध प्रतीत होता है ?

---

1. William C. Morse and G. Max Wingo. Ibid., p. 23-24.

(iv) शिक्षण को बनाये रखने (Retention) और इसे प्रतिदिन के जीवन के जीवन में उपयोग (To use in every day life) में लाने हेतु क्या उपाय किये हैं।

4. सीखने के लिए तत्परता (Readiness for Learning) :

(i) क्या सभी विद्यार्थियों में सीखने की समान क्षमता होना प्रतीत होती है (Same Capacity of Learning) ?

(ii) योग्यता की कौन सी भिन्नतायें स्पष्ट हैं (Differences in Ability-Apparent) ?

(iii) इन भिन्नताओं के लिए विद्यालय कैसे पूर्ति करता है (School Provision for Such Differences) ?

(iv) क्या आपको कोई ऐसी बातें दिखती हैं जिनसे विद्यालय में हो रहे कार्यों में विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर का प्रभाव दिखता प्रतीत होता है (Socio-economic Level of Students' Influence in the School Programme) ?

5. सीखने के लिए प्रेरणा (Motivation for Learning) : विद्यार्थियों के सीखने के प्रति किसी उद्देश्य के होने न होने की ओर देखो—

(i) आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि विद्यार्थी जो चाहे वह करते हैं ? शिक्षक उनको सिखाने के लिए किन प्रणालियों (Devices) का उपयोग करते हैं ?

(ii) कुछ प्रणालियों जैसे आशाएँ/अपेक्षायें (Expectations), पुरस्कार (Rewards), जिज्ञासा उत्पन्न करना (Whetting Curiosity) की ओर विचारें।

6. समूह में पारस्परिक क्रिया (The Group Interaction) :

(i) क्या कक्षा के सभी सदस्य एक साथ काम करते हैं (Working Together) ?

(ii) अथवा उनमें पृथक्-पृथक् काम करने की प्रवृत्ति है (Tendency to Work Individually) ?

(iii) अध्यापक की भूमिका क्या रहती है (Role of Teacher) ?

(iv) कक्षा रूप को वर्णित करने के लिए (Characterisation of Personality of a Class) आप किस विशेषण को चुनना चाहेंगे : प्रतिस्पर्धा (Competition), सहकारी (Co-operative), झगड़ालू (Quarrelsome), मित्रवत् (Friendly), आक्रामक (Hostile), उदासीन (Apathetic) और तनाव अथवा बेचैन (Tense)।

(v) इस प्रकार के भावात्मक वातावरण के क्या कारण हो सकते हैं, के बारे में क्या सोचते हैं ? (What makes such emotional climate) ?

7. सीखना और अनुशासन (Learning and Discipline)—

(i) अच्छा अनुशासन (Discipline) जिसे कहते हैं, उसे आप देखना चाहोगे।

(ii) वैयक्तिक और सामूहिक अनुशासन का उत्तरदायित्व कौन वहन करता है ? (Who assumes the responsibility for individual and group discipline) : अध्यापक (Teacher), विद्यार्थी (Students) अथवा दोनों (Both)।

(iii) सामूहिक व्यवहार को नियन्त्रित और प्रवाहित (Control and Channelize) करने को किन प्रणालियों (Devices) को प्रयोग में लाते हुए देखते हो ?

8. कक्षा-कक्ष में व्यक्तिगत समस्याएँ (Individual Problems in the Classroom) :

(i) शिक्षक उन व्यक्तिगत विद्यार्थियों के लिए क्या करते हैं जो कक्षा समूह में अथवा नियमित शिक्षण कार्यक्रम में ठीक से 'फिट' नहीं होते ?

(ii) क्या इस प्रकार के विद्यार्थियों के लिए भी भिन्न-भिन्न अध्यापक एक ही प्रकार के उत्तरदायित्व का निर्वहन करते हैं ?

9. सीखने का मूल्यांकन (Evaluation of Learning) :

(i) उद्देश्यों की प्राप्ति हुई है या नहीं और विद्यार्थियों ने प्रगति की है या नहीं, इसका निर्धारण कौन करता है : विद्यार्थी (Students), अध्यापक (Teacher) या दोनों (Both)।

(ii) परीक्षा और अंक प्राप्ति की पद्धति के अलावा भी आप किन्हीं अन्य विधाओं को भी देखना चाहोगे, जिनमें से कुछ हैं—परिचर्चा (Discussion), चैकलिस्ट (Checklists), अध्यापक- विद्यार्थी सम्मेलन (Teacher-student conferences), स्वमूल्यांकन (Self-evaluation) और समूह मूल्यांकन (Group-evaluation)।

• शिक्षण पद्धति और शिक्षण के विविध पक्ष (Teaching Methodology and Various Aspects of Teaching)

शिक्षण और शिक्षक तथा शिक्षण स्थितियों का वर्णन हमने ऊपर किया है। इन्हीं से सीधे सम्बन्धित शिक्षण पद्धतियों को अब यहाँ प्रस्तुत करेंगे। शिक्षण पद्धतियाँ क्या हैं ? (What is a Teaching Methodology ?)। इसका उत्तर बहुत स्पष्ट रूप से Collins' English Language Dictionary ने परिभाषित किया है–

"पद्धति किसी कार्य के करने में प्रयुक्त होने वाले तरीके और सिद्धान्तों की व्यवस्था है, उदाहरण के लिए शिक्षण-पद्धतियाँ।"

(Methodology is a system of methods and principles for doing something, for example for teaching.)

—**Collins Cobuild : English Language Dictionary**, 8 Grafton Street, London WIX 3LA, 1987. p. 911.

इस परिभाषा को आधारभूत स्वीकार करते हुये हम शिक्षण पद्धतियों को उनके विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने के प्रकार से प्रस्तुत करते हैं, जैसे–

(अ) शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त (General Principles of Teaching)

प्रत्येक शिक्षण पद्धति के सफलतापूर्वक क्रियान्वयन के लिए कुछ सामान्य सिद्धान्तों का सहारा लेना होता है जिन्हें शिक्षण के सामान्य अथवा मूलभूत सिद्धान्तों के नाम से जाना जाता है (General or Fundamental Principles of Teaching)। **ये सभी सिद्धान्त मूल रूप से बाल प्रकृति** (Child-nature) **पर आधारित होते हैं। यह निम्न हैं–**

1. क्रियाशीलता का सिद्धान्त (The Principle of Activity),
2. जीवन से सम्बन्धित करने का सिद्धान्त (The Principle of Linking with Life),
3. रुचि का सिद्धान्त (The Principle of Interest),
4. प्रेरणा का सिद्धान्त (The Principle of Motivation),
5. निश्चित उद्देश्य का सिद्धान्त (The Principle of Definite Aim),
6. चयन का सिद्धान्त (The Principle of Selection),
7. पुनरावृत्ति का सिद्धान्त (The Principle of Revision),
8. विभाजन का सिद्धान्त (The Principle of Division),
9. वैयक्तिक विभिन्नता का सिद्धान्त (The Principle of Individual Differences),
10. आयोजन का सिद्धान्त (The Principle of Planning),
11. मनोरंजन का सिद्धान्त (The Principle of Recreation) और
12. प्रजातन्त्रीय व्यवहार का सिद्धान्त (The Principle of Democratic Dealing)।

(ब) शिक्षण-सूत्र (Maxims of Teaching)

एक अच्छा शिक्षण वही है जो विद्यार्थियों के रुचि अनुकूल हो, उनकी जिज्ञासाओं की पूर्ति कर सके और उन तथ्यों को आत्मसात् कर ले जिन्हें शिक्षक उन तक पहुँचाना चाहता है। अतः कक्षा शिक्षण में जिन सूत्रों को शिक्षाविदों ने स्वीकार किया है और जिनसे शिक्षण प्रभावी एवं सफल होता है, उन्हें शिक्षण सूत्र (Maxims of Teaching) का नाम दिया है। वह हैं–

1. ज्ञात से अज्ञात की ओर (From Known to Unknown),
2. सुगम से कठिन की ओर (From Easy to Difficult),
3. स्थूल से सूक्ष्म की ओर (From Concrete to Abstract),
4. अनिश्चित से निश्चित की ओर (From Indefinite to Definite),
5. विशेष से सामान्य की ओर (From Particular to General),
6. सरल से जटिल की ओर (From Simple to Complex),
7. विश्लेषण से संश्लेषण की ओर (From Analysis to Synthesis),
8. प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर (From Seen to Unseen),

9. अनुभव से विचार की ओर (From Empirical to Rational),
10. मनोवैज्ञानिक से क्रमबद्धता की ओर (From Psychological to Logical),
11. पूर्ण से अंश की ओर (From Whole to Parts),
12. प्रकृति का अनुसरण (Follow Nature),
13. आगमन विधि का अनुसरण (Follow Inductive Method) और
14. स्वाध्याय को प्रोत्साहन (Encouragement to Self Study)।

(स) शिक्षण विधियाँ (Teaching Devices)

प्रत्येक शिक्षक अपने शिक्षण में कुछ विशिष्ट विधियों (Devices) का प्रयोग करते हैं। यह इसलिए भी आवश्यक है कि प्रत्येक प्रकार का शिक्षण किसी एक ही निश्चित तरीके से सम्भव नहीं होता। अतः कतिपय विधियों (Devices), जो शिक्षण में काम ली जाती हैं, वह निम्न हैं—

(1) वर्णन प्रणाली (Device of Description) : इस विधि में शिक्षक किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना अथवा वस्तुस्थिति का केवल विवरण से ऐसा चित्रण करता है कि विद्यार्थियों के सम्मुख उस प्रकरण की एक मानसिक प्रतिबिम्ब (Image) उभर आती है। शिक्षक इस विवरण को प्रस्तुत करते समय उदाहरण, मॉडल्स, चित्र व अन्य दृश्य सामग्री का सहारा भी लेता है। इससे विषय-वरतु विद्यार्थियों को आत्मसात् हो जाती है। इतिहास, भूगोल और भाषा शिक्षण में इनका सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है।

(2) स्पष्टीकरण प्रणाली (Device of Exposition) : इस विधि में विद्यार्थियों को नवीन ज्ञान दिया जाता है। सम्बन्धित ज्ञान की पूर्ण व्याख्या कर उसे बिन्दु बार इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे बहुत ही स्पष्टता से वांछित ज्ञान विद्यार्थियों तक पहुँच सके। विज्ञान शिक्षण, राजनीति सिद्धान्त आदि इस प्रणाली के दायरे में आते हैं।

(3) विवरण प्रणाली (Device of Narration) : यह विधि सीधी किसी घटना, सिद्धान्त, प्रणाली, तथ्य आदि को प्रस्तुत करने की विधि है जिसमें शिक्षक अपनी बात कहता है और शिक्षार्थी उसे सुनकर समझते हैं। जितना रोचक, तथ्यपरक, वस्तुनिष्ठ और क्रमवार वर्णन होगा, उतना ही वह विद्यार्थियों को ग्राह्य होगा। इसमें केवल शिक्षक की भूमिका है; छात्र केवल श्रोता होते हैं। इतिहास, नागरिकशास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र आदि विषयों में इस विधि का प्रयोग होता है।

(4) व्याख्या प्रणाली (Device of Explanation) : इस विधि में वस्तुतः दो प्रणालियों, विवरण (Narration) और वर्णन (Description) का एक साथ प्रयोग होता है। शिक्षण में विषय-वस्तु का विवरण भी दिया जाता है और जहाँ कठिन स्थल आते हैं वहाँ उन्हें समझाने हेतु विविध साधनों का प्रयोग भी किया जाता है चाहे वह दृश्य सामग्री हो अथवा शिक्षक की ही अपनी योग्यता से विविध प्रकार का स्पष्टीकरण। उदाहरण के लिए भाषा शिक्षण में किसी शब्द का अर्थ बताकर उसका विभिन्न स्थितियों में उचित प्रयोग इस विधि में आता है।

(5) तुलना प्रणाली (Device of Comparison) : दो व्यक्ति, वस्तु, घटनाएँ, स्थितियों अथवा इनसे सम्बन्धित किन्हीं भी प्रकरणों की समानता अथवा असमानता की तुलना करना इस विधि के अन्तर्गत आती है। इससे शिक्षण में रोचकता, विद्यार्थियों में सोचने और तुलना से निष्कर्ष निकालने की क्षमता और सीखे हुए ज्ञान को संचित करने की स्थिति में वृद्धि होती है। कक्षा में विद्यार्थी भी सजग रहते हैं और शिक्षण में सक्रिय भागीदार रहते हैं। उदाहरण के लिए रसायन विज्ञान शिक्षण में गैसों के गुणों की परस्पर तुलना से सभी गैसों का ज्ञान विद्यार्थियों को स्थाई बन जाता है। अन्य विषयों में भी इसका उपयोग भरपूर किया जा सकता है।

(6) उदाहरण प्रणाली (Device of Illustrations) : किन्हीं कठिन विषय-वस्तु के शिक्षण में शिक्षक को अनेक प्रकार के मौखिक (Verbal) और लिखित/चित्रित (Non-verbal) उदाहरणों का सहारा लेना होता है। मौखिक उदाहरणों में समानता/असमानताएँ (Analogies), तुलना (Comparison), शब्द चित्रण (Word Pictures) आदि प्रमुख हैं। लिखित/चित्रित उदाहरणों में चित्र, मॉडल्स, फोटोग्राफ्स, नक्शे, ग्राफ्स, रेखांकन, प्रारूप आदि सम्मिलित किये जा सकते हैं। इससे शिक्षण प्रभावी होता है, लेकिन अधिक उदाहरणों से बचना भी चाहिए।

(7) कहानी कहना (Story Telling) : कहानियों में बालकों की जन्मजात रुचि होती है, इसका लाभ अच्छे शिक्षक अपने शिक्षण में उठाते हैं। किसी भी प्रकरण को रोचकता से कहानी रूप में प्रस्तुत करना शिक्षक की व्यक्तिगत योग्यता पर निर्भर करता है। इससे विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति और तार्किक शक्ति में वृद्धि होती है, कक्षा में मनोरंजन का वातावरण रहता है और बहुत सादे ढंग से कठिन प्रकरणों को सरल और बोधगम्य बनाया जा सकता है।

(8) पुस्तक अध्ययन प्रणाली (Device of Book-reading) : यह विधि बहुत पुरानी पारम्परिक प्रणाली है जिसमें या तो छात्र (विद्यार्थी) किसी पाठ को कक्षा में खड़े होकर पढ़ता है अथवा अध्यापक स्वयं पुस्तक में से पाठ को पढ़ता है और छात्र सुनते हैं। कहीं-कहीं वह कठिन शब्दों की व्याख्या भी करता जाता है। यह पूर्णतया अस्वीकृत विधा है और इसे किसी स्तर पर भी उत्साहित नहीं किया जाता है। वैसे जो विद्यार्थी अध्यवसायी हैं, वह अपने स्तर पर भी पुस्तक पाठन से लाभ ले सकते हैं।

(9) व्याख्यान प्रणाली (Device of Lecture) : इस विधि में भी शिक्षक की ही मुख्य भूमिका रहती है। किसी विषय/उपविषय पर शिक्षक कक्षा में व्याख्यान देते हैं और विद्यार्थी उसे सुनते हैं। विद्यार्थियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे व्याख्यान के मुख्य बिन्दुओं को नोट भी करते जायें, जो व्यावहारिक नहीं होता है। उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों को इसका उपयोग लाभकारी हो सकता है, लेकिन विद्यालय स्तर पर यह उपयुक्त नहीं है। फिर भी विशेषज्ञों के व्याख्यान इसलिए पसन्द किये जाते हैं क्योंकि उनमें तथ्यात्मक और विभिन्न स्थितियों से प्राप्त किया ज्ञान एक साथ प्रस्तुत किया जा सकता है।

(10) प्रश्नोत्तर प्रणाली (Device of Questions and Answers) : यह विधि शिक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण एवं प्रमुख स्थान रखती है और परम्परागत होते हुये भी आज भी इसका प्रयोग बहुत ही आधिकारिक और सबलता से किया जाता है। स्वतन्त्र रूप से तो इस विधि का प्रयोग तो किया ही जा सकता है लेकिन हर किसी पद्धति में इस विधा से शिक्षण को रोचक, सजग और जीवन्त बनाया जा सकता है।

किसी भी उपविषय के शिक्षण में विषय-वस्तु के पूर्व परिचय (Previous Knowledge), विषय प्रवेश (Introduction), उद्देश्य वर्णन करने (Objectives : General & Specific), सामग्री को प्रस्तुत करने (Putting up of Material), पाठ का विकास करने (Developing of the Lesson), शिक्षण के मध्य में विद्यार्थी के सीखने की जानकारी (Enquiry), विद्यार्थियों में जिज्ञासा और रोचकता बनाये रखने (Maintaining Curiosity and Interest in Students), निष्कर्ष निकालने (Drawing Inferences), पुनरावलोकन करने (Recapitulation) और मूल्यांकन करने (Evaluation) में प्रश्नों का उपयोग किया जाता है। निःसन्देह इतने प्रभावी रूप में कार्य कर सकने वाली विधा (प्रश्नों) के लिए शिक्षक की योग्यता ही विधा की सफलता होती है। अतः प्रश्नों का निर्माण, पूछने का कौशल और उनसे प्राप्त उत्तरों के आधार पर नये प्रश्नों का विकास इस विधा की प्रमुखता है और आवश्यकता भी।

(11) गृह कार्य संशोधन प्रणाली (Assignment or Home Work Correction Device) : गृह कार्य किसी विद्यार्थी अथवा पूरी कक्षा के विद्यार्थियों को शिक्षक द्वारा दिया हुआ वह कार्य है जो किसी विषय-वस्तु के शिक्षण के बाद उसे पूरी तरह आत्मसात् करने के लिए अलग से दिया जाता है। वस्तुतः यह अभ्यास पर आधारित होता है और विद्यार्थी की तार्किक, बौद्धिक शक्ति के साथ लेखन शक्ति और अभिव्यक्ति कर सकने की शक्ति को मजबूत करता है। यह विषय प्रस्तुतीकरण में क्रमबद्धता (Sequence) भी उत्पन्न करता है। इस विधा में केवल लिखित कार्य ही नहीं बल्कि व्यावहारिक कार्य अथवा चित्र, डाइग्राम आदि बनाने का कार्य भी सम्मिलित किया जा सकता है।

(12) उपचारात्मक शिक्षण प्रणाली (Device of Remedial Teaching or Tutorials) : यह विधा पूरे कक्षा समूह में भी प्रयोग में लाई जा सकती है और कुछ विद्यार्थियों के समूह में भी। कठिन स्थलों अथवा व्यक्तिगत विभिन्नताओं (Individual Differences) के कारण कतिपय विद्यार्थियों को विशेष शिक्षण की आवश्यकता होती है। उस स्थिति में यह बहुत सहायक और प्रभावी विधा है। कभी-कभी इससे कई चमत्कारिक लाभ मिलते हैं, उदाहरण के लिए केवल दशमलव का ठीक से ज्ञान न होने के कारण कोई विद्यार्थी कई प्रश्न हल नहीं कर पाता, जो कमी पूरी होते ही उपलब्धि में बदल सकता है।

(13) मूल्यांकन प्रणाली (Device of Evaluation) : मूल्यांकन शिक्षण उपलब्धि का प्रमाण और मापदण्ड है। इससे यह ज्ञात हो सकता है कि विद्यार्थी ने कितना सीखा है? कहाँ पर विद्यार्थी कठिनाई

पा रहे हैं ? शिक्षक को अपनी शिक्षण पद्धति में क्या परिवर्तन करने चाहिए ? और अधिक उपलब्धि और सफलता के लिए शिक्षार्थी को किस प्रकार मार्गदर्शन देना चाहिए ? चूँकि वर्तमान में मूल्यांकन प्रणाली में अनेक नवीन आयाम जुड़े हैं, अतः विधा भी लगातार सशक्त होती जा रही है।

(14) वाद-विवाद प्रणाली (Device of Debate) : यह शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया (Teaching-Learning Process) में विद्यार्थियों को सजगता से सम्मिलित करने की उत्तम विधा है। किसी भी प्रकरण पर कक्षा को ही दो समूहों में बाँटकर चर्चा कराई जाती है। आवश्यकतानुसार शिक्षक मार्गदर्शन भी देता है और तथ्य कथन कहकर विषय को गति देता है। इससे विद्यार्थियों में पुस्तकीय ज्ञान के अतिरिक्त और विविध स्रोतों से जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा और प्रभावी रूप से प्रस्तुत करने की आकांक्षा बनी रहती है। यद्यपि यह समय व्यय करने वाली है लेकिन इस विधा से विद्यार्थियों की कई छिपी शक्तियों को उभरने का अवसर मिलता है।

(15) सिम्पोजियम प्रणाली (Device of Symposium) : यह एक विषय पर सामूहिक चर्चा की विधा है। कुछ विद्यार्थियों का एक समूह इस चर्चा में अपना मत व्यक्त करता है और उस पर शेष विद्यार्थी अपने प्रश्नों से प्रकरण पर विषद चर्चा करते हैं। यदि इस चर्चा में शिक्षक के अतिरिक्त अन्य शिक्षक अथवा कोई विषय विशेषज्ञ भी आमन्त्रित कर लिया जाये तो निश्चय ही इस प्रणाली से विद्यार्थियों को और अधिक लाभान्वित किया जा सकता है। निश्चित समय के पश्चात् उस सिम्पोजियम का प्रमुख (शिक्षक अथवा अन्य व्यक्ति) विचारों का निष्कर्ष प्रस्तुत कर प्रकरण को बन्द कर देता है।

(16) भूमिका अभिनय प्रणाली (Device of Role Play) : इस विधा में विद्यार्थी स्वयं विषय-वस्तु के पात्र बनकर अपनी बात कहते हैं और कक्षा में अन्य विद्यार्थियों को अथवा कक्षा के बाहर अन्य दर्शकों एवं श्रोताओं को विशिष्ट ज्ञान से अवगत कराके उन्हें जानकारी प्रदान करने में सहायक होते हैं। उदाहरण के लिए किसी जंगल में पशु, पक्षी, पेड़, नदी, तालाब की कहानी पर्यावरण के कई पहलुओं पर अपनी बात कहकर पर्यावरण संरक्षण की महत्ता को प्रतिपादित कर सकते हैं।

(17) मानसिक मन्थन प्रणाली (Device of Brain Storming) : इस प्रणाली में कोई भी उपविषय समूह के मध्य रखकर उसको किसी विशेषज्ञ द्वारा प्रस्तुत कर दिया जाता है। भिन्न-भिन्न व्यक्ति (विद्यार्थी) अपने-अपने प्रकार से उस पर संक्षिप्त विचार रखते हैं (यह विचार अति संक्षिप्त—केवल एक, दो या तीन वाक्यों के हों तो प्रणाली और भी प्रभावी बन जाती है)। कोई एक व्यक्ति, जो इसे संचालित करता है, अन्त में इससे निष्कर्ष निकालता है।

(18) सेमीनार विधि (Device of Seminar) : इस विधि में पहले से दिये गये विषय पर पत्र पढ़े जाते हैं। पत्र वाचन के बाद संभागी प्रश्न पूछते हैं जिनका उत्तर पत्र वाचक देता है। कई पत्रों के आधार पर कुछ निश्चित परिणामस्वरूप प्रतिवेदन तैयार किया जाता है और उससे विविध रूपा शिक्षण सम्भव है, लेकिन इस प्रकार की विधा के लिए बड़ी आयु और अधिक योग्यता के संभागी अपेक्षित हैं।

(19) गीत व खेल प्रणाली (Device of Songs and Games) : छोटी कक्षा के बच्चों के लिए यह बहुत प्रभावी विधि है। गीत गा-गा कर कोई भी बात बच्चों को अप्रत्यक्ष रूप से सिखाई जा सकती है। खेल भी इसी प्रकार आयोजित किये जा सकते हैं, जिनसे किसी भी क्षेत्र का शिक्षण सम्भव है।

(20) अभिनय प्रणाली (Device of Dramatization) : किसी विषय-वस्तु को नाटक के रूप में समेकित कर तथा उसे पात्रों द्वारा अभिनय कराकर बहुत सहजता से विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सकता है। एक प्रकार से यह प्रभावोत्पादक विधा बहुत अधिक समय तक संजोये रखने वाले ज्ञान देने की प्रणाली में से है। कठिन से कठिनतर स्थितियों को सरल करने की यह अच्छी प्रणाली है। हाँ इसकी सफलता सही रूप से प्रस्तुतीकरण पर निर्भर करती है।

(21) अभिक्रमित अध्ययन प्रणाली (Device of Programme Learning) : यह एक विशेष शिक्षण विधा है जिसमें विद्यार्थी को दिये जाने वाले ज्ञान को छोटे-छोटे पादों (Steps) में विभक्त कर उन्हें क्रम से रख दिया जाता है। पहले पद का उत्तर विद्यार्थी अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर स्वयं खोजता है और उसे प्रोग्राम में ही दिये उत्तर से मिलाकर अपनी स्थिति पर नियन्त्रण रखता है। इस उत्तर पर आधारित दूसरे पाद पर फिर विद्यार्थी हल खोजता है और यह क्रम लगातार चलता जाता है।

इस प्रोग्राम को प्रशिक्षित व्यक्ति ही तैयार कर सकते हैं। यद्यपि यह विद्यार्थी को स्वयं शिक्षण हेतु प्रेरित करता है तथापि इसकी अपनी सीमाएँ हैं। कम उपलब्धि के लिए अधिक समय व धन व्यय होता है।

(द) शिक्षण विधियाँ (Methods of Teaching)

कक्षा शिक्षण में जिन विधियों (Methods) का प्रयोग विषयानुसार, प्रकरणानुसार अथवा विद्यार्थियों के अनुसार किया जा सकता है अथवा किया जाता है, उनका वर्णन हम इन शिक्षण विधियों (Teaching Methods) में करेंगे।

(1) सुकराती विधि (Socratic Method) : यह विधि संवाद, संभाषण अथवा वार्तालाप पर आधारित है तथा प्रश्न और उत्तर से ही शिक्षण होता है। मुख्यतः इस विधि के तीन पद होते हैं–

(i) शिक्षक द्वारा प्रश्न करके किसी भी विषय/उपविषय पर शिक्षार्थी के विचार जानना,

(ii) शिक्षक द्वारा ही प्रश्न करके उसकी (शिक्षार्थी) की बातें पूर्ण अथवा आंशिक रूप से स्वीकार करना अथवा गलत सिद्ध करके उन्हें अस्वीकार करना, और

(iii) प्रश्नों के माध्यम से ही शिक्षक द्वारा शिक्षार्थी को सही बात बताकर ज्ञान दे देना।

इस विधि को बहुत अच्छी विधि नहीं माना गया है तथा अनेक बिन्दुओं पर शिक्षाविदों द्वारा इस विधि की आलोचना की गई है।

(2) प्रयोगात्मक विधि (Experimental Method) : इस विधि का आधार नये ज्ञान की खोजकर शिक्षार्थी द्वारा उसका सीखना है। शिक्षार्थी अपने शिक्षक द्वारा दिये गये निर्देशों के अनुरूप स्वयं प्रयोग करता है, अनुभव करता है और अन्तिम रूप से निकाले गये निष्कर्षों पर ज्ञान को समेकित करता है। इसे शिक्षाशास्त्री वैज्ञानिक विधि (Scientific Method) अथवा प्रयोगशाला विधि (Laboratory Method) के नाम से भी पुकारते हैं।

इस विधि के तीन मुख्य भाग होते हैं–

(i) **योजना निर्माण** (Planning) : शिक्षक और शिक्षार्थी के परस्पर निर्देश और सहयोग से योजना बनाई जाती है। लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं और कार्यविधि भी निश्चित की जाती है। साथ ही कार्य के दौरान आ सकने वाली कठिनाइयों की सम्भावना को ध्यान में रखते हुये उसका भी ध्यान पहले ही विचार-विमर्श के दौरान कर लिया जाता है।

(ii) **क्रियान्विति** (Working or Execution) : इस चरण में शिक्षार्थी द्वारा पूर्व दिशा निर्देशों के अनुरूप वास्तविक कार्य किया जाता है। अवलोकन के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। शिक्षक कठिनाइयों का निवारण भी करता है और शिक्षार्थी को सही दिशा में चलते रहने में सहयोग भी करता है।

(iii) **निष्कर्ष** (Inference) : प्राप्त जानकारी के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं, जिसे **क्रिया करके सीखना** (Learning by Doing) की संज्ञा दी जाती है।

इस विधि के कई लाभ और सीमायें हैं। जहाँ इस प्रकार का ज्ञान स्थाई और शिक्षार्थियों में रुचि वृद्धि में सहायक होता है, वहीं इसमें समय का अधिक व्यय, शिक्षक की हर पद पर आवश्यकता तथा अधिक व्यय पर कम लोगों को ज्ञान देना आदि इसकी महती कठिनाइयाँ हैं।

(3) निरीक्षण विधि (Observational Method) : यह विधि किसी वस्तु को ध्यान से देखने और उसके कार्यकलापों अथवा विभिन्न अंगों की जानकारी करने पर आधारित है। इसे **अवलोकन विधि** भी कहा जाता है। यह विधि बहुत सहज नहीं है क्योंकि शिक्षा (ज्ञान) प्राप्त करने हेतु अवलोकन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसे विशेषज्ञ ही उपयोग में ला सकते हैं। इसके अतिरिक्त यह सभी विषयों के ज्ञान हेतु भी उपयोगी नहीं है। भ्रमण (Field Trips) इसी विधि के अन्तर्गत सम्मिलित किये जा सकते हैं, जहाँ शिक्षार्थी को अवलोकन करने का व्यापक क्षेत्र मिलता है और किसी विशेष उपविषय पर ज्ञान, आँकड़े तथा विशिष्ट स्थितियों की जानकारी कर उससे ज्ञान उपलब्ध कर सकता है।

(4) आगमन विधि (Inductive Method) : यह विधि अनेक शिक्षाशास्त्रियों द्वारा 'अनेक विशिष्ट उदाहरणों की सहायता से अथवा उनके आधार पर एक व्यापक और सामान्य नियम प्राप्त करने की

प्रक्रिया' बताई गई परिभाषाओं पर आधारित है। जायस (Joyce), फाउलर (Fowler), राइबर्न (Ryburn) ने इस विधि को निम्न प्रकार परिभाषित किया है—

"'आगमन' विशेष दृष्टान्तों की सहायता से सामान्य नियमों को विधिपूर्वक प्राप्त करने की क्रिया है।"
—जायस

"'आगमन' विशेष से सामान्य अथवा कम सामान्य से अधिक सामान्य का विधियुक्त अनुमान है।"
—फाउलर

"'आगमन विधि' के पाठ में बालक निरीक्षण करता है या उसका ध्यान अनेक विशिष्ट उदाहरणों की ओर आकर्षित होता है और उन विशिष्ट उदाहरणों के आधार पर वह एक सामान्य सिद्धान्त का निर्माण कर लेता है।"
—राइबर्न

वस्तुतः यह विधि शिक्षक द्वारा किसी बात को स्वयं न बता कर विशेष उदाहरणों द्वारा शिक्षार्थियों से ही निकलवाने की विधि है। अन्य शब्दों में यह एक विकासात्मक विधि (Method of Development) है जिसमें शिक्षा के निम्न मुख्य तीन सिद्धान्तों का प्रयोग होता है—

(i) ज्ञात से अज्ञात की ओर (From Known to Unknown),
(ii) विशिष्ट से सामान्य की ओर (From Particular to General) और
(iii) स्थूल से सूक्ष्म की ओर (From Concrete to Abstract)।

आगमन विधि में चार मुख्य चरण होते हैं—

(क) उदाहरण (Examples) : एक ही प्रकार के विभिन्न उदाहरणों को समेकित कर उन्हें शिक्षार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करना।

(ख) निरीक्षण (Observation) : समस्त उदाहरणों का अवलोकन कर उनमें समानता देखना तथा उस आधार पर किसी परिणाम पर पहुँचना।

(ग) नियमीकरण (Generalisation) : शिक्षार्थियों की सहायता से ऐसे नियम अथवा सिद्धान्त का निर्माण कराना जिससे अभीष्ट सिद्ध हो सके।

(घ) परीक्षण (Verification) : कुछ अन्य उदाहरणों द्वारा प्राप्त नियम अथवा सिद्धान्त की सत्यता सिद्ध करवाना।

(5) निगमन विधि (Deductive Method) : यह विधि आगमन विधि के ठीक विपरीत है। इस विधि में कोई ज्ञात नियम अथवा सिद्धान्त शिक्षार्थियों को बता दिया जाता है और फिर अनेक उदाहरणों से उस नियम अथवा सिद्धान्त की सत्यता प्रमाणित की जाती है। निःसन्देह इसमें शिक्षा के निम्न तीन सूत्र विपरीत प्रकार से प्रयोग में आते हैं—

(i) अज्ञात से ज्ञात की ओर (From Unknown to Known),
(ii) सामान्य से विशिष्ट की ओर (From General to Particular) और
(iii) सूक्ष्म से स्थूल की ओर (From Abstract to Concrete)।

(6) सहसम्बन्ध विधि (Correlation Method) : इसे समन्वय विधि भी कहा जाता है। इस विधि में शिक्षण का आधार है—

"सम्पूर्ण ज्ञान एक अविभाज्य इकाई है। इसे अलग-अलग भागों में विभक्त नहीं किया जा सकता है। किसी भी विषय/उपविषय से शिक्षण के लिए यह आवश्यक है कि उससे सम्बन्धित अन्य विषयों के ज्ञान को भी मुख्य विषय के साथ ही समन्वित किया जाये।"

(All knowledge is an undivisible unit. It can not be seperated or divided into different parts. While teaching a subject/topic it is essential that knowledge fiom other related subjects also be correlated with the main subject.)

यह विभिन्न विषयक सह-सम्बन्ध दो प्रकार से स्वीकारा गया है—

(1) विषय के अन्तर्गत ही सह- सम्बन्ध (Correlation within the Subject)। इसे क्षैतिजाकार सह-सम्बन्ध (Horizontal Correlation) भी कहते हैं। तथा

(2) विभिन्न विषयों के मध्य सह-सम्बन्ध (Correlation between the Different Subjects)। इस सहसम्बन्ध को ऊर्ध्वाकार सहसम्बन्ध (Vertical Correlation) भी कहा जाता है।

कुछ शिक्षाविदों ने सह-सम्बन्ध विधि (Correlation Method) को अग्र प्रकार विभाजित भी किया है—

(i) **आकस्मिक सह-सम्बन्ध** (Incidental Correlation) : इस विधि में शिक्षण करते समय किसी विषय/विषयों/उपविषय के सहसम्बन्ध किये जाने की कोई पूर्व योजना नहीं होती। सामान्य स्थिति में शिक्षक अध्यापन करते समय किसी भी अन्य विषय के ज्ञान को अपने शिक्षण में जोड़ देता है और इस प्रकार अपने शिक्षण को अधिक ग्राह्य एवं रुचिकर बना देता है।

(ii) **योजनाबद्ध सहसम्बन्ध** (Systematic Correlation) : इसे व्यवस्थित सहसम्बन्ध के नाम से भी बोलते हैं। इस विधि में शिक्षक अपने शिक्षण में किन-किन विषयों अथवा अन्य ज्ञान का किस प्रकार का समायोजन करना है, इसकी योजना पहले ही बना लेता है। यह पूर्ण व्यवस्थित, आयोजित एवं क्रमबद्ध होता है।

(iii) **एकीकृत सह-सम्बन्ध** (Integrated Correlation) : यह विधि एक संघटित, समेकित तथा सर्वांगीण विधि है। किसी विषय को पढ़ाते समय उससे सम्बन्धित लगभग सभी जुड़े बिन्दुओं की अभिव्यक्ति तथा पुनरावृत्ति की जाती है जिससे शिक्षण वाले उपविषय में प्रभावोत्पादकता तथा स्थायित्व लाया जा सके।

(iv) **केन्द्रीयकरण सह-सम्बन्ध** (Concentrative Correlation) : इस विधि में किसी एक विषय को शिक्षण के केन्द्रीय विषय में चुना जाकर, अन्य अनेक विषयों को इसके इर्द-गिर्द रखा जाता है और उनसे सम्बन्ध स्थापित कर विषय ज्ञान में और अधिक उपलब्धि प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

(7) **क्रियाकलाप विधियाँ** (Activity Methods) : परम्परागत तरीकों से हटकर कुछ शिक्षाविदों ने बालकों के शिक्षण में और अधिक सरलता लाने का प्रयास किया है। उनके मतानुसार शिक्षण में विद्यार्थियों को क्रियाकलापों की सुविधा देने से उनके ज्ञान, अभिव्यक्ति, उपयोग, कौशल एवं अभिवृत्तियों में निश्चित ही शीघ्र और अधिक उपलब्धि होती है। रूसो (Rousseau : 1712-1778) को इस विचार का शिक्षा क्षेत्र में स्थापित करने वाला प्रणेता कहा जा सकता है।

क्रियाकलाप (Activity) **क्या है ?** इसको सरल तरीके से निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है—

"क्रियाकलाप कोई ऐसी चीज है जो किसी सामाजिक वातावरण में किसी उद्देश्य से की जाती है और जिसमें शारीरिक तथा मानसिक कार्य होता है।"

(Activity is anything which is carried out with a purpose in a social environment involving physical and mental action.)

इन्हीं क्रियाकलापों के अन्तर्गत कुछ शिक्षाविदों ने खेल (Play) को बालकों के सर्वांगीण विकास तथा शिक्षण-उपलब्धि के लिये महत्त्वपूर्ण भूमिका के रूप में प्रस्तुत किया है। इस विचार को शिक्षा के क्षेत्र में रखने वाला प्रथम **शिक्षाविद् कैल्डवैल कुक** (Caldwell Cook) था। उसके अनुसार—

"उसका मत था कि सीखना पढ़ने और सुनने से नहीं बल्कि काम करने से और अनुभव से आता है। बालक सर्वाधिक उसी से सीखता है जिसमें उसकी रुचि हो और जिस काम को वह करता है उसमें उसे कुछ प्रयोजन तथा सार्थकता दिखती हो।"

(He believed that learning comes not from reading and listening but from doing and experience; that the child learns best who learns with intere.t and with a purpose and sees significance in what he does.)

—Principles and Practice of Education–Indira Sharma, p. 179.

अतः **क्रियाकलापों तथा खेल-विधि पर आधारित** अनेक शिक्षण विधियाँ प्रचलित हुईं। उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है—

(i) किंडरगार्टन विधि (Kindergarten Method)

इस विधि के जन्मदाता **जर्मन शिक्षाविद् एफ० ए० फ्रोबेल** (F. A. Frobel : 1782-1852) थे। इसे Kinder (बालक) तथा Garten (उद्यान) अर्थात् 'बालोद्यान' शिक्षण पद्धति भी कहा जाता है। यह विधि अग्र 6 सिद्धान्तों पर आधारित है—

1. एकता (Unity) : प्रत्येक वस्तु प्रकट में चाहे ऊपर से अलग-अलग तथा पृथक् जान पड़ती है, लेकिन इस भिन्नता के मूल में एक अभिन्नता अथवा एकता है। फ्रोबेल के अनुसार विश्व की सभी वस्तुओं का अन्ततः मूल एक ईश्वर है। अतः ईश्वर में विश्वास उत्पन्न करना आवश्यक है।

2. विकास (Development) : बालक का विकास स्वयं उसी में निहित है। अतः शिक्षक की मूल भूमिका अनुकूल वातावरण तैयार करके बालक के विकास में सहायता होनी चाहिए।

3. स्वयं क्रिया (Self Activity) : बालक का विकास आत्मप्रेरित स्वतः क्रिया द्वारा होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि उसे उसकी रुचि और जिज्ञासा के अनुरूप कार्य करने का अवसर मिले।

4. स्वतन्त्रता (Freedom) : बालक को कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

5. समानीकरण (Socialization) : बालक पहले अपने परिवार में और फिर समाज में अपनी क्रियात्मक अभिव्यक्ति करता है। सामाजिक सम्पर्क द्वारा ही उसे भिन्नता और समानता का बोध होता है। अतः बालक को जो स्वयं क्रिया द्वारा अनुभूति होती है उसका प्रकटीकरण सामाजिकता के माध्यम से होना चाहिए।

6. खेल (Play) : इस पद्धति में बालकों के खेल ही शिक्षण का समुचित और सम्पूर्ण मूल आधार है। इसमें तीन प्रकार के उपकरण रखे गये हैं—

- **खेल-गीत** (Play Songs),
- **उपहार** (Gifts) : 20 प्रकार के विभिन्न उपहार जिनसे समस्त प्राथमिक स्तर की शिक्षा सम्भव है,
- **व्यापार या कार्य** (Occupations) : इनमें कागज, मिट्टी, लकड़ी आदि से भिन्न-भिन्न आकृति की वस्तुएँ बनवाई जाती हैं।

इस विधि में खेल, आनन्द और स्वतन्त्रता का वातावरण है। न तो बालक को डाँटा जाता है और न फटकारा जाता है। न ही कोई पुस्तक पढ़ने-पढ़ाने का प्रावधान है। बालक स्वयं स्वतः क्रिया द्वारा सीखता है।

(ii) मॉण्टेसरी विधि (Montessori Method)

इस विधि की जन्मदाता **इटली की डॉ० मेरिया मॉण्टेसरी** (Dr. Maria Montessori) थी, जिसने बच्चों को (विशेषकर 3 से 7 वर्ष तक आयु वर्ग तक के) विशेष प्रकार की शिक्षा देने का मार्ग प्रशस्त किया और विश्व के शिक्षा क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान बनाया। इस प्रणाली के मुख्य सिद्धान्त निम्न हैं—

1. स्वयं विकास का सिद्धान्त (Principle of Self-development) : बालक स्वयं एक शरीर है जो बढ़ता है और एक आत्मा है जो विकसित होती है (Child is a body which grows and a soul which develops.)। विकास के इन दोनों रूपों की सुरक्षा कर इन्हें प्राकृतिक रूप से बढ़ने देना चाहिए।

2. स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom) : बालक को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए कि वह किसी भी प्रकार की क्रिया (Activity) चुने और उस पर किसी भी प्रकार से और जब तक चाहे कार्य करे। इसी से बालक का स्वतन्त्र विकास सम्भव है।

3. ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण का सिद्धान्त (Principle of Sense-training) : श्रीमती मॉण्टेसरी के अनुसार बालक की ज्ञानेन्द्रियाँ ही सीखे हुए ज्ञान को मस्तिष्क तक ले जाती हैं (Senses are the gateways of knowledge which carry the experiences to mind.)। अतः ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है।

4. माँसपेशियों के प्रशिक्षण का सिद्धान्त (Principle of Muscular Training) : मॉण्टेसरी के अनुसार ज्ञानेन्द्रियों के साथ-साथ माँसपेशियों का प्रशिक्षण भी आवश्यक है। अर्थात् बालक के शरीर की स्वस्थता तथा विभिन्न अंगों की कार्यक्षमता में वृद्धि होनी चाहिए। इसके लिए उन्हें पर्याप्त खेलने-कूदने के अवसर मिलने चाहिए।

5. स्वयं-शिक्षा का सिद्धान्त (Principle of Auto-education) : श्रीमती मॉण्टेसरी ने स्वयं-शिक्षा को बहुत अधिक महत्त्व दिया है। उनके अनुसार बालकों को बिना शिक्षक की सहायता के स्वयं ही सब कुछ सीखना चाहिए। उन्होंने इस प्रकार के कुछ शैक्षिक उपकरणों (Educational Didactic

Apparatus) का निर्माण भी किया है जो बालकों की भूलें स्वयं ही उन्हें बता देते हैं। इस प्रकार की स्वयं-शिक्षा से बालकों में आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता बढ़ती है। मॉण्टेसरी के अनुसार स्वयं-शिक्षा ही वास्तविक शिक्षा है (Auto Education is the Real Education.)।

6. व्यक्तित्व के विकास का सिद्धान्त (Principle of Development of Individuality) : बालक के व्यक्तित्व के विकास में किसी भी स्तर पर कोई अवरोधन नहीं होना चाहिए। स्वयं कार्य करने पर असफल हो जाने पर फिर से कार्य करने की जिज्ञासा तथा सफलता पाने पर आत्मविश्वास में वृद्धि बालक के व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं। इसे विकसित होने देना चाहिए।

7. खेल-तरीके का सिद्धान्त (Principle of Play-way) : बालकों में खेलने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, अतः इस प्रवृत्ति का लाभ बालकों की शिक्षा के लिए भी किया जाना चाहिए। श्रीमती मॉण्टेसरी ने ऐसे उपकरण तैयार किये हैं जिनसे बालक खेलते-खेलते ही स्वयं अनेक बातें सीख सकते हैं।

8. सामुदायिक प्रशिक्षण का सिद्धान्त (Principle of Community Training) : बालक परस्पर एक-दूसरे के साथ रहकर अनजाने ही कुछ बातें सीख लेते हैं, जो उनके साथियों में निकटता ला देती हैं। यही गुण कालान्तर में सामाजिक गुणों में परिवर्तित होते हैं। अतः बालकों को साथ-साथ रहने, खाने, खेलने और परस्पर व्यवहार करने के अवसर प्रदान करने चाहिए।

मॉण्टेसरी पद्धति में बालकों के लिए कोई बँधा अथवा निश्चित पाठ्यक्रम नहीं है, पर फिर भी इसमें तीन बिन्दुओं पर बल दिया गया है–

- कर्मेन्द्रियों की शिक्षा (Education for Motor Abilities),
- ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा (Sensory Education) और
- पढ़ने, लिखने व गणित की शिक्षा (Education for 3 R'S)।

(iii) डाल्टन प्लान विधि (Dalton's Plan Method)

इस विधि के निर्माण का श्रेय **अमेरिकन शिक्षाशास्त्री कुमारी हेलेन पार्खर्स्ट** (Km. Helen Parkhurst) को जाता है जिन्होंने मॉण्टेसरी पद्धति को आधार मानकर बड़े बालकों (9 वर्ष से अधिक) के लिए एक ऐसी विधि प्रदान की जिसमें बच्चों को निश्चित समय में निश्चित कार्य (Definite Work in Definite Time Period) करना होता है। बालक यहाँ पर भी स्वतन्त्र होता है और शिक्षण के साथ-साथ उसे अपने व्यक्तित्व विकास के पूर्ण अवसर प्राप्त हैं। चूँकि इस विधि में कोई कक्षा-कक्ष का प्रावधान नहीं है, अतः इसे प्रयोगशाला योजना (Laboratory Plan) भी कहा जाता है।

इस विधि की निम्न मुख्य विशेषताएँ हैं–

1. यह वास्तव में कोई शिक्षण विधि नहीं है बल्कि किसी बालक को कराये जाने वाले कार्य को व्यवस्थित करने का तरीका है (This is, in actual not a method of teaching but is a method of organising of the total work of the student.)। किसी भी सत्रीय कार्य की पूरी रूपरेखा बनाकर (Job) उसे मासिक (Monthly Contracts) और फिर साप्ताहिक (Weekly Assignments) में विभाजित कर दिया जाता है। बालक एक के बाद एक भाग को पूरा करके आगे बढ़ता जाता है।

2. इसमें सामूहिक शिक्षण के बजाय वैयक्तिक शिक्षण पर बल दिया जाता है (It lays emphasis on individual teaching rather than group or class teaching.)।

3. इस विधि में कक्षा–कक्षों का प्रावधान नहीं है। इसके विपरीत विषय प्रयोगशालाएँ होती हैं जिनमें बालक अपना–अपना कार्य करते हैं (There is no provision of class-rooms in this method. Instead it has subject laboratories where students do thier work differently.)।

4. इस पद्धति में बालकों के कार्य का अभिलेख सुव्यवस्थित रूप से रखा जाता है (Well organised record of students' work is maintained in this method.)।

5. बच्चों की कठिनाइयों को दूर करने हेतु विषय विशेषज्ञों के साथ सामूहिक विचार–विमर्श किया जाता है (Group discussions, in the presence of subject experts, are arranged for removing the students difficulties.)।

6. इस विधि में न तो कोई परीक्षा होती है और न ही कोई गृह कार्य ही दिया जाता है (This method neither conducts examinations nor assigns any home work.)।

7. इस विधि में न तो कोई असफल होता है और न ही अवरोधन और अपव्यय का भय है (There is neither any failure in this method nor has a fear of wastage & stagnation.)।

8. इस विधि में कोई समय विभाजन चक्र भी नहीं होता। छात्र स्वतन्त्र होते हैं (There is no time table in this method. Students are free.)।

'डाल्टन प्लान' (Dalton's Plan) के सिद्धान्तों को निम्न प्रकार से समेकित किया जा सकता है—

1. बालक की श्रेष्ठता का सिद्धान्त (Principle of Child's Predominance),
2. व्यक्तिगत कार्य का सिद्धान्त (Principle of Individual's Work),
3. रुचि का सिद्धान्त (Principle of Interest),
4. चरित्र निर्माण का सिद्धान्त (Principle of Character Building),
5. स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom),
6. सहयोग भावना का सिद्धान्त (Principle of Co-operative Feelings),
7. स्व-अनुशासन का सिद्धान्त (Principle of Self-discipline),
8. स्व-शिक्षा का सिद्धान्त (Principle of Self-education),
9. सामाजिक सम्बन्धों का सिद्धान्त (Principle of Social Relationship) और
10. उत्तरदायित्व उठाने का सिद्धान्त (Principle of Wearing Responsibility)।

यह विधि निश्चित रूप से सभी स्तर के बालकों के लिए उपयोगी है। साथ ही विद्यालय की अनेक समस्याएँ जैसे—(1) भगोड़ापन (Truancy), (2) अपराध प्रवृत्ति (Delinquency), (3) पिछड़ापन (Backwardness), (4) कामचोर (Shirkers) आदि से छुटकारा भी मिलता है।

(iv) प्रोजेक्ट विधि (Project Method)

इस विधि के जन्मदाता **अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय के शिक्षाशास्त्री डब्ल्यू० एच० किलपैट्रिक** (W. H. Kilpatrick) को माना जाता है। शिक्षा दार्शनिक जॉन डीवी (John Dewey) ने अपनी प्रयोजनवादी विचारधारा (Pragmatic Philosophy) में 'व्यावहारिक जीवन में काम आ सकने वाली बातें ही सत्य हैं', से इस विधि को आधार दिया। जिसे किलपैट्रिक ने अपनी विधि में बालक को उद्देश्यपूर्ण क्रिया से शिक्षा (Education with the purposeful activity) के रूप में परिवर्तित कर दिया।

प्रोजेक्ट (Project) को अनेक विद्वानों ने निम्न प्रकार परिभाषित किया है—

1. "प्रोजेक्ट एक सोद्देश्य क्रिया है जिसे मन लगाकर सामाजिक वातावरण में किया जाये।"

(A project is a whole hearted purposeful activity proceeding in a social environment.)

—W. H. Kilpatrick

2. "प्रोजेक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जिसे स्वाभाविक परिस्थिति में पूरा किया जाये।"

(Project is a problematic act carried to completion in its natural setting.)

—Stevenson

3. "प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन का भाग है जिसे विद्यालय में प्रयोग किया जाता है।"

(A Project is a bit of real life that has been imparted into the school.)

—An Educationist

इस प्रकार प्रोजेक्ट विधि सीधे ही कोई शिक्षण विधि न होकर विद्यालय में शिक्षण प्रक्रिया के अन्तर्गत किसी कार्य (Project) को सम्पन्न करने की एक दिशा (Approach) है। चूँकि यह कार्य ही बालक के ज्ञानार्जन का प्रमुख उद्देश्य है, अतः इसे उपर्युक्त नाम दिया गया है।

(क) प्रोजेक्ट पद्धति की कार्य प्रणाली (Working Process of Project Method)

इसके निम्न मुख्य अंग क्रमानुसार हैं—

1. परिस्थिति उत्पन्न अथवा प्रदान करना (Providing or Creating the Situation) : अध्यापकों को प्रोजेक्ट चुनने के लिए बालकों के सम्मुख ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करनी चाहिए जिनमें बालकों की रुचि हो। यह बालकों की आयु, उनकी योग्यता और क्षमताओं पर भी आधारित होनी चाहिए।

2. प्रोजेक्ट का चुनाव (Choosing of the Project) : प्रोजेक्ट का चुनाव बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसी चयन पर समस्त प्रोजेक्ट की क्रियान्विति, सफलता-असफलता और बालक की सन्तुष्टि निर्भर करती है। यह चयन जहाँ एक ओर उद्देश्य व लक्ष्य पूर्ति परक होना चाहिए, वहीं यह विद्यार्थी की आवश्यकता की पूर्ति करने वाला भी होना चाहिए।

3. प्रोजेक्ट की योजना बनाना (Planning of the Project) : प्रोजेक्ट के चुन लेने के बाद और बहुत महत्त्वपूर्ण बिन्दु है—प्रोजेक्ट की योजना तैयार करना। प्रोजेक्ट में क्या करना है ? किन-किन चीजों की और आवश्यकता हो सकती है ? कौन-कौन सी कठिनाइयाँ कार्य के दौरान आ सकती हैं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है ? और कार्य के विभिन्न पदों की क्रमबद्धता क्या रहेगी ? आदि को पहले ही विचार कर कार्य पद्धति तैयार की जानी चाहिए। अच्छी योजना से प्रोजेक्ट के अपेक्षित एवं सही परिणाम सम्भव हैं।

4. प्रोजेक्ट की क्रियान्विति (Execution of the Project) : प्रोजेक्ट पहले बनाये गये **ब्ल्यू प्रिण्ट** के अनुसार विद्यार्थियों के सहयोग से चलाया जाता है और उसे सभी विद्यार्थियों के सहयोग से पूरा कराया जाता है। शिक्षक मार्गदर्शक के रूप में रहता है। त्रुटियों की ओर ध्यान आकर्षित कर शिक्षक सही मार्ग भी बताता है। आवश्यकता पड़ने पर योजना में परिवर्तन भी किया जा सकता है। विद्यार्थी अपने कार्य के आधार पर समस्त परिणामों के आँकड़े एकत्रित करते हैं।

5. प्रोजेक्ट का मूल्यांकन (Evaluation of the Project) : प्रोजेक्ट की समाप्ति के बाद विद्यार्थी स्वयं समस्त कार्य का वृहद मूल्यांकन करते हैं। वह यह देखते हैं कि प्रोजेक्ट से उनके निर्धारित लक्ष्य और उद्देश्य पूर्ण हुए हैं या नहीं। त्रुटियाँ, जहाँ भी हुई हों, उनका विवरण रखते हैं। सही परिणामों का पुनरावलोकन कर उन्हें अपने ज्ञान-कोष में स्थान देते हैं। शिक्षक इस स्तर पर सफलता-असफलता का मूल्यांकन कर विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धियाँ बताते हैं।

6. प्रोजेक्ट का लिखना (Recording the Project) : प्रोजेक्ट निर्माण से लेकर मूल्याकन तक का सभी विवरण विद्यार्थियों द्वारा लिखा जाता है, जिससे उन द्वारा किये गये कार्य को कभी भी देखा जा सके। यहाँ त्रुटियों को भी लिखा जाना चाहिए जिससे आगे उनकी पुनरावृत्ति न हो। भविष्य के लिए यदि कोई विशेष टिप्पणियाँ काम में आने वाली दिखती हों तो उनका भी उल्लेख यहाँ कर दिया जाना उचित है।

(ख) प्रोजेक्ट विधि जिन सिद्धान्तों पर आधारित है, उन्हें निम्न रूप में समेकित किया जा सकता है—

1. सोद्देश्य अथवा प्रयोजन का सिद्धान्त (Principle of Purpose),
2. क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of Activity),
3. वास्तविकता का सिद्धान्त (Principle of Reality),
4. उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility),
5. अनुभव का सिद्धान्त (Principle of Experience),
6. स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom),
7. मितव्ययता का सिद्धान्त (Principle of Economy),
8. सामाजिकता का सिद्धान्त (Principle of Sociability),
9. समन्वय का सिद्धान्त (Principle of Correlation)।

(ग) प्रोजेक्ट विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Project Method)

इसके कारण इस विधि को काफी मान्यता मिली है, निम्न हैं—

1. यह सीखने (Learning) के तीनों नियमों पर आधारित है—

   (i) तत्परता का नियम, (ii) अभ्यास का नियम तथा (iii) परिणाम का नियम।

   (It is based on all three laws of learning–

   (i) Law of Readiness, (ii) Law of Exercise and (iii) Law of Effect) |

2. यह बालक के जीवन से सम्बन्धित है (It is related to child's life.)|

3. यह प्रजातन्त्रवादी भावना के विकास में सहायक है (It helps in development of democratic feelings.)।
4. यह विधि श्रम के प्रति निष्ठा और सभी कार्यों के प्रति आदर भावना उत्पन्न करती है (This method creates a sense of dignity of labour and respect for all types of work.)।
5. यह विधि विद्यार्थियों में परस्पर सहयोग और सहनशीलता की भावना का विकास करती है (This method develops co-operation and sense of tolerance among the students.)।
6. यह विधि सामाजिक गुणों का निर्माण करती है (This method inculcates the social qualities.)।
7. यह विधि बालकों में आत्म–निर्भरता लाती है और चरित्र निर्माण में सहायक है (This method brings self reliance in children and helps in character building.)।
8. यह विधि पूर्णतया वैज्ञानिक है; अतः विद्यार्थियों में सोचने और तर्क करने की क्षमता पैदा करती है (This method is purety scientific; hence creates the power of thinking and capacity of reasoning.)।
9. यह विधि मितव्ययी है (This method is economical.)।
10. यह बालकों की वैयक्तिक विभिन्नता की समस्या को दूर करती है (It expels the problem of individual difference in the students.)।

प्रोजेक्ट विधि निःसन्देह विद्यार्थियों में आत्म-विश्वास बढ़ाती है, हीन भावना को दूर करती है और जिज्ञासा की पूर्ति कार्यक्षमता में वृद्धि तथा कुछ कर सकने की इच्छा को शक्ति देती है।

(v) समस्या निवारण विधि (Problem Solving Method)

यह विधि एक शैक्षिक प्रणाली है जिसके द्वारा शिक्षक तथा छात्र किसी महत्त्वपूर्ण शैक्षिक कठिनाई के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए सचेत होकर पूर्ण संलग्नता से प्रयास करते हैं। समस्या निवारण पद्धति छात्रों को स्वयं सीखने के लिए तत्पर बनाती है।

शिक्षाशास्त्री गुड (Good) के अनुसार—

(i) "एक ऐसी शिक्षण विधा जिसमें चुनौतीपूर्ण स्थितियों को उत्पन्न कर, जिनका हल आवश्यक हो, उन्हें सिखाने को प्रोत्साहित किया जाता हो।"

(A method of instruction by which learning is stimulated by the creation of challenging situations that demands solution.)

(ii) "एक विशिष्ट विधा जिसके द्वारा एक बड़ी समस्या का समाधान सम्बन्धित अनेक छोटी समस्याओं के समाधान की सहायता से किया जाता हो।"

(A specific procedure by which a major problem is solved through the combined solutions of a number of smaller related problems.)

इसी प्रकार एक अन्य शिक्षाशास्त्री 'योकन' और 'सिम्पसन' (Yoakan and Simpson) ने इस विधि के लिए लिखा है—

"किसी स्थिति में एक समस्या उत्पन्न होती है जिसमें कठिनाई निवारण की आवश्यकता महसूस होती है।"

(A problem occurs in a situation in which a felt difficulty to act is realised.)

(अ) समस्या समाधान विधि के क्रमानुसार विभिन्न पद निम्नलिखित हैं—

1. समस्या की पहचान करना (Recognising or Identifying the Difficulty or Problem),
2. समस्या को प्रस्तुत करना (Stating or Defining the Problem),
3. समस्या पर क्रियान्विति (Attacking the Problem),
   (i) आंकड़ों का संकलन (Collection of Data),
   (ii) आंकड़ों का वर्गीकरण एवं व्यवस्था (Classification and Organisation of Data),
   (iii) आंकड़ों का विश्लेषण (Analysis of Data)।

4. निष्कर्ष निकालना (Drawing the Conclusions),
5. परिणामों की सत्यता की जाँच करना (Verifying the Conclusions) और
6. परिणामों का उपयोग करना (Implementing the Conclusions)।

(ब) 'समस्या समाधान विधि' और 'प्रोजेक्ट विधि' में अनेक समानताएँ हैं, लेकिन कुछ ऐसी अपवाद- स्वरूप विभिन्नताएँ हैं जिनसे दोनों विधाओं में भारी अन्तर स्पष्ट दिखता है।

"समस्या समाधान विधि' और 'प्रोजेक्ट विधि' में अन्तर इस आधार पर है कि समस्या समाधान विधि विशेषत: एक मानसिक क्रिया और तार्किक सोच पर निर्भर है।"

(The 'Problem Solving Method' differs from 'Project Method' on the basis that the former method is characterised chiefly by mental activity and by critical thinking.)

(स) समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method) की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. यह विधा बालकों को समस्या समाधान करने को तैयार करती है, अतः वह जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु भी प्रशिक्षित हो जाते हैं (This method prepares the students in problem solving, hence they are trained for solving also life problems.)।

2. यह विधि बालकों में सोचने, तर्क करने और कल्पना शक्ति को बढ़ाने में प्रोत्साहन देती है (This method encourages thinking, reasoning and imagination.)।

3. यह विधि बालकों में स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की आदत डालती है (This method inculcates the habit of doing work independently in the students.)।

4. यह विधि निर्धारित कार्य करते समय ऐसे अनेक तथ्यों और जानकारी दे देती है जिनसे अन्य कोई समस्या के समाधान में सहयोग मिल सके (This method while doing work imparts such many facts and information which might help in solving other problems.)।

5. यह विधा अनेक अन्य प्रकार की जानकारी को समस्या समाधान में समन्वय कराने में सहायक है (This method correlates many different information in problem solving.)।

6. समस्या समाधान किये जाने पर बालक अपने आप में सन्तुष्टि तथा आत्म गौरव महसूस करता है (On completing the problem solving student feels in himself satisfaction and self proud.)।

7. इस विधा से बालकों में समस्या समाधान के लिए रुचि की वृद्धि होती है (This method increases interest in students for problem solving.)।

8. इस विधा से बालकों के अपने विचारों में दृढ़ता आती है (This method strengthens in inculcating own views in the students.)।

9. इस विधा से बालकों में प्राप्त किये गये परिणामों को अभिव्यक्त करने की कला का विकास होता है (This method develops the art of expressing or interpreting the received results in the students.)।

10. इस विधा से प्राप्त ज्ञान प्रभावी और स्थाई होता है (This method makes the learning effective and permanent.)।

(vi) ह्यूरिस्टिक विधि (Heuristic Method)

यह विधि **प्रोफेसर आर्मस्ट्रांग (Prof. Armstrong)** द्वारा दी गई हैं जिसमें 'ह्यूरिस्को' (Heurisco) का अर्थ है 'मैं खोजता हूँ' (I discover) के नाम का उपयोग किया गया है। इसी आधार पर इसका 'ह्यूरिस्टिक विधि' नाम दिया गया है। इस विधि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह बालक को अन्वेषक की दशा में रखती है। बालक प्रत्येक बात की खोज करता चलता है और इस खोज से प्राप्त परिणामों पर नये सिद्धान्त अथवा नियम को प्रस्तुत करता है।

(क) ह्यूरिस्टिक विधि के निम्न सिद्धान्त हैं—

1. स्व-शिक्षा या स्व-अनुभव का सिद्धान्त (Principle of Self-study or Self-experience),
2. क्रियाशीलता या करके सीखने का सिद्धान्त (Principle of Activity or Learning by Doing),
3. प्रेरणा का सिद्धान्त (Principle of Motivation),
4. रुचि का सिद्धान्त (Principle of Interest) और
5. स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom)।

(ख) ह्यूरिस्टिक विधि की विशेषताएँ निम्न प्रकार समेकित की जा सकती हैं—

1. यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुसार हैं क्योंकि इससे—(i) जिज्ञासा, (ii) वस्तुनिष्ठता, (iii) साहस, (iv) धैर्य, (v) कठोर परिश्रम, (vi) मितव्ययता, (vii) रचनात्मक कल्पना जैसे गुणों का विकास होता है (This method is based on psychological principles because it develops traits like—(i) Curiosity, (ii) Objectivity, (iii) Courage, (iv) Patience, (v) Hard Labour, (vi) Parimony, (vii) Creative Imagination etc.)।

2. बालक तथ्यों की स्वयं खोज करते हैं, इसलिए वह सुगमता से याद हो जाते हैं (Children discovers the facts themselves, that is why these are easily remembered.)।

3. इस विधि में प्रत्येक बालक का शिक्षक से अत्यन्त निकट का सम्पर्क हो जाता है, अतः व्यक्तिगत कठिनाइयों का निवारण सम्भव है (A very close rapport between the child and the teacher comes up in this method, as such solution of individual difficulties is possible.)।

4. इस विधा में गृह कार्य की कोई समस्या नहीं रहती है (There is no problem of home work in this method.)।

5. यह विधा बालकों में अधिक परिश्रम करने की क्षमता पैदा करती है और व्यर्थ समय व्यतीत करने की आदत को दूर करती है (This method creates the capacity of doing hard work in the students and dispels the habit of wasting time unnecessarily.)।

6. इस विधि में बालकों में आत्मनिर्भरता की भावना का विकास होता है (This method develops the spirit of self-dependence in the students.)।

(vii) विनेटिका प्लान (Winnetka Plan)

इस विधि का निर्माण **अमेरिका निवासी डॉ० कार्लटन वाशवर्न** (Dr. Carleton Washburn) ने सन् 1919 में क़िया क्योंकि इस योजना का प्रारम्भ अमेरिका स्थित इलीनायस (Illinois, U.S.A.) राज्य के विनेटिका (Winnetka) नामक नगर में किया गया था, इसीलिए इसका नाम 'विनेटिका प्लान' पड़ा। इस विधि में बालक के व्यक्तित्व को प्रधानता दी गई है और विद्यालय का कार्यक्रम बालकों के व्यक्तिगत भेदों के अनुसार ही बनाया जाता है।

(क) विनेटिका प्लान विधि के दो मुख्य सिद्धान्त हैं—

1. बालक की क्षमताओं, योग्यताओं और व्यक्तिगत भेदों का सिद्धान्त (Principle of Child's Capacities, Abilities and Individual Differences.)।

2. बालकों के सामाजिक वातावरण का सिद्धान्त (Principle of Child's Social Environment.)।

(ख) इस विधि की कार्य-प्रणाली में निम्न पद सम्मिलित किये गये हैं—

1. शिक्षण सामग्री का कार्य-इकाई के रूप में विभाजन (Division of Teaching Material into Assignment-units),

2. निदानात्मक जाँच (Diagnostic Tests),

3. स्व-अध्ययन व स्वतः संशोधन की सामग्री का प्रयोग (Use of Self-study and Self-correction Material)।

(ग) विनेटिका प्लान की विशेषतायें इस प्रकार हैं—

1. इस विधि में व्यक्तिगत भेदों का पूरा ध्यान रखा जाता है (Full attention on individual differences is kept in this method.)।

2. विद्यार्थियों की निदानात्मक जाँच से उनकी त्रुटियों और कमियों का पता चल जाता है (Errors and short-comings of the students are known by diagnostic testing.)।

3. बालक अपनी गति के अनुसार कार्य कर सकता है (Child can do work according to his speed.)।

4. बालकों को स्वतः अध्ययन का अवसर मिलता है (Students get opportunity of self study.)।

5. बालकों के अनुत्तीर्ण होने का कोई प्रावधान नहीं है (There is no provision of failure of the students.)।

6. समय विभाग चक्र अत्यन्त लचीला और छात्र आवश्यकतानुसार होता है (Time-table is extremely flexible and is according to the needs of the students.)।

(viii) अन्य विधियाँ (Other Methods)

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त कुछ और विधियाँ भी अनेक शिक्षाशास्त्रियों ने प्रस्तुत की हैं जिनका कमोवेश लक्ष्य व उद्देश्य भिन्न-भिन्न हैं। उनके केवल नाम ही यहाँ दे रहे हैं। जिन पाठकों की इनमें अधिक रुचि हो, वह पुस्तकालय से विवरण प्राप्त कर सकते हैं—

1. मैकमन की शिक्षण पद्धति (MacMunn's Teaching Method),
2. निरीक्षित स्वाध्याय प्रणाली (Observed Self-study Method),
3. मेसन प्रणाली (Masson's Method),
4. गेरी योजना (Gary's Plan),
5. डैक्रोली पद्धति (Decroly Method),
6. स्प्रिंग फील्ड योजना (Springfield Plan),
7. क्रियाशील विद्यालय (Activity Schools),
8. प्रगतिशील विद्यालय (Progressive Schools),
9. अभिक्रमित अध्ययन विधि (Method of Programmed Learning) और
10. बुनियादी शिक्षा पद्धति (Method of Basic Education)।

• शिक्षण-सहायक सामग्री (Teaching Aids)

शिक्षक का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य शिक्षार्थी को सिखाना है। चूँकि यह कार्य बहुत आसान नहीं है अतः शिक्षक अपने शिक्षण में विविध एवं विभिन्न शिक्षण के सिद्धान्त, शिक्षण पद्धतियों और विधियों का सहारा लेता है। **शिक्षण-सहायक सामग्री** (Teaching Aids) भी इस कार्य हेतु उत्तम साधन हैं जिससे एक ओर शिक्षार्थी सरलता और सहजता से सीख लेते हैं, वहीं दूसरी ओर शिक्षक का शिक्षण भी प्रभावी बन जाता है। अतः संक्षिप्त में यदि हम यह कहें कि **'शिक्षण सामग्री वह साधन है जिनसे शिक्षार्थी का सीखना अत्यन्त सहज हो जाता है'** (Teaching Aids are the means which help learning students easily.) तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

सहायक सामग्री को सुविधा की दृष्टि से निम्न भागों में विभाजित किया गया है—

1. दृश्य सामग्री (Visual Aids): वह सामग्री जो देखने वाली होती है, जैसे—चार्ट्स, मैप्स, ब्लैक बोर्ड, स्लाइड्स, मॉडल्स आदि।

2. श्रव्य सामग्री (Audio Aids): वह सामग्री जो सुनने से प्रयोग में आती हो, जैसे—टेपरिकॉर्डर, रेडियो आदि।

3. दृश्य-श्रव्य सामग्री (Audio-visual Aids): जो देखने और सुनने दोनों प्रकार से उपयोग में ली जा सकती हो। जैसे—चलचित्र, टीवी आदि।

इन सहायक सामग्री के उपयोग की उपादेयता के लिए अनेक शिक्षाविदों ने अपने महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं—

"श्रव्य-दृश्य सामग्री सीखने वाले व्यक्तियों को घटनाओं, वस्तुओं और कारण तथा प्रभाव सम्बन्धों के नियोजित अनुभवों से लाभ उठाने का अवसर देते हैं।"

(Audio-visual Aids give learners the opportunity to benefit from vicarious experiences with people, events, objects and cause-effect relationship.) **—Crow and Crow**

"श्रव्य-दृश्य विधियाँ एवं वस्तुएँ भावपूर्ण सीखने, प्रबल छात्र-रुचि और उत्साह तथा विद्यालय में सफलता के लिए अति लाभदायक आधार है।"

(Audio-visual methods and materials serve as a very fruitful basis of learning high pupil interest and enthusiasm and success in schools.) **—Witich and Schuller**

"शिक्षा योजना की आधारशिला अपना अध्यापन है। श्रव्य-दृश्य प्रशिक्षण सामग्री इस आधारशिला का अभिन्न अंग है।"

(Good Instruction is the foundation of any educational programme. Audio-visual training aids are a component part of that foundation.) **—Francis W. Noel**

(क) शिक्षण-सहायक सामग्री की आवश्यकता एवं महत्त्व (Need and Importance of Teaching Aids)

यद्यपि शिक्षण सामग्री की आवश्यकता का थोड़ा-सा विवरण इस प्रकरण के प्रारम्भ में ही दिया है, तथापि इनसे वह लाभ, जिस कारण इनका महत्त्व बहुत बढ़ गया है, यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. विद्यार्थियों को भूलने की सामान्य आदत होती है; सहायक सामग्री की सहायता से दिये गये ज्ञान को और अधिक समय तक याद रखा जा सकता है (Students have the general tendency of forgetting; teaching aids can help retain the imparted knowledge for a longer period.)।

2. अनेक तथ्य और जानकारी इस प्रकार की होती है जिसे शिक्षक द्वारा ठीक से अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है; शिक्षण सामग्री इसमें मदद करती है (Several facts and knowledge are of the type which can not be expressed by the teacher exactly; teaching aids help in it.)।

3. सहायक सामग्री शिक्षण को रुचिपूर्ण बना देती है; शिक्षार्थी सीखने में आनन्द लेते हैं (Teaching aids make the teaching interesting; students take interest in learning.)।

4. शिक्षण सामग्री समय बचाती है (Teaching aids save time.)।

5. शिक्षण सामग्री किसी भी स्थिति की सही स्थिति विद्यार्थियों को देती है (Teaching aids provide correct impression of any situation to the students.)।

6. शिक्षण सामग्री बहुत दूर की वस्तुओं को विद्यार्थी के निकट ला देती है और उन पर जीवन्त प्रभाव छोड़ती है (Teaching aids brings far distant objects nearer to the students and leave impressions vivid to them.)।

7. शिक्षण सामग्री शिक्षण और सीखने दोनों को अधिक प्रभावी बना देती है (Teaching aids makes more effective both learning and teaching.)।

(ख) विभिन्न प्रकार की शिक्षण-सहायक सामग्री (Various Types of Teaching-Aids)

[स्थानाभाव के कारण हम यहाँ सभी प्रकार की शिक्षण सामग्री की सूची ही दे रहे हैं, जो सामान्यतया पाठकों की जानकारी में भी हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण सामग्री का विवरण अन्त में दिया है।]

1. ब्लैक बोर्ड (Black Board or Chalk Board),
2. बुलैटिन बोर्ड (Bulletin Board),
3. फ्लेनिल बोर्ड (Flannel Board),
4. चित्र (Pictures or Photographs),
5. चार्ट्स (Charts),
6. नक्शे (Maps),
7. आरेख (Diagram),
8. लेखाचित्र (Graphs),
9. पोस्टर्स (Posters),
10. कार्टून्स (Cartons),
11. नमूने (Specimens),
12. प्रतिकृतियाँ (Models),
13. स्लाइड्स (Slides),
14. मैजिक लैन्टर्न (Magic Lantern),
15. एपीडास्कोप या चित्र विस्तारक यन्त्र (Epidiascope),
16. ग्रामोफोन (Gramophone),
17. रेडियो (Radio),
18. फिल्म स्ट्रिप्स (Film Strips),
19. प्रोजेक्टर (Projector),
20. टेलीविजन (Television),
21. टेपरिकॉर्डर (Tape Recorder),
22. वी० सी० आर० (V. C. R.),
23. पाठ्य-पुस्तकें (Text Books),
24. समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ और (Newspapers, Magazines and Journals),
25. भ्रमण (Field Trips or Excursions) आदि।

- **भ्रमण (Field Trips)**

विद्यार्थी स्वभावतः घूमने-फिरने में दिलचस्पी रखते हैं। विद्यालय में अथवा बाहर जहाँ भी और जब भी उन्हें समय मिलता है, वे घूमते ही रहते हैं। पर यह घूमना-फिरना निष्प्रयोजित है, क्योंकि इससे उन्हें

कोई लाभ नहीं मिलता है। इसके विपरीत यदि शिक्षक इस बालक-प्रवृत्ति की योजना बनाये तथा विद्यार्थियों को विशेष उद्देश्य से बाहर ले जाये तो वे समय का सदुपयोग भी कर सकते हैं और विद्यार्थियों को वह ज्ञान भी दे सकते हैं जो सामान्यतया कक्षा-कक्ष में सम्भव नहीं। इस रूप में हम इसे शैक्षिक भ्रमण (Educational Tour) भी कह सकते हैं।

(क) शैक्षिक भ्रमण की उपादेयता (Utility of Field Trip)

हम संक्षिप्त में निम्न बिन्दुओं के रूप में शैक्षिक भ्रमण की उपादेयता प्रस्तुत कर सकते हैं—

1. यह विद्यार्थियों की घूमने-फिरने की इच्छा की संतुष्टि करती हैं (They satisfy the roaming tendency of the children.)।

2. विद्यार्थी अपने आस-पास के वातावरण से भलीभाँति परिचित हो जाते हैं (Students become very much familiar with the nearby environment.)।

3. भ्रमण विद्यार्थियों के सीखने में रुचि बढ़ाते हैं (Field Trips create interest in learning to the students.)।

4. भ्रमण विद्यार्थियों को स्वयं परस्पर तथा शिक्षक के करीब ला देते हैं (Field trips brings nearer the students themselves and also with the teacher.)।

5. भ्रमण से प्राप्त अनुभव सही, प्रामाणिक तथा वास्तविक स्थिति के होते हैं (Experiences gathered from field trips are correct, authentic and of real situations.)।

6. भ्रमण विद्यार्थियों की अनेक जिज्ञासाओं की सन्तुष्टि करते हैं और सोचने और तर्क करने की शक्ति बढ़ाते हैं (Field trips satisfy the various curiosities of the children and increase the reasoning and thinking power.)।

7. भ्रमण विद्यार्थियों को कक्षा-कक्ष की परिधि से निकाल बाहरी वास्तविक स्थिति से परिचित कराते हैं (Field trips take out the students from the periphery of the class-rooms and make them aquainted with the real situations.)।

(ख) भ्रमण का आयोजन कैसे करें ? (How to Conduct the Field Trips ?)

भ्रमण किसी विशेष उद्देश्य से विद्यार्थियों को वास्तविक ज्ञान देने के लिए ही किया जाता है तब इसका आयोजन बहुत सरल नहीं है। इसके तीन मुख्य भाग हो सकते हैं—

1. पूर्व व्यवस्था (Pre-Planning) : इसमें,

(i) भ्रमण का उद्देश्य,
(ii) स्थान का चयन,
(iii) कक्षा व विद्यार्थियों का चयन,
(iv) शैक्षिक प्रशासन तथा विद्यार्थियों के अभिभावकों से स्वीकृति,
(v) विद्यार्थियों को ले जाने वाले सामान की सूची,
(vi) वाहन व्यवस्था,
(vii) ठहरने का स्थान,
(viii) भोजन व्यवस्था,
(ix) लिखने की सामग्री,
(x) फोटो कैमरा,
(xi) गाइड की व्यवस्था,
(xii) देखने वाले स्थान की सक्षम अधिकारी से स्वीकृति

इसके साथ ही विद्यार्थियों को पहले ही भ्रमण क्यों ? कहाँ ? और कैसे ? की जानकारी दी जानी चाहिए तथा साथ ही यह भी बताना चाहिए कि भ्रमण में वह क्या देखें ? क्या नोट करें ? कहाँ पूछें ? और कब पूछें ? इससे उनमें भ्रमण के प्रति सजगता भी बनी रहेगी और अनुशासन भी।

2. वास्तविक भ्रमण (Actual Field Trip) : इस स्थिति में शिक्षक को यात्रा के दौरान वह सब बातें बताते रहना चाहिए जो सामान्यतया विद्यार्थी की जिज्ञासाएँ होती हैं, यहाँ छात्र-अनुशासन बनाये रखना बहुत आवश्यक है क्योंकि इससे विद्यालय को गौरव मिलता है। यदि स्थानीय विशेषज्ञ की सेवाएँ आसानी से उपलब्ध हो जायें तो उसका लाभ अवश्य उठाना चाहिए। पूरे भ्रमण में रोचकता बनी रहे, इसका भी ध्यान रखना उचित है।

3. भ्रमण से वापसी (Return from the Field Trip) : यहाँ पर भ्रमण पर से किये गये अनुभव, लिए गये नोट्स, मन में आ रही जिज्ञासाओं पर समेकित रूप से विचार-विमर्श करना चाहिए। इस बात का मूल्यांकन करना चाहिए कि शैक्षिक भ्रमण के लिए निर्धारित लक्ष्य और उद्देश्यों की पूर्ति कितनी हुई ?

भ्रमण से यद्यपि समय, शक्ति और धन तीनों पर अधिक व्यय होता है पर सीखने और सिखाने के लिए यह बहुत ही प्रभावी विधा है और इसी कारण आज भी इसे हर स्तर पर प्रयोग में लाया जाता है।

• पाठ योजना (Lesson Planning)

शिक्षण के सन्दर्भ में हमने बहुत ही विस्तृत रूप से इसके लगभग सभी पहलुओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जिनमें (1) शिक्षण क्या है ? (2) अच्छे शिक्षण के मानदण्ड, (3) शिक्षण पद्धतियाँ, (4) शिक्षण सूत्र, (5) शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त, (6) शिक्षण विधियाँ और (7) शिक्षण सामग्री मुख्य रूप से सम्मिलित हैं। लेकिन विद्यालय की किसी भी स्तर की अपेक्षित स्थितियाँ, शिक्षक की शैक्षिक योग्यता तथा उसकी शिक्षण विधा में परिपक्वता, आवश्यक सामग्री आदि सभी मिलकर किसी विशेष अथवा सामान्य पाठ को शिक्षार्थियों के लिए रोचक और ग्राह्य नहीं बना सकती है। किसी भी कक्षा के किसी भी विषय के एक पाठ का कक्षा में प्रस्तुतीकरण करने से पूर्व उसकी तैयारी आवश्यक है। इसे ही पाठ योजना (Lesson Planning) कहते हैं।

Bossing[1] के अनुसार—

"'पाठ योजना' किसी उद्देश्य कथन की उपलब्धि के लिए तथा उन विशिष्ट साधन जिनसे यह प्राप्त हो सके, के लिए दिया गया वह नाम है जो शिक्षक के निर्देशन में किसी क्रिया-प्रक्रिया के फलस्वरूप प्राप्त होता है।"

('Lesson Plan' is the title given to a statement of the achievements to be realised and the specific means by which these are to be attained as a result of the activities engaged in day by day under the guidance of the teacher.)

Lester B. Sinds[2] कहते हैं—

"'पाठ योजना' वास्तव में एक 'क्रिया-योजना' है। अतः इसमें शिक्षक की कार्य पद्धति, उसके कार्य के बारे में जानकारी, उसके अपने विद्यार्थियों के तथा उनके समझ के बारे में जानकारी, शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में उसकी समझ, शिक्षण सामग्री के बारे में उसकी योग्यता और उसकी प्रभावी शिक्षण विधि को प्रयोग करने की क्षमता सम्मिलित है।"

(A 'Lesson Plan' is actually a plan of action. It, therefore includes the working philosophy of the teacher, her knowledge of philosophy, her information about and understanding for her pupils, her comprehension of the objectives of education, her knowledge of the material to be taught and her ability to utilize effective methods.)

L. B. Stand[3] के मतानुसार—

"'पाठ योजना' एक शिक्षक द्वारा कक्षा-कक्ष में काम में ली गई 'क्रिया-योजना' है।"

(A 'Lesson Plan' is a 'plan of action' implemented by a teacher in classroom.)

इस प्रकार पाठ योजना शिक्षक के किसी भी कालांश के शिक्षण की ऐसी तैयारी है जिससे वह बहुत ही विश्वास के साथ विद्यार्थियों के मध्य प्रवेश करता है और उन्हें पूर्व में ही सोचे ही ज्ञान को आत्मसात् कराने का सफल प्रयास करता है। पाठ योजना (Lesson Planning) के मुख्य कार्य एवं सिद्धान्त निम्न हैं—

(क) पाठ योजना के मुख्य कार्य (Important Functions of Lesson Planning)

1. यह शिक्षक को शिक्षण सामग्री को चुनने में सहायता करती है।
   (It helps the teacher in selection of teaching material.)
2. यह आवश्यक रूप से शिक्षण विधि का पूर्व निर्धारण करती है।
   (It essentially predecides the teaching method.)

---

1. Mujibul Hussain Siddiqui, Teaching of Economics : Chapter-15 : Lesson Planning in Economics [Ashish Publishing House, New Delhi (India), 1993], p. 281.
2. Mujibul Hussain Siddiqui, Ibid.
3. Seema Yadava, Teaching of Home Science : Chapter-13 : Lesson Planning [Anmol Publications Pvt. Ltd. New Delhi (India), 1994], p. 173.

3. यह शिक्षण की सीमाएँ बाँधता है और अनचाहे भटकाव को रोकती है।
   (It delimits the teaching and prevents unjust going from the track.)
4. यह शिक्षण को प्रभावी बनाती है।
   (It makes the teaching effective.)
5. इससे विद्यार्थियों को कम समय में अधिक ज्ञान दिया जा सकता है।
   (It may give more knowledge in less time to the students.)
6. यह शिक्षक में आत्मविश्वास बढ़ाती है और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।
   (It increases self confidence in the teacher and inspires to go ahead.)
7. यह विद्यार्थियों में सीखने के प्रति रुचि उत्पन्न करती है।
   (It creates interest in the students towards learning.)
8. यह शिक्षण में अनावश्यक पुनरावृत्ति को रोकती है।
   (It avoids needless repetition in teaching.)
9. यह शिक्षण में क्रमबद्धता बनाये रखती है।
   (It helps in maintaining sequence in teaching.)
10. यह उचित शिक्षण सामग्री के उपयोग को आश्वस्त करती है।
   (It ensures the proper use of teaching aids.)

(ख) पाठ योजना के सिद्धान्त (Principles of Lesson Planning)

एक अच्छी पाठ योजना जिन सिद्धान्तों पर आधारित होती है वह निम्न प्रकार हैं—

1. शिक्षण उप–विषय का चुनाव विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान पर आधारित होना चाहिए।
   (Selection of the teaching topic should be based on the students' previous knowledge.)
2. पाठ योजना में शिक्षण उद्देश्य बहुत ही स्पष्ट और वस्तुनिष्ठ होने चाहिए।
   (Lesson Plan should have very clear and objective teaching objectives.)
3. पाठ योजना लचीली और शिक्षार्थियों की रुचि, आवश्यकता और मानसिक योग्यता के अनुकूल होनी चाहिए।
   (Lesson Plan should be flexible and according to the interests, need and mental ability of the students.)
4. पाठ योजना में उचित एवं यथेष्ट शिक्षण सामग्री का समावेश होना चाहिए।
   (Lesson Plan should include appropriate and sufficient teaching material.)
5. पाठ योजना में शिक्षण विधि का चुनाव बहुत सोचकर करना चाहिए।
   (Selection of teaching method in a lesson plan should be made after a careful thought.)
6. पाठ योजना में विद्यार्थियों का संभागित्व होना चाहिए।
   (Lesson Plan should have the students' participation.)
7. पाठ योजना में विद्यार्थियों की कठिनाइयों के समाधान का प्रावधान होना चाहिए।
   (Lesson Plan should have provision of solving the students' difficulties.)
8. पाठ योजना में सिखाये गये ज्ञान को जाँचने की व्यवस्था भी होनी चाहिए।
   (Lesson Plan should also have a provision of examining the teaching knowledge.)

(ग) पाठ योजना तैयार करने की विधि (Method of Preparation of a Lesson Plan)

पाठ योजना निर्माण को अत्यन्त वैज्ञानिक, निश्चित और व्यवस्थित रूप देने का श्रेय शिक्षा जगत के महान विचारक **हरबर्ट** (Herbart) को जाता है जिन्होंने बताया कि किसी भी ज्ञान को विद्यार्थियों तक पहुँचाने में निम्न प्रक्रियाओं का होना आवश्यक है—

1. स्पष्टता (Clearness) : इससे आशय यह है कि विद्यार्थियों के समक्ष पाठ्य-वस्तु स्पष्ट रूप से प्रस्तुत की जाये।

2. सम्बन्ध या सहयोग (Association) : इस पद से तात्पर्य है कि विद्यार्थियों को जो भी नवीन ज्ञान दिया जाये उसे उसके पूर्व ज्ञान से जोड़ा जाये।

3. प्रणाली अथवा व्यवस्था (System) : इस पद से तात्पर्य है कि विद्यार्थी को जो भी पाठ्य-वस्तु प्रस्तुत की जाये वह पूर्ण व्यवस्थित हो।

4. व्यावहारिक प्रयोग (Method) : इससे आशय है कि विद्यार्थी जो भी ज्ञान अर्जित करे उसको उनके व्यावहारिक जीवन में करने का अवसर दिया जाये।

इन गुणों के आधार पर बाद में पाँच पदों को अन्तिम रूप दिया गया जिन्हें आज भी **हरबर्ट की पंच पद प्रणाली** (Five Formal Steps of Herbart) के नाम से जाना जाता है और व्यापक रूप से इनका ही प्रयोग शिक्षण में किया जाता है। यह हैं—

1. प्रस्तावना (Preparation) : इसके अनुसार शिक्षक द्वारा वह प्रक्रिया अपनाई जाती है जिससे विद्यार्थी को पूर्व ज्ञान के आधार पर उसे नवीन ज्ञान ग्रहण करने के लिए तैयार किया जा सके। अतः शिक्षक को प्रथम तो विद्यार्थी के पूर्व ज्ञान की जानकारी करनी है और फिर उस ज्ञान को क्रमबद्ध तरीके से इस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे विद्यार्थी रुचि लेकर शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ जायें। अब शिक्षक को नये ज्ञान को इस ज्ञान से सम्बन्धित करना होता है।

2. प्रस्तुतीकरण (Presentation) : इस पद में शिक्षक द्वारा नवीन ज्ञान विद्यार्थियों को दिया जाता है। वह इसके लिए शिक्षण विधि, सहायक सामग्री, प्रस्तुतीकरण विधा आदि सभी पूर्व में निश्चित कर लेता है। यदि शिक्षण सामग्री अधिक है तो उसका छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजन कर उसका प्रस्तुतीकरण भी इस पद के अन्तर्गत आता है।

3. तुलना और सहयोग (Comparison and Association) : शिक्षक नवीन ज्ञान को देने के लिए वर्तमान पाठ के तथ्यों की तुलना तथा सहसम्बन्ध (सम्बन्ध) पूर्व ज्ञान के तथ्यों से स्थापित करता है। इससे नवीन ज्ञान सहज ही विद्यार्थियों की समझ में भी आता है और आत्मसात् होकर काफी समय तक याद भी रहता है।

4. सामान्यीकरण (Generalization) : उपयुक्त पदों के माध्यम से किये गये शिक्षण से बालक किसी निष्कर्ष अथवा परिणाम पर पहुँचता है तो इन निष्कर्षों के आधार पर शिक्षक अनेक स्थितियाँ प्रस्तुत कर बालकों से सामान्य नियम निकलवाता है। अतः यह पद शिक्षण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है।

5. प्रयोग (Application) : हरबर्ट की पंचपद प्रणाली का यह अन्तिम तथा सबसे महत्त्वपूर्ण पद है जिसमें नवीन ज्ञान को स्थायित्व देने के लिए उसे नवीन परिस्थितियों में परखा जाता है, उपयोग किया जाता है। यहाँ यदि कोई विभिन्नता पाई जाती है तो कहीं प्रारम्भ में कोई कमी तो नहीं रह गई है, इसकी जानकारी हो जाती है अथवा यह ज्ञान सत्य और चिरस्थाई हो जाता है।

वर्तमान में सभी स्तर की शिक्षण-प्रशिक्षण-संस्थाओं में इस 'हरबर्ट पंचपद प्रणाली' का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। चूँकि यह प्रणाली पूर्ण वैज्ञानिक है और शिक्षण के आधारभूत सिद्धान्तों पर आधारित है, अतः स्कूली शिक्षा के लगभग सभी विषयों का शिक्षण इस प्रणाली से किया जाना सम्भव है।

(घ) पाठ योजना के मुख्य घटक (Chief Components of a Lesson Plan)

जिस सूचना का समावेश किसी पाठ योजना में किया जाता है तथा जिन पदों से शिक्षण किया जाता है, वह सभी घटक यहाँ समेकित रूप से दिये जा रहे हैं—

(i) सूचना भाग (Information Part) :

1. स्कूल का नाम (Name of School),
2. तिथि या दिनांक (Date),
3. कक्षा व विभाग (Class and Section),
4. कालांश (Period),
5. छात्र संख्या (Number of Students),
6. विषय (Subject),
7. उपविषय (Topic), और
8. कालांश की समयावधि (Duration of Period)।

(ii) शिक्षण भाग (Teaching Part) :

1. सामान्य उद्देश्य (General Aims),
2. विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims),
3. पूर्व ज्ञान (Previous Knowledge),
4. विषय प्रवेश (Introduction),
5. उद्देश्य कथन (Statement of the Topic),
6. सहायक सामग्री (Teaching Aids),
7. प्रस्तुतीकरण (Presentation),
8. पुनरावृत्ति (Recapitulation),
9. मूल्यांकन (Evaluation), और
10. गृह कार्य (Home Assignment)।

आंदर्श पाठ योजना
(MODEL LESSON PLAN)
राजकीय सीनियर सेकण्डरी स्कूल, आदर्श नगर, जयपुर

दिनांक–20 अप्रैल, 1996   **कालांश**–चतुर्थ
कक्षा–11   **समयावधि**–40 मिनट
विषय–पर्यावरण   **छात्र संख्या**–30
उपविषय–विश्वतापन

1. सामान्य उद्देश्य (General Aim).

1. सूर्य से पृथ्वी पर पहुँचने वाली किरणों के बारे में स्पष्ट जानकारी कराना।
2. इन किरणों से पृथ्वी पर होने वाले जलवायु परिवर्तन की जानकारी कराना।
3. मनुष्य पर (प्राणी जगत् पर) इन किरणों से पड़ने वाले प्रभाव की जानकारी कराना।

2. विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims)

सूर्य की किरणों से पृथ्वी पर होने वाले तापमान परिवर्तन की जानकारी कराना।

3. पूर्व ज्ञान (Previous Knowledge)

बालक निम्न ज्ञान से परिचित हैं–

1. सूर्य की किरणें पृथ्वी पर पहुँचती हैं तथा वह उसे प्रकाश भी देती हैं और गर्मी भी प्रदान करती हैं।
2. सूर्य की गर्मी से ही जल स्रोतों से पानी वाष्प में परिवर्तित होकर वायुमण्डल में जाता है तथा फिर वह जलवाष्प आर्द्रता पाकर वर्षा के रूप में पृथ्वी पर गिरती है।
3. सूर्य के प्रकाश में वनस्पति फोटोसिन्थेसिस प्रक्रिया से वायुमण्डल की कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करती हैं और ऑक्सीजन का निष्क्रमण होता है।
4. पृथ्वी के वायुमण्डल में अनेक गैसों में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा लगभग 0·04% है।

4. विषय प्रवेश (Introduction)

अध्यापक द्वारा छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया गया कथन : सूर्य की किरणें जब पृथ्वी की ओर आती हैं तब उसे वायुमण्डल में से गुजरना होता है। किरणों का कुछ भाग (2%) पृथ्वी द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। शेष 98% भाग परावर्तित होकर पुनः वायुमण्डल में पहुँचता है और वहाँ कार्बन डाइऑक्साइड गैस द्वारा इसका कुछ भाग निचली सतह पर रोक लिया जाता है। इसका प्रभाव वायुमण्डल के तापमान पर पड़ता है और उसमें वृद्धि होती है।

5. उद्देश्य कथन (Statement of the Topic)

अध्यापक द्वारा छात्रों से पूछा गया प्रश्न : सूर्य की परावर्तित किरणों के कुछ अंश का कार्बन डाइऑक्साइड द्वारा अवशोषित करने के सिद्धान्त को क्या कहते हैं तथा इसका पृथ्वी पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

अध्यापक द्वारा कथन : इसे ग्रीन हाउस प्रभाव (Greenhouse Effect) कहते हैं और इससे विश्वतापन (Global Warming) होता है।

6. सहायक सामग्री (Teaching Aids)

चार्ट्स।

7. प्रस्तुतीकरण (Presentation)

बोध प्रश्न/अध्यापक कथन (Knowledge Question/Teacher's Statements)	विद्यार्थियों के उत्तर/श्यामपट सारांश (Students' Responses/Black Board Summary)
अध्यापक द्वारा पूछे गये प्रश्न	
1. सूर्य की किरणों को पृथ्वी की सतह पर पहुँचने तक कहाँ से गुजरना होता है ?	**वायुमण्डल में से होकर सूर्य की किरणें गुजरती हैं।**
2. जब सूर्य की किरणें पृथ्वी से टकराती हैं तो क्या होता है ?	**केवल 2 प्रतिशत भाग पृथ्वी की सतह पर रह जाता है।**

अध्यापक कथन—

इस 2% में से ½ प्रतिशत भाग पृथ्वी अवशोषित कर लेती है जिससे पृथ्वी पर गर्मी होती है और प्रकाश होता है। 1½ प्रतिशत भाग फोटोसिन्थेसिस प्रक्रिया में काम आता है।

अध्यापक द्वारा पूछे गये प्रश्न

3. सूर्य की शेष किरणों का क्या होता है ?

यह किरणें परावर्तित होकर पुनः वायुमण्डल में से होकर वापस लौटती हैं।

4. वायुमण्डल में मुख्य गैसें कौन-सी हैं ? और सूर्य की किरणों से कौन-सी गैस प्रभावित होती है ?

वायुमण्डल में मुख्य गैसें ऑक्सीजन (20·95%), नाइट्रोजन (78·0%), कार्बन डाइऑक्साइड (0·04%), नीओन, क्रिप्टोन, आर्गन-हीलियम, आदि (1·0% से भी कम) होती हैं।

5. कार्बन डाइऑक्साइड द्वारा सूर्य की किरणों के अवशोषित करने पर वायुमण्डल में क्या प्रभाव होता है ?

कार्बन डाइऑक्साइड में सूर्य की किरणों से उत्पन्न ताप को अवशोषित करने की क्षमता है। इससे तापमान में वृद्धि हो जाती है। इससे पूरी पृथ्वी का तापमान बदलने लगता है।

अध्यापक कथन—

1. इस प्रक्रिया को ग्रीन हाउस प्रभाव (Greenhouse Effect) कहते हैं; इससे विश्वतापन (Global Warming) होता है। अधिक ताप बढ़ जाने पर ध्रुवों पर की बर्फ का पिघलना सम्भव है जिससे समुद्र के जल की सतह की ऊँचाई में वृद्धि हो सकती है और पृथ्वी के अनेक निचले भाग जलमग्न हो सकते हैं।

2. अधिक कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा से अधिक विश्वतापन होगा, अतः कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को कम करने के उपाय किये जाने चाहिए। वृक्षारोपण एक सरल, सहज और निश्चित उपाय है।

3. कार्बन डाइऑक्साइड की प्रतिशत मात्रा सन् 1850 में 260 ppm (0·026%) मापी गई थी। सन् 1940 में 300 ppm (0·03%) और सन् 1990 में 340 ppm (0·034%) तथा सन् 2002 में लगभग 400 ppm (0·04%) आंकी गई है। आगे और अधिक बढ़ने की सम्भावना है। यदि कोई उपाय नहीं किये गये तो सन् 2050 तक 600 ppm (0·06%) तक हो सकती है जो जन-जीवन के लिए अत्यन्त शोचनीय स्थिति ला सकती है।

4. ppm का अर्थ part per million होता है। 10 लाख में से एक भाग को 1 ppm कहेंगे।

5. कुछ अन्य गैसें, जैसे—मीथेन, जलवाष्प, नाइट्रस ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरोकार्बन भी 'ग्रीन हाउस प्रभाव' के कारण बनते हैं।

● अध्यापक कथनों को भी श्यामपट पर लिखना है।

8. पुनरावृत्ति (Recapitulation)

1. वायुमण्डल की कौनसी गैस 'ग्रीन हाउस प्रभाव' का मुख्य कारण है ?
2. और कौन-कौन सी गैसें अथवा पदार्थ 'ग्रीन हाउस प्रभाव' बनाती हैं ?

3. 'ग्रीन हाउस प्रभाव' से क्या होता है ?
4. 'ग्रीन हाउस प्रभाव' को कैसे कम किया जा सकता है ?
5. पृथ्वी के अधिक गर्म हो जाने पर क्या आशंकाएँ सम्भव हैं ?

9. मूल्यांकन (Evaluation)

ग्रीन हाउस प्रभाव (Greenhouse Effect) तथा विश्व तापन (Global Warming) पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

10. गृह कार्य (Home Assignment)

उपर्युक्त-प्रकार।

[पाठ योजना (Lesson Plan) को लिखने का तरीका अलग-अलग हो सकता है पर उसमें उपर्युक्त पदों को आगे-पीछे सभी को सम्मिलित किया जाता है।]

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. एक अध्यापक के आवश्यक गुणों का उल्लेख करिये।
2. पर्यावरण के क्षेत्र में किसी उपविषय पर एक पाठ योजना 40 मिनट की अवधि की बनाइये।
3. शिक्षण में 'सह सम्बन्ध विधि' (Correlation Method) के बारे में विस्तार से बताइये।
4. 'समस्या समाधान विधि' और 'प्रोजेक्ट विधि' में समानताएँ और असमानताओं को स्पष्ट करिये।
5. किसी 'भ्रमण' को कैसे आयोजित करोगे ? उसके मुख्य पदों का विस्तार से विवेचन करिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. शिक्षण में प्रयोगशाला विधि के मुख्य चरण बताइये।
7. शिक्षण में व्याख्या (Explanation) और व्याख्यान (Lecture) विधि में क्या मूलभूत अन्तर होता है ?
8. हरबर्ट की पंच पद प्रणाली में 5 पद कौन-कौन से हैं ?
9. विभिन्न प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री के (कोई दस) नाम बताइये।
10. ह्यूरिस्टिक विधि किन-किन सिद्धान्तों पर आधारित है ? केवल पदों का उल्लेख कीजिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. 'भ्रमण' (Field Trip) निम्न विधि का उदाहरण है—
    (अ) प्रयोगशाला विधि (ब) सुकराती विधि
    (स) निरीक्षण विधि (द) आगमन विधि
12. 'सामान्य से विशिष्ट की ओर' किस शिक्षण विधि में अपनाई जाती है ?
    (अ) आगमन विधि (ब) निगमन विधि
    (स) सह सम्बन्ध विधि (द) क्रियाकलाप विधि
13. कुमारी हेलेन पार्खर्स्ट ने निम्न विधि का निर्माण किया था—
    (अ) किन्डरगार्टन विधि (ब) डाल्टन प्लान विधि
    (स) मोण्टेसरी विधि (द) प्रोजेक्ट विधि
14. हरित गृह गैसें (Greenhouse Gases) की सूची में निम्न में से कौन-सी गैस नहीं है ?
    (अ) कार्बन डाइऑक्साइड (ब) क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स
    (स) ऐसीटिलीन (द) मीथेन
15. निम्न में से कौनसा विकल्प शिक्षण प्रक्रिया का अंग नहीं है ?
    (अ) शिक्षक (ब) शिक्षार्थी
    (स) कक्षा-कक्ष (द) शिक्षण विधि

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

16. 'किन्डनगार्टन विधि' को.................विधि से भी जाना जाता है ?
17. 'मोण्टेसरी विधि' के जन्मदाता.................थे।
18. पढ़ने (Reading), लिखने (Writing) और गणित (Arithmetic) को संक्षिप्त में.................से व्यक्त करते हैं।
19. शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के लिये सीखने का कार्य.................कहलाता है।
20. शिक्षण को विद्यार्थियों की रुचि के अनुकूल बनाना.................का कार्य है।

35

पर्यावरण खेल, गीत, गतिविधियाँ और प्रतियोगिताओं का आयोजन

[ORGANISATION OF ENVIRONMENTAL GAMES, SONGS, ACTIVITIES AND COMPETITIONS]

● प्रस्तावना (Introduction)

पर्यावरण शिक्षा का वास्तविक स्वरूप क्या हो ? इस पर लोगों के मतों में विभिन्नता है। कुछ इस बात को मानते हैं कि इसे अलग विषय के रूप में ही पढ़ाया जाये जिससे एक निश्चित जानकारी आयु तथा शिक्षा स्तर के अनुरूप विद्यार्थी समुदाय को दी जा सके। एक वर्ग की मान्यता है कि सामान्य शिक्षा में विभिन्न विषयों के शिक्षण के साथ ही पर्यावरण पक्ष का समावेश हो, लेकिन यह तो औपचारिक शिक्षा की बात है। स्कूल के सामान्य कार्यक्रम के अतिरिक्त अथवा स्कूल में न आने वाले युवा वर्ग के लिए पर्यावरण शिक्षा का देने का तरीका क्या हो ? यह विचारणीय प्रश्न है। अतः पर्यावरण खेल, गीत, गतिविधियाँ और विविध प्रतियोगिताओं का आयोजन कुछ ऐसे कार्यक्रम हैं जिनकी सहायता से अनौपचारिक रूप से भी पर्यावरण शिक्षा दी जा सकती है।

आज प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी स्तर का हो, वह अपने ही सुख-दुख में इतना डूबा हुआ है कि वह अपने पड़ौस तक की परवाह नहीं करता है। उसका दायरा अधिक-से-अधिक उसका अपना परिवार है। वह यह भूल जाता है कि उसके उत्तरदायित्वहीन कार्य से अनेक लोगों को हानि हो सकती है और उस सबका अन्ततः यह प्रभाव होता है कि वह भूल प्रदेश और राष्ट्रीय चिन्ता का कारण बनती है। पर्यावरण विकृति आखिर कुछ लोगों के गलत कार्य करने का ही तो परिणाम है, जिसके लिए पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है।

आइये हम इन बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा करें—

● पर्यावरणीय खेल (Environmental Games)

'खेल' को शिक्षा में शिक्षाशास्त्रियों ने इस रूप में महत्त्व दिया है कि, (1) यह **स्वास्थ्य** अच्छा रखता है और इससे बीमारियों से बचने की क्षमता आ जाती है, (2) यह **मानसिक सन्तुलन** बनाता है और काल्पनिक एवं तार्किक शक्ति का विकास करता है, (3) यह **संवेगों में नियन्त्रण** की क्षमता पैदा करता है तथा कायरता, लज्जाशीलता और चिड़चिड़ेपन को दूर करता है और (4) यह **सामाजिक गुणों** का विकास करता है जिससे परस्पर सहयोग, अनुशासन, उत्तरदायित्व और दूसरों की सहायता जैसे गुणों में वृद्धि होती है। संक्षिप्त में यों कहें कि 'खेल' व्यक्ति के उन गुणों को बढ़ाता है जिससे उसका व्यक्तित्व बनता है।

लेकिन 'खेल' को सीधे शिक्षा से अथवा विषय शिक्षण से जोड़ा गया हो ऐसा प्रचलन नहीं है और न ही इस ओर अधिक प्रयास हुये हैं। एक सहगामी प्रवृत्ति के रूप में विद्यालयों में भी इसे इस रूप में स्वीकार किया गया है जिससे शिक्षा का मानसिक बोझ विद्यार्थी पर अधिक न पड़े। इसके विपरीत यह आंका गया है कि बुद्धिजीवी, तार्किक, चिन्तक और स्वस्थ लोग खेलों में अधिक रुचि लेते हैं और उनमें अच्छी सफलता प्राप्त करते हैं।

पर्यावरण के क्षेत्र में 'खेलों' का प्रयोग पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद (गुजरात) ने किया है, जो सम्भवतः प्रथम और मौलिक है। खेल द्वारा बालक-बालिकाओं को पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण सन्तुलन और प्राकृतिक विरासत की महत्ता जैसे कठिन प्रत्ययों को सहजता से समझाने का प्रयास किया है। इस सन्दर्भ में उन्होंने एक प्रकाशन भी किया है जिसमें पर्यावरणीय सिद्धान्तों को प्रतिपादित करने के लिए खेल सुझाये हैं। एक खेल का उदाहरण यहाँ इस क्रम में दिया जा रहा है—

- **खेल का नाम (Name of the Play)** : जीवन का जाल (Web of Life)
- **मुख्य उद्देश्य (Main Objectives)** :
  1. प्रकृति के विभिन्न रूपों में अन्तर्सम्बन्ध स्थापित करना (To Inter-relate the various aspects of nature.)
  2. 'जीवन के जाल' के प्रत्यय को प्रत्यक्ष दिखाना (To visually communicate the concept of the 'Web of Life'.)
- **स्थान (Place)** : कहीं भी; बड़े कमरे, हॉल अथवा मैदान में (Any where; In Big Room, Hall or Outdoor Field)
- **सामग्री (Material)** : (1) एक डोरी का गोला और (2) नाम के टिकट [(1) A Ball of String and (2) Name Tags]
- **सम्भागियों/खिलाड़ियों की संख्या (Number of Participants or Players)** : कितनी भी; 20 से 50 तक (Any number; from twenty to fifty)
- **वास्तविक खेल (Actual Play)** :

प्रकृति के अनेक प्रत्ययों अथवा मिलने वाली वस्तुओं के नामों के टैग्स बना लें, जैसे—

1. सूर्य (Sun),
2. वायु (Air),
3. पानी (Water),
4. मिट्टी (Soil),
5. वृक्ष (Tree),
6. फल (Fruit),
7. पक्षी (Bird),
8. शैवाल (Algae),
9. मछली (Fish),
10. गिद्ध (Eagle),
11. कछुआ (Turtle),
12. कीड़ा (Insect),
13. मेढक (Frog),
14. मच्छर (Mosquito),
15. छिपकली (Lizard),
16. पत्ती (Leaf),
17. फूल (Flower),
18. तितली (Butterfly),
19. चींटी (Ant),
20. विद्यार्थी (Student),
21. घास (Grass),
22. टूटी पत्ती (Dead Leaf),
23. केंचुआ (Earth Worm),
24. खाद (Humus),
25. झाड़ी (Shrub),
26. बीज (Seed),
27. फफूँदी (Fungus),
28. घोंघा (Snall),
29. बन्दर (Monkey),
30. मकड़ी (Spider),
31. सांप (Snake),
32. नेवला (Mongose),
33. राम चिरैया (King Fisher),
34. धोबी (Washerman),
35. लकड़हारा (Woodcutter),
36. भैंस (Buffalo),
37. शहद (Honey),
38. शहद की मक्खी (Honeybee),
39. गिलहरी (Squirrel),
40. काई (Moss),
41. टिड्डा (Grass hopper),
42. प्लास्टिक बैग (Plastic Bag),
43. खराब लकड़ी (Dead Wood),
44. कागज (Paper),
45. मगर (Crocodile)।

इन 'नाम टैगों' को खिलाड़ियों को दे दें। वे इन्हें अपने सीने पर पिन से इस प्रकार लगा लेंगे कि वह दूर से ही दिखें। यदि 'नाम टैग' बड़े हों तो यह और भी अच्छा रहता है।

अब खेल प्रारम्भ होता है। एक बालक (सूर्य) अपने हाथ में धागे का गोला लेता है और उस खिलाड़ी के पास फेंकता है जो सूर्य से सम्बन्धित हो सकता है, जैसे—'वृक्ष'। 'वृक्ष' उस गोले की डोरी को अपनी अंगुली में लपेटकर उस खिलाड़ी के पास गोला फेंकता है जो 'वृक्ष' से सम्बन्धित है, जैसे—'फल'। और यह क्रम चलता है जब तक कि इसे आगे फेंकना सम्भव न हो। यह खेल यह बताता है कि प्रकृति में अनेक वस्तुएँ एक-दूसरे से किस प्रकार जुड़ी हैं और सब मिलकर सन्तुलित हैं। अब किसी एक खिलाड़ी को कहें कि वह डोरी छोड़ दे। आप देखेंगे कि सारा जाल बिखर जाता है अर्थात् किसी एक वस्तु की कमी से पूरा प्रकृति-चक्र बिखर जाता है।

[सेन्टर ऑफ एनवायरनमेण्ट एजूकेशन, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित 'एप्रोचैज टू एनवायरनमेण्टल एजूकेशन इन स्कूल्स : सम वर्किंग पेपर्स' से साभार]

इसी प्रकार अन्य खेल भी हो सकते हैं लेकिन वर्तमान में इस क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं है। छोटी आयु के बच्चों को पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं को सरलता से समझाने हेतु 'खेलों' का निर्माण आवश्यक है और साथ ही यह आवश्यक है कि परम्परागत रूप से चलन में आ रहे 'खेलों' को भी पर्यावरणीय पक्षों से जोड़ें और उन पर नये-नये शोध करें।

• पर्यावरणीय गीत
(Environmental Songs)

कविता, गीत अथवा गजल चाहे वह किसी भी रूप में हो उनकी सबकी एक ही कहानी है और वह है सरलता और सहजता से किसी भी बात को श्रोताओं तक पहुँचाना। प्राचीन काल में छन्दों की भाषा का ही प्रचलन था, अतः दोहा, सोरठा, सवैया, कुण्डलियाँ, चौपाई और अन्य कई प्रकार के कवित्त कठोरता से मात्राओं से जुड़े थे, लेकिन बहुत ही मधुरता से गाये जा सकते थे। जिस लक्ष्य से उनको लिखा जाता था वह उद्देश्य तत्काल पूरा होता था। कुछ उदाहरण देखें—

1. रहिमन देख बड़ेन को, लघु न दीजिये डार।
   जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तलवार।। (दोहा : रहीम; सीख)
2. नर की और नल नीर की, एकै गति कर जोय।
   ज्यों-ज्यों नीचें है चलै, त्यों-त्यों ऊँचौ होय।। (दोहा : बिहारी; सीख)

प्रकृति सौन्दर्य, भक्ति, वीरता, करुणा, हास्य और संयोग तथा वियोग श्रृंगार की ही प्रधानता थी जो सामयिक परिवर्तित होती रहती थीं।

वर्तमान में काव्य का रूप बदला। अतुकान्त छन्दों का प्रयोग होने लगा। व्यंग की प्रधानता होने लगी। गीत और गजल भी बदलते परिवेश में वस्तुस्थिति से अधिक जुड़े। अतः जहाँ श्रृंगार और राजनीतिक व्यंग अधिक उभरा वहीं पर्यावरण भी एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में जुड़ गया। प्रदूषण समस्या, प्रकृति असन्तुलन और भावी भविष्य की चिन्ता के रूप सभी स्तर पर गूँजे। बाल गीतों में भी ध्वनि प्रदूषण, वायु और जल प्रदूषण को मान्यता मिली। कवि सम्मेलन में जब अन्तिम दौर आया तब पर्यावरण के प्रश्न उठे और देश के राजनीतिज्ञों से उनके हल पूछने लगे।

अब इस प्रकार के साहित्य की महती आवश्यकता है जो बालक से वृद्ध तक को पर्यावरण के बारे में सोचने को बाध्य कर दे। इसी सन्दर्भ में पर्यावरणीय संकट की एक कविता का अवलोकन करें—

यह कोई भोपाल से पूछे

रात कैसे कहर ढाती है ? यह कोई भोपाल से पूछे।
निगलता कैसे अंधेरा सूर्यमुखियों को
किस तरह दम तोड़ता है 'ताल' पर कोई सवेरा
सांस कैसे लड़खड़ाती है ? यह कोई भोपाल से पूछे।
ज़र्द होता किस तरह उम्मीद का चेहरा
छीनती है मौत कैसे फूल का सेहरा

आँख कैसे स्वप्न की अर्थी सजाती है ? यह कोई भोपाल से पूछे।
दूधमुँई किलकारियों का शोर कैसे दफन होता
झुर्रियों में झाँक कर इतिहास कैसे आँसू रोता
जिन्दगी कैसे हवा से हार जाती है ? यह कोई भोपाल से पूछे।
मालियों का स्वार्थ कैसे आग बन जाता चमन की
मनुज का विष-दन्त कैसे कहानी बनता चुभन की
हवस कैसे हादसे हमको दिखाती है ? यह कोई भोपाल से पूछे।

[शिक्षा विभाग राजस्थान के शिक्षकों के काव्य संकलन 'सुनो ओ नदी रेत की' सम्पादन : बल्देव वंशी; लेखक भगवती लाल व्यास (1985) से साभार]

बच्चों के सामूहिक गीत इस प्रकार लिखे जा सकते हैं जिसमें प्रकृति सौन्दर्य और पर्यावरण सन्तुलन की बात हो। शिशुओं की कविताएँ भी स्वरूप बदल सकती हैं। कुछ लोकगीतों के रूप में भी पर्यावरण को समेटा जा सकता है। वृक्षों की महत्ता को भी और बढ़ाया जा सकता है। राजस्थान में जयपुर आकाशवाणी केन्द्र के पूर्व उप निदेशक 'श्री इकराम राजस्थानी' ने वृक्षों के महत्त्व पर सरल भाषा में एक पुस्तिका लिखी है, जिसके पद इतने सरल हैं कि वह तुरन्त ग्राह्य होते हैं। उन पर नृत्य नाटिकाएँ भी बनाई जा सकती हैं। इस पुस्तिका के कुछ अंश देखें—

सुनो पेड़ की गाथा

प्रारम्भ—

1. • मानव जन्मा जिस घड़ी, जग में खोले नैन,
प्रथम बिछौना मैं बना, चैन दिया दिन रैन।
• माता-पिता फूले फिरें, तुझे गोद में पाय,
मैं ही बन गया पालना, तुझको रहा झुलाय।
• बचपन में भी मैं रहा, हरदम तेरे साथ,
गिल्ली डंडा खेलता, थामे मुझको हाथ।
• यौवन फिर आया तेरा, बढ़ा मान सम्मान,
मेरी लकड़ी से बना, सुन्दर तेरा मकान।
• एक पलक तो बैठ तू, आकर मेरे पास,
आज सुनाऊँ मैं तुझे, यह सारा इतिहास।
सुनो पेड़ की गाथा।।

अन्त में—

2. • प्राण पखेरू जब उड़े, छोड़ा सब संसार,
अंत समय अर्थी बना, मैं था खड़ा तैयार।
• तुझे जलाकर आ गये, तेरे भाई बन्धु,
साथ तेरे मैं जल गया, यह मेरा सम्बन्ध।
• शंकर बन कर पी गया, मैं सारी दुर्गन्ध,
प्राण वायु दी है तुझे, देता सदा सुगन्ध।
सुनो पेड़ की गाथा।।

['सुनो पेड़ की गाथा' : लेखक; इकराम राजस्थानी से साभार]

इसी प्रकार अब कवियों को, गजल गायकों को, साहित्य रचयिताओं को पर्यावरण के पहलुओं पर अपनी शक्ति लगाकर नया निर्माण करना आवश्यक हो गया है जिससे राष्ट्र को सुधारात्मक गति मिल सके।

• विविध पर्यावरणीय गतिविधियाँ
(Different Environmental Activities)

पर्यावरण के क्षेत्र में विभिन्न आयामों की जानकारी करने, उन पर विचार-विमर्श करने और फिर उसे

हर स्तर और हर आयु वर्ग तक के लोगों तक पहुँचाने हेतु आज अनेक गतिविधियाँ आयोजित हो रही हैं। इनका मूल संचालन भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के पर्यावरण विभागों के निर्देशन और उनकी दिशा बिन्दुओं के आधार पर होता है। वित्तीय भार भी यही दोनों अभिकरण वहन करती हैं। क्रियान्वयन का कार्य शैक्षिक संस्थाएँ, पर्यावरण के क्षेत्र में कार्यरत स्वयंसेवी संस्थाएँ, नेहरू युवा केन्द्र, विश्वविद्यालयों के कतिपय विभाग, स्काउट एवं गाइड्स की स्थानीय शाखाएँ, लायन्स एवं रोटरी क्लब्स आदि द्वारा किया जाता है। लक्ष्य यही रहता है कि, (1) पर्यावरण के बारे में सामान्य जानकारी को समेकित करें, (2) नई जानकारी को खोजें, (3) लोगों तक पहुँचाने हेतु कार्यक्रमों को तैयार करें और (4) विभिन्न कार्यकलापों द्वारा उस ज्ञान को लोगों तक पहुँचायें।

विभिन्न कार्यक्रमों हेतु जो विविध पर्यावरणीय गतिविधियाँ सम्भव हैं उनका समेकित रूप से निम्न प्रकार अवलोकन किया जा सकता है—

(अ) प्रकृति संरक्षण कार्य (Nature Conservation Work)

1. वृहद पौधारोपण (Massive Plantation)
2. जलाशयों की सफाई (Cleaning of Waterbodies)
3. जंगलों की सुरक्षा (Preservation of Forests)
4. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण (Conservation of Natural Resources)

(ब) पर्यावरण का अध्ययन (Study of Environment)

1. शोध प्रोजेक्ट्स (Research Projects)
2. क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Researches)
3. पारिस्थितिकी स्थिति प्रतिवेदन (Environmental Status Reports)

(स) पर्यावरणीय जन जाग्रति कार्यक्रम (Environmental Awareness Programmes)

1. पारिस्थितिकी विकास शिविर (Eco Development Camps)
2. व्याख्यान शृंखला (Lecture Series)
3. प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programmes)
4. फिल्म शोज (Film Shows)
5. प्रदर्शनियाँ (Exhibitions)

(द) पर्यावरणीय विचार-विनिमय (Environmentl Discussions)

1. सेमीनारें (Seminars)
2. कार्यगोष्ठियाँ (Workshops)
3. विचार-गोष्ठियाँ (Symposiums)
4. वैचारिक आदान-प्रदान (Interaction Meets)

आइये अब इन पर विस्तार से जानकारी करें—

(अ) प्रकृति संरक्षण कार्य (Nature Conservation Work)

1. वृहद पौधारोपण (Massive Plantation)

प्रगति के नाम पर पिछले कई दशकों से जिस गति से वनों की कटाई हो रही है उससे तो यही अनुमान सहज लगाया जा सकता है कि अगले कुछ वर्षों में मानो देश में वृक्ष केवल नाम-मात्र को रह जायेंगे। सामान्यतया 75 मिलियन हेक्टेअर क्षेत्र से प्रतिवर्ष वन (जंगल) कटते हैं, और वह भी सुविधा प्रदान करने, आवश्यकता की पूर्ति करने और खेल के मैदान तथा संचार माध्यम स्थलों के निर्माण के नाम पर। क्रमशः इनमें हम मकान अथवा आवासीय कॉलोनियाँ, बड़े-बड़े उद्योग, बाँध, स्टेडियम, सड़कें, बस-स्टैण्ड्स, रेल स्टेशन और ऐरोड्रोम को गिन सकते हैं। यद्यपि यह चीजें आज आवश्यकता बन गई हैं, पर वृक्षों को काट कर इनको बनाने की योजना बहुत बुद्धिमता की बात नहीं है, क्योंकि कम वृक्षों से प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ा है।

इस सन्दर्भ में अब यह विचार कि हर खाली स्थान पर वृहद पौधारोपण किया जाये, इतनी तेजी से उभरा है कि हर स्तर पर पुनः नयें वृक्षों के लिए पौधारोपण होने लगा है। स्कूल, चिकित्सालय,

बस-स्टैण्ड, सड़कें, गलियाँ, मकान के अन्दर और बाहर व्यक्तिगत स्तर पर पौधारोपण हो रहा है। वन विभाग स्वयं अथवा स्वयंसेवी संस्थाओं के सहयोग से पौधारोपण में जुटी हैं। हेलीकॉप्टर द्वारा बीज छिड़क कर पहाड़ियों और दुर्जन स्थानों पर वृक्ष उगाने का प्रयास किया जा रहा है। ऐसा समझा जाता है कि अगले 20 (बीस) वर्षों में हम कम से कम उस स्तर तक तो पहुँच सकेंगे, जिससे हमारे जीवन की मूलभूत आवश्यकता, शुद्ध वायु की पूर्ति हो सकेगी।

2. जलाशयों की सफाई (Cleaning of Waterbodies)

देश की 70 प्रतिशत आबादी आज भी गाँवों में रहती है और वहाँ पीने के पानी अथवा अन्य कार्य हेतु जल के मुख्य स्रोत पारम्परिक कुएँ, पोखर अथवा तालाब हैं। प्रकृति ने इन्हें विरासत में शुद्धता प्रदान की है लेकिन हमने स्वयं अपने गलत तौर तरीकों से इन्हें भयंकर रूप से प्रदूषित किया है; जैसे—कुओं पर कपड़े धोना और इस प्रवृत्ति से अशुद्ध हुए पानी को पीना; घर का, गाँव का सारा गन्दा पानी बहकर पोखर अथवा तालाब में मिलता है और इसी पानी को पिलाना आदि। और भी कई कारणों से, जिनमें रासायनिक खाद मिला पानी का जलाशयों में जाना और डिटरजेण्ट पाउडर मिश्रित पानी का निरन्तर मिलते रहना आदि प्रमुख हैं। पानी के उपलब्ध स्रोत सामान्य जनस्वास्थ्य के योग्य नहीं हैं। इनको निरन्तर प्रदूषण से बचाना तो आवश्यक है ही, पर इसके साथ-साथ इनकी सफाई भी की जानी वांछनीय है। तालाबों में जलकुम्भी भी एक समस्या बन गई है जिसे भी निरन्तर हटाने की आवश्यकता है।

सभी लोगों को पीने के लिये शुद्ध और स्वच्छ जल मिले, आज इस तरफ सभी लोगों का ध्यान केन्द्रित है। गाँव-गाँव में युवकों के समूह स्वयं एकत्रित होकर यह कार्य करने लगे हैं। जहाँ कार्य-क्षेत्र बढ़ा है वहाँ हर स्तर पर प्रशासन का पूरा संरक्षण है। राष्ट्र स्तर पर, राज्य स्तर पर, ज़िला और पंचायत समिति स्तर पर अनेक योजनाएँ बनी हैं और उन पर प्रतिवर्ष लगातार काम होता है। राष्ट्रीय स्तर पर गंगा-यमुना और गोमती नदी की सफाई, राज्य स्तर पर पुष्कर झील (राजस्थान), सुखना झील (चण्डीगढ़), कीठम झील (उत्तर प्रदेश) आदि इसके उदाहरण हैं। पीने के पानी के कुएँ की सफाई की व्यवस्था हर गाँव के लोगों की जिम्मेदारी स्वयं भी बन जानी चाहिए। चिकित्सा विभाग अथवा जलदाय विभाग से पानी की शुद्धता की जाँच भी आवश्यक है। यदि शुद्धता मानक स्तर पर न हो तो उसको ठीक करने की कार्यवाही भी यथासमय की जानी चाहिए।

3. जंगलों की सुरक्षा (Preservation of Forests)

ऊपर हमने बताया है कि देश में लगातार वन कटते जा रहे हैं जिससे प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ गया है और इस कारण हमारा यह दायित्व बनता है कि वृहद पौधारोपण हो जिससे कालान्तर में हम अच्छे, स्वस्थ व सघन वृक्षों से घिरे वनों को पुनः देख सकें। लेकिन आज आवश्यकता इस बात की भी है कि जो भी वन शेष रहे हैं, जहाँ-जहाँ भी वृक्ष हैं, उन सबकी महती सुरक्षा की जाये। आगे ऐसी योजनायें न बनाई जायें जिनके कारण जंगल काटने पड़ें। जंगल कटने से, (1) वन्य जीवों के आश्रय स्थल व सुरक्षा में कमी, (2) वर्षा की मात्रा में निरन्तर कमी, (3) वायु-चक्र का असन्तुलन, (4) भूमिक्षरण की अधिकता, (5) बाढ़ अथवा सूखा का प्रकोप आदि अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। प्राण-वायु की कमी से जन-जीवन का अस्तित्व खतरे में है; कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता से 'ग्रीन हाउस प्रभाव' में निरन्तर वृद्धि हो रही है और यही नहीं बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से कई प्रकार के प्रदूषणों को रोकने में सक्षम वन अब निरर्थक हो रहे हैं।

सरकार चाहे इन्हें सुरक्षित रखने के उपाय उस सीमा तक न करे जिस हद तक आवश्यक और अपेक्षित है लेकिन जन सामान्य को भी यह मानस बनाना चाहिए कि अब कहीं भी और किसी भी स्तर पर वृक्षों का विनाश न हो; जंगल न काटे जायें और घर-घर में और उसके आस-पास जहाँ भी वृक्ष हों वह सुरक्षित रहें। जो वृक्ष काटने के दोषी हों उनको सामाजिक दण्ड दिया जाये जिससे आगे वह ऐसा जघन्य कार्य न करें।

4. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण (Conservation of Natural Resources)

प्रकृति से हमें अनेक संसाधन विरासत में मिले, जिनमें वायु, जल, भूमि (वृक्ष और वनस्पति सहित) तो हैं ही लेकिन भूमि के गर्त में छिपे अनेक खनिज (कोयला, पेट्रोल, ताँबा, लोहा, सीसा, जस्ता,

एल्यूमिनियम आदि) भी हमें असीमित मिले हैं। बढ़ती जनसंख्या, बदलता रहन-सहन, परिवर्तित आवश्यकताएँ और विश्व के देशों की आगे बढ़ने की होड़ ने इन खनिजों का इतना उपयोग किया है कि संचित कोष रिक्त होने लगे हैं। परिवहन के साधनों ने पेट्रोल को समाप्ति के कगार पर ला खड़ा किया है तो बड़े-बड़े उद्योगों ने कोयले के भण्डारों की स्थिति दयनीय बना दी है। वैकल्पिक स्रोतों को खोजने का क्रम जारी है पर उस कल्पना से सिहरन होती है जब यह बिल्कुल नहीं रहेंगे।

पर्यावरण के संरक्षण में इनका आवश्यकतानुसार एवं उचित उपयोग आवश्यक है। दुरुपयोग अथवा केवल अपने स्तर के अनुरूप व्यय करने की आदत को तत्काल रोकना चाहिए।

(ब) पर्यावरण का अध्ययन

(Study of Environment)

1. शोध प्रोजेक्ट्स (Research Projects)

पर्यावरण के क्षेत्र में भारत सरकार, राज्य सरकार अथवा विशिष्ट अभिकरणों ने अनेक योजनाएँ बनाई हैं और उनसे देश-प्रदेश का विकास होगा इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए उनकी क्रियान्विति भी की है, लेकिन साथ ही अनेक मुद्दे ऐसे भी होते हैं जिन पर पारम्परिक रूप से समस्याएँ जुड़ी रहती हैं और वह निरन्तर चलते रहते हैं। ऐसे अनेक बिन्दुओं पर, यह जानने के लिए कि अमुक कार्य में, (1) क्या अच्छाइयाँ हैं ? (2) क्या समस्याएँ हैं ? (3) इन्हें कैसे कम अथवा दूर किया जा सकता है ? तथा (4) किसी विशेष कार्यक्रम को और प्रभावी बनाने के लिए क्या परिवर्तन अथवा परिवर्द्धन अपेक्षित है ? शोध कार्य किया जाता है। पर्यावरण का क्षेत्र अति विशाल है अतः शोध कार्य के विषय भी अनगिनत हो सकते हैं और उन पर कार्य करने से एक निश्चित दिशा हमें मिल सकती है।

एक शोध प्रोजेक्ट के निम्न प्रमुख अंग होते हैं—

(i) समस्या अथवा विषय (Problem or Subject),
(ii) उद्देश्य (Objectives),
(iii) परिसीमन (Delimitation),
(iv) न्यादर्श (Sample),
(v) कार्य विधि (Methodology),
(vi) सूचनाओं अथवा दत्त का संकलन व विश्लेषण (Collection and Analysis of Information or Data),
(vii) निष्कर्ष (Conclusion),
(viii) निष्कर्ष के आधार पर सुझाव (Suggestions on the Basis of Inferences),
(ix) आगे शोध की सम्भावनाएँ (Future Research Possibilities) और
(x) शोध निष्कर्षों पर अन्य बुद्धिजीवियों से विचार-विमर्श (Discussions on Research Inferences with Other Intellectuals)।

यह शोध कार्य महाविद्यालय, विश्वविद्यालय अथवा ऐसे संस्थानों द्वारा ही सम्भव है जहाँ इस विधा में प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हों और जो रुचिपूर्वक समय दे सकते हों। वित्तीय सहायता की उपलब्धता भी एक महती आवश्यकता है जिसका प्रबन्ध शोधकार्य के प्रारम्भ से पूर्व ही होना चाहिए। ऐसे पुस्तकालय जहाँ सम्बन्धित क्षेत्र का न्यूनतम साहित्य, पत्र-पत्रिकाएँ, शोध पत्रों की उपलब्धि हो तथा यदि शोध का विषय विज्ञान से सम्बन्धित हो तो पूर्ण सज्जित प्रयोगशाला का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। इससे शोध की प्रामाणिकता में तो वृद्धि होती है साथ ही साथ कार्य में सहजता और सरलता भी आती है।

किसी भी शोध कार्य में शोधकर्त्ताओं की संख्या एक या एक से अधिक विषय के विस्तार के अनुकूल हो सकती है। सहयोग हेतु फील्ड स्टाफ, टंकण व्यवस्था और कम्प्यूटर की उपलब्धता भी अपेक्षित है।

पर्यावरण के क्षेत्र में शोध प्रोजेक्ट्स के नमूने निम्न प्रकार हो सकते हैं—

1. उदयपुर (राजस्थान) में कीटनाशी फैक्ट्री से जनसामान्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव
   [Ill effects on general public by pesticide factories of Udaipur (Rajasthan)]
2. सीमेण्ट उद्योग में श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्याएँ
   (Health problems of workers in cement factories)

3. पर्यावरणीय जनचेतना कार्यक्रमों में निजी अराजकीय संस्थाओं की भूमिका
[The role of PVO's (private voluntary organisations) in environmental awareness programmes]
4. परिवहन प्रदूषण को रोकने में पर्यावरण कानून की प्रभाव क्षमता
(Effectiveness of environmental laws in checking vehicular pollution)
5. एक शहर के भीड़ वाले बाजार में ध्वनि प्रदूषण की मात्रा
(The extent of noise pollution in a crowded bazar of a city)

इन शोध प्रोजेक्ट्स को पूर्ण कर इनका लिखित आलेख तैयार किया जाना चाहिए जिससे इस क्षेत्र में कार्य करने वाले अनेक बुद्धिजीवी लोग इसका लाभ उठा सकें। यदि सम्भव हो तो उनसे विचार-विमर्श भी करना चाहिए; इससे शोधकर्त्ता के कई प्रश्नों का हल सम्भव होता है। शोध प्रोजेक्ट्स की संक्षिप्त विवरणिका (Synopsis or Summary) भी साथ ही तैयार करनी चाहिए जिससे व्यापक प्रसार किया जा सके। मीडिया के लोगों की सहायता से अपने निष्कर्षों को जनसमुदाय तक पहुँचाने का प्रयास भी करना चाहिए।

2. क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Researches)

क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Researches) वैसे तो शोध प्रोजेक्ट (Research Projects) की भाँति ही होते हैं और उनका चयन का तरीका, कार्य करने की पद्धति, निष्कर्ष निकालने और उसको प्रस्तुत करने की विधि भी शोध प्रोजेक्ट्स की तरह ही होती है **लेकिन इनमें बहुत कुछ मूलभूत अन्तर होता है।**

'शोध प्रोजेक्ट' तथा 'क्रियात्मक अनुसन्धान' में अन्तर (Difference between 'Research Projects' and 'Action Researches')

1. 'शोध प्रोजेक्ट' नवीन तथ्यों एवं सत्यों को स्थापित करता है, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' किसी संस्था की कार्य-प्रणाली में परिवर्तन, परिवर्द्धन, सुधार तथा प्रगति लाता है।
('Research Project' establishes new facts and truths, while 'Action Research' brings change, development, reform and progress in the working of an institution.)
2. 'शोध प्रोजेक्ट' की समस्या क्षेत्र में सामान्य परिस्थितियों से सम्बन्धित होती है, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' की समस्या किसी संस्था से सम्बन्धित होती है।
(The problem of 'Research Project' is related to the general situations of a particular area, while 'Action Research' concerns the problem of any institution.)
3. 'शोध प्रोजेक्ट' का क्षेत्र 'क्रियात्मक अनुसंधान' से बड़ा होता है।
(The scope of 'Research Project' is larger than the 'Action Research'.)
4. 'शोध प्रोजेक्ट' का सम्बन्ध विशेषतः सैद्धान्तिक समस्याओं से होता है, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' व्यावहारिक कठिनाइयों से सम्बन्ध रखता है।
('Research Project' is mainly related to theoretical problems, while 'Action Research' deals with the practical problems.)
5. 'शोध प्रोजेक्ट' में कार्यरत व्यक्ति विशेषज्ञ होते हैं, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' में संस्था के लगभग सभी व्यक्ति मिलकर काम करते हैं।
(Working people in 'Research Projects' are specialists, while almost all the members of an institution perform 'Action Research' together.)
6. 'शोध प्रोजेक्ट' दूरगामी परिणाम वाले होते हैं, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' तात्कालिक समस्याओं के समाधान हेतु होते हैं।
('Research Projects' are long term result oriented, while 'Action Researches' are done to solve the immediate problems.)
7. 'रिसर्च प्रोजेक्ट' की कार्य-पद्धति अत्यन्त कठोर होती है, जबकि 'क्रियात्मक अनुसन्धान' में इसमें सामयिक रूप से परिवर्तन किया जा सकता है।
(The working of a 'Research Project' is very rigid, while 'Action Research, may change it as it needs.)

'क्रियात्मक अनुसन्धान' इस प्रकार के शोध कार्य होते हैं जिसे छोटे स्तर पर स्थानीय संस्थाओं (विद्यालयों) में वहीं के कार्यकर्त्ताओं द्वारा तत्काल समस्या के समाधान खोजने हेतु किये जाते हैं। निष्कर्ष निकालने, कार्यप्रणाली निश्चित करने, सूचनायें अथवा जानकारी एकत्रित करने आदि में किसी समीपस्थ विशेषज्ञ से सहायता की जा सकती है।

पर्यावरण के क्षेत्र में 'क्रियात्मक अनुसन्धान' के निम्न विषय हो सकते हैं--

1. विद्यालय में पीने के पानी की शुद्धता का अध्ययन
   (A study of the purity of drinking water in school)
2. विद्यालयों में पर्यावरण प्रतिरक्षण के प्रति विद्यार्थियों की रुचि एवं जागरुकता
   (Interest and awareness about preservation of environment in the students of the schools)
3. स्कूल की सफाई के स्तर का अध्ययन।
   (A study of the sanitation status of the school)
4. विद्यालयों में प्राकृतिक सौन्दर्य वृद्धि हेतु किये जा सकने वाले प्रयास।
   (Possible efforts to increase natural beauty in schools)
5. विद्यार्थियों में स्वच्छ आदतों का निर्माण
   (Building clean habits in students)

किसी विद्यालय स्तर पर किये गये 'क्रियात्मक अनुसन्धान' से यदि कुछ ऐसे परिणाम निकलते हैं जिनसे विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से लाभ मिलता हो तो ऐसे परिणामों को अन्य विद्यालयों में भेजकर अपने परिश्रम का लाभ उनको भी देना चाहिए। यदि परिणाम व्यापक रूप से तथ्य पर आधारित हो तो पूरी पंचायत समिति अथवा जिले के बहुत से विद्यालयों को इससे लाभान्वित किया जा सकता है। इस हेतु शिक्षा प्रशासन के अधिकारियों से सम्पर्क करना चाहिए।

3. पारिस्थितिकी स्थिति प्रतिवेदन (Environmental Status Reports)

यह वस्तुतः किसी स्थान के किन्हीं कार्यकलाप, उद्योगों का पूरा लेखा-जोखा अथवा किसी नये कार्य हेतु अपेक्षित सुविधाएँ अथवा कठिनाइयों की समस्त स्थितियों का अध्ययन कार्य का अभिलेख होता है। यह इसलिए होता है अथवा सरकार, विभाग और संस्थानों द्वारा इसलिए कराया जाता है जिससे पर्यावरण ह्रास को रोका जा सके। तकनीकी भाषा में इसे 'पर्यावरणीय स्थिति का अध्ययन' (Environmental Impact Assessment) कहते हैं।

उदाहरण के लिये राजस्थान में 'खेतड़ी ताँबा परियोजना' (Khetri Copper Project) के लगने से, जो भारत सरकार का एक विशाल उपक्रम है, उस क्षेत्र के आस-पास के वायु, भूमि, जल के स्तर की क्या स्थिति है ? वृक्ष और वनस्पति पर इस संयन्त्र से क्या प्रभाव पड़ा है ? कृषि उत्पादन, मनुष्य का जीवन और अन्य कार्य इससे किस प्रकार प्रभावित हुये हैं ? आदि का समस्त लेखा-जोखा इस अध्ययन के अन्तर्गत आता है। यदि कोई नया उद्योग, मानो सीमेण्ट फैक्ट्री, किसी क्षेत्र में लगाई जाती है तो भी 'पारिस्थितिकी स्थिति का अध्ययन' इसलिए पूर्व में ही कराया जाता है जिससे भविष्य में इस उद्योग से हो सकने वाले दुष्प्रभावों की सम्भावनाओं की पहले से ही जानकारी हो सके।

इसी प्रकार उन नगरों का 'पारिस्थितिकी अध्ययन' किया अथवा कराया जा सकता है जो किसी खास कारणों से पर्यावरण को विकृत कर रहे हैं, जैसे—पाली (राजस्थान) नगर का पारिस्थितिकी अध्ययन (रंगाई-छपाई उद्योग के कारण), फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश) नगर का पारिस्थितिकी अध्ययन (चूड़ी उद्योग के कारण) आदि। और भी अनेक स्थितियाँ सम्भव हैं जिनके कारण इस प्रकार के अध्ययन कराये जाते हैं जिससे प्रतिकूल परिस्थितियों को वहाँ के रहने वालों के अनुकूल बनाया जा सके।

कुछ अन्य उदाहरण निम्न हो सकते हैं--

1. उत्तरांचल के हरिद्वार का पारिस्थितिकी स्तर
   [Environmental Status of Haridwar of Uttaranchal]
2. जयपुर (राजस्थान) के 'शीत भण्डारणों' का पारिस्थितिकी अध्ययन
   [Environmental Impact Assessment of Cold Storages of Jaipur (Rajasthan)]

3. बिजोलिया (भीलवाड़ा) राजस्थान की अबरक की खानों का पर्यावरणीय अध्ययन
[Environmental Study of Mica Mines of Bijolia (Bhilwara) Rajasthan)]
4. दिल्ली के अन्तर्राज्यीय बस अड्डे के पर्यावरण की स्थिति
[State of Environment of Inter State Bus Stand (ISBS) of Delhi]
5. आगरा (उत्तर प्रदेश) के चमड़ा उद्योग क्षेत्र के पर्यावरण की स्थिति
[Environmental Status of Leather Industrial Area of Agra (Uttar Pradesh)]

पारिस्थितिकी अध्ययन में अनेक दृष्टिकोण समाहित होते हैं और सभी बिन्दुओं पर एकदम ठीक जानकारी समेकित की जाती है। इसी कारण इसे केवल विशिष्ट व्यक्ति या संस्थाएँ ही सम्पन्न कर सकती हैं। देश में वर्तमान में अनेक ऐसी संस्थाएँ हैं जो उचित पारिश्रमिक लेकर ऐसे अध्ययन करती हैं। नये उद्योगों के लिए तो यह आवश्यक ही है कि सरकार से उद्योग खोलने की स्वीकृति के लिए दिये जाने वाले आवेदन पत्र के साथ उस क्षेत्र की 'पर्यावरण स्थिति' का प्रतिवेदन संलग्न करें जहाँ कोई उद्योगपति अपना उद्योग स्थापित करना चाहता है। पर्यावरण के क्षेत्र में इस अध्ययन का बहुत महत्त्व है।

(स) पर्यावरणीय जन-जागृति कार्यक्रम (Environmental Awareness Programmes)

1. पारिस्थितिकी विकास शिविर (Eco Development Camps)

पारिस्थितिकी विकास शिविरों की योजना सर्वप्रथम भारत सरकार के पर्यावरण विभाग ने वर्ष 1982-83 में बनाई और तभी से इनका आयोजन देश की विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से प्रारम्भ किया। इन शिविरों के आयोजन के पीछे उनका मुख्य लक्ष्य देश के युवा बालक-बालिकाओं का पर्यावरण विखण्डित क्षेत्रों के भौतिक सुधार में सक्रिय सहयोग लेना था। साथ ही उन्हें विभिन्न पक्षों की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक जानकारी देकर उनमें मानसिक जागरुकता जगाकर उनके द्वारा जन चेतना उत्पन्न करना था। केन्द्रीय पर्यावरण विभाग ने इन शिविर आयोजन के जो उद्देश्य निर्धारित किये, वह निम्न हैं—

(i) छात्र-छात्राओं और समाज तथा जन-साधारण में पर्यावरण एवं पर्यावरणीय सिद्धान्तों की जानकारी देना,

(ii) पर्यावरण असन्तुलन के मुख्य कारणों की स्थिति से अवगत कराकर युवा शक्ति को पर्यावरण सुधार की ओर अग्रेषित करना,

(iii) पर्यावरण संरक्षण के महत्त्व की जानकारी देकर युवाओं के माध्यम से जनसाधारण में प्राकृतिक संसाधनों के आवश्यकतानुसार एवं उचित उपयोग की प्रवृत्ति प्रेरित करना,

(iv) समाज में लोगों का रहन-सहन, खान-पान, क्रिया-कलाप प्रकृति अनुकूल हो, इस ओर सामान्य मानस जाग्रत करना, तथा

(v) युवा वर्ग के माध्यम से जन-साधारण में 'राष्ट्रीय एवं भावनात्मक एकता' की भावना उत्पन्न करना।

इन्हीं उद्देश्यों के आधार पर जो योजना भारत सरकार ने प्रारम्भ की थी वही योजना राज्य सरकारों के पर्यावरण विभागों ने लगभग वर्ष 1984-85 से अपने-अपने प्रदेशों में चलाई। भारत सरकार की भाँति ही इनका आयोजन पहले तो केवल स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से हुआ और फिर विद्यालय, महाविद्यालय व अन्य संस्थाओं का भी सहयोग लिया जाने लगा। आयोजन का निर्धारित वित्तीय भार पर्यावरण विभागों द्वारा ही वहन किया जाता है।

इन शिविरों के आयोजन की मोटी रूपरेखा यह है कि,

(1) इसमें संभागी लगभग 50 विद्यार्थी अथवा अन्य युवक-युवतियाँ होते हैं,

(2) अवधि 5 से 7 दिन तक रखी जाती है,

(3) स्थान का चयन करते समय एक तो यह ध्यान रखा जाता है कि उस आवास व्यवस्था पर आवागमन के साधन, खाने-पीने तथा प्रकाश और सुरक्षा की सुलभता की सुविधा हो और दूसरे उस स्थान पर कुछ पर्यावरण सुधार सम्बन्धी व्यावहारिक कार्य किये जाने की आवश्यकता हो,

(4) एक **निश्चित कार्यक्रम** होता है जिसे इस अवधि में पूरा किया जाता है; कार्यक्रम में पर्यावरणीय वार्ताएँ, भ्रमण, व्यावहारिक एवं क्रियात्मक कार्य, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक कार्य और प्रदर्शन कार्य सम्मिलित होता है और

(5) **शिविर संयोजक** अपनी एक ऐसी सहयोगियों की टीम रखता है जिनकी सहायता से वह सभी कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न कराता है।

संभागियों का चयन इन शिविरों की प्रमुखता है। अतः यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि—

(i) शिविर संभागी की पर्यावरणीय गतिविधियों में रुचि हो और ऐसे समाज सेवा के कार्यों की ओर रुझान हो जो पर्यावरण सुरक्षा एवं सुधार के लिए आवश्यक हों,

(ii) संभागी में नेतृत्व का गुण हो और कठिन परिस्थितियों में भी दृढ़तापूर्वक कार्य कर सकने की क्षमता हो,

(iii) संभागी स्वयं अपना काम कर सकता हो (श्रम के प्रति निष्ठा), स्वस्थ हो और अनुशासन में रहने वाला हो,

(iv) संभागी में मिलनसारिता हो जिससे शिविर के अन्य संभागियों से शिविर की अवधि में अत्यन्त मधुर सम्बन्ध रहें; तथा

(v) संभागी का बौद्धिक स्तर ऐसा हो जो शिविर के विभिन्न कार्यक्रमों को समझ सके; उसमें कार्य निष्पादन क्षमता हो और अपने विचार व्यक्त करने की योग्यता हो। आयु वर्ग 16⁺ हो तो उचित है।

इन शिविरों के माध्यम से गाँव-गाँव और शहर-शहर जन-चेतना जाग्रत की जा सकती है और देश के एक-एक व्यक्ति को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण और सुधार में लगाया जा सकता है।

2. व्याख्यान शृंखला (Lecture Series)

कम श्रम, कम समय और कम व्यय में अधिक लोगों तक विचार पहुँचाने के लिए यह सुन्दर विधा है। पर्यावरण जन-चेतना हेतु भी इस विधा का बहुतायत से उपयोग किया जा रहा है। किसी भी एक संस्था में जहाँ 200 से 500 तक विद्यार्थी हों, 50 के लगभग शिक्षक हों और 50 से 100 तक अभिभावक आ जायें वहाँ एक घण्टे की अवधि में एक विशेषज्ञ की सहायता से अधिक से अधिक जानकारी दी जा सकती है। उपस्थित विद्यार्थी तथा अन्य लोगों की शंकाओं का समाधान भी किया जा सकता है। यदि स्लाइड्स या ओवर-हैड प्रोजेक्टर की सुविधा हो तो उनकी सहायता से इस व्याख्यान को अधिक ग्राह्य बनाया जा सकता है।

कई प्रदेशों की राज्य सरकारों के पर्यावरण विभाग ने अपने बड़े नगरों में स्वयंसेवी संस्थाओं को 'व्याख्यान शृंखला' (Lecture Series) नाम से प्रोजेक्ट स्वीकृत किये हैं। इस प्रोजेक्ट में 10 से 15 तक व्याख्यान विभिन्न विद्यालयों में कराये जाते हैं। विशेषज्ञों का चयन प्रोजेक्ट संयोजक करते हैं और उनके व्याख्यान के आधार पर संक्षिप्त ब्रोशर्स (Brochures) विद्यार्थियों को वितरित किये जाते हैं। यह कार्यक्रम बहुत लोकप्रिय और प्रभावी हुये हैं।

इन व्याख्यानों में एक कमी यह महसूस की जाती है कि किसी भी क्षेत्र को सम्पूर्ण रूप से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। थोड़ी-थोड़ी सामग्री विभिन्न क्षेत्रों से समेकित कर व्याख्याता अपनी बात को इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि जिससे श्रोताओं को चेतना आये और फिर रुचि लेकर अधिक जानकारी अपने शिक्षकों से प्राप्त करे, लेकिन व्यवहार में यह अनुवर्तन सम्भव न होने के कारण यह प्रणाली औपचारिकता अधिक निभाती है।

3. प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programmes)

यह कार्यक्रम मूलतः पर्यावरण विभाग द्वारा राज्य के विभिन्न स्तर के अधिकारी एवं अधीनस्थ कर्मचारियों के लिए आयोजित किये जाते हैं। लक्ष्य यह रहता है कि सभी लोग, जो चाहे वह सीधे प्रशासन से जुड़े हों चाहे अन्य विभागों में विभिन्न पदों पर कार्यरत हों, वे पर्यावरण के बारे में जानें और फिर उसकी जानकारी अपने-अपने क्षेत्र में दें और कुछ इस प्रकार का वातावरण बनायें कि सभी व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण के प्रति रुचि लें; पर्यावरण विकृति को रोकें तथा सुधार के लिए प्रयास करें।

यह प्रशिक्षण कार्यक्रम पंचायत समिति स्तर से लेकर राज्य स्तर तक आयोजित किये जाते हैं और इनमें सम्बन्धित स्तर के अधिकारी ही आमन्त्रित किये जाते हैं। दो या तीन दिन की अवधि के आवासीय

शिविरों की भाँति इन कार्यक्रमों में संभागियों की अधिकतम संख्या लगभग 30 रहती है। इनमें कुछ वार्ताएँ, कुछ व्यावहारिक कार्य, भ्रमण और प्रदर्शन का मिला-जुला कार्यक्रम रहता है।

इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के उपरान्त प्रशिक्षित व्यक्तियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे (1) अपने-अपने विभागों द्वारा बनाई जाने वाली वार्षिक योजनाओं के विविध कार्यक्रमों में पर्यावरणीय पक्ष को समाहित करें और (2) अपने ही विभागों में पर्यावरण सुधार हेतु ऐसे नियमित कार्यकलापों का संचालन करें जिससे अधीनस्थ अधिकारियों तथा कर्मचारियों में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का बोध जाग्रत हो सके। वस्तुतः यह कार्यक्रम ऐसा एक निश्चित योजनाबद्ध प्रयास है जिससे शीर्ष से लेकर नीचे तक हर व्यक्ति को पर्यावरण के प्रति सोचने और उस सन्दर्भ में कार्य करने हेतु प्रेरित किया जा सके।

4. फिल्म प्रदर्शन (Film Shows)

किसी भी विषय पर केवल सुनें या फिर देखें और सुनें, इन दोनों में भारी अन्तर है। निश्चित रूप से दूसरा पक्ष अधिक प्रभावी है। दूसरे जो कम पढ़े-लिखे अथवा बिना पढ़े लिखे लोग हैं उन्हें तो कोई बात दिखाकर ही ठीक से समझाई जा सकती है। पर्यावरण के सन्दर्भ में भी यही बात सही उतरती है। प्रत्येक व्यक्ति को केवल भाषण द्वारा पर्यावरण के बारे में नहीं समझाया जा सकता लेकिन यदि किसी पर्यावरण विकृति के दृश्य को फिल्मों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाये तो वह दर्शक के मन में उतरता है और उसे सोचने को बाध्य करता है।

पर्यावरण के विभिन्न पक्षों पर आज अनेक छोटी-बड़ी फिल्में उपलब्ध हैं और उन्हें गाँव-गाँव, शहर-शहर प्रोजेक्टर्स की सहायता से दिखाया जा सकता है। ऐसे वीडियो कैसिट्स भी बने हैं जिन्हें लोग अपने-अपने घरों में अपने टी० वी० पर देख सकते हैं और इस प्रकार वे अपने परिवार के सभी सदस्यों को भी इस राष्ट्रीय सोच में सम्मिलित कर सकते हैं।

5. प्रदर्शनियाँ (Exhibitions)

पर्यावरण के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रदर्शनियों का आयोजन भी बहुत सटीक कार्यक्रम है। जनसंख्या विस्फोट, प्रदूषित जल स्रोत, कटते वन, बिना आश्रय जंगल में विचरते वन्य जीव, भूकम्प से धराशायी इमारतें, अशक्त और बीमार लोग, ध्वनि प्रदूषण, तेजाबी वर्षा आदि जाने कितने ऐसे विषय बिन्दु हो सकते हैं जिनके चित्रित दृश्य अथवा फोटोग्राफ्स की प्रदर्शनी लगाने से पर्यावरण का विविध रूप जन-सामान्य को प्रस्तुत किया जा सकता है।

इस प्रकार की अनेक प्रदर्शनियाँ शहर के मध्य ऐसे स्थान पर लगाई जाती हैं जहाँ अधिक से अधिक लोग इन्हें देख सकें। इन्हें थोड़े-थोड़े समय के लिए अन्य नगरों व कस्बों में स्थानान्तरित कर इनका लाभ उन लोगों को भी दिया जा सकता है जो सामान्यतया इस प्रकार के कार्यक्रमों से वंचित रह जाते हैं।

इन प्रदर्शनियों को तैयार करना बहुत आसान नहीं है बल्कि एक दुरूह कार्य है। अतः अक्सर ऐसा किया जाता है कि किसी क्षेत्र विशेष की स्पॉट पेण्टिंग अथवा फोटोग्राफी प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है और उसमें के श्रेष्ठ चित्र अथवा फोटोग्राफ्स का उपयोग प्रदर्शनियों में कर लिया जाता है। प्रदर्शनियों के बोलते चित्र अनजाने ही वह बात कह जाते हैं जो किसी और माध्यम से सम्भव नहीं, बल्कि यों कहें कि पर्यावरण के क्षेत्र में जन जाग्रति के लिए प्रदर्शनियों का आयोजन एक अच्छी विधा है।

(द) पर्यावरणीय विचार-विनिमय (Environmental Discussions)

1. सेमीनारें (Seminars)

प्रत्येक क्षेत्र की कतिपय कुछ सामयिक समस्याएँ होती हैं जिनके हल खोजना आसान कार्य नहीं होता है। एक ही विषय व विचार बिन्दु पर विशेषज्ञ भी अपनी अलग-अलग राय रखते हैं, अतः उनसे एक साथ कोई सर्वसम्मत हल प्राप्त करना भी कठिन होता है। सेमीनारें समस्याओं के विविध आयामों और पहलुओं पर विचार करने हेतु एक तार्किक एवं बौद्धिक मंच है, जहाँ अपने अनुभवों के आधार पर विषय विशेषज्ञ कोई सर्वमान्य हल सुझाने हेतु प्रयासरत होते हैं या यों कहें कि सेमीनार समस्या समाधान हेतु एक ऐसी वस्तुनिष्ठ विधा है जिसमें अनेक विचार वाले प्रबुद्ध व्यक्तियों को एक साथ एक ही स्थान पर विचार-विमर्श करने का अवसर मिलता है।

आज पर्यावरण के क्षेत्र में अनेक समस्याएँ हैं जो निरन्तर विकराल रूप धारण कर रही हैं। उनके लिए सेमीनारों का आयोजन बहुत ही उचित एवं उपयुक्त कार्यक्रम हैं। यह सेमीनारें एक दिन से लेकर तीन या चार दिन तक की हो सकती हैं तथा इनका रूप भी स्थानीय, राज्यीय, अन्तर्राज्यीय, राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक का हो सकता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि आपके पास कितने साधन और सुविधायें हैं। एक अच्छे राज्य स्तर के सेमीनार के लिए लगभग 6 माह और राष्ट्रस्तरीय सेमीनार के लिए कम से कम 1 वर्ष की तैयारी करनी होती है। विषय विशेषज्ञों का चयन, उनको आमन्त्रित करके उनके विचार पत्रों के माध्यम से लेना, उनका आतिथ्य, सेमीनार का आयोजन एवं अन्य सम्बन्धित अनेक कार्य इस सेमीनार के मुख्य अंग होते हैं। एक अच्छे सेमीनार का आयोजन एक कुशल संयोजन तथा उसके सहयोगी टीम पर निर्भर करता है।

पर्यावरण के क्षेत्र में प्रायः किस प्रकार की सेमीनारें आयोजित की जाती हैं, उनके नमूने यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. पर्यावरण संरक्षण में अराजकीय संस्थाओं तथा मीडिया की भूमिका
   (The role of non-governmental organisations and media in preservation of environment)
2. पर्यावरण संरक्षण में पर्यावरणीय कानून का प्रभावीपन
   (Effectiveness of the environmental laws for the protection of environment)
3. राजस्थान में बंजर भूमि की वृद्धि
   (Development of wastelands in Rajasthan)
4. आवासीय स्थानों पर पौधारोपण
   (Plantation in residential plots)
5. देश में पीने के पानी की उपलब्धता और उसका उपयोग
   (Potable water availability and its utilization in the country)

इन सेमीनारों के निष्कर्षों के आधार पर जो प्रतिवेदन तैयार हों उनसे प्रशासन और राज्य सरकारें अनेक योजनाएँ तैयार कर सकता है जिससे पर्यावरण सुधार को नई दिशा मिले।

2. कार्यगोष्ठियाँ (Workshops)

किसी भी कार्य के संचालन से पूर्व यह निश्चित करना बहुत आवश्यक होता है कि उसमें वास्तव में किया क्या जाये ? जब तक एक सन्तुलित, विषय सम्बन्धित, वस्तुनिष्ठ और परिणामगामी कार्यक्रम न हो तब तक किसी कार्य की सफलता संदिग्ध ही रहती है। न तो उसमें कोई तालमेल रहता है और न ही उसकी कोई सार्थकता रहती है। कार्यगोष्ठी इस आवश्यकता की पूर्ति करती है। चाहे किसी प्रशिक्षण का **'पाठ्यक्रम'** तैयार करना हो अथवा किसी परीक्षा का **'प्रश्न बैंक'**; चाहे किसी प्रकार के साहित्य का निर्माण करना हो (नुक्कड़ नाटक, गीत अथवा वार्ताएँ आदि) अथवा किसी कार्यक्रम की वैधता जाँचनी हो, यह कार्यगोष्ठियाँ ही उसे पूरा करती हैं।

किसी भी कार्यगोष्ठी में विषय से सम्बन्धित विशेषज्ञों को आमन्त्रित कर उनसे निर्धारित कार्य पूरा कराया जाता है। 3 दिन से 10 दिन तक की अवधि की कार्यगोष्ठियों में सम्भागियों की संख्या आवश्यकतानुसार हो सकती है। सामान्यतया सभी सम्भागियों के छोटे-छोटे समूह बनाकर उनको अलग-अलग कार्य सौंप दिया जाता है। प्रतिदिन एक निश्चित समय पर सभी सम्भागियों के मध्य समूह संयोजक अपने-अपने कार्य को प्रस्तुत करते हैं और उन पर अन्य लोगों से विचार आमन्त्रित करते हैं। संशोधन अथवा परिवर्तन या परिवर्द्धन के बाद उसको अन्तिम रूप दे दिया जाता है। कार्यगोष्ठी की अवधि के अन्तिम दिन सामूहिक रूप से पूरे कार्य की समीक्षा की जाती है और उसका प्रतिवेदन स्वीकार कर लिया जाता है।

पर्यावरण के क्षेत्र में जिस प्रकार की कार्यगोष्ठियाँ आयोजित होती हैं, उनके उदाहरणों का अवलोकन करें—

1. पर्यावरण पर 'नुक्कड़ नाटक' लिखने के लिये कार्यगोष्ठी
   (Workshop for writing 'Street Plays' on Environment)

2. पारिस्थितिकी विकास शिविर के लिये पाठ्यक्रम तैयार करने हेतु कार्यगोष्ठी
   (Workshop for preparing syllabus for Eco Development Camps)
3. पर्यावरण पर राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय सेमीनारों के संयोजकों को निर्देशन सामग्री तैयार करने हेतु कार्यगोष्ठी
   (Workshop for preparing directives for 'Conveners of State and National Level Seminars' on environment)
4. पर्यावरण प्रशिक्षण कार्यक्रम की सामग्री के मूल्यांकन एवं विश्लेषण हेतु कार्यगोष्ठी
   (Workshop for 'Evaluation & Analysis of the Training Programmes Material' on environment)
5. शिक्षण संस्थानों में पर्यावरण पर शिक्षक शिक्षण हेतु कार्यगोष्ठी
   (Workshop for 'Teachers' Education' on environment in training institutions)

इन उदाहरणों के आधार पर भी हम यह कह सकते हैं कि कार्यगोष्ठियाँ वस्तुतः किसी भी कार्यक्रम की आधार स्तम्भ होती हैं और उसकी सफलता निश्चित करती हैं।

3. विचार गोष्ठियाँ (Symposiums)

विचार गोष्ठियाँ एक प्रकार से सेमीनारों का ही लघु रूप होता है जिसमें अनेक व्यक्ति किसी भी एक सामयिक समस्या पर अपने-अपने विचार व्यक्त करते हैं। विषय भी लोगों को बहुत पूर्व में बता दिया जाता है जिससे संभागी अपनी मानसिक और विषयक तैयारी ठीक से कर सकें। आधा दिन अथवा कुछ घण्टों चलने वाले इस सिम्पोजियम में संभागी संख्या कितनी भी हो सकती है। सदन में से ही एक व्यक्ति को अध्यक्ष बना दिया जाता है। संभागियों के विचार-विमर्श के आधार पर यह अध्यक्ष अपनी अन्तिम राय व्यक्त कर उस सिम्पोजियम को विराम देता है।

सिम्पोजियम के विषय कुछ तत्काल समाधान के होते हैं और उनका विस्तार भी छोटा होता है। कुछ विषय जो पर्यावरण सम्बन्धी सिम्पोजियम के हो सकते हैं, यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. विद्यालयों में पर्यावरण शिक्षा का स्वतन्त्र अलग से ही पाठ्यक्रम होना चाहिए।
   (There should be a seperate and independent syllabus of environmental education in schools.)
2. ऊर्जा का दुरुपयोग कैसे रोका जाये ?
   (How to check the misuse of energy ?)
3. पर्यावरण विकृति को रोंकने में आम आदमी की भूमिका।
   (The role of common man in checking the environmental degradation.)
4. वन्य-जीव पर्यावरण को कैसे सन्तुलित करते हैं ?
   (How does the wild-beasts balance the environment ?)
5. अधिक पेड़ लगाओ ही पृथ्वी ग्रह को बचाने का एकमात्र उपाय है।
   (Grow more trees is the only solution to save the planet earth.)

सिम्पोजियमों की सबसे अधिक विशेषता यह है कि कम समय में आयोजित होने से संभागी अपनी बात अधिक उत्साह से कहते हैं और श्रोता उसको ध्यान से सुनकर या तो मनन करते हैं या तुरन्त अपने विचार व्यक्त करते हैं। दो या तीन मिनट में विचारों को व्यक्त करने से पूरे कार्यक्रम में सजीवता बनी रहती है और कोई भी व्यक्ति ऊबता नहीं है। कार्यक्रम के बाद भी वातावरण बहुत मधुर और रसमय रहता है।

4. वैचारिक आदान-प्रदान (Interaction Meets)

यह विशिष्ट प्रकार के ऐसे मिलन होते हैं जहाँ एक से स्तर के अथवा एक ही प्रकार के कार्य करने वाले लोगों को एकत्रित कर उन्हें किसी विषय पर परस्पर विचार-विमर्श करने का अवसर दिया जाता है। संभागियों की संख्या कितनी भी हो सकती है लेकिन अवधि अधिकतम एक दिन की ही होती है। अपने लम्बे अनुभव और मौलिक चिन्तन से इन मिलन में संभागी किसी भी समस्या का वह समाधान खोज लेते हैं जो सामान्यतया किसी और प्रकार हल नहीं हो पाता है। सुझाव भी अत्यन्त व्यावहारिक और वस्तुनिष्ठ होते हैं।

इस प्रकार के मिलन पर्यावरण के क्षेत्र में, (1) राज्य के समस्त जिला कलेक्टर्स, (2) अन्य विभागों के जिला स्तरीय अधिकारी, (3) पुलिस विभाग के वरिष्ठ अधिकारी, (4) प्रदेश के सांसद और विधान सभा सदस्य, (5) पर्यटन अथवा परिवहन विभाग के अधिकारी, (6) किसी संस्थान जैसे दुग्ध-योजना के अधिकारी और कर्मचारी, (7) किसी उद्योग जैसे चीनी अथवा कपड़ा बनाने वाली फैक्टरी के मालिक, मैनेजिंग डाइरेक्टर्स अथवा जनरल मैनेजर आदि हो सकते हैं।

इन्हें विचार-विमर्श के लिए निम्न प्रकार के विषय दिये जा सकते हैं—

1. विभिन्न संस्थानों तथा विभागों में कार्यरत कर्मचारियों के स्वास्थ्य स्तर को अच्छा कैसे रखें ?
   (How to keep better health status of the workers of different institutions or departments ?)
2. पर्यावरण ह्रास को रोकने हेतु सुझाव
   (Suggestions to check the environmental degradation)
3. पर्यावरण सन्तुलन के बारे में जन सामान्य की धारणाएँ
   (Opinions of general man about the environmental balance)
4. घरों में सौर ऊर्जा का उपयोग
   (The use of solar energy in homes)
5. पर्यावरणीय संकटों में मनुष्य का भविष्य
   (The future of man in environmental hazards)

उपर्युक्त विषयों पर विचार-विमर्श के आधार पर निकले परिणामों को अपने ही संस्थानों तथा विभागों में कार्यरत लोगों पर परीक्षण कर उन्हें लाभान्वित भी किया जा सकता है और स्वयं उन्हें पर्यावरण के प्रति सोचने के लिए तैयार किया जा सकता है।

● विभिन्न पर्यावरणीय प्रतियोगिताएँ (Different Environmental Competitions)

किसी भी कार्य में रुचि लेने और उसे लोकप्रिय बनाने में प्रतियोगिताओं का आयोजन एक सफल और सशक्त विधा है। इससे व्यापकता भी प्राप्त होती है और निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति भी। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर पर्यावरण के क्षेत्र में इस विधा का वर्तमान में अच्छा उपयोग किया जा रहा है। अलग-अलग आयु वर्ग के बालक/बालिकाओं, विद्यालय/महाविद्यालय/विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों तथा सामान्य व्यक्तियों के लिये अलग-अलग प्रकार की प्रतियोगिताओं का आयोजन पिछले दिनों में पूरे देश में विभिन्न स्थानों पर देखने को मिला है। उनकी एक तदर्थ सूची यहाँ समेकित है—

क्र० सं०	प्रतियोगिता का नाम	संभागी स्तर
1.	चित्रकला प्रतियोगिता (Drawing Competition)	प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये।
2.	निबन्ध लेखन प्रतियोगिता (Essay Writing Competition)	सेकण्डरी, सीनियर सेकण्डरी तथा महा-विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये।
3.	सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (General Knowledge Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
4.	प्रश्नोत्तरी (क्विज) प्रतियोगिता (Quiz Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
5.	वाद-विवाद प्रतियोगिता (Debate Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
6.	अन्तर विद्यालयी सौन्दर्य प्रतियोगिता (Inter School Beautification Competition)	सेकण्डरी तथा सीनियर सेकण्डरी विद्यालयों के लिये।
7.	पत्र-वाचन प्रतियोगिता (Paper Reading Competition)	स्कूलों और महाविद्यालयों के शिक्षकों के लिये।

8.	फोटोग्राफी प्रतियोगिता (Photography Competition)	जन सामान्य के लिये।
9.	डाक टिकट प्रतियोगिता (Philately Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
10.	नाटक प्रतियोगिताएँ (Plays Competitions)	विद्यार्थियों तथा जन सामान्य के लिये।
11.	पोस्टर पेन्टिंग प्रतियोगिता (Poster Painting Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
12.	स्लोगन प्रतियोगिता (Slogan Competition)	उपर्युक्त स्तर के लिये।
13.	पर्यावरणीय विचार प्रतियोगिता (Environmental Message Competition)	जन सामान्य के लिये।
14.	कविता एवं गीत प्रतियोगिताएँ (Poems & Songs Competitions)	सभी स्तर के लोगों के लिये।

[नोट—*इनके अतिरिक्त भी कई प्रकार की प्रतियोगिताएँ सम्भव हैं*]

इन सभी प्रकार की प्रतियोगिताओं के आयोजन के तरीकों में अनेक समानताएँ हैं और अलग-अलग प्रकार की प्रतियोगिताओं में कुछ विशिष्टताएँ। उन्हें हम यहाँ संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

(अ) सभी प्रतियोगिताओं में समानताएँ (Uniformity in all Competitions)

सभी प्रतियोगिताओं में जिन बिन्दुओं का निर्धारण सामान्य रूप में पहले ही कर लिया जाता है, वह हैं—

(1) प्रायोजक, आयोजक एवं संयोजक, (2) प्रतियोगियों की पात्रता,
(3) वर्ग विभाजन यदि आवश्यक हो, (4) उत्तर देने/पढ़ने अथवा बोलने की भाषा का माध्यम,
(5) समयावधि, (6) तिथि,
(7) शुल्क, यदि लिया जाना हो, (8) स्थान,
(9) प्रतियोगियों के आवेदन का तरीका (मौखिक अथवा आवेदन पत्र भेजना), (10) नामांकन पत्र की व्यवस्था,
(11) प्रतियोगी के आने-जाने का यात्रा व्यय, यदि कोई प्रावधान हो, (12) स्तर— स्थानीय, जिला स्तरीय, राज्य स्तरीय आदि,
(13) परिणामों की घोषणा—तत्काल अथवा किसी निश्चित अवधि में, (14) परिणामों का प्रकाशन और
(15) पुरस्कार अथवा प्रशंसा पत्रों का वितरण।

यद्यपि हर प्रतियोगिता के लिये इनमें अन्तर होता है पर इन दिशा बिन्दुओं से उस प्रतियोगिता की एक समग्र योजना का रूप निर्मित हो जाता है।

(ब) अलग-अलग प्रतियोगिताओं में विशिष्टताएँ (Specificity in Different Competitions)

सभी प्रतियोगिताओं की अलग-अलग विशिष्टताएँ भी होती हैं जिनमें, (1) प्रतियोगिता आयोजन करने का तरीका, (2) प्रतियोगिता हेतु विषय और पाठ्यक्रम (यदि आवश्यक हो), (3) प्रतियोगिता का मूल्यांकन तरीका मुख्य है। इन बिन्दुओं के आधार पर हम विभिन्न प्रतियोगिताओं का संक्षिप्त में विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

1. चित्रकला प्रतियोगिता (Drawing Competition)

- यह प्रतियोगिता सामान्यतया प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर तक के विद्यार्थियों के लिये दो

वर्गों (जूनियर एवं सीनियर) में आयोजित कराई जाती है। स्थान का चयन इस प्रतियोगिता के लिये महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यदि बालक/बालिकाओं की संख्या अधिक हुई तो उनको छायादार बैठने का स्थान आवश्यक है। बड़े नगरों में जन्तुआलय अथवा फार्म हाउस उचित स्थान होते हैं जबकि छोटे कस्बों में इसी प्रकार की सुविधा वाले स्थानों को ढूँढ़ना पड़ सकता है।

- **प्रतियोगिता का विषय** विद्यार्थियों की आयु तथा उनकी समझ को ध्यान में रखते हुये रखना होगा, जैसे—(1) आपका स्वच्छ गाँव, (2) कोई प्राकृतिक दृश्य, (3) आपका सुन्दर विद्यालय, (4) प्रकृति में विचरते जीव-जन्तु, (5) प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग संस्थान, (6) वाहनों द्वारा प्रदूषण, (7) ध्वनि प्रदूषण, (8) सूखा अथवा बाढ़, (9) कटते जंगल, और (10) ऊर्जा संकट। इन विषयों पर थोड़ी सी जानकारी प्रतियोगिता संयोजक को विद्यार्थियों को देनी चाहिए और उन्हें यह बताना चाहिए कि इन विषयों में उन्हें उपलब्ध समय में क्या करना है ?

- **मूल्यांकन** पर्यावरण विशेषज्ञों की तीन सदस्यीय समिति से कराना चाहिए तथा दोनों वर्गों में अलग-अलग कम से कम दस-दस प्रतियोगियों के श्रेष्ठ चित्रों को पुरस्कार हेतु छाँटना चाहिए। सम्भागित्व प्रमाण-पत्र का प्रावधान सभी प्रतियोगियों के लिये रखना चाहिए। छोटे बच्चों को प्रोत्साहन देने हेतु मध्यावधि में फलों का वितरण तथा उत्तम जल व्यवस्था भी आवश्यक होती है।

2. निबन्ध लेखन प्रतियोगिता
(Essay Writing Competition)

- **यह प्रतियोगिता** सेकण्डरी, सीनियर सेकण्डरी तथा महाविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये आयोजनीय है; अतः स्पष्टतः इसके अलग-अलग तीन वर्ग (कनिष्ठ, वरिष्ठ तथा उच्च) होंगे और जिस स्तर पर (स्थानीय विद्यालय/महाविद्यालय, नगर, पंचायत समिति और जिला अथवा राज्य) भी कराई जानी हो उसी स्तर पर प्रतियोगिता केन्द्र बनाये जायेंगे, जहाँ विद्यार्थी निबन्ध लेखन करेंगे।

- **निबन्ध लेखन के लिये विषय** का एक आधार-पाठ्यक्रम होना चाहिए जिसे पूर्व में ही विद्यार्थियों को प्रसारित करना चाहिए ताकि विद्यार्थी इस पाठ्यक्रम के आधार पर अपनी तैयारी कर सकें। ऐसा ही एक पाठ्यक्रम (जिसमें परिवर्तन, परिवर्धन किया जा सकता है) यहाँ जानकारी हेतु प्रस्तुत है—

निबन्ध लेखन प्रतियोगिता हेतु पाठ्यक्रम
(Syllabus for Essay Writing Competition)

1. पर्यावरण, पृथ्वी एवं पारिस्थितिकी

पर्यावरण, सौरमण्डल, पृथ्वी एवं पारिस्थितिकी।

2. प्राकृतिक संसाधन, वन एवं वन्य जीव तथा ऊर्जा

प्राकृतिक संसाधन, जैविक विविधता, वायु, जल, भूमि, वन, सामाजिक वानिकी, वन्य जीव, वन्य जीव परियोजनायें, राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य और ऊर्जा।

3. पर्यावरण प्रदूषण और समस्याएँ

पर्यावरणीय प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, वाहनों से प्रदूषण, औद्योगिक प्रदूषण, नैतिक प्रदूषण, अपशिष्ट निस्तारण, पर्यावरणीय समस्याएँ।

4. पर्यावरणीय संरक्षण, सुरक्षा एवं सुधार

पर्यावरणीय संरक्षण, राष्ट्रीय—क्षेत्रीय—अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण सुरक्षा एवं सुधार, पर्यावरण एवं कानून, पर्यावरण और स्वयंसेवी संस्थाएँ, पर्यावरण प्रबन्ध एवं राष्ट्रीय पर्यावरण नीति।

- **निबन्ध लेखन प्रतियोगिता हेतु विषयों का चयन इसी पाठ्यक्रम के आधार पर होगा, जिसके नमूने निम्न प्रकार हो सकते हैं—**

1. प्राकृतिक संसाधन और उनका संरक्षण
   (Natural resources and its conservation)
2. रासायनिक खादों का उपयोग व उनके दुष्प्रभाव
   (Use of chemical fertilizers and its ill effects)
3. पर्यावरण असन्तुलन एवं हमारे अधिकार
   (Environmental imbalance and our rights)

4. पर्यावरण शिक्षा की हमारे दैनिक जीवन में आवश्यकता
(Need of environmental education in our daily life)
5. अगर तुम देश के पर्यावरण मन्त्री होते
(If you were the environment minister of the country)
6. यदि मैं न होता ! एक वृक्ष की आत्मकथा
(If I didn't exist ! autobiography of a tree)
7. जनसंख्या एवं पर्यावरण
(Population and environment)
8. पर्यावरण सुधार में वन्य जीवों की भूमिका
(Role of wildlife in the improvement of environment)
9. ऊर्जा संकट और उसके वैकल्पिक स्रोत
(Energy crisis and its alternate sources)
10. सामाजिक वानिकी का पर्यावरण सन्तुलन में योगदान
(Contribution of social forestry in environmental balance)
11. पर्यावरण संरक्षण और प्रदूषण के नियन्त्रण के क्षेत्र में कानूनों की उपलब्धता
(Availability of laws in the area of environmental preservation and control of pollution)
12. नगरीकरण की समस्याएँ और सम्भावित समाधान
(Problems of urbanisation and its possible solutions)

निबन्ध लेखन प्रतियोगिता के निबन्धों का मूल्यांकन भी बहुत ही वस्तुनिष्ठता से किया जाना अपेक्षित है, क्योंकि इस प्रकार के लेखन में बहुत से बिन्दुओं का अलग-अलग महत्त्व होता है। इसके अतिरिक्त मूल्यांकन उन्हीं शिक्षकों अथवा विशेषज्ञों से कराना चाहिए जो किसी न किसी प्रकार पर्यावरण से जुड़े हों और इस विषय की विषय-वस्तु से जानकारी रखते हों। सुविधा के लिये निबन्ध मूल्यांकन हेतु कुछ आधार यहाँ संग्रहित हैं—

पर्यावरण निबन्ध लेखन प्रतियोगिता के निबन्धों के मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु

● आधार बिन्दु		विवरण
1. भूमिका	:	विषय की पृष्ठभूमि प्रेरक प्रसंग।
2. विषय-वस्तु	:	शीर्षक के सन्दर्भ में विविध पक्षों की स्वानुभूत एवं गृहीत सामग्री।
3. भाषा	:	भाषायी शुद्धता, स्पष्टता, रोचकता, उपयुक्त शब्द चयन, वाक्य गठन, विराम चिन्हों का प्रयोग, स्तर।
4. शैली	:	वर्णनात्मक, कथात्मक, आत्मकथात्मक, व्यंगात्मक, चित्रांकन, उदाहरण, उद्धरण की प्रस्तुती एवं अनुच्छेद निर्माण।
5. क्रमबद्धता	:	अनुच्छेदों एवं बिन्दुओं में उपयुक्त क्रम तथा पारस्परिक सम्बन्ध।
6. सुसम्बद्धता	:	प्रस्तुत विचारों एवं भावों का शीर्षक से सम्बन्ध।
7. मौलिकता	:	चिन्तन-मनन परक स्व-विचारों की अपने ढंग से प्रस्तुति।
8. उपसंहार	:	निष्कर्ष एवं सुझाव।
9. निर्धारण कलेवर	:	1000 शब्द सीमा से निकटता।

● **अंक भार**

विषय-वस्तु के लिए 20%	अन्य बिन्दुओं के लिए 10%
20 × 1 = 20	10 × 8 = 80 कुल = 100 अंक

उपर्युक्त आधार पर प्राप्त अंकों से निबन्धों को प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना पुरस्कार के लिये छाँटा जा सकता है, लेकिन यदि प्रतियोगिता का विस्तार अधिक हो और उनमें से भी श्रेष्ठ निबन्धों का चयन करना हो तो यह सुझाव है कि—

(1) ऐसी सभी उच्च/उच्चतम अंकों वाली उत्तर-पुस्तिकाओं को अलग-अलग तीन विशेषज्ञों से जाँच करायें तथा

(2) उन सभी प्राप्त अंकों को 50 माध्य (Mean) और 10 मानक विचलन (Standard Deviation) पर उतार लिया (Scale) जाये। इससे प्रतियोगिता की प्रामाणिकता बढ़ेगी।

3. सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (General Knowledge Competitions)

यह प्रतियोगिता भी सेकण्डरी, सीनियर सेकण्डरी तथा महाविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए आयोजनीय है। अतः इसके सामान्यतया तीन वर्ग (कनिष्ठ, वरिष्ठ और उच्च) तो हो ही सकते हैं, लेकिन हम चाहें तो महाविद्यालय के विद्यार्थियों को भी दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—(1) स्नातक कक्षा तक के विद्यार्थी तथा (2) इससे ऊपर की कक्षाओं के विद्यार्थी। इस प्रकार हम कुल चार वर्ग भी बना सकते हैं। इससे विद्यार्थियों में रुचि बढ़ेगी। अधिक संख्या में प्रतियोगियों के प्रवेश लेने से कार्यक्रम की उपादेयता में वृद्धि होगी और उससे पर्यावरण चिन्तन की व्यापकता भी होगी।

प्रतियोगिता के आयोजन के तरीके में एक प्रश्न पत्र (सभी वर्गों के लिये अलग-अलग) तैयार करना होगा, जिसमें 100 प्रश्न वस्तुनिष्ठ प्रकार के होंगे—

बहुचयनात्मक प्रकार (Multiple Choice Type)	75 प्रश्न
और **अति लघुउत्तरात्मक प्रकार** (Very Short Answer Type)	25 प्रश्न

प्रचलन में यह 100 प्रश्नों का प्रश्न पत्र 3 घण्टे की अवधि का 100 अंकों का होता है। अर्थात् प्रत्येक प्रश्न 1 अंक का होता है। **नमूने के प्रश्न यहाँ दिये जा रहे हैं—**

(अ) बहुचयनात्मक प्रकार के प्रश्नों का नमूना :

1. समाचार पत्र में निम्न में से कौन-सा विषैला तत्व होता है ?
   (Which of the following toxic element does a newspaper contain ?)
   (अ) कैडमियम (ब) सीसा (स) मैंगनीज (द) पारा
   (a) Cadmium (b) Lead (c) Manganese (d) Mercury

सही उत्तर—(ब)
(स्याही में सीसा होता है)

2. ग्रीन हाउस प्रभाव के लिये सबसे अधिक उत्तरदायी गैस कौन-सी है ?
   (Which gas is most responsible for causing greenhouse effect ?)
   (अ) मीथेन (ब) सल्फर डाइऑक्साइड
   (स) नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (द) कार्बन डाइऑक्साइड
   (a) Methane (b) Sulphur dioxide
   (c) Nitrogen dioxide (d) Carbon dioxide

सही उत्तर—(द)

(ब) अति लघुउत्तरात्मक प्रकार के प्रश्नों का नमूना :

1. किन भारतीय न्यायालयों में भारतीय नागरिक सीधे ही पर्यावरण सम्बन्धी वाद दायर कर सकता है ?
   (In which Indian courts can the Indian citizens directly file the cases relating to environment ?)

सही उत्तर—(उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय)

2. गैसीय शीतल पेय बोतलों में कौन-सी गैस भरी जाती है ?
   (Which gas is filled in aerated colddrink bottles ?)

सही उत्तर—(कार्बन डाइऑक्साइड)

पर्यावरण के सभी पक्षों को लगभग समान रूप से भार देने हेतु यह सुझाव उचित है कि प्रश्नों का चयन पाठ्यक्रम (जिसका विवरण आगे दिया है) के विभिन्न क्षेत्रों में से समान रूप से किया जाये। इस प्रतियोगिता हेतु पर्यावरणीय पाठ्यक्रम को हम यदि अग्रलिखित पाँच भागों में विभाजित कर दें तो तदर्थ भार अग्रांकित प्रकार से हो सकता है—

सारणी 35·1
विभिन्न मुख्य क्षेत्रों को तदर्थ भारण

क्र० सं०	क्षेत्र	भारण	प्रश्नों की संख्या		
			बहु चय-नात्मक	अति लघु-उत्तरात्मक	कुल
1.	पर्यावरण, पृथ्वी एवं पारिस्थितिकी	20%	15	5	20
2.	प्राकृतिक संसाधन, वन एवं वन्य जीव तथा ऊर्जा	20%	15	5	20
3.	पर्यावरण प्रदूषण एवं समस्याएँ	20%	15	5	20
4.	पर्यावरणीय संरक्षण, सुरक्षा एवं सुधार	20%	15	5	20
5.	अन्य सामयिक	20%	15	5	20
	योग	100%	75	25	100

- **इस प्रतियोगिता के प्रश्न-पत्रों का मूल्यांकन तथा उसके आधार पर प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना पुरस्कार के लिये विद्यार्थियों का अन्तिम चयन में वही प्रक्रिया अपनाई जा सकती है जो पूर्व में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता के लिये सुझाई गई है।**
- **इस प्रतियोगिता का विस्तृत संभावित पाठ्यक्रम भी वही हो सकता है, जो निबन्ध लेखन प्रतियोगिता हेतु प्रस्तावित किया गया है।**

4. प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता
(Quiz Competition)

यह वर्तमान में अति चर्चित, लोकप्रिय तथा प्रभावी प्रतियोगिता है। आकाशवाणी, दूरदर्शन, विद्यालय/महाविद्यालय तथा अन्य किसी भी संस्था द्वारा जब कोई भी नई बात लोगों तक पहुँचानी होती है तब ही इस विधि द्वारा उसे सशक्त और प्रभावी रूप से पहुँचाने का प्रयास किया जाता है। कम समय में कम व्यय पर अधिक लोगों को जानकारी देने हेतु इसका उपयोग किया जाता है।

यह प्रतियोगिता सेकण्डरी, सीनियर सेकण्डरी तथा महाविद्यालयों के विद्यार्थियों को अलग-अलग वर्गों में आयोजित की जा सकती है। प्रतियोगिता आयोजन के दो तरीके काम में लिये जाते हैं—

1. प्रथम तरीका

जिसमें सभी संभागियों को, चाहे उनकी संख्या कितनी ही हो, किसी स्थान पर अर्द्धवृत्ताकर रूप में बिठा दिया जाता है। क्विज मास्टर, जो आवश्यक रूप से पर्यावरण विशेषज्ञ ही होता है, कोई प्रश्न पूछता है। सभी संभागियों में से किसी से भी सही उत्तर प्राप्त होने पर, क्विज मास्टर वहीं पुरस्कार दे देता है। उस प्रश्न का सही उत्तर वह पुनः दोहराता है और उसी प्रश्न से सम्बन्धित कुछ अधिक जानकारी उपस्थित समुदाय को देता है जिससे वहाँ सभी उपस्थित लोगों को ज्ञान लाभ मिलता है।

2. द्वितीय तरीका

इस विधि में प्रतियोगियों को दो-दो के समूह में बाँटकर उनकी टीम बना दी जाती है। एक बार में अधिकतम छः टीमों को लिया जा सकता है। इन टीमों का नामकरण भाषा वर्ण से यथा—अ, ब, स, द, इ, फ अथवा A, B, C, D, E, F कर दिया जाता है। क्विज मास्टर एक प्रश्न पहली टीम (अ अथवा A) से पूछता है और सही उत्तर देने पर 5 अथवा 10 अंक प्रदान कर देता है। अगला प्रश्न वह दूसरी टीम (ब अथवा B) से पूछता है। सही उत्तर न पाने पर वह उसी प्रश्न को तीसरी टीम (स अथवा C) से पूछता है। यदि यह टीम उस प्रश्न का सही उत्तर दे देती है जिसका पिछली टीम (ब अथवा B) ने सही उत्तर नहीं दिया था तो अगली टीम (स अथवा C) को निर्धारित बोनस अंक (3 अथवा 5) मिल जाते हैं। यहाँ उत्तर देने का समय निर्धारित रहता है। एक राउण्ड में लगभग 5 प्रश्न होते हैं। प्रत्येक राउण्ड के बाद प्रत्येक टीम के अंकों को बता दिया जाता है। कुल निर्धारित 5 राउण्ड के बाद अधिकतम अंक

प्राप्त करने वाली टीम को प्रथम घोषित कर दिया जाता है। उसके बाद प्राप्त करने वाली टीमें क्रमशः द्वितीय तथा तृतीय होती हैं। यदि टीमों की संख्या छः से अधिक हो तो उन्हें पहले जोन्स में बाँट सकते हैं और फिर जोन्स से प्राप्त प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाली टीमों को फाइनल (अन्तिम) राउण्ड में प्रवेश कराके अन्तिम परिणाम घोषित कर दिया जाता है।

इस प्रतियोगिता की दो बातें अत्यंन्त महत्त्वपूर्ण होती हैं–

प्रथम–क्विज मास्टर का चयन :

(1) यह व्यक्ति अत्यन्त प्रभावी व्यक्तित्व वाला पर्यावरण के क्षेत्र में विशेषज्ञ होना चाहिये तथा (2) उसके बोलने का ढंग भी आकर्षक होना चाहिये।

द्वितीय–प्रश्नों का निर्माण–

(1) प्रश्न छोटे, सटीक और वस्तुनिष्ठ होने चाहिये;

(2) भाषा सरल और स्पष्ट होनी चाहिएं और

(3) प्रश्न एक ही उद्देश्य पर निर्मित होना चाहिये।

तृतीय–अन्य बातें : प्रतियोगियों की बैठक व्यवस्था, क्विज मास्टर का स्थान, नियन्त्रित ध्वनि विस्तारक (Loud Speakers) और उचित रोशनी सम्मिलित होती है। यद्यपि क्विज मास्टर पर प्रश्नों के सही उत्तर होते हैं और नियमों में यह बात स्पष्ट कर दी जाती है कि क्विज मास्टर का निर्णय अन्तिम होता है पर फिर भी किसी प्रश्न पर विवाद खड़ा हो सकता है, अतः यह बहुत उचित होता है कि विशेषज्ञों की एक टोली जूरी के रूप में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के समय उपस्थित रहे और विवादास्पद स्थिति में सही निर्णय लें।

प्रतियोगिता के पूर्व जिस विषय-वस्तु पर प्रश्न पूछे जायेंगे, उसकी जानकारी व्यापक तौर से दे दी जानी चाहिये जिससे वर्तमान के विशाल ज्ञान भण्डार में से प्रतियोगी अपनी समुचित तैयारी कर सके।

पर्यावरण के क्षेत्र में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता की विषय-वस्तु को निम्न प्रकार तदर्थ रूप से समेकित किया जा सकता है–

- **प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिये विषय-वस्तु सूची–**

1. प्राकृतिक संसाधन और उनका उपयोग।
2. पृथ्वी और उसकी संरचना।
3. ब्रह्माण्ड।
4. जल, वायु, भूमि, शोर और इनसे सम्बन्धित प्रदूषण।
5. वन एवं वन्य जीव और उनका संरक्षण।
6. उद्योग तथा आवागमन के साधनों से उत्पन्न प्रदूषण।
7. ऊर्जा, इसके विभिन्न रूप तथा वैकल्पिक स्रोत।
8. विभिन्न प्रकार के पर्यावरण पारिस्थितिकी तन्त्र।
9. भोजन और स्वास्थ्य।
10. अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ, जैसे–नगरीकरण, ग्रीनहाउस प्रभाव, ओजोन पर्त का विनाश, बढ़ती जनसंख्या आदि।
11. पर्यावरणीय कानून।
12. पर्यावरण के क्षेत्र में विभिन्न कार्यरत संस्थाएँ।
13. पर्यावरण के क्षेत्र में आन्दोलन, पुरस्कार, दुर्घटनाएँ, सम्मेलन एवं कार्यगोष्ठियाँ।
14. प्रदूषण नियन्त्रण कार्य।
15. बाँध, नदी घाटी परियोजनाएँ आदि।

- **प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के कुछ प्रश्नों के नमूने भी यहाँ प्रस्तुत हैं–**

1. सूर्य मुख्यतः किन तत्त्वों से बना है ?
   (With what elements is the sun mainly composed of ?)
   सही उत्तर–हाइड्रोजन और हीलियम (Hydrogen and Helium)
2. पृथ्वी के सबसे निकट कौन सा ग्रह है ?
   (Which planet is nearest to the earth ?) **सही उत्तर–शुक्र (Venus)**

3. वायुमण्डल में ओजोन पर्त कहाँ विद्यमान है ?
(Where in atmosphere does the ozone layer exist ?)
सही उत्तर—समताप मण्डल की ऊपरी सतह पर (At the upper most layer of stratosphere)

4. भारत के किस राज्य में सबसे कम वन हैं ?
(Which state of India possesses the least forests ?)
सही उत्तर—देहली; 6·67 प्रतिशत (Delhi : 6·67 %)

5. 'सामाजिक वानिकी' को अन्य किस नाम से भी पुकारते हैं ?
(By what other name also is the 'Social Forestry' called ?)
सही उत्तर—समाज सेवा वानिकी (Community Forestry)

6. भारत में सबसे बड़ा 'घड़ियाल संरक्षण केन्द्र' कहाँ है ?
(Where is the largest 'Crocodile Conservation Centre' located in India ?)
सही उत्तर—बहराइच (उत्तर प्रदेश) [Behraich : (U. P.)]

7. भारत में सबसे अधिक वन अभ्यारण्य किस राज्य में हैं ?
(In which state of India are the maximum number of wildlife sanctuaries ?)
सही उत्तर—अण्डमान एण्ड निकोबार द्वीप समूह (Andaman & Nichobar Island)

8. भारत में 'वन संरक्षण अधिनियम' कब से लागू हुआ ?
(When did the 'Forest Conservation Act' come into force in India ?)
सही उत्तर—सन् 1980 से (From the year 1980)

9. संयुक्त राज्य में 'पृथ्वी दिवस' प्रथम वार किस वर्ष मनाया गया ?
(In which year was the first 'Earth Day' celebrated in the United States ?)
सही उत्तर—22 अप्रैल, 1970 (22 April, 1970)

10. भारत में प्रसिद्ध 'चिपको आन्दोलन' कहाँ से प्रारम्भ हुआ था ?
(From where did the famous 'Chipko Movement' in India begin ?)
सही उत्तर—उत्तरकाशी और गोपेश्वर (गढ़वाल क्षेत्र) [Uttarkashi & Gopeshwar (Garhwal Area)]

5. वाद-विवाद प्रतियोगिता (Debate Competition)

इस प्रतियोगिता को भी सेकण्डरी, सीनियर सेकण्डरी तथा महाविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये अलग-अलग वर्ग में आयोजित किया जा सकता है। किसी भी वर्ग में अधिक प्रतियोगी होने पर उनके भी जोन बनाने पड़ सकते हैं और फिर जोन स्तर पर प्रथम और द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों के लिये फाइनल (अन्तिम) राउण्ड करना होता है।

वाद-विवाद प्रतियोगिता में किसी भी पूर्व घोषित अथवा प्रतियोगिता के स्थान पर ही घोषित विषय पर प्रतियोगी को पक्ष अथवा विपक्ष में बोलने की स्वतन्त्रता होती है। प्रत्येक वक्ता को कुल पाँच मिनट दिये जाते हैं। कम से कम तीन सदस्यों की टीम निर्णायक दल का काम करती है, जिनके अंकों के आधार पर वक्ताओं को प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान दिया जाता है।

इस प्रतियोगिता में पर्यावरण के वृहद् क्षेत्र को पाठ्यक्रम के रूप में स्वीकार कर उसी पर विषय बना दिये जाते हैं। **कुछ नमूने के विषय यहाँ दिये जा रहे हैं—**

वाद-विवाद प्रतियोगिता के नमूने के विषय—

1. इस सदन की सम्मति में,
'जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण विनाश का मूल कारण है'।
(In the opinion of this house,
'Growing number is the root cause of environmental destruction'.)

2. इस सदन की सम्मति में,
'तकनीकी विकास ही पर्यावरण असन्तुलन के लिये उत्तरदायी है'।
(In the opinion of this house,
'Technology development is only responsible for the environmental imbalance'.)

मूल्यांकन के लिये भी निर्णायक मण्डल के सदस्यों को कुछ दिशा-निर्देश दिये जाने अपेक्षित हैं, जिससे—(1) प्रतियोगियों की समग्र योग्यता का अंकन किया जा सके और (2) उनको समान रूप से परखा जा सके। इस हेतु **विभिन्न आधार बिन्दु** अग्रांकित हो सकते हैं—

विषय-वस्तु	प्रस्तुतीकरण	भाषा और शैली	मौलिकता	प्रभावोत्पादकता	कुल
20%	20%	20%	20%	20%	100%
यदि कुल अंक 50 हो तो,					
10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	50 अंक

वाद-विवाद प्रतियोगिता के निर्णय के बाद किसी विशिष्ट व्यक्ति से प्रतियोगिता विषय पर वक्ताओं के विचारों पर आधारित समापन वक्तव्य दिलाया जाना भी एक औपचारिकता होती है, जिसकी पूर्ति भी की जानी चाहिये।

6. अन्तर्विद्यालयी सौन्दर्य प्रतियोगिता (Inter School Beautification Competition)

इस प्रतियोगिता का आयोजन सेकण्डरी और सीनियर सेकण्डरी विद्यालयों के लिए किया जाता है जिसके पीछे **निम्न प्रमुख उद्देश्य** रहते हैं—

1. विद्यार्थियों को पर्यावरण के विभिन्न पक्षों की जानकारी देना,
2. विद्यार्थियों में स्वच्छता की आदतों का विकास करना,
3. विद्यार्थियों को विद्यालय में गन्दगी न फैलाने देने की आदत डालना, और
4. विद्यालय भवन को सुन्दर, आकर्षक बनाना और उसे प्राकृतिक पर्यावरण से सुसज्जित करना।

इसके अतिरिक्त भी इस प्रतियोगिता के कई अन्य उद्देश्य हो सकते हैं लेकिन सामूहिक रूप से पर्यावरण संरक्षण के बारे में सोचने और उस पर कार्य करने के सन्दर्भ में यह प्रतियोगिता अपने आप में अनूठी है।

इस प्रतियोगिता में जो भी विद्यालय सम्मिलित होते हों उन्हें उन बिन्दुओं की सूची पूर्व में ही भेज देनी चाहिये जिनके आधार पर इस प्रतियोगिता का मूल्यांकन किया जाना हो। ऐसी ही एक तदर्थ सूची यहाँ प्रस्तावित है—

- **विद्यालय सौन्दर्य प्रतियोगिता के मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु—**

क्र० सं०	आधार बिन्दु	भारण	अंक (अधिकतम अंक=100)
1.	विद्यालय भवन का स्वरूप	10%	10
2.	बाहरी एवं सामान्य रख-रखाव (पुताई, रंगाई, लिपाई एवं सफाई)	10%	10
3.	कक्षा-कक्षों की सफाई व व्यवस्था	10%	10
4.	मूत्रालय एवं शौचालय	10%	10
5.	पीने के पानी की व्यवस्था	10%	10
6.	पेड़, बाग-बगीचा, लॉन आदि एवं इनके रख-रखाव की व्यवस्था	10%	10
7.	खेल के मैदान	10%	10
8.	विद्यार्थी की पोशाक व उनकी स्वच्छता की आदतें	10%	10
9.	प्रार्थना स्थलीय कार्यक्रमों में पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान का समावेश	10%	10
10.	कोई विशिष्टता (यदि हो)	10%	10
	योग	100%	100

इस प्रतियोगिता में **मूल्यांकन समिति का निर्माण** एक महत्त्वपूर्ण पद है क्योंकि इस प्रतियोगिता को प्रभावी अथवा प्रभावहीन बनाना इसी समिति पर निर्भर करता है। अतः यह प्रस्तावित है कि इस समिति में अग्रलिखित व्यक्तियों को रखना उचित रहेगा—

1. जिला शिक्षा अधिकारी अथवा अतिरिक्त जिला शिक्षा अधिकारी	अध्यक्ष
2. प्रधानाचार्य सीनियर सेकण्डरी स्कूल	सदस्य
3. पर्यावरण में रुचि रखने वाले कोई प्रधानाचार्य/अध्यापक/विशेषज्ञ	सदस्य
4. कोई महिला प्रधानाचार्य/प्रधानाध्यापिका	सदस्य
5. जिला शिक्षा अधिकारी (छात्र/छात्रा) कार्यालय का शैक्षिक अधिकारी	सदस्य-सचिव

यह प्रतियोगिता जिले स्तर पर ही प्रति वर्ष कराई जानी अपेक्षित है। इससे पूरे जिले में पर्यावरण के प्रति एक जागरुकता अभियान निरन्तर चलता रहेगा।

7. पत्र वाचन प्रतियोगिता (Paper Reading Competition)

यह प्रतियोगिता सेकण्डरी विद्यालय से लेकर महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के लिये स्वतन्त्र और समान रूप से आयोजित की जाती है और सम्पूर्ण पर्यावरण (प्राकृतिक और मानवकृत), प्रदूषण और उसकी रोकथाम, विभिन्न समस्याएँ और प्रबन्ध तथा राज्य एवं भारत सरकार द्वारा किये जा रहे कार्य आदि इस प्रतियोगिता का स्थूल पाठ्यक्रम रहता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के पर्यावरणीय कार्यकलाप भी इसके पाठ्यक्रम में सम्मिलित किये जा सकते हैं।

प्रतियोगिता के विषय पहले ही प्रसारित कर दिये जाते हैं, जिनमें से किसी एक विषय पर प्रतियोगी शिक्षक अपना पत्र (किसी भी भाषा में अथवा जिनमें आप चाहें) सीमित सीमा में तैयार करके प्रतियोगिता संयोजक के पास भेज देता है। विषयों के नमूने निम्न प्रकार हो सकते हैं—

- **पत्र वाचन प्रतियोगिता के विषयों के नमूने :**

1. वनों के नष्ट होने के कारण तथा इस समस्या के निवारण हेतु आपके सुझाव
   (Causes of depletion of forests and your suggestions for preventing this problem)
2. विश्व का बढ़ता तापमान और उसके सम्भावित परिणाम
   (Increasing global temperature and its possible consequences)
3. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 और प्रदूषण नियन्त्रण में उसकी प्रभावोत्पादकता
   (The Environment (Protection) Act, 1986 and its effectiveness in controlling pollution)
4. वाहन प्रदूषण और इसका जनमानस पर प्रभाव
   (Vehicular pollution and its effect on public)
5. सेकण्डरी स्तर के स्कूल के विद्यार्थियों के लिये अपेक्षित पर्यावरणीय ज्ञान
   (Necessary knowledge of environment for the school students of secondary level)

प्रतियोगिता संयोजक प्राप्त पत्रों को अलग-अलग समूहवार, 3 (तीन) विषय विशेषज्ञों के पास क्रम से भेजने की व्यवस्था करता है और साथ ही मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु भी प्रेषित करता है। वह आधार बिन्दु निम्न हो सकते हैं—

पत्रों के मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु—

विषय-वस्तु	मौलिकता	भाषा/शैली	उपादेयता/प्रभावोत्पादकता	कुल योग
20 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	50 अंक
40%	20%	20%	20%	100%

मूल्यांकन के पश्चात् प्रत्येक विषय वर्ग में वरीयता से प्रथम चार (4) पत्रों को (प्रथम, द्वितीय, तृतीय और सांत्वना स्तर) अन्तिम पत्र वाचन हेतु चुना जा सकता है। पाँचों वर्गों में इस प्रकार कुल पत्रों की संख्या 20 (बीस) होगी (कुछ कम अथवा अधिक संख्या भी हो सकती है)। इन पत्रों के लेखकों को किसी निश्चित दिन निर्धारित समय और स्थान पर आमन्त्रित कर इनका वाचन कराया जाता है। व्यवस्था इस प्रकार की हो कि कुछ स्रोता संख्या भी हो, पर्यावरण में रुचि रखने वाले कुछ अध्यापक तथा अन्य व्यक्ति भी हों और कुछ विशेषज्ञ भी। ऐसा अवश्य लगना चाहिये जिससे पत्र वाचकों को सारा वातावरण गरिमामय सा लगे। 3 सदस्यीय एक निर्णायक दल का पहले ही चयन कर उसको आमन्त्रित कर लेना चाहिये।

प्रत्येक पत्र-वाचक के पाठन करने पर उसके अन्तिम मूल्यांकन करने का आधार बिन्दु अग्र प्रकार हो सकता है—

पत्र-वाचकों द्वारा पढ़े जाने वाले पत्रों के मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु—

प्रस्तुतीकरण	विषय-वस्तु	प्रभावोत्पादकता	भाषा/शैली	कुल योग
15 अंक	15 अंक	10 अंक	10 अंक	50 अंक
(30%)	(30%)	(20%)	(20%)	(100%)

प्रत्येक विषय वर्ग में प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतियोगी शिक्षक को यथास्थान ही पुरस्कृत करना चाहिये। सभी पत्र-वाचकों को प्रशंसा पत्रों का प्रावधान रखना उचित रहता है। यदि इनके आने-जाने का यात्रा व्यय और ठहरने और खाने-पीने की व्यवस्था भी रखी जा सकती है तो वह भी अच्छी और व्यवस्थित रूप से होनी चाहिये।

चूँकि यह सभी पत्र बहुत ही अच्छी, तथ्यपूर्ण और अधिकृत सामग्री लिये हुये होंगे, अतः इनका प्रकाशन कराना चाहिये और अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने हेतु विविध प्रकार से प्रसारित करना अथवा कराना चाहिये। पर्यावरण के क्षेत्र में यह प्रतियोगिता बहुत ही उपयोगी होती है।

8. फोटोग्राफी प्रतियोगिता (Photography Competition)

यह प्रतियोगिता जन-सामान्य के लिये है। चूँकि इसमें भाग लेने वाले अधिकांश व्यक्ति व्यावसायिक (Professionals) होते हैं, अतः उचित यही रहता है कि इस प्रतियोगिता को दो वर्गों में आयोजित किया जाये। एक—विद्यार्थियों के लिये तथा दो—अन्य सभी लोगों के लिये। दूसरा विभाजन फोटोग्राफी के दो अन्य प्रकार पर भी करना पड़ता है और वह है—(1) रंगीन (Coloured) और (2) श्याम-श्वेत (Black & White)। इस प्रकार इन चारों बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुये यह प्रतियोगिता आयोजित की जाती है।

- **इसके अतिरिक्त भी कुछ विशिष्ट बिन्दु पूर्व में ही प्रसारित किये जाते हैं—**

1. फोटोग्राफ का साइज निश्चित होना चाहिये, जैसे—8" × 10", 10" × 12" अथवा 12" × 15" (कोई एक)।
2. फोटोग्राफ को बिना माउन्ट ही प्राप्त करना चाहिये।
3. फोटोग्राफ के पीछे शीर्षक (Title) और वह वर्ग जिसमें प्रविष्टि देनी हो वह स्पष्ट होना चाहिये।
4. फोटोग्राफ के पीछे ही प्रतियोगी का नाम, पता और टेलीफोन नम्बर होना चाहिये।
5. एक प्रतियोगी अधिकतम कितने विषय वर्गों में अपनी प्रविष्टि दे सकता है, यह पहले ही निश्चित कर देना चाहिये।
6. डाक से प्राप्त होने वाली प्रविष्टियाँ मोटे लिफाफे में और रजिस्टर्ड मंगानी चाहिये जिससे वह क्षतिग्रस्त भी न हों और सुरक्षित भी रहें।
7. जिन चित्रों को पुरस्कार हेतु चुन लिया जाता है, उसका प्रदर्शन, प्रकाशन और किसी भी प्रकार के प्रसारण का अधिकार आयोजक संस्था का हो जाता है, यह पूर्व में ही स्पष्ट करना चाहिये। यदि सम्भव हो तो ऐसे फोटोग्राफों के नेगेटिव (Negative) परिणाम के बाद मंगा लेने चाहिये।
8. यह प्रतियोगिता हर स्तर पर महँगी है, अतः यह प्रयास करना चाहिये कि पुरस्कार यथा सम्भव नकद राशि में और अच्छी राशि में हों। इस राशि की जानकारी में ही प्रसारित कर देनी चाहिये।

फोटोग्राफी प्रतियोगिता के लिये विषयों का चयन अत्यन्त सूझ-बूझ से करना चाहिये जिससे कि पुरस्कृत चित्रों की जब आप प्रदर्शनी लगाकर विद्यार्थियों अथवा अन्य जन सामान्य को दिखायें तो उससे उनके मानस परिवर्तन हो सकें और पर्यावरण संरक्षण के प्रति उनका स्वतः ही रुझान हो सके। ऐसे कुछ विषय आगे दिये जा रहे हैं—

- **फोटोग्राफी प्रतियोगिता के लिये नमूने के विषय—**

1. स्वच्छ पर्यावरण (Clean Environment)
2. जनसंख्या विस्फोट (Population Explosion)
3. पर्यावरणीय आपदायें (Environmental Hazards)
4. जल संकट (Water Crisis)
5. अस्त-व्यस्त जीवन (Haphazard Life)

- **इस प्रतियोगिता के मूल्यांकन हेतु निश्चित ही विशेषज्ञ निर्णायक होंगे** लेकिन यह अच्छा रहता है कि तीन सदस्यीय निर्णायक मण्डल में तीन अलग-अलग क्षेत्र के व्यक्ति हों, जिनमें—

1. पर्यावरण विशेषज्ञ (Environment Specialist),
2. फोटोग्राफी विशेषज्ञ (Photography Specialist), और
3. प्रदर्शन विशेषज्ञ या संचार माध्यम का व्यक्ति अथवा पत्रकार (Exhibition Expert or Man of Communication or a Journalist)|

उचित रह सकते हैं। इससे मूल्यांकन भी सही और वांछनीय स्तर का होगा तथा आगे भी गति और नई दिशा मिल सकेगी।

मूल्यांकन हेतु कुछ आधार बिन्दु निम्न हो सकते हैं—

फोटोग्राफी प्रतियोगिता के मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु—

विषय-वस्तु	प्रसारित विषय के साथ अनुकूलता	सजीवता	कलात्मकता	प्रभावोत्पादकता	कुल योग
10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	50 अंक
(20%)	(20%)	(20%)	(20%)	(20%)	(100%)

फोटोग्राफी प्रतियोगिता यद्यपि एक मूक विधा है पर अत्यन्त प्रभावी माध्यम है और इसका उपयोग अनेकानेक प्रदर्शनियों के आयोजन कर और बहुत व्यापक तथा वृहद् क्षेत्र तक पहुँचाया जा सकता है।

9. डाक टिकट प्रतियोगिता (Philately Competition)

डाक टिकट का प्रारम्भ, चलन और व्यापक प्रसार का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। विश्व में जब लोगों को स्थानीय अथवा अपने कस्बे अथवा नगर से बाहर पत्रों को भेजने की अतीव कठिनाई आई तब से यह प्रथा चलाई गई। विश्व का प्रथम डाक टिकट ग्रेट ब्रिटेन द्वारा 1 मई, 1840 को निकाला गया था जिसे 6 मई से कार्य में लेना शुरू किया था। यह श्रेय इसी देश के एक निवासी रोलेन्ड हिल (Rowland Hill) को जाता है जिन्होंने सन् 1837 में रानी विक्टोरिया को अपनी एक पुस्तिका 'डाकघरों का विकास, आवश्यकता और कार्यक्रम' (Development of Post offices, Need and Strategy) प्रस्तुत की जिसमें पोस्टेज स्टाम्प से होने वाले लाभ का विस्तृत विवरण था। यह प्रसन्नता की बात ही रही कि ब्रिटिश संसद ने इस सुझाव को स्वीकार किया।

इस क्रम में फिर अनेक देशों ने अपने-अपने डाक टिकट निकाले। भारत का प्रथम डाक टिकट सन् 1854 में निकाला गया जो ½ आने (Half-Anna) का था और रोली (Vermillion) के रंग का था। इस पर महारानी विक्टोरिया के सिर का चित्र था। इसके कुछ दिन बाद ही ½ आना, 1 आना, 2 आना और 4 आना के भिन्न-भिन्न रंगों में डाक टिकट निकाले गये। सन् 1854 से 1926 तक भारत के टिकट लन्दन में थोमस डिलारु (Thomas De La Rue) कम्पनी द्वारा छापे जाते थे। सन् 1926 के बाद नासिक में सीक्योरिटी प्रिन्टिंग प्रेस (Security Printing Press) से भारत के डाक टिकट छपने लगे।

जब डाक टिकटों की अधिक संख्या में आवश्यकता पड़ने लगी तब डाक टिकट के ऊपर ही विभिन्न प्रकार के चित्र, समाचार और संदेश (Pictures, Messages & Communications) प्रकाशित होने लगे, जैसे—अशोक स्तम्भ (Ashoka Pillar), अधिक अन्न उपजाओ (Grow More Food) और वन्य जीव संरक्षण हेतु बाघ (Tiger) आदि। विभिन्न महापुरुषों की यादों में, जवाहर लाल नेहरू (Jawahar Lal Nehru), महात्मा गाँधी (Mahatma Gandhi), डॉ० राजेन्द्र प्रसाद (Dr. Rajendra Prasad) आदि पर भी टिकट छपे। साहित्य के क्षेत्र में कवियों पर, सूरदास (Surdas), मीरा (Meera), तुलसीदास (Tulsi Das), कबीर (Kabir) आदि पर डाक टिकट प्रसारित हुये और फिर अनेक क्षेत्रों को इस योजना ने समाहित कर लिया गया।

पर्यावरण का क्षेत्र भी इस योजना से छूट नहीं सका। अनेक भवन—मन्दिर, इमारतें, पशु-पक्षी, आवागमन के साधन, नदियाँ, बाँध, ऊर्जा के साधन और स्रोत, कृषि उपज, कृषि यन्त्र और औजार, योजनाएँ आदि इन पर खूब चित्रित हुये। पूरे विश्व में डाक टिकटों के प्रकारों की संख्या इतनी अधिक है कि सामान्य तौर पर कोई यह बता नहीं सकता कि यह कितनी होगी ? कई देशों ने तो इस विधा को उनके देश के लिये राजस्व कमाने का साधन बनाया तो टिकटों का अनगिनत संख्या में मुद्रण हुआ। कुछ लोगों ने टिकट संग्रह (Stamp Collection) का शौक पाल लिया इससे भी इन सभी तरह के टिकटों की खूब खपत हुई। इसे टिकट संग्रहकर्ता शाही शौक कहते हैं—**'शौकों का सम्राट और सम्राटों का शौक' (King of the Hobbies and Hobby of the Kings)**।

इस प्रतियोगिता का आयोजन दो वर्ग समूहों में किया जा सकता है—

(1) **प्रथम जूनियर**—स्कूली विद्यार्थियों के लिये (Junior—For School Students) और

(2) **दूसरा सीनियर**—जन सामान्य के लिये अथवा यों कहें डाक टिकट संग्रहकर्ताओं के लिये (Senior—For Common People or Philatelists)।

विषय तथा डाक टिकट अथवा अन्य सभी प्रकार के टिकटों को प्रतियोगिता संयोजक के पास भेजने का तौर-तरीका अच्छी तरह प्रसारित किया जाना चाहिये, जिससे आप इस प्रतियोगिता को ठीक प्रकार से आयोजित कर सकें। वस्तुतः यह प्रतियोगिता केवल प्रदर्शनी (Exhibition) के रूप में ही आयोजित होती है जिसको प्रस्तुत करने का अपना विशेष तरीका है; इसे आगे प्रस्तुत करेंगे।

- **डाक टिकट प्रतियोगिता के लिये विषय बिन्दु निम्न प्रकार के हो सकते हैं—**

1. वन्य जीव (Wild Life)
2. वन (Forests)
3. यातायात के साधन (Means of Transportation)
4. स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य शिक्षा (Health and Hygiene) और
5. समुद्री जीव (Marine Life)

- **प्रदर्शनी में डाक टिकट प्रदर्शित करने का एक सामान्य तरीका है—**

(1) एक मानक माप के बोर्ड्स-साइज 129 सेमी ऊँचे तथा 98·95 सेमी चौड़े, जो प्रदर्शनी के काम में लिये जाते हैं, पर मानक प्रकार (22 × 29 सेमी) के 16 एलबम पृष्ठ लगाये जा सकते हैं। एक एलबम पृष्ठ पर यदि आप अधिकतम 20 टिकट निश्चित कर दें तो इस प्रकार एक फ्रेम पर 16 × 20 = 320 तक डाक टिकट लग जायेंगे। एक प्रतियोगी को केवल एक विषय पर एक ही फ्रेम आवंटित करें। इस प्रकार भी अधिक प्रविष्टियों की आशंका हो तो यह भी निर्धारित किया जा सकता है कि कोई प्रतियोगी अधिकतम दो विषयों में अपनी प्रविष्टि भेज सकता है।

(2) इस प्रतियोगिता की प्रदर्शनी संयोजक को उन व्यक्तियों के सहयोग से लगानी चाहिये जो इस विधा से परिचित हों। स्थान भी साफ-सुथरा, प्रकाशयुक्त, सुरक्षित और देखने वालों के करीब होना चाहिये। टिकटों के बारे में जानकारी दे सकने वाले वॉलण्टियर्स यदि विषयवार फ्रेमों के बीच हों तो यह प्रतियोगिता और भी प्रभावी हो सकती है।

(3) मूल्यांकन हेतु आधार बिन्दु बहुत सामान्य नहीं हो सकते क्योंकि इन टिकटों के प्रकाशन में, मुद्रण में इतनी बारीकियाँ हैं जो समेकित नहीं हो सकतीं। अतः टिकट संग्रहकर्ताओं के पैनल में से सर्वोत्तम, जो अपनी सेवाएँ और समय दे सकें, को निर्णायक मण्डल में सम्मिलित करना चाहिये। विभिन्न विद्यालयों के बालकों को समयबद्ध कार्यक्रम से बुलाकर दिखाने से इसकी उपयोगिता बढ़ेगी। समाचार

पत्र, आकाशवाणी और दूरदर्शन से कवरेज कराके इस प्रतियोगिता की उपादेयता जन-मानस को बतानी भी बहुत आवश्यक एवं उचित है।

10. नाटक प्रतियोगिताएँ
(Plays Competitions)

प्राचीन काल से ही जब से भाषा के माध्यम से लोगों के बीच भावाव्यक्ति का अवसर मिला तभी से नाटक विधा का प्रचलन शुरू हुआ। पढ़े, लिखे और अनपढ़ सभी इससे लाभान्वित हो सकते थे, अतः नाटकों का लेखन और मंचन अति प्रभावी रहा। जो भी बात लोगों तक पहुँचानी होती थी उसे ही पात्रों द्वारा कहलवाकर इस प्रकार आत्मसात् करा दिया जाता था कि देखने वाले अपने मानस में परिवर्तन महसूस करते थे। प्रारम्भ में लगभग 2 से 3 घण्टे की अवधि के नाटक लिखे जाते थे और इसके सामान्यतया तीन अंक होते थे। हर अंक के बाद विश्राम दिया जाता था जिससे दर्शक पिछले दृश्यों की अनुभूति कर सकें और आगे के लिये जिज्ञासा की जाग्रति हो। अपने देश में ही विभिन्न क्षेत्रों में नाटकों का लेखन इतना लोकप्रिय रहा कि आज भी पिछले 50-60 वर्षों की याद उन लोगों से सुनी जा सकती है जिन्होंने पुराना समय देखा है। ऐतिहासिक नाटक, सामाजिक परिवर्तन हेतु नाटक, मनोविनोद हेतु हास्य नाटक, प्रशासन और राजनीति के सन्दर्भ में लिखे गये नाटक सभी बहुत सराहे गये हैं।

समय की कमी और आम आदमी की व्यस्तता ने **इन नाटकों** के स्वरूप में परिवर्तन ला दिया। तीन घण्टे की अवधि वाले तीन अंकीय नाटक लगभग एक घण्टे की अवधि के **एकअंकीय नाटक** के रूप में आये और फिर छोटी अवधि के नाटक **लघु-नाटक और लघु-नाटिकाओं** के रूप में आ गये। यह लघु नाटक लगभग 20 से 30 मिनट की अवधि के होते हैं। आम आदमियों तक अपनी बात पहुँचाने की दिशा ने इन लघु नाटकों के रंगमंचीय रूप में भी परिवर्तन हुआ और **नुक्कड़ नाटकों** के रूप में अब यह मुखरित होने लगे। **आज इन नुक्कड़ नाटकों का बहुत जोर है और यह इतने प्रभावी हैं कि चलती जनता को रोक पाने में यह समर्थ हैं।**

कठपुतली नाटक भी इन्हीं नाटकों की देन है। नाटकों में व्यक्ति पात्र के रूप में अपने आपको प्रस्तुत कर वह बात कहता है जो बात नाटककार को कहलानी होती है, वहीं पात्र का रूप कठपुतली बन जाता है और वही सन्देश उन दर्शकों को देती है जो आम नाटक देता है। हाँ यह मनोरंजन और आमोद-प्रमोद की विधा है जो बहुत पसन्द की जाती है।

पर्यावरण के क्षेत्र में लघु नाटक, नुक्कड़ नाटक और कठपुतली नाटक इन दिनों बहुत लोकप्रिय हुए हैं और इनकी प्रतियोगिताएँ भी आयोजित होने लगी हैं। वृक्षारोपण की आवश्यकता, पेड़ से कतिपय लाभ, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण : कारण और निवारण, वायु प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट, परिवहन से प्रदूषण, ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन की पर्त का निरन्तर ह्रास आदि अनेक विषयों को इन नाटकों में प्रस्तुत किया जाने लगा है।

इन प्रतियोगिताओं का आयोजन, मूल्यांकन और इसी आधार पर प्रतियोगी दलों को प्रशंसा-पत्र और पुरस्कार की व्यवस्था अन्य प्रतियोगिताओं की भाँति पूर्व में ही निश्चित की जा सकती है। पूरे देश में आज इन प्रतियोगिताओं के प्रति मंचन करने वाले तथा दर्शकों में काफी सम्मान है।

- **एक छोटा-सा कठपुतली नाटक यहाँ इन प्रतियोगिताओं के सन्दर्भ में प्रस्तुत है—**

सफेद कमीज

पात्र-परिचय

गजानन : गाँव का एक व्यक्ति एवं गीता का पति (उम्र 40 वर्ष)
गीता : गजानन की पत्नी (उम्र 35 वर्ष)
दादी : गाँव की बुजुर्ग महिला (उम्र 60 वर्ष)

(प्रथम दृश्य)

गजानन : देख गीता। अब के रविवार को हम अपने हरिया का जन्म दिन मनायेंगे, इसलिये तू सारी तैयारी करके रखना।

गीता : अच्छा जी।

गजानन : और सुन। आज मेरे साहब एकदम सफेद झकाझक चमकदार कमीज पहनकर आये थे।

गीता : तुम्हारे साहब पहन कर आये थे तो मैं क्या करूँ ? साहब जाने और तुम जानो।

गजानन : तू समझती नहीं, जब देखो तब उतावली हो जाती है।

गीता : अच्छा बोलो।

गजानन : मैं कह रहा था मेरी सफेद कमीज तूने धोई थी ?

गीता : हाँ.........हाँ.........धोई थी और रोज धोती हूँ, क्या हो गया आज, नई बात थोड़े ही है।

गजानन : बात-बात पर तुनकती है, जरा नरमी रखा कर।

गीता : मैं जब भी बोलती हूँ, तुम्हें बुरा लगता है। घर में लाने से पहले विचार कर लेते।

गजानन : विचार कर लाया हूँ। देख समझ मेरी कमीज भी साहब जैसी धो दे।

गीता : वो कैसे ?

गजानन : एक पाउडर आता है धोने का, क्या नाम उसका देख हाँ.........हाँ.........डि डिट डिटर डिटर।

गीता : कहाँ से आता है ?

गजानन : बाजार से मैं ला दूँगा। तू उसे पानी में एक चम्मच डालकर घोल लेना।

गीता : वो घुलता नहीं है। मैंने देखा है डाक्टर साहब के यहाँ।

गजानन : मत घुलो। तू तो उसको डालकर हिलाइयो।

गीता : हाँ, हिलाइयो फिर ?

गजानन : खूब झाग हो जावेंगे।

गीता : हाँ.........हाँ.........सब मालूम है, मैं आप ही कर लूँगी। नहीं जानूँगी तो डाक्टरनी जी से पूछ लूँगी। तुम्हें तो कमीज मिल जावेगी।

गजानन : ये हुई न बात। तेरी अकल को दाद देनी पड़ेगी। इसीलिए तो तुझे ब्याह कर घर में लाया।

गीता : बस-बस ज्यादा बोलो मत। मैं जानती हूँ, तुम मर्दों की आदत (पुतलियों का प्रस्थान)।

(दूसरा दृश्य)

(जन्म दिन की तैयारी)

गीता : घर की साफ-सफाई सब कर ली। दरी बिछा दी। लोग आते ही होंगे। अभी तक वे नहीं आये।

गजानन : (प्रवेश करते हुए) ले आ गया। आज तो तेरी धोई हुई ये कमीज बहुत भा रही है।

गीता : छोड़ो और सामान मुझे दो।

गजानन : (प्लास्टिक की थैलियों में भरा सामान पकड़ाता है) ले पकड़।

गीता : जल्दी दो। आधे घण्टे में सब तैयारी हो जायेगी। तुम हरिया को तैयार कर लो और मेहमान आते ही होंगे।

गजानन : अच्छा हुजूर। (गीता व गजानन का प्रस्थान)।

(तीसरा दृश्य)

गीता : क्या जमाना आया है। सब तरफ सड़कों पर प्लास्टिक की थैलियाँ भांत-भांत की फैल रहीं हैं।

गजानन : क्या बड़बड़ा रही है ?

गीता : तुम्हें तो हर समय मसखरी सूझती है। गाँव की औरतें कह रही थीं कि ये प्लास्टिक का कचरा सड़कों पर बिखर रहा है।

गजानन : तो तुझे क्या ? तू सड़क की मालकिन है ?

गीता : अजी मालकिन तो मेहतरानी है। जो आज सबेरे ही सबेरे बड़बड़ा रही थी।

गजानन : वह क्यों बड़बड़ा रही थी ?

गीता : राम जाने। कह रही थी कि प्लास्टिक का जमाना आ गया है। सारी सड़क व नालियों में ये थैलियाँ फैली रहती हैं। कागज हो तो गाय भी खा जाये।

गजानन : बात तो उसकी सही है। हर चीज आजकल थैलियों में आने लग गई है। सबेरे तो कितने लोग सब फंक देते हैं।

गीता : और क्या ? पान तक प्लास्टिक के कागजों में आवे। दूध, दही, मिठाई तो कब से इनमें देने लगे हैं।

गजानन : उड़ते-उड़ते दूर-दूर तक फैल जाते हैं। कागज तो चूल्हे में भी जला लें पर इन्हें कहाँ जलावें।

गीता : अजी—पड़ौस की चाची कह रही थी कि मैं तो इन्हें एक गड्ढे में डाल देती हूँ।

गजानन : तो वहाँ कौन-सा इन पर असर पड़ता है ? वहाँ भी ये ऐसे ही रहते हैं।

गीता : सुनो जी, नगरपालिका वाले भी इन्हें अपनी गाड़ी में भर कर ले जाते हैं।

गजानन : यूं तो कबाड़ी वाले भी इन्हें ले लेते हैं, सस्ते दामों पर।

गीता : फिर क्या है, मुई फालतू ही सबको रो रही थी।

गजानन : तू समझती नहीं। अरे नगरपालिका वाले और कबाड़ी वाले तो कभी-कभार इन्हें ले जाते हैं। बाकी दिनों में तो ये इधर-उधर फैले ही रहते हैं।

गीता : और क्या, रोज नालियों में ये फंस जाते हैं और सारा गंदा पानी सड़क पर फैल जाता है। उसे बार-बार कौन साफ करे ?

गजानन : छोड़ ये बातें। तू तो उस दिन वाली मिठाई बची हो तो ला। भूख लग रही है।

गीता : दाल रोटी बना ली है, सो खा लो।

गजानन : चलो भई, पेट पूजा करें।

(चतुर्थ दृश्य)

दादी : गीता ओ गीता.........। कहाँ मर गई ?

गीता : क्या है दादी, जरा रसोई में थी।

दादी : कभी तो चैन लिया कर। सारा दिन काम ही काम.........।

गीता : चैन तो दादी मरने पर ही मिलेगा। तुम तो काम की बात करो।

दादी : दो बजे कीर्तन है, जल्दी आजाइयो।

गीता : दादी। अभी तो कपड़े धोने हैं। हरिये की कमीज, उनकी कमीज, मेरी साड़ी।

दादी : मैं कपड़ों के नाम नहीं पूछ रही हूँ।

गीता : मैं तो कह रही थी एक डिटरजन पाउडर ये लाये हैं, जो उससे धोऊंगी। मेहनत भी कम लगेगी पर झकाझक हो जायेंगे कपड़े।

दादी : अरे साबुन की तो होड़ ही नहीं ?

गीता : पर दादी, साबुन से तो ऐसे झकाझक थोड़े ही होवे।

दादी : अरे सुन, आज बहू कह रही थी कि डिटरजन पाउडर से कपड़े झकाझक तो हो जायें। पर ये जो पाउडर है, यूँ का यूँ फैल जावे।

गीता : फैल जावे ?

दादी : ये पानी में मिलकर खेतों तक पहुँच जावे तो मिट्टी पर जम जावे। फसल को नुकसान करे।

गीता : हाँ दादी, बात तो ठीक है। लोग इन्हें बनाते जा रहे हैं और ये धरती पर फैलते जा रहे हैं।

दादी : बिना सोचे समझे इनका उपयोग करने से तो वही बात होगी 'आ बैल मुझे मार'।

गीता : हाँ तो फिर दादी तुम्ही कुछ करो। आखिर में, आगे जाकर नुकसान तो हमारी फसलों को ही होगा। फसल न होगी तो खाने को अन्न कहाँ से मिलेगा ?

दादी : अरे अन्न कम होगा तो महँगाई बढ़ेगी। लोग भूखे मरेंगे।

गीता : दादी। तुम कीर्तन में सब औरतों को इसके बारे में बताओ और यह कहो कि.........

दादी : क्या बात ?

गीता : कि एक तो इनका उपयोग सोच-समझ कर कम से कम करें।

दादी : अरे पगली, जो जरूरत है तो करना ही पड़ेगा।

गीता : यदि करें भी तो, डिटरजन के पानी को खेतों की तरफ न जाने दें।

दादी : फिर क्या अपने घर में रखेंगी ?

गीता : ऐसा नहीं। गाँव के निकट एक गड्ढा खोदकर नालियों का रुख उधर की ओर कर दें।

दादी : ठीक है। मैं सरपंच से भी बात करूँगी। कहूँगी कि ये कचरा वगैरह भी सारा हमेशा-हमेशा इकट्ठा करवा कर उस गड्ढे में डाल दें।

गीता : वाह दादी, तभी तो कहते हैं कि बुढ़ापे में बुद्धि तेज हो जाती है।

दादी : मैं तो कीर्तन में सारी औरतों को भी इसके लिये कह दूँगी। अब मैं तो जा रही हूँ, तू जल्दी आ जाना।

गीता : अभी आ ही रही हूँ।

[प्रस्थान]

[व्यापक प्रचार एवं प्रसार हेतु पर्यावरण विभाग, राजस्थान सरकार द्वारां सम्पादित कठपुतली नाटक संग्रह 'संकल्प' से प्रचार हेतु ही साभार]

11. पोस्टर पेन्टिंग प्रतियोगिता (Poster Painting Competition)

जिस प्रकार बाल चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है उसी प्रकार यह प्रतियोगितां भी आयोजित की जा सकती है। केवल अन्तर इतना है कि सामान्यतया यह अपेक्षाकृत बड़ी आयु वर्ग के विद्यार्थी तथा व्यावसायिक व्यक्तियों के लिये अधिक उचित एवं उपयुक्त है। प्रतियोगिता के विषयों का प्रसारण पहले भी किया जा सकता है और प्रतियोगिता स्थल पर भी बताया जा सकता है। पोस्टर शीट आयोजकों को देनी होती है। रंग-ब्रुश आदि की व्यवस्था प्रतियोगी स्वयं अपने स्तर पर करते हैं। विषय कुछ इस प्रकार दिये जा सकते हैं—

पोस्टर पेन्टिंग प्रतियोगिता हेतु नमूने के विषय—

1. परिवहन से प्रदूषण (Pollution by Transport)
2. प्राकृतिक सौन्दर्य (Natural Beauty)
3. विष उगलते उद्योग (Poison Exhaling Industries)
4. स्वच्छन्द विचरते वन्य जीव (Free Roaming Wildlife)
5. हरे-भरे जंगल (Green Dense Forests)

इस प्रतियोगिता के आधार पर बने पोस्टरों का उपयोग कालान्तर में व्यापक प्रसार हेतु किया जा सकता है, अतः इस प्रतियोगिता की जानकारी अच्छे स्तर पर समाचार-पत्र अथवा अन्य सुविधाजनक और प्राप्य मीडिया से किया जाना आवश्यक है। साथ ही यह भी प्रचारित करना उपयुक्त है कि श्रेष्ठ पोस्टरों की प्रदर्शनी जन-सामान्य हेतु लगाई जायेगी, इससे प्रतियोगियों की रुचि बढ़ेगी तथा अधिक लोग प्रतियोगिता में भाग लेंगे।

निर्णायक मण्डल में विषय विशेषज्ञ के साथ एक पर्यावरण विशेषज्ञ को भी सम्मिलित करना चाहिये। श्रेष्ठ पोस्टरों को यथास्थान ही पुरस्कृत करना अच्छा रहता है।

12. स्लोगन प्रतियोगिता (Slogan Competition)

यह प्रतियोगिता दिखने में बहुत सामान्य दिखती है लेकिन बहुत प्रभावी है। पर्यावरण के किसी भी पक्ष को लेकर कोई भी व्यक्ति अपनी प्रविष्टि 'स्लोगन' के साथ भेज सकता है। स्लोगनों की संख्या को सीमित करने के लिये प्रति व्यक्ति कितने अधिकतम स्लोगन भेज सकता है, इसे पूर्व में ही निश्चित कर देना चाहिये। सामान्यतया एक प्रविष्टि में एक या अधिक से अधिक दो स्लोगन काफी हैं। **स्लोगनों के कुछ नमूने आगे प्रस्तुत हैं—**

1. कूड़ा, करकट, गन्दा पानी।
   रोगों की करते अगवानी।।
2. अगर चाहिये लम्बी आयु।
   सेवन करें स्वच्छ जल, वायु।।
3. धूल, धुँआ और बढ़ता शोर।
   धरती चली नाश की ओर।।
4. मत लो तुम वृक्षों की जान।
   धरती होगी रेगिस्तान।।
5. जहाँ-जहाँ है हरियाली।
   वहाँ-वहाँ है खुशहाली।।

[पर्यावरण विभाग, राजस्थान द्वारा प्रकाशित 'पर्यावरण स्लोगन संग्रह' से साभार]

श्रेष्ठ स्लोगनों का निर्णायक मण्डल से चयन कर उन्हें पुरस्कृत किया जाना चाहिये। बाद में इन्हें पर्यावरण जन-चेतना के लिये उपयोग में लाया जा सकता है।

13. पर्यावरणीय विचार प्रतियोगिता (Environmental Message Competition)

यह प्रतियोगिता सामान्यतया उन लोगों के लिये आयोजित की जाती है जो व्यवसायी हैं और अपना उत्पाद अथवा विभिन्न वस्तुएँ ग्राहकों को बेचती हैं और बिल (Bills), नगद-पत्र (Cash Memos), चालान (Challans) आदि देती हैं। इन सभी प्रकार के पत्रों पर कोई **सन्देश** (Message) मुद्रित कराके व्यवसायी राष्ट्र हित में बिना कोई अतिरिक्त व्यय किये अपना योगदान दे सकते हैं इन **सन्देशों** (Messages) की भी प्रतियोगिता सम्भव है।

यह **सन्देश** सामान देने वाले लिफाफों पर, बस टिकटों के पीछे, सिनेमा की टिकटों पर, स्कूल कापियों के स्लिपों पर, लेखन सामग्री पर और अनेक ऐसे स्थानों पर छपवाया जा सकता है जिसे हजारों-लाखों लोग प्रतिदिन काम में लेते हैं। भारत सरकार द्वारा बिक्री किये जा रहे पोस्टकार्ड्स, अन्तर्देशीय पत्र, डाक लिफाफे तथा सरकारी कार्य में आने वाले लिफाफों पर इस प्रकार के **'सन्देश'** आपने देखे होंगे। रेलवे स्टेशनों पर भार लेने वाली मशीनों के टिकटों के पीछे भी 'सन्देश' रहते हैं। **यह कई प्रकार के होते हैं तथा हो सकते हैं—**

1. अधिक पेड़ लगाओ (Grow more trees)
2. पानी सीमित है, इसका अपव्यय न करें (Water is limited; do not waste it)
3. हर जगह न थूकें, इससे अनेक बीमारियाँ फैलती हैं (Do not spit every where; it leads to many diseases)
4. कम सन्तान, सुखी इन्सान (Less Children; Happy the Man)
5. पृथ्वी बचाओ (Save the Earth)

इस प्रकार के 'सन्देश' वस्तुओं के पैकिंग्स (कागज, पट्टे अथवा टीन) पर भी हो सकते हैं जिसमें दवाइयों के डिब्बे, दूध, अचार, पेन्ट्स, घी आदि के छोटे-बड़े डिब्बे हो सकते हैं। अगर इस तरह सोचें तो और भी अनेक स्थान ऐसे निकल आयेंगे जहाँ 'सन्देश' प्रसारित किये जा सकते हैं। यही नहीं बल्कि कपड़ों के बैनर्स, पेट्रोल पम्प्स पर लिखे गये **स्लोगन**, अखबारों में **मुद्रित वाक्य** आदि भी इसी श्रेणी में आते हैं।

इस प्रतियोगिता का आयोजन थोड़ा कठिन है। विज्ञप्तियाँ, समाचार-पत्रों व अन्य मीडिया के माध्यम से देकर लोगों को समझाना होगा। कुछ लोगों को जैसे—(1) पेट्रोल पम्प्स, (2) ड्राई क्लीनर्स, (3) होटल या रैस्टोरैन्ट, (4) स्टेशनरी विक्रेता, (5) सिनेमा, (6) फोटोग्राफर्स आदि से सम्पर्क साधकर एक बार यह प्रतियोगिता कर उनमें रुचि जगानी होगी। एक बार इस प्रकार की प्रतियोगिता में आई श्रेष्ठ प्रविष्टियों पर जन-समूह के आगे पुरस्कार देने भर की देर है कि आगे से ऐसी प्रतियोगिता में भाग लेने वालों की भीड़ लग जायेगी।

मूल्यांकन का आधार (1) श्रेष्ठ 'सन्देश', (2) 'सन्देश' की व्यापकता और (3) प्रस्तुतीकरण, हो सकता है।

14. कविता, गीत प्रतियोगिताएँ (Poems, Songs Competitions)

इन प्रतियोगिताओं का आयोजन सहज रूप से विद्यालयों में, महाविद्यालयों में और खुले मंच पर जनता में हो सकता है। छोटे बच्चों की छोटे-छोटे गीतों की प्रतियोगिता बहुत ही आकर्षक हो सकती है जिनमें प्राकृतिक सौन्दर्य, स्वस्थ जीवन, जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण, वन्य जीव आदि उनके रुचि के विषय हो सकते हैं और इनका चयन बच्चे अपनी पाठ्य-पुस्तकों में से, साप्ताहिक (रविवारीय) समाचार-पत्रों के बाल-जगत् विभाग से, रेडियो और दूरदर्शन पर आने वाली कविताओं से कर सकते हैं।

जन-सामान्य के लिये कवि-सम्मेलन प्रकार के आयोजन हो सकते हैं जिनमें प्रविष्टियाँ देने वाले अपनी कविताएँ पढ़ें। पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर आधारित यह कविताएँ जहाँ एक ओर जन-चेतना भी जाग्रत करेंगी, वहीं अच्छी कविताओं में निर्णायक मण्डल द्वारा मूल्यांकन कर पुरस्कृत भी किया जा सकेगा। मूल्यांकन का आधार निम्न प्रकार हो सकता है—

कविता, गीत प्रतियोगिता के मूल्यांकन के आधार बिन्दु—

विषय-वस्तु	भाषा/शब्दावली	प्रस्तुतीकरण	प्रभावोत्पादकता	मौलिकता	कुल
10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	50 अंक
(20%)	(20%)	(20%)	(20%)	(20%)	(100%)

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जा सकता है तथा पर्यावरण के बारे में अधिक से अधिक जानकारी लोगों को दी जा सकती है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न (QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'पर्यावरण खेलों' की पर्यावरण शिक्षा में क्या उपयोगिता है ? किसी एक खेल का उदाहरण दीजिये।
2. 'क्रियात्मक शोध' और 'सामान्य शोध' प्रोजेक्ट्स में क्या अन्तर है ? उनकी परिसीमाएँ बताइये।
3. नगर स्तर पर एक 'क्विज प्रतियोगिता' का आयोजन कैसे करोगे ? संक्षेप में बताइये।
4. किसी अच्छे वाद-विवाद प्रतियोगिता के निर्णय में किन-किन बिन्दुओं पर अधिक ध्यान देना अपेक्षित है ? तुलनात्मक अंक भार प्रतिशत सुझाइये।
5. 'पर्यावरण गीत' किस प्रकार के हो सकते हैं ? बच्चों की रुचि का कोई गीत लिखिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. कोई ऐसा गीत लिखिये जिससे पर्यावरण के सन्दर्भ में कोई सीख मिलना दिखती हो।
7. 'शोध प्रोजेक्ट्स' क्यों सम्पन्न किये जाते हैं ?
8. 'क्रियात्मक शोध' पर टिप्पणी करिये। किसी ऐसे शोध का उदाहरण भी दीजिये।
9. 'नुक्कड़ नाटक' का स्वरूप प्रस्तुत करिये।
10. 'विद्यालय सौन्दर्य प्रतियोगिता' के क्या दूरगामी लाभ संभव हैं ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. कौन-सी प्रतियोगिता सभी के लिये संभव नहीं है ?
    (अ) कठपुतली मंचन (ब) निबन्ध लेखन
    (स) सामान्य ज्ञान (द) स्लोगन
12. 'पारिस्थितिकी विकास शिविर' के आयोजन में आदर्श संभागी संख्या निम्न उचित है—
    (अ) 10 से 25 तक (ब) 25 से 50 तक
    (स) 50 से 75 तक (द) 75 से 100 तक

13. 'नुक्कड़ नाटक' का श्रेष्ठ प्रदर्शन स्थल हो सकता है ?
(अ) कक्षा-कक्ष (ब) ऑडिटोरियम
(स) बस-स्टैण्ड (द) ड्राइंग रूम

14. विद्यार्थियों में पर्यावरणीय बहुउद्देशीय ज्ञान निम्न विधि से प्रदान किया जा सकता है—
(अ) सेमीनारें (ब) वाद-विवाद प्रतियोगिता
(स) सिम्पोजियम्स (द) क्विज प्रतियोगिता

15. निम्न में से कौन-सा प्रोजेक्ट 'क्रियात्मक शोध' नहीं है ?
(अ) पीने के पानी की स्वच्छता (ब) कक्षा-कक्षों की सुन्दरता
(स) पुस्तकालय व्यवस्था (द) शोर नियन्त्रण

सही पर ✓ और गलत पर × का चिन्ह लगाइये—

16. 'वृक्षों का काटना' पर्यावरण संरक्षण गतिविधि है। ( )
17. 'पर्यावरण गीत' बच्चों में पर्यावरण के प्रति रुचि बढ़ा सकते हैं। ( )
18. प्रदूषण को कम करने के लिये 'कठपुतली नाटक' विधा बहुत प्रभावी है। ( )
19. 'क्रियात्मक शोध' का कार्य क्षेत्र 'रिसर्च प्रोजेक्ट' के कार्य क्षेत्र से बड़ा होता है। ( )
20. 'जल संकट' फोटोग्राफी प्रतियोगिता का एक अच्छा शीर्षक है। ( )

36

पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन
[EVALUATION IN ENVIRONMENTAL EDUCATION]

• मूल्यांकन क्या है ?
(What is Evaluation ?)

किसी भी क्षेत्र में जब भी कोई कार्य किया जाता है तो उसकी सफलता और असफलता का मापदण्ड उसके अन्तिम परिणाम पर निर्भर करता है। यह परिणाम क्या है ? अर्थात् कितना है ? (परिमाण : Quantity); और कैसा है ? (गुणवत्ता : Quality); किसी विशिष्ट कार्य-प्रणाली से ही जाना जा सकता है। इसे ही मूल्यांकन (Evaluation) प्रक्रिया का नाम दिया गया है। **वस्तुतः मूल्यांकन किसी भी कार्य-प्रणाली में प्रयुक्त वह विधा है जिसके द्वारा समस्त कार्य की अन्तिम स्थिति की गुण-अवगुण के आधार पर जानकारी मिलती हो।** इसे ही Collins Cobuild English Language Dictionary[1] ने निम्न प्रकार परिभाषित किया है—

"Evaluation is a decision about the significance, value or quality of something, based on a careful study of its good and bad features." (Page 481)

डॉ० सिद्दीकी[2] ने अपनी पुस्तक 'Teaching of Economics' में सफलटीन और उनके साथियों (Stuffletian et al 1971) के हवाले से मूल्यांकन को बताया है—

"मूल्यांकन एक क्रिया अथवा प्रक्रिया है जो किसी मापन की वांछनीयता अथवा मान्यता को परखने के लिये उपलब्ध होती है। यह किन्हीं निर्णय विकल्पों को जाँचने के लिये उपयोगी जानकारी की रूपरेखा प्रस्तुत करने, प्राप्त करने और उपलब्ध कराये जाने की भी प्रक्रिया है।"

(Evaluation is an act or process that allows one to make a judgment about the desirability or value of a measure. It is a process of delineating, obtaining and providing useful information for judging decision alternatives.)

Psychology and Teaching[3] में मूल्यांकन को बहुत ही स्थूल रूप से प्रस्तुत करके इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है—

"मूल्यांकन किसी की शक्ति तथा कमजोरी, उसकी कमियाँ और अच्छाइयों का एक दर्पण है।"

(Evaluation is an illumination of one's strengths and weaknesses, his lacks and his gains.)

• मूल्यांकन और मापन में अन्तर
(Difference between Evaluation & Measurement)

इन परिभाषाओं से जहाँ मूल्यांकन (Evaluation) के बारे में हम कुछ समझ पाये हैं, वहीं हमें यह

---

1. **Cobuild English Language Dictionary : (Collins Publishers, London, 1988). page 481.**
2. **Mujibul Hason Siddiqui, Teaching of Economics (New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1993), p. 174.**
3. **William C. Morse and G. Max Wingo, Psychology and Teaching (Bombay, India : D. B. Taraporevala Sons & Co. Private Ltd., 1979), p. 481.**

भी जानना बहुत आवश्यक है कि यह परम्परागत शब्द मापन (Measurement) से अनेक बिन्दुओं में भिन्नता रखता है, जैसे—

(1) **मापन** केवल माप की **संख्या** (Quantity) को ही दर्शाता है जबकि **मूल्यांकन** में **गुणवत्ता** (Quality) है,

(2) **मापन** एक **स्थिर व स्थूल** (Constant and Broad Based) क्रिया है जबकि **मूल्यांकन** एक **व्यापक और सतत्** (Comprehensive and Continuous) प्रक्रिया है,

(3) **मापन परम्परागत परीक्षण और परीक्षाओं** (Conventional Tests and Examinations) तक ही सीमित है जबकि **मूल्यांकन** में सामान्य मापन के अतिरिक्त **रुचियाँ** (Interests), **अभिरुचियाँ** (Aptitudes), **अभिवृत्तियाँ** (Attitudes), **बुद्धि** (Intelligence), **व्यक्तित्व गुण** (Personality Traits) आदि कई चीजें सम्मिलित होती हैं,

(4) **मापन के मुख्य कार्य, (अ) वर्गीकरण** (Classification) : स्कूल, कॉलेज, सेना व अन्य संस्थानों में, **(ब) चयन** (Selection) : विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश, प्रतियोगी परीक्षाओं के आधार पर अनेक स्थानों पर पदस्थापन आदि, **(स) तुलना** (Comparison) : किन्हीं भी दो या अधिक व्यक्तियों में समानता अथवा असमानता खोजकर कारण जानना, **(द) भविष्यवाणी** (Prediction) : किसी भी कार्य व योजना के लिये, **(इ) निदान** (Diagnosis) : कमजोर स्थलों की जानकारी कर उपचार की व्यवस्था और **(फ) शोध** (Research) : विविध क्षेत्रों की प्रगति हेतु होते हैं जबकि **मूल्यांकन का कार्य क्षेत्र विशेषतः, (अ) शैक्षिक उपलब्धि** (Academic Achievements), **(ब) कौशल** (Skills), **(स) भौतिक विकास** (Physical Development), **(द) मानसिक विकास** (Mental Development), **(इ) नैतिक विकास** (Moral Development), **(फ) सामाजिक विकास** (Social Development) होता है और

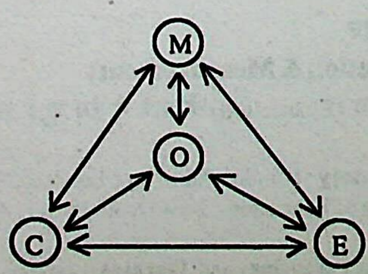
(5) मापन में **व्यक्तिनिष्ठता** (Subjectivity) की सम्भावना रहती है जबकि मूल्यांकन में **वस्तुनिष्ठता** (Objectivity) होती है।

इन सबके आधार पर यह कहा जा सकता है कि मापन मूल्यांकन के अन्दर अन्तर्निहित है और यह मूल्यांकन में एक उपकरण के रूप में प्रयोग होता है।

● पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन (Evaluation in Environmental Education)

प्रत्येक क्षेत्र की भाँति शिक्षा के क्षेत्र में भी मूल्यांकन का अत्यधिक महत्त्व है, क्योंकि इससे ही यह ज्ञात हो सकता है कि किसी भी शैक्षिक कार्यक्रम में निर्धारित विषय-वस्तु और उपयुक्त शिक्षण विधियाँ तथा प्रविधियों के द्वारा पूर्व निश्चित लक्ष्य कितने प्राप्त हो पाये ? इस लक्ष्य प्राप्ति के आधार पर ही विषय-वस्तु और शिक्षण विधियों में यदि किसी परिवर्तन की आवश्यकता हो तो वह किया जा सकता है। इसके साथ ही यह बात भी जानना आवश्यक है कि मूल्यांकन अपने आप में स्वतन्त्र और सभी गतिविधियों का अन्तिम परिणाम है। अतः मूल्यांकन किये जाने के लिये भी अनेक प्रकार के उपकरण और विधियों का उपयोग किया जाता है, जिसका विवरण हम आगे देंगे।

रैखिक चित्र में, यदि हम विषय-वस्तु (Curriculum) को 'C' से, शिक्षण विधियों और प्रविधियों (Teaching Methods) को 'M' से, उद्देश्य (Objectives) को 'O' से और मूल्यांकन विधियों (Evaluation Tools & Techniques) को E से व्यक्त करें तो, शिक्षाविदों ने इन सबको निम्न प्रकार प्रदर्शित करने की अभिशंसा की है—



चित्र 36·1

इस चित्र से स्पष्ट है कि प्रत्येक पद शेष तीनों पदों को प्रभावित करता है और साथ ही तीनों से प्रभावित भी होता है, परन्तु इन सबके केन्द्र में है 'उद्देश्य'। उद्देश्य प्राप्ति हेतु होना चाहिये पाठ्यक्रम का निर्माण और विकास। विधि-प्रविधियाँ भी उद्देश्यानुकूल होनी चाहिये तथा मूल्यांकन उपकरणों तथा प्रविधियों द्वारा यह ज्ञात होना चाहिये कि उद्देश्यों की पूर्ति हुई या नहीं और यदि हुई तो किस परिमाण में ?

सामान्य शिक्षा और पर्यावरण शिक्षा में, मूल्यांकन के सन्दर्भ में, केवल इतना आधारभूत अन्तर है कि,

1. सामान्य शिक्षा में केवल शैक्षिक उपलब्धि (Academic Achievement) का मापन होता है, जबकि
2. पर्यावरण शिक्षा में शैक्षिक उपलब्धि (Academic Achievement) के अतिरिक्त

(अ) रुचि (Interest) : किसी व्यक्ति, क्रिया, स्थिति अथवा वस्तु की ओर ध्यान देने की प्रवृत्ति (A tendency of giving attention to some person, activity, situation or object),

(ब) अभिरुचि (Aptitude) : किसी चीज को आसानी और शीघ्रता से सीखने की योग्यता और क्षमता. (An ability and capacity to learn something easily and quickly),

(स) अभिवृत्ति (Attitude) : किसी के बारे में सोचने और समझने का तरीका (A way of thinking and understanding about anything),

आदि अन्य उपलब्धियों का मापन भी किया जाता है और इसी कारण पर्यावरण शिक्षा के मूल्यांकन में ऐसे उपकरणों का उपयोग किया जाता है जो सामान्यतया सामान्य शिक्षा में प्रयोग में नहीं लाये जाते।

दिये गये चित्र में हम देख रहे हैं कि दिये गये चारों पदों में मूल्यांकन की दृष्टि से उद्देश्य (Objectives) बहुत महत्त्वपूर्ण है और वस्तुतः किसी भी कार्य की सफलता उद्देश्यों की प्राप्ति पर निर्भर है। अतः हम यहाँ उन सभी शैक्षिक उद्देश्यों का संक्षिप्त विवेचन करना चाहेंगे जिन्हें विशिष्ट शिक्षाविदों ने अपने अथक परिश्रम से शिक्षा जगत् को उपलब्ध कराया है। यही उद्देश्य पर्यावरण शिक्षा पर भी समान रूप से प्रभावी हैं, अतः इनकी जानकारी करना यहाँ अत्यन्त उपयुक्त एवं उचित है।

● मूल्यांकन के लिये शैक्षिक उद्देश्य (Educational Objectives in Evaluation)

शैक्षिक उद्देश्यों का आधार शिक्षाविदों ने निम्न तीन बिन्दुओं में समेकित किया है—

(अ) बालक की आवश्यकता (Need of a Child) : किसी भी शिक्षार्थी की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति तथा उसके शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक शक्तियों का विकास करना। साथ ही चारित्रिक गुणों का विकास करना।

(ब) समाज की आवश्यकता (Need of the Society) : अच्छा नागरिक, समाज सेवा की ओर सदैव तत्पर और देश की एकता और आजादी को बनाये रखने हेतु जीवन का ध्येय रखना। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को भी उचित महत्त्व एवं सम्मान देना।

(स) अच्छे जीवन की संकल्पना (Concept of Good Life) : जीवन की हर दिशा और स्थिति में गुणवत्ता (Quality) बनाये रखना।

इस आधार को दृष्टिगत रखते हुये शिक्षा क्षेत्र में बालक के तीन पक्ष स्वीकार किये गये हैं, जो निम्न प्रकार हैं—

क्रम संख्या	प्रथम पक्ष	द्वितीय पक्ष	तृतीय पक्ष
1.	मस्तिष्क (Mind)	आत्मा (Soul)	शरीर (Body)
2.	ज्ञान (Knowledge)	भावना (Spirit)	कर्म (Work)
3.	संज्ञात्मक (Intellectual)	भावनात्मक (Emotional)	मनोक्रियात्मक (Physicomental)
4.	जानना (Knowing)	महसूस करना (Feeling)	करना (Doing)
5.	बोध (Cognition)	भाव (Affection)	क्रिया (Conation)

इस पक्षीय वर्गीकरण के अन्तिम पद को आगे विवेचन के लिये हम आधार बनाकर बढ़ रहे हैं, जो वस्तुतः उनके क्रमिक विकास के चरण हैं—

(क) बोधात्मक क्षेत्र (Cognitive Domain)

इस क्षेत्र में **बी० एस० ब्लूम** (B. S. Bloom) और **उनके साथियों** ने प्रशंसनीय कार्य किया है। इन्होंने सरल से जटिल की ओर के सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुये बोध पक्ष के छः चरण बताये हैं जो निश्चित क्रमिक रूप में हैं—

(i) ज्ञान (Knowledge), (ii) अवबोध (Understanding),
(iii) उपयोग (Application), (iv) विश्लेषण (Analysis),
(v) संश्लेषण (Synthesis) और (vi) मूल्यांकन (Evaluation).

शिक्षार्थी कठोरता से एक पद से दूसरे और दूसरे से तीसरे पद पर पहुँचता है। इस शृंखला में मूल्यांकन अन्तिम पद है। हम इन क्रमिक चरणों पर भी संक्षिप्त चर्चा कर लें जिससे इनकी पूर्ण जानकारी कर इन्हें आत्मसात् किया जा सके—

(i) ज्ञान (Knowledge) : **ज्ञान वास्तव में एक ऐसी सूचना अथवा जानकारी है जो किसी मनुष्य के मन में रहती है (Knowledge is indeed such an information which a person has in his or her mind.)** | अतः इसके अन्तर्गत अनेक प्रकार के विशिष्ट (Specifics) और सार्वत्रिक (Universals), तरीके (Methods) और प्रणालियाँ (Processes), उदाहरण (Patterns), संरचनाएँ (Structures) और योजनाएँ (Systems) आदि के स्मरण करने और पहचानने की क्रियाएँ आती हैं। इन्हें और स्पष्ट करने हेतु निम्न पद दिये जा रहे हैं; जो ज्ञान का और विस्तृत विवेचन करते हैं, जैसे—

1. संकेत और प्रतीक चिन्ह (Symbols & Symbolic Emblems),
2. तथ्य और आँकड़े (Facts and Figures),
3. तिथियाँ और घटनायें (Dates and Events),
4. व्यक्ति और स्थान (Persons and Places),
5. पारिभाषिक शब्दावली और संक्षिप्त रूप (Terminology and Abbreviations),
6. सिद्धान्त और सन्दर्भ (Principles and References),
7. समारोह और आयोजन (Conventions and Functions),
8. झुकाव और क्रमबद्धता (Trends and Sequences),
9. वर्गीकरण और श्रेणीक्रम (Classifications and Categories),
10. योजनाएँ और प्रायोजनाएँ (Plans and Projects),
11. पात्रता और मापदण्ड (Eligibilities and Criteria),
12. विधियाँ और प्रविधियाँ (Methods and Techniques),
13. घटनायें और दुर्घटनायें (Incidents and Accidents),
14. पुस्तकें और पत्र-पत्रिकायें (Books and Magazines),
15. कवि, लेखक, वैज्ञानिक आदि (Poets, Authors, Scientists etc.),
16. पुरस्कार एवं सम्मान (Prizes & Awards),
17. खेल एवं दौड़-कूद (Games & Sports),
18. उत्पादन, निर्यात एवं आयात (Production, Export and Import),
19. संधियाँ और समझौते (Treaties & Pacts) और
20. आविष्कार एवं खोज (Inventions & Discoveries) आदि।

इन उदाहरणों से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि ज्ञान लगभग हर क्षेत्र की सीधी जानकारी है और उसे हम आवश्यकतानुसार व्यक्त करते हैं। इस चरण में बालक की मुख्य क्रियाएँ निम्न होती हैं—

1. स्मरण करता है (Recalls),
2. पहचानता है (Recognises),
3. अधिगम करता है (Learns),
4. सूचनायें भरता है (Fills information) और
5. सत्यापित करता है (Verifies)

(ii) अवबोध (Understanding) : **सूचनाओं की जानकारी कर उसे कैसे काम में लिया जाये ? यही अवबोध कहलाता है (Knowing the information, how to use it ? is known as understanding.)** | अतः इसमें मुख्यतः अनुवाद (Translation), व्याख्या (Interpretation) और भविष्य कथन (Extrapolation) सम्मिलित होते हैं। इन्हीं का विभिन्न प्रकार से उपयोग अवबोध के अन्तर्गत आ जाता है। इसका उपयोग विशेषतः निम्न प्रकार से होता है—

1. मिलान करता है (Analogises),
2. तुलना करता है (Compares),
3. अनुवाद करता है (Translates),
4. भविष्य कथन करता है (Extrapolates),
5. लाभ-हानि बताता है (Finds Profit & Loss),
6. पुनः जमाता है (Reorganises),
7. विश्लेषण करता है (Analyses),
8. कारण बताता है (Reasons),
9. उदाहरण देता है (Gives Examples),
10. वर्गीकरण करता है (Classifies),
11. अन्तर बताता है (Differentiates) और
12. गणना करता है (Calculates)।

जितना भी ज्ञान है उसका उपरोक्त प्रकार से प्रयोग यह बताता है कि ज्ञान की कितनी समझ बालक को हुई है। **किसी ज्ञान को आत्मसात् करते ही वह अवबोध बन जाता है (When we own a concept, it becomes understanding.)**|

(iii) उपयोग (Application) : **सीखे अथवा ज्ञात हुये ज्ञान को किन्हीं भी सामान्य अथवा विशिष्ट नवीन परिस्थितियों में उपयोग में लाने को उपयोग कहते हैं (To use the learnt or known knowledge in new situations, particular or general, is known as application.)**| वस्तुतः इस चरण में ज्ञान तथा अवबोध दोनों का ही प्रयोग और उपयोग होता है। शिक्षा के क्षेत्र में इसे ज्ञानोपयोग भी इसी कारण कहते हैं। इस चरण की मुख्य क्रियाएँ निम्न होती हैं—

बालक ज्ञान और अवबोध को नवीन परिस्थितियों में—

1. उपयोग करता है (Uses),
2. विश्लेषण करता है (Analyses),
3. हल सुझाता है (Suggests solutions),
4. तुलना करता है (Compares),
5. अन्तर करता है (Differentiates),
6. अनुमान लगाता है (Draws inferences),
7. भविष्य कथन करता है (Extrapolates) और
8. सम्बन्ध स्थापित करता है (Establishes relationships)।

यह उपयोग का चरण इस क्षेत्र का सर्वाधिक महत्त्व का है क्योंकि यहीं बालक की बुद्धि और उसकी सोचने-समझने और कार्य करने की क्षमता का पता चलता है।

(iv) विश्लेषण (Analysis) : **समझने अथवा समझाने (व्यक्त करने) के लिये किसी चीज के ध्यानपूर्वक और विस्तार से सोचने की क्रिया को विश्लेषण कहते हैं (The process of considering something carefully and in detail in order to understand or explain it, is called analysis.)**| इससे यह स्पष्ट है कि किसी भी कठिन समस्या, परिस्थिति और स्थिति में हल खोजने हेतु यह क्रिया उपयोग में आती है। उपर्युक्त तीनों पदों, ज्ञान, अवबोध और उपयोग का आवश्यकतानुसार उपयोग होता है। तथ्य और परिकल्पनाओं (Facts and Hypothesis) में अन्तर जानना, पारम्परिक मान्यताओं की विवेचनापूर्ण सत्यता जानना, अनेक सत्यापित तथ्यों के आधार पर विभिन्न स्थितियों में सम्बन्ध स्थापित करने हेतु प्रयास करना और किसी विवरण में से वांछनीय सूचनाएँ एकत्रित कर उसे प्रभावी रूप से प्रस्तुत

करना इस चरण की मुख्य क्रियाएँ हैं। मूल्यांकन के क्षेत्र में यह ज्ञान का उच्च पदीय क्रियाकलाप है। ज्ञान को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करना और अनेक स्रोतों से ज्ञान प्राप्त कर विश्लेषण से उसे एक निश्चित रूप देना भी इसी चरण के अन्तर्गत आता है।

(v) संश्लेषण (Synthesis) : यह एक विभिन्न पदों के एक साथ मिलाने की प्रक्रिया है (It is a process of putting different things together.)|अतः अनेक तथ्य, विवरण, सूचनाएँ आदि को ठीक से व्यवस्थित कर उसे एक रूप में प्रस्तुत करना इस चरण में आता है। इससे बालक में सम्बन्धित जानकारी को खोजने की प्रेरणा का विकास होता है और बिखरे ज्ञान को समेकित करने की कला का विकास होता है।

(vi) मूल्यांकन (Evaluation) : इस क्षेत्र का यह अन्तिम चरण है। शिक्षाविदों ने इस पद की अनेक प्रकार से परिभाषाएँ दी हैं। एक अत्यन्त व्यवस्थित परिभाषा है—

"मूल्यांकन किसी वस्तु के महत्त्व, मूल्य और गुणवत्ता के लिये किये गये अच्छे और बुरे लक्षणों के आधार पर ध्यानपूर्वक अध्ययन के बाद लिया गया निर्णय है।"

(An evaluation is a decision about the significance, value or quality of something based on a careful study of the good and bad features.)

इसके आधार पर मूल्यांकन विचारणीय क्षेत्र में संख्यात्मक एवं गुणात्मक परिणामों की प्रभावोत्पादकता मापने का साधन है। साथ ही अन्य मानक उपलब्धियों से तुलना कर वस्तुस्थिति जानने की प्रक्रिया है। यह अत्यन्त विचारणीय है कि मूल्यांकन अपने आप में अन्तिम चरण भी है और अन्तिम परिणाम भी, जिस पर किसी भी क्षेत्र की उपादेयता और उपलब्धि आश्रित है।

(ख) भावात्मक क्षेत्र (Affective Domain)

शैक्षिक उद्देश्यों का यह भावात्मक अथवा भावनात्मक पक्ष है जिसमें बालक की भावनाएँ, रुचियाँ, अभिरुचियाँ, अभिवृत्ति आदि के बारे में जाना व परखा जाता है। ज्ञान पक्ष जहाँ मस्तिष्क अर्थात् बौद्धिकता की बात करता है, वहीं भाव पक्ष आत्मा अर्थात् भावना की कहानी कहता है। दोनों बिल्कुल अलग-अलग लेकिन एक-दूसरे के सम्पूरक हैं। **शिक्षाशास्त्री 'क्रेथोल'** ने अपने सहयोगियों के साथ इस क्षेत्र में कार्य कर शिक्षा जगत् को अपना अमूल्य योगदान दिया है। उन्होंने इस क्षेत्र को निम्न पाँच चरणों में विभाजित किया है—

(i) ग्रहण करना (Receiving), **(ii) प्रत्युत्तर** (Responding),
(iii) मूल्यवान मानना (Valuing), **(iv) संगठित करना** (Organisation) और
(v) लक्ष्य स्थापित होना (Characterisation)|

इन विभिन्न चरणों की भी हम, जो पुनः बोधात्मक क्षेत्र की भाँति निश्चित क्रम से हैं, संक्षिप्त में चर्चा करते हैं।

(i) ग्रहण करना (Receiving or Attending) : **यहाँ हमारा इस बात से अधिक संरोकार है कि हम बालक को इतना सुग्राही** (Sensitive) बना दें कि वह सीखने को अथवा ज्ञान ग्रहण करने को तत्पर हो जायें। इस हेतु शिक्षक को शिक्षार्थी के अनुसार प्रयास करना होगा और उसे उन परिस्थितियों में लाना होगा जिसमें बालक को सीखने का अवसर मिल सके। इसको भी निम्न भागों में विभाजित किया गया है—

- **चेतना** (Awareness) : जिसमें (1) रहन-सहन, खान-पान, पोशाक, डिजाइन आदि क्षेत्र में सौन्दर्यपरक गुणों के विकास तथा (2) अपने आस-पास के क्षेत्र के लोग, वस्तुएँ, स्थितियाँ आदि के प्रति चेतना का विकास सम्मिलित है।
- **तत्परता** (Willingness) : **इस पद में किसी ज्ञान को ग्रहण करने के लिये अपनी इच्छा को प्रेरित करना तथा सभी स्थितियों में संयम बरतना मुख्य रूप से सम्मिलित है। दूसरों की प्रशंसा कर उनका मन जीतना भी इस पद की आवश्यक वांछनीयता है।**
- **नियंत्रित ध्यान** (Controlled Attention) : ज्ञान को प्राप्त करने के लिये ध्यान को वहीं केन्द्रित करना जहाँ आवश्यक है, बहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

(ii) प्रत्युत्तर (Responding) : **यह चरण ग्रहण करने वाले चरण से ऊपर की श्रेणी का पद है जिसमें काम करने अथवा सीखने की इच्छा** (Willing to Attend) **मात्र नहीं है बल्कि सक्रियता से ग्रहण करने की भावना** (Actively Attending) **समाहित है। 'काम करके सीखना'** (Learning by Doing) **इस चरण का**

प्रारम्भ हो सकता है। इसके अतिरिक्त भी बालक में सीखने के प्रति इच्छा (Desire), जिज्ञासा (Curiosity) और रुचि (Interest) जगाकर उन्हें कार्य के प्रति अग्रेषित करना है। समय पाकर यह बालक का गुण बन जायेगा।

इस चरण को भी निम्न तीन भागों में विभाजित किया गया है—

- **सहमति** (Acquiscence) : बालक में कार्य करने की स्वीकारोक्ति बहुत सहज नहीं होती है, जैसे खेल के मैदान में नियमों का पालन करना अथवा विद्यालय की विविध गतिविधियों में भाग लेना आदि। अतः चाहे थोड़ी कठोर कार्य प्रणाली अपनानी पड़े, बालक की प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सहमति आवश्यक है। शिक्षाविद् इसे 'अनुपालन' (Compliance) और आज्ञा मानना (Obedience) जैसी शब्दावली का उपयोग कर बालक में सहमति की भावना जाग्रत करने की वकालत करते हैं।
- **तत्परता** (Willingness) : यहाँ भी प्रत्युत्तर के क्रम में 'तत्परता' को महत्त्व दिया गया है। 'ग्रहण करने' के चरण में 'तत्परता' का प्रारम्भिक रूप है जो इसकी स्वयं की इच्छा से सम्बन्धित है, वहीं यहाँ 'तत्परता' कार्य से सम्बन्धित और अनेक बातों की जानकारी कर अपनी बात को और आगे बढ़ने की संकल्पना है। इसे 'स्वयं कार्य करने की क्षमता' (Capacity for Voluntary Activity) का नाम दिया गया है। बालक अपने आप को वचनबद्धता की ओर (Towards Commitment) बढ़ाने लगता है।
- **सन्तोष** (Satisfaction) : यह प्रत्युत्तर की वह स्थिति है जहाँ बालक अपने कार्य निष्पादन के बाद 'सन्तोष' महसूस करता है और साथ ही 'सुख' (Pleasure), 'मजा' (Zest) और 'आनन्द' (Enjoyment) का अनुभव करता है।

(iii) मूल्यवान मानना (Valuing) : यह चरण किसी क्रिया को मूल्य देना अथवा उसकी महत्ता और उपयोगिता के आधार पर मूल्यवान बनाने से सम्बन्धित है। बालक के अपने मूल्यांकन से कार्य को मूल्य देना और सामाजिक परिवेश में इसे महत्त्वपूर्ण ढंग से स्वीकार करना इस पद का सही आशय है। सबसे बड़ी बात इस चरण की यह है कि,

"मूल्यवान मानने में महत्त्वपूर्ण व्यावहारिक परिवर्तन यह है कि यह बालक के स्वयं की व्यावहारिक बचनबद्धता से प्रेरित क्रियाकलाप का परिणाम है, किसी आज्ञा अथवा अनुपालना की भावना से नहीं।"

(An important element of behaviour characterised by valuing is that it is motivated, not by the desire to comply or obey, but by the individual's commitment to the underlying value guiding the behaviour.)

—Psychology and Teaching : Eds. Williams C. Morse & G. Max Wingo. page 521.

स्थिरता (Consistency) और दृढ़ता (Stability) इस चरण के मुख्य अंग हैं जिन पर यह पद आधारित है।

इस चरण के निम्न तीन विभाजित भाग बताये गये हैं—

- **स्वीकारोक्ति** (Acceptance) : इसे 'ग्रहणशीलता' भी कहते हैं। किसी भी तथ्य (Phenomenon), व्यवहार अथवा आचरण (Behaviour), वस्तु (Object) आदि को श्रेय देना इस पद में आता है। विश्वास (Belief) इस बिन्दु का आधार है तथा अपने विचारों में किसी भी कार्य के प्रति निष्ठा बनाना इस पद की विशेषता है।
- **वरीयता** (Preference) : अनेक कार्यविधाओं में श्रेष्ठता के आधार पर वरीयता देना इस पद में समाहित भावना है। बालक किसी क्षेत्र में सम्पादित कार्य को स्वीकार कर उसे अपने प्रयास और शक्ति से आगे बढ़ता है और उस पर टिका रहता है।
- **निष्ठा और वचनबद्धता** (Fidelity & Commitment) : दृढ़ता (Conviction), विश्वास (Belief) और निश्चितता (Certanity) इस पद के वह प्रतीक हैं जिन पर 'मूल्य' आधारित हैं। क़िसी स्थिति (Position), समूह (Group) और कारण (Cause) के प्रति वफादारी (Loyalty) और निष्ठा (Fidelity) भी अपना महत्त्व रखती है। कर्त्तव्य परायणता (Dutifulness), त्याग (Dedication) और समर्पण (Devotion) भी इसी पद के भाग हैं जिससे व्यवहारों को मूल्य दिया जाता है।

(iv) संगठित करना (Organization) : इस पद को 'व्यवस्थित करना' भी कह सकते हैं। जब किसी क्रिया अथवा व्यवहार को अलग-अलग स्थितियों में 'कई मूल्य' उचित प्रतीत होते हैं। तब यह बहुत आवश्यक है कि मूल्यों को व्यवस्थित कर लिया जाये और फिर महत्त्व के प्रकार से मूल्यों का निर्धारण हो। यह इसलिये भी आवश्यक है कि समय के साथ मूल्यों के परिवर्तन के कारण किसी कार्य की उपलब्धता की वस्तुनिष्ठता और उसकी महत्ता प्रभावित न हो।

इस चरण को दो भागों में विभक्त किया गया है—

- **प्रत्यय निर्माण** (Conceptualization) : किसी तथ्य, व्यवहार अथवा क्रिया को मूल्य देते समय स्थिरता (Consistency), दृढ़ता (Stability) की अनिवार्यता की आवश्यकता का उल्लेख हमने पहले किया है, पर यहाँ इसके साथ ही विचारों की संकल्पना (Abstraction or Conceptualization) को भी उतनी ही अनिवार्यता से जोड़ा गया है। इससे मूल्य निर्धारण में सहजता और सरलता होती है।
- **मूल्य संगठन** (Value Organization) : यह पद मूल्यों को इस प्रकार व्यवस्थित करने पर बल देता है जिससे विभिन्न कार्यों; क्रियाकलापों अथवा व्यवहारों को उनके गुण और गुणवत्ता के आधार पर वस्तुनिष्ठता से मूल्य निर्धारण किया जा सके। वस्तुतः यह मूल्यों के मान की क्रमबद्धता है जिस पर मूल्यांकन आधारित होगा।

(v) लक्ष्य स्थापित होना (Characterization) : भावात्मक क्षेत्र का यह अन्तिम चरण है। किसी भी व्यक्ति द्वारा किये गये कार्यों पर निर्धारित अथवा देय मूल्यों की एक बनाई गई व्यवस्था को अन्तिम रूप से स्वीकार करना इस पद का लक्ष्य है।

(ग) क्रियात्मक क्षेत्र (Conation Domain)

यह क्षेत्र बालक के शारीरिक पक्ष को व्यक्त करता है, उसका प्रतिनिधित्व करता है। करना (Doing) इस क्षेत्र की विशेषता भी है और प्रधानता भी। **शिक्षाशास्त्री ऐलिजावेथ जे० सिम्पसन (Elizabeth J. Simpson) तथा उसके सहयोगियों** द्वारा प्रतिपादित इस क्षेत्र में कौशल (Skill) को सर्वाधिक महत्त्व दिया है, जिसकी चर्चा हम आगे कर रहे हैं। पूर्व क्षेत्रों की भाँति इस क्षेत्र को भी पाँच भागों में विभाजित किया गया है—

(i) **बोध** (Knowledge), (ii) **प्रवृत्ति** (Tendency),
(iii) **निर्दिष्ट प्रतिक्रिया** (Designed Reaction), (iv) **रचनात्मकता** (Creativity) और
(v) **प्रत्युत्तर** (Response)।

अब हम यहाँ क्रियात्मक क्षेत्र में सम्मिलित विशेष क्रिया 'कौशल' (Skill) की चर्चा करेंगे **'कौशल' वह ज्ञान और योग्यता है जिससे आप कार्य करने की समर्थता और क्षमता प्राप्त करते हैं। (Skill is the knowledge and ability or capacity that enables you to do something.)**। निःसन्देह इसमें शारीरिक और मानसिक दोनों क्रियाओं का साथ-साथ उपयोग होता है, अतः इसे मनोक्रियात्मक (Physicomental) क्रिया का नाम भी दे देते हैं। किसी भी प्रकार का चित्रण, आँकड़ों व सूचनाओं का लेखाचित्र (Graphs) अथवा चित्र (Diagrams) द्वारा प्रस्तुतीकरण, विभिन्न प्रकार की मशीनों और शैक्षिक उपकरणों का उपयोग व उनका रख-रखाव, मानचित्र में सूचनाओं की पूर्ति व उनकी व्याख्या आदि कार्य इस पद में सम्मिलित हैं। क्योंकि 'कौशल' ही केवल एक ऐसी क्रिया है जिसे क्रियात्मक क्षेत्र में प्रधानता मिली है, अतः इसका शैक्षिक क्षेत्र में काफी उपयोग हुआ है।

शैक्षिक क्षेत्र में जहाँ तक सामान्य शिक्षा का सम्बन्ध है, शैक्षिक उद्देश्यों में से केवल वर्तमान में निम्न को ही स्वीकार किया हुआ है—

बोधात्मक क्षेत्र—ज्ञान, अवबोध और उपयोग।

क्रियात्मक क्षेत्र—कौशल।

और इन्हीं उद्देश्यों के आधार पर विभिन्न परीक्षण आदि तैयार किये जाते हैं, लेकिन **पर्यावरण शिक्षा** के क्षेत्र में उसके व्यापक होने के कारण **भावात्मक क्षेत्र** के रुचि, अभिरुचि, अभिवृत्ति आदि उद्देश्यों को भी सम्मिलित करना होगा। तभी तो पर्यावरण के विभिन्न पक्षों और पहलुओं का मूल्यांकन सम्भव है। इसी कारण पर्यावरण शिक्षा के मूल्यांकन में मूल्यांकन विधियों और प्रविधियों में अनेक ऐसे उपकरणों का उपयोग किया जाता है जिन्हें सामान्य परीक्षण में काम में नहीं लिया जाता अथवा बहुत कम लिया जाता है।

• पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन के मुख्य उद्देश्य
(Main Objectives of Evaluation in Environmental Education)

शिक्षा में मूल्यांकन के इन शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन के मुख्य उद्देश्य निम्न हो सकते हैं—

यह जानना कि (To know that)—

1. पर्यावरण तथा उसके घटकों के बारे में कितनी जानकारी एक विद्यार्थी तथा सामान्य व्यक्ति को है ?
   (How much knowledge about environment and its components does a student and common man have ?)
2. पर्यावरण की जानकारी का कितना उपयोग यह लोग अपने दैनिक जीवन में कर रहे हैं ?
   (How much use of the knowledge of environment are these people making in their daily lives ?)
3. विभिन्न स्तरों के लिये प्रस्तावित विभिन्न पाठ्यक्रम कितने उपयुक्त हैं ? क्या इनमें किसी परिवर्तन की आवश्यकता है ?
   (How much appropriate are the different proposed curriculums for different levels ? Do they need any change ?)
4. पर्यावरण शिक्षा का लोगों तक पहुँचाने का तरीका कितना प्रभावी है ?
   (How much is the communication strategy of environmental education effective ?)
5. पर्यावरण सुधार कार्यक्रम के व्यावहारिक पक्ष में किस सीमा तक सामान्य व्यक्ति व विद्यार्थी रुचि लेते हैं ?
   (To which extent do the common man and students take interest in environment improvement programme ?)
6. क्या विद्यालयों में तथा जन-साधारण हेतु उपलब्ध कराई जाने वाली पर्यावरण सम्बन्धी श्रव्य-दृश्य सामग्री यथेष्ट है ?
   (Is the available audio-visual material related to environment for schools and common people sufficient ?)
7. परोक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण शिक्षा देने वाले व्यक्ति कितने सक्षम हैं ?
   (How competent are the personnels imparting environmental education directly or indirectly ?)
8. आकाशवाणी, दूरदर्शन और समाचार-पत्रों का पर्यावरण शिक्षा में कितना योगदान है ?
   (How much do the Akashwani, Doordarshan and Newspapers contribute in environmental education ?)
9. पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत सीखे हुये ज्ञान को अध्यापक विद्यालयों में कितना देते हैं ?
   (How much do the teachers impart the learnt knowledge under environmental education in schools ?)
10. पर्यावरण शिक्षा को व्यापक बनाने हेतु और क्या प्रयास प्रस्तावित हैं ?
   (What other efforts are proposed to make the environmental education comprehensive ?)

• पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन का महत्त्व एवं आवश्यकता
(Importance and Need of Evaluation in Environmental Education)

हम पहले अध्यायों में यह बता चुके हैं कि पर्यावरण के बारे में सोच और विचार-विमर्श का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। अधिक से अधिक 50 वर्ष पहले कुछ घटनायें ऐसी हुईं थीं जो प्रकृति प्रकोप के नाम पर विश्वभर में चर्चा में आईं और अब उन्हें भी पर्यावरण से ही जोड़ लिया गया, लेकिन विश्व स्तर पर सन् 1972 में स्टॉकहोम (स्वीडन) में आयोजित 'मानव पर्यावरण' पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने ही पर्यावरण का नाम लोगों तक पहुँचाया। यह कहानी वस्तुतः पर्यावरण के प्रदूषण से प्रारम्भ हुई थी और फिर पर्यावरण

संरक्षण, प्रदूषण नियन्त्रण और पर्यावरण सुधार तक जा पहुँची। कारणों की खोज में विष उगलते उद्योग, आवाज करने वाली फैक्टरियाँ, आवागमन के साधन और मनोरंजन व्यवस्थायें, बढ़ती जनसंख्या, कटते वन, निरन्तर कम हो रहे वन्य जीव जैसे प्रकरण सम्मुख आ गये। पर्यावरण सुधार हेतु लोगों के मानस परिवर्तन की आवश्यकता महसूस हुई। देश की जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऊर्जा के स्रोतों की वैकल्पिक व्यवस्था की खोज भी प्रारम्भ हुई। संक्षिप्त में यों कहें कि पर्यावरण के बारे में इतनी दिशायें और विचारणीय बिन्दु उभरकर आने लगे कि उसकी सूची बनाना भी कठिन हो गया।

इन सभी समस्याओं से जूझने, सुलझाने और हल खोजने के साथ आगे भी ऐसी समस्याओं को बढ़ने अथवा उत्पन्न होने से रोकने के लिये 'पर्यावरण शिक्षा' ही एकमात्र सुझाव प्रस्तावित किया गया। अतः पर्यावरण शिक्षा का देश के हर व्यक्ति को किसी न किसी प्रकार उपलब्ध कराना आवश्यक हो गया। अब इस शिक्षा को जिस प्रकार भी देने का प्रयास किया गया है या किया जा रहा है, उस हेतु उसका सामयिक मूल्यांकन किया जाना आवश्यक है और महत्त्वपूर्ण इसलिये है कि इससे देश का ही नहीं बल्कि विश्व का भी भविष्य जुड़ा है। पृथ्वी का अस्तित्व ही खतरे में है और मानव जीवन के सुखी जीवन जीने की कल्पना भी नितान्त सीमित हो गई है।

इन्हीं उपर्युक्त बातों को हम निम्न बिन्दुओं में समेकित करने का प्रयास कर रहे हैं—

(अ) महत्त्व (Importance)

1. जन-साधारण में पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता को महसूस कराने के लिये।
   (To let the common people feel about the need of the environmental education.)
2. मूल्यांकन के उद्देश्यों की सार्थकता जाँचने के लिये।
   (To verify the appropriateness of the objectives of evaluation.)
3. पर्यावरण ह्रास की वास्तविक स्थिति से जन-साधारण को अवगत कराने के लिये।
   (To make the common man know about the real situation of the environmental deteri oration.)
4. पर्यावरण शिक्षा में प्रयुक्त विभिन्न कार्यक्रमों की उपादेयता जानने के लिये।
   (To know the usefulness of different programmes associated with environmental education.)
5. लोगों में अच्छे जीवन की संकल्पना हेतु मानस बनाने के लिये।
   (To inculcate the concept of good life in the people.)
6. प्राकृतिक असन्तुलन के लिये जिम्मेवार विभिन्न घटकों की भागीदारी जानने के लिये।
   (To find the contribution of the different factors responsible for nature imbalance.)
7. पर्यावरण सुधार कार्यक्रमों को स्वीकार करने के लिये।
   (To accept the programmes for environmental improvement.)
8. वैज्ञानिक और अन्य राष्ट्र स्तरीय नीति निर्धारकों द्वारा भावी योजनाएँ बनाने के लिये।
   (To build future plans by scientists and other national policies makers.)
9. भविष्य के लिये राष्ट्र स्तर पर पर्यावरणीय योजना बनाने के लिये।
   (To formulate the environmental plans for future at national level.)
10. पर्यावरण के सन्दर्भ में विश्व के अनेक देशों से वैचारिक आदान-प्रदान करने के लिये।
    (To communicate ideas with different countries of the world related to environment.)

(ब) आवश्यकता (Need)

1. इससे पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रमों की उपयोगिता जानी जा सकती है।
   (It may tell the usefulness of the different programmes of environmental education.)
2. इससे लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता के स्तर का पता चल सकता है।
   (It may find the status of environmental awareness in the people.)
3. पर्यावरण शिक्षा द्वारा लोगों में व्यक्तिगत आचरणों के परिवर्तन का मापा जा सकता है।

(It may measure the change in personal behaviour of the people due to environmental education.)

4. विभिन्न स्तरों के लिये निर्मित पर्यावरणीय पाठ्यक्रम की विश्वसनीयता और वैधता को जाँचा जा सकता है।

   (It may examine the reliability and validity of the environmental curriculum framed for different levels.)

5. यह पर्यावरण शिक्षा के लिये सन्दर्भ व्यक्ति के चयन में सहायक हो सकता है।

   (It may help in the selection of resource persons for environmental education.)

6. पर्यावरण शिक्षा के विविध कार्यक्रमों की वस्तुनिष्ठ तुलना कर सकता है।

   (It may compare objectively the different programmes of environmental education.)

7. पर्यावरण प्रदूषण के कारणों की सही जानकारी इससे मिल सकती है।

   (It may infer the exact causes of environmental pollution.)

8. यह लोगों में अच्छी आदतों के निर्माण में प्रेरक हो सकता है।

   (It may motivate in the inculcation of good habits in people.)

9. यह राष्ट्रीय स्तर की पर्यावरणीय समस्याओं में व्यक्तिगत भागीदारी की भावना को जगा सकता है।

   (It may awake the spirit of individual's participation in the environmental problems of national level.)

10. यह पर्यावरण सुधार की महत्ता को प्रतिपादित करता है।

    (It endorses the importance of the environmental improvement.)

● पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन के सिद्धान्त (Principles of Evaluation in Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन की, सामान्य शिक्षा के मूल्यांकन से, कुछ विभिन्नता इस आधार पर है कि पर्यावरण शिक्षा में बोधात्मक (Cognitive), भावात्मक (Affective) और क्रियात्मक (Conative) तीनों क्षेत्रों को सम्मिलित करना होता है जबकि सामान्य शिक्षा में प्रायः केवल 'बोधात्मक' क्षेत्र ही होता है। अतः विधियों, प्रविधियों और उपकरणों का चयन आवश्यकतानुसार ही किया जाता है। मूल्यांकनकर्त्ता की योग्यता यहाँ केवल मूल्यांकन तक ही सीमित नहीं रहती बल्कि मूल्यांकन के परिणामों के विश्लेषण के बाद उनके परिणामों तक भी रहती है। इस क्षेत्र में मूल्यांकन के कुछ सिद्धान्त यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. यहाँ मूल्यांकन का उद्देश्य 'उत्तीर्ण' अथवा 'अनुत्तीर्ण' अंकित करना नहीं है, बल्कि यह जानना है कि अमुक व्यक्ति ने पर्यावरण के बारे में कितनी जानकारी की है?

   (Here the objective of evaluation is not to mark 'pass' or 'fail', but it is to know that how much knowledge has a particular person aquired about environment.)

2. प्रत्येक कार्यक्रम तथा प्रत्येक व्यक्ति अथवा वर्ग समूह के लिये मूल्यांकन विधियाँ और उपकरण भिन्न-भिन्न हो सकते हैं।

   (There may be different evaluation tools and techniques for each programme and also for each individual or group.)

3. मूल्यांकनकर्त्ता योग्य और प्रशिक्षित तथा पर्यावरण के क्षेत्र की जानकारी रखने वाला होना चाहिए।

   (The evaluator should be able & trained and also well known about the environmental domain.)

4. यह सम्भव है कि एक व्यक्ति अथवा एक वर्ग समूह को कई मूल्यांकन उपकरणों का उपयोग करना पड़े, तब उन उपकरणों से प्राप्त परिणामों को मिलाकर ही समग्र मूल्यांकन मान्य होगा।

   (This is possible to use a number of evaluation tools for an individual or a group, but the total evaluation will be acceptable only on combining the results of these all devices.)

5. मूल्यांकन के लिये मानक उपकरणों का ही उपयोग करना चाहिये, लेकिन यदि उपकरण अध्यापक अथवा विशेषज्ञ द्वारा निर्मित हों तो उनकी विश्वसनीयता और वैधता आकने के बाद ही उन्हें काम में लेना चाहिये।
(Only standard tools need be used in evaluation. But if the tools are teachers or experts made than these should be used only after testing their reliability and validity.)
6. मूल्यांकन का उपयोग यहाँ दिशा निर्देशन से है, अन्तिम प्राप्त परिणाम से नहीं।
(Here the use of evaluation is direction and not the end result.)
7. मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है, अतः वह समय के अन्तराल से बदल सकती है।
(Evaluation is a continuous process, as such it may change with the duration of time period.)
8. मूल्यांकन गुणवत्ता आधारित प्रत्यय है; इसीलिये किसी समान गुण के विद्यमान होने पर भी दो व्यक्तियों के मूल्यांकन के स्तर में अन्तर आ सकता है।
(Evaluation is a quality based concept; that is why there may be a difference in evaluation status of two individuals possessing the same trait.)
9. मूल्यांकन के उपकरणों में वस्तुनिष्ठता से परखने का गुण होना चाहिए।
(Evaluation tools must possess the quality of objective based testing.)
10. उद्देश्यनिष्ठ मूल्यांकन के कारण उपकरणों का चयन बहुत सोच-समझ कर करना चाहिये।
(Due to objective based evaluation the selection of the tools should be after a careful thought.)

● पर्यावरण शिक्षा के मूल्यांकन में विधियाँ, प्रविधियाँ और उपकरण (Methods, Techniques and Tools in Evaluation of Environmental Education)

विधियाँ (Methods), प्रविधियाँ (Techniques) और उपकरण (Tools) के बारे में हमने विस्तार से विवरण शिक्षण पद्धतियाँ (Teaching Methods) वाले अध्याय में दिया है, पर फिर भी मूल्यांकन के परिप्रेक्ष्य में इन्हें पुनः इसी कारण दोहराया जाना उचित प्रतीत होता है, जिससे कि इनके बारे में पाठकों को स्पष्टता हो सके। आइये समझें—

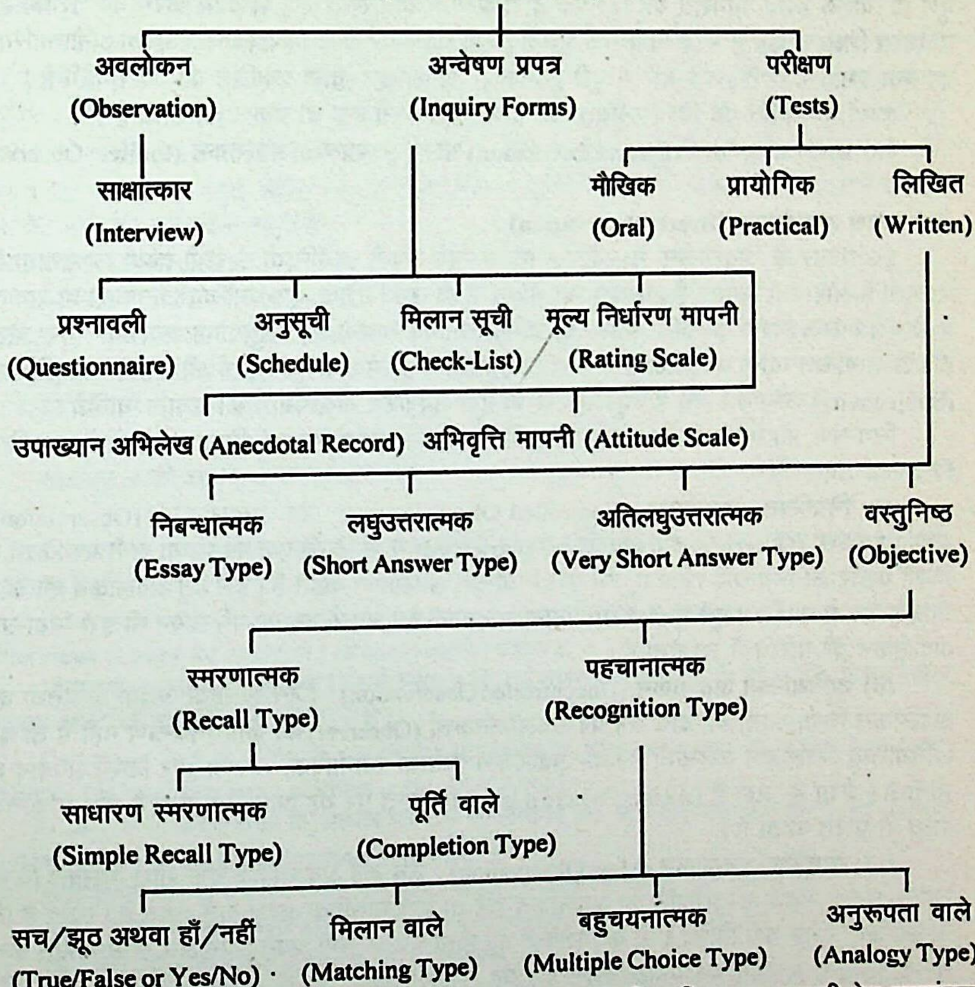
- **विधियाँ** (Methods) : **विधि किसी काम को करने के खास तरीके को कहते हैं (A method is a particular way of doing something.)| यहाँ खास (विशेष) शब्द को प्रधानता दी गई है। स्पष्ट है कि प्रत्येक काम को 'विधि' नहीं कहा जा सकता है।**
- **प्रविधियाँ** (Techniques) : **प्रविधि किसी क्रियाकलाप को सम्पन्न करने के लिये प्रयुक्त विशेष विधि को कहते हैं (A technique is a particular method of doing an activity.)| सामान्यतया जब किसी विधि में किसी व्यावहारिक कौशल का प्रयोग होता है तब वह क्रिया प्रविधि अथवा 'तकनीक' कहलाती है।**

इन उपर्युक्त दोनों परिभाषाओं को ध्यान से देखें तो हम यह समझ सकते हैं कि इनमें सामान्य और विशिष्टता का अन्तर है। उदाहरण के लिये **अवलोकन** (Observation) **एक विधि है और साक्षात्कार** (Interview) **एक प्रविधि।** क्योंकि साक्षात्कार में अवलोकन के साथ व्यक्ति से सम्पर्क करने की आवश्यकता जुड़ी है। इसी प्रकार परीक्षण (Tests) को हम विधि के रूप में मानते हैं जबकि लिखित परीक्षा (Written Test or Paper-pencil Test) को एक प्रविधि के रूप में स्वीकार करते हैं, लेकिन इन्हीं शब्दों के प्रस्तुतीकरण से इनके अर्थ में परिवर्तन की सदैव आशंका बनी रहती है। अतः विधियों और प्रविधियों को बिना कोई भेदभाव किये यहाँ-वहाँ उपयोग में लाते रहते हैं।

- **उपकरण** (Tool) : **शाब्दिक अर्थों में उपकरण कोई एक ऐसा साधन अथवा यन्त्र है जिसकी सहायता से तुम कोई कार्य सरलता से कर सकते हो (A tool is any instrument or piece of equipment, with the help of which you can do any work easily.)** | मूल्यांकन के परिप्रेक्ष्य में विविध विधियों और प्रविधियों पर आधारित अनेक उपकरणों का निर्माण हुआ है, जिनसे आँकड़े अथवा सूचनाएँ एकत्रीकरण करने का कार्य सुलभ हुआ है और जिन पर मूल्यांकन आधारित है।

अब हम यहाँ पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत उपयोग आने वाले विभिन्न उपकरणों का वर्णन करेंगे। सुविधा और सरलता की दृष्टि से निम्न वर्गीकरण का अवलोकन करें—

मूल्यांकन के उपकरण
(Tools of Evaluation)



अब हम इन पर संक्षिप्त में विवरण यहाँ दे रहे हैं (पाठक अधिक विस्तृत जानकारी हेतु मूल्यांकन की पुस्तकों का अध्ययन करें)।

1. अवलोकन (Observation)

मूल्यांकन विशेषज्ञ 'अवलोकन' को विधि (Method) भी मानते हैं, प्रविधि (Technique) भी मानते हैं और उपकरण (Tools) भी, क्योंकि यह सभी उन शर्तों को पूरा करता है जो इन तीनों बिन्दुओं में अपेक्षित है। अतः इस प्रकार से अवलोकन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

अवलोकन क्या है ? इस पर विशेषज्ञ अपना मत निम्न प्रकार प्रस्तुत करते हैं—

अवलोकन किसी व्यक्ति अथवा वस्तु को, विशेषतः उनके बारे में जानने अथवा समझने के लिये, ध्यानपूर्वक देखने की क्रिया अथवा प्रक्रिया है।"

(Observation is the action or process of carefully watching someone or something specially in order to learn or understand something about them.)

अतः 'अवलोकन' में अवलोकनकर्त्ता केवल देखकर किसी भी व्यक्ति को, उसकी गतिविधियों को, आचरण को, साथियों तथा अन्य लोगों के साथ परस्पर व्यवहार को, विभिन्न स्थितियों में सोचने और कार्य करने के तरीकों की जानकारी करता है, जिनके अध्ययन से वह उस व्यक्ति के बारे में कोई निश्चित परिणाम निकाल सके, लेकिन इसका आशय यह नहीं कि यह देखना अनियोजित अथवा अस्त-व्यस्तता पूर्ण हो, बल्कि इसके विपरीत यह विशेषज्ञ द्वारा अत्यन्त व्यवस्थित रूप से कार्य करने का तरीका है। पर्यावरण शिक्षा के सन्दर्भ में किसी बालक अथवा किसी व्यक्ति पर शिक्षण (औपचारिक अथवा अनौपचारिक) का क्या प्रभाव पड़ा ? इसके बारे में पूरी जानकारी 'अवलोकन' द्वारा एकत्रित की जा सकती है।

तथ्यों की प्राप्ति एवं विश्वसनीयता की दृष्टि से 'अवलोकन' दो प्रकार का होता है—

(अ) प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation) और (ब) अप्रत्यक्ष अवलोकन (Indirect Observation)।

(अ) प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation)

इस प्रकार के 'अवलोकन' में अवलोकनकर्त्ता स्वयं अपनी ज्ञानेन्द्रियों से सभी तथ्यों को देखता है, परखता है और पता लगाता है। प्रत्यक्ष अवलोकन से ही उन विशिष्ट गुण-धर्मों की जानकारी हो सकती है जिनसे बालक विशेष की रुचि, अभिरुचि, अभिवृत्तियों का सम्बन्ध है। वस्तुतः यह अवलोकन गुप्त होता है और सम्बन्धित व्यक्ति के अनजाने में ही होता है, लेकिन इसमें अवलोकनकर्त्ता की अपनी व्यक्तिनिष्ठता (Subjectivity) का भय रहता है। पूर्वाग्रह से भी इस उपकरण के उपयोग को बचाना चाहिये।

नियन्त्रण, सहभागिता और संख्या की दृष्टि से प्रत्यक्ष अवलोकन को निम्न छः भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) नियन्त्रित अवलोकन (Controlled Observation) : जब 'अवलोकन' (Observation), अवलोकनकर्त्ता (Observer) तथा अवलोकित (Observed) में से किसी एक पर भी या सभी पर किसी न किसी प्रकार का नियन्त्रण रहता है, तब उसे नियन्त्रित अवलोकन कहते हैं। इस हेतु अवलोकन की कोई योजना अथवा कार्यक्रम पूर्व में ही बनाया जाना आवश्यक है। अवलोकन का परिसीमन भी इसे नियन्त्रित अवलोकन की परिधि में ला देता है।

(ii) अनियन्त्रित अवलोकन (Uncontrolled Observation) : जिन व्यक्तियों अथवा स्थितियों का अवलोकन किया जाना हो, यदि उन पर अवलोकनकर्त्ता (Observer) का कोई नियन्त्रण नहीं है तो वह अनियन्त्रित अवलोकन कहलाता है। यह अवलोकन पूर्णतया स्वाभाविक, स्वतन्त्र और किसी अपवाद के होता है। जैसा है, जहाँ है (As it is; Where it is) के सिद्धान्त पर यह आधारित होता है और प्राकृतिक सत्य से प्रेरित रहता है।

(iii) सामूहिक अवलोकन (Mass Observation) : जब कई अवलोकिक एक साथ मिलकर किसी व्यक्ति, घटना अथवा वस्तुस्थिति का अवलोकन करें तो इसे सामूहिक अवलोकन कहते हैं। स्पष्ट है कि अवलोकिक समूह यहाँ विविध क्षेत्रों के विशेषज्ञों का होता है और सभी अपने-अपने क्षेत्र से सम्बन्धित बातों को अवलोकन में लाने का प्रयास करते हैं। यह गुणवत्ता की दृष्टि से उत्तम है पर श्रम साध्य और अधिक समय व्यय करने वाला है।

(iv) विशिष्ट अवलोकन (Specific Observation) : यों तो अवलोकनकर्त्ता अपने अवलोकन की कार्य-प्रणाली और अवलोकन क्षेत्र पूर्व में निश्चित रखता है, पर कभी-कभी किसी विशेष बिन्दु के बारे में जानकारी करने हेतु प्रयास किया जाता है। तब इसे विशिष्ट अवलोकन कहने लगते हैं।

(v) सम्पूरक अवलोकन (Supplementary Observation) : किसी व्यक्ति के बारे में मूल्यांकन के किसी उपकरण के माध्यम से जानकारी प्राप्त करने के बाद भी कभी-कभी कुछ अथवा कई जानकारी करना आवश्यक होता है। यह प्रत्यक्ष रूप में भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष रूप में भी। ऐसी स्थिति में इसे सम्पूरक अवलोकन कहेंगे।

(vi) समूह अवलोकन (Group Observation) : अवलोकन के लिये ऐसी स्थिति भी आती है जब केवल एक अवलोकिक द्वारा कई लोगों के समूह का एक साथ अवलोकन करना पड़ता है। निश्चित ही इससे उस समूह की समेकित उपलब्धियों का पता चलता है। यह समूह अवलोकन कहलाता है।

(ब) अप्रत्यक्ष अवलोकन (Indirect Observation)

जिस अवलोकन में अवलोकिक स्वयं व्यक्ति से न मिलकर, न देखकर और न ही सुनकर, दूसरों द्वारा दी गई जानकारी पर निर्भर करता है, तब इसे अप्रत्यक्ष अवलोकन कहते हैं। इस अवलोकन की विश्वसनीयता की सम्भावना कम हो जाती है और कभी-कभी तो ऐसे परिणाम निकल आते हैं जिन पर विश्वास करना भी कठिन होता है।

अवलोकन में जहाँ कार्य करने की स्वतन्त्रता, सोचने की मौलिकता और न्यूनतम जटिलता जैसी विशेषताएँ हैं वहीं उसमें यह एक महत्त्वपूर्ण कमी है कि इसका कोई सैट पैटर्न नहीं है। न ही कोई ऐसा परिपत्र आदि है जो व्यापक और समान रूप से उपयोग में लाया जा सके। अवलोकिक को स्वयं यह कार्य अपने-अपने तरीके से करना होता है। इससे दो व्यक्तियों द्वारा एक ही बालक अथवा घटना और स्थिति का अवलोकन बहुत अधिक अन्तर वाला हो सकता है। इससे उपकरण की विश्वसनीयता के प्रभावित होने की सम्भावना रहती है।

2. साक्षात्कार (Interview)

अवलोकन विधि के आधार पर निर्मित साक्षात्कार एक ऐसी तकनीक है जिसमें अवलोकिक (Observer) तथा अवलोकी (Observed) क्रमशः साक्षात्कारकर्त्ता (Interviewer) और साक्षात्कारी (Interviewee) बन जाते हैं और एक-दूसरे के सम्मुख बैठकर परस्पर जानकारी लेने व देने का कार्य करते हैं। अवलोकन में चुपचाप और अनजान बनकर देखने के तरीके में एक साथ परिवर्तन कर स्पष्ट और वांछनीय सूचनाएँ एकत्र करने का यह अच्छा और सहज तरीका है।

साक्षात्कार को अलग-अलग शिक्षाशास्त्रियों ने अलग-अलग प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है—

"साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्त्ता तथा साक्षात्कारी के मध्य प्रासंगिक सूचनाएँ एकत्र करने के लिये वार्तालाप है।"

[Interview is a conversation between an investigator (interviewer) and a subject (interviewee) used for gathering relevant information.]

"साक्षात्कार एक ऐसी बैठक है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता साक्षात्कारी से उसकी योग्यताएँ, क्षमताएँ और अनुभव आदि के बारे में प्रश्न पूछता है।"

(Interview is a meeting at which the interviewer asks questions from the interviewee about his qualifications, abilities, experiences etc.)

- **इन दोनों परिभाषाओं के आधार पर हम साक्षात्कार को 'सूचनाएँ एकत्रित करने का तरीका' (A device of recording information) कह सकते हैं।**

साक्षात्कार को आयोजित करने की दृष्टि से दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(अ) असंरचित साक्षात्कार (Unstructured Interview) और

(ब) संरचित साक्षात्कार (Structured Interview)।

(अ) असंरचित साक्षात्कार (Unstructured Interview) : ऐसे साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता कोई पूर्व निर्धारित तरीके को उपयोग में न लाकर साक्षात्कारी के सम्मुख किसी भी स्थिति पर वार्तालाप करता है और उस वार्तालाप में साक्षात्कारी के उत्तरों को सूचना के रूप में लिख लेता है, जो उसके मूल्यांकन के आधार बिन्दु बनते हैं। यही नहीं बल्कि साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा कुछ ऐसे प्रश्न जैसे 'आप अपने बारे में क्या जानते हैं ?' पूछकर साक्षात्कार में प्रक्षेपण विधि (Projective Technique) का उपयोग कर साक्षात्कारी के व्यक्तित्व तथा अनेक व्यवहारों की जानकारी भी कर सकता है।

इस प्रकार का साक्षात्कार का उपयोग **'परिस्थितीय परीक्षण'** के लिये भी किया जा सकता है। उस हेतु स्थितियाँ कुछ इस प्रकार उत्पन्न की जा सकती हैं, जैसे—सिगरेट की राखदानी (Ashtray) का जमीन पर उलट देना, किसी व्यक्ति को कमरे के बाहर काफी देर तक इन्तजार कराना,

परिस्थितीय परीक्षण क्या है ?
(What is a Situational Test ?)

जब किसी व्यक्ति के बारे में यह जानना हो कि वह व्यक्ति किन स्थितियों में कैसे प्रतिक्रिया करता है तब उसे कुछ विषम स्थितियों में रख दिया जाता है। इन स्थितियों में उसके व्यवहार

कमरे में बुलाकर कुर्सी पर बैठने को न कहना, अच्छे न लगने वाले शब्दों का प्रयोग करना आदि। ऐसी स्थिति में साक्षात्कारी का व्यवहार कैसा होगा ? गुस्सैल (Angry), झुझंलाहट (Irritative), शान्त (Calm), आग-बबूला (Boiling), हास्यकर (Humourous), उदासीन (Passive) आदि। साक्षात्कारकर्त्ता इन व्यवहारों को किसी प्रक्षेपण विधि पर आधारित परीक्षण से माप सकता है। **को अध्ययन करने वाला परीक्षण 'परिस्थितीय परीक्षण' कहलाता है।**

(When some one wishes to know that how an individual will react in a specific situation, he may arrange to observe that individual in some complex situations. An instrument or test that studies this behaviour is known as 'Situational Test'.)

(ब) संरचित साक्षात्कार (Structured Interview) : इस प्रकार के साक्षात्कार में सभी कुछ पूर्व निर्धारित होता है। प्रश्नों की सूची, जिन्हें साक्षात्कारी से पूछना है, भी पहले ही तैयार कर ली जाती है। पूछने का क्रम भी सामान्यतया वही रखा जाता है जिस क्रम में प्रश्नों को सूची में रखा जाता है। साक्षात्कारी द्वारा दिये गये उत्तरों को लिपिबद्ध कर लिया जाता है।

इस उपर्युक्त विवरण के आधार पर ही कई मूल्यांकनकर्त्ता साक्षात्कार को 'मौखिक प्रश्नावली' का नाम देकर इसे अनुसूची (Schedule) और प्रश्नावली (Questionnaire) के क्रम में स्थान देते हैं और साक्षात्कार को निम्न प्रकार परिभाषित करते हैं—

"वास्तव में साक्षात्कार एक मौखिक प्रश्नावली है। अपने उत्तरों को लिखने के बजाय, साक्षात्कारी आवश्यक सूचनाओं को आमने-सामने बैठक मौखिक रूप से देता है।"

(The interview is, in a sense, an oral questionnaire. Instead of writing the responses, the subject or the interviewee gives the needed information verbally in a face to face relationship.)

संरचित साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य वर्तमान सिद्धान्तों (Principles) तथा संकल्पनाओं (Concepts) और तथ्यों (Facts) की जाँच अथवा सत्यापन करना है तथा इन्हीं आधार पर बालकों अथवा व्यक्तियों के व्यवहारों का मूल्यांकन किया जाता है।

साक्षात्कारों का उनके प्रयोग, उपयोग, उपयोगिता तथा आवश्यकता के आधार पर अनेक भागों में विभाजित किया जाता है। अधिक विस्तार में न जाने के बजाय उनका नाम विवरण दिया जा रहा है, जो पाठकों के लिये इस सन्दर्भ में यथेष्ट होगा—

(i) औपचारिक साक्षात्कार (Formal Inteview) : इस प्रकार के साक्षात्कार नियन्त्रित (Controlled), नियोजित (Planned) और संरचित (Structured) होते हैं। यही वास्तव में व्यवहार में लाये जाते हैं, क्योंकि इनका कार्य उद्देश्यपूर्ण होता है।

(ii) अनौपचारिक साक्षात्कार (Informal Interview) : उपर्युक्त के विपरीत, अनौपचारिक साक्षात्कार अनियन्त्रित (Uncontrolled), स्वतन्त्र (Unplanned) तथा असंरचित (Unstructured) होते हैं। इस साक्षात्कार की विशेषता यह है कि इसमें कोई बनावट अथवा दिखावा नहीं होता। साक्षात्कारकर्त्ता और साक्षात्कारी दोनों ही बिना किसी भय, दबाव और पूर्वाग्रह के कार्य करते हैं और परस्पर सौहार्द्रपूर्ण वातावरण बनाये रखते हैं।

(iii) व्यक्तिगत साक्षात्कार (Individual Interview) : इसमें एक समय में एक ही व्यक्ति से साक्षात्कार किया जाता है। साक्षात्कारी को विश्वास में लेने पर अत्यन्त सही और विश्वसनीय सूचनाएँ इस प्रकार के साक्षात्कार से मिल सकती हैं। ज्ञान के अतिरिक्त रुचि, अभिरुचि, अभिवृत्ति आदि मनोवैज्ञानिक भावनाओं के बारे में जानकारी इस उपकरण से सम्भव है।

(iv) समूह साक्षात्कार (Group Interview) : कभी-कभी एक से अधिक व्यक्तियों का साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा लिया जाता है, इसे समूह साक्षात्कार की श्रेणी में रखते हैं। इसमें यह आवश्यक नहीं कि एक प्रकार के प्रश्न सभी से पूछे जायें। अलग-अलग व्यक्ति से अलग-अलग प्रश्न पूछे जा सकते हैं अथवा कोई प्रश्न पढ़कर किसी व्यक्ति विशेष से उत्तर देने को कहा जा सकता है। यह कम समय में अधिक लोगों से साक्षात्कार करने की विधा है।

(v) सामूहिक साक्षात्कार (Mass Interview) : इस प्रकार के साक्षात्कार में कई व्यक्ति एक साथ साक्षात्कारकर्त्ता के रूप में होते हैं। साक्षात्कारी एक अथवा एक साथ अनेक हो सकते हैं। इस साक्षात्कार

का गुण यह है कि विविध विषयों के विशेषज्ञों का योगदान एक समय में ही मिल जाता है जिससे उपकरण की वैधता के साथ-साथ विश्वसनीयता भी बनी रहती है जो अच्छे मूल्यांकन के लिये आवश्यक है।

साक्षात्कार का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष साक्षात्कारी से प्राप्त सूचना अथवा आँकड़ों के आधार पर उसका मूल्यांकन करना है और परिणाम के आधार पर उसकी व्याख्या करना है। यह कार्य किसी दक्ष विशेषज्ञ द्वारा ही सम्पन्न हो सकता है। इस प्रकार देखें तो हम यह निष्कर्ष अवश्य निकाल सकते हैं कि साधारण-सा दिखने वाला साक्षात्कार प्रारंभ से अन्त तक अत्यन्त तकनीकी (Technical) है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता की सबसे प्रमुख भूमिका है।

3. प्रश्नावली (Questionnaire)

शाब्दिक अर्थ के अनुकूल प्रश्नावली एक लिखित प्रश्नों की सूची है जिसे उत्तर देने के लिये बनाया जाता है **(Questionnaire is a written list of questions which is being constructed for giving answers.)**| लेकिन मूल्यांकन के क्षेत्र में इसे जब उपकरण के रूप में प्रयोग में लिया जाता है तो इसको निम्न प्रकार व्यक्त करते हैं—

"प्रश्नावली अनेक लिखित प्रश्नों से निर्मित एक उपकरण है जिसे तथ्यात्मक सूचनाएँ प्राप्त करने के लिये प्रयोग में लिया जाता है।"

(A questionnaire is a tool, formed by a number of written questions, which is used for getting factual information.)

Barr, Davis और Johnson ने प्रश्नावली को निम्न प्रकार परिभाषित किया है—

"प्रश्नावली प्रश्नों का एक व्यवस्थित संग्रह है, जिसे आबादी के न्यादर्श को, जिनसे सूचनाएँ ली जाती हैं, प्रस्तुत किया जाता है।"

(A questionnaire is a systematic compilation of questions that are submitted to a sampling of population from which information is required.)

इस प्रकार इस विवरण से स्पष्ट है कि बाहरी बनावट के रूप में एक प्रश्नावली में कुछ प्रश्न (Questions) होते हैं, जिसे उस व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह को दिया जाता है, जिनसे कुछ निश्चित प्रकार की जानकारी करनी होती है। इस उपकरण में प्रश्नों की प्रमुखता है, अतः यह लिखना बहुत आवश्यक है कि प्रश्नावली का निर्माण वस्तुतः तथ्यात्मक जानकारी (Factual information) के लिये ही है और इसी कारण प्रश्नों का निर्माण उसी प्रकार का होना आवश्यक है।

प्रश्न क्या है ?
(What is a Question ?)

प्रश्न किसी परीक्षण का वह भाग है जो निश्चित प्रतिक्रिया देता है/करता है।

(A question is a part of a test that elicits a definite specific response.)

एक अच्छी प्रश्नावली अच्छे प्रश्नों पर आधारित होती है। इसलिये प्रश्नों के कुछ गुणों का उल्लेख करना उपयुक्त ही होगा।

अच्छे प्रश्नों के गुण (Characteristics of a Good Questions)—

1. प्रश्न निर्धारित पाठ्यक्रम आधारित होने चाहिये।
   (Questions should be based on the prescribed curriculum.)
2. प्रश्न यथासम्भव वस्तुनिष्ठ होने चाहिये।
   (Questions should be objective to a great extent.)
3. प्रश्नों का निर्माण उद्देश्यनिष्ठ आधारित होना चाहिये।
   (The construction of questions should be objective based.)
4. प्रश्नों की भाषा स्पष्ट, संक्षिप्त, सरल और बालक अथवा व्यक्ति की समझ में आने वाली होनी चाहिये।
   (The language of the questions should be clear, precise, easy and understandable to a child or an individual.)
5. प्रश्न मध्यम कठिनता स्तर के होने चाहिये।
   (Questions should be of average difficulty level.)

6. प्रश्नों में विभेदीकरण गुण धर्म होना चाहिये।
   (Questions should have the discriminative quality.)
7. प्रश्न विभिन्न भाषाओं में समान अनुवाद हो सकने वाले होने चाहिये।
   (Questions should have translatability in different languages.)
8. प्रश्न उत्तर आधारित होने चाहिये।
   (Questions should be answer based.)
9. प्रश्न भाषायी दोष से मुक्त तथा एकार्थक होने चाहिये।
   (Questions should have single meaning and free from language defects.)
10. जहाँ तक सम्भव हो अप्रिय, नाराजगी तथा उलझाने वाले प्रश्नों से बचना चाहिये।
   (As far as possible, unpleasant, annoying and embarrassing questions should be avoided.)

- **प्रश्नावली को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया गया है—**

(अ) बन्द प्रश्नावली (Closed Questionnaire) और

(ब) खुली प्रश्नावली (Open Questionnaire)।

(अ) बन्द प्रश्नावली (Closed Questionnaire)

इस प्रकार की प्रश्नावली में छोटे उत्तर वाले, हाँ/नहीं वाले अथवा दिये गये उत्तरों में से सही उत्तर चयन करने वाले जैसे प्रश्न होते हैं। पर्यावरण क्षेत्र के इनके कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं—

1. आपके गाँव में पीने के पानी का मुख्य स्रोत क्या है ?
   (What is the main source of potable water in your village ?)
   सम्भावित सही उत्तर—(कुआँ)
2. क्या आपके गाँव के कुओं की नियमित सफाई की जाती है ?
   (Are the wells of your village cleaned regularly ?)
   उत्तर—(हाँ/नहीं)
3. गाँव के कुओं की नियमित सफाई के लिये आप किससे सम्पर्क करना उचित समझते हैं ?
   (To whom do you feel appropriate to contact for regular cleaning of your village wells ?)
   (अ) पटवारी, (ब) ग्राम पंच,
   (स) स्थानीय चिकित्सक, (द) निकटतम जलदाय विभाग।
   सही उत्तर—(द)

(ब) खुली प्रश्नावली (Open Questionnaire)

इस प्रश्नावली में उत्तर देने वाले को अपने उत्तर देने की स्वतन्त्रता दी जाती है। उत्तर सामान्यतया बड़ा भी हो सकता है। इसमें कोई सही उत्तर का सुझाव अथवा निर्देश नहीं होता है। इन प्रश्नों से उत्तर देने वाले की छुपी बातें, गहराई और अप्रत्याशित व्यवहार आदि की जानकारी मिल सकती है। उदाहरण के लिये जैसे—

1. आपके गाँव के कुओं की सफाई की क्या व्यवस्था है ?
   (What arrangements are there for cleaning of your village wells ?)

- **इस प्रश्नावली में सामान्यतया दोनों प्रकार के प्रश्न रखे जाते हैं, क्योंकि दोनों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं—**

(i) बन्द प्रश्नावली में (In closed questionnaire)—

1. प्रश्नों के उत्तर देने में आसानी है।
   (It is easy to answer the questions.)
2. समय की बचत होती है।
   (It saves time.)
3. प्रश्न यथासम्भव वस्तुनिष्ठ होते हैं।
   (Questions are fairly objective.)

4. इन प्रश्नों का विश्लेषण सरल है।
(It is easy to analyse these questions.)

(ii) जबकि खुली प्रश्नावली में (In open questionnaire)—

1. उत्तरदाता को उत्तर की स्वतन्त्रता होती है।
(The replier is free for answers.)
2. उपलब्धि के अतिरिक्त अन्य कई गुणों की जानकारी होती है।
(Many other traits are known beside the achievement.)

4. अनुसूची (Schedule)

अनुसूची (Schedule) भी प्रश्नावली (Questionnaire) की भाँति एक लिखित प्रश्नों की सूची है जिसे साक्षात्कारकर्त्ता अपने कार्य दायरे के अन्तर्गत तैयार करता है। इस सूची के प्रश्नों के उत्तर वह सम्बन्धित व्यक्ति से स्वयं पूछता है और उत्तर एकत्रित करता है। Goode & Hatt के अनुसार—

"अनुसूची उन प्रश्नों के समुच्चय को नाम दिया है, जिन्हें साक्षात्कारकर्त्ता किसी दूसरे व्यक्ति के आमने-सामने की स्थिति में पूछता है और भरता है।"

(Schedule is the name usually applied to a set of questions which are asked and filled in by an interviewer in a face to face situation with another person.)

Bogardus ने अनुसूची को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है—

"अनुसूचीं तथ्यों को प्राप्त करने की औपचारिक विधि है जो वस्तुनिष्ठ प्रकार की और समझने योग्य होती है।"

(The schedule represents a formal method for securing facts that are in objective form and easily discernible.)

● **अतः अनुसूची एक इस प्रकार की प्रश्नों की सूची है जिन्हें तथ्यों की जानकारी के लिये प्रयोग में लाया जाता है, लेकिन इसकी विशेषता अथवा विशिष्टता यह होती है कि—**

1. अनुसूची में प्रश्न केवल सम्बन्धित विषय के होते हैं।
(Questions in a schedule are only subject related.)
2. प्रश्नों का क्रम निश्चित होता है और उसी क्रम में प्रश्न पूछे जाते हैं।
(The sequence of questions is definite and these are asked in the same order.)
3. प्रश्न छोटे होते हैं और सीधी जानकारी प्राप्त करने वाले होते हैं।
(Questions are short and are meant for knowing direct information.)
4. प्रश्नों की संख्या सीमित होती है जिससे निर्धारित समय में उसकी पूर्ति हो सके।
(The number of questions is limited so that it may be filled in definite time.)

अनुसूची (Schedule) और प्रश्नावली (Questionnaire) के निर्माण में कोई अन्तर नहीं है और न ही उनके प्राप्य उद्देश्यों में। आधारभूत अन्तर यह है कि अनुसूची साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा स्वयं भरी जाती है, जबकि प्रश्नावली की पूर्ति अप्रत्यक्ष रूप से डाक द्वारा भेजकर भी कराई जा सकती है।

5. मिलान सूची (Check List)

मिलान सूची एक ऐसी विधि है जिसमें प्रश्न (Questions) अथवा पद (Items) एक सादा सूची के रूप में लिखे जाते हैं। उत्तरदाता इन पर अपने उत्तर (1) हाँ अथवा नहीं, (2) ✓ अथवा ×, (3) केवल ✓, (4) केवल × और (5) सबसे सही उत्तर के रूप में दे देता है। प्रश्न अथवा पदों के निर्माण में तो उन सभी आवश्यक बिन्दुओं का समावेश करना होता ही है जिनसे पूरे उपकरण की वैधता और विश्वसनीयता बनी रहे, लेकिन इसके उपयोग में कोई विशिष्टता की आवश्यकता नहीं है। उत्तरों की पूर्ति साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा व्यक्ति से पूछकर भी की जा सकती है और साक्षात्कारी स्वयं भी पूर्ति कर सकता है।

● **मिलान सूची के पदों के उदाहरण निम्न प्रकार होते हैं—**

1. क्या आपके गाँव/नगर में ध्वनि प्रदूषण की समस्या है ?
(Is there any problem of noise pollution in your village/town ?) **उत्तर—हाँ/नहीं।**

2. ध्वनि प्रदूषण निम्न में से किन से हो सकता है ? ✓ से चिन्हित करें।

(Which of the following may cause noise pollution ? tick it ✓.)

(अ) टेलीफोन (Telephone) ....

(ब) रेडियो (Radio) ....

(स) दूरदर्शन (Doordarshan) ....

(द) वाशिंग मशीन (Washing Machine) ....

(इ) मिक्सी (Mixy) ....

सही या गलत लिखें—

3. ध्वनि प्रदूषण (Noise pollution)

(अ) एक अदृश्य प्रदूषण है (is an invisible pollution.) ....

(ब) कोई समस्या नहीं है (is no problem.) ....

(स) नियन्त्रित हो सकता है (may be controlled.) ....

(द) स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद है (is good for health.) ....

6. मूल्य निर्धारण-मापनी (Rating Scale)

'मूल्य निर्धारण-मापनी' मूल्यांकन में एक ऐसा उपकरण है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति के विशिष्ट गुण को उसके स्तरानुसार मापा जा सकता है। एक परिभाषा के अनुसार—

"मूल्य निर्धारण-मापनी एक उपकरण है जिससे मूल्यांकनकर्त्ता किसी दूसरे व्यक्ति (अथवा स्वयं) की विशेषताओं पर अपना निर्णय दे सकता है।"

[Rating scale is a device by which a rater can record his judgement of another person (or of himself) on the trait defined by the scale.]

स्पष्ट है कि यह उपकरण उन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर सकता है जिन्हें सामान्यतया अन्य प्रकार से प्राप्त करना सम्भव नहीं है। इसमें गुणवत्ता (Quality), अभिवृत्ति (Attitudes) अथवा ऐसे ही अन्य विशेषताएँ—रुचि (Interests) और अभिरुचि (Aptitudes) आदि का मापन सम्मिलित है।

वह श्रेणी अथवा स्तर जिस तक कोई विशिष्टता मौजूद है (The degree to which some trait is present) इस मापनी की कार्यशैली है इसे विभिन्न रूप में निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है—

(i) तीन पदीय मापन (Three Points Scale)—

Agree	Undecided	Disagree
स्वीकार	अनिर्णित	अस्वीकार

(ii) पाँच पदीय मापन (Five Points Scale)—

Excellent	Good	Average	Below Average	Poor
उत्तम	अच्छा	औसत	औसत से नीचे	निकृष्ट

(iii) सात पदीय मापन (Seven Points Scale)—

Excellent	Very Good	Good	Average	Below Average
उत्तम	बहुत अच्छा	अच्छा	औसत	औसत से नीचे
Poor	Very Poor			
निकृष्ट	अत्यन्त निकृष्ट			

रेटिंग स्केल से प्राप्त सूचनाओं से मूल्यांकन करने हेतु कई विशेष विधियों का उपयोग किया जाता है, जिनमें (1) Thurston Technique of Scaled Values और (2) Likert Method of Summated Ratings के नाम उल्लेखनीय हैं।

7. उपाख्यान अभिलेख (Anecdotal Record)

किसी भी व्यक्ति की असाधारण अच्छी अथवा बुरी घटना को लिपिबद्ध करना, 'उपाख्यान अभिलेख' (Anecdotal Record) कहलाता है। उस वर्णन में जितने भी बिन्दु विशिष्ट (Specific) जान पड़ें, उन्हें अंकित करके तथा उसके आधार पर मूल्यांकन किया जाता है। उदाहरण के लिये—किसी व्यक्ति का अकेले में किसी जंगल में भटक कर वन्य पशुओं के चंगुल से बच जाने की घटना एक ऐसी स्थिति हो सकती

है, जिसमें (1) वनों की स्थिति, (2) वन्य पशुओं का व्यवहार, (3) सहायता की सम्भावना, (4) सुरक्षा का अहसास, (5) पास के ग्रामीणों की भूमिका, (6) प्रशासकीय प्रबन्ध आदि का मूल्यांकन सम्भव है।

इस प्रकार के मूल्यांकन उपकरणों की विश्वसनीयता इस बात पर निर्भर करती है कि घटनाओं की यथार्थता तथा सत्यता कितनी है ? इस कारण यह अच्छा समझा जाता है कि घटनाओं की रिपोर्टिंग तथा लेखन शीघ्र हो। साथ ही यथासम्भव सब विवरण बिन्दुओं को घटनाक्रम के साथ जोड़ा जाये।

8. अभिवृत्ति मापी (Attitude Scale)

'अभिवृत्ति मापी' अभिवृत्तियों के संख्यात्मक मूल्य निर्धारण का उपकरण है **(Attitude Scale is an instrument for the quantitative appraisal of attitudes.)**; जबकि अभिवृत्तियाँ (Attitudes) किसी भी व्यक्ति की विशिष्ट स्थितियों में क्रिया अथवा प्रक्रिया को दर्शाता है।

- **अभिवृत्ति (Attitude) को निम्न प्रकार भी व्यक्त किया जाता है—**

(i) यह किसी स्थिति के प्रति मानसिक और भावनात्मक तत्परता है।
(It is a mental and emotional readiness towards some situation.)

(ii) यह समर्थन अथवा नहीं समर्थन के प्रकार से प्रतिक्रिया करने की वृत्ति है।
(It is a tendency to react favourably or unfavourably.)

इसे विचारावली (Opinionnaire) भी कहते हैं क्योंकि किसी भी स्थिति में किसी भी व्यक्ति की विचारधारा क्या है, यही जानना इस उपकरण का मुख्य कार्य है।

- **इस उपकरण में प्रश्नों के बजाय कथन (Statements) होते हैं जिनकी अपनी निर्माण विशेषताएँ हैं—**

1. प्रत्येक कथन बहस योग्य होना चाहिये, अर्थात् उसमें विचार आमन्त्रित करने की क्षमता होनी चाहिये न कि तथ्यों की।
(Each statement should be debatable, *i.e.* it should have fitness to reflect opinion and not the facts.)
2. कथन मापने वाली अभिवृत्तिं से सम्बन्धित होना चाहिये।
(Statement should be relevant to the measuring attitude.)
3. प्रत्येक कथन में एक ही बिन्दु सम्मिलित होना चाहिये।
(Each statement should contain only one point.)
4. कथन संक्षिप्त होना चाहिये।
(Statement should be short.)
5. प्रत्येक कथन अपने आप में समग्र होना चाहिये।
(Each statement should be complete in itself.)
6. प्रत्येक कथन की भाषा स्पष्ट और सरल होनी चाहिये।
(The language of each statement should be distinct and easy.)
7. कथन प्रथम वक्ता के अनुरूप होना चाहिये।
(Statement should be in active voice.)
8. प्रत्येक कथन केवल एक अर्थवादी होना चाहिये।
(Each statement should have one meaning only.)
9. कथनों की पुनरावृत्ति को रोकना चाहिये।
(Duplication of statements should be checked.)
10. किसी कथन से उत्तरदाता को ठेस नहीं लगनी चाहिये।
(No statement should hurt the replier.)

इन कथनों पर उत्तरदाता के उत्तर पूर्व निश्चित प्रकार के मापन (तीन पद, पाँच पद अथवा सात पद) पर लेकर उनका मूल्यांकन रेटिंग स्केल में दिये गये प्रकार से किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त भी कई और उपकरण हैं, जिनमें रुचि (Interest) [पसन्द और नापसन्द व्यक्त करना : To express in terms of likes & dislikes] के लिये **'रुचि प्रश्नावली' (Interest Inventory)**

तथा अभिरुचि परीक्षा (Aptitude Test) [किसी कार्य को सरलता और श्रेष्ठता से करने की योग्यता : The ability to do some work easily & nicely] के लिये **'अभिरुचि परीक्षण' (Aptitude Tests)** प्रमुख हैं। पर्यावरण शिक्षा के मूल्यांकन में इनका सीधा कोई योगदान नहीं है क्योंकि यह व्यक्ति विशेष की कार्य निष्पादन करने की योग्यता तक सीमित हैं।

9. परीक्षण (Tests)

किसी भी क्षेत्र में मूल्यांकन के लिये परीक्षा (Tests or Examinations) एक व्यापक रूप से स्वीकृत विधा है जो न जाने कब से चली आ रही है। समय-समय पर शिक्षाशास्त्रियों के अथक प्रयासों से इस विधा को नवीनतम दिशा मिली है और आज स्थिति यह है कि इसको बहुत व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने में भी अब कठिनाई होती है। हम भी यहाँ इसे इस रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं कि इनकी एक समेकित स्थिति आपको मिल सके।

Test को दो रूप में स्वीकार किया गया है। **प्रथम—परीक्षण की दृष्टि से :** जिसमें विभिन्न प्रकार के परीक्षण सम्मिलित किये जाते हैं चाहे वह **'व्यक्तित्व मापन'** के परीक्षण हों अथवा **'बुद्धिमापक परीक्षण'** हों। इसके अतिरिक्त **'ज्ञानोपार्जन मापन'** के परीक्षण और **'प्रवणता'** तथा **'रुचि मापक'** परीक्षण भी इसमें आते हैं। **दूसरे—परीक्षा की दृष्टि से :** जिसमें (1) आयोजन और (2) निर्माण के प्रकार प्रमुख हैं। इन पर बिन्दुवार चर्चा यहाँ दी जा रही है।

सर्वप्रथम तो Test को ही उन रूपों में परिभाषित करने का प्रयास कर रहे हैं, जिस रूप की चर्चा अभी हमने की है—

(अ) निर्माण की दृष्टि से (In the Light of Construction)

"एक 'परीक्षण' प्रश्न, कार्य आदि पदों का ऐसा व्यवस्थित संग्रह है जिससे उत्तर प्राप्त होते हैं अथवा जिसके उत्तरों का अंकन किया जा सकता है और जो उपलब्धि जानने हेतु प्रयोग में लिये जाते हैं।"

(A 'test' is a collection of items, questions, tasks etc. so arranged that its replies or performances can be scored and scores used for appraisal.)

(ब) आयोजन की दृष्टि से (In the Light of Use)

"परख (Test) एक परीक्षा अथवा जाँच है जो किसी व्यक्ति की समूह में बुद्धि, व्यक्तित्व, अभिरुचि, अभिवृत्ति, रुचि अथवा उपलब्धि के सन्दर्भ में आपेक्षित स्थिति प्रकट करने के लिये बनाई जाती है।"

(A test is an examination designed to reveal the relative standing of an individual in the group with respect to intelligence, personality, aptitude, attitude, interest or achievement.)

इन दोनों परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि Test को विधि और उपकरण दोनों प्रकार से व्यक्त किया जाता है, लेकिन हमारा वर्णन क्षेत्र यहाँ विधि के रूप में परीक्षा (Examination) का है। अतः उसी पर हम विस्तार से चर्चा करेंगे।

- **परीक्षा को मोटे तौर से तीन भागों में विभाजित किया गया है—**

1. व्यक्तित्व मापन परीक्षण (Personality Assessment Tests)

(अ) प्रत्यक्ष अथवा परिसूचियाँ (Direct or Inventories)

1. व्यक्ति इतिहास (Case History),
2. साक्षात्कार (Interview),
3. अवलोकन (Observation),
4. आत्मकथा (Autobiography),
5. प्रश्नावली (Questionnaire),
6. परिस्थिति परीक्षण (Situation Test) और
7. व्यक्तित्व अनुसूची (Personality Inventory)।

(ब) अप्रत्यक्ष अथवा प्रक्षेपण विधियाँ (Indirect or Projective Techniques)

1. कक्षा संस्कार परीक्षण (TAT or Thematic Apperception Test),
2. रोशां इंक ब्लाट परीक्षण (Rorscharch Ink Blot Test),
3. चिल्ड्रन एयरसेप्शन टैस्ट (CAT or Children Apperception Test),
4. वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test),
5. शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test) और
6. रोजेनबेग पिक्चर फ्रस्ट्रेशन स्टडी (Rosenzbeig picture Frustration Study)।

(स) मनोविश्लेषण विधियाँ (Psychoanalytic Methods)

1. स्वतन्त्र साहचर्य (Free Association) और

(अ) मौखिक परीक्षा (Oral Examination),
(ब) प्रायोगिक परीक्षा (Practical Examination) और
(स) लिखित परीक्षा (Written Examination)।

(अ) मौखिक परीक्षा (Oral Examinations)

मौखिक परीक्षा वह परीक्षा है जिसमें लिखने के बजाय प्रश्न और उत्तर दोनों ही बोले जाते हैं (Oral test is a test in which both questions and answers are spoken rather than written.)। परीक्षक पूर्व निर्धारित पाठ्य-वस्तु के आधार पर कुछ प्रश्न बना लेता है, जो प्रस्तावित सीमा के अन्दर ही परीक्षार्थी से पूछे जा सकते हों। प्रश्नों के उत्तर के आधार पर वह तत्काल सही और गलत पर अंकन कर देता है।

यह परीक्षा कम समय व्यय करती है और कम परिश्रम भी। परीक्षार्थी की स्मरण शक्ति, तार्किकता, विचार व्यक्त करने की कला और तत्काल उत्तर देने की क्षमता का मूल्यांकन करता है और साथ ही इन्हीं गुणों का विकास भी करता है।

क्योंकि मौखिक परीक्षा मुख्यतः परीक्षक द्वारा पूछे गये प्रश्नों पर ही अवलम्बित रहती है, अतः प्रश्नों का निर्माण अत्यन्त कुशलता से और परीक्षार्थी की आयु तथा योग्यता के अनुकूल ही होना चाहिये। प्रश्न छोटे, सरल और सहजता से समझने वाले होने चाहिये।

लिखित परीक्षा के सम्पूरक के रूप में आयोजित होने वाली यह परीक्षा अपना महत्त्व इस रूप में प्रस्तुत कर सकती है कि इसको कितनी मान्यता दी गई है।

(ब) प्रायोगिक परीक्षा (Practical Examinations)

कुछ विषयों में प्रायोगिक परीक्षा का उपयोग होता है जिससे यह जाना जा सके कि विषय का कितना वास्तविक ज्ञान परीक्षार्थी को है ? यह बालक में आत्मविश्वास, कार्य करने की क्षमता और चिन्तन का विकास करती है तथा अनेक कठिन समस्याओं के हल खोजने के लिये प्रेरित करती है। प्रायोगिक परीक्षायें वास्तव में शिक्षार्थी को व्यावहारिक जीवन से जोड़ने की भूमिका निभाती हैं।

(स) लिखित परीक्षायें (Written Examinations)

यह परम्परागत चली आ रही वह परीक्षायें हैं जिनमें एक प्रश्न-पत्र के आधार पर परीक्षार्थी को अपने उत्तर लिखित में किसी पुस्तिका में देने होते हैं। परीक्षार्थी को लिखने के लिये एक निश्चित अवधि दी जाती है और परीक्षार्थी द्वारा लिखित उत्तर का मूल्यांकन परीक्षक द्वारा कर लिया जाता है।

- **लिखित परीक्षाओं का निम्न प्रकार विभाजन किया गया है–**

(i) **निबन्धात्मक परीक्षाएँ** (Essay type tests),
(ii) **लघुउत्तरात्मक परीक्षाएँ** (Short answer type tests),
(iii) **अति लघुउत्तरात्मक परीक्षाएँ** (Very short answer type tests), और
(iv) **वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ** (Objective tests)।

2. स्वप्न विश्लेषण (Dream Analysis)।

2. बुद्धिमापक परीक्षण (Intelligence Tests)

1. बिने साइमन टैस्ट (Binet Simon Test),
2. स्टैनफोर्ड-बिने स्केल (Stainford-Binet Scale),
3. वैशलर स्केल (Wechsler Scale),
4. टर्मन मैरिल टैस्ट (Terman Meril Test) और
5. थॉर्नडाइक इण्टैलीजैन्स टैस्ट (Thorndike Intelligence Test) और अन्य कई।

3. ज्ञानोपार्जन परीक्षण (Achievement Tests)

सामान्यतया यह दो प्रकार के होते हैं–

1. सामान्य ज्ञानार्जन परीक्षण (General achievement Tests), और
2. निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic Tests)।

आवश्यकतानुसार शिक्षक अथवा सन्दर्भ व्यक्ति द्वारा परीक्षण के सिद्धान्तों द्वारा तैयार किये जाते हैं।

4. विशेष योग्यता और अभिरुचि परीक्षण (Special Abilities and Aptitude Tests)

इस क्षेत्र में इतने परीक्षण उपलब्ध हैं कि उनकी समेकित प्रस्तुति सहज सम्भव नहीं है, हाँ उनका शीर्षक विवरण निम्न प्रकार है–

1. गत्यात्मक योग्यता परीक्षण (Motor Ability Tests),
2. यान्त्रिक अभिरुचि परीक्षण (Mechanical Aptitude Tests),
3. आन्तरिक योग्यता परीक्षण (Spatial Ability Tests),
4. लिपिक अभिरुचि परीक्षण (Clerical Aptitude Tests),
5. कलात्मक अभिरुचि परीक्षण (Artistic Aptitude Tests),

(i) निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay Type Tests)

लिखित परीक्षाओं का यह सबसे प्राचीन और सरलतम रूप है। किसी भी विषय के लिये एक विषय अध्यापक पाठ्यक्रम के आधार पर दस (10) से बारह प्रश्न तक बनाता है और उसे क्रम से समेकित कर प्रस्तुत कर देता है। इसे **'प्रश्न-पत्र'** कहते हैं। सामान्यतया तीन घण्टे की अवधि में परीक्षार्थी इन सभी प्रश्नों का अथवा निर्देशानुसार कुछ कम प्रश्नों का उत्तर देता है। यह निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Examination) कहलाती है। परीक्षार्थी इस निर्धारित अवधि में स्वतन्त्रतापूर्वक लिख सकता है और अपने ज्ञान को इन प्रश्नों के उत्तर में पिरो देता है।

- **प्रश्नों का प्रकार यहाँ दिया जा रहा है—**

1. बढ़ती आबादी ने देश के प्राकृतिक पर्यावरण को किस प्रकार प्रभावित किया है ?
   (How has the growing population affected the natural environment of the country ?)
2. वाहन प्रदूषण किस प्रकार उत्पन्न होता है ? और इसे कैसे कम किया जा सकता है ?
   (How does the vehicular pollution occur ? and how can it be lessened ?)

निबन्धात्मक परीक्षा में अनेक गुण-दोष हैं जो शिक्षा मनोवैज्ञानिकों के लिये शोध का विषय बने हैं। इनमें से कुछ यहाँ समेकित हैं—

(क) निबन्धात्मक परीक्षा प्रणाली की विशेषताएँ (Characteristics of Essay Type Examinations)

1. प्रश्नों का निर्माण सरल होता है।
   (It is easy to frame questions.)
2. परीक्षार्थी को अपने भाव व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है।
   (Examinees find freedom for their expressions.)
3. इससे बालकों में सीखने और समझने की जिज्ञासा बढ़ती है।
   (It encourages the students to learn and understand.)
4. इससे भाषा पर अधिकार और लेखन शैली प्रभावी होती है।
   (It gives command over language and effectiveness in writing style.)
5. यह बालक में आत्मबिश्वास बढ़ाता है।
   (It produces self confidence in the child.)
6. इससे बालकों में कल्पना और स्मरण शक्ति का विकास होता है।
   (It develops the imagination and memory in the children.)

6. विभिन्न व्यवसाय अभिरुचि परीक्षण (Different Vocations Aptitudes Tests) : (i) चिकित्सा (Medical), (ii) कानून (Law), (iii) शिक्षण (Teaching), (iv) साइन्स तथा इंजीनियरिंग (Science & Enginneering), (v) व्यापार (Trade), (vi) शारीरिक क्षमता (Physical Capacity) आदि।
7. भेदात्मक अभिरुचि परीक्षण (Differential Aptitude Tests : DAT) और
8. सामान्य अभिरुचि परीक्षण (General Aptitude Tests : GAT), आदि।

5. रुचि परीक्षण (Interest Tests)

1. स्ट्रोंग व्यावसायिक रुचि पत्र (The Strong Vocational Interest Blank) और
2. क्यूडर का व्यावसायिक पसन्द लेख (Cuder Preference Vocational Record), आदि।

- **परीक्षणों का आवश्यकतानुसार निम्न प्रकार का वर्गीकरण किया गया है—**

(अ) परीक्षण के निर्माण के आधार पर (On the Basis of Construction of the Test) :

1. मानक परीक्षण (Standardised Tests) और
2. शिक्षक/सन्दर्भ व्यक्ति द्वारा निर्मित (Teachers or Resource Persons Made Tests)।

(ब) शिक्षा के आधार पर (On the Basis of Education)

1. मौखिक परीक्षण अथवा अलिखित परीक्षण (Verbal Tests) और
2. लिखित परीक्षण (Non-Verbal Test)।

(स) आयोजन के आधार पर (On the Basis of Organisation)

1. व्यक्तिगत परीक्षण (Individual Tests) और
2. सामूहिक परीक्षण (Group Tests)।

7. इससे शिक्षण का प्रभाव जाना जा सकता है।
(It can judge the effectiveness of the teaching.)
8. इससे शिक्षण की विभिन्न विधियों की पारस्परिक तुलना की जा सकती है।
(It can compare the different teaching methods one another.)
9. इससे बालक की उच्च मानसिक योग्यताओं का मापन किया जा सकता है।
(It can measure higher mental abilities of the pupils.)
10. इससे बालक की क्षमता का पता लगाया जा सकता है।
(It can determine the capacity of a child.)

(ख) निबन्धात्मक परीक्षाओं की कमियाँ (Shortcomings of Essay Type Examinations)

1. यह परीक्षायें लम्बी होती हैं और अधिक समय व्यय करती हैं।
(These tests are lengthy and spends much time.)
2. यह परीक्षायें व्यक्तिपरक होती हैं।
(These tests are subjective.)
3. यह बालकों में रटने की प्रवृत्ति पैदा करती हैं।
(It creates the tendency of rote memory in the children.)
4. इन परीक्षाओं की वैधता और विश्वसनीयता संदिग्ध होती है।
(These tests lack validity and reliability.)
5. इन परीक्षाओं में पूरे पाठ्यक्रम को स्थान नहीं मिल पाता है।
(These tests do not cover the total curriculum.)
6. इन परीक्षाओं के अंकन में वस्तुनिष्ठता का अभाव रहता है।
(These tests lack objectivity in scoring.)
7. यह परीक्षायें परीक्षार्थी की वास्तविक योग्यता को मापने में असफल रहती हैं।
(These tests fail to measure the real knowledge of the examinees.)
8. यह विद्यार्थियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती हैं।
(It illeffects the health of the students.)
9. यह परीक्षायें बालकों के चरित्र निर्माण के प्रति उदासीन हैं।
(These tests totally ignore the character building in the children.)
10. इन प्रीक्षाओं से बालकों में कुण्ठायें पैदा होती हैं।
(These tests give birth to frustration in the children.)

(द) गति के आधार पर (On the Basis of Speed)

1. समय-सीमा परीक्षण (Timed Tests) और
2. समय सीमा रहित परीक्षण (Untimed Tests)।

(इ) क्रियात्मकता के आधार पर (On the Basis of Performance)

1. क्रियात्मक परीक्षण (Performance Tests) और
2. लिखित परीक्षण (Written Tests)।

● अच्छे परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of a Good Test)

1. वैधता! (Validity)

इसे वास्तव में वही चीज मापनी चाहिये जिसके मापन के लिये इसे बनाया गया है (It must actually measure what it is supposed to measure.)।

2. विश्वसनीयता (Reliability)

अच्छे परीक्षण द्वारा सही और स्थिरता से मापन करना चाहिये (A good test must measure accurately and consistently.)।

3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)

इसे सभी परीक्षार्थियों के प्रति न्याय प्रिय होना चाहिये (It must be fair to all the examinees.)।

4. विभेदकता (Discrimination)

इसे अच्छे और कमजोर बालकों में अन्तर करना चाहिये (It must discriminate good students from poor.)।

5. व्यापकता (Comprehensiveness)

यह निर्धारित पूरी अवधि का होना चाहिये (It must be long enough to do the job.)।

6. अंकन योग्य (Scorability)

यह अंकन योग्य होना चाहिये (It must be scorable.)।

7. सरल प्रयोग (Easy of Administration)

यह प्रयोग में सरल होना चाहिये (It must be easy for administration.)।

8. कम मूल्य वाला (Inexpensive)

यह कम व्यय वाला होना चाहिये (It must be less expensive.)।

इन कमियों के आधार पर निबन्धात्मक परीक्षाओं में सुधार करने के लिये अनेक सुझाव इस क्षेत्र में कार्य करने वाले शिक्षाशास्त्रियों ने दिये हैं और उस आधार पर प्रश्नों का निर्माण भी किया जा रहा है, लेकिन इन परीक्षाओं की विविध विशेषताओं के कारण इन्हें परीक्षण प्रणाली से हटाना असम्भव है। अतः इसी कारण निबन्धात्मक प्रश्नों के साथ परीक्षा प्रश्न-पत्र में कुछ अन्य प्रकार के प्रश्नों को भी जोड़ने का तरीका अपनाया गया है। इन अन्य प्रकार के प्रश्नों का विवरण हम आगे दे रहे हैं।

9. रुचिकर (Interesting)

इसे परीक्षार्थियों को रुचिकर होना चाहिये (It must capture the interest of the students/testees.)।

10. उपयोगिता (Utility)

इसको उपयोगी होना चाहिये (It must be useful.)।

(ii) लघुउत्तरात्मक परीक्षाएँ (Short Answer Type Tests)

यह एक प्रकार से छोटे निबन्धात्मक प्रश्न होते हैं जिनके उत्तरों की सीमा सीमित कर दी जाती है। सामान्यतया आधे पृष्ठ अथवा दस या बारह पंक्ति के उत्तर वाले प्रश्नों की उपादेयता कम समय में अधिक प्रश्नों को सम्मिलित कर लेने में निहित है। इनमें वही विशेषताएँ और कमियाँ होती हैं जो निबन्धात्मक प्रकार के प्रश्नों में होती हैं।

- **इनके उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं—**

दस पंक्तियों में उत्तर दीजिये (Answer in ten lines):

1. तेजाबी वर्षा किस प्रकार होती है ?
   (How does the acid rains occur ?)
2. भोजन में विटामिन्स का महत्त्व बताइये।
   (Tell the importance of vitamins in food.)

व्यवहार में इस प्रकार के कुछ प्रश्न परीक्षा प्रश्न-पत्र में निबन्धात्मक प्रश्नों के साथ जोड़ दिये जाते हैं जिससे मुख्य लाभ यह होता है कि प्रस्तावित पाठ्यक्रम का अधिक भाग परीक्षा की परिधि में आ जाता है। इससे परीक्षा की वैधता (Validity) बढ़ती है।

(iii) अति लघुउत्तरात्मक परीक्षाएँ (Very Short Answer Type Tests)

इस प्रकार के प्रश्न बहुत छोटे उत्तर वाले होते हैं और इनकी सीमा एक पंक्ति से लेकर अधिकतम चार पंक्तियों तक होती है। परीक्षक द्वारा इन प्रश्नों में कभी-कभी विवरण की अपेक्षा भी की जाती है तो कभी वह उत्तर को और सीमित कर कुछ बिन्दुओं तक समेट देता है।

- **इनके उदाहरण देखें—**

1. प्रकृति चक्र में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की प्रमुख भूमिका क्या है ?
   (What is the main role of carbon dioxide gas in nature cycle ?)

   ....

   ....
2. अध्ययन की दृष्टि से वायुमण्डल को जिन भागों में विभाजित क्रिया गया है, उनके नाम बताइये।
   (Tell the names of those regions of atmosphere which are divided for the sake of study.)
   [उत्तर—1. अधोमण्डल (Troposphere), 2. समताप मण्डल (Stratosphere),
   3. मध्यमण्डल (Mesosphere), 4. आयन मण्डल (Ionosphere),
   5. बाह्य मण्डल (Exosphere)।]

यह प्रश्न एक प्रकार से वस्तुनिष्ठ प्रश्न है, जिनका विवरण हम आगे दे रहे हैं। इन प्रश्नों का उत्तर प्रश्न-पत्र पर ही देना होता है। इनका अंकन सरल और सुनिश्चित होता है तथा इनकी 'विश्वसनीयता' और 'वैधता' भी उच्च स्तर की होती है।

(iv) वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ (Objective Tests)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा की परिभाषा देना बहुत सहज नहीं है क्योंकि इनके गुण और अवगुण इनकी विशेषताएँ और कमियों को तो व्यक्त कर सकती हैं लेकिन इनके अपने अस्तित्व (Existence) को नहीं प्रस्तुत कर सकते हैं। फिर भी एक शैक्षिक मूल्यांकन विशेषज्ञ ने अपनी पुस्तक Introduction to

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के गुण (Qualities of an Objective Test)

1. अंकन वस्तुनिष्ठ होता है।
   (Marking is objective.)

Psychology की Glossary में वस्तुनिष्ठ परीक्षा को निम्न प्रकार व्यक्त किया है—

"एक वस्तुनिष्ठ परीक्षा वह परीक्षा है जिसमें अंकन योजना है और इस प्रकार सामान्यतया इसमें अंकन विश्वसनीयता विद्यमान रहती है।"

(An objective test is a test with a prescribed key and therefore usually yielding high inter scorer reliability.)

इस सन्दर्भ में यह कहना कि वह परीक्षायें जिनमें वैधता (Validity), विश्वसनीयता (Reliability), अंकन योग्य (Scorability), वस्तुनिष्ठता (Objectivity), विभेदकता (Discriminitivity) और व्यापकता (Comprehensiveness) हो, वस्तुनिष्ठ परीक्षायें कहलाती हैं, बहुत सार्थक और स्वीकार करने योग्य संवाद नहीं हैं। वास्तव में तो तथ्य इसके विपरीत है, अर्थात् एक वस्तुनिष्ठ परीक्षा में यह या इनसे कुछ अधिक गुण (जिनका विवरण हमने हांसिये में दिया है) होने अपेक्षित हैं।

वस्तुनिष्ठ परीक्षायें बिल्कुल दोष रहित हों ऐसी बात नहीं है। इनसे विद्यार्थियों में पूरा ज्ञान प्राप्त करने की प्रवृत्ति कम होती जाती है तथा वे केवल अनुमान के सहारे उत्तर देकर उत्तीर्ण अथवा अनुत्तीर्ण होने की बात सोचते हैं। न भाषा ज्ञान की उनकी इच्छा रहती है और न व्याकरण की। आत्म-विश्वास, चरित्र, अभिव्यक्ति आदि जैसे गुणों के विकास में इन परीक्षाओं का कोई योगदान नहीं है। हाँ इन परीक्षाओं के प्रश्न उद्देश्यनिष्ठ होते हैं क्योंकि इनको विशेष उद्देश्यों के आधार पर ही बनाया जाता है। इनके पद छोटे होते हैं और विद्यार्थियों को सरलता की दृष्टि से ग्राह्य भी होते हैं।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के प्रश्नों को मोटे तौर पर दो भागों में बाँटा गया है—

(क) स्मरणात्मक (Recall Type) और **(ख) परिचयात्मक** (Recognition Type)।

आगे इनके भी भेद किये गये हैं। इनको क्रमवार उदाहरण सहित यहाँ दे रहे हैं।

(क) स्मरणात्मक प्रश्न (Recall Type Question)

इस प्रकार के प्रश्नों के भी दो प्रकार हैं—

(i) साधारण स्मरणात्मक (Simple Recall Type)—

यहाँ किसी प्रश्न का उत्तर निर्धारित स्थान पर एक शब्द (Word) अथवा एक वाक्यांश (Phrase) में दिया जाता है, जैसे—

1. भारत के प्रथम राष्ट्रीय उद्यान का नाम बताइये।
(Name the first national park of India.)
उत्तर—कार्बेट पार्क (उत्तर प्रदेश)
2. 'सामाजिक वानिकी' नाम सर्वप्रथम किसने दिया ?
(Who first of all coined the word 'Social Forestry' ?)
उत्तर—वन वैज्ञानिक वैस्टोबी

2. ये अधिक विश्वसनीय हैं।
(They are more reliable.)
3. इनकी परख वैधता उच्च है।
(They have high judgement validity.)
4. पाठ्यक्रम का अधिक भाग इनमें सम्मिलित किया जा सकता है।
(They can cover large portion of curriculum.)
5. अंकन बहुत सरल है।
(Marking is very easy.)
6. उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।
(Fullfils the objectives.)
7. इनका मानकीकरण हो सकता है।
(These can be standardised.)
8. रटने को निरुत्साहित करते हैं।
(Discourage cramming.)
9. सोचने और तर्क करने की शक्ति को बढ़ाते हैं।
(Increases the thinking and reasoning power.)
10. यह रोचक होती है।
(These are interesting.)

- **वस्तुनिष्ठ परीक्षण की कमियाँ (Short comings of the Objective Test)**

1. यह परीक्षण व्यक्तिनिष्ठ है।
(These test are subjective.)
2. अनुमान को बढ़ावा देती है।
(Encourages guess work.)
3. यह निदानात्मक नहीं होती है।
(These are not diagnostic.)
4. विचारों की स्पष्टता और अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है।
(No possibility of clarity and expression of ideas.)
5. प्रश्न-पत्र निर्माण आसान नहीं है।
(It is not easy to construct a paper.)
6. योग्यता का ठीक मूल्यांकन नहीं होता है।
(Does not evaluate correctly the ability.)

(ii) पूर्ति वाले (Completion Type)–

इन प्रश्नों में एक शब्द (Word) अथवा वाक्यांश (Phrase) का स्थान किसी प्रश्न में छोड़ दिया जाता है। परीक्षार्थी उस रिक्त स्थान की पूर्ति करता है, जैसे–

1. पृथ्वी के भूपटल में जो तत्त्व भारी मात्रा में पाया जाता है, वह है .... ।
   (The element which is most abundantly found in the crust of the earth is ....
   उत्तर–ऑक्सीजन
2. सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के चक्कर लगाने की अवधि..................... है।
   (The duration of revolving the earth round the sun is ....
   उत्तर–365¼ दिन

7. परीक्षा में अनुचित साधनों के प्रयोग को बढ़ावा देते हैं।
   (Encourages to use unfair means in the examinations.)
8. अपेक्षाकृत कम महत्त्व वाले पाठ्यक्रम को अधिक महत्त्व मिल जाता है।
   (Relatively unimportant learning material is much stressed.)
9. मानसिक योग्यता का उचित उपयोग नहीं होता है।
   (Does not use enough mental ability.)
10. अन्य प्रश्नों से कई प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं।
   (Answers can be sorted out from other questions.)

(ख) परिचयात्मक (Recognition Type)

इस प्रकार के प्रश्नों के प्रकार चार हैं–

(i) सत्य/झूँठ अथवा हाँ/नहीं (True/False or Yes/No)–

इन प्रश्नों में एक कथन होता है। यह कथन सत्य अथवा झूँठ हो सकता है। उत्तरदाता को निर्दिष्ट स्थान पर सत्य (True) अथवा झूँठ (False) या T और F लिखना होता है। इसी प्रकार के कथन दूसरे विकल्प हाँ/नहीं (Yes/No), ठीक/गलत (Right/Wrong) भी हो सकते हैं। इनके उदाहरण नीचे दिये गये हैं–

1. चिपको आन्दोलन के पीछे मुख्य उद्देश्य वनों की सुरक्षा था।
   (The main objective behind the 'Chipko Movement' was the protection of forests.)
   (सत्य/असत्य) उत्तर–सत्य
2. उपग्रह चन्द्रमा भी सूर्य का चक्कर लगाता है।
   (The satellite moon also revolves round the sun.) (हाँ/नहीं) उत्तर–हाँ
3. कश्मीर से कन्याकुमारी तक की दूरी लगभग 2500 किमी है।
   (The distance from Kashmir to Kanya-kumari is aproximately 2,500 km.)
   (सही/गलत) उत्तर–गलत
4. विश्व पारिस्थितिकी तन्त्र में हरे पौधों की भूमिका 'उत्पादक' की है।
   (The role of green plants in global ecosystem is as 'Producer'.)
   (✓/×) उत्तर–✓

(ii) मिलान वाले (Matching Type)–

इसमें दो समानान्तर स्तम्भ (Columns) होते हैं जिनमें कुछ शब्द, वाक्यांश, सूचनायें, घटनायें, नाम आदि लिखे होते हैं। परीक्षार्थी को प्रथम स्तम्भ के शब्द को अगले स्तम्भ वाले शब्द अथवा सूचना से मिलान कराना है। उदाहरण के लिये–

स्तम्भ A		स्तम्भ B		सही उत्तर
(आन्दोलन)	कोड	(स्थान)	कोड	
अपीको आन्दोलन	P	केरल	A	P → ( )
चिपको आन्दोलन	Q	हरसूद (म० प्र०)	B	Q → ( )
मिट्टी बचाओ आन्दोलन	R	उत्तरकाशी (उ० प्र०)	C	R → ( )
नर्मदा बचाओ आन्दोलन	S	केन्या (अफ्रीका)	D	S → ( )
साइलैन्ट वैली आन्दोलन	T	कर्नाटक	E	T → ( )
हरित पट्टी आन्दोलन	U	होशंगाबाद (म० प्र०)	F	U → ( )

(iii) बहुचयनात्मक (Multiple Choice Type)–

इस प्रकार के प्रश्नों में उत्तर के चार अथवा पाँच विकल्प दिये जाते हैं। उत्तरदाता को इनमें से एक सही उत्तर चुनकर उसे निर्दिष्ट स्थान पर अंकित करना है। प्रश्नों के निर्माण के आधार पर इन प्रकार के प्रश्नों के कई रूप हो सकते हैं, जिनमें (1) **सीधा प्रश्न** (Direct Question), (2) **अपूर्ण कथन** (Incomplete Statement), (3) **उल्टा प्रश्न** (Reverse Question) और (4) **सर्वाधिक सही** (More Correct) प्रकार मुख्य हैं। इन सभी के उदाहरण दिये जा रहे हैं–

- **सीधा प्रश्न (Direct Question)**

1. ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने के लिये कौन-सी गैस मुख्य रूप से उत्तरदायी है ?

   (A) ओजोन (B) ऑक्सीजन
   (C) कार्बन डाइऑक्साइड (D) कार्बन मोनोऑक्साइड

   [Which gas is mainly responsible for the creation of the green house effect ?

   (A) Ozone (B) Oxygen
   (C) Carbon dioxide (D) Carbon monoxide] **सही उत्तर–(C)**

- **अपूर्ण कथन (Incomplete Statement)**

2. यूनेस्को का मुख्यालय स्थित है–

   (A) नैरोबी (केन्या) में (B) पेरिस (फ्रांस) में
   (C) मोर्गेज (स्विटजरलैण्ड) में (D) वियना (आस्ट्रिया) में

   [The headquarter of UNESCO is situated—

   (A) In Nairobi (Kenya) (B) In Paris (France)
   (C) In Morges (Switzerland) (D) In Vienna (Austrai)] **सही उत्तर–(B)**

- **उल्टा प्रश्न (Reverse Questions)**

3. कौन-सा व्यक्ति पर्यावरण सुधार से सम्बन्धित नहीं है ?

   (A) चंडीप्रसाद भट्ट (B) सुन्दरलाल बहुगुणा
   (C) मेघा पाटेकर (D) विष्णु नार्लीकर

   [Which man is not related to environmental improvement ?

   (A) Chandi Prasad Bhatt (B) Sunder Lal Bahuguna
   (C) Megha Patekar (D) Vishnu Narlikar] **सही उत्तर–(D)**

- **निकटतम सही उत्तर (Nearest Correct Answer)**

4. मनुष्य के जीने के लिये परमावश्यक वस्तु कौन-सी है ?

   (A) जल (B) वायु
   (C) भोजन (D) प्रकाश

   [Which is the most essential commodity for a man's life ?

   (A) Water (B) Air
   (C) Food (D) Light] **सही उत्तर–(B)**

(iv) अनुरूपता वाले (Analogy Type)

इन प्रश्नों में एक-सी प्रकार की वस्तुओं के समूह के बीच एक ऐसी वस्तु आ जाती है जो अन्य वस्तुओं से मेल नहीं खाती है। उसे छाँटना है। उदाहरणार्थ–

अनुरूपता नहीं रखने वाली वस्तु को छाँटिये–

(Select the odd thing out)

1. नदी, पेड़, बाघ, बस, जंगल **सही उत्तर–(बस)**
   (River, Tree, Tiger, Bus, Forest)
2. रेडियो, टी० वी०, लाउडस्पीकर, आंटे की चक्की, कैमरा **सही उत्तर–(कैमरा)**
   (Radio, T.V., Loud Speaker, Floor mill, Camera)

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की परिभाषाओं के आधार पर शिक्षा मूल्यांकन विशेषज्ञों ने इसे उचित माना है कि आदर्श परीक्षा में एक निश्चित अनुपात में सभी प्रकार के प्रश्न हों। उस हेतु जो तरीका वर्तमान में काम में लाया जा रहा है, वह निम्न प्रकार है—

प्रश्न पत्र (Examination Paper)

कुल 100 अंक : भार 100%

विभाग अ (Section A) } 30 अंक, भार 30%

विभाग ब (Section B) } 70 अंक, भार 70%

↓

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—20 अंक (20%)
अति लघुउत्तरात्मक प्रश्न—10 अंक (10%)

निबन्धात्मक प्रश्न—50 अंक (50%)
लघुउत्तरात्मक प्रश्न—20 अंक (20%)

अब इन प्रश्नों को समेकित करते समय जिन उद्देश्यों का समावेश करना है, यह शैक्षिक उपकरण **ज्ञानार्जन परीक्षा** (Achievement Tests) के लिये तो शैक्षिक मूल्यांकन विशेषज्ञों ने अपने शोध तथा लम्बे परीक्षणों के आधार पर लगभग निश्चित कर दिया है जो निम्न प्रकार हैं—

एक हायर सेकण्डरी स्कूल स्तर के प्रश्न-पत्र के लिये।

उद्देश्यों का अंकभार (Weightage to Objectives)—

ज्ञान (Knowledge)	50%
अवबोध (Understanding)	20%
उपयोग (Application)	20%
कौशल (Skill)	10%

(यह अंकभार योजना तदर्थ है, इसमें परिवर्तन हो सकता है।)

लेकिन पर्यावरण शिक्षा के लिये अभी तक यह प्रयोग नहीं हुआ है, लेकिन जिस प्रकार हमने पर्यावरण शिक्षा के सन्दर्भ में शैक्षिक उद्देश्यों को प्रस्तुत किया है उसकी एक मोटी रूपरेखा निम्न हो सकती है—

(अ) क्षेत्रों का अंकभार (Weightage to Domains)—

- **बोधात्मक क्षेत्र** (Cognitive Domain) 60%
- **भावात्मक क्षेत्र** (Affecting Domain) 30%
- **क्रियात्मक क्षेत्र** (Conative Domain) 10%

(ब) उद्देश्यों का अंकभार (Weightage to Objectives)—

- **ज्ञान** (Knowledge) 30%
- **कौशल** (Skill) 10%
- **अभिरुचि** (Aptitude) 10%
- **अभिवृत्ति** (Attitude) 10%

रुचि (Interest) 10%
अवबोध (Understanding) 15%
उपयोग (Application) 15%

(स) प्रश्नों का अंकभार (Weightage to Type of Questions)—

(यदि कुल पूर्णांक 100 है।)

- **निबन्धात्मक** (Essay Type) 5 प्रश्न × 10 अंक प्रत्येक = 50 अंक (50%)
- **लघुउत्तरात्मक** (Short Answer Type) 5 प्रश्न × 4 अंक प्रत्येक =20 अंक (20%)
- **अति लघुउत्तरात्मक** (Very Short Answer Type) 5 प्रश्न × 2 अंक प्रत्येक =10 अंक (10%)
- **वस्तुनिष्ठ** (Objective Type) 20 प्रश्न × 1 अंक प्रत्येक =20 अंक (20%)

पूरे पाठ्यक्रम के आधार पर उपर्युक्त विवरण के परिप्रेक्ष्य में किसी भी पर्यावरण सम्बन्धी प्रश्न-पत्र का ब्ल्यू प्रिन्ट (Blue Print) बनाया जा सकता है और उस ब्ल्यू प्रिन्ट पर अपेक्षित प्रश्न-पत्र।

● पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन की उपादेयता (Utility of Evaluation in Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा की उपादेयता भिन्न-भिन्न स्तर पर अपने-अपने प्रकार से आँकी गई है जिससे उसकी उपयोगिता में आशातीत वृद्धि हुई है—

1. **नीति निर्धारकों (Policy Makers) के अनुसार**, यह देश को और अधिक विकृति और ह्रास से बचा सकती है।

2. **सरकारों (भारत एवं प्रदेशीय) के अनुसार**, इससे लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरुकता उत्पन्न होगी।

3. **समाज (Society)** को प्रतिनिधित्व करने वाले **सामाजिक नेताओं (Social Leaders) के मत से**, इस शिक्षा से आम नागरिक को जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) के प्रति रुचि में वृद्धि होगी।

4. **स्वयंसेवी संस्थाएँ** (Non-governmental Organisations) इस शिक्षा को प्रदूषण संकट को कम करने में सहायक मानती हैं।

5. **आम नागरिक** पर्यावरण शिक्षा को अपने परिवार के सदस्यों में अच्छी आदतों के निर्माण के लिये उपयोगी मानते हैं।

इस प्रकार पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन एक ऐसा आवश्यक प्रकरण है जिससे पूरी पर्यावरण शिक्षा की उपयोगिता और उपादेयता आँकी जा सकती है।

अध्याय पर आधारित प्रश्न
(QUESTIONS BASED ON THE CHAPTER)

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'मूल्यांकन' और 'मापन' में अन्तर स्पष्ट कीजिये। क्या यह दोनों एक दूसरे के समपूरक हैं ?
2. शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों को पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों में किस प्रकार समावेश किया है ?
3. पर्यावरण शिक्षा में मूल्यांकन का महत्त्व और उसकी आवश्यकता क्यों है ?
4. 'प्रश्नावली' क्या है ? अच्छे प्रश्नों के गुण बताइये।
5. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ क्या होती हैं ? इनके गुणों का उल्लेख करिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short Answer Type Questions)

6. 'मूल्यांकन' किसे कहते हैं ? कोई एक परिभाषा दीजिये।
7. 'वस्तुनिष्ठता' और 'व्यक्तिनिष्ठता' को कैसे समझाओगे ?
8. 'ज्ञान', 'अवबोध' और 'ज्ञानोपयोग' को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिये।
9. 'मूल्यांकन' में प्रयुक्त 'विधियों' और 'प्रविधियों' में अन्तर समझाइये।
10. 'प्रश्नावली' और 'अनुसूची' में कौन अधिक प्रभावी है ? और क्यों ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

11. मूल्यांकन में निम्न में से क्या सम्मिलित नहीं है ? [ ]
(अ) रुचियाँ (ब) अभिरुचियाँ (स) अभिवृत्तियाँ (द) परीक्षाएँ
12. निम्न में से कौन सा पद 'अवबोध' का है ? [ ]
(अ) आँकड़े इकट्ठा करना (ब) स्थानों की जानकारी
(स) लाभ-हानि बताना (द) तुलना करना
13. शैक्षिक उद्देश्यों में क्रियात्मक क्षेत्र शरीर के किस अंग से संबंधित है ? [ ]
(अ) मस्तिष्क (ब) आत्मा (स) शरीर (द) कौशल
14. निम्न में से कौन-सा परीक्षण 'वस्तुनिष्ठ' नहीं है ? [ ]
(अ) अवलोकन (ब) सत्य/असत्य
(स) रिक्त स्थानों की पूर्ति (द) मिलान करना
15. किसी भी 'मूल्य निर्धारण मापनी' (रेटिंग स्केल) में पदों की संख्या निम्न हो सकती है। [ ]
(अ) 1 (ब) 2 (स) 3 (द) 4

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिये— [ ]

16. अच्छी अथवा बुरी घटना को इसमें रखते हैं। [ ]
17. 'वैधता' इन परीक्षाओं का विशेष गुण होता है। [ ]
18. किसी परीक्षण को बनाने में सर्वाधिक अंक भार इसे मिलता है। [ ]
19. किस प्रकार के परीक्षण से रटने की प्रवृत्ति में वृद्धि होती है ? [ ]
20. जब सभी प्रश्न मौखिक रूप से पूछे जाते हैं तो इसे कैसी परीक्षा का नाम देते हैं ? [ ]

सन्दर्भ पुस्तकें, पत्रिकाएँ तथा दस्तावेज
(REFERENCE BOOKS, JOURNALS AND DOCUMENTS)

A Student's Environment Do-it-yourself Manual. C. P. R. Environmental Education Centre. Madras (India) : 1996. pp. 42.

Agarwal, K. C. **Environmental Biology.** Bikaner (India) : Agrobotanical Publishers, 1987. pp. 439.

Astanin, L. P. and K. N. Blagosklonov. **Conservation of Nature.** Moscow : Progress Publishers, 1983. pp. 148.

Attiga, Ali Ahmed. **Interdependence on the Oil Bridge : Risks & Opportunities** : Petroleum Information Committee of the Arab Self States, 1988. pp. 173.

Bakshi, A. K. **Energy.** New Delhi (India) : National Book Trust, India, 1995. pp. 89.

Baldwin, John H. **Environmental Planning and Management.** Dehradun (India) : International Book Distributors, 1988. pp. 317.

Bandopadhya, J et al., ed. **India's Environment : Crisis and Responses.** Dehradun (India) : Natraj Publishers, Rajpur Road, 1985. pp. 309.

Baldurin, John H. **Environmental Planning and Management.** Dehradun (India) : International Book Distributors, 9/3 Rajpur Road (First Floor), 1988. pp. 336.

Best, John W. **Research in Education.** New Delhi (India) : Prentice Hall of India Pvt. Ltd. (Fourth Edition), 1983. pp. 431.

Brady, Nyle C. **The Nature and Properties of Soils (8th Edition).** New Delhi (India) : Euresia Publishing House (P) Ltd., 1983. pp. 639.

Bhargava Akshay and S. K. Shukla. **Environmental Preservation and Protection : An Integrated Scenerio.** Jaipur (India) : Rajasthan Pollution Control Board, 1990.

Bhatia, H. S. **Working of Biogas Programme in Southern Rajasthan.** Udaipur (India) : HCM Rajasthan State Institute of Public Administration, 1988. pp. 76.

Bose, Ashish. **India's Urbanisation 1901-2001.** New Delhi (India) : Tata Mc. Graw-Hill Publishing Co. Ltd., 1978. pp. 567.

Byalko, A. V. **Our Planet-The Earth.** Moscow : Mir Publishers, 1987. pp. 304.

Census of India-1991, Vol. I & II, Final Populations Total. Ministry of Home Affairs, 2/A, Mansingh Road, New Delhi (India), 1993.

Chatrath, K. J. S. **Wetlands in India.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1992. pp. 200.

Cherunilam, Francis. **Urbanisation in Developing Countries.** Bombay (India) : Himalaya Publishing House, 1984. pp. 240.

Clarke, George L. **Elements of Ecology.** New York : John Wiley & Sons. Inc., 1957. pp. 534.

Communication Techniques for Environmental Awareness Raising. C. P. R. Environmental Education Centre. Madras (India).

चन्दोला, प्रेमानन्द. **पर्यावरण और जीव.** देहली (भारत) : हिमाचल पुस्तक भण्डार, 1984. पृष्ठ 199.

Dasmann, Raymond F. **Environmental Conservation; Second Edition.** New York : John Wiley & Sons, Inc., 1968. pp. 375.

Department of Environment, Government of Rajasthan Publication. Jaipur (India) : 1. राजस्थान में पर्यावरण शिक्षा, 2. परिवहन से प्रदूषण, 1985. pp. 10, 3. जल प्रदूषण : कारण और निवारण, 1986. pp. 19, 4. Environment Perceptions : Selected Readings Vol. I, 1989. pp. 76, 5. Our Earth : Save it, 1990. pp. 48, 6. पानी (Water), 1990. pp. 6, 7. National Environment Awareness Compaign : A Report, 1990. pp. 80, 8. पर्यावरण अवबोध (Environmental Understanding), 1994, pp. 115, 9. Environmental Perceptions : Selected Readings Vol. II, 1991. pp. 88.

Desai, Bharat., ed. **Environmental Laws of India.** Lancer Books P.O. Box 4236 : New Delhi (India), 1994; pp. 438.

Deshbandhu and G. Berberet., ed. **Environmental Education for Conservation and Development.** New Delhi (India) : Indian Environmental Society, Indraprastha Estate, 1987. pp. 537.

Down To Earth. Centre for Science & Environment, New Delhi (India); year 1997 to 2002.

Dwivedi, O. P., Ed. **World Religions and the Environment.** New Delhi (India) : Gitanjali Publishing House, 1989. pp. 462.

Educational Concerns of India. C. P. R. Environmental Education Centre,. Madras (India); 1996. pp. 87.

Environmental Education at the School Level. National Council of Educational Research and Training, New Delhi (India), 1981. pp. 65.

Environmental Laws of India. C. P. R. Environmental Education Centre, Madras (India) : 1994. pp. 32.

Energy : The Next Twenty Years, Hans H. Landsberg, Chairman (Cambridge, Massachuttes : Ballinger Publishing Company, 1979) pp. 628.

Essential Learning in Environmental Education. Centre for Environment Education, Nehru Foundation for Development, Ahmedabad (India) And State University of New York, College of Environmental Science and Forestry, Syracuse, New York (USA), 1990. pp. 150.

Fedoseyer, P. and T. Timofeyer., eds. **Social Problems of Man's Environment : Where we live and work.** Moscow (USSR) : Progress Publishers, 1981. pp. 334.

Furley, Peter A and Walter W. Newey. **Geography of the Biosphere.** London : Butterworths, 1983. pp. 413.

गर्ग, रूप किशोर और प्रकाश तातेड़. **पर्यावरण शिक्षा.** उदयपुर (भारत) : पर्यावरण सामुदायिक केन्द्र, 1988. पृष्ठ 36.

Green File (India). Centre for Science & Environment, New Delhi (India). year 1996 to till date.

Goel, P.K. and K.P. Sharma. **Environmental Guidelines and Standards in India.** Jaipur (India) : Technoscience Publishers, 1996; pp. 318.

Govardhan, Veerlapati. **Environmental Impact Assessment of Tehri Dam.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1993. pp. 383.

Goyal, M. M. **Industries and Pollution Control.** Jaipur (India) : Anupriya Publishing House, 1992.

Guidelines on Environmental Pullution Control. Published by Gujrat Pullution Control Board, Gandhinagar (Gujrat : India), 1988. pp. 98.

Gupta, N.L. and R.K. Gurjar. **Environment : Infight and Foresight.** Jaipur (India) : Classic Publishing House, 1995; pp. 287.

Gupta, N. L. and Laxmi Shukla, eds. **Water Environment in India,** Jaipur (India) : Rupa Books Pvt. Ltd., 1984. pp. 294.

हमारा पर्यावरण. पर्यावरण कक्ष, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, विज्ञान और पर्यावरण केन्द्र, नई दिल्ली (भारत), 1988. पृष्ठ 280.

Henry, J. Glynn and Gary W. Heinke. **Environmental Science and Engineering.** New Jersy : Prentice Hall, Englewood Cliffs, 1989. pp. 728.

Hooper, Richard., ed. **The Curriculum : Context, Design and Development.** Edinburgh : Oliver & Boyd, 1973. pp. 505.

Indian Farming. Vol. 43, No. 7 Harvesting Natures Diversity. ICAR, New Delhi (India) : October 1993, pp. 64.

Jaiswal, P. L. et al., eds. **Handbook of Agriculture.** New Delhi (India) : Indian Council of Agricultural Research, 1980. pp. 1303.

Khanna, Gopesh Nath. **Environmental Problems and the United States.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1990. pp. 204.

Khoshoo, T. N. **Environmental Concerns and Strategies.** New Delhi (India) : Indian Environmental Society, 1984. pp. 296.

Kothari, Ashish et al., ed. **Measurement of National Parks and Sanctuaries in India : A Status Report.** New Delhi (India) : Environmental Studies Division, Indian Institute of Public Administration, 1989. pp. 298.

Kovacs, M., ed. **Pollution Control and Conservation.** Chichester : Ellishorwood Publishers Limited, 1985. pp. 398.

Krishna Iyer, V. R. **Environmental Pollution and the Law.** Indore (India) : Vedapal Law House, 1984. pp. 168.

खान, प्रो० एस० एच० और श्रीमती शुक्ला भट्टाचार्य. **अध्यापकीय दर्शिका : परिवेशीय अध्ययन—कक्षा 1.** राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद. नई दिल्ली (भारत), 1987. पृष्ठ 44.

खुराना, उषा. **पर्यावरण शिक्षा.** नई दिल्ली (भारत) : तक्षशिला प्रकाशन, 1994. पृष्ठ 55.

Let us Promote Sanitation; A Sanitation Handbook. United Nations Children's Fund, New Delhi, 1988. pp. 36.

Lohani, Bindu N. **Environmental Quality Management.** New Delhi (India) : South Asian Publishers Pvt. Ltd., 1984. pp. 448.

Man and Environment. Published by chairman, Gujrat Pollution Control Board, Gandhinagar (Gujrat : India), 1986. pp. 26.

Manivarakaram, N. **We Breath and Drink Poison.** New Delhi (India) : National Book Trust, India, 1995; pp. 105.

Mc. Veigh, J. C. **Sun Power.** New York : Pergamon Press, 1983. pp. 259.

माथुर, पी० सी० और रामकुमार गुर्जर., सम्पादक. **पानी की खोज.** जयपुर—(भारत) : पंचशील प्रकाशन, 1992. पृष्ठ 288.

माथुर, ए० एन० एवं अन्य. **पर्यावरण शिक्षा.** देहली (भारत) : हिमांशु पब्लिकेशन्स, 1993. पृष्ठ 180.

Matras, Judah. **Populations & Societies.** New Jersy : Prentice Hall Inc., Englewood cliffs, 1973. pp. 562.

Miller, Christopher and Christopher Wood. **Planning and Pollution.** Oxford : Clarendon Press, 1983. pp. 232.

Ministry of Environment & Forests, Government of India. New Delhi (India) : 1. **वार्षिक रिपोर्ट 1985-86, 1986-87, 1987-88, 1988-89, 1989-90, 1990-91, 1991-92, 1992-93 और1993-1994, 1994-1995 upto 2001-2002. 2. Environment : The Indian Perspective,** 1991.

Morse, William C. and C. Max Wingo. **Psychology and Teaching.** Bombay (India) : D. B. Taraporevala Sons & Co. Private Ltd., 1970. pp. 626.

Morse, William C. and G. Max. Wingo., eds. **Readings in Educational Psychology.** Bombay (India) : D. B. Taraporevala Sons & Co. Pvt. Ltd., 1970. pp. 376.

Mudaliar, V. T. Subbiah and Dr. S. Sankaran., eds. **Principles of Agronomy.** B. Bikaner (India) : The Banglore Printing & Publishing Co., Ltd., 1984. pp. 566.

Nam, Charles B. and Susan Gustavus Philliber. **Population : A Basic Orientation.** New Jersy : Prentice Hall Inc., Englewood Cliffs, 1984. pp. 384.

Nagi, G.K. et al. **Noise Pollution.** New Delhi (India) : Common Wealth Publishers, 1999; pp. 221.

नैतिक शिक्षा उपागम. निदेशालय, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा. बीकानेर (भारत), 1981. पृष्ठ 20.

Oil Substitution : World Outlook to 2030 : World Energy Conference : Report by the Oil Substitution Task Force—New Delhi. Delhi (India) : Oxford University Press, 1983. pp. 387.

Our Plant, our Health. Report of the WHO Commission on Health and Environment, Geneva, 1992; pp. 282.

Pachauri, R. K., ed. **International Energy Studies.** New Delhi (India) : Wiley Eastern Limited, 1980. pp. 507.

Page, Thornton and Lou Williams Page., ed. **The Origin of Solar System, Vol. 3.** New York : Macmillan & Co., 1966. pp. 336.

Pal, B. P. **A National Policy on Environment.** New Delhi (India) : Department of Environment, Govt. of India, 1981. pp. 15.

Pandey, G.N. **Environment Management.** New Delhi (India) : Uikas Publishing House Pvt. Ltd., 1997; pp. 398.

पाण्डेय, डॉ० कामता प्रसाद. **शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान.** देहली (भारत) : अमिताश प्रकाशन, 1979 (तृतीय संस्करण). पृष्ठ 152.

पाण्डेय, जगदीश चन्द्र., अनुवादक. **समाज और पर्यावरण.** प्रगति प्रकाशन, राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा०) लिमिटेड, जयपुर, 1986. पृष्ठ 192.

पटवा. शुभू. **पर्यावरण की संस्कृति.** बीकानेर (भारत) : वाग्देवी प्रकाशन, 1989. पृष्ठ 124.

Polumin, Nicholas., ed. **The Environmental Future.** London : Macmillan Press Ltd., 1972. pp. 660.

Purohit, S. K. **Chemical and Biological Methods of Water and Air Pollution Control.** Bikaner (India) : Agro Botanical Publishers, 1985. pp. 56.

Pirog, Robert L. and Stephen C. Stamos, Jr. **Energy Economics Theory and Policy.** New Jersy : Prentice-Hall Inc., Englewood Cliffs, 1987. pp. 328.

Primary Census Abstract General Population Part II B (i). Registrar General Census Commissioner, Census of India 1981-Series 1, New Delhi (India), 1981.

Project Tiger. Published by Ministry of Environment and Forests, Govt. of India, New-Delhi, 1990. pp. 43.

पुरोहित, श्याम सुन्दर. **पर्यावरण शिक्षा (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण).** बीकानेर (भारत) : अजन्ता बुक्स, 1991. पृष्ठ 64.

Rathnaswamy, P. **International Environment Management.** New Delhi (India) : Manas Publications, 1998; pp. 213.

Rao Hemlata. **Rural Energy Crisis : A Diagnostic Analysis.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1990. pp. 185.

Rao, M. Sitaram. **Introduction to Social Forestry (Second Edition).** New Delhi (India) : Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., 1987. pp. 87.

Rao, P.L. Diwakar., ed. **Pollution Control Hand Book—1986.** Sikandrabad (India) : Utility Publications, 1986; pp. 339.

राय, डॉ० एम० एम० **मृदा विज्ञान.** भोपाल (भारत) : मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1976. पृष्ठ 202.

Ryabchikov, A. **The changing Face of the Earth.** Moscow : Progress Publishers, 1975. pp. 205.

Sapru, R. K., ed. **Environment Management in India (Vol. I).** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1987. pp. 288.

Sapru, R. K., ed. **Environment Management in India, Vol. II.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1987. pp. 307.

Saxena, A. B. **Environmental Education.** Agra (India) : National Psychological Corporation, 1986. pp. 195.

Saxena Ghanshyam. **The Forest Crisis.** Dehradun (India) : Natraj Publications, 1990; pp. 182.

Saxena, V.S. **पर्यावरण परिरक्षण वानिकी.** Jaipur (India) : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ ऐकेडमी, 2000; pp. 316.

Sharma, R. C. **Environmental Education.** New Delhi (India) : Metropolitan Book Co. Pvt. Ltd., 1986. pp. 191.

Shastri, Satish. **Pollution and the Environmental Law.** Jaipur (India) : Rupa Books Pvt. Ltd., Tilak Nagar, 1990. pp. 206.

Sharma, Indra. **Educational Psychology.** Agra (India) : Vinod Pustak Mandir, 1973. pp. 304.

शर्मा, डॉ० हरचरणलाल. **परिवेशीय अध्ययन अध्यापक दर्शिका—कक्षा 2.** नई दिल्ली (भारत) : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, 1992. पृष्ठ 54.

Siddiqui, Mujibul Hasan. **Teaching of Economics.** New Delhi (India) : Ashish Publishing House, 1993. pp. 323.

Shrivastava, Hari Narain. **वायुमण्डलीय प्रदूषण.** नई दिल्ली (भारत) : राजकमल प्रकाशन, 1991 : पृष्ठ 166

Singh, R.B. and Suresh Mishra. **Environmental Law in India.** New Delhi (India) : Concept Publishing Company, 1996; pp. 303

Sinha, Rajiv K. **Human Ecology.** Jaipur (India) : INA Shree Publishers, 1998; pp. 479.

Singh, S. S., ed. **Handbook of Agricultural Sciences.** New Delhi (India) : Kalyani Publishers. 1991. pp. 716.

Stanley C. Julian. **Measurement in today's Schools.** N. J. : Prentice Hall, Inc., Englewood Cliffs, 1964. pp. 414.

Stephens, J. M. and E. D. Evans. **Development and Classroom Learning.** New York : Holt, Rinchart and Winston, 1977. pp. 692.

Social Forestry in India. Birla Institute of Scientific Research Economic Research Division. New Delhi (India) : Radiant Publishers, 1986; pp. 153.

सिंह, भोपाल. **पर्यावरणीय शिक्षा एवं पर्यावरण संरक्षण.** नई दिल्ली (भारत) : आर्य बुक डिपो, करोलबाग, 1991. पृष्ठ 163.

Singh, Hoshiar. **Environmental Policy and Administration.** Jaipur (India) : Printwell, 1992. pp. 282.

Singh M. P. et al. **Social Forestry and Environment.** Delhi (India) : International Books and Periodicals Supply Service, 1993. pp. 313.

Sharma K. D. and M. A. Qureshi., ed. **Alternative Technology.** Simla (India) : Indian Institute of Advanced Study, 1979. pp. 331.

Shukla, S. K. **Environment Protection and the Law.** Jaipur (India) : Shashi Publication. 4-ka-25, Shastri Nagar, 1989. pp. 435.

Smil, Vaclav and William E. Knowland., ed. **Energy in the Developing World.** New York : Oxford University Press, 1980. pp. 386.

Statistical Year Book-1991. Unesco 7, Place of Fontenoy, 75700, Paris, 1992.

Stokes, William Lee et al. **The Astronomical Background (Chapter I) of Introduction to Geology.** New Jersy : Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs.

Stracey, P. D. **Wild life in India : Its Conservation and Control.** New Delhi (India) : Ministry of Food and Agriculture, Department of Agriculture, Govt. of India, 1963. pp. 281.

Southwick, Charles H. **Ecology and the Quality of Our Environment.** New York : D. Van Nostrand Company, 1972. pp. 319.

The Hindu : Daily Newspaper. New Delhi (India) : up date.

The Times of India : Daily Newspaper. New Delhi (India) : up date.

Trivedi, P.R. and K.N. Sudershan., ed. **Environment and Natural Resources Conservation.** New Delhi (India) : Common wealth Publishers, 1994; pp. 293.

Trivedi, R.K. and P.K. Goel. **Introduction to Air Pollution.** Jaipur (India) : Technoscience Publications, 1995; pp. 262.

Towards Better Questions. The Association of Indian Universities, Rouse Avenue. New Delhi (India), 1976. pp. 126.

Varshneya, A.C. **Rural Waste Management.** New Delhi (India) : Associated Publishing Company, 1987; No. 215.

वर्मा, डॉ० एस० एल०. **राजनीति विज्ञान में अनुसंधान-प्रविधि.** जयपुर (भारत) : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1980. पृष्ठ 343.

Vimal, O. P. and P. D. Tyagi. **Energy from Biomass.** New Delhi (India) : Agricole Publishing Academy, 1984. pp. 440.

वोल्कोव, अ. **धरती और आकाश.** मास्को : विदेशी भाषा प्रकाशन गृह, 1966. पृष्ठ 240.

Woodbury, Angus M. **Principles of General Ecology.** New York : The Blakiston Company Inc., 1954. pp. 503.

Wagner, Richard H. **Environment and Man.** New York : W.W. Norton and Company, 1974; pp. 528.

Yadav, Seema. **Teaching of Home Science.** New Delhi (India) : Anmol Publications Pvt. Ltd., 1994. pp. 186.

Young Scientist : Vol. 19; Our World in Danger. Chicago (USA) : World Book, Inc., S 25 West Monroe Street, 1994. pp. 62.

